January to March 2019
E-Journal
Issue XXV, Vol. IV

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Impact Factor - 5.610 (2018)

Naveen Shodh Sansar

(An International Refereed/ Peer Review Research Journal)

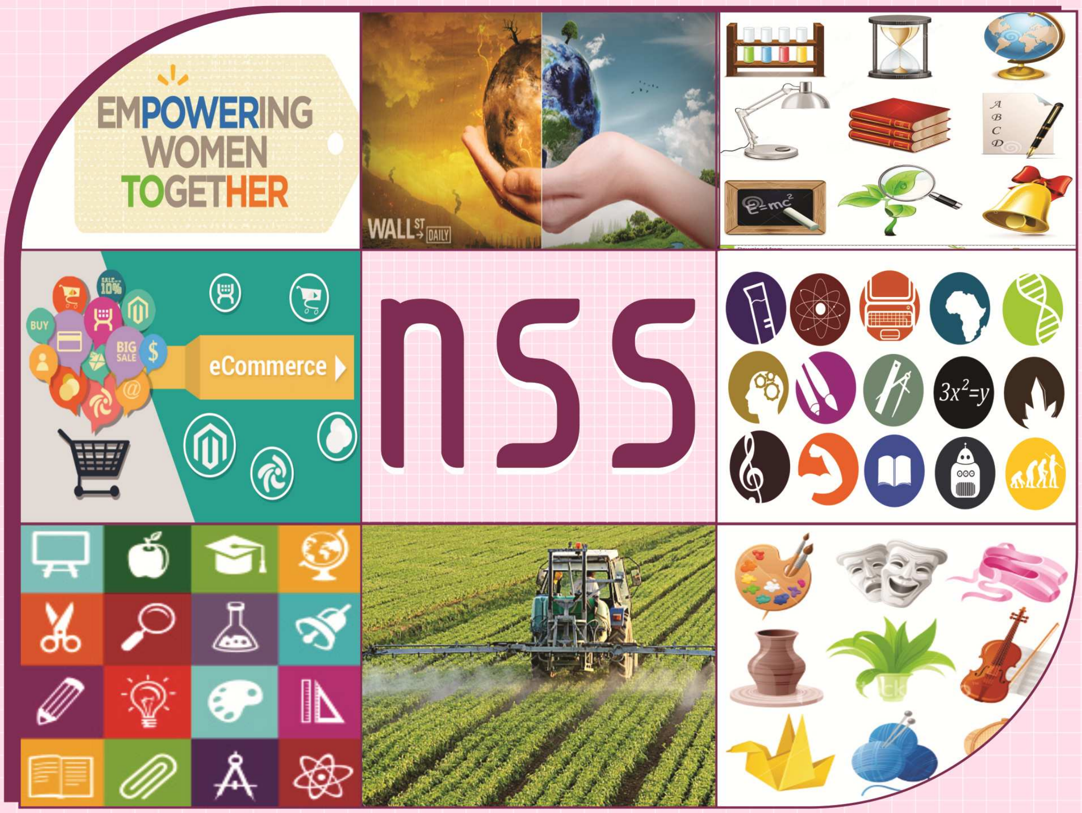

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, **NEEMUCH** (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, **Email** : nssresearchjournal@gmail.com, **Website** www.nssresearchjournal.com

Index/अनुक्रमणिका

01. Index/ अनुक्रमणिका 02
02. Regional Editor Board 07
03. Editorial Advisory Board 08
04. Referee Board 09
05. नगरीय निकाय कटनी के स्वास्थ्य जागरूकता कार्यक्रमों का अध्ययन (डॉ. अनिल तौहेल) 11
06. विमुद्रीकरण के प्रभावों का अध्ययन चीनौर तहसील जिला ग्वालियर के सन्दर्भ में (डॉ. लारेन्स कुमार बौद्ध)....... 14
07. Determination of Fluoride Concentration of selected ground water samples from different sites in and around Mahoba (Santosh Ambhore, Jayendra Singh Chauhan, Vandna Pathak) 16
08. Adsorption studies on the removal of Nickel (II) ions from aqueous solution using activated carbon as adsorbent (Geeta Paryani, Shikha Shrivas) 19
09. श्रीमती इन्दिरा बागड़ी : हिन्दुस्तानी लालसेना और हमारा स्वतंत्रता संग्राम - एक व्यक्तित्व अध्ययन (डॉ. सीमा कदम) 23
10. ग्रामीण क्षेत्र में महिला श्रमिकों की स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं एवं समाधान (डॉ. सीमा कदम, यमुना धुर्वे)........... 25
11. महिलाओं की स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरूकता का परिवार सदस्यों के स्वास्थ्य पर प्रभाव (डॉ. सीमा कदम, पुर्वा बाउस्कर) 28
12. अनुसूचित जनजाति की ग्रामीण एवं शहरी किशोंरी बालिकाओं की रूचियों का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. सीमा कदम, निर्मला वर्मा) 32
13. निमाड़ के सन्त जगन्नाथ गिर - एक अध्ययन (डॉ. मधुसूदन चौबे) 35
14. जबलपुर जिले के औद्योगिक विकास में (अग्रणी बैंक) सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया के योगदान का समीक्षात्मक अध्ययन (डॉ. अनिल तौहेल) 37
15. Marginalised Voices (Dr. Rajkumari Sudhir) 39
16. निमाड़ के महान सन्त सिंगाजी के उपदेश (डॉ. मधुसूदन चौबे) 41
17. नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के प्रति अल्पसंख्यक शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन (डॉ. समन्दर सिंह, ब्रजेश कुमारी) 43
18. चित्रा मुद्गल के उपन्यासों में नारी के विविध रूप (डॉ. श्रद्धा हिरकने, अनिता बंजारे) 46
19. धर्मवीर भारती के उपन्यास में चित्रित सामाजिक प्रभाव (डॉ. आँचल श्रीवास्तव, सुनीता तिवारी) 48
20. प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी एक विमर्श (डॉ. श्रद्धा हिरकने, रजनी पाण्डेय) 50
21. कृष्णा सोबती के उपन्यासो में भाषा एवं संवाद विधान (डॉ. श्रद्धा हिरकने, दीपिका भंडारी) 52
22. अमृता प्रीतम के उपन्यास पिंजर में नारी चित्रण एक अध्ययन (डॉ. आँचल श्रीवास्तव, सीता कुमारी)............... 54
23. नाला सोपारा किन्नर समाज की आवाज (डॉ. रेखा दुबे, स्मृति उरांव).. 56
24. वयं रक्षाम: की प्रासंगिकता (डॉ. रेखा दुबे, आकाँक्षा गोपाल) 58
25. पंडित लोचनप्रसाद पाण्डेय का साहित्यक परिचय (डॉ. आँचल श्रीवास्तव, राधा शर्मा) 60
26. मंगत रवीन्द्र के महाकाव्य प्रभात सागर का अध्ययन (संत गुरु घासीदास के विशेष संदर्भ में) (डॉ. रेखा दुबे, गणेश राम जांगडे) 63
27. ओमप्रकाश वाल्मीकि के साहित्य का अध्ययन (दलितो के विशेष संदर्भ में) (डॉ. रेखा दुबे, सरोजनी सोनी) 65
28. चीन में बौद्ध आचार्य और दार्शनिक (डॉ. पूर्णिमा शर्मा) 67
29. Indian Naval Forces : Making nations sea power formidable and future alert - A Naval Build-up (Santosh Ambhore, Ashok Sharma) 69
30. हिन्दी उपन्यास एवं सिनेमा में अंतर्सम्बन्ध (डॉ. आँचल श्रीवास्तव, विजेन्द्र कुमार साहू) 73
31. सुदामा पाण्डेय धूमिल के काव्यों में राजनैतिकता का समाजिक जीवन पर प्रभाव (डॉ. स्नेह लता निर्मलकर, वंदना वाधवानी) 75

32. हरिवंश राय बच्चन की मधुशाला का एक अध्ययन (डॉ.श्रद्धा हिरकने, अमजद खान) 77
33. Musicality in Fiction (Dr. Rajkumari Sudhir) 79
34. आदिवासी बहुल्य क्षेत्र का विकासात्मक परिवर्तन (खरगोन जिले के विशेष सन्दर्भ में एक भौगोलिक अध्ययन) ... 81
(प्रो.सुरेश अवासे)
35. शाजापुर जिले में शासकीय योजनाऍं एवं महिला उद्यमिता विकास (डॉ. जगदीश प्रसाद कुल्मी) 84
36. A Comparative Study of Job Satisfaction among Physical Education Teachers of 87
Government and Private Schools: With Reference to Bilaspur Division of Chhattisgarh
(Mahendra Patel, Dr. Jaishankar Yadav)
37. राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना का अध्ययन (बिलासपुर जिले के विकासखण्ड कोटा के संदर्भ में) 89
(डॉ. रीना तिवारी, सुमन शर्मा)
38. बाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड एवं अयोध्याकाण्ड में शकुन विचार (डॉ. वेदप्रकाश मिश्र, गणेश प्रसाद तिवारी) . 91
39. A Comparative Study Of Eye Hand Coordination And Reaction Time Among Various Ball 93
Game Players (Asif Hussain Mir, Dr.Ganesh Khandekar)
40. Comparison Of Resting Pulse Rate And Anxiety Profile Of The Players Belonging 97
To Different Ball Games (Ferdous Ahmad Malik, Dr.Ganesh Khandekar)
41. Comparative Study On Selected Anthropometric And Psychological Variables Of 100
Inter Collegiate Kho-Kho And Kabaddi Players (Syed Irfan Hussain, Dr. Jaishankar Yadav)
42. मन्दसौर जिले के औद्योगिक विकास में राष्ट्रीयकृत बैंकों के योगदान का तुलनात्मक अध्ययन 104
(डॉ. दिनेशचन्द्र गुप्ता, शिखा नलवाया)
43. वतन परस्त मालव केसरी महाराजा यशवन्तराव होलकर का ब्रिटिश सत्ता से प्रतिशोध (डॉ. कैलाश राय) 107
44. होलकर राजवंशीय महिलाएं और 'महानुभाव पंथ' (डॉ. कैलाश राय) 109
45. Comparative Analysis of Mental Toughness Between Judo, Taekwondo and Boxing 111
National Players (Dr. YuwrajShrivastava, Prasun Kumar Singh)
46. Comparative Study Of Selected Motor Fitness Components Between Volleyball and 113
Badminton National Players (Dr. Yuwraj Shrivastava, Devraj Diwakar)
47. अमर टापू धाम का ऐतिहासिक महत्व (डॉ. अंजू तिवारी, मनीषा कोसले) 116
48. म.प्र. में नगरपालिकाओ की प्रशासनिक स्थिति (धार जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. रसिक दवे, सन्तोष बर्डे) .. 119
49. Pattern Of Population Distribution And Density Of Bilaspur City 122
(Dr. Kajal Moitra, Dr. Ratnesh Kumar Khanna, Sandip Mondal)
50. Health And Educational Quality In Bilaspur City (An Study Of Urban Life) 125
(Dr. Kajal Moitra, Dr. Ratnesh Kumar Khanna, Supriyo Halder)
51. Distribution And Density Of Population In Raigarh District 128
(Dr. Kajal Moitra, Sanjit kisku, Dibyendu bhattacharjee)
52. Agricultural Land Use In Bilaspur Disrtict (Dr. Kajal Moitra, Sanjit kisku, Gobinda De) 132
53. Concept And Scope Of White Collar Crimes : A Study (Ritik Arora, Dr. Vijay Srivastava) 135
54. ग्रामीण व शहरी क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता का तुलनात्मक अध्ययन 138
(डॉ. संगीता अग्रवाल, पारूल शर्मा)
55. उच्च माध्यमिक स्तर के किशोर विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य और व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन.......... 139
(डॉ. संगीता अग्रवाल, विजय प्रताप सिंह)
56. जयपुर जिले के उच्च प्राथमिक स्तर पर हिन्दी पाठ्यक्रम में सम्मिलित कहानियों में निहित मूल्यों के प्रति छात्रों .. 142
एवं शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन (डॉ. संगीता अग्रवाल, रीता कुमारी)
57. योग शिक्षा के प्रति ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों में अभिवृति का तुलनात्मक अध्ययन 145
(डॉ. संगीता अग्रवाल, सुमित कुमारी)
58. जशपुर जिले में कृषि भूमि उपयोग का परिवर्तनशील स्वरूप : एक भौगोलिक अध्ययन (जशपुर जिले के कांसाबेल 146
तहसील के विशेष संदर्भ में) (दमयन्ती लकड़ा, डॉ. रत्नेश कुमार खन्ना)
59. Socio Economic Status Of Industrial Workers In Surved Area In Bilaspur District 149
(Biplab Majumder)

60. भारत में गरीबी – सरकार द्वारा चलाये गये कार्यक्रमों का अवलोकन (डॉ. विजय प्रकाश मिश्रा) 153

61. Role of Panchayats in Implementation of MGNREGA in Rural Areas: A Case Study of Anantnag District (J&K) (Javid Ganie, Dr. Sarla Nirankari) 155

62. Assessment of Scenario and Problems of Diversified Crop Apple in District Pulwama of J&K (Showkat Ahmad Beigh, Dr. Sarla Nirankari) 158

63. A study of impact and challenges of Digital India program (Vaibhav Sharma) 164

64. Study of Popularity of E-banking in developing cities with special reference to Indore City (Vaibhav Sharma, Archana Dwivedi) 166

65. विकास एवं पर्यावरण (राजेश भारतीय) 168

66. सरिस्का राष्ट्रीय उद्यान एवं पर्यावरण पर्यटन स्थल का एक अध्ययन (प्रो. बी. एल. वर्मा, मनीषा साहु)...................... 172

67. A study of management of emergency care providing to the swine flu patient (Aju Joseph, Dr. Shalini Gautam) 175

68. An Analytical Study Of MSME'S (Dr. Hitesh A. Kalyani) 179

69. Effects of Employee Selection Process in the Public and Private Sectors in Punjab (Gaurav Tiwari, Dr. Shalini Gautam) 183

70. लोक जीवन और लोक चेतना के वाहक भारत के लोकनाटक (अमित रंजन)... 188

71. समावेशी शिक्षा के संदर्भ में प्रयुक्त शिक्षण रणनीतियों का अध्ययन ; दिव्यांग विद्यार्थियो के उच्चतर शिक्षा के संदर्भ में (सरिता बाजपेई, डॉ. मृत्युन्जय मिश्रा) 191

72. अनुवाद : अर्थ, परिभाषा और क्षेत्र (रचना शाही) 195

73. राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों पर उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण के प्रभाव के प्रति अभिधारकों का प्रत्यक्षण (अभिमन्यु वशिष्ठ) ... 197

74. A Compartive Study Of Financial Performance Of Public Sector And Private Sector Bank In India (Dr. Narendra Marwada, Dr. Divya Solanki) 203

75. विकेन्द्रीकृत योजनाओं के क्रियान्वयन में स्थानीय प्रशासन की भूमिका (दशरथ मण्डलोई, डॉ. सुनील मोरे).... 207

76. भारत की मुद्रास्फीति से प्रवृत्ति (डॉ. स्वाति शर्मा) 210

77. वर्तमान परिपक्ष्य में योग शिक्षा के संदर्भ में स्वामी रामदेव जी के विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. प्रतिमा बनर्जी)211

78. भारतीय कर प्रणाली का आलोचनात्मक अध्ययन (डॉ. प्रतिमा बनर्जी) 213

79. मध्यप्रदेश सरकार के लोक ऋणों की अनुकूलता का अध्ययन (डॉ. सी. पी. पँवार) 215

80. मध्यप्रदेश सरकार के लोक ऋणों की भुगतान प्रवृत्ति का अध्ययन (डॉ. सी. पी. पँवार)............................. 220

81. जनजाति महिलाओं में स्वच्छता एवं स्वास्थ्य सम्बन्धित जागरुकता : एक अध्ययन (म.प्र. के झाबुआ जिले के विशेष संर्दभ में) (डॉ. मनीषा सक्सेना, सपना मोरे) .. 224

82. पुलिस प्रशासन और मानवाधिकार (डॉ. भंवरलाल चौधरी) 227

83. Impact of Islam on Indian Culture (Sunil Sharma) 229

84. भारत में सामाजिक धार्मिक सुधार आंदोलन (डॉ. अंजू श्रीवास्तव)... 231

85. फैजाबाद मण्डल में स्वतन्त्रता पश्चात नगरीकरण की प्रवृत्ति : एक भौगोलिक अध्ययन (डॉ. बृज विलास पांडे, राज कुमार यादव) 234

86. पुरातात्विक व सांस्कृतिक नगरी मल्हार के प्रमुख शिलालेख एवं संग्रहालय का ऐतिहासिक अध्ययन (मंजू साहू , डॉ. रामरतन साहू) 237

87. Some Traditional Ethnoveterinary Plants of Shekhawati Region of Rajasthan (Manju Chaudhary) 241

88. मिलावट से मानव जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा हैं जो देश के विकास में बाधक है। 'इन्दौर (म.प्र.) के सदर्भ में' (डॉ. दीपक जैन) 247

89. A Study of Impact of Green Marketing on Consumers Buying Behaviour in FMCG Sector in Urban Areas (Dr. Alka Awasthi, Anita Vishwakarma) 249

90. A Study of Partition Literature the novel of Selected writer, Attia Hosain, Khushwant Singh, Chaman Nahal and Bapsi Sidhwa (Sumiyyah Arif, Dr. Shubra Rajput) 255

91. Exploring Varanasi through a Westerner's Sojourn: A Reading of *Kaleidoscope City* by Piers Moore Ede (Ms. Savita Verdia) 259

92. अहिंसा एवं गांधी दर्शन (डॉ. सुनीता गुप्ता) 262
93. वर्तमान परिस्थितियों का आईना है व्यंग्य (डॉ. विनय शर्मा) 265
94. The Impact of Knowledge Management on Organizational Performance (Dr. Nilesh Gangwal) ... 267
95. Human Rights Jurisprudence in India (Dr. Manoj Jain) 273
96. Technical Development of Banking Sector In 21st Century (Dr. Sanjay Bhavsar) 275
97. Contribution of Internal Audit (Dr. Pratiksha Vyas) 278
98. गाँधी चिन्तन में भारतीय स्त्रियों के सामाजिक पुनरूत्थान की संकल्पना (डॉ. गोपाल सिंह) 281
99. आधुनिक हिन्दी कहानी: स्त्री और भूमंडलीकरण (डॉ. प्रभा शर्मा) 283
100. साठोत्तरी कहानियों में व्यक्त हिन्दी भाषा का सामासिक, सांस्कृतिक सरोकार (डॉ. विजयलक्ष्मी पोद्दार)........ 285
101. दक्षिणी राजस्थान कृषि गहनता का वितरण (2010-11 से 2012-13) - एक भौगोलिक अध्ययन 287
(रोहित लौहार)
102. प्राथमिक विद्यालय में कार्यरत् प्रशिक्षित अध्यापकों की शिक्षा अभिक्षमता (अमरोहा जनपद के 290
विशेष संदर्भ में) (डॉ. अनुराग यादव, भावना वर्मा)
103. जीवन कौशल विकसित करने में शिक्षक की भूमिका (डॉ. योगेश चन्द्र जोशी) 294
104. कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी (डॉ. हर्षा क्षीरसागर) 297
105. Significance of the 'Python Episode' in Arrow of God (Dr. Surendra Kumar Sao) 301
106. Feminist Voices in the Novels of Kamala Markandaya (Minakshi Kumar) 304
107. सूफीवाद - साझा संस्कृति के प्रतिबिंब (डॉ. अलीमा शहनाज सिद्दीकी) 307
108. Research in Teacher Education (Dr. Kuldeep Singh Tomar)........ 309
109. Food Supplement (Protein) for Boosting the Strength of Sportsperson........311
(Dr. Deepak Chandra Maurya)
110. मृच्छकटिके लोककलासामाजिकदशाश्च (डॉ. नरेन्द्रकुमार:) 313
111. मीडिया में वंचित समाज के पत्रकार एवं डाईवर्सिटी (महेश कुमार वर्मा, डॉ. कुंजन आचार्य) 315
112. A Study of Work-Life Balance in the Pharmaceutical Sector in India 318
(Manoj Gaur, Dr. Shalini Sinha)
113. समकालीन कविता में मानव शोषण की अभिव्यक्ति (डॉ. संजय सक्सेना) 321
114. प्रधानमंत्री की संवैधानिक और वास्तविक शक्तियों का मूल्यांकन (डॉ. आदित्य कुमार सिंह) 324
115. भारत में वस्त्र उद्योग: एक स्वर्णिम इतिहास (डॉ. अरविन्द प्रकाश) 327
116. स्त्री चेतना और आधुनिक काव्य (डॉ. ओमवती देवी) 330
117. Mutual Funds Sector in India (Dr. Rajesh Shroff) 333
118. माननीय सांसदों-विधायकों की गिरफ्तारी एवं कानून व्यवस्था एवं पुलिस की भूमिका (आशीष श्रीवास्तव)...... 336
119. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन 339
(डॉ. सतीशपाल सिंह)
120. भारत की आंतरिक सुरक्षा के सामने नक्सलवाद की चुनौती: एक अध्ययन........ 344
(डॉ. (लेफ्टिनेंट) कनिया मेड़ा, डॉ. सुशील कुमार)
121. Health Status of Women in India (Dr. Santosh Kumari) 348
122. भारतीय राजनीति में स्त्रियों की स्थिति (डॉ. अवधेश कुमार) 350
123. आधुनिक जीवन-द्वन्द्व और मोहन राकेश के नाटकों की कथावस्तु (डॉ. जयराम त्रिपाठी) 353
124. Forty Second (42^{nd}) Amendment in the Constitution of India : In the Perspective of........ 356
Biodiversity Conservation (Dr. Jolly Garg)
125. युवा शक्ति का सशक्तिकरण (डॉ. आरती कनौजिया) 359
126. Efficacy of Henna or Mehendi that Transcends the Religions and Enriches the Cultures 361
(Dr. Mani Bansal, Dr. Anuj Kumar Agarwal)
127. Digital Transformation and Technological Advances in Fintech (Dr. Akhil Sitokey) 364

128. वैदिक साहित्य में कला का उद्‌भव और विकास (डॉ. सुनीता मीना) 370
129. दलित आरक्षण का भारतीय राजनीति में प्रभाव (डॉ. हनुमान प्रसाद मीना) 372
130. प्राचीन भारत में महिलाओं के विरूद्ध हिंसा और उत्पीड़न के विभिन्न स्वरूप -एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 376
(अनिता टाँक, डॉ. एच. एन. व्यास)
131. Anti-Competitive Agreements (Dr. Kiran Yadav) 379
132. भारतीय प्रशासन में सुशासन का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (महेश कुमार रचियता) 382
133. मानवतावाद और नीतिपरक राजनीति (डॉ. सोमवती शर्मा) 385
134. Impact of Media on Public Opinion in India (Dr. Sandhya Jaipal) 388
135. The Role of NGOs and Civil Society in Addressing Social Issues in India (Dr. Anjali Jaipal) 391
136. देश की समृद्धि में पशुधन का योगदान (डॉ. नितिन सहारिया) 395
137. ग्रामीण विकास व सहकारी आंदोलन: एक समीक्षा (डॉ. अर्चना सिंह) 397
138. Implementation of Fractional Programming in Existent Life Quandaries 399
(Dr. Pankaj Mathur, Dr. P. R. Parihar)
139. सामाजिक अनुसंधान का समाज और राज्य-व्यवस्था में भूमिका (एक समाजशास्त्रीय विमर्श) (डॉ. नीरजा शर्मा) 401
140. Advances In Nanoparticle Synthesis And Applications In Chemistry (Dr. Anjul Singh) 404
141. Biodiversity and Environmental Conservation (Dr. Shagufta Saify) 410
142. मेवाड़ के आदिवासी अंचल में जन जागृति (डॉ. सुदर्शन सिंह राठौड़) 412
143. भारत की लोकसंस्कृति (डॉ. सुमित मेहता) 414
144. अभिव्यक्ति का अधिकार (डॉ. अमित मेहता) 417
145. कुटीर एवं लघु उद्योगों में रोजगार की संभावनायें (डॉ. प्रवीण पंड्या) 419
146. मध्यप्रदेश में वन और सुरक्षा (डॉ. पन्नालाल कटारा) 422
147. Community-Based Interventions to Combat Mental Health Stigma in India 424
(Dr. Gouri Shanker Meena)
148. Leveraging potential of Deep Learning to build conversational AI chatbot for Indian Farmers ... 429
(Kavita Devanand Bathe)
149. The Impact of Intensity Training, on the Immune Response, in College Level Football 435
Players and Track and Field Athletes (Dr. Hitesh Chandra Raval)
150. A Study on the Impact of Green Fiscal Policies on Economic Growth and Environmental 438
Sustainability (Dr. Mukesh Chauhan)

Regional Editor Board - International & National

1. Dr. Manisha Thakur - Fulton College, Arizona State University, America.
2. Mr. Ashok Kumar - Employbility Operations Manager, Action Training Centre Ltd. London, U.K.
3. Ass. Prof. Beciu Silviu - Vice Dean (Management) Agriculture & Rural Development, UASVM, Bucharest, Romania.
4. Mr. Khgendra Prasad Subedi - Senior Psychologist, Public Service Commission, Central Office, Anamnagar, Kathmandu, Nepal.
5. Prof. Dr. G.C. Khimesara - Former Principal, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.) India
6. Prof. Dr. Pramod Kr. Raghav - Research Guide, Jyoti Vidhyapeeth Women University, Jaipur (Raj.) India
7. Prof. Dr. Anoop Vyas - Former Dean, Commerce, Devi Ahilya University, Indore (India) India
8. Prof. Dr. P.P. Pandey - Dean, Commerce, Avadesh Pratapsingh University, Rewa (M.P.) India
9. Prof. Dr. Sanjay Bhayani - HOD, Business Management Deptt., Saurashtra University, Rajkot (Guj.) India
10. Prof. Dr. Pratap Rao Kadam - HOD, Commerce, Govt. Girls PG College, Khandwa (M.P.) India
11. Prof. Dr. B.S. Jhare - Professor, Commerce Deptt., Shri Shivaji College, Akola (Mh.) India
12. Prof. Dr. Sanjay Khare - Prof., Sociology, Govt. Auto. Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
13. Prof. Dr. R.P. Upadhayay - Exam Controller, Govt. Kamlaraje Girls Auto. PG College, Gwalior (M.P.) India
14. Prof. Dr. Pradeep Kr. Sharma - Professor, Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) India
15. Prof. Akhilesh Jadhav - Prof., Physics, Govt. J. Yoganandan Chattisgarh College, Raipur (C.G.) India
16. Prof. Dr. Kamal Jain - Prof., Commerce, Govt. PG College, Khargone (M.P.) India
17. Prof. Dr. D.L. Khadse - Prof., Commerce, Dhanvate National College, Nagpur (Maharastra) India
18. Prof. Dr.Vandna Jain - Prof., Hindi, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) India
19. Prof. Dr. Hardayal Ahirwar - Prof.,Economics, Govt. PG College, Shahdol (M.P.) India
20. Prof. Dr. Sharda Trivedi - Retd. Professor, Home Science, Indore (M.P.) India
21. Prof. Dr. Usha Shrivastav - HOD, Hindi Deptt., Acharya Institute of Graduate Study, Soldevanali, Bengaluru (Karnataka) India
22. Prof. Dr. G. P. Dawre - Professor, Commerce, Govt. College, Badwah (M.P.) India
23. Prof. Dr. H.K. Chouarsiya - Prof., Botany, T.N.V. College, Bhagalpur (Bihar) India
24. Prof. Dr. Vivek Patel - Prof., Commerce, Govt. College, Kotma, Distt., Anooppur (M.P.) India
25. Prof. Dr. Dinesh Kr. Chaudhary - Prof., Commerce, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) India
26. Prof. Dr. P.K. Mishra - Prof., Zoological, Govt. PG College, Betul (M.P.) India
27. Prof. Dr. Jitendra K. Sharma - Prof., Commerce, Maharishi Dayanand Uni. Centre, Palwal (Haryana) India
28. Prof. Dr. R. K. Gautam - Prof., Govt. Manjkuwar Bai Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.) India
29. Prof. Dr. Gayatri Vajpai - Professor, Hindi, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.) India
30. Prof. Dr. Avinash Shendare - HOD, Pragati Arts & Commerce College, Dombivali, Mumbai (Mh.) India
31. Prof. Dr. J.C. Mehta - Fr. HOD, Research Centre, Commerce, Devi Ahilya Uni., Indore (M.P.) India
32. Prof. Dr. B.S. Makkad - HOD, Research Centre Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) India
33. Prof. Dr. P.P. Mishra - HOD, Maths, Chattrasal Govt. PG College, Panna (M.P.) India
34. Prof. Dr. Sunil Kumar Sikarwar - Professor, Chemistry, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
35. Prof. Dr. K.L. Sahu - Professor, History, Govt. PG College, Narsinghpur (M.P.) India
36. Prof. Dr. Malini Johnson - Professor, Botany, Govt. PG College, Mahu (M.P.) India
37. Prof. Dr. Ravi Gaur - Asso. Professor, Mathematics, Gujarat University, Ahmedabad (Gujarat) India
38. Prof. Dr. Vishal Purohit - M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Miadan, Indore (M.P.) India

Editorial Advisory Board, INDIA

1. Prof. Dr. Narendra Shrivastav - Scientist , ISRO, Bengaluru (Karnataka) India
2. Prof. Dr. Aditya Lunawat - Director, Swami Vivekanand Career Guidance deptt. M.P. Higher Education, M.P. Govt., Bhopal (M.P.) India
3. Prof. Dr. Sanjay Jain - O.S.D., Additional Director Office, Bhopal (M.P.) India
4. Prof. Dr S.K. Joshi - Former Principal, Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) India
5. Prof. Dr. J.P.N. Pandey - Fr. Principal, Govt. Auto.Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.) India
6. Prof. Dr. Sumitra Waskel - Principal, Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.) India
7. Prof. Dr. P.R. Chandelkar - Principal, Govt. Girls P.G. College, Chhindwara (M.P.) India
8. Prof. Dr. Mangal Mishra - Principal, Shri Cloth Market, Girls Commerce College, Indore (M.P.) India
9. Prof. Dr. R.K. Bhatt - Former Principal, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.) India
10. Prof. Dr. Ashok Verma - Former HOD, Commerce (Dean) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
11. Prof. Dr. Rakesh Dhand - HOD, Student Welfare Deptt., Vikram University, Ujjain (M.P.) India
12. Prof. Dr. Anil Shivani - HOD, Commerce /Management, Govt. Hamidiya Arts And Commerce Degree College, Bhopal (M.P.) India
13. Prof. Dr. PadamSingh Patel - HOD, Commerce Deptt., Govt. College, Mahidpur (M.P.) India
14. Prof. Dr. Manju Dubey - HOD (Dean), Home Science Deptt. Jiwaji University, Gwalior (M.P.) India
15. Prof. Dr. A.K. Choudhary - Professor, Psychology, Govt. Meera Girls College, Udiapur (Raj.) India
16. Prof. Dr. T. M. Khan - Principal, Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) India
17. Prof. Dr. Pradeep Singh Rao - Principal, Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.) India
18. Prof. Dr. K.K. Shrivastava - Professor, Eco., Vijaya Raje Govt. Girls P.G. College, Gwalior (M.P.) India
19. Prof. Dr. Kanta Alawa - Professor, Pol. Sci., S.B.N.Govt. P.G. College, Badwani (M.P.) India
20. Prof. Dr. S.C. Jain - Professor, Commerce, Govt. P.G. College, Jhabua (M.P.) India
21. Prof. Dr. Kishan Yadav - Asso. Professor, Research Centre Bundelkhand College, Jhasi (U.P.) India
22. Prof. Dr. B.R. Nalwaya - Chairman,Commerce Deptt.,Vikram University, Ujjain (M.P.) India
23. Prof. Dr. Purshottam Gautam - Dean, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
24. Prof. Dr. Natwarlal Gupta - HOD, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
25. Prof. Dr. S.C. Mehta - Former, Professor/HOD, Govt. Bhagat Singh P.G. College, Jaora (M.P.) India

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Referee Board

Maths	-	(1)	**Prof. Dr. V.K. Gupta, Director Vedic Maths - Research Centre, Ujjain (M.P.)**
Physics	-	(1)	**Prof. Dr. R.C. Dixit, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)**
		(2)	**Prof. Dr. Neeraj Dubey, Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)**
Computer Science	-	(1)	**Prof. Dr. Umesh Kumar Singh, HOD, Computer Study Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)**
Chemistry	-	(1)	**Prof. Dr. Manmeet Kaur Makkad, Govt. Kalidas Girls College,Ujjain (M.P.)**
Botany	-	(1)	**Prof. Dr. Suchita Jain, Govt. Girls P.G. College, Kota (Raj.)**
		(2)	**Prof. Dr. Akhilesh Aayachi, Govt. Adarsh Science College, Jabalpur (M.P.)**
Life Science	-	(1)	**Prof. Dr. Manjulata Sharma, M.S.J. Govt. College, Bharatpur (Raj.)**
	-	(2)	**Prof. Dr. Amrita Khatri, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)**
Statitics	-	(1)	**Prof. Dr. Ramesh Pandya, Govt. Arts - Commerce College, Ratlam (M.P.)**
Military Science	-	(1)	**Prof. Dr. Kailash Tyagi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)**
Biology	-	(1)	**Dr. Kanchan Dhingara, Govt. M.H. Home Science College, Jabalpur (M.P.)**
Geology	-	(1)	**Prof. Dr. R.S. Raghuvanshi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)**
		(2)	**Prof. Dr. Suyesh Kumar, Govt. Adarsh College, Gwalior (M.P.)**
Medical Science	-	(1)	**Dr.H.G. Varudhkar, R.D. Gardi Medical College, Ujjain (M.P.)**
Microbiology Sci.	-	(1)	**Anurag D. Zaveri, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat)**

******* Commerce *******

Commerece	-	(1)	**Prof. Dr. P.K. Jain, Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)**
		(2)	**Prof. Dr. Shailendra Bharal, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)**
		(3)	**Prof. Dr. Laxman Parwal, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)**
		(4)	**Naresh Kumar, Assistant Professor,Sidharth Govt. College, Nadaun (H.P.)**

******* Management *******

Management	-	(1)	**Prof. Dr. Anand Tiwari, Govt. Autonomus PG Girls Excellence College, Sagar (M.P.)**
Human Resources	-	(1)	**Prof. Dr. Harwinder Soni, Pacific Business School, Udaipur (Raj.)**
Business Administration	-	(1)	**Prof. Dr. Kapildev Sharma, Govt. Girls P.G. College, Kota (Raj.)**

******* Law *******

Law	-	(1)	**Prof. Dr. S.N. Sharma, Principal, Govt. Madhav Law College, Ujjain (M.P.)**
		(2)	**Prof. Dr. Narendra Kumar Jain, Principal, Shri Jawaharlal Nehru PG Law College, Mandsaur (M.P.)**

******* Arts *******

Economics	-	(1)	**Prof. Dr. P.C. Ranka, Sri Sitaram Jaju Govt. Girls P.G. College, Neemuch (M.P.)**
		(2)	**Prof. Dr. J.P. Mishra, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.)**
		(3)	**Prof. Dr. Anjana Jain, M.L.B. Govt. Girls P.G. College, Kila Maidan, Indore (M.P.)**
		(4)	**Prof. Rakesh Kumar Gupta, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.)**
Political Science	-	(1)	**Prof. Dr. Ravindra Sohoni, Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.)**
		(2)	**Prof. Dr. Anil Jain, Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)**
		(3)	**Prof. Dr. Sulekha Mishra, Mankuwar Bai Govt. Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.)**
Philosophy	-	(1)	**Prof. Dr. Hemant Namdev, Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)**
Sociology	-	(1)	**Prof. Dr. Uma Lavania, Govt. Girls College, Bina (M.P.)**
		(2)	**Prof. Dr. H.L. Phulvare, Govt. P.G. College, Dhar (M.P.)**
		(3)	**Prof. Dr. Indira Burman, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)**

Hindi	-	(1)	Prof. Dr. Vandana Agnihotri, Chairperson, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Kala Joshi , ABV Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Chanda Talera Jain, M.J.B. Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.)
		(4)	Prof. Dr. Jaya Priyadarshini Shukla, Vansthali Vidyapeeth (Raj.)
		(5)	Prof. Dr. Amit Shukla, Govt. Thakur Ranmatsingh College, Rewa (M.P.)
		(6)	Prof. Dr. Anchal Shrivastava, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.)
English	-	(1)	Prof. Dr. Ajay Bhargava, Govt. College, Badnagar (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Manjari Agnihotri, Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
Sanskrit	-	(1)	Prof. Dr. Bhawana Srivastava, Govt. Autonomus Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Balkrishan Prajapati, Govt. P.G. College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
History	-	(1)	Prof. Dr. Naveen Gidiyan, Govt. Autonomus Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.)
Geography	-	(1)	Prof. Dr. Rajendra Srivastava, Govt. College, Pipliya Mandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
		(2)	Prof. Kajol Moitra, Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.)
Psychology	-	(1)	Prof. Dr. Kamna Verma, Principal, Govt. Rajmata Sindhiya Girls P.G. College, Chhindwara (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Saroj Kothari, Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
Drawing	-	(1)	Prof. Dr. Alpana Upadhyay, Govt. Madhav Arts-Commerce-Law College. Ujjain (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Rekha Srivastava, Maharani Laxmibai Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Yatindera Mahobe, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.)
Music/Dance	-	(1)	Prof. Dr. Bhawana Grover (Kathak),Swami Vivekanand Subharti University, Meerut (U.P.)
		(2)	Prof. Dr. Sripad Aronkar, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.)

***** Home Science *****

Diet/Nutrition Science	-	(1)	Prof.Dr. Pragati Desai, Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Madhu Goyal, Swami Keshavanand Home Science College, Bikaner (Raj.)
		(3)	Prof. Dr. Sandhya Verma, Govt. Arts & Commerce College, Raipur (Chhattisgarh)
Human Development	-	(1)	Prof. Dr. Meenakshi Mathur, HOD, Jainarayan Vyas University, Jodhpur (Raj.)
		(2)	Prof. Dr. Abha Tiwari, HOD, Research Centre, Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.)
Family Resource Management	-	(1)	Prof. Dr. Manju Sharma, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Namrata Arora, Vansthali Vidhyapeeth (Raj.)

***** Education *****

Education	-	(1)	Prof. Dr. Manorama Mathur, Mahindra College of Education, Bangluru (Karnataka)
		(2)	Prof. Dr. N.M.G. Mathur, Principal/Dean, Pacific EducationCollege, Udaipur (Raj.)
		(3)	Prof. Dr. Neena Aneja, Principal, A.S. College Of Education, Khanna (Punjab)
		(4)	Prof. Dr. Satish Gill, Shiv College of Education,Tigaon, Faridabad (Haryana)
		(5)	Prof. Dr. Mahesh Kumar Muchhal, Digambar Jain (P.G.) College, Baraut (U.P.)

***** Architecture *****

Architecture	-	(1)	Prof. Kiran P. Shindey, Principal,School of Architecture,IPS Academy, Indore (M.P.)

***** Physical Education *****

Physical Education	-	(1)	Prof. Dr. Joginder Singh, Physical Education, Pacific University, Udaipur (Raj.)
		(2)	Dr. Ramneek Jain, Associate Professor, Madhav University, Pindwara (Raj.)
		(3)	Dr. Seema Gurjar, Associate Professor, Pacific University, Udaipur (Raj.)

***** Library Science *****

Library Science	-	(1)	Dr. Anil Sirothia, Govt. Maharaja College, Chhattarpur (M.P.)

नगरीय निकाय कटनी के स्वास्थ्य जागरूकता कार्यक्रमों का अध्ययन

डॉ. अनिल तौहेल *

प्रस्तावना – भारतीय लोकतंत्र में नागरिकों के स्वास्थ्य की समुचित व्यवस्था करने के लिए सरकार उत्तरदायी है इसकी पूर्ति हेतु सरकार ने पृथक स्वास्थ्य मंत्रालय की स्थापना की है। भारत में शासन व्यवस्था का स्वरूप विकेन्द्रित है जिसके अंर्तगत राज्यों मे स्थानीय स्तर पर शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसी मूलभूत सुविधायों की व्यवस्था का दयित्व स्थानीय स्वस्वशासन का होता है। नगरीय या शहरी क्षेत्रों मे यह कार्य नगरीय निकाय या नगर निगम या नगर पालिक द्धारा किया जाता है। कटनी नगर पालिक निगम भी अपने क्षेत्रांतर्गत स्वास्थ्य सेवाओं को उपलब्ध कराने हेतु विभिन्न स्वास्थ्य योजनाएं एवं कार्यक्रमों का संचालन भी करती है। इसी उद्देश्य से नगरीय निकाय के अंतर्गत विभिन्न चिकित्सालयों एवं लोक स्वास्थ्य केन्द्रों की व्यवस्था की गई है।

कटनी नगर निगम को शहरी क्षेत्र कहा जाता है, जिसकी जनसंख्या विभिन्ना क्षेत्रो से आकर बसने वाले लोगों की है। निगम के क्षेत्रांतर्गत जिला चिकित्सालय कटनी एवं विभिन्न वार्डो में 'स्वास्थ्य केन्द्रों' सहित आयुर्वेद, होम्योपैथिक एवं अन्य चिकित्सा पद्धतियों के सरकारी तथा निगम के अनेक चिकित्सालय है। लेकिन जागरूकता की कमी के कारण जनता तक ये सुविधाएं नही पंहुचती। वहीं दूसरी और निजी चिकित्सालय, अस्पताल एवं डॉक्टर अपने पेशे का व्यवसाय के रूप मे भारी मात्रा में प्रचार-प्रसार करते है जिसके परिणाम स्वरूप उँची शुल्क होने पर भी डॉक्टरों एवं अस्पतालों के समाने मेला लगा रहता है। जीवने से मूल्यवान कुछ भी नहीं है, लोग अपनी भूमि-भवन, आभूषण और सभी मूल्यवान वस्तुएं बेचकर भी उपचार करा रहे है। इससे सिद्ध होता है कि सरकारी अस्पताल उतने कारगर नहीं है जितनी अपेक्षा की जाती है। शासकीय चिकित्सालयों मे विश्वसनीयता, सूचना एवं जन-जागरूकता का भी अभाव है।

आज कटनी शहर की जनसंख्या लगभग 10,25,048 (2011) नगरीय निकाय कटनी का क्षेत्रफल 4,950 वर्ग कि.मी. है जो 45 वार्डो मे विभक्त है कई क्षेत्र ऐसे है जहां सूचना तंत्र की कमी के कारण जन जागरूकता में कमी है। उन क्षेत्रों में शासन-प्रशासन द्धारा चलाई जा रही कल्याणकारी योजनाओं की जानकारी ठीक से नहीं पहुंच पाती है, ऐसी स्थिति में उन क्षेत्रो, विशेषकर गंदी बस्तियों और निचली बस्तियों के लिये शासन-प्रशासन द्धारा चलाई जा रही कल्याणकारी योजनाओं का प्रचार-प्रसार करके योजनाओं का लाभ उपेक्षित वर्ग को दिलाया जा सकता है। वर्तमान समय में प्रदूषण एवं पर्यावरण असंतुलन के कारण लोगो के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है, और नित्य नये रागों से लोग ग्रसित हो रहे है, जैसे- डेंगू, मलेरिया, फाइलेरिया, आंत्रशोध एवं पीलिया जैसे घातक एवं भयानक रोगों से निपटने, इनकी रोकथाम के लिए जन जागरूकता का प्रचार-प्रसार आवश्यक है। इसके लिए सर्वप्रथम स्वयं प्रेरित हो तथा दूसरो को प्रेरित करें कि स्वच्छ रहकर स्वस्थ्य बनें। घर के आस-पास गंदे पानी का जमाव न होने दे, गंदगी न फैलाये, नाला-नालियों एवं मार्गो पर कचरा एवं पॉलीथीन न फेंके इससे वातावरण प्रदूषित होता है, प्रदूषित, वासी एवं अखाद्य पदार्थो का प्रयोग न करे इसके सेवन से संक्रमित बीमारियों का फैलाव होता है। स्वच्छता एवं पर्यावरण का ध्यान रखें, इससे आप निरोग रहेंगे। जब आप निरोग रहेंगे तो आपका परिवार, समाज, शहर एवं पूरा राष्ट्र स्वस्थ एवं निरोग रहेगा।

कटनी (जिसे मुड़वारा के नाम से भी जाना जाता है) मध्यप्रदेश, भारत में कटनी नदी के तट पर स्थित एक शहर है। 28 मई 1998 को कटनी जिला घोषित किया गया। कटनी जिले की तहसील- कटनी, रीठी, विजयराघवगढ़, बहोरीबंद तथा ढ़ीमरखेड़ा है। इसका लोकसभा क्षेत्र खुजराहो है तथा इसकी चार विधान सभा- बड़वारा, विजयराघवगढ़, मुड़वारा तथा ढ़ीमरखेड़ा है। कटनी नगर निगम मे कुल 45 वार्ड है।

कटनी नगर पालिक निगम की सामान्य स्वास्थ्य एवं स्वच्छता योजनाएं :

1. **चिकित्सालयों-ओषधालयों का संचालन** – नागरिकों के स्वास्थय की रक्षा करने तथा उन्हे आवश्यक औषधियां समय पर उपलब्ध कराने के लिए नगर निगम द्धारा अनेक चिकित्सालय एवं स्वास्थय केन्द्र संचालित किये जा रहे है।
2. **कीटनाशक दवाइयों का उपयोग** – जन स्वस्थय रक्षा की दृष्टि से नगर निगम का स्वास्थय विभाग कीटनाशक दवाइयों का छिड़काव करता है ताकि क्षेत्र मे मलेरिया एवं मच्छरों से उत्पन्न होने वाली तथा अन्य संक्रामक बीमारियों की रोकथाम की जा सके।
3. **सामुदायिक शौचालयो, मूत्रालयों की व्यवस्थ एवं संधारण** – नागरिकों की सुविधा के लिए अनेक स्थलों पर सामुदायिक शौचालय एवं मूत्रालय का निर्माण कराया गया है। इसकी सफाई एवं संधारण व्यवस्था निगम द्धारा नियमित एवं संविदा कर्मचारियो के माध्यम से कराई जाती है।
4. **चलित शौचालयों की व्यवस्था** – नगर निगम द्धारा विभिन्न वार्डो में चलित शौचालयों की व्यवस्था की गई है एवं विभिन्न सार्वजनिक आयोजनो मेलो में अस्थायी शौचालय बनाये जाते है।
5. **ठोस अपशिष्ट प्रबंधन कार्य** – ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के अंतर्गत अत्यंत महत्वपूर्ण भाग डोर टू डोर कलेक्शन है। इस हेतु नगर निगम द्धारा कचरा गाड़ी की योजना चलाई गई है जो घर-घर जाकर गीला तथा सूखा दोनो प्रकार का कचरा एकत्र करती है।
6. **आवारा पशुओं पर नियंत्रण** – कटनी नगर निगम में आवारा कुत्तो एवं पशुओं की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है जिस पर नियंत्रण हेतु

* सहायक प्रध्यापक (वाणिज्य) शासकीय तिलक महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.) भारत

नागरिको को एंटी रैवीज वेक्सीन नि:शुल्क प्रदाय किये जाते है।

7. शव वाहन – शहर की जनसंख्या एवं विस्तार को देखते हुए नगर निगम द्वारा शव वाहन की व्यवस्था किया जाना प्रस्तावित है।

8. मृत पशु उठाने हेतु वाहन –मृत पशु (कुत्ता, बिल्ली, सुअर आदि) को उठाने हेतु नगर निगम वाहन उपलब्ध कराती है ताकि कर्मचारियो का इन मृत पशुओं को उठाने मे कठिनाई का सामना नही करना पडे और शहर का वातावरण स्वच्छ रहे।

नगरीय निकाय कटनी क्षेत्र में सर्वेक्षण हेतुं चयनित स्थान एवं हितग्राही :–

क्र.	वार्ड क्रमांक	वार्ड का नाम	चयनित कुल हितग्राही
1	31	पाठक वार्ड	25
2	32	राम निवास सिंह वार्ड	10
3	33	कावसजी वार्ड	16
4	34	फारेस्टर वार्ड	16
5	35	मंगल नगर	22
6	44	महाराणा प्रताप वार्ड	10
7	45	रविन्द्रनाथ टैगोर वार्ड	11
8	21	मालवीय गंज	30
9	29	बजरंग नगर	18
10	07	जालपा वार्ड पुरानी बस्ती	18
	योग		**176**

सर्वेक्षित नागरिको द्वारा अपनाई जाने वाली चिकित्सा पद्धति :–

क्र.	चिकित्सा पद्धति का नाम	अपनाने वालो की संख्या (176 मे से)	
		संख्या	प्रतिशत
1	एलोपैथी	96	55
2	होम्योपैथी	16	08
3	आयुवर्वेदिक	18	11
4	देशी व अन्य	02	01
5	झाड फूक	00	00
6	एलोपैथी+होम्योपैथी+आयुर्वेदिक	32	18
7	चिकित्सा के साथ झाड फूक	12	07
	योग	**176**	**100**

(स्त्रोत– सर्वेक्षण द्वारा संग्रहित सूचना समंक)

स्वास्थ्य एवं जागरूकता संबंधी संस्थाए :

1. शासकीय चिकित्सालयों की कमी – नगर में लगभग 25 प्रतिशत लोग निर्धन है जिनके स्वास्थ्य की रक्षा का दायित्व शासकीय चिकित्सालयों पर है। जो कि जनसंख्या के अनुपात में कम है। निर्धन व्यक्ति बीमार पड़ने पर शासकीय चिकित्सालयों के चक्कर काटते है या निजी चिकित्सालयों मे आधा–अधूरा इलाज कराते है या फिर चिकित्सा से वंचित होकर देशी चिकित्सा या जड़ी–बूटीयों का सहारा लेते है।

2. दवाइयों का अभाव – यह शासकीय चिकित्सालयों की एक गंभीर समस्या है, यदि किसी तरह निर्धन वर्ग के रोगी शासकीय डॉक्टर से परामर्श लेने में सफल हो भी गये तो डॉक्टर की बताई गई दवाइयां शासकीय औषद्यालयों में उपलब्ध नहीं रहती है।

3. आवश्यक चिकित्सा सुविधाओं की कमी – शासकीय चिकित्सालयों में आवश्यक चिकित्सा सुंविधाए जैसे– एक्सरे, पैथोलाजी, सोनोग्राफी, ब्लड बैंक इत्यादि सुविधाओं का आभाव रहता है।

4. साधनो–संसाधनों की कमी – यह भी शासकीय चिकित्सालयों की एक गंभीर समस्या है अधिकांश शासकीय अस्पताल या तो किराये के भवन में या जर्जर शासकीय भवन में संचालित है।

5. राजनैतिक हस्तक्षेप – यह सभी शासकीय विभागों की एक विकट समस्या है इस समस्या का दुष्परिणाम यह होता है कि शासकीय चिकित्सक एवं कर्मचारी दबाव मे काम करते है।

6. निम्न/पिछड़े वर्ग मे जागरूकता की कमी –आर्थिक– सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ व्यक्ति अपनी रोजी– रोटी और ग्रहस्थी की व्यवस्था करने में ही व्यस्त रहता है एवं अपना सारा समय उसी मे लगा देता है। अब ऐसे मे स्वास्थ्य रक्षा उपायों के लिए उसके पास समय और धन दोनो का अभाव होता है इसलिए वे स्वास्थ्य पर अधिक ध्यान नहीं दे पाते।

7. नालियों की नियमित सफाई नहीं होना – नागरीय निकायो में या तो सफाई कर्मचारियों की कमी है, या जो कर्मचारी नियुक्त है वे अपने कार्य के प्रति लापरवाह है, इस कारण सफाई नियमित नहीं हो पाती। वर्तमान ठेका प्रथा भी इसके लिए उत्तारदायी है।

8. प्रदूषण की समस्या – नगरीय निकाय क्षेत्र में प्राय: उद्योगिक–व्यापारिक तथा अस्पतालो इत्यादि के कचरे दूषित जल, मल, धूल एवं धुआ इत्यादि के अत्याधिक प्रसार के कारण समस्त प्रकार के प्रदूषण का खतरा उत्पन्न होता है। यह प्रदूषण अनेक जटिल बीमारीयों को आमंत्रण देता है।

9. गंदी बस्तीयों की समस्या –इस समस्या का कारण अंधाधुन्ध शहरीकरण है जो स्वाभाविक है। शहरों मे अधिकांश लोग गांव से आकर बसते है तथा सभी लोग व्यवास्थित कालोनियों मे बंगलो या व्यवस्थित भवनों मे नही रह सकते। गांव से आने वाले मजदूर–निर्धन लोग अधिक होते है जो जहां भी शासकीय भूमि खाली देखते है वहीं कच्चा मकान बनाकर बस जाते है इस तरह धीरे–धीरे एक बस्ती बन जाती है।

10. स्वास्थ्य जागरूकता हेतु उपयुक्त एवं प्रभावशाली कायक्रमों की कमी – वर्तमान में लागू कार्यक्रमों/योजनाओं का स्तर अच्छा नहीं है या वे प्रभावशाली नहीं हैं इस कारण उन कार्यक्रमों का जनमानस पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ता।

समाधानात्मक सुझाव :

1. चिकित्सालयों की संख्या मे वृद्धि करके आधुनिक उपकरण युक्त चिकित्सा सुविधाए उपलब्ध कराना चाहिए।
2. दवाइयों की पर्याप्त उपलब्धता पर ध्यान देना चाहिए।
3. चिकित्सा सुविधाओं मे आवश्यकतानुसार वृद्धि करना चाहिए।
4. डॉक्टरों एवं विशेषज्ञों की शीघ्र नियुक्ति की जानी चाहिए।
5. साधनो–संसाधनों मे वृद्धि की जानी चाहिए।
6. नौकरशाही पर नियंत्रण करने हेतु यथा संभव प्रयास किये जाने चाहिए।
7. स्वास्थ्य सेवाओ को राजनैतिक हस्तक्षेप से युक्त रखना चाहिए।
8. जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण हेंतु यथा संभव प्रयास किये जाने चाहिए।
9. निम्न एवं पिछड़े वर्ग को जागरूक बनाने के लिए रोजगार और आय मे वृद्धि के साथ ही उन्हे अच्छी शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था करनी चाहिए।
10. शुद्ध पेय जल की समुचित व्यवस्था सम्पूर्ण नगरीय निकाय क्षेत्र में करनी चाहिए।
11. नाले– नालीयों तथा मार्ग की नियमित सफाई व्यवस्था सुनिश्चित करना चाहिए।
12. स्वास्थ्य जागरूकता हेतु अच्छे कार्यक्रम बनाने एवं लागू करने चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिन्हा वी.सी., सामाजिक अनुसंधान एवं संख्यिकी, नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।
2. श्रीवास्तव बाबूलाल, न.पा.निगम अधिनियम एवं नियम 1956सुविधा लॉ हाउस भोपाल।
3. योजना- मासिक पत्रिका प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय नई दिल्ली।
4. दैनिक भास्कर।
5. स्वास्थ्य प्रतिवेदन, आयुक्त नगर निगम कटनी, स्वास्थ्य विभाग।

****

विमुद्रीकरण के प्रभावों का अध्ययन चीनौर तहसील जिला ग्वालियर के सन्दर्भ में

डॉ. लारेन्स कुमार बौद्ध *

शोध सारांश – विमुद्रीकरण की प्रकिया हमारे देश में 08 नवम्बर 2016 को रात बारह बजे से पॉच सौ एवं एक हजार रूपए के नोटों पर लागू की गई थी तथा यह बाजार में प्रचलन से बाहर होने के साथ-साथ अवैध भी हो गए थे कुछ सेवाओं को छोड़कर,यह हमारे देश के प्रधानमंत्री द्वारा उठाया गया बहुत ही साहसी कदम था और उस समय लोग हक्के बक्के रह गए थे तथा बहुत ही परेशानी का सामना करना पड़ा था लेकिन इसके दूरगामी परिणाम बहुत ही सार्थक सिद्ध होगे तथा इस विमुद्रीकरण की व्यवस्था के कारण हमारे देश को बहुत लाभ हुआ है। सरकार का यह निर्णय हमारे देश के लिए वरदान की तरह आया है हम सबको इस निर्णय का समर्थन करना चाहिए तथा इसे सफल बनाने के लिए पूरी कोशिश करनी चाहिए विमुद्रीकरण के निर्णय को असफल बनाने की किसी भी कोशिश की जानकारी तुरंत सरकार को देनी चाहिए। कालेधन के विरूद्ध इस युद्ध में हमें सरकार का साथ देना है हमें पूरी उम्मीद है कि विमुद्रीकरण का यह निर्णय लंबे समय में सम्पन्न, सशक्त और सुखी भारत के निर्माण में सहायक बनेगा।

प्रस्तावना – विमुद्रीकरण से आशय जब सरकार कानूनी रूप से पुरानी मुद्रा के प्रचलन को बन्द कर नई मुद्रा को प्रचलन में लाने की घोषणा करती है तो इसे हम नोटबन्दी या विमुद्रीकरण कहते है। मुद्रा विमुद्रीकरण के उपरान्त पुराने नोटों एवं मुद्रा की कोई कीमत नहीं रहती है, तथा वह बाजार में प्रचलन से बाहर हो जाती है। 08 नवम्बर 2016 को भारत सरकार ने एक हजार एवं पॉच सौ रूपए के नोटों के विमुद्रीकरण की घोषणा रात बारह बजे की उसके बाद यह नोट वैध नहीं रहे। और लोग स्तब्ध रह गए एवं उनके मन में अफरा-तफरी मच गई तथा प्रधानमंत्री ने अपनी इस घोषणा को कालेधन के खिलाफ युद्ध की तरह बताया और उन्होंने देशवासियों को आश्वस्त किया कि कुछ दिनों तक आप लोगों को समस्या का सामना करना पड़ेगा लेकिन उनका यह निर्णय देश के लिए बहुत ही कारगर सिद्ध होगा और देश में बढ़ रही कालेधन की समस्या का समाधान होगा और भ्रष्टाचार जैसी बीमारी से देश को बचाया जा सकेगा।

अध्ययन के उद्देश्य-

1. कालाधन, भ्रष्टाचार एवं आतंकवाद जैसी गतिविधियों पर अंकुश लगाने के लिए मुद्रा विमुद्रीकाण अतिआवश्यक है। जो लोग इस प्रकार की गतिविधियों में सलग्न रहते है वह काफी मात्रा में मुद्रा अपने पास नगद रखते है जब इस नगद का बाजार में प्रचलन बन्द हो जाता है तो ऐसी गतिविधियों को बढ़ावा देने वाले लोग हतोत्साहित होते है साथ ही ऐसी गतिविधियों पर अंकुश लग जाता है। इसका असर कई क्षेत्रों में देखने को मिला उपद्रवियों को देने के लिए पैसा न होने के कारण कश्मीर में महीनों से चलने वाली पत्थरबाजी बन्द हो गई एवं नक्सलियों का पिछले वर्षो से जमा हुआ पैसा बर्बाद हो गया इस कारण से कई नक्सलियों ने सरकार के सामने आत्मसर्पण कर दिया सबसे बड़ा बदलाव मानव तस्करी के क्षेत्र में आया नकदी न होने के कारण इसमें नब्बे प्रतिशत की कमी आ गई साथ ही अन्य अपराधों में भी तेजी से कमी आई।
2. जिन लोंगो ने अधिक मात्रा में नकदी अपने घरों में कई वर्षो से जमा कर रखी थी उनके पसीने छूट गए वो करे तो क्या करे इस नकदी का यदि वो अपना कालाधन बैकों में जमा कराए तो सरकार टैक्स तथा उन पर भारी जुर्माना लगाएगी यदि वह इस जमा नगदी को बैंक में जमा नहीं करेगें तो पूरी नगदी वर्बाद हो जायगी। इससे लोंगो की मानवीय प्रवृति में परिवर्तन आया एवं जो लोग पैसा अनैतिक गतिविधियों से कमाते थे उन्होंने निस्वार्थ भाव से काम करना शुरू कर दिया।
3. विमुद्रीकरण के कारण कर्मचारियों एवं मजदूरों को भी लाभ हुआ कई कम्पनियों ने जिन्होंने मजदूरों एवं कर्मचारियों का भुगतान कई महीनों से रोक रखा था, उनका तत्काल भुगतान नगद में किया साथ ही साथ कई महीनों का अग्रिम भी दे दिया कर्मचारियों एवं मजदूरों के साथ-साथ आम लोंगो को भी उसका फायदा हुआ कुछ लोग जिनके पास अधिक मात्रा में कालाधन था वह आम लोंगो को यह नोट बैकों से बदवाने के लिए देने लगे इसके बदले में उन्हें कुछ मात्रा में पैसा मिल जाता था।
4. कालेधन के कारण देश में एक समानान्तर अर्थव्यवस्था चल रही थी वो पूरी तरह नकदी पर निर्भर थी। नकदी के अभाव के कारण बहुत बड़ा परिवर्तन आया, तथा जगह-जगह सरकारी एजेंसियों के छापे पड़ने लगे एवं कालाधन पकड़ा जाने लगा और लोंगो ने अधिक मात्रा में नगदी बैकों में जमा की इससे बैकों के पास पर्याप्त मात्रा में नगदी आ गई इससे बैकों ने ब्याज दर घटाकर त्रण देना शुरू कर दिया तथा लोंगो को सस्ती दरों पर व्यावसाय चलाने एवं घर बनाने के लिए त्रण मिल गया तथा मुद्रा लोन के रूप में छोटे व्यावसायियों को बड़े पैमाने पर ऋण दिया गया जो हमारे देश की अर्थव्यवस्था के लिए सार्थक सिद्ध होगा।

उपकल्पना

1. विमुद्रीकरण की व्यवस्था का सम्बन्ध विभिन्न अनैतिक गतिविधियों पर प्रतिबन्ध लगाना है।
2. विमुद्रीकरण की व्यवस्था क्या हमारे देश के लिए जारूरी थी।

शोध प्रविधि-प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के समंको पर आधारित है। प्राथमिक समंको का संकलन प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसंधान पद्धति एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार, अवलोकन,ईन्टरनेट तथा अनुसूची के माध्यम् से किया गया है। तथा द्वितीयक समंकों का संकलन

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, चीनौर, जिला - ग्वालियर (म.प्र.) भारत

अप्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसंधान, पत्र, पत्रिकाए, समाचार पत्र तथा प्रश्नावली के माध्यम् से आकड़ों को संकलित किया गया है।

विमुद्रीकरण की व्यवस्था का विश्लेषण – प्रस्तुत अध्ययन में विमुद्रीकरण की व्यवस्था का विश्लेषण लोंगो ने इस दौरान जिन परिस्थितियों का सामना किया एवं इसका क्या प्रभाव पड़ा उसे जानने के लिए चीनौर तहसील के 10 गावों के 10-10 विधार्थियों को प्रश्नावली प्रदान की एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार के माध्यम् से नोटबन्दी के सकारात्मक एवं नकारात्मक परिणाम को जानने का प्रयास किया क्या यह व्यवस्था देश के लिए कितनी लाभदायक सिद्ध होगी यह भी विधार्थियों से चर्चा की और इसे कैसे देश के लिए अनुकूल बनाया जा सकता है जिससे देश प्रगति के पथ पर अग्रसर हो सके और दिन-प्रतिदिन विकास की गति बढ़ती रहे प्रत्येक प्रश्न के सम्बन्ध में इन पहलुओं को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है। यह कि लोंग विमुद्रीकरण की व्यवस्था से कितने सन्तुष्ट है यह कि विमुद्रीकरण की व्यवस्था से लोंगो की जीवन शैली किस प्रकार प्रभावित हुई है इसकी गणना करने के लिए उत्तरों का अंकन चार बिन्दु पैमाने पर किया गया है

तालिका क्रमांक 01 : विमुद्रीकरण की व्यवस्था का विश्लेषण

क्र.	गॉव का नाम	बहुत अच्छी	अच्छी	सामान्य	सन्तोष जनक	योग
1.	ईटमा	3	2	2	3	10
2.	सातऊ	4	3	2	1	10
3.	मेंहगाव	5	3	1	1	10
4.	कछौआ	2	3	4	1	10
5.	घरसौदी	1	1	4	4	10
6.	पैरा	1	1	4	4	10
7.	मैना	2	1	3	4	10
8.	पाटई	1	2	4	3	10
9.	भूरी	2	2	3	3	10
10	दुबहाटाका	2	2	4	2	10

तालिका क्रमांक 02 : विमुद्रीकरण की व्यवस्था का मुल्यांकन

क्र.	गॉव का नाम	बहुत अच्छी	अच्छी	सामान्य	सन्तोष जनक	योग
1.	ईटमा	30%	20%	20%	30%	100%
2.	सातऊ	40%	30%	20%	10%	100%
3.	मेंहगाव	50%	30%	10%	10%	100%
4.	कछौआ	20%	30%	40%	10%	100%
5.	घरसौदी	10%	10%	40%	40%	100%
6.	पैरा	10%	10%	40%	40%	100%
7.	मैना	20%	10%	30%	40%	100%
8.	पाटई	10%	20%	40%	30%	100%
9.	भूरी	20%	20%	30%	30%	100%
10	दुबहाटाका	20%	20%	40%	20%	100%

तलिका क्रमांक 02 में विमुद्रीकरण की व्यवस्था का मूल्यांकन किया गया है। मूल्यांकन के अनुसार जो निष्कर्ष प्राप्त हुए है वे इस प्रकार है। अधिकतर गॉवों में 40% एवं 30% विधार्थियों ने इस प्रकिया को सामान्य एवं सन्तोषजनक बताया है। मेंहगाव ग्राम के 50% विधार्थियों ने इस प्रकिया को बहुत अच्छा तथा 30% ने अच्छा बताया है। इसी प्रकार से सातऊ गॉव में इस व्यवस्था को 40% विधार्थियों ने बहुत अच्छा तथा 10% विधार्थियों ने सन्तोषजनक बताया है। ईटमा गॉव के 30% विधार्थियों ने इस व्यवस्था को बहुत अच्छा एवं सन्तोषजनक बताया है। उपरोक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट् होता है कि कुछ गॉव को छोड़कर शेष अधिकतर गॉव के विधार्थियों द्वारा इस व्यवस्था को सन्तोषजनक एवं सामान्य बताया है एक या दो गॉव के विधार्थियों द्वारा इस व्यवस्था को अच्छा एवं बहुत अच्छा बताया गया हैं।

निष्कर्ष–उपरोक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इस प्रकिया को अधिकतर गॉव में सामान्य एवं सन्तोषजनक बताया है उसके कई कारण रहे है। क्योंकि जैसे ही लोंगो को पता चला कि बाजार से रात 08 नवम्बर 2016 के बाद से पॉच सौ एवं एक हजार के नोट प्रचलन से बाहर हो जाएगे तत्काल ए.टी.एम. के सामने सौ-सौ रूपए के नोट निकालने के लिए लाइने लग गई एवं बहुत तेजी से ए.टी.एम. खाली हो गए जिस गति से लोंगो को रोजमर्रा का खर्चा चलाने के लिए पैसों की आवश्यकता थी उस गति से नगदी की पूर्ति सरकार द्वारा नहीं की जा पा रही थी। जिससे लोग बहुत निराश एवं परेशान थे और कुछ दिनों बाद बैंको से एक हजार एवं पॉच सौ रूपए के नोटों को बदलने की प्रकिया शुरू हुई वहॉ पर भी कुछ दिनों तक लम्बी-लम्बी लाइने दिखाई दी एवं बाजार में नकदी न होने के कारण अर्थव्यवस्था में मन्दी आ गई तथा कुछ दिनों तक विशेष रूप से निर्माण उधोग में लोगों को काम मिलना बन्द हो गया और मजदूरों से रोजगार छिन गए और उन्हें रोजमर्रा के खर्चो के लिए परेशान होना पड़ा उस समय लोंगो के मन में बहुत निराशा हुई लेकिन धीरे-धीरे कुछ समय बाद यह समस्या सुलझती गई एवं इसके दूरगामी परिणाम अच्छे मिलने की सम्भावना प्रतीत होने लगी कई अनैतिक गतिविधियों जैसे आतंकवाद,भ्रष्टाचार एवं कालेधन जैसी समस्याओं को दूर करने में सफलता मिलेगी इससे स्पष्ट् होता है कि अध्ययन की प्रथम उपकल्पना स्वयं सिद्ध होती है और अर्थव्यवस्था में नकली नोटों का प्रचलन भी तेजी से बढ़ रहा था उस पर भी रोक लग गई अत: विमुद्रीकरण की व्यवस्था हमारे देश के लिए जरूरी थी इससे अध्ययन की द्वितीय उपकल्पना भी सार्थक सिद्ध होती है।

सुझाव–निष्कर्ष को देखकर लगता है कि विमुद्रीकरण की व्यवस्था से लोंगो को तत्काल में जरूर बहुत ही समस्याए उत्पन्न हुई थी लेकिन यदि लोंगो को समझाया जाए कि यह व्यवस्था देश के लिए उठाया गया एक बहुत ही प्रभावशाली कदम है एवं धीरे-धीरे इससे देश की अर्थव्यवस्था में सुधार आयगा एवं लोंगो को भविष्य में अनैतिक गतिविधियों से भी निजात मिलेगी एवं देश दिन-प्रतिदिन प्रगति के पथ पर अग्रसर होगा तथा लोग अधिक मात्रा में कालाधन इकट्ठा नहीं करेगें इससे भ्रष्टाचार जैसी बीमारी समाज में दूर हो जायगी एवं जैसे-जैसे नकदी का लेनदेन कम होता जायगा और लेनदेन केवल आनलाइन के माध्यम से होगा इससे यह पता चलेगा की किसने पैसों का कहा उपयोग किया है बैसे देखा जाए तो नकदी के लेनदेन पर भी प्रतिबन्ध लगना चाहिए जिससे भ्रष्टाचार एवं कालाधन जैसी समस्या का समाधान सम्भव होगा और प्रतिमाह प्रति व्यक्ति के हिसाब से नकद लेनदेन की सीमा निर्धारित की जानी चाहिए। तभी विमुद्रीकरण की व्यवस्था का सही तरीके से पालन होगा और इस व्यवस्था के भविष्य में सार्थक परिणाम आऐगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल जी.के.एवं पाण्डेय एस.एस.(2001) सामाजिक शोध, आगरा बुक स्टोर आगरा पृष्ठ क्र. 16
2. डॉ मुन्जाल एस.(1999) रिसर्च मैचडोलोजी राज पब्लिकेशन हाउस,जयपुर पृष्ठ क्र.02
3. प्रो. अग्रवाल वी.पी.(2010) वाणिज्यक बैंक प्रबन्ध,साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा पृष्ठ क्र.16
4. दैनिक भास्कर समाचार पत्र

Determination of Fluoride Concentration of selected ground water samples from different sites in and around Mahoba

Santosh Ambhore* Jayendra Singh Chauhan** Vandna Pathak***

Abstract - The water quality is determined in five blocks (water samples taken from Urban and rural locations of Mahoba. Each water samples are under studied for physico- chemical status of water samples. In physico-chemical analysis, various quality parameter are measured including pH, Specific conductivity(SP), total dissolved solids (TDS),total hardness, and Fluoride Concentration compared with WHO standards of water quality; also in present research paper classification of water samples of five blocks was investigation on the basis Fluoride Concentration. The pH of all water samples were found almost neutral.
Keywords - water samples, physico-chemical analysis, TH, TDS, COD,BOD, TDS, BOD, Nutrients.

Introduction - Mahoba is a city and Mahoba District of the Indian state of Uttar Pradesh, in the Bundelkhand region. Mahoba is Veer Bhumi of Uttar Pradesh. Water plays an essential role in human life. Although statistics, the WHO reports that approximately 36% of urban and 65% of rural Indian were without access to safe drinking water. Fresh water is one of the most important resources crucial for the survival of all the living beings. It is even more important for the human being as they depend upon it for food production, industrial and waste disposal, as well as cultural requirement . Human and ecological use of ground water depends upon ambient water quality. Human alteration of the landscape has an extensive influence on watershed hydrology Gurunathan, 2006. Ground water plugs a vital role in human life .The consequences of urbanization and industrialization leads to spoil the water for agricultural purposes ground water is explored in rural especially in IJSER International Journal of Scientific & Engineering Research, Volume 6, Issue 1, January-2015 2150 ISSN 2229-5518 IJSER © 2015 http://www.ijser.org those areas where other sources of water like dam and river or a canal is not considerable.

At present, fluoride concentration of drinking water and the dental caries are regarded as one of the most common health problems and main concerns of dentists, since low fluoride concentration of the consumed water, i.e. less than the standard rate (1.2-6 ppm), results in caries, and if progressed, fluorosis. According to World Health Organization, standard rate of fluoride of drinking water is 0.5–1 ppm. Studies conducted at different parts of the world reported variable concentrations of water fluoride and fluorosis, such that it was 0.19 ppm in South Africa study with prevalence rate of 47% for fluorosis. According to World Health Organization, highest rate of prevalence of fluorosis is seen in China and India. Studies conducted in Iran reported different fluoride concentrations of water and prevalence of fluorosis. Although different policies including adding of fluoride to drinking water, use of fluoride-contained toothpastes and mouthwashes are made when there is insufficient fluoride concentration in drinking waters, there is controversies among experts in this regard. Standard value of water fluoride varies according to ecological and social conditions. In Iran, standard values should be identified for every region considering their ecological conditions since Iran has different weather and the temperature varying +50°C to -20°C in some regions. Although there are several studies conducted at different parts of Iran, there is not any comprehensive study evaluating fluoride concentration of waters of different resources and prevalence of fluorosis, according to results of articles review. Therefore, the present study aimed at systematically evaluating the studies published on fluoride concentration of different water sources as well as prevalence of fluorosis and providing a clear and comprehensive viewpoint from status of fluoride found in drinking waters and prevalence rate of fluorosis.

Fluorine is a common element that does not occur in the elemental state in nature because of its high reactivity. It accounts for about 0.3 g/kg of the Earth's crust and exists in the form of fluorides in a number of minerals, of which fluorspar, cryolite and fluorapatite are the most common. The oxidation state of the fluoride ion is -1.

*Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA
** Gramodaya Vishwvidyalaya, Chitrakoot, Satna (M.P.) INDIA
*** Gramodaya Vishwvidyalaya, Chitrakoot, Satna (M.P.) INDIA

Physicochemical properties - IARC, 1982; Slooff et al., 1988; IPCS, 2002) Hydrogen fluoride (HF, CAS No. 7664-39-3) is a colourless, pungent liquid or gas with a boiling point of 19.5°C. It is highly soluble in water , in which it forms hydrofluoric acid. Sodium fluoride (NaF, CAS No. 7681-49-4) is a colourless to white solid that is moderately soluble in water. Fluorosilicic acid (H2SiF6, CAS No. 16961-83-4), which is also known as hexafluorosilicic acid, is a colourless solid that is highly soluble in water.

Major uses - Inorganic fluorine compounds are used in industry for a wide range of purposes. They are used in aluminium production and as a flux in the steel and glass fibre industries. They can also be released to the environment during the production of phosphate fertilizers (which contain an average of 3.8% fluorine), bricks, tiles and ceramics. Fluorosilicic acid, sodium hexafluorosilicate and sodium fluoride are used in municipal water fluoridation schemes (IARC, 1982; IPCS, 2002).

Sampling Stations – 1. kharka 2. sukaura 3. Raivara 4. sirsikhurd 5. Revai 6. Atghar 7. Akbai 8. Sirsikalan 9. khiruchi 10. khanmariya

Materials and Methods - The Water Samples were collected from four Different places in the Morning Hours between 9 to 11am, in Polythene Bottles. The Water samples were immediately brought in to Laboratory for the Estimation of various Physico-chemical Parameters like Water Temperature, pH were recorded by using Thermometer and Digital pH Meter. (Systronics).Specific conductivities were measured by using digital conductivity meter. The TDS values were measured by using TDS meter. While other Parameters Such as Hardness, Sodium, and potassium by Flame photometry .Manganeese ,Calcium & Magnesium Chloride, Sulphate and Nitrate were Estimated in the Laboratory By using Standard laboratory methods.

Present Study involves the Analysis of Water Quality in Terms of Physicochemical methods. (Trivedy and Goel,1986, APHA 1985)

Results and Discussion - The Variation in Physico-chemical Parameters are summarised here -

Table 1 (See in next page)

There was no significant change in the pH value during the observation period; the observed values were in the range 5.5 to 7.6 . Total hardness, salinity, conductance and turbidity increase /decrease in the various direction, i.e., from Sample-1 to Sample-10. Concentration of nutrients like Chloride, Sulphate was within the permissible limits. BOD remained less than 4.9 in all cases, showing normal microbial activity. Physico-chemical parameters affected the primary production in different Areas. The physico-chemical of chemical characteristics of water samples in the study area suggested that there was no harmful chemical contamination.

Acknowledgement - The authors are grateful to the students and Prof. H.U.Usmani, Professor, Govt.Motilal Vigyan Mahavidyalaya Bhopal, Prof. H. C. Kataria Govt. Geetanjali Girls P.G. Auto. College, Bhopal (M.P.) INDIA, for Providing Necessary inputs and suggestions.

References :-

1. Akoto O. and Adiyiah, J., (2007),"Chemical analysis of drinking water from some communities in the Brong Ahafo region", International Journal of Environmental Science and Technology, 4(2), pp 211-214.
2. Akpoveta O.V., Okoh, B.E., Osakwe, S.A., (2011), "Quality assessment of borehole water used in the vicinities of Benin, Edo State and Agbor, Delta State of Nigeria", Current Research in Chemistry, 3, pp 62-69.
3. APHA, AWWA, WPCF, (2003), "Standard Methods for Examination of Water and IJSER International Journal of Scientific & Engineering Research, Volume 6, Issue 1, January-2015 2154 ISSN 2229-5518 IJSER © 2015 http://www.ijser.org Wastewater", 20th Edition, American Public Health Association, Washington, DC.
4. Boominathan, R. and Khan, S.M., (1994), "Effect of distillery effluents on pH, dissolved oxygen and phosphate content in Uyyakundan channel water", Envionmental Ecology, 12 (4), pp 850-853.
5. Gurunathan, A. Shanmugam, C.R, (2006): Customary Rights and their Relevance in Modern Tank Management: Select Cases in Tamil Nadu, Paper prepared for the workshop entitled 'Water, Law and the Commons' organized in Delhi from 8 to 10 December 2006
6. IJSER © 2015 http://www.ijser.org WHO, (2003), "Guidelines for drinking water quality", Geneva, Report No: WHO/SDE/WSH 03.04. WHO, (2006), "Guidelines for drinking water quality" Geneva, Report No: WHO/SDE/WSH 06.07. IJSER
7. Jafari, A., Mirhossaini, H., Kamareii, B., Dehestani, S., (2008), "Physicochemical analysis of drinking water in kohdasht city lorestan, Iran", Asian Journal of Applied Science, 1, pp 87-92.
8. Jayabhaye, U. M.; Pentewar M. S. And Hiware C. J. (2006): A Study on Physico- Chemical Parameters of a Minor Reservoir, Sawana, Hingoli District, Maharashtra.
9. Kadam, M. S. Pampatwar D. V. and Mali R. P. (2007): Seasonal variations in different physicochemical characteristics in Masoli reservoir of Parbhani district, Maharashtra, J. Aqua. Biol. 22(1): 110- 112.
10. Khaiwal, R. and Garg, V.K., (2006), "Distribution of fluoride in groundwater and its suitability assessment for drinking purposes", International Journal of Environmental Health Research, 16, pp 163–166.
11. Khan, M. A. G and Choudhary S. H. (1994): Physical and chemical limnology of lake Kaptai, Bangladesh. Trop. Eco. 35(1): 35-51.
12. Kodarkar M. S. (1992): Methodology for w ater analysis, physico -chemical, Biological and Microbiological Indian Association of Aquatic Biologists ,Hyderbad; Pub.2: pp. 50. 4. A PH A (1985): Standard Methods For Examination of Water and Wastewater, 20th Edition, American Public Health Association,

Washington D. C.

13. Kumar R., Singh, R.D., Sharma, K.D., (2005), "Water Resources of India", Current Science, 89(5), pp 794-811
14. Kumar,A,K., Kanchan, Taruna, Sharma, H.R., (2002), "Water quality index and suitability assessment of urban ground water of Hisar and Panipat in Haryana", Journal of Environmental Biology, 23, pp 325-333.
15. Pandey, A. K., Siddiqi S. Z. and Rama Rao (1993): Physico-chemical and biological characteristics of Husain sagar, an industrially polluted lake, Hyderabad. Proc. Acad. Environ. Biol. 2(2), 161-167.
16. Salve, V. B. and Hiware C. J. (2008): Study on water quality of Wanparakalpa reservoir Nagpur, Near Parli Vaijnath, District Beed. Marathwada region, J. Aqua. Biol., 21(2): 113-117.
17. Trivedy, R. K. and Goel P. K. (1986): Chemical and biological methods for water pollution studies, Environmental Publication, Karad, Maharashtra Kaushik, WHO, (2001), "Water health and human rights".

Table 1 :Mean seasonal value (pre and post monsoon)

parameter	Unit	Type A, SS_1, SS_2	Type B SS_3, SS_4	Type C SS_5, SS_6	Type D SS_7, SS_8	Type E SS_9, SS_{10}
MPN	No/100ml	95	80	92	78*	110**
Temperature	0^0C	24	22*	35**	25	31
pH	-	5.5*	5.8	7.6**	6.9	6.7
Elect.Cond.	µ $mhos/cm^{-1}$	215*	272	382	395**	354
Free CO_2	ppm	6.17*	7.42	8.28	11.25**	10.38
T-H	ppm	327	425**	405	255*	280
D.O.	ppm	1.14	1.11*	1.84	2.32	2.47**
B.O.D.	ppm	1.82*	1.88	2.86	3.98	4.84**
C.O.D.	ppm	12.44*	16.12	30.42	42.00**	40.22

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Adsorption studies on the removal of Nickel (II) ions from aqueous solution using activated carbon as adsorbent

Geeta Paryani* Shikha Shrivas**

Abstract - In the present study, use of waste stem as a raw material for producing activated carbon is investigated. Activated carbon has been prepared from stem of *Ipomoea carnea* by acid treatment Surface structure investigation is carried out by scanning electron microscopy (SEM). Activated carbon has been extensively used as a good adsorbent. In this work examine the adsorp-tion capacities of Ni (II) from aqueous solution onto activated carbon using batch system. The effects of fac-tors such as contact time, adsorbent dose, pH and initial concentration were investigated. The Langmuir and Freundlich models adsorption were applied to describe the isotherm equilibrium and to determine its constants.

Key words - Activated carbon, Ipomoea cornea, heavy metals, adsorption.

Introduction - Due to rapid industrial development, pollution of water bodies by heavy metals is an issue of main concern. It is estimated that an enormous amount of heavy metals of global production is discharged by many industries [1]. The waste water generated by these industries is highly noticeable even at very low concentrations. The removal of such materials into water bodies not only destructs the nature but also interferes with the diffusion of sunlight, thus disturbing the food chain existing in water ecosystems [2]. The bulk amounts of the polluted water discarded into the water bodies by industries are toxic and even carcinogenic to both animals and humans. All the heavy metals are more toxic and they show a very bad effect on all living things. They are generally present in industrial, municipal and urban overflow, which can be damaging to humans and biotic life. These metals include arsenic, chromium, copper, zinc, aluminium, cadmium, lead, iron, nickel, mercury, and silver. So many action processes that have been used to remove heavy metals from wastewater include precipitation with coagulation and flocculation, ion exchange, complexation of dry biomass and adsorption. But they have lots of limitations and also they are costly and cannot be readily applied to large scale applications. Adsorption as a best process due to its low cost and applicability on large scales. Adsorption is usually being done using activated carbon, which adsorbs dissolved organic substances, colours and heavy metals in the water treatment.

People are concerned about contaminants in their drinking water that cannot be removed by water softeners or physical filtration.[3] Therefore, it needs treatment to make it safe for human and all living things in this world. There are many types of treatment that can improve water quality. One of the treatments is using activated carbon as a wastewater pollutant removal. Activated carbon is a form of carbon species that is processed and prepared to have high porosity and very large Surface area available for adsorption. [4] Activated carbon has been quite successful for removal of heavy metals waste water streams. The highly porous nature of the carbon provides a large surface area for contaminants to get deposited. The adsorption takes place because of the attractive force between the molecules. There is wide variety of activated carbons which exhibit different characteristics depending upon the raw materials. Agricultural waste material can effectively be converted in to activated carbon using *Ipomoea carnea* stem waste.

Materials and Methods

Preparation of activated carbon - The *Ipomoea carnea* stem , used as adsorbent for removal of phenol red .were cut and dried in sunlight until then oven dried at 110 ^{0} C over night. Dried material was treated with HCL for a period of 24 hours. Then the material was placed in the muffle furnace and carbonized at 400-800°C, for a period of 60 minutes. [5] Chemical activation promotes the high adsorption capability due to its high internal surface area and porosity formed during carbonization. [6]

Adsorbate - Nickel is relatively an exceptional metal in nature, but its extensive use in many industrial applications leads to comparatively high concentrations in aquatic environment. Nickel is broadly used in stainless steel, electroplating, batteries manufacturing, the manufacturing of magnetic tape, jewelry and coinage, in welding rods, as a catalyst in oil hydrogenation and coal gasification, dental procedures, electric storage batteries, pigments and so on

*Department of Chemistry, Govt. Motilal Vigyan Mahavidhlaya, Bhopal (M.P.) INDIA
** Department of Chemistry, Govt. Motilal Vigyan Mahavidhlaya, Bhopal (M.P.) INDIA

[7] Ni (II) is present in small quantities (0.1- 0.6 ppm) in plants, animals and occurs in trace amounts in sea water. The main symptoms of nickel exposure causes headache, dizziness, nausea and vomiting, chest pain, tightness of the chest, dry cough and shortness of breath, rapid respiration, cyanosis and extreme weakness [8] Although Nickel is an necessary micronutrient for animals and takes part in synthesis of vitamin B12, its higher concentration causes cancer of the lungs, nose and bones and may also cause nausea, rapid respiration, head ache, cyanosis and dry cough.

Batch Adsorption Studies - Batch adsorption experiments were carried out at ambient temperature. In order to investigate the nature of activated carbon and phenol red interaction, initially the effect of pH on % adsorption was carried out and then further experiments on the effect of contact time, initial concentration, adsorbent dose and contact time were conducted on optimized pH. Only one parameter was changed at a time while others were maintained constant. The quantity adsorbed by a unit mass of an adsorbent at equi-librium and the adsorption percentage were calculated us-ing the following relations [9].

$$\%R = \frac{C_0 - C_e}{C_0} \times 100$$

$$Q_e = \frac{(C_0 - C_e)}{m} \times V'$$

Where is the concentration of adsorbate at equilibri-um (mg.L-1); is the initial concentration of adsorbate (mg.L-1);

Results and discussion

Ni (II) Adsorption and kinetics study with Activated Carbon

Preparation of stock solution - A stock solution of Nickel (II) ions solution was prepared by dissolving 4.479 gm of A.R. Grade $NiSO_4.6H_2O$ in 1000 ml distilled water. It was stored in a volumetric flask for making other dilute solutions. Typically, solutions of 50 mg/L to 1000 mg/L of Ni (II) ions solution were prepared from stock solution. All the chemicals used throughout work were of analytical grade. These solutions were used for constructing calibration curves and for kinetic and equilibrium studies.

Batch Adsorption Studies - Batch adsorption experiments were carried out by shaking 50 ml of 50 mg/L to 1000 mg/ L Ni (II) ions solution concentration and 1 g/L of adsorbent dose at room temperature. In order to investigate the nature of activated carbon and Ni (II) ions interaction, initially the effect of pH on % adsorption was carried out and then further experiments on the effect of contact time, initial concentration, adsorbent dose and contact time were conducted on optimized pH. Only one parameter was changed at a time while others were maintained constant. The pH of each solution was adjusted using required quantity of 1 N HCl or 1 N NaOH before mixing the adsorbent.

Effect of pH - The effect of pH on the adsorption process is shown in Figure-1. These experiments were undertaken at initial Ni (II) concentration of 100 mg/L with adsorbent dose of 1 g and contact time of 30 minute. The pH of feed solution was examined from solution at different pH, covering a range of 2.0 - 7.0. There was continuous increase in % removal with increase in pH and reached 87.9 % at pH 7. The increase in % removal may be attributed to higher degree of ionization of metal ion at higher pH and the reduced competition of H^+ ions with the metal ions for adsorption sites. At pH grater then 5, the Ni (II) ions get participated due to hydroxide ion forming a nickle hydroxide precipitate, for this reason the maximum pH value was selected to be 5.

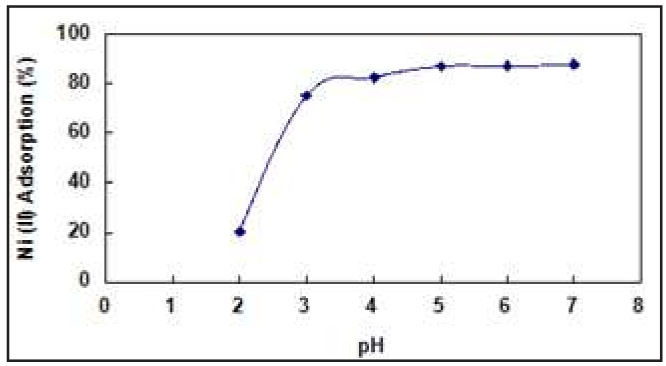

Figure -1. Effect of pH on adsorption of Ni (II)

Effect of Adsorbent Dose - The effect of adsorbent dose on the adsorption of Ni (II) ions process is shown in Figure 2. The effect of adsorbent dose on the removal of Ni (II) ions was investigated using 100 mg/L of initial Ni (II) ions at initial pH 5. The adsorbent dose was varied from 1 to 5 g/L. It is observed that the adsorption of Ni (II) ions increases with an increase in the adsorbent dose. The % adsorption increase from 87.2 to 97.8 % by increasing the adsorbent dose. The increase in the adsorption with adsorbent dose can be attributed to increased Ni (II) ions surface area and availability of more adsorption sites, while the unit adsorbed of Ni (II) ions decreased with increase in adsorbent dose [10-11].

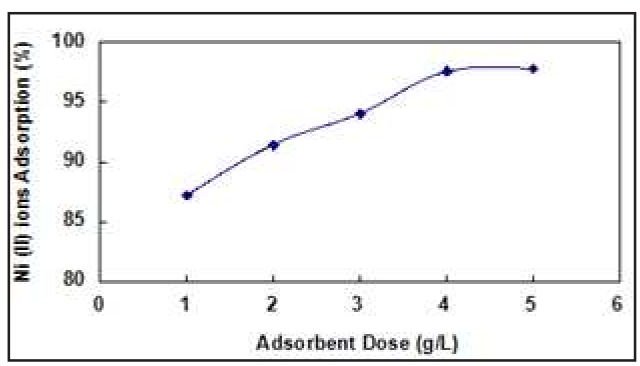

Figure -2. Effect of Adsorbent Dose on adsorption of Ni (II)

Effect of Contact Time - The effect of contact time on the amount of Ni (II) ions adsorbed was investigated using 100 mg/L initial concentration of Ni (II) ions, adsorbent dose 1 g and at pH 5.0. The effect of contact time on adsorption is presented in Figure-3 shows that the increase in contact

time from 10 - 90 minute enhanced the adsorption of Ni (II) ions significantly. The rapid adsorption at the initial contact time is attributed to the highly negatively charged surface of activated carbon for adsorption of Ni (II) ions in the solution at pH 5.0 [12]. The % adsorption at the 30 minute 87.2 %, beyond this stage there was no significant adsorption is seen. Hence 30 minute is taken as the optimum period of contact required for the maximum removal of Ni (II) ions.

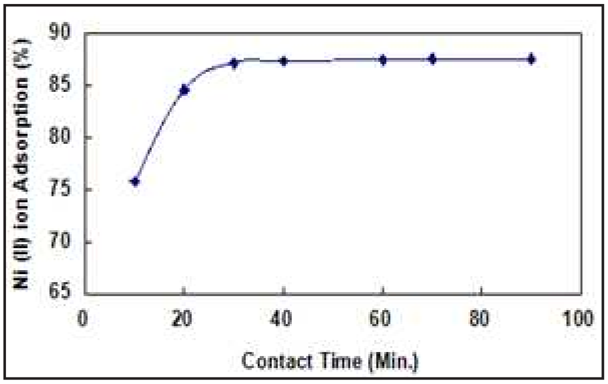

Figure -3. Effect of Contact Time on adsorption of Ni (II)

Effect of Ni (II) ion concentration - The effect of initial concentration of Ni (II) ions in the solution on the capacity of adsorption onto activated carbon was studied and results are shown in Figure-4. The experiments were carried out at a fixed adsorbent dose (1 g/L) in the test solution at room temperature, pH 5.0 and at different initial concentration of Ni (II) ions (50, 100, 150, 200, 250, 500, and 1000 mg/L) for 30 minute contact time. Figure-4 shows that the percentage adsorption of activated carbon decreased with the increase of initial Ni (II) ions concentration in the solution. It is there for evident that at low concentration ranges the % of adsorption is high because of the availability of more active sites on the surface of adsorbent. As the concentration of metal ion increase, more and more surface sites are covered and hence at higher concentration of metal ions the capacity of the absorbent get exhausted due to non-availability of the surface sites. Therefore a fall in the % of adsorption of Ni (II) ions observed at higher concentration of metal ions.

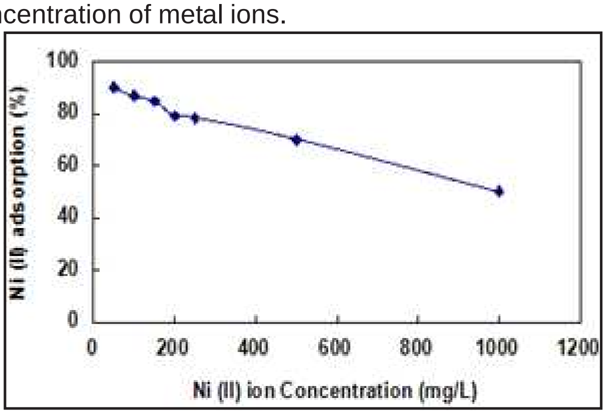

Figure -4. Effect of Ni (II) ions Concentration on adsorption

Isotherm Data Analysis - The relation between the amount of a substance adsorbed at constant temperature and its concentration in the equilibrium solution is called the adsorption isotherm. The results obtained from the Langmuir and Freundlich isotherm model for the removal of Ni (II) ions onto activated carbon are shown in Table-1. The correlation coefficients reported in Table-6 showed strong positive evidence on the adsorption of Ni (II) ions onto activated carbon, following the Langmuir and Freundlich isotherm. The applicability of the linear form of both the models to activated carbon was proven by the high correlation coefficients, R^2 grater then 0.98. This suggest that the both the models provides a good model of the sorption system. It will be noted that the value of 1/n was between 0 and 1 indicating the adsorbent prepared are favorable for adsorption of the Ni (II) ions. The maximum mono layer capacity Q_m obtained from the Langmuir is 29.24 mg/g.

Table-1. Comparison of the coefficients isotherm parameters for Ni (II) ions adsorption

Isotherm Model	**Coefficients Isotherm Parameters**		
Langmuir	**Q_m (mg/g)** 29.24	**b (L/mg)** 0.0115	**R^2** 0.9883
Freundlich	**1/n** 0.525	**K_f (mg/g)** 1.125	**R^2** 0.9817

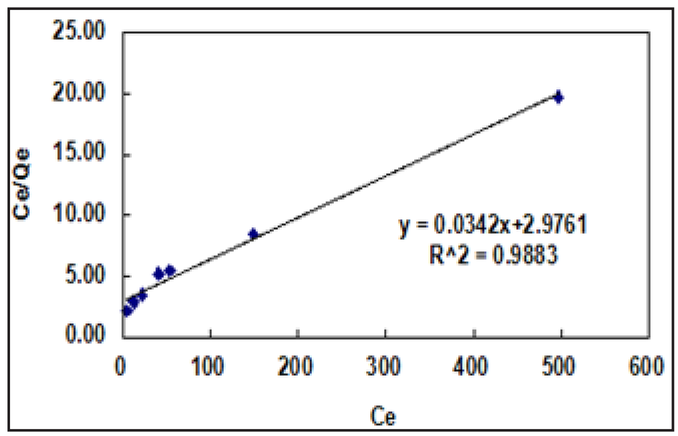

Figure-5 Linear plot of Langmuir isotherm for Ni (II) ions adsorption

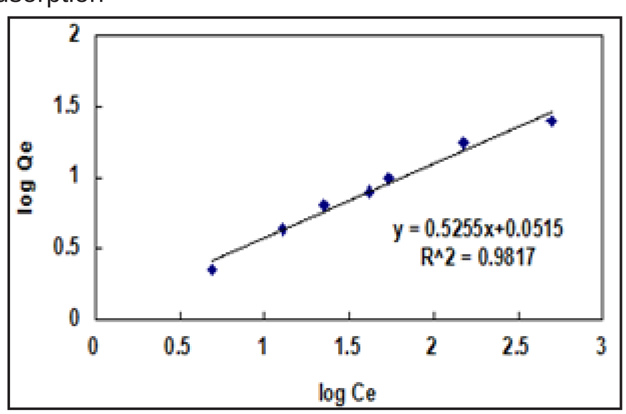

Figure-6 Linear plot of Freundlich isotherm for Ni (II) ions adsorption

Conclusions - The present study reports batch studies for

the removal of Ni (II) from activated carbon derived from Ipomoea carnea stem waste Due to the presence of high surface area, porosity, and the activated carbon prepared from the agricultural waste it can be used for a variety of environmental application, heavy metals removal, wastewater treatment and adsorption process too. Adsorption of Ni (II) was dependent on initial pH, adsorbent dosage, contact time and initial Ni (II) concentration. It can be concluded that some low cost material can be used as effective and alternative adsorbents for the sorption of heavy metals such as Ni (II) from aqueous solution, because of they are readily available, hence reducing pollution.

References :-

1.] S. Pirillo, M.L. Ferreira, E.H. Rueda, “Adsorption of alizarin, eriochrome blue black R, and fluorescein using different iron oxides as adsorbents” Ind. Eng. Chem. Res. 46 ,8255–8263,2007.
2. G. Mishra, M. Tripathy, “A critical review of the treatment for decolourization of textile effluent” Colourage 40, 35–38, 1993.
3. Thompson T, Sobsey M, Bartram J. “Providing clean water, keeping water clean: an integrated approach” Int J. Env Health Res, 13:S89-S94, 2003
4. Ahmedna, M. Marshall, W. E. And Rao, R.M. “Production of granular activated carbons from select agricultural by-products and evaluation of their physical, chemical and adsorption properties” Biosource Technology, 71: 113-123, 2000.
5. Arockiaraj I and Renuga V “Sorption kinetics and dynamic studies of basic dye by lowcost nanoporous activated carbon derived from Ipomoea carnea stem waste by sulphate process” Frontiers in Nanoscience and Nanotechnology 2016.
6. S.Karthikeyan , P.Sivakumar and P.N.Palanisamy Department of Chemistry, “Activated Carbons from Agricultural Wastes and their Characterization ’’ net Vol. 5, No., pp. 409-426, April 2008
7. H.Rehman, M. Shakirullah, I. Ahmad, S. Shah and Hameedullah, .Journal of the Chinese Chemical Society, 53, 1045-1052 2006.
8. P. Panneerselvam, V. Sathya Selva Bala, N. Thinakaran, P. Baskaralingam, M. Palanichamy and S. Sivanesan, E-Journal of Chemistry, , 6(3), 729-736. 2009.
9. Lekene Ngouateu R. B., Kouoh Sone P M. A., Ndi Nsami J., Kouotou D., Belibi Belibi P. D., Ketcha Mbadcam J. “Kinetics and equilibrium studies of the adsorption of phenol and methylene blue onto cola nut shell based activated carbon” Int J Cur Res Rev | Vol 7 Issue 9 , M ay 2015 .
10. Mansour Alhawas, Mohamed Alwabel, Adel Ghoneim, Abdullah Alfarraj and Abdelazeem Sallam, “Removal of nickel from aqueous solution by low-cost clay adsorbents”, Proceedings of the International Academy of Ecology and Environmental Sciences, Vol. 3, No. 1, pp: 160-169,2013.
11. Upendra Kumar, “Agricultural products and by-products as a low cost adsorbent for heavy metal removal from water and wastewater: A review”, Scientific Research and Creativity, Vol. 1, No. 1, pp: 1-5, 2013.
12. Pandharipande S L and Rohit P Kalnake P, “Tamarind fruit shell adsorbent synthesis, characterization and adsorption studies for removal of Cr(VI) & Ni(II) ions from aqueous solution”, International Journal of Engineering Sciences & Emerging Technologies, Vol. 4, No. 2, pp: 83-89,2013.

****

श्रीमती इन्दिरा बागड़ी : हिन्दुस्तानी लालसेना और हमारा स्वतंत्रता संग्राम - एक व्यक्तित्व अध्ययन

डॉ. सीमा कदम *

शोध सारांश – आजादी की लड़ाई में स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को हम बहुत ही सम्मान से याद करते है हिन्दुस्तानी लाल सेना मध्य प्रान्त और बरार का ऐसा क्रातिकारी संगठन था जिसकी स्वतंत्रता सग्रां में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका थी किन्तु आजादी के 72 साल के पश्चात इस संगठन के क्रांतिकारी सैनिक गुमनामी की जिन्दगी जीते हुये इसके इतिहास को अपने सीने में दफन कर इस दूनिया से कूच कर गये। इस सन्दर्भ में शासन के स्तर पर भी एसा कोई कार्य नही हुआ कि हिन्दुस्तानी लाल सेना व उसके सैनानियों के बारे में जान सकें या आजादी की लड़ाई में उनके योगदान को अलग से रेखांकित किया जा सके। इटारसी का लाल-सेना का दफ्तर, जहां कभी लाल सेना का दफ्तर का बोर्ड टगा रहता था अब गुमनामी के अंधेरे में है, यहां कभी दफ्तर था यह भी जानने के लिए कोशिश करना होती है पर अपनी अकादमिक इटारसी यात्रा के दौरान में खोज-बीन करते वहां पहुॅच ही गयी और जो सामग्री दस्तावेज प्राप्त हुए उससे श्री एवं श्रीमती बागड़ी जी का विराट व्यक्तित्व व लाल सेना का उल्लेखनीय योगदान सामने आया।

शब्द कुंजी – लाल सेना, क्रांतिकारी, मध्यप्रांत, बरार, शहीद, स्वतंत्रता संग्राम, रियासत, अभ्युदय।

प्रस्तावना – हिन्दुस्तानी लाल सेना मधय प्रान्त और बरार का ऐसा क्रांतिकारी संगठन था। जो कई मायनों में सरदार भगत सिंह और चन्द्रशेखर जैसे क्रांतिकारियों के संगठन से कम नहीं बल्कि भारी ही बैठता था, लेकिन प्रचार के अभाव में उसका कोई नाम लेवा नहीं रहा है और नहीं आजादी के बहत्तर सालों में उसे कभी किसी ने याद किया। इस संगठन के क्रांतिकारी सैनिक धीरे-धीरे गुमनामी की जिन्दगी जीते हुए इसके इतिहास को अपने साथ लेकर दूसरी दुनिया में चले गए, एक-दो बचे हुए सैनिक अभी भी बेचैनी के साथ अपने दिल में दफन इतिहास और संस्मरणों को बाहर लाना चाहते हैं लेकिन उसे कोई सुनने वाला नहीं है। और प्रशासकीय स्तर पर भी ऐसा कोई प्रयास आज तक नहीं हुआ जिससे कि लोग इस संगठन को जानते या समझते। एक शोध कार्य अभी भी इस बात की प्रतीक्षा कर रहा है कि क्या है लाल सेना? क्योकि जिस सेना ने 1942 की जनक्रांति में संगठित और अनुशासनबद्ध होकर अंग्रेजी साम्राज्य से लोहा लिया उसका आजादी की लड़ाई में स्वर्णिम और शानदार इतिहास है लेकिन अफसोस आज कोई हिन्दुस्तानी लाल सेना का नाम नहीं जानता।

'हिन्दुस्तानी लाल सेना' का जन्म 13 अप्रैल 1939 को नागपुर में हुआ। क्योकि इस दिन 13 अप्रैल 1918 को जालियावाला बाग के कांड ने देश में क्रोध की ज्वाला भड़का दी थी। इस कांड के 20 वर्ष बाद नागपुर के क्रांतिकारी मगनलाल बागड़ी ने लाल सेना गठित कर अंग्रेजों से लोहा लेने का संकल्प किया। लाल सेना के जन्म के समय इसके संस्थापकों के सामने संगठन के उद्देश्य उसके आदर्श एवं कार्य की कल्पनायें स्पष्ट थीं जो कि आगे चलकर अपनी क्रांतिकारी कसौटी पर खरी साबित हुई।

1857 की क्रांति के पश्चात् बिटिश हुकुमत से सशस्त्र खुली बगावत करने का सौभाग्य सही अर्थो में 'हिन्दुस्तानी लाल सेना' को ही प्राप्त हुआ। इस सेना की जाबाजी और जौहर देखकर लंदन की ब्रिटिश पर्लियामेंट में प्रश्नों की बौछार लग गई कि ब्रिटेन के प्रधान मंत्री ने वाईस राय से तलब किया कि भारत में हिन्दुस्तानी लाल सेना बढ़ने ही क्यों दी गई? यहां तक कि उस वक्त के न्यायाधीशों ने भी अपने फैसलों में लिखा कि- 'हिन्दुस्तान लाल सेना का संगठन रूस की लाल सेना के समान जनता में क्रांति की मशाल के समान है।' अपने लक्ष्य को पूरा करने के उद्देश्य से नागपुर के युवकों और युवतियों ने अपने बाहुबल पर सेना खड़ी कर ली जिसके प्रणेता थे क्रांतिवीर मगनलाल बागड़ी, पं.श्याम नारायण कश्मीरी, श्यामलाल श्रीवास, वि.स. दाण्डेकर, कसन लाल चौधारी, भास्कर राव चोरे, डॉ.महादेव पवार रामचन्द्र मंचलवार, डॉ.रामसिंह गौर बाबूलाल गुप्ता आदि अनेक क्रांतिकारी नौजवान और नवयुवतियों।

8 अगस्त 1942 को 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का ऐतिहासिक प्रस्ताव पारित हुआ। और गांधी सहित सभी नेता गिरफ्तार कर लिए गये तो सारे देश में इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। नागपुर शहर भी उससे अछूत नहीं रहा। 12 अगस्त 1942 को लाल सेना ने अंग्रेजों के विरूद्ध गुरिल्ला युद्ध छेड़ दिया 48 घंटे तक नागपुर को लाल सेना ने अपने हाथों में रखा। कचहरी पर तिरंगा फहरा दिया गया शहर में युद्ध होने लगा इसी दिन लाल सेना के महादेव जायसवाल, ताराचन्द्र कपूर जगन्नाथ गौर मलूक दास कृष्ण राव कावड़े, शारदा प्रसाद मिश्रा के नेतृत्व में न 17 का पुलिस थाना जलाकर खाक कर दिया और दो रायफलें छीन ली। 13 अगस्त को ऐसे ही आजादी के मतवाले लाल सेना के साथियों से पुलिस का आमना-सामना हुआ जिसमें वीर कृष्णराव काकड़े शहीद हुए। लाल सेना के नेतृत्व में 13 अगस्त 1942 को ही इतवारी पुलिस थाना तहसील पुलिस थाना हंसापुरी, नबाब पुरा, बुधावारी, मसका के एक साथ पुलिस थानों पर छापामार कर जलाये गए और इन दस्तों ने पुलिस थानों से बंदूकें छीनी। इन छीनी गई बंदूकों का सही इस्तेमाल 'मौदा कांड' में हुआ।

हिन्दुस्तानी लाल सेना द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर किया गया सबसे बड़ा कार्य 'मौदा पुलिस थाने पर सशस्त्र हमला और समानान्तर सरकार की स्थापना' था, जिसका इतिहास स्वर्ण अक्षरों में लिखा जा सकता है। लाल सेना ने मौदा ग्राम पर योजना बद्ध हमला तथा रक्त हीन क्रांति द्वारा चार

* सह प्राध्यापक (गृहविज्ञान) माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

दिन तक सामानान्तर सरकार चला कर 'आज से हम आजाद है' का शंख नाद फेंका। इस मिशन पर डॉ.महादेव पवार, गणपतराव पठाड़े, श्यामलाल श्रीवास, बाबूलाल गुप्ता मगन लाल बागड़ी, वि.स.ढाण्डेकर, बलीराम जाधाव आदि थे। यहां भी थाना नष्ट करें हथियार छीन लिये गये। इसके बाद लाल सेना अपने अभियान में आगे बढ़ती ही गई और अपने लक्ष्य को सार्थक करती गई।

लालसेना के प्रवर्तक क्रांतिवीर मगनलाल बागड़ी का जन्म मारवाड़ी समाज में सन् 1915 के करीब हुआ, विभिन्न सूचनाओं व तथ्यों के आधाार पर उनका जन्म कलकत्ता में हुआ था। वैसे वह मारवाड़ के निवासी थे, बागड़ीजी का परिवार बहुत सम्पन्न था। उनके यहां सराफे का व्यवसाय होता था। पिता चाहते थे वे व्यवसाय संभाले, पर उस समय देश में आजादी के आंदोलन की हवा चल रही थी। स्त्री हो या पुरूष सभी का एक ही सपना देश की स्वतंत्रता। नागपुर में देश के अनेक क्रांतिकारियों के जमाव के कारण बागड़ी जी के मन में कुछ कर गुजरने की इच्छा बलवती हुई। नागपुर में मजदूर आंदोलन में साम्यवादी लोग सजग थे। और बागड़ी जी कम्युनिष्ट नेता श्री भूपेन्द्र नाथ गुकर्जी के संपर्क में आये, और 17-18 वर्ष की उम्र में ही महाराजबाग बम कांड में गिरफ्तार हुए। कम उम्र के कारण उन्हें ताकीद देकर छोड़ दिया गया किन्तु वह क्रांतिकारी आंदोलन में और भी ताकत से जुड़ गये।

क्रांतिकारी संगठन उत्तर भारत, बिहार, उत्तरप्रदेश, बंगाल में अपनी चरम सीमा पर थे। 1932-33 में पिस्तौल खरीदने के लिए उन्होंने हिंगनघाट एवं वर्धा रेल्वे स्टेशन पर तिजोरी लूटी। इस लूट में एक पुलिस इंस्पेक्टर का लड़का भी शामिल था, उन्हें 3 वर्ष का कारावास हुआ।

इस घटना के बाद पिता यह समझ गये कि लड़का किसी काम का नहीं रहा इसे बंधन में बांधना जरूरी है इस कारण बागड़ी जी का विवाह डोंगरगढ़ के सेठ की पुत्री इन्दिरा से कर दिया गया। श्रीमती इन्दिरा बागड़ी ने स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी कि जिस व्यक्ति से वह ब्याही जा रही है। उसने संघर्ष पथ चुना है। श्रीमती बागड़ी भी उनकी सहयोगी बन गई। जब ब्रिटिश हुकुमत से छिपकर बागड़ी जी ने लाल सेना के द्वारा सशस्त्र क्राति का अद्भुत कारनामा किया और नागपुर के अनेक थानों पर लाल सेना ने कब्जा कर लिया तब मारवाड़ी सेठ की छद्म वेश में बागड़ी जी नागपुर से फरार हुये तब श्रीमती इंदिरा बागड़ी ने लाल सेना की कमान संभाली। फरार होकर बागड़ी जी गुम्बई पहुंचे। बागड़ी कालवा देवी स्थित एक फ्लैट में रहे वहीं से आंदोलन का संचालन करते रहे। लाल सेना के लिए बागड़ी जी व इंदिरा बागड़ी को आग्नेय अस्त्र कारतूस और बारूद की आवश्यकता रहा करती थी, उन दिनों हरदा के निकट एक छोटी सी गोंड रियासत हुआ करती थी 'मकड़ई'। इसी मकड़ई रियासत के पूर्व दिवान के पुत्र पाकिस्तान के सैनिक तानाशाह याहिया खान थे। जिनका पतन 1971 में भारत पाक युद्ध के बाद बंगला देश के अभ्युदय के परिणाम स्वरूप हुआ। इसी देशी रियासत के पीलवान के पुत्र कारतूस चोरी करके बेचा करते थे और देश भक्त विष्णु जोशी उन कारतूसों को प्राप्त कर लिया करते थे।

1942 के आंदोलन का यह सत्य है कि बागड़ी जी को सजाये मौत हुई। विभिन्न थानों को लूटने, पुलिस वालों को मारने के जुर्म में दर्जनों मुकदमें चले और सब मिलाकर बागड़ी जी को 95 वर्ष की सजा हुई। नागपुर में 6 दिन तक लाल सेना का राज्य रहा और ऐसा लगता था नागपुर में स्थानीय पुलिस प्रशासन भंग हो गया है। बागड़ी का इस समय इंदिरा बागड़ी में कर्तव्य निष्ठ पत्नी की तरह साथ निभाया। बागड़ी जी और उनके साथियों को पकड़ने के लिये महार रेजीमेंट को बुलाया गया। रेजीमेंट के आने पर बागड़ी जी अपने साथियों दांडेकर, श्यामनारायण कश्मीरी, श्यामलाल श्रीवास वहां से भाग निकले और कलकत्ता चले गये।

उस समय कलकत्ता में किसी को बिना पत्नी के मकान नहीं मिलता था । उन्होंने अपनी गुम हुई पत्नी को ढूंढने के बहाने से मकान हासिल किया । बाबूलाल गुप्ता तब नौकर बने । बागड़ी जी पत्नी का ढुंढने का नाटक करते रहे जबकि पत्नी इंदिरा बागड़ी नागपुर से आंदोलन को संभालती रही और उसके संबंध में सूचनायें भेजती रही । जब मकान मालिक ने देखा कि पत्नी नहीं मिल रही है तो इन्हें भगा दिया। इसी तरह दोनों बिड़ला जी के यहां पहुंचे। बिड़ला जी से उन्होंने अनुरोध किया कि नागपुर के सरकारी संस्थानों पर हमला करने के लिये उन्हें पचास हजार रूपये उपलब्ध करवा दे। तब बिड़ला जी ने कहा इतने से में क्या करोगे और उन्हें 5 लाख रूपये दिये। वहां से बागड़ी जी बम्बई पहुंचे जहां पर नागपुर के पॉकेटमार लड़के ने उन्हें देखा और पुलिस को सूचना दी वे गिरफ्तार हो गये। उन्हें नागपुर लाया गया। सबके हाथ में हथकड़िया व बेड़िया थी। नागपुर की पूरी जनता उन्हें देखने में आई उनमें इंदिरा बागड़ी भी थी गर्व से भरी हुई। जब उन्हें सजा हुई तब बागड़ी जी के बड़े भाई चंपालाल कोर्ट में बेहोश होकर गिर पड़े और उनकी पत्नी रोने लगी पर श्रीमती इंदिरा बागड़ी ने धौर्य नहीं खोया। जिस तरह हर भारतीय पत्नी तन मन वचन से अपने पति का साथ निभाती है, जिस तरह सावित्री सत्यवान को यमराज के चंगुल से छीन लाई उसी तरह श्रीमती बागड़ी मौत के चंगुल से उन्हें बचाने में जुट गई।

गांधीजी उस समय वर्धा में थे। श्रीमती इंदिरा बागड़ी जब उनके पास पहुंची तो वे उनकी दृढ़ता से बहुत प्रभावित हुये और उन्हें सहायता का वचन दिया। उन्होंने जमुना लाल बजाज जी के द्वारा 10,000 रूपये श्रीमती इंदिरा बागड़ी को दिलवाये ताकि वे अपील कर सके। उस समय सुप्रीम कोर्ट नहीं था हाईकोर्ट के बाद प्रिवी कौसिल में अपील होती थी। इंदिरा जी ने बागड़ी जी को सूचना भिजवाई और बागड़ी जी ने अपील की। लंदन के प्रसिद्ध वकीलों की एक सूची बागड़ी जी को दी गई जिसमें से एक नाम के आगे बागड़ी जी ने टिक लगा दी। उस समय की न्याय व्यवस्था देखिए प्रिवी कौंसिल के उस पेनल लायर ने बागड़ी को यह पत्र लिखा कि यह मेरा सौभाग्य है कि मैं एक देश भक्त की पैरवी के लिये चुना गया हूं। बाद में प्रिवी कौंसिल ने बागड़ी जी की फांसी की सजा को आजन्म कारावास में बदल दिया। यह श्रीमती इंदिरा बागड़ी जी की ही शक्ति थी जो उन्हें मौत के मुंह से बचा लाई बाद में अंतरिम सरकार बन जाने पर 1946 में उन्हें अमरावती जेल से रिहा कर दिया गया। 1947 की आजादी के बाद गांधीजी की हत्या ने पूरे देश को झकझोर कर रख दिया, लाल सेना से जयप्रकाश नारायण का संबंध होने से बागड़ी जी को यह सलाह दी गई कि वे देश शांति की स्थापना के लिये लाल सेना भंग कर दे। जय प्रकाश जी के परामर्श से बागड़ी जी ने लाल सेना के हथियार पुलिस को सौंप दिये बाद में उन्होंने श्रीमती बागड़ी व अपने साथियों के साथ समाज वादी आंदोलन की अलख जगाई। उनके हर कार्य में श्रीमती बागड़ी का मूक व सक्रिय सहयोग रहा। वे समय गुमनामी के अंधोरे में रही पर आंदोलन के लिये तन मन ध
न से जुड़ी रही।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ईटारसी लाल सेना के कार्यालय से प्राप्त दस्तावेज
2. लाल सेना से जुडे जनसामान्य से साक्षात्कार

ग्रामीण क्षेत्र में महिला श्रमिकों की स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं एवं समाधान

डॉ. सीमा कदम* यमुना धुर्वे **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र ग्रामीण क्षेत्रों में महिला श्रमिकों की स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं एवं समाधान का एक संक्षिप्त अध्ययन है। ग्रामीण क्षेत्रों में महिला श्रमिकों को दोहरी भूमिका निभानी पड़ती है। जहां एक तरफ ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएं घरेलू या खेती–बाड़ी, पशुपालन, इंधन बटोरने, ईंट भट्टे या निर्माण कार्य में संलग्न तथा कुटीर उद्योग की गतिविधियों में कार्य संभालती है वहीं दूसरी तरफ मजदूरी के अलावा महिलाओं पर परिवार की देखभाल और घर की व्यवस्था की जिम्मेदारी भी होती है। इस दोहरी भूमिका से महिलाओं के स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव पड़ता है तथा इसके परिणामस्वरूप वे विभिन्न प्रकार की शारीरिक बीमारियों के चपेट में आ जाती हैं तथा वे छोटी–मोटी बीमारियों का इलाज करवाना उचित नहीं समझती हैं और कभी–कभी ये गंभीर बीमारी का रूप धारण कर लेती हैं। लेकिन जानकारी के अभाव, पोषण की कमी, इलाज की उपेक्षा, अशिक्षा, अंधविश्वास आदि से अधिकांश ग्रामीण महिला श्रमिक स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से जूझती रहती हैं, परिणामस्वरूप उनकी कार्यकुशलता कम होती चली जाती हैं और उनके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इन समस्याओं को दूर करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत महिला श्रमिकों की स्वास्थ्य संबंधी सुधार एवं उनके कल्याण के लिए प्रभावी कानून बनाने एवं पोषण, संतुलित आहार, स्वच्छता, परिवार नियोजन की जानकारी, शिक्षा एवं स्वास्थ्य संबंधी जागरुकता फैलाने की जरुरत है ताकि वे गरिमापूर्ण जीवन जी सकें।

शब्द कुंजी – ग्रामीण क्षेत्र, महिला श्रमिक, शारीरिक समस्याएँ, मानसिक समस्याएँ, समाधान।

प्रस्तावना – महिला श्रम मानवीय समाज का महत्वपूर्ण अंग है, क्योंकि श्रम न केवल समस्त आर्थिक गतिविधियों का आधार हैं, अपितु महिला श्रमिकों के लिये श्रम बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति का एकमात्र साधन है। एक अनुमान के मुताबिक विश्व के कुल काम के घंटों में से महिलाएं दो तिहाई घंटे काम करती है, लेकिन वह विश्व का केवल 10 प्रतिशत आय अर्जित करती है, और विश्व का केवल एक प्रतिशत संपत्ति की मालकिन हैं। भारतीय संदर्भ में महिला श्रम या श्रम में महिलाओं की भागीदारी पर बात करते समय पिछले कुछ वर्षों में तीन विशेष तथ्य सामनें आते है। एक तथ्य है कि महिलाओं की श्रम शक्ति में बढ़ती भागीदारी, घरेलू कामों में महिलाओं की बदलती भूमिकाएं और शादीशुदा होने पर उनकी पुनरुत्पादन की भूमिका नौकरी और काम की जरूरतों पर प्रतिकूल प्रभाव। अगर एक महिला निर्माण कार्यो में अपने पति के साथ काम करती है तो उसका वेतन भी पति को ही मिल जाता है, हो सकता है कि वो पति उन पैसों को शराब में बरबाद भी कर दे तो भी महिला कुछ नहीं कर सकती। इसी कारण महिलाएं खुद को सशक्त और स्वस्थ्य नहीं बना पाती हैं।

कृषि उत्पादन में भी महिलाएं 63 फीसद तक का योगदान देती हैं, उनके हाथों में पूरे परिवार और समाज का हित होता है, वे आम लोगों की रक्षक होती हैं तो पूरे देश की विरासत का बीज वे बोती हैं, फिर भी उनकी गिनती देश के असंगठित क्षेत्र में ही होती है जिनके पास न तो संपत्ति है और न ही आर्थिक सुरक्षा।

सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए कृत संकल्पित होने के बावजूद भारत में व्यापक एवं तर्कसगंत श्रम के अभाव तथा उपेक्षित पारिवारिक और सामाजिक दृष्टिकोण के कारण असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिला श्रमिक पारिवारिक, सामाजिक तथा कार्यकारी जीवन से संबंधित अनेक समस्याओं का सामना कर रही हैं। बदलते तकनीकि परिवेश एवं कमजोर आर्थिक आधारों के चलते महिला श्रमिकों की उत्पादक भूमिकायें महत्वपूर्ण तो हुई हैं लेकिन बिना समर्थन और सेवाओं के श्रमिकाओं की उत्पादक तथा प्रजनक भूमिकाओं में स्वास्थ्यप्रद सामंजस्य स्थापित नही हो पाने के कारण वे नित–नई समस्याओं से घिरती जा रही हैं। उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत महिला श्रमिकों की स्वास्थ्य समस्याओं का अध्ययन किया गया है।

स्वास्थ्य – स्वास्थ्य का अर्थ है रोगों से दूर तथा प्रसन्नचित होना। स्वस्थ शरीर, स्वस्थ विचार एवं स्वस्थ बुद्धि का मूर्त रूप ही आरोग्य है, आरोग्य वह अवस्था है जिसमे हम प्रकृति एवं वातावरण से सामंजस्य स्थापित करते हुए जीवन का आनंद लेते है, हम वास्तविक रूप से तभी स्वस्थ होते है जब हम स्वयं को मानसिक, भौतिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक स्तर पर स्वस्थ अनुभव करते हैं।

'स्वास्थ्य सम्पूर्ण शारीरिक, मानसिक व सामाजिक निरोगता की अवस्था है तथा मात्र बीमारी या दुर्बलता की अनुपस्थिति को स्वास्थ्य नहीं माना जा सकता।' **– विश्व स्वास्थ्य संगठन**

'एक साधारण व्यक्ति के लिए स्वास्थ्य का तात्पर्य एक स्वस्थ वातावरण में स्वथ्य परिवार में स्वस्थ शरीर में स्वस्थ दिमाग का वास हैं।' **– जे.ई.पार्क व के. पार्क**

'स्वास्थ्य जीवन की वह विशेषता है जो व्यक्ति को उच्चतम तरीके से जीने के योग्य बनाती है।' **– जे.एफ. विलियम**

उद्देश्य –

* सह प्राध्यापक (गृहविज्ञान) माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (गृहविज्ञान) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र) भारत

1. कृषि व भवन निर्माण संबंधी कार्य करने वाली महिलाओं के शारीरिक स्वास्थ्य समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. कृषि व भवन निर्माण संबंधी कार्य करने वाली महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।

उपकल्पना- कृषि व भवन निर्माण कार्य से संबंधित महिला श्रमिकों की शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं में अंतर पाया जाएगा।

शोध अध्ययन विधि - अध्ययन का क्षेत्र- डिण्डौरी जिले के ग्राम मानिकपुर के अंतर्गत अध्ययन के क्षेत्र का चयन किया है।

निदर्शन का आकार एवं पद्वति- अध्ययन संबंधी जानकारी प्राप्त करने के लिये साक्षात्कार हेतु चयनित महिलाओं में से 50 भवन निमार्ण, 50 कृषि मजदूरी श्रमिक अर्थात् 100 महिलाओं का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के आधार पर किया गया।

तथ्य संकलन के स्त्रोत-

1. प्राथमिक स्रोत- प्राथमिक स्त्रोत हमें साक्षात्कार अनुसूची अवलोकन आदि से प्राप्त हुए।

2. द्वितीयक स्रोत- द्वितीयक स्रोत का संकलन पुस्तक, समाचार पत्र, शोध पत्रिकाओं, श्रम मत्रांलय तथा श्रम कार्यालय से प्राप्त प्रतिवेदनो तथा संबंधित गैर-सरकारी संस्थाओं व संगठनो आदि जगहों से प्राप्त हुए।

निष्कर्ष- आकड़ों का विश्लेषण करने पर हमें निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए।

तालिका क्रमांक 1.1 : भवन निर्माण एवं कृषि कार्य करने वाली महिला श्रमिकों की शारीरिक स्वास्थ्य समस्याएं

शारीरिक समस्याएं	कृषि कार्य (50)	प्रतिशत	भवन निर्माण (50)	प्रतिशत	योग
सिरदर्द	30	60	40	80	70
थकान	20	40	45	90	65
कमर दर्द	10	20	15	30	25
कमजोरी	15	30	30	60	45
घबराहट	10	20	25	50	35

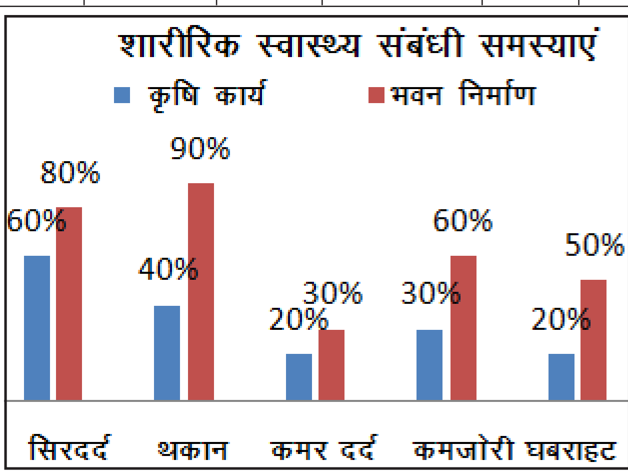

ग्राफ 1.1

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वेक्षित दोनों समूह के महिला श्रमिकाओं में सिरदर्द 70 प्रतिशत पायी गयी । थकान 65 प्रतिशत महिला श्रमिकाओं में पायी गयी और कमजोरी 45 प्रतिशत महिलाओं में देखा गया।

उपरोक्त तालिका से यह भी स्पष्ट होता है कि कृषि कार्य एवं भवन निर्माण कार्य करने वाली श्रमिकाओं में शारीरिक स्वास्थ्य में भी अंतर हैं। भवन निर्माण से संबंधित 90 प्रतिशत श्रमिकाओं में थकान की समस्या देखी गयी जबकि कृषि कार्य करने वाली श्रमिकाओं में केवल 40 प्रतिशत महिलाओं में यह समस्या पायी गयी इसी तरह भवन निर्माण एवं कृषि कार्य करने वाली क्रमश: 80 प्रतिशत एवं 60 प्रतिशत महिलाओं में सिरदर्द की समस्या पायी गयी । भवन निर्माण से संबंधित 60 प्रतिशत महिलाएं और कृषि कार्य से संबंधित 30 प्रतिशत महिलाओं में कमजोरी की समस्या पायी गयी । इसी तरह भवन निर्माण एवं कृषि कार्य करने वाली क्रमश: 30 प्रतिशत व 20 प्रतिशत महिलाओं में कमर दर्द एवं 50 प्रतिशत व 20 प्रतिशत महिलाओं में घबराहट की समस्या पायी गयी । अध्ययन से स्पष्ट होता है कि शारीरिक स्वास्थ्य समस्याएं भवन निर्माण श्रमिकाओं में अधिक पायी गई लगातार एक से कार्य करते रहने से पीठ दर्द व हाथ पाँव में दर्द शुरू हो जाती है। इस तरह कह सकते हैं कि काम की प्रकृति भिन्न होने से दोनों समूह की श्रमिकों में शारीरिक समस्याओं में काफी अंतर पाया गया है।

तालिका क्रमांक 1.2 : भवन निर्माण एवं कृषि कार्य करने वाली महिला श्रमिकों की मानसिक स्वास्थ्य समस्याएं

मानसिक समस्याएं	कृषि कार्य (50)	प्रतिशत	भवन निर्माण	प्रतिशत (50)	योग
चिड़चिडा़पन	16	32	25	50	41
तनाव, चिंता	10	20	20	40	30
क्रोध	05	10	15	30	20
अरूचि	02	04	20	40	22

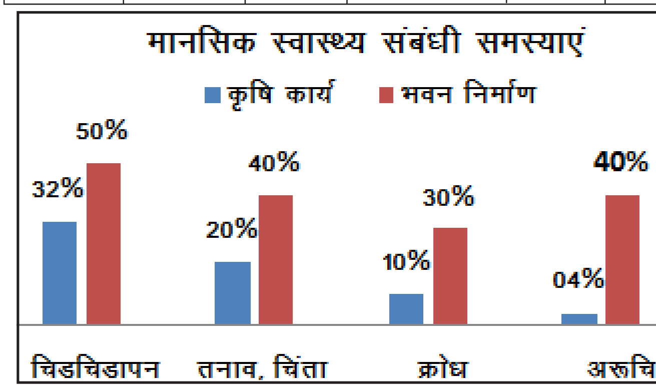

ग्राफ 1.2

उपरोक्त तालिकाओं से स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षित दोनों समूह की श्रमिकाओं में से 41 प्रतिशत चिड़चिड़ापन, 30 प्रतिशत महिलाओं में तनाव एवं चिंता, 20 प्रतिशत महिलाओं में क्रोध की समस्या एवं 22 प्रतिशत महिलाओं में काम के प्रति अरूचि पायी गयी।

उपरोक्त तालिका से यह भी स्पष्ट होता है कि कृषि कार्य एवं भवन निर्माण कार्य करने वाली श्रमिकाओं की मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं में भी अंतर है। भवन निर्माण से संबंधित 50 प्रतिशत श्रमिकाओं में चिड़चिड़ापन की समस्या देखी गयी जबकि कृषि कार्य करने वाली श्रमिकाओं में केवल 32 प्रतिशत महिलाओं में यह समस्या पायी गयी। इसी तरह तनाव एवं चिंता की समस्या भवन निर्माण कार्य करने वाली श्रमिकाओं में से 40 प्रतिशत और कृषि कार्य करने वाली श्रमिकाओं में से 20 प्रतिशत में यह समस्या पायी गयी। क्रोध की समस्या भवन निर्माण कार्य करने वाली एवं कृषि कार्य करने वाली महिला श्रमिकाओं में से क्रमश: 30 प्रतिशत एवं 10 प्रतिशत में पायी गयी इसी तरह भवन निर्माण से संबंधित श्रमिकाओं में से 40 प्रतिशत को काम के प्रति अरुचि की समस्या पायी गयी जबकि कृषि कार्य से संबंधित महिला श्रमिकाओं में से केवल 04 प्रतिशत में यह समस्या देखी गई। कृषि

कार्य रुचिपूर्ण होने के वजह से अरुचि की समस्या उनमें कम पायी गयी।

समाधान –

1. ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत महिला श्रमिक अनेक शारीरिक, मानसिक, कार्यसंबंधी तथा स्वास्थ्य संबंधित समस्याओं से ग्रस्त हैं। इन समस्याओं के निवारण हेतु परामर्श केन्द्र, चिकित्सा सुविधाओं की स्थापना की जानी चाहिए।
2. कृषि कार्य तथा भवन निर्माण क्षेत्र में श्रमिक ठेकेदारी प्रथा के तहत् कार्य करते हैं। ठेकेदारी प्रथा में मालिक तथा श्रमिक के मध्य प्रत्यक्ष संबंध नहीं पाए जाने से अंतिम उत्तारदायित्व के निर्धारण में कठिनाई आती हैं, जिसके चलते श्रमिकों के शोषण की संभावनाएं बढ़ जाती हैं। अत: शासन को चाहिए कि समुचित विधिक व्यवस्था के द्धारा ठेकेदारी प्रथा को समाप्त करें तथा ऐसे क्षेत्रों में एकीकृत संस्था के माध्यम से इन्हें कार्य प्रदान करें और संस्था को नियोजकों से जोड़ें। इस तरह की व्यवस्था से न सिर्फ असंगठित क्षेत्र में कार्यरत श्रमिकों की वास्तविक संख्या का पता लग सकेगा, बल्कि किसी नियोजक के अधीन कितने श्रमिक कार्य कर रहे हैं यह भी ज्ञात किया जा सकता है।
3. महिला श्रमिकों हेतु सैद्धांतिक के साथ-साथ व्यवहारिक शिक्षा की समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए जिससे इनकी कुशलता बढ़ेगी।
4. महिला श्रमिकों के स्वास्थ्य हेतु लिए स्वास्थ्य सुरक्षा तंत्र को मजबूत बनाएं। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशिक्षित स्वास्थ्य कार्मिकों की तैनाती कर सभी स्वास्थ्य सेवायें एक स्थान पर दी जानी चाहिए।
5. प्रशिक्षण संस्थान खोलते समय व मशीने आदि बनाते समय महिलाओं की शारीरिक एवं मानसिक जरूरतों का ध्यान रखा जाए।
6. ग्रामीण महिला श्रमिकों हेतु पृथक से बचत कोष का गठन किया जाना चाहिये और बचत कोष में जमा राशि के आधार पर स्वरोजगार हेतु ऋण दिया जाना चाहिये।
7. ग्रामीण असंगठित क्षेत्र के लिए बनाए जाने वाले कानून के उद्देश्यों में मजदूरों के लिए पहचान पत्र, न्यूनतम आर्थिक सुरक्षा, न्यूनतम सामाजिक सुरक्षा, गरीबी दूर करने में मदद करना, बाल मजदूरी समाप्त करना और बच्चों का बेहतर भविष्य बनाना, मजदूरों के सदस्य आधारित संगठन बनाने को प्रोत्साहन तथा निर्णय प्रक्रिया में असंगठित मजदूरों के संगठन के माध्यम से मजदूरों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित होना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बारहवी पंचवर्षीय योजना (2012-2017) सामाजिक क्षेत्रक भाग-III
2. जोसफ, एम. (1999), कामकाजी महिलाओं की समस्याएं, केन्द्रीय श्रमिक शिक्षा बोर्ड द्धारा प्रकाशित।
3. कुमारी, डॉ. विमलेश (2012), पोषण और आहार विज्ञान, डिस्कवरी पब्लिशींग हाउस नई दिल्ली
4. पल्टा,डॉ.अरूणा (2006), आहार एवं पोषण, शिव प्रकाशनए इन्दौर
5. सिन्हा वी. सी.(1989), भारत में श्रमिक संघ या संघवाद. श्रम अर्थशास्त्र, नेशनल पब्लिशिंग हॉउस, नई।
6. श्रम मंत्रालय, भारत सरकार वाषिक रिपोर्ट (2000-2001)।

****

महिलाओं की स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरूकता का परिवार सदस्यों के स्वास्थ्य पर प्रभाव

डॉ. सीमा कदम* पुर्वा बाउस्कर **

शोध सारांश – महिलाये परिवार की धुरी होती है यदि महिलाये स्वास्थ के प्रति जागरूक होगी तो वे अपने साथ– साथ परिवार के प्रत्येक सदस्य के स्वास्थ्य का ध्यान रख पायेगी एवं बच्चों को समय–समय पर उचित स्वास्थ शिक्षा दे पायेगी। जिससे परिवार का हर सदस्य स्वस्थ रहेगे एवं अपने सारे कार्य समय पर कर पायेगे जिससे परिवार का विकास होगा परिवार का विकास होगा तो देश का विकास होगा।

शब्द कुंजी – स्वास्थ्य, जागरूकता, स्वास्थशिक्षा, अन्धविश्वास, साक्षात्कार, व्यायाम, स्वास्थ शिक्षा, पोषण।

प्रस्तावना – स्वास्थ्य का सम्बन्ध व्यक्ति की पूरी जीवन पर पड़ता है। एक स्वस्थकर व्यक्ति अपने देनिक कार्य बहुत आसानी से करता है। उत्तम स्वास्थ्य ही व्यक्ति को सुखी व प्रभावकारी जीवन व्यतीत करने में मदढगार होता है। स्वस्थ व्यक्ति अपने सारे कार्य समय पर कर लेता है। अगर एक व्यक्ति का स्वास्थ्य अच्छा है तो उसके जीवन का आधा सघंर्ष खुद समाप्त हो जाता है।

स्वास्थ्य की परिभाषा:–

WHO के अनुसार 'स्वास्थ्य मनुष्य की पूर्ण शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक स्थिति है केवल रोगों की अनुपस्थिति स्वास्थ्य नहीं है।'

यदि एक महिला स्वास्थ्य के प्रति जागरूक होगी तो परिवार के सभी सदस्यों के स्वास्थ्य का ध्यान भी रखेगी। एवं महिला स्वयं स्वस्थ होगी तो स्वस्थ शिशु को जन्म देगी एवं उसके स्वास्थ का भी ध्यान देगी एवं समय–समय पर उसे उचित स्वास्थ शिक्षा भी प्रदान करेगी।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. महिला का विभिन्न अन्धविश्वास के प्रति जागरूकता का अध्ययन।
2. महिलाओं के नियमित व्यायाम के प्रति जागरूकता का अध्ययन।
3. महिलाओ के मौसमी फलो के सेवन के प्रति जागरूकता का अध्ययन।
4. महिलाओ की अंकुरित अनाज से होने वाले लाभ के प्रति जागरूकता की अध्ययन।
5. महिलाओ द्वारा परिवार के सदस्यो का स्वास्थ्य परीक्षण के प्रति जागरूकता का अध्ययन।
6. महिलाओ द्वारा आहार में विशेष शक्तिदायक भोज्य पदार्थ शामिल करने की जागरूकता अध्ययन।
7. महिलाओ की जागरूकता का उनके बच्चों के स्वास्थ्य पर प्रभाव के अध्ययन।

उपकल्पना :

1. महिलाओं के विभिन्न अन्धविश्वास के प्रति जागरूकता पायी जाएगी।
2. महिलाओं के नियमित व्यायाम के प्रति जागरूकता पायी जाएगी।
3. महिलाओ के मौसमी फलो के सेवन के प्रति जागरूकता पायी जाएगी।
4. महिलाओ के अंकुरित अनाज से होने वाले लाभ के प्रति जागरूकता की पायी जाएगी।
5. महिलाओ द्वारा परिवार के सदस्यों का स्वास्थ्य परीक्षण के प्रति जागरूकता पायी जाएगी।
6. महिलाओ द्वारा आहार में विशेष शक्तिदायक भोज्य पदार्थ शामिल करने की जागरूकता पायी जाएगी।
7. महिलाओ की जागरूकता का उनके बच्चों के स्वास्थ्य पर प्रभाव पडेगा।

अध्ययन का क्षेत्र हमने अपने अध्ययन के क्षेत्र में खरगोन जिले के 4 गाँवो का चयन किया गया है जो निम्नानुसार है।

1. बडवाह
2. सनावद
3. ढकलगाँव
4. बमनगाँव

एक गाँव से 25 महिलाओं का अध्ययन किया गया ।

अध्ययन का समग्र – हमने अपने अध्ययन के अंतर्गत खरगोन जिले के 4 गाँव की 100 महिलाओं का अध्ययन किया है।

निदर्शन का चुनाव – निर्देशन का चुनाव देव निदर्शन विधि द्वारा किया गया है।

तथ्य सकंलन के स्रोत:

प्राथमिक तथ्य – साक्षात्कार अनुसूची प्रस्तुत शोध अध्ययन में महिलाओ के स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता का अध्ययन करने हेतु स्वनिर्मित अनुसूचि का निर्माण किया गया इसके अलावा साक्षात्कार एवं अवलोकन विधि का भी प्रयोग किया गया इस प्रकार शोधार्थी ने महिलाओं से निम्न प्रकार की जानकारी ली है जैसे:–

1. महिलाओ की स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता की जानकारी
2. माताआ का बच्चों के स्वास्थ के प्रति जागरूकता की जानकारी
3. सरकार द्वारा स्वास्थ सम्बंधित सेवाओं प्रति जागरूकता की जानकारी
4. परिवार के सदस्यों को विभिन्न मोसम से रोगों से बचाने की प्रति जागरूकता की जानकारी

महिलाओं का विभिन्न अन्धविश्वास के प्रति जागरूकता का अध्ययन की तालिका:–

* सह प्राध्यापक (गृहविज्ञान) माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (गृहविज्ञान) माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

तालिका क्र. -1 :महिलाओं की विभिन्न अंधविश्वास के प्रति जागरूकता का अध्ययन

क्र.	अंधविश्वास	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
1.	हां	18	18%
2	नहीं	73	73%
3	कुछ-कुछ	9	9%
4	कुल	100	100 %

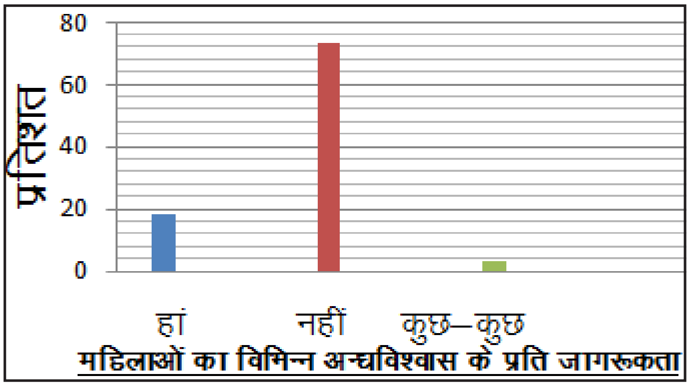

ग्राफ 1

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है 100 महिलाए में से 73 महिलाएं अन्धविश्वासी नहीं है एवं 18 महिलाएं भोजन से जुडी बातों में अन्धविश्वासी है एवं 9 महिलाये आंशिक रूप से अन्धविश्वासी है। प्रायः यह देखने में आता हे कि महिलाये पूर्व ग्रसित मानसिकता के कारण कुछ रूडीवादी हो जाती व विशेष कर भोजन के चुनाव, पकाने के तरीके व ग्राम्यविधि में अंधविश्वास पाल लेती है जो पोषण प्रबंधन पर विपरीत प्रभाव डालता है। हमने महिलाये अंधविश्वास है या नहीं इसका पता लगाने के लिए महिलाओ से कुछ प्रश्न पूछे क्या दूध पीने से कब्ज होता है। क्या फल व सब्जियों की अपेक्षा बादाम व घी फायदेमंद है क्या केला खाने से सर्दी होती है। क्या छाछ पीने से गला खराब होता है इन प्रश्न के महिलायों ने जो दिये उसके अनुसार हमने पता किया कि महिलाये अंधविश्वासी है या नहीं।

तालिका क्र.2 : महिलाओं के नियमित व्यायाम के प्रति जागरूकता का अध्ययन

क्र.	अंधविश्वास	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
1.	हां	54	54%
2	नहीं	45	4 %
3	जरूरत नहीं	1	1%
4	कभी-कभी	-	-
	कुल	100	-

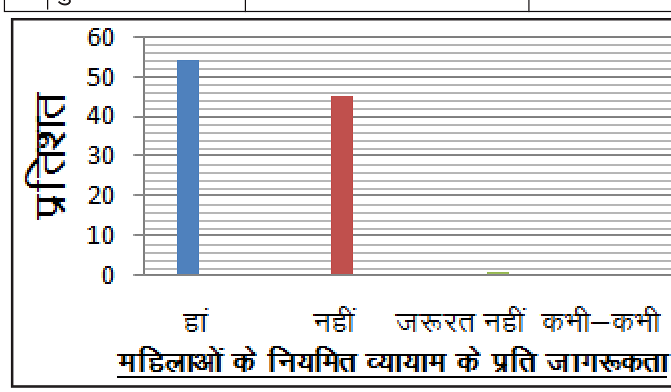

उपरावेत तालिका में स्पष्ट है कि 100 महिलाओं में से 54 महिलाए नियमित व्यायाम करती है एवं 45 महिलाए नियमित व्यायाम नहीं करती है। 1 महिलाए को लगता है की व्यायाम की आवश्यकता नहीं है। अवलोकन के समय एक महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई है की महिलाए को ज्ञात है कि स्वस्थ रहने के लिए नियमित व्यायाम करना चाहिए। परन्तु फिर भी महिलाए नियमित व्यायाम नहीं करती है।

तालिका क्र.3 महिलाओं के मौसमी फलो के सेवन के प्रति जागरूकता का अध्ययन

क्र	अंधविश्वास	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
1.	हां	73	73%
2	नहीं	24	24%
3	कभी-कभी	03	3%
	कुल	100	-

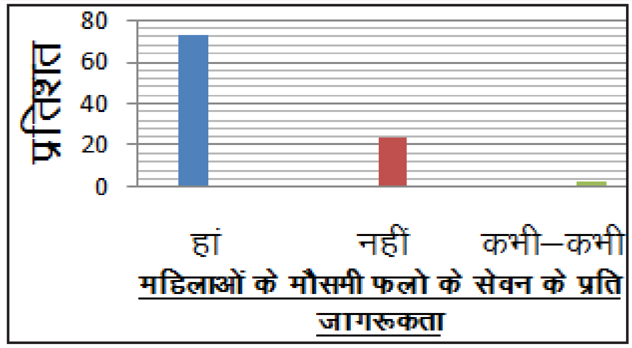

ग्राफ 3

उपरोक्त तालिका में स्पष्ट है कि 100 महिलाओ में से 73 महिलाए मौसमी फलो का सेवन करती है एवं 24 महिलाए मौसमी फलो का सेवन नहीं करती एवं 3 महिलाए मौसमी फलो के सेवन आंशिक रूप से करती है अवलोकन के समय एक महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई है कि महिलाए मौसमी फलो के सेवन के प्रति जागरूक है महिलाओ को जानकारी है कि मौसमी फलो का सेवन करना चाहिये। जिन फलो का सीजन नहीं है उन्हें नहीं लेना चाहिए।

तालिका क्र.4 : महिलाओं की अंकुरित अनाज से होने वाले लाभ के प्रति जागरूकता की अध्ययन

क्र	अंकुरित अनाज से होने वाले लाभ	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
1.	पोषक तत्व प्राप्त होते है	22	22%
2	ताकत	19	19%
3	रोगों से लडने की शक्ति	06	06%
4	सभी	53	53%
	कुल	100	

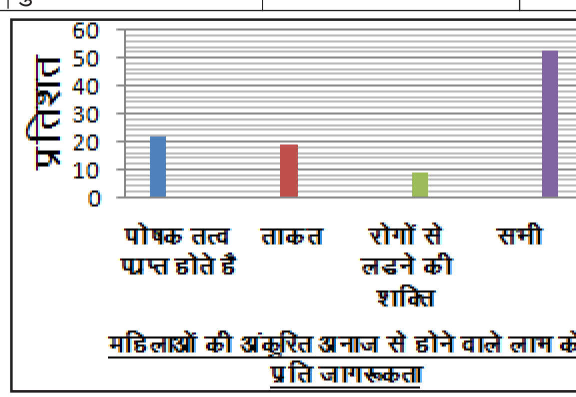

उपरोक्त तालिका में स्पष्ट है कि 100 महिलाओं में से 22 महिलाओ को लगता है कि अंकुरित अनाज का सेवन करने से पोषक तत्व प्राप्त होते है जबकि 19 महिलाहओ को लगता है की अंकुरित अनाज से सेवन करने से ताकत मिलती है एवं 6 महिलाओ को लगता है अंकुरित अनाज का सेवन करने से लडने की शक्ति प्राप्त होती है 53 महिलाओ को लगता है अंकुरित अनाज का सेवन करने से सभी लाभ होते है। पोषक तत्व प्राप्त होते है और ताकत भी मिलती है साथ ही रोगो से लडने की शक्ति मिलती है। अवलोकन के समय हमने ये महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्तहुई की अंकुरित अनाज अपने भोजन में शामिल करना चाहिये अंकुरित अनाज से लाभ होता है परन्तु क्या लाभ होता है इसमें जानकारी का अभाव था।

तालिका क्र-5 : महिलाओ द्वारा परिवार के सदस्यों का स्वास्थ्य परीक्षण के प्रति जागरूकता का अध्ययन

क्र	स्वास्थ्य परीक्षण	महिलाओं की सखंया	प्रतिशत
1.	हां	80	80%
2	नहीं	15	13%
3	पता नहीं	08	07%
	कुल	100	

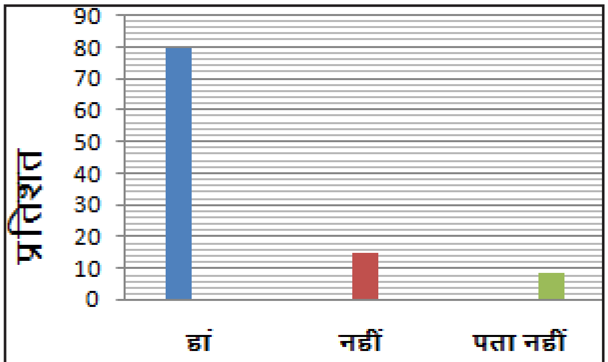

महिलाओ द्वारा परिवार के सदस्यों का स्वास्थ्य परीक्षण के प्रति जागरूकता

ग्राफ 5

उपरोक्त तालिका में स्पष्ट है कि 100 महिलाओं में से 80 महिलाओ समय पर स्वास्थ्य परीक्षण करवाती है 13 महिलाए समय पर स्वास्थ्य परीक्षण नहीं करवाती है एवं 7 महिलायों को स्वास्थ्य परीक्षण के बारे में जानकारी नहीं है।

तालिका क्र.6 : महिलाओंद्वारा आहार में विशेष शक्तिदायक भोज्य पदार्थ शामिल करने की जागरूकता अध्ययन

क्र	विशेष सम्मिलित भोज्य पदार्थ	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
1.	अनाज,दाले, सब्जिया, फल	81	81%
2	बादाम घी	17	17%
3	पता नहीं	02	02%
	कुल	100	

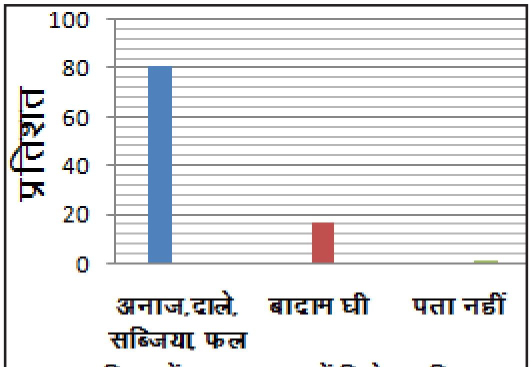

महिलाओं द्वारा आहार में विशेष शक्तिदायक भोज्य पदार्थ शामिल करने की जागरूकता

ग्राफ 6

उपरोक्त तालिका में स्पष्ट है कि 100 महिलाओं में से 81 महिलाऐं अपने भाजे न में विशेष सम्मिलित भोज्य पदार्थ के रूप में अनाज, दाले, सब्जिया,फल को शामिल करती है एवं 17 महिलाए अपने भोजन में विशेष सम्मिलित भोज्य पदार्थ के रूप में बादाम व घी को शामिल करती है और 2 महिलाओ को पता ही नहीं है की विशेष सम्मिलित भोज्य पदार्थ में उन्हें अपने भोजन में क्या शामिल करना चाहिए। अत: स्पष्ट है कि महिलाये अच्छी तरह से जानती है कि किन विशेष भोज्य पदार्थो को शामिल करने से परिवार के सदस्य स्वस्थ होगें। परिवार के सदस्यों की पौषणिक आवश्यकता का आकलन करके ही वो विशेष आहार का चयन करती है व उनके चयन को महत्व देती है।

तालिका क्र.7 : महिलाओ की जागरूकता का उनके बच्चों के स्वास्थ्य पर प्रभाव के अध्ययन

महिलाओ की जागरूकता	बच्चा बीमार है	बच्चा स्वस्थ है	कुल
हां	11	75	86
पर्याप्त	3	11	14
नहीं	-	-	-
कुल	14	86	100

उपराक्ेत तालिका में हमने महिलाओ की जागरूकता का स्वयं के बच्चों के स्वास्थ पर प्रभाव का अध्ययन किया है। इसमें हमने महिलाओ से जागरूकता के सम्बन्ध में 15 प्रश्न पूछे उदाहरण आप नियमित व्यायाम करती है आपके घरो में मौसमी फलो का सेवन होता है, अंकुरित अनाज से क्या फायदे हाते है, आप अपने घर में खाने की वस्तुओं को किस तरह रखती है अपने अपने परिवार के सदस्यों को समय-समय पर स्वास्थ परीक्षण करवाती है आप समय-समय पर बच्चों का स्वास्थ परीक्षण करवाती है आप अपने बच्चो को स्वास्थ शिक्षा देती है इन प्रश्नों के जबाव के आधार पर हम महिलाओं की जागरूकता निकाली फिर हमने देखा कि जो महिलाये जागरूक है उनका बच्चा बीमार पडता है या नहीं इस आधार पर हमने टेबिल बनाई जिसमें हमे जानकारी प्राप्त हुई 86 महिलाये जागरूक है जिसमें 75 महिलाओ के बच्चे स्वस्थ है एवं 11 के बीमार रहते है एवं 14 महिलाये पर्याप्त जागरूक है जिसमें 11 के बच्चे स्वस्थ है व 3 के बीमार है बच्चों की बीमारी एवं महिलाओं कली जागरूकता के मध्य संबंध ज्ञात करने पर कोई वर्ग परीक्षण द्वारा

ज्ञात हुआ है कि जागरूकता की बेहतर स्थिति होने पर बीमारी की स्थिति कम थी। कई परीक्षण मूल्य 0.263 सारणी अनुसार 1 डिग्री फ्रीडम पर कोई मूल्य 0455 है अत: उपलक्लपना 2 (जो माताये बच्चों के स्वास्थ के प्रति जागरूकता होगी उनके बच्चे स्वस्थ हागे) सत्य सिद्द हुई।

निष्कर्ष – किसी भी कार्य को करने से पहले कई प्रक्रियाओं से गुजरना पडता है अत: शोध कार्य भी एसी प्रक्रिया है। जिसमें किसी कार्य को करने के बाद अंत में निष्कर्ष पर पहुचते है अत: शोधार्थी द्वारा किये गये अध्ययन के ढोरान किसी भी शोध को सुव्यवस्थित रूप से पर्णू करने के लिए अध्ययनकर्ता का यह कर्तव्य होता है कि जो भी जानकारी एकत्रित की जाये उसमें विषय वस्तु के हर पहलू को ध्यान में रखते हुए इनकी उपलब्धता व अनउपलब्धता तथा संतुष्टता व असतुंष्टता की जानकारी होनी चाहिए। क्षेत्रीय अध्ययन पूर्ण करने के बाद जो जानकारी प्राप्त होती है उसे निष्कर्ष के रूप में व्यक्त करना होता है अत: अध्ययन के जुडे महत्वपूर्ण निष्कर्षो को निम्न बिन्दुओ द्वारा बताया गया है

1. महिलाओ में अंधविश्वास के प्रति जागरूक पायी गई। अत: उपकल्पना 1 (महिलाओं में अंधविश्वास नहीं पाया जायेगा) सत्य सिद्द हुई।
2. महिलाये स्वयं के स्वास्थ्य के लिए जागरूक पाई गई महिलाए स्वयं को स्वस्थ रखने के लिए नियमित व्यायाम करती है। अत: उपकल्पना 2 (महिलाओं की स्वास्थ के प्रति जागरूकता पाई जाएगी) सत्य सिद्द हुई।
3. महिलाये मौसमी फलो के सेवन के प्रति जागरूक है महिलाओ को जानकारी है कि मौसमी फलो का ही सेवन करना चाहिए। जिन फलो का सीजन नहीं है उन्हें नहीं लेना चाहिए अत: उपलकल्पना 3 सत्य सिद्द हुई।
4. महिलाये अंकुरित अनाज से होने वाले लाभ के प्रति जागरूक पाई गई अत: उपकल्पना 4 सत्य सिद्द हुई।
5. जागरूक महिलाये परिवार के सदस्यों का समय पर स्वास्थ्य परीक्षण करवाती है। अत: उपकल्पना 5 सत्य सिद्द हुई।
6. महिलाये अच्छी तरह जानती है कि किन विशेष भोज्य पदार्थो को शामिल करने से परिवार के सदस्य स्वस्थ होगें परिवार के सदस्यों की पोषणिक आवश्यकता का आकलन करके ही वो विशेष आहार का चयन करती है व उनके चयन को महत्व देती है अत: उपकल्पना 6 सत्य सिद्द हुई।
7. शोधार्थी द्वारा शोध में महिलाओ से कुछ प्रश्न पूछ कर उनके द्वारा दिये गये जवाब के आधार पर जागरूक महिलाओं के बच्चे स्वस्थ है या बीमार अत: यह पाया कि जागरूक महिलाओ के स्वस्थ पाये गये। अत: उपलकल्पना 7 सत्य सिद्द हुई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वर्मा निर्मल स्वास्थ्य शिक्षा पेज नं 13,42 ओमेशा पब्लिकेशन 2006
2. स्वस्थ बच्चे भारत का भविष्य अध्याय 1, अध्याय 4, पेज नं 3,61 पब्लिकेशन 2010
3. भारतीय महिला स्वास्थ पोषण आगंनवाडी कार्यकर्ता मार्गदर्शिका 2 महिला एवं बाल विकास विभाग 23 जुलाई 2010
4. डॉ.सिंह बृन्दा, आहार विज्ञान पेज नं 26, अध्याय 3, श्याम अध्याय 1, पेज नं 6, श्याम प्रकाशन 2009
5. डॉ.पलटा अरूणा, आहार एवं पोषण, अध्याय 1, पेज नं 5, शिवा प्रकाशन 200988
6. कानगो मंगला, पोषण एवं पोषहार,अध्याय 1, पेज नं 6, पंचशील प्रकाशन 2005
7. स्वर्णकार केशन कम्युनिटी हेल्थ नर्सिग,अध्याय 1, पेज नं 18, पेज नं 1,पेज नं 3, एन आर ब्रदर्स 2010
8. भटिया सुदर्शन, कैसे रहें नीरोग, अध्याय 3, पेज नं 24,ग्रामोद्दय प्रकाशन 2004
9. डॉ. महाजन धर्मवीर सामाजिक अनुसन्धान का प्रणाली विज्ञान अध्याय 3, पेज नं 139, विवेक प्रकाशन 2004
10. एच.के.क़पिल अनुसन्धानविधियाँ अध्याय 4, पेज नं 37, बारहवॉ संस्करण 2006

****

अनुसूचित जनजाति की ग्रामीण एवं शहरी किशोंरी बालिकाओं की रूचियों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. सीमा कदम* निर्मला वर्मा **

प्रस्तावना – किशोर बालक किसी भी राष्ट्र के आधार स्तम्भ है। जिस प्रकार एक बालक किसी राष्ट्र के जीवन में महत्वपूर्ण होता है। उसी प्रकार किशोर भी राष्ट्र के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। इसी अवस्था में व्यवसाय चयन में रुचि, जीवन साथी का चुनावब परिवार निर्माण का निर्णय लिया जाता है।

किसी वस्तु,व्यक्ति,प्रकिया,तथ्य,कार्य आदि को पसन्द करने या उसके प्रति आकर्षित होने,उस पर ध्यान केन्द्रितकरने या उससे संतुष्टि पाने कि प्रवृति को रूचि कहते हैं। रूचि हो व्यक्ति की योग्यताओं से सीधा सम्बन्ध नही होता हैं परन्तु जिन कार्या में व्यक्ति की रूचि होती है वह उसमें अधिक सफलता प्राप्त करता हैं। व्यक्ति में रूचियों जन्मजात भी हो सकती है तथा अर्जित भी हो सकती है।

विभिन्न शिक्षाशास्त्री रूचि को सीखने का एक महत्वपूर्ण कारक मानते हैं। किशोंरो की किसी विषय में रूचि उसकी शैक्षिक उपलब्धि की तीव्रता को प्रभावित करती है। सफलतापूर्वक अधिगम के लिए सम्बन्धित विषय में उच्च कोटी की रूचि का होना आवश्यक हैं। क्योंकि एक अध्यापक अपने अध्यापन कोशल की सहायता से विषय वस्तु को छात्रों के सम्मुख चाहे कितने ही सशक्त रूप में प्रस्तुत करें किन्तु यदि छात्र में उस विषय के प्रति रूचि नही है तो न तो छात्र उस विषय वस्तु को आत्मसात् कर पायेगा और न शिक्षक अपने प्रयास में सफल होगा। इसलिए उच्च कोठी के परिणाम के लिए आवश्यक है। कि छात्रों को उनकी रूचियों के अनुसार ही विषयों का चुनाव करने के अवसर प्राप्त हो नही तो उन्हे असफलताओं का सामना करना पढ़ सकता हैं। तथा यह आवश्यक है की किशोंर अपनी रूचियों को ठीक प्रकार से समझे इसके लिए उन्हे एक अच्छे निर्देशक तथा परामर्शदाता की राय लेना आवश्यक है।

माध्यमिक स्तर के किशोंरो पर शैक्षिक क्षेत्र का अधिक दबाव होता है इसके अतिरिक्त उन्हे अनेक किशोरावस्था की समस्याओ का सामना करना पड़ता है इस समय बालक अपनी रूचियों के अनुसार पढ़ना चाहते है किन्तु इस अवस्था में वे पूर्णरूप से परिपक्व न होने के कारण उन्हे इस विषय का ज्ञान नही हो पाता की वो क्या पढे ओर किसे न पढे प्रत्येक अभिभावक अपने बालको की क्षमताओं को ध्यान में न रखकर मात्र अपनी महत्वाकांक्षाओं को वरीयता ढेते है और उन्हे डाक्टर इंजीनियर वकील या सैन्य अधिकारी बनाना चाहते है। अत: उन्हे समझाना चाहिए की उनके बालको की रूचि क्या है। रूचियों और क्षमताओं के अनुसार ही विषयों का चुनाव किया जाना चाहिए,ताकि किशोर उस क्षेत्र में उन्नति प्राप्त कर सके जब किशोंरो को उनकी रूचियो के अनुसार विषय पढ़ने को मिलेगे तो उनकी शैक्षिक उपलिब्ध श्रेष्ट होगी।

डॉ. सरिता पाण्डेय (2014)ने इस अध्ययन मेंग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों के इण्टरमीडिएट तथा जुनियर हाईस्कुल के किशोंरो की शैक्षिक अभिरूचि की जानकारी प्राप्त करने के लिए किया गया तथा निष्कर्ष में पाया गया की हाईस्कुल के किशोंरो की विज्ञान विषय में अधिक रूचि थी। प्रतिमा वर्मा (2008) ने अपने अध्ययन में पाया की विघार्थियों में गणितीय योग्यता का रसायन विज्ञान में शैक्षिक उपलब्धि से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सार्थक सम्बन्ध नही पाया गया।अनिल कुमार दुबे एवं रेखा प्रति एवं अन्य (2008) ने अपने अध्ययन से निष्कर्ष निकाला कि योगाभ्यास करने वाले विघार्थियों की स्मृति तथा विज्ञान विषय में शैक्षिक उपलब्धि योगाभ्यास न करने वाले विघार्थियों में अधिक पायी गई। टी.जे.विघापति एण्ड रॉव (2003) ने पाया कि विघार्थियों की अधिकांश श्रेणियों में सृजनात्मक योग्यता थी विज्ञान विषय में अच्छी उपलब्धता पायी गई।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. अनुसूचित जनजाति की ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की किशोर बालिकाओं की विभिन्न शैक्षिक रुचियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध कार्य उपकल्पना :

1. अनुसूचित जनजाति की ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की किशोर बालिकाओं की विभिन्न शैक्षिक रूचियों में सार्थक अंतर होगा।

निदर्शन का क्षेत्र – निदर्शन का चयन उद्देश्यपूर्ण दैव निदर्शन विधि के द्धार 300 बालकोंका चयन किया गया जिसके अन्तर्गत म.प्र. का खरगोन शहर तथा खरगोन जिले का ग्राम मोहना को चुना गया है।

उपकरण का चुनाव – शहरी किशोर बालिकाओं तथा ग्रामीण किशोर बालिकाओं की शैक्षिक रुचियों को ज्ञात करने के लिए डॉ. एस.पी. कुलश्रेष्ठ का शैक्षिक रुचि प्रपत्र का उपयोग किया गया। द्धितीयक स्त्रोत के रूप में शोध अध्ययन से सबंधित पुराना शोध जनरल पुस्तके, मासिक पत्रिकाओं, इंटरनेट का उपयोग किया गया है प्रस्तुत अध्ययन में हमारे द्धारा प्रतिशत एवं टी टेस्ट का प्रयोग किया गया!

अध्ययन की सीमाएँ :

1. अध्ययन की अवधि अधिक नहीं थी। सीमित समय के कारण बड़ी संख्या के निदर्शन का सर्वेक्षण नहीं हो सका।
2. समय सीमितता के कारण खरगोन शहर के दो ही कॉलेज की किशोर बालिकाओं को चुना जा सका।
3. समय एवं साधन सीमितता के कारण किशोर बालको को इस अध्ययन में सामिल नही किया गया।

* सह प्राध्यापक (गृहविज्ञान) माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (गृहविज्ञान) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र) भारत

परिणाम एवं विवेचना-

तलिका क्र.1,2 (निचे देखे)

तलिका क्र. 3,4,5 (देखे अगले पृष्ठ पर)

निष्कर्ष :

1. कृषि के क्षेत्र में ग्रामीण बालिकाओं की रूचि शहरी बालिकाओं की तुलना में अधिक देखी गई क्योंकि ग्रामीण बालिकाएँ बचपन से ही कृषि से जुड़ी होती है। उन्हें कृषि के कार्य देखने तथा सीखने को मिलते हैं।इस कारण ग्रामीण बालिकाए कृषि में अधिक रूचि लेती हैं।
2. वाणिज्य के क्षेत्र में ग्रामीण एवं शहरी बालिकाओं की रूचि में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अर्थात ग्रामीण बालिकाएँ भी ग्रामीण क्षेत्र में रहकर भी उनमें वाणिज्य जैसे विषय में रूचि देखी गयी हैं।
3. कला के क्षेत्र में शहरी बालिकाओं की रूचि ग्रामीण बालिकाओं की तुलना में अधिक देखी गई क्योंकि शहरी बालिकाओं को शहर में कला से संबन्धित अनेक साधन उपलब्ध होते है जो कि ग्रामीण बालिकाओं को उपलब्ध नहीं हो पाते । इसलिए शहरी बालिकाएँ कला के क्षेत्र में अधिक रूचि लेती है।
4. गृह विज्ञान के क्षेत्र में ग्रामीण बालिकाओं की रूचि शहरी बालिकाओं की तुलना में अधिक दिखाई ढी गई क्योंकि ग्रामीण बालिकाओं को माताएँ शुरू से ही घर के छोटे-छोटे कार्य करना सिखाती है। इसलिए वे गृह विज्ञान जैसे विषयों में अधिक रूचि लती हैं।
5. विज्ञान के क्षेत्र में ग्रामीण एवं शहरी बालिकाओं की रूचि में का कोई सार्थक अंतर नही पाया गया क्योंकि ग्रामीण बालिकाएँ भी शहरी बालिकाओं की तरह विज्ञान विषय में रूचि लेती हैं!

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एलिजाबेथ बी. हरर्लोक, 1967 विकास मनोविज्ञान -प्रकाशन यू.जी.सी. भवन, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली,पेज नं. 405,4095
2. कपिल डॉ. एच.के. 2003, सांख्यिकी के मूल तत्व- प्रकाशन विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा-45-46
3. डॉ. डेजी कुमारी-बाल विकास एवं शास्त्र-लुसेन्ट पब्लिकेशन न्यू रोड़, पटना बिहार 30-31
4. डॉ, हरीचन्द-उपेती भारतीय जनजातियाँ एवं संरचना-56
5. दुबे एवं कुसुमाकर, 2014 सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी - प्रकाशन श्री गणेश मार्केट, खजूरी बाजार, इन्दौर-452002 पेज नं. 53
6. माथुर ड़ॉ. एस.एस. 1982, सामान्य मनोविज्ञान-प्रकाशन विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा पेज नं. 21,22
7. योगेश अटल 1965, आदिवासी भारत- प्रकाशन गणेश मार्केट, खजूरी बाजार- नं. 21
8. रवीन्द्र नाथ, मुकर्जी -सामाजिक शोध व सांख्यिकी - विवके प्रकाशन यू.ए. जवाहर नगर, दिल्ली, पेज नं. 120
9. विजयशंकर श्रीवास्तव- जनजातीय विकास -प्रकाशन विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा-75.76
10. गायत्री बर्मन, डॉ. शशिप्रभा जैन - 2010 किशोरावस्था-प्रकाशन श्री गणेश मार्केट, खजूरी बाजार, इन्दौर-452002 पेज नं. 62,71,175

तलिका क्र.1 : कृषि के क्षेत्र में ग्रामीण एवं शहरी बालिकाओं की शैक्षिक रूचियों का अध्ययन

क्र.	रूचि वर्ग	ग्रामीण क्षेत्र	प्रतिशत	S.D.	शहरी क्षेत्र	प्रतिशत	S.D.	टी मुल्य
1	उच्च रूचि	2	2		1	1		
2	औसत से अधिक रूचि	12	16		5	6		
3	औसत रूचि	29	38	12.32	25	33	10.24	3.10
4	औसत से कम रूचि	28	37		33	44		
5	निम्न रूचि	4	6		11	14		

सार्थक अंतर है।

तलिका क्र.2 : वाणिज्य के क्षेत्र में ग्रामीण एवं शहरी बालिकाओं की शैक्षिक रूचियों का तुलनात्मक अध्ययन

क्र.	रूचि वर्ग	ग्रामीण क्षेत्र	प्रतिशत	S.D.	शहरी क्षेत्र	प्रतिशत	S.D.	टी मुल्य
1	उच्च रूचि	3	4		10	13		
2	औसत से अधिक रूचि	27	36		28	38		
3	औसत रूचि	23	30	10.67	25	33	11.44	1.96
4	औसत से कम रूचि	17	22		10	13		
5	निम्न रूचि	5	6		2	1		

सार्थक अंतर नही है।

तालिका क्र.3 : कला के क्षेत्र में ग्रामीण एवं शहरी बालिकाओं की शैक्षिक रूचियों का तुलनात्मक अध्ययन

क्र.	रूचि वर्ग	ग्रामीण क्षेत्र	प्रतिशत	S.D.	शहरी क्षेत्र	प्रतिशत	S.D.	टी मुल्य
1	उच्च रूचि	6	8	10.60	9	12	12.51	30.71
2	औसत से अधिक रूचि	25	33		27	36		
3	औसत रूचि	27	36		29	38		
4	औसत से कम रूचि	13	17		10	13		
5	निम्न रूचि	4	5		0	0		

सार्थक अंतर है।

तालिका क्र.4 : गृह विज्ञान के क्षेत्र में ग्रामीण एवं शहरी बालिकाओं की शैक्षिक रूचियों का तुलनात्मक अध्ययन

क्र.	रूचि वर्ग	ग्रामीण क्षेत्र	प्रतिशत	S.D.	शहरी क्षेत्र	प्रतिशत	S.D.	टी मुल्य
1	उच्च रूचि	12	16	11.76	8	10	10.58	21.7
2	औसत से अधिक रूचि	31	41		30	40		
3	औसत रूचि	23	30		22	29		
4	औसत से कम रूचि	6	8		10	13		
5	निम्न रूचि	3	4		5	6		

सार्थक अंतर है।

तालिका क्र.5 : विज्ञान के क्षेत्र में ग्रामीण एवं शहरी बालिकाओं की व्यक्तिगत रूचियों का तुलनात्मक अध्ययन

क्र.	रूचि वर्ग	ग्रामीण क्षेत्र	प्रतिशत	S.D.	शहरी क्षेत्र	प्रतिशत	S.D.	टी मुल्य
1	उच्च रूचि	15	20	13.39	10	13	6.78	1.98
2	औसत से अधिक रूचि	10	13		16	21		
3	औसत रूचि	38	50		20	40		
4	औसत से कम रूचि	7	9		12	16		
5	निम्न रूचि	5	6		2	2		

सार्थक अंतरनही है

****

निमाड़ के सन्त जगन्नाथ गिर - एक अध्ययन

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश के निमाड़ क्षेत्र में मध्यकाल में हुए अनेक सन्तों में जगन्नाथ गिर का भी उल्लेखनीय स्थान है। इस शोध पत्र में उनके जीवन के विभिन्न आयामों का एक अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. **जन्म –** सन्त जगन्नाथगीर सन्त सिंगाजी के समकालीन थे।[1] उनका जन्म विक्रम सम्वत् 1579[2] (ईसवी सन् 1522) में हुआ था।

2. **पारिवारिक स्थिति –** उनके माता-पिता के नामों का ज्ञान उपलब्ध स्रोतों से प्राप्त नहीं होता है। उनकी रचनाओं से यह ध्वनित होता है कि वे कृषक परिवार के सदस्य थे। कृषि भूमि अत्यल्प थी। आर्थिक दृष्टि से पारिवारिक स्थिति कामचलाऊ थी।

3. **प्रारम्भिक जीवन –** बाल्यकाल से ही वे पारिवारिक कृषि एवं पशुपालन सम्बन्धी कार्यों में पिता के सहयोगी के रूप में कार्य करने लगे थे। उनके भजनों के अवलोकन से विदित होता है कि उन्हें निमाड़ी बोली का अच्छा ज्ञान था। अपने परिवेश से उन्होंने निमाड़ी का ज्ञान प्राप्त किया था। वे साक्षर थे। उनमें लेखन और पठन की क्षमता थी।

4. **दीक्षा –** सन्त मनरंगीर के व्यक्तित्व एवं उनकी शिक्षाओं का युवा जगन्नाथ पर बहुत प्रभाव पड़ा और वे अधिक से अधिक उनकी संगत में रहने के अवसर तलाशने लगे। 'उनकी श्रद्धा का अनुभव करते हुये सन्त मनरंगीर ने उन्हें गुरु दीक्षा प्रदान की।'[3] अपने गुरु के विषय के उन्होंने स्वयं भी लिखा है-

सतगुरु से चित चेतिया। मनरंग लियो जगजीत हो।।
आद-अन्त अनुभव कथा। गावे जगन्नाथ गिर हो।।

'वे सन्त सिंगाजी के गुरु भाई थे'[4], लेकिन उन्होंने सिंगाजी से पहले दीक्षा ग्रहण की थी और उनका सन्त जीवन भी अपेक्षाकृत बहुत लम्बा था।

5. **साधना –** उन्होंने भक्ति की निर्गुण धारा का प्रमुखता से अनुसरण किया, किन्तु उनके भजनों के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि वे इस संबंध में एकनिष्ठ नहीं थे तथा सगुण साकार की प्रशस्ति एवं वन्दना से भी उन्हें परहेज नहीं था। वे सर्वप्रथम गणपति की वन्दना में आस्था रखते थे। यथा-

अहनद की झनकार। म्हारो मगन दुलीचो गगनो।।
प्रथम गणपति विनवा। जाको नवी नवी करो प्रणाम।।[5]

इस तरह वे निर्गुण एवं सगुण के समन्वय के पक्षधर प्रतीत होते हैं। आत्मोत्थान हेतु निर्गुण निराकार की साधना उनके लिये सहज थी, लेकिन सामान्य जन को भक्ति धारा से संलग्न करने के लिये उन्होंने सगुण प्रवाह का भी प्रयोग किया।'आध्यात्मिक परिपक्वता के साथ सगुण से निर्गुण में प्रवेश सुगम हो जाता है।'[6]

6. **कार्यक्षेत्र –** उनके सन्तत्व का अधिकतम लाभ खण्डवा और उसके निकटवर्ती क्षेत्रों को प्राप्त हुआ। रामनगर, पिपल्या आदि ग्रामों में आपका प्रवास अधिक रहा है।

6. **रचनाएँ –** सिंगाजी की तरह आपकी प्रचूर संख्या में रचनाएँ प्रकाश में नहीं आ सकी। भजन मण्डलियों और भजन के संकलनकर्ताओं के कोश में जगन्नाथ गिर के भजन प्राप्त नहीं हो पाये हैं। डॉ. कृष्णलाल हंस को इनका एक पद प्राप्त हुआ था, वही अभी तक ज्ञात है।

इस पद की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार है-

आपा माहिन खोया हो। निरगुन किया परगास।
बारा-सोला सार मंडी। पाँच-पचीस का खेल हो।
गउ कंपन रमण कियो। जिण कियो ऊनी ठाय।
चन्द्र सूरज ढोई थकि रहया। जाकी अविचल जोत।
रेन दिवस उपजे नाहीं। जहाँ पाप पुन्न नहीं होय।
इन्द्र-चन्द्र बहु रास रच्यो। जहाँ नारद कियो परगास हो।
पाँव पलक तीन लोक में। जाको मान कियो अपमान।
सर्व देव रूसी बैठिया। देवा तैंतीस करोड़ हो।
छै सो अट्ठासी रूसि बैठिया। बैठया आसन जोड़।
मगन दुलीचो अजब बन्यो। राखु लियो निराधार हो।
बिना ही लोभ सोभा बनी। खेलन को आंगन पार।
मगन दुलीचो अजब बन्यो। जहाँ हीरा को परगास हो।
मानक मोती की झलरी। जहाँ फूले निरंजन नाथ हो।[7]

सन्त की रचना शैली सामान्य है। अन्तर्भावों को सीधे-सीधे शब्द दे दिये गये हैं।

7. **उपदेश –** उन्होंने अपने काव्य तथा उपदेशों में जीवन की सादगी पर बहुत बल दिया। उनकी मान्यता थी कि अत्यधिक महत्वाकांक्षा कष्ट का कारण बनती है। मानव के जीने के लिये आवश्यकताएँ बहुत सीमित होती हैं, लेकिन वह इन्द्रियों के वशीभूत होकर उनका अनावश्यक विस्तार करके सांसारिकता के जंजाल में उलझता चला जाता है। सद्गुरु की शरण में जाने पर मानव में विवेक जाग्रत होता है और भले-बुरे में अन्तर करने में सक्षम हो जाता है। उन्होंने लिखा है-

जो मोहि सुध बुध उपजे। उपाय आगम की राह। सतगुरु बुध उपजाविया।
गुरु गुण किया परगास।[8]

उन्होंने गुरु को बहुत महत्व दिया तथा अपने कायाकल्प को उनके आशीष का फल स्वीकार किया।

8. **अनुयायी –** जगन्नाथ गिर अन्तर्मुखी प्रवृत्ति के सन्त थे। उनके साथ चमत्कारिक घटनाएँ जुड़ी हुई नहीं हैं। वे अपने सद्गुरु मनरंगस्वामी की सेवा में अधिक संलग्न रहते थे। समाधि ग्रहण के बाद सिंगाजी के प्रति जन सामान्य की श्रद्धा में अपरिमित वृद्धि हुई। इन कारणों से जगन्नाथ गिर के

* सह प्राध्यापक (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

अनुयायियों की संख्या सीमित ही रही।

9. निर्वाण – 82 वर्ष की दीर्घायु में उन्हें 'विक्रम सम्वत् 1661'[9] (ईसवी सन् 1604) में मुक्ति की प्राप्ति हुई थी।

10. मूल्यांकन – जगन्नाथ गिर समन्वयवादी सन्त थे। उन्होंने निर्गुण और सगुण के सैद्धान्तिक विवाद में उलझकर किसी एक के साथ बँधने की अपेक्षा दोनों के प्रति सम श्रद्धा व्यक्त की। वे अपनी प्रस्थति से सदैव संतुष्ट रहे और उन्होंने अधिक से अधिक लोग द्वारा पूजे जाने की महत्वाकांक्षा कभी अपने मन में उपजने नहीं दी। वे शान्तचित्त से गुरु सेवा और गुरुकाज में संलग्न रहे। 'उनकी यह मनोवृत्ति उन्हें सन्तों की श्रृंखला में विशिष्ट बना देती है।'[10]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **निमाडी और उसका साहित्य**, लेखक- डॉ. कृष्णलाल हंस, प्रकाशक- हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, संस्करण- 1956., पृष्ठ- 291.
2. **भारत के सन्त-महात्मा**, लेखक- रामलाल, प्रकाशक- विद्या प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण- द्वितीय, 1959, पृष्ठ-486.
3. **नर्मदाचल के सन्त कवि**, लेखक- बाबूलाल सेन, प्रकाशक- इतिहास संकलन समिति, महेश्वर, संस्करण- प्रथम, 1995ई., पृष्ठ-27.
4. **सन्त श्री ब्रह्मगीरजी एवं शिष्यगण वंशावली,** संकलनकर्ता- रामशंकर गंगराड़े, प्रकाशक- श्री हरि ॐ गंगराड़े कुंकू प्रसादी भण्डार, सिंगाजी, संस्करण- 1999.
5. **निमाडी साहित्य के कलमकार-कलाकार,** लेखक- बाबूलाल सेन, प्रकाशक- माहिश्मती प्रकाश्न, महेश्वर, संस्करण- 1995, पृष्ठ- 27.
6. **सन्तमत में साधना का स्वरूप**, लेखक- प्रतापसिंह चौहान, प्रकाशक- प्रत्युश प्रकाशन, कानपुर, संस्करण- 1961, पृष्ठ- 112.
7. **निमाडी और उसका साहित्य**, लेखक- डॉ. कृष्णलाल हंस, प्रकाशक- हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, संस्करण- 1956., पृष्ठ- 292.
8. **वही**, पृष्ठ- 292.
9. **भारत के सन्त-महात्मा**, लेखक- रामलाल, प्रकाशक- विद्या प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण- द्वितीय, 1959, पृष्ठ-487.
10. **वही**, पृष्ठ-487.

****

जबलपुर जिले के औद्योगिक विकास में (अग्रणी बैंक) सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया के योगदान का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. अनिल तौहेल *

प्रस्तावना – किसी भी देश की अर्थव्यवस्था के विकास में औद्योगिक विकास की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखती है। औद्योगिक विकास का स्तर अर्थव्यवस्था के विकास का महत्वपूर्ण मापदण्ड है, क्योंकि अर्थव्यवस्था में औद्योगिक क्षेत्र का योगदान अन्य क्षोत्रों की अपेक्षा अधिक होता है।

देश का औद्योगिक विकास, विकास के अन्य तत्वों के अतिरिक्त एक बड़ी सीमा तक पूँजी अर्थात् वित्त की उपलधता पर निर्भर करता है। अत: कहा जा सकता है कि वित्त आधुनिक अर्थव्यवस्था में उद्योगों का जीवन रक्त है। सार्वजनिक क्षेत्र में उद्योगों के लिये वित्त की व्यवस्था सरकार की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी है। परन्तु निजी क्षेत्रों में उद्योगों को समान्य वित्तीय संस्थाओ से ही पूँजी एकत्रित करनी पड़ती है। भारतीय अर्थव्यवस्था में विभिन्न प्रकार की पूँजी की जो आपूर्तियाँ है वह बहुत ही सीमित है इससे औद्योगिक विकास की समस्या और भी जटिल हो गई है। भारतीय अर्थव्यवस्था का पूँजी बजार विकासशील दशा में है तथा उद्योगे के लिये दीर्घकालीन वित्त की आवश्यकता अपर्याप्त रूप से ही संतुष्ट हुई है। अल्पकालीन मुद्रा बाजार अपेक्षाकृत अधिक विकसीत है, किन्तु ये भी हमारे विकासशील उद्योगों की वित्त व साख सम्बंधी आवश्यकताएँ पूर्णत: संतुष्ट करने असफल है।

औद्योगिक वित्त व्यवस्था की समस्या एक जटिल समस्या है। अल्पविकसित देशों के आर्थिक विकास में इस समस्या का समाधान अत्यन्त आवश्यक है। भारतीय अर्थव्यवस्था में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की अवधि में अनेक विशिष्ट वित्तीय संस्थाएँ विभिन्न प्रकार के उद्योगों को मध्यकालीन एवं दीर्घकालीन ऋण प्रदान करने के लिए स्थापित हुई हैं।

सरकार द्वारा स्थापित विशिष्ट वित्तीय संस्थाएँ देश में विशिष्ट प्रकार के उद्योगों को वित्तीय सुविधाएँ प्रदान करती रहीं किन्तु देश में समान्य उद्योगों, लघु तथा हस्तशिल्प उद्योगों की उपेक्षा हुई जिस कारण देश एवं राज्य में उद्योगों की स्थापना और उद्यमिता का विकास धीमा रहा। इसके परिणामस्वरूप न केवल देश व राज्य में बल्कि जबलपुर जिले में उद्योगों का अपेक्षित विकास नही हो पाया। जिले से लेकर राज्य में तथा देश में औद्योगिक विकास के लिये दीर्घकालीन वित्त के साथ ही अल्पकालीन वित्त की आवश्यकता होती है जिसकी पर्याप्त व निरंतर अपूर्ति उचित समय पर होना चाहिए।

उद्योगों को ऋण प्रदान करके रोजगार एवं आय में वृद्धि का प्रयास किया जा रहा है। अग्रणी बैंक की विभिन्न नितियों के अंतर्गत विभिन्न वर्ग के उद्योगों को ऋण एवं सहायता प्रदान की जाती हैं। जिले में बैकों द्वारा ग्रामीण एवं शहरी विकसित एवं अविकसित क्षेत्रानुसार ऋण एवं सहायता प्रदान करके उस क्षेत्र के निवासियों के आर्थिक विकास का प्रयास किया जा रहा है। वास्तव में विकास एक दीर्घकालीन एवं निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। विभिन्न योजनाओं के माध्यम से विकास की प्रक्रिया हमारे देश में 1950-51 से प्रारंभ की गई है। राष्ट्रीय महत्व की योजनाओं को ध्यान में रखते हुए भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों को प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों में कम से कम 40 प्रतिशत ऋण देने का लक्ष्य प्रदान किया गया है।

वर्ष 1969 में 14 प्रमुख बैंकों के राष्ट्रीयकरण के पश्चात् वाणिज्य बैंकों ने अपने दायित्व का निर्वाहन पूरी क्षमता से करते हुए निजी क्षेत्र के उद्योगों को ऋण प्रदान किया जिससे उद्योगों का विकास हुआ। इस प्रकार हमारे देश के आर्थिक विकास में काफी प्रगति हुई। देश के सभी क्षेत्रों का समुचित विकास हो, इसे ध्यान में रखते हुए वर्ष 1989 में सेवा क्षेत्र दृष्टिकोण की अवधारणा भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों को प्रदान की गई। इसके अंतर्गत बैंक की शाखाओं को ग्रामों का आवंटन किया गया तथा प्रत्येक जिले के लिये बैंक शाखा योजना तैयार करने की अवधारणा प्राप्त हुई इसी मूल उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक बैंक को अग्रणी बैंक की भूमिका निभाने के लिये विभिन्न जिले आवंटित किये गये। इसी श्रृंखला में सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया को जबलपुर जिले में अग्रणी बैंक की भूमिका के निर्वहन का दायित्व प्रदान किया गया है।

सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया ने एक अग्रणी बैंक के रूप में जबलपुर जिले में औद्योगिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। बैंक ने विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से नवीन एवं कार्यरत उद्यमियों को प्रोत्साहन देकर जिले में उद्योग स्थापित करने हेतु प्रेरित किया, परियोजना तैयारी व क्रियान्वयन में सहायता की एवं वित्तिय सहायता प्रदान कर उद्योगों की स्थापना और विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

सारणी 1 : 21 वीं शताब्दी में सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया की प्रगति (रूपये करोड़ में)

वर्ष	शाखा संख्या	जमा	अग्रिम	परिणाम	लाभ
2000	3092	35872	15805	51677	151
2003	3088	51165	24848	74324	306
2005	3123	60752	29085	89837	357
2008	3308	110320	74287	184607	550
2011	3728	179356	131407	310763	1252

स्त्रोत: सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया शताब्दी वर्ष प्रतिवेदन, 1911-2011

वर्ष 1969 में सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया की कुल शाखाएँ मात्र 671 थीं। वर्ष 1969 में राष्ट्रीयकरण के पश्चात् से सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया ने

* सहायक प्रध्यापक (वाणिज्य) शासकीय तिलक महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.) भारत

निरंतर प्रगति की है। न केवल जमा धन तथा ऋण व अग्रिम की दृष्टि से अपितु शाखाओं के विस्तार में उल्लेखनीय प्रगति की है, जैसा कि अगामी आरेख के अवलोकन से स्पस्ट होता है:-

सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया की शाखाओं की प्रगति

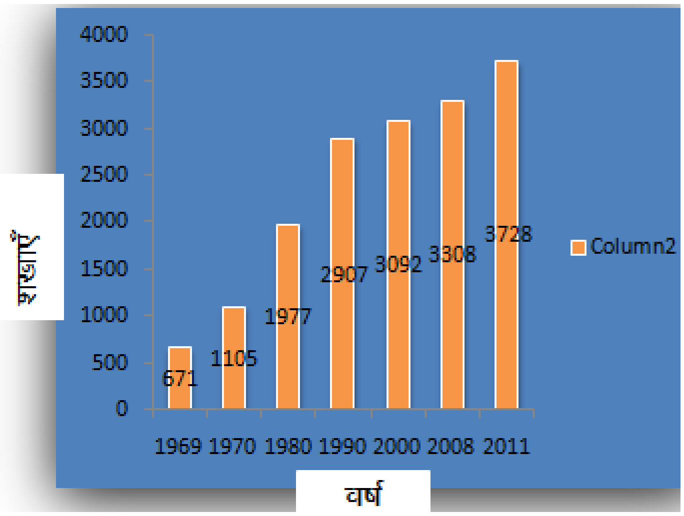

उद्योग - जिले में प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता के कारण उद्योगों का विकास हुआ है किन्तु संसाधनों के अनुरूप औद्योगिक विकास अभी भी अपेक्षित है। वर्तमान में जिले के उद्योगों को निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया जा रहा है। इन उद्योगों को दो भागों में बांटा गया है।

(अ) लघु उद्योग:- जिले में कार्यरत लघु उद्योगों में से प्रमुख हैं:-

(1) बीड़ी उद्योग (2) चूना उद्योग (3) लकड़ी उद्योग (4) बिजली का सामान (5) हाथ करघा उद्योग (6) कपड़ा छपाई उद्योग (7) आभूषण उद्योग (8) बर्तन उद्योग (9) लोहा उद्योग (10) बॉस उद्योग (11) लाख उद्योग (12) गुड़ उद्योग (13) शहद उद्योग (14) फर्नीचर उद्योग (15) फोटो फ्रेमिंग (16) आयुर्वेदिक दवाइयां (17) अगरबत्ती उद्योग (18) सुगंधित तेल

वृहद उद्योग - जबलपुर जिले में बड़े पैमाने पर उत्पादन करने के उद्देश्य से विभिन्न स्थानों पर वृहद उद्योगों की स्थापना की गई है, ये उद्योग हैं-

(1) सीमेन्ट उद्योग (2) चीनी मिट्टी उद्योग (3) सुरक्षा उद्योग (4) दूरसंचार उद्योग (5) जिलेटिन फेक्ट्री इत्यादि।

सारणी 2 - (निचे देखे)

सारणी 2 में प्रदर्शित समंको सूचनाओं का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि जबलपुर जिले में अग्रणी बैंक योजनांतर्गत स्थापित उद्योगों की संख्या में निरंतर वृष्टि हो रही है वर्ष न केवल उद्योगों की नवीन इकाईयों की स्थापना में वृद्धि हुई है अपितु पूंजी निवेश एवं लोगों को प्राप्त रोजगार के अवसर में भी वृद्धि स्पष्ट दिखाई देती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **योजना -** मासिक पत्रिका-प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली
2. **कुरूक्षेत्र -** द्वैमासिक पत्रिका, - म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
3. **उद्यम -** मासिक पत्रिका - प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई - दिल्ली
4. **रचना -** द्वैमासिक पत्रिका, - म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
5. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, जबलपुर संभाग के सभी जिले (विविध वर्ष)।

वेबसाईट :-

1. wwww.centralbankofindia.co.in
2. wwww.centralbankofindia.net.in
3. wwww.cedmapindia.com

सारणी 2 : जबलपुर जिले में अग्रणी बैंक सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा उद्योगिक विकास हेतु किये गये कार्यो की संख्या

क्र.	कार्य/सेवा का नाम	हितग्राही उद्योगों / उपक्रमों की संख्या (31 मार्च को)							
		2001	2003	2004	2005	2006	2008	2009	2010
1	दीर्धकालीन ऋण/पूँजी	151	278	301	361	481	596	805	1019
2	मध्यम अवधि ऋण	1208	1500	1509	1581	1704	1889	2005	2104
3	अल्पअवधि ऋण/कार्यशील पूँजी	1519	1610	1616	1700	1799	1882	2307	2989
4	परियोजना निर्माण	477	669	709	1002	1109	1303	1391	1522
5	परामर्श सेवाएँ	1009	1606	2002	2800	2991	3711	3801	4055
6	बैंक /ऋण गारंटी	882	2009	2881	3089	3970	4221	4887	5225
7	स्टॉक के विरूद्ध ऋण	1215	1816	2711	3225	3988	4671	5001	5972
8	व्यक्तिगत ऋण	2009	2298	2998	3710	3979	5011	5552	6112
9	आयात में सहायता	14	22	18	21	31	39	44	55
10	निर्यात में सहायता	08	12	19	22	55	45	49	68
11	महिला उद्यम ऋण	773	1239	1611	1891	1922	2714	3010	3800
12	अन्य सेवाएँ प्रशिक्षण इत्यादि	1201	1992	3040	4010		6972	8108	9552

स्त्रोत:- Web., leadbank statistics, Central Bank of India Regional Offices Reports

****

Marginalised Voices

Dr. Rajkumari Sudhir*

Abstract - Today, when globalisation seems to have taken over every form of art and culture everywhere in the world, there is still one form of writing that thrives on being different, driving home the idea that every country and every local community within that country has different cultures and different histories. Theses marginalized cultures which flourishes away from the mainstream were called 'subaltern' by Italian thinker Antonio Gramsci.

Introduction - In the novels of Mulk Raj Anand Indian philosophy highlighting casteism is seen.If Anand's novels, particularly *Untouchable* and *The Road* are perused, keeping the above background in mind, one wouldn't fail to note two fundamental points raised by Anand in exposing the Hindu obscurantist ideology of casteism in India. One, the philosophy and principle of Karma has been the main cause of over-whelming self-pity among the low castes about their poor lot. They have inherited the spirit of resignation down through their countless ancestors. Also, the same belief has armed the twice born castes with cruelty, aggressiveness and they have, therefore, used it to stifle every voice of protest of low ones emanating from the former's high handedness, branding the latter as wrong-doers. Secondly, with heredity determining occupations, the low castes have no option but must solely depend upon the low jobs, thus being excluded from sharing power in power structure. Eagelton and Pierce say "In this respect Anand comes close to Dickens who..." locates the problem not simply in individuals, who are corrupt or irresponsible or self seeking but in certain structures, ways of thinking, and modes of actions which are themselves anti-human" (Eagleton 41). Again, Anand, like Dickens, who dwells in detail on London slums, unsparingly exposes the outcastes' terrible and shocking living conditions in his *Untouchable*. Dickens's experiences of poverty and suffering were direct as he, at the tender age of ten, had to work at Warrens factory in London.

Voice of Dumb Millions - Anand had seen the Indian underdogs suffer at close quarter in his early years spent in out-castes' lane in the British Cantonment in India. Their sufferings left such impact on his young sensibility that he had determined to work for them all his life. Anand voices his resolvein Morning Face:

"I could sense that though I had grown up to be unconventional and accepted the low caste and out caste people as my equals, our elders still kept the untouchable at a distance for the fear of pollution of their person and spoilation of their status. The anger against the snobbery of the twice-born in despising the good Bakha had already gone deep into my elusive spirit and got buried in my being as a kind of resentment against all those who stop the human flow, erupting at any manifestation of the old Hindu prejudice. At any rate, I vowed in myself, never to accept in my life, and go wherever the slaves were cleaning, washing and scrubbing, to become poor for Bakha's sake to mix with the perfumes with bad smells, melt all my senses into diffused personality"(Anand, *Morning* 132).

In fact, by projecting the social oppression, moral degradation .and economic agonies of the outcastes in his creative writings, Anand has advanced their cause. How close Anand is to the outcastes in artistically rendering their suffering is indicative by the fact his friends of childhood Bakha, the sweeper's son, Ram Charan, the washerman's son and Chota, the leather worker's son, figure in his first novel *Untouchable*. By selecting Bakha as a protagonist of *Untouchable*Anand articulated to the international audience the voice of dumb millions who had never before figured in the world of Indian writing in English.

Stark Realist - As a stark realist like Prem Chand and Dickens, Anand unravels how the low-castes' thousands of years of slavish existence has accounted for ingraining a sense of inferiority in them. The feeling that their birth among outcastes is the result of the sins of past life; a belief enunciated, propagated and forced by the high castes on the low ones has caused so debilitating: sense that they have always meekly resigned to the authority of the caste Hindus, quietly groaning under the heavy weight of' conventions, holding their actions of the previous birth responsible to be born in low castes. Bakha's father Lakha in *Untouchable* and Bhikhu's mother, Laxmi in *The Road* represent the fatalist outlook, common to low caste persons of old generation. Their notion of inherent weakness of outcastes, which is deep-rooted in their being, has emanated from their unquestioned respect to the stringent laws of caste order as well as their belief in the law of Karma. They show so much adherence to caste order that they look upon the caste Hindu as the very embodiment of

*Asst. Professor (English) Govt. Sarojini Naidu Girls P.G. College, Bhopal (M.P.) INDIA

goodness, irrespective of how cruelly they deal with the former. Lakha remains unruffled when Bakha complains against the ill-treatment he received at the hands of the high caste Hindus. Even the unfortunate incident involving Sobini's molestation by the priest Kalinath does not rouse him to anger. The belief in inferiority of outcastes and that of superiority of high castes forms the integral part of his existence. In this respect he is very close to Prem Chand's Hori in *Godan*. As Hori tries to convince his son Gobar of the superiority of the· rich, so does Lakha try to convince Bakha of the highness of the caste Hindus. Hence he does not approve of retaliatory posture of his son against the caste Hindus. Just as the observance of community mores is a sacred act for Hori, so is obedience to caste rules really a matter of pride for him. Lakha proudly; tells Bakha :

"They are masters. We must respect them and do as they tell us"(Anand, *Untouchable* 49).

Dehumanising - Aristotle's famous dictum that 'character is the resultant of' man's habitual actions' is true in Lakha's case. The oppresive caste-system, which has been sanctioned by Hinduism, has so much dehumanised him that submission to its rules has got embedded in his psyche. So much so, that he sees no wrong even in brutal ties committed by the caste Hindus on his own wards. Unable to grasp the forces behind the operation of caste rules, he upholds the sanctity of caste order. He naively persuades his son not to hold the caste Hindus responsible for ill-treatment but to blame their religion:

"We must realise that it is religion which prevents them from touching us".

Anand himself comments on fatalist outlook of Lakha after he tells his son a story of how he himself suffered indignity at the hands of the Hakim [medicine man].

"He had never throughout his narrative renounced his deep-rooted sense of inferiority and the docile acceptance of the laws of fate"(91).

Similarly, Laxmi, mother of Bhikhu in *The Road* shares Lakha's obscurantist belief in sanctity of caste order. Like Lakha, 'who depresses the retaliatory spirit of his son, Laxmi also wishes her son Bhikhu could internalise the caste rules in his person. Believing the caste order to be a divine dispensation, she feels that every member of the low caste is working out the consequences of his misdeeds of the previous birth or births. The religious merit, accruing from obedience to laws of caste, Laxami firmly believes, would liberate the outcastes from such sins. She, like Lakha, persuades her son to give up the attitude of defiance towards the caste Hindus and earn religious merit by abiding by their will. See how naively she, like Lakha, tries to convince her son of the efficacy of caste-system :

"Then through our good deeds shall we rise from our low castes and be born into high caste"(10).

Conclusion - In *The Road*, Suraj Mani, the priest at the temple in Govardhan village, exploits the myth of law of Karma to satisfy his priestly greed. He combines with Thakur Singh, the landlord, in inciting 'the Kshatriya caste against the Dalits over the issue of building the village road. He propagates the orthodox Hindu view-point among the villagers that the Untouchables by handling the stone for constructing have polluted the thorough-fare. Since it is a sinful act, it would result in evil spreading in the world. True to the style of priests who have concocted bizzare myths even about secular institutions, Suraj Mani exploits the myth of Karma even in the nineteen sixties :

"And people suffer enough for the guilts of the past. To be sure, they ought tosuffer before they can rise to a higher caste in the next life or recognise the divine. The temple teaches them Dharma"(Anand, *The Road* 41).

References :-

1. Anand, Mulkraj. *Morning Face.* Bombay: Kutub Popular, 1968.Print.
2. —. *The Road.* Bombay: Kutub Popular, 1961.Print.
3. —. *Untouchable.*Bombay: Orient Paperbacks, 1970.Print.
4. Hiriyana, M. *Outlines of Indian Philosophy.* Delhi: Blekie and Son, 1983.Print.
5. Lal, P. "Myth and Indian Writer in English: A Note". *Aspects of Indian Writings in English.* Ed. M.K. Naik, New Delhi: Macmillan, 1979.5.Print.
6. "Telling of Time Past''.*The Hindustan Times Weekly.* March15,1981. Print.
7. "Voices and views from the margin". *Times of India.* Feb22,2009. Print.

****

निमाड़ के महान सन्त सिंगाजी के उपदेश

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना – निमाड़ के महानतम सन्त सिंगाजी की प्रासंगिकता सदियों उपरान्त भी यथावत् है। इसका मुख्य कारण उनके कालजयी उपदेश हैं। उनका चिंतन अत्यंत विषद् और व्यावहारिक था। उन्होंने जीवन के सभी आयामों पर विचार किया और उसे वाणी देकर जन–जन के प्रेरणास्त्रोत तथा मार्गदर्षक बन गये। उनके द्वारा सृजित भजनों में उनके उपदेशों की अनुभूति की जा सकती हैं इन भजनों की संख्या लगभग ग्यारह सौ है।

सिंगाजी के प्राप्त भजनों का सूक्ष्मता से अध्ययन करने पर सिंगाजी के विभिन्न दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विचार ज्ञात होते हैं।

1. **निर्गुण निराकार का उपदेश –** सिंगाजी निर्गुण निराकार में आस्था रखते थे। वे कबीर की परम्परा के सन्त थे। 'कबीर के राम की तरह ही सिंगाजी के राम भी निर्गुण, निराकार ब्रह्म ही है। सिंगाजी ने उसे अजन्मा, अगोचर, अपरूप ब्रह्म को सम्बोधित करने के लिये एक नाम भर दिया है और वह नाम है– राम। राम के अतिरिक्त निर्गुण, केवल ब्रह्म, साहेब, गोविन्द सोहम् आदि सम्बोधन भी दिये हैं। सिंगाजी के राम दशरथ पुत्र नहीं हैं। वह अखिल ब्रह्माण्ड में व्याप्त सूक्ष्म शक्ति है। वह सर्वोपरि और सर्वशक्तिमान हैं। वह सकल चराचर में स्थित हैं। वह सबमें हैं और सबसे अलग तथा ऊपर भी हैं।'[1]

निरगुण ब्रह्म है न्यारा, कोई समझे समझण हारा।
खोजत–खोजत सिवजी ब्रह्मा थाके, उनने पार नहीं पाया।
खोजत खोजत थाके, वो ऐसा अपरम्पारा।।
सेष सहस मुख रटें निरन्तर, रैन दिवस एक धारा।
ऋषि मुनि और सिद्ध चौरासी, तैंतीस कोटि पचिहारा।।
वेद थके कह कह मुख वाणी, सुरता करो विचारा।
काम क्रोध से निपटा नाही, झूठा सकल पसारा।।
त्रिकुट महल में अनहद बाजे, होत सबद झनकारा।
सुखमन सूरत सुन्न में झूले, सोहम् पुरुष हमारा।
एक बूँद की रचना सारी, जाका सकल पसारा।
सिंगाजी भर नजरों देखया वोही सत्य हमारा।।[2]

2. **आडम्बरों का विरोध –** सिंगाजी ने देव पूजा, तीर्थयात्रा एवं गंगा स्नान आदि को आडंबर माना है और इनका विरोध किया है। उनकी मान्यता है कि पवित्र नदियों में स्नान करने से तन का मैल तो धुल जाता है, किन्तु मन का कलुश नहीं धुलता। तीर्थयात्रा करके भवसागर से पार हो जाने की कल्पना अंधविश्वास मात्र है। इन बाहरी क्रियाओं को करने से समय अवश्य व्यर्थ जाता है, किन्तु कोई अलौकिक उपलब्धि प्राप्त नहीं होती है। यथा:–

झूठा बोलो नहीं सकुचावे। ताको जन्म सुवर को आवे।
पत्थर पूजे वो पत्थर पावे। नीरजीव की संग जन्म गंवावे।।
तीरथ वरत फेरा न कीजे। के लख जीव मरे दोस आपणा सर लीजे।।
भयरू भूत पूजो मत कोई। जीव मारे का लक्षण होई।।
तीरथ वरत जम की जाल। ताते झपे फिर फिर काल।
देव देवी की जनी करो आसा। ताते साधौ रहो निरासा।।
तीरथ गये और गाटा को खावे। बुड़की दई दई जल मुं न्हावे।
चिंता व्यापे तब घर मो आवे। ऊपर धोवे पाप नहीं जावे।
मन को पाप देह को नाही। काहा जाये धोवे जल माही।।
देह को पाप होये तो जल धोये जाये। मन का किया मन फल लै आवे।।
टीका टोला लावो मत कोई। ये सब साधु पाखंड होई।
स्हज प्रीत लगावो। ताते तुम अगाऊ जावो।
सलगराम पूजो मत कोई। अंतकाल पत्थर ते होई।
चौबीस मंत्र से मुक्त है न्यारी। अंतकाल होयगा भारी।[3]

3. **बहुदेववाद का विरोध –** सिंगाजी एकेश्वरवादी थे। उन्होंने बहुदेववाद का विरोध किया है। सिंगाजी की मान्यता थी कि एक ही बूँद की सारी रचना है। एक ही शक्ति से सम्पूर्ण संसार का सृजन हुआ है।

उनके एक भजन का अंश इस प्रकार है–

सुखमन सूरत सुन्न में झूले, सोहम् पुरुष हमारा।
एक बूँद की रचना सारी, जाका सकल पसारा।।[4]

अर्थात् वहाँ शून्य में सुखदायी सूरत झूलती रहती है, वहीं में हूँ और मेरा परम पुरुष (ब्रह्म) है, जिसने एक बूँद से सारे ब्रह्माण्ड की रचना की।

जीव और ब्रह्म दो नहीं एक ही हैं। यह संसार भी अन्त में उसी ब्रह्म में विलय हो जाता है। संसार माया का जाल है। इससे पार पाकर ही ईष्वर की प्राप्ति संभव है। वह ब्रह्म ही प्राणतत्व है। वह ही शक्ति तत्व है। उत्पत्ति, पालन और लय का केन्द्र वही ब्रह्म है। यथा–

दिन दरियाव अमीरस, मीठा, और नीर सब खारा।
एक बूँद का सकल पसारा, छिटक रहयो न्यारा–न्यारा।।[5]

4. **जाति–पाँति का विरोध –** सिंगाजी का जाति–पाँति, ऊँच–नीच आदि के भेदभाव में विश्वास नहीं था। उनका दृष्टिकोण था कि ऊँचे कुल या जाति में जन्म लेने मात्र से कोई ऊँचा नहीं हो जाता, बल्कि मनुष्य कर्म के आधार पर ऊँचा–नीचा माना जाता है। यथा :–

चाल हैं नीच, नीच नहिं जात। सुरता जण तुम सुणो हो बात।।
सिंगा ऊँच जात विप्र कहावे। निच घर मांगणे जावें।।
तरण तरण को गऊ बतावे। सो केउ विष्ठा खावें।।
एक वृक्ष के फल है सारे। कोई खट्टा कोई मीठा।
डाल पत्र कछू नहिं दीसै। और जाय सब दीठा।।[6]

5. **गुरु की महत्ता –** भक्ति परम्परा के अनुसार ही सिंगाजी गुरु के महत्व को स्वीकार किया है और उनके प्रति अपार श्रद्धा व्यक्त की है।

सिंगाजी के अनेक भजनों में गुरु की महिमा का वर्णन आता है, जैसे :–

गुरु बिना मारग कौन बताये।

* सह प्राध्यापक (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

नदिया गहरी जल डूबोये, नीर बहता जाये।
गुरु कृपा से पकड़ बुलावे, वोही पार लगाये।[7]

सद्गुरु की शरण में जाना आवश्यक है क्योंकि वही ब्रह्म तक जाने का मार्ग बताता है। गुरु ज्ञान का मन्त्र देकर ईश्वर तक जाने का मार्ग प्रशस्त करता है, जिससे जीव को पुनर्जन्म नहीं लेना पड़ता है।

6. आत्मा एवं जीव सम्बंधी उपदेश – सिंगाजी ने अपने उपदेशों में कहा कि आत्मा और परमात्मा में कोई अन्तर नहीं है। आत्मा ब्रह्म का अंश है, जो प्रकृति या माया जनित नाम रूप के माध्यम से व्यक्त होता है। उन्होंने आत्मा को प्राण, मन, मनुआ आदि शब्दों से इंगित किया है।

जैसी रचना बाहर है, तैसी भीतर देख।
बाहर भीतर एक है, कहन को अनेक।।[8]

7. माया सम्बंधी उपदेश – सिंगाजी के अनुसार माया ही वह कारण है, जो आत्मा यानी जीव और परमात्मा यानी ब्रह्म के मध्य आवरण का काम करती है। माया के प्रभाव से जीव अहंकार से ग्रस्त होता है और उसमें काम, क्रोध, मोह, लोभ, भय आदि का उदय होता है। सन्त बह्मगीर के भजन की पंक्ति 'माया के फंद में नर आण भुलाणा' ने ही सिंगजी के जीवन की धारा को बदला था। सिंगाजी ने कहा कि माया सकल संसार का फंदा है, जिसके वशीभूत नर अन्धा होकर कंचन–कामिनी के सेवा करता है।

सिंगाजी अपने भजन में लिखते हैं–

ये संसार असार है, भयजो मत भाई।
जयेसा मोती ओस का, पल में घुल जाई।।
झूठी कंचन–कामिनी, झूठी ये माया।
आज की रैन कसी गई, जयेसा अंधियारा।।[9]

सिंगाजी माया को एक ऐसी बाधा बताते हैं, जो मन रूपी मृग को लाख प्रयत्न करने पर भी कठिनाइयों में डाल देती है, यथा–

सींगा मन मृग, माया वाधुर आनेक लकड़ी लाव।
सीर के ऊपर काल आहड़ी, नेहश्चै फंद में आव।।[10]

8. जगत सम्बंधी उपदेश – सिंगाजी के अनुसार जगत नश्वर या क्षण भंगुर है। वे मानते थे कि ईश्वर के स्मरण के बिना यह मिथ्या जगत, जिसकी स्थिति क्षणिक है और भी अधिक दु:खदायी हो जाता है। कच्चे धागे में लटकी तलवार की भाँति काल सदैव सिर पर खड़ा रहता है। वे जगत में रहने वाले मनुष्यों के सम्बंधों को झूठा बताते हुये कहते हैं कि–

कोई कहे बेटा, कोई कहे बेटी, कोई कहे पुरूषा नारी।
संजोग कहो तो सब ही झूठे, गैली दुनिया सारी।।[11]

उनका मत था कि हमें मिला हुआ जीवन पिछले जन्म के अच्छे कर्मों का परिणाम है। इसे ईश्वर भक्ति में लगाना चाहिये और सदैव अच्छे कर्मों में निरत रहना चाहिये।

9. योग सम्बंधी उपदेश – सिंगाजी ने आत्मा को ईश्वर का अंश मानते हुये, इस अंश को ब्रह्म से जोड़ने के लिये हठयोग को माध्यम बताया।

'आत्मा जिस शारीरिक या मानसिक साधन से परमात्मा से जुड़ जाये, वही योग है। माया के प्रभाव से रहित होकर जब आत्मा सत्य का अनुभव कर समाधिस्थ हो, परमात्मा के रूप में निमग्न हो जाती है, उसी समय योग सफल माना जाता है।' हठयोग का सारतत्व तो बलपूर्वक ईश्वर से मिलना है। उसमें शारीरिक और मानसिक परिश्रम की आवश्यकता विशेष रूप से पड़ती है। शरीर को अधिकार में लाने के लिये कुछ आसनों का अभ्यास करना पड़ता है और मन को रोकने के लिये ध्यानादि की आवश्यकता पड़ती है।'[12]

'योग साधना के आठ अंग हैं– यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।'[13]

सिंगाजी अपने एक पद में हठयोग सम्बंधी प्राणायाम और समाधि की अवस्था का उल्लेख निम्नवत् करते हैं–

ओहम् सोहम् दोई मूल है, म्हारो, साँई सामने झूले।
जब लगि झूला नजर नहीं आवे, लख चौरासी डोले।
राम नाम की डोर लगी है, म्हारो सतगुरु सामनड झूले।
पाँच सखी मिल मंगल गावे, मनुआताल बजावे।
कहे जन सिंगा सुनो भाई साधु, अष्ट कमल दल फूले।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सन्त सिंगाजी ने अपने उपदेशों के जरिये अपने अनुयायियों को सद्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। उन्होंने संसार को मायाजाल कहा तथा इससे मुक्त होने के लिए निर्गुण निराकार की भक्ति का संदेश दिया। बिन गुरु ज्ञान नहीं के सिद्धांत में आस्था उनके भजनों में गहराई से दिखाई देती है। आत्मा–परमात्मा जैसे दार्शनिक विषय पर भी उनका चिंतन सुगमता से बोधगम्य है। उन्होंने सामाजिक विसंगतियों को रेखांकित करते हुए जातिप्रथा और पाखंडों का घोर विरोध किया। यह कहना समीचीन होगा कि उनके उपदेश एक बेहतर मानव, बेहतर समाज और बेहतर दुनिया गढ़ने में समर्थ हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. **कहे जन सिंगा**, लेखक– डॉ श्रीराम परिहार, प्रकाशक– मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल, संस्करण– 1996, पृष्ठ– प्रस्तावना–10–11.
2. **भजन**, रचयिता– सन्त सिंगाजी, संकलन एवं अनुवाद–डॉ. श्रीराम परिहार, प्रकाशक– आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल, 1996., पृष्ठ–36.
3. **दृढ़ उपदेस**, रचयिता– सन्त सिंगाजी, संकलन एवं अनुवाद–डॉ. श्रीराम परिहार, प्रकाशक– आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल, 1996., पृष्ठ–104–111.
4. **भजन**, रचयिता– सन्त सिंगाजी, संकलन एवं अनुवाद–डॉ. श्रीराम परिहार, प्रकाशक– आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल, 1996., पृष्ठ–36.
5. **कहे जन सिंगा**, लेखक– डॉ श्रीराम परिहार, प्रकाशक– मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल, संस्करण– 1996, पृष्ठ– प्रस्तावना–12.
6. **वही**, पृष्ठ–136.
7. **आत्म ध्यान**, रचयिता– सन्त सिंगाजी, संकलन एवं अनुवाद–डॉ. श्रीराम परिहार, प्रकाशक– आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल, 1996., पृष्ठ–125.
8. **निमाड़ के सन्त कवि सिंगाजी**, लेखक– रमेशचन्द्र गंगराड़े, प्रकाशक– हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ, संस्करण– 1967, पृष्ठ–140.
9. **निमाड़ी भजन** संकलनकर्ता– कैलाश यादव, प्रकाशक– कैलाश यादव, नागलवाड़ी, संस्करण– 1987. पृष्ठ– 39.
10. **वही**, पृष्ठ–43
11. **कबीर का रहस्यवाद,** लेखक– डॉ. रामकुमार वर्मापृष्ठ– 59–60.
12. **पतंजलि योग दर्शन**, पृष्ठ– 29.
13. **भजन**, रचयिता– सन्त सिंगाजी, संकलन एवं अनुवाद–डॉ. श्रीराम परिहार, प्रकाशक– आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल, 1996., पृष्ठ–39–40.

नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के प्रति अल्पसंख्यक शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन

डॉ. समन्दर सिंह * ब्रजेश कुमारी **

प्रस्तावना – सरस्वती के भंडार की बड़ी अपूरण बात। ज्यों खरचे त्यों ही बढ़े, बिन खरचे घट जाता।

अर्थात् मां सरस्वती के ज्ञान के जो भंडार है, उसकी एक अजीब बात है, उसे जितना खर्च किया जाता है, या दूसरों को दिया जाता है, वह उतना ही बढ़ता है तथा यदि उसे खर्च न किया जाये तो वह घटता है।

इसी प्रकार शिक्षा का धन ऐसा है, इसे जितना खर्च करें यह उतना ही बढ़ता है। अत: शिक्षा सभी के लिए अनिवार्य व आवश्यक है। शिक्षा मानव के विकास का ही नहीं अनितु श्रेष्ठ जीवन का आधार है। शिक्षा आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है।

अ:त शिक्षा की प्रारंभिकता व अनिवार्यता के बारे में अनुच्छेद 45 में कहा गया है कि 6 से 14 वर्ष की आयु के बच्चों को प्रारंभ्कि शिक्षा नि:शुल्क व अनिवार्य प्रदान की जाये।

शिक्षा जगत में पब हम शिक्षा की बात करते हैं तब प्राथमिक शिक्षा की बात पहले आती है।प्राथमिक शिक्षा ही वह आधार है, जिस पर व्यक्ति एवं समाज का विकास आधारित है। पहले बच्चों को शिक्ष प्रप्त करने में उसके भाग्य को ही निर्धारक माना जाता था, किंतु लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था के विकास तथा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मानवाधिकारों की घोषणा के बाद समाज तथा राज्य का यह कर्त्तव्य निर्धारित किया गया कि वे अपने बच्चों की शिक्षा की समुचित व्यवस्था करेंगे। अत: 86 वें संविधान संशाधन अधिनियम 2002 द्वारा बच्चों को प्रारम्भिक शिक्षा का अधिकार प्रदान किया गया। कुछ कारणों के इस व्यवस्था को कानूनी रूप नहीं दिया जा सका।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण पर बल दिया गया। जिसके परिणाम स्वरूप भारतीय संसद द्वारा नि:शुल्क एवं अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा अधिनियम 2009 पारित किया गया तथा भारत सरकार द्वारा 1 अप्रैल 2010 से इस कानून को क्रियान्वित किया गया तथा प्रत्येक माता-पिता या संरक्षक द्वारा 6 से 14 वर्ष के बच्चों को प्रारम्भिक शिक्षा उपलब्ध करवाना राष्ट्रीय कर्त्तव्य घोषित किया गया तथा 11वें मूल कर्त्तव्य के रूप में संविधान में शामिल किया गया।

प्रस्तुत शोध में अल्पसंख्यक शब्द को जोड़ा गया है तथा अल्पसंख्यक अध्यापकों का आर. टी. ई. एक्ट-2009 के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन किया गया है। अल्पसंख्यक से तात्पर्य उस समूह से लिया जाता है, जो धर्म, भाषा और जाति की दृष्टि से बहुसंख्यक समुदाय से भिन्न एवं कम संख्या के हो अर्थात् अल्पसंख्यक वे हैं, जो बहुमत से धर्म एवं भाषा की दृष्टि से कम संख्या में हैं। भारतीय संविधान में 'अल्पसंख्यक' शब्द का विवरण - धारा 29 से लेकर 30 तक और 350ए से लेकर 350बी तक शामिल है। भारतीय संविधान की धारा 30 में विशेष तौर पर अल्पसंख्यकों को दो श्रेणियों - धार्मिक और भाषायी का उल्लेख किया गया है।

समस्या कथन – शोध में जितना महत्वपूर्ण शोध समस्या का चयन है, उतना ही महत्वपूर्ण है समस्या कथन। समस्या कथन के आधार पर ही इस बात का स्पष्ट पता चलता है कि शोधार्थी की वास्तविक शोध समस्या क्या है? सामान्यत: शोध समस्या एक ऐसी समस्या होती है, जिसके द्वारा दो या दो से अधिक चरों के बीच एक प्रश्नात्मक सम्बन्ध की अभिव्यक्ति होती है।

करलिंगर द्वारा शोध समस्या को कुछ इस अर्थ में परिभाषित किया गया है, 'समस्या एक ऐसा प्रश्नात्मक वाक्य या कथन होता है जो प्रश्न करता है - दो या दो से अधिक चरों के बीच कैसा सम्बन्ध है?

शोध समस्या के कथन की कथन की कुछ विशेषताएँ हैं, जो निम्नलिखित है –

1. शोध समस्या के कथन स्पष्ट रूप से एक प्रश्नात्मक रूप में अभिव्यक्ति होते है।
2. शोध समस्या का कथन ऐसा होना चाहिए जिसे आनुभविक विधियों से जाँच किया जाना सम्भव है।

वर्तमान में अनुसंधानकर्ता ने प्रस्तुत समस्या का कथन इस प्रकार परिभाषित किया है– 'नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के प्रति अल्पसंख्यक शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन है।'

समस्या के उद्देश्य – प्रत्येक शोधकर्त्ता जब अपना शोध कार्य आरंभ करता है तो एक लक्ष्य का निर्धारण करता है एवं उपलब्ध संसाधनों, उपकरणों एवं समय का उपयोग कर एक उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है, जिसमें शोधकर्त्ता प्राप्त निष्कर्षो के आधार उस समस्या का वैज्ञानिक समाधान प्राप्त करता है। समय एवं साधनों की उपलब्धता को ध्यान में रखते हुए, प्रस्तुत शोध के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं–

1. अल्पसंख्यक अध्यापको की आर. टी. ई. एक्ट 2009 के प्रति दृष्टिकोण का निम्नलिखित आयामों के अनुरूप अध्ययन करना।
   a. आर. टी. ई. का प्रारम्भिक प्रावधान
   b. सभी के लिए शिक्षा लक्ष्य
   c. सरकार स्थानीय प्राधिकरण एवं जनसहभागिता
   d. विद्यालय तथा शिक्षकों के दायित्व
   e. बच्चों के अधिकार की रक्षा एवं प्रोत्साहन
2. राजकीय विद्यालय अल्पसंख्यक अध्यापक एवं अराजकीय विद्यालय

*सहायक प्राध्यापक, एम. एस. टी. टी. महाविद्यालय, भरतपुर (राज.) भारत
** लेक्चर्र, डी. पी. एम. टी. टी. महाविद्यालय, भरतपुर (राज.) भारत

अध्यापकों में आर. टी. ई. एक्ट 2009 के प्रति दृष्टिकोण की तुलना करना।

शोध की परिकल्पनाऐं – परिकल्पना शब्द का अर्थ एक उपकथन होता है, जो समस्या समाधान की अवधारणा होती है और शोधकर्त्ता उसकी पुष्टि करने का प्रयास करता है इसमें कथन का स्वरूप एक व्याख्या के रूप में होता है।

जेम्स ई. ग्रीटन के अनुसार, 'परिकल्पना संभावित माना हुआ समस्या का हल होता है, जिसकी व्याख्या उस परिस्थिति से निरीक्षण के आधार पर की जा सकती है।'

परिकल्पना के उद्देश्य –

1. शोध के लिए दिशा प्रदान करते हैं और अवांछित साहित्य समीक्षा से बचाते हैं तथा उपयोगी प्रदत्तों के संकलन को संवेदनशील बनाती है।
2. परिकल्पना शोधकर्त्ता को संवेदनशील बनाती है।
3. परिकल्पना से शोध के निष्कर्षों के प्रतिपादन में सहायता मिलती है।

परिकल्पना का महत्व –

1. यह शोध कर्त्ता को निर्देशन देती है।
2. परिकल्पना तथ्यों की सार्थकता को निर्धारित करती है।
3. परिकल्पना समस्या का सीमांकन करती है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन की निम्न परिकल्पना निर्धारित की गई है –

Ho1 कुल न्यादर्श अल्पसंख्यक अध्यापकों का आर. टी. ई. एक्ट 2009 के प्रति कुल दृष्टिकोण व निम्नलिखित आयाम पर प्राप्त मध्यमान औसत से सार्थक अधिक है।

1. आर. टी. ई. का प्रारम्भिक प्रावधान
2. सभी के लिए शिक्षा लक्ष्य
3. सरकार स्थानीय प्राधिकरण व जनसहभागिता
4. विद्यालय तथा शिक्षकों के दायित्व
5. बच्चों के अधिकार की रक्षा एवं प्रोत्साहन

Ho2 राजकीय विद्यालय अल्पसंख्यक अध्यापक एवं अराजकीय विद्यालय अल्पसंख्यक अध्यापकों में आर. टी. ई. एक्ट 2009 एवं इसके आयामों पर कोई सार्थक अंतर नहीं है।

न्यादर्श– प्रत्येक शोध कार्य में न्यादर्श का विशेष महत्व होता है, इसके बिना शोध कार्य को पूरा नहीं किया जा सकता। प्रत्येक शोध प्रबंध में जनसंख्या का निर्धारण अति आवश्यक है, क्योंकि किसी भी शोधकार्य में सभी व्यक्तियों का अध्ययन करना संभव नहीं है।

न्यादर्श, जनसंख्या में चुनी गई कुल इकाईयों का समूह होता है। जनसंख्या के आधार एवं प्रकृति को देखते हुए समस्त जनसंख्या का अध्ययन करना संभव नहीं होता। अत: केवल कम व्यक्तियों को, जो पूरी जनसंख्या का प्रतिनिधित्व कर सके, चयन किया जाता है, जिसे जनसंख्या का न्यादर्श कहते हैं।

डब्ल्यू. जी. कोकरन के अनुसार, 'प्रत्येक विज्ञान की शाखा में हमारे साधन सीमित हैं, इसीलिए सम्पूर्ण तथ्य के एक अंश से अधिक का अध्ययन नहीं कर पाते तथा उसके बारे में ज्ञान प्रस्तुत किया जाता है।'

न्यादर्श का आकार–

कुल अल्पसंख्यक शिक्षक

राजकीय विद्यालय अल्पसंख्यक शिक्षक | अराजकीय विद्यालय अल्पसंख्यक शिक्षक

अध्ययन में प्रयक्त विधि – अनुसंधान प्रक्रिया को परिभाषित करने का एक ढ़ंग होता है, जो समस्याओं की प्रकृति द्वारा निर्धारित होता है। किसी भी अनुसंधान की श्रेष्ठता उसमें प्रयुक्त विधि, उपकरण तथा प्रक्रिया पर निर्भर करती है। यद्यपि शैक्षिक अनुसंधान में विभिन्न विधियों का प्रयोग किया जाता है। परन्तु शोध की प्रकृति मौलिकता व उपयोगिता के आधार पर वर्तमान शोध अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया जाता है। सर्वेक्षण का अर्थ है, आलोचनात्मक निरीक्षण है, जिसका उद्देश्य एक क्षेत्र की किसी एक स्थिति अथवा प्रचलन के संबंध में यथार्थ सूचना प्रदान करना होता है।

लेवस्टर कोष के अनुसार – 'वास्तविक जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से किए गए आलोचनात्मक निरीक्षण को सर्वेक्षण कहते हैं।'

शोध उपकरण – उपकरण वे आधार हैं, जिनके माध्यम से शोध कार्य के लिये आंकड़ों को प्राप्त करने के लिये उपकरणों का चयन करते समय निम्नांकित तथ्यों की ओर ध्यान देना अत्यन्त आवश्यक है–

1. उपकरण द्वारा उद्देश्य पूर्ण करना
2. उपकरण की वैद्यता
3. विभेदीकरण
4. उपकरण की वस्तनिष्ठता
5. व्यापकता

शोध में प्रयुक्त उपकरण– नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के प्रति अल्पसंख्यक शिक्षकों के दृष्टिकोण को मापने के लिए भारतीय शोध संस्थानों में कोई स्तरीय परीक्षण उपलब्ध नहीं है। अत: शोधार्थी ने स्वयं के द्वारा निर्मित अभिवृति मापनी को तैयार किया।

शोध अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकी – वर्तमान में शोध के सभी क्षेत्रों में उपयोग एवं महत्व सर्वविदित है। शिक्षा के क्षेत्र में शोध में भी सांख्यिकी का प्रयोग किया जा रहा है। सांख्यिकी हमें प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण कर यथार्थ निष्कर्ष पर पँहुचाने में सहायता करती है।

इस शोध प्रबंध में आँकड़ों के विश्लेषण में निम्न सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया गया है–

1. मध्यमान
2. प्रमाणिक/मानक विचलन
3. टी–परीक्षण
4. एफ–परीक्षण

शोध अध्ययन में निम्नलिखित परिकल्पना जांची गई है–

परिकल्पना –

1. कुल अल्पसंख्यक शिक्षकों का आर. टी. ई. एक्ट 2009 के प्रति कुल दृष्टिकोण (सभी आयामों) पर कोई सार्थक प्रभाव होता है।प्राप्त आंकडों से ज्ञात होता है कि कुल अल्पसंख्यक शिक्षकों का मध्यमान 28.863 व मानक विचलन 6.344 है। अत: प्राप्त मध्यमान के अंतर का टी–मान स्वतंत्रता के अंश 78 पर प्राप्त हुआ है, जो कि 12.495 है तथा यह 0.05 स्तर पर सार्थक टी–मान है। अत: कुल अल्पसंख्यक शिक्षकों का आर. टी. ई. एक्ट 2009 के प्रति दृष्टिकोण पर कोई सार्थक प्रभाव होता है।

2. राजकीय विद्यालय अल्पसंख्यक एवं अराजकीय विद्यालय अल्पसंख्यक अध्यापकों का आर. टी. ई. एक्ट 2009 के प्रति दृष्टिकोण पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं होता है। प्राप्त आंकड़ों से ज्ञात होता है कि राजकीय विद्यालय के अल्पसंख्यक शिक्षकों का मध्यमान 28.525 व मानक विचलन 2.819 है तथा अराजकीय विद्यालय के अल्पसंख्यक शिक्षकों का मध्यमान

29.200 तथा मानक विचलन 8.504 है। अत: प्राप्त मध्यमानों में से अराजकीय विद्यालय के अल्पसंख्यक शिक्षकों का मध्यमान राजकीय विद्यालय के अल्पसंख्यक शिक्षकों से अधिक है। दोनों मध्यमानों के अंतर का टी–मान स्वतंत्रता के अंश पर 78 पर प्राप्त हुआ है, जो कि 0.474 है तथा यह 0.05 स्तर पह सार्थक टी–मान नहीं है। अत: अराजकीय विद्यालय के अल्पसंख्यक शिक्षकों का आर. टी. ई. एक्ट 2009 के प्रति दृष्टिकोण मापनी पर मध्यमान राजकीय विद्यालय के अल्पसंख्यक शिक्षकों से अधिक सार्थक नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शर्मा, आर. ए. (2004) : शिक्षा अनुसंधान लाल बुक डिपो, मेरठ
2. एन. सी. एफ. (2005) : एन. सी. ई. आर. टी.
3. सिंह, अरूण कुमार (2011) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, प्रकाशक– मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली
4. सिंह, बी.जी.(2011) : भारत में प्रारम्भिक शिक्षा एवं शिक्षा का अधिकार,शारदा पुस्तक भवन,इलाहबाद
5. जैन, अकलंक : नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009–10, अकलंक पब्लिकेशंस, मोरीगेट, दिल्ली
6. गुप्ता, एस. पी. : सांख्यिकी के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भंडार
7. कैलाश चतुर्वेदी : नई शिक्षा, मासिक पत्रिका, नई दिल्ली
8. इंटरनेट : गूगल इनसाइक्लोपीडिया
9. Buch, M.B. (1988-92) : Fifth Survey of Research in education Delhi : NCERT
10. Sharma, R.A. : Technological Foundations of education : Meerut: surya Publication
11. Indian Journal educational Technology, New Delhi (IGNOU)
12. hhttps://en.M.wikipedia.org.com.
13. hhttps://educational123blog.word.

****

चित्रा मुद्गल के उपन्यासों में नारी के विविध रूप

डॉ. श्रद्धा हिरकने * अनिता बंजारे **

शोध सारांश – हिन्दी साहित्य में चित्रा मुद्गल आधुनिक हिन्दी कथा-साहित्य की बहुचर्चित और सम्मानित बहुमुखी संपन्न लेखिका है। चित्रा मुद्गल जी के पास अनुभवों का विपुल भंडार है। इन्होने श्रमिकों के सामाजिक, आर्थिक और मानवीय अधिकारों के लिए संघर्ष करने वाली लेखिका है। जिसमें विशेषकर श्रमिक, महिला, दलितों और वंचित व उपेक्षित बुजुर्ग प्रमुख है।

चित्रा जी का जीवन रोमांचक प्रेमकथा से कम नहीं है। उन्नाव के जमींदार परिवार में जन्मी किसी लड़की के लिए साठ के दशक में अन्तरजातीय प्रेम विवाह करना आसान काम नहीं था। पिता जी के इच्छा के विरूद्ध 'सारिका' के पूर्व संपादक 'अवध नारायण मुद्गल' से प्रेम विवाह किया। इनके कथा-साहित्य में नारी का समाज में निहित समस्याओं का यथार्थ चित्रण मिलता है। नारी के जीवन के हर पहलूओं का मार्मिक चित्रण मिलता है।

प्रस्तावना – चित्रा मुद्गल हिन्दी की वरिष्ठ कथा लेखिका है। इनकी कथा-साहित्यों में मुख्यत: नारी विमर्श के विविध रूपों का चित्रण मिलता है। चित्रा जी ने नारीयों के न्यायिक अधिकारों के लिए कार्य किया है। इनका जन्म 10 दिसम्बर 1944 को चेन्नई तमिलनाडु में हुआ। प्रारंभिक शिक्षा पैतृक ग्राम उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले में स्थित निहाली खेड़ा और उच्च शिक्षा मुंबई विश्वविद्यालय में हुई।

चित्रा मुद्गल कथा लेखन में जहा एक ओर मानवीय संवेदनाओं का चित्रण होता है वहीं दूसरी ओर नए जमाने की रफ्तार में फंसी नारी जीवन की मजबूरियो का चित्रण है। उच्च और निम्न वर्ग की नारी पग-पग में कैसे शोषित होती है। इसका चित्रण चित्रा जी ने अपने उपन्यासों में पूर्णत: किया है। राजनीतिक, ऐतिहासिक सामाजिक, आर्थिक स्तर पर नारी के शोषण को इन्होने अपनी लेखनी द्वारा जीवन्त चित्रण किया है। चित्रा जी कथा साहित्य की एक प्रबल लेखिका है।

चित्रा जी की प्रमुख रचनाएँ उपन्यास 'एक जमीन अपनी', 'आवां', 'गिलिगडु', 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा', बहुचर्चित उपन्यास है इनकी संपूर्ण कहानियाँ आदि-अनादि नाम से तीन खण्डों मे प्रकाशित है। तीन नाटक ग्यारह कहानी संग्रह, दो वैचारिक निबंध संग्रह की पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है। वह प्रसार भारती बोर्ड की सदस्य भी रह चुकी है। दत्ता सामंत जी उनके मार्गदर्शक एवं दार्शनिक थे।

चित्रा जी को 2000 सन् में इंदू शर्मा अन्तर्राष्ट्रीय कथा सम्मान, 2003 में बिरला फाउण्डेशन द्वारा व्यास सम्मान आवां उपन्यास के लिए एवं 2018 में साहित्य अकादमी पुरस्कार पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा उपन्यास के लिए दिया गया। 'एक जमीन अपनी' के लिए फणीश्वरनाथ रेणु साहित्य पुरस्कार एवं सामाजिक सेवाओं में योगदान के लिए विदुला सम्मान, गिलिगडु (2005) के लिए चक्रधर सम्मान एवं गोयनका सम्मान आदि।

चित्रा मुद्गल के उपन्यासों में नारी के विविध रूप देखने को मिलता है।

एक जमीन अपनी – विज्ञापन की दुनिया में जितना हिस्सा पूँजी का है शायद उतनी कम हिस्सेदारी नारी की नहीं है। इस नये सत्ता प्रतिष्ठान में नारी अपनी देह और प्रकृति के माध्यम से बाजार के संदेश को ही उपभोक्ता तक नहीं पहुँचाती बल्कि इस उद्योग में पर्दे के पीछे एक बड़ी 'वर्क फोर्स' भी स्त्रियों से ही बनती है। 'एक जमीन अपनी' विज्ञापन की दुनिया की कहानी भी है जहां समाज की इच्छाओं को पैना करने के औजार तैयार किये जाते है और स्त्री के उस संघर्ष की भी जो वह इस दुनिया में अपनी रचनात्मक क्षमता की पहचान अर्जित करने और सिर्फ देह भर न रहने के लिए करती है। निम्न और मध्यम वर्ग से आई नारी तथा उच्च वर्ग से आई नारी के संस्कारों तथा सोंच में भिन्नता तथा जल्द से जल्द आगे बढ़ने और मान, प्रतिष्ठा प्राप्त करने के संघर्ष को दर्शाती है। जहाँ नीता महत्वाकांक्षी स्त्री है वही अंकिता संस्कारी और मूल्यवान स्त्री है। फिर भी दोनों में घनिष्ठ मित्रता है ये दोनो चरित्र विपरित ध्रुव है। चित्रा जी ने इसमें नारी के छल कपट और विश्वास से भरे स्वरूप का चित्रण किया है।

आवां – यह पूर्णत: स्त्री चेतना और उनके विचार पर आधारित उपन्यास है। बंबई की मजदूर नेता मीरा ताई की बेइज्जती इस उपन्यास की आधार है। ट्रेन यात्रा की संघर्ष में नारी विचार और उसकी आर्थिक स्थिति को प्रकट करती है। इसकी मुख्य पात्र नमिता पाण्डे अपनी आर्थिक स्थिति के हाथों मजबूर संघर्षशील नारी है जो अपना आर्थिक स्तर सुधारने के लिए पूँजीपतियों के जाल में फँसती जाती है तो स्मिता महानगर में अपने परिवार द्वारा शोषित नारी अपने ही पिता की हत्या करती है। एक नारी दूसरी नारी को शोषित होने पर मजबूर करती है। नारी के प्रेम का भी मार्मिक चित्रण है इस उपन्यास में चित्रा जी की यह उपन्यास पूर्णत: नारी विमर्श पर आधारित है नारी प्रेम अत्यंन्त संघर्षो से घिरा है। अपने ही परिवार में भी नारी शोषण की शिकार है। इस उपन्यास में नारी के बहुविध शोषण का जीवन्त चित्रण है।

गिलिगडु – यह उपन्यास पुरूष प्रधान है परन्तु नारी पात्रों का भी अपना विशेष महत्व है। इसमें नारी के लालची मन का चित्रण चित्रा जी ने किया है। आज के वर्तमान समय में कामकाजी स्वरूप एवं परिवार को समय देने में असमर्थ नारी का रूप देखने को मिलता है। एक तरफ नारी परिवार का ध्यान

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

इसलिए रखती है क्योंकि उसे संपत्ति पाने का लालच है। चित्रा जी ने वर्तमान समय का बहुत ही मार्मिक चित्रण किया है।

पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा – इस उपन्यास में एक किन्नर की कहानी को दर्शाया गया है जिसमें उसकी बा (माँ) उसे सामान्य बच्चे की तरह परवरिश करती है। स्कूल भेजती है और किन्नर समाज से उसे छुपाकर रखती है। उसकी माँ यह नहीं चाहती कि वो किन्नर समाज से जुड़े वह अपना अलग अस्तित्व बनाये पर किन्नर समाज जब विनोद को जबरदस्ती अपने समाज में जोड़ लेते है तो वह अपने माँ को पत्र लिखता है उसकी माँ भी उसे पत्र द्वारा उसके जीवन की घटनाओं को जानकार व्यथित होती है उसकी माँ और किन्नर विनोद (बिन्नी) किस दशा से गुजरते है इसका जीवन्त चित्रण देखने को मिलता है एक माँ का अपने बच्चे के प्रति मोह और एक बच्चे का अपनी माँ के प्रति स्नेह का मार्मिक चित्रण है।

चित्रा मुद्गल जी की संपूर्ण रचनाओं में नारी का एक अलग ही रूप देखने को मिलता है जिसमें शोषण, संघर्ष, लालच, प्रेम, महत्वाकांक्षी एवं ममतामयी स्वरूप देखने को मिलता है। इनके रचनाओं में पूर्णत: नारी पात्रों का समाविष्ट होता है। चित्रा जी ने अपनी प्रतिभा और अनुभवों द्वारा नारी जीवन के सभी आयामों को परत-दर-परत खोलती गई है।

उपसंहार – चित्रा जी की कथा-साहित्य में नारी जीवन के हर पहलूओं का चित्रण उनके अनुभवों का विपुल भंडार है। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व ऐतिहासिक क्षेत्रों में नारी की भूमिका, उनका संघर्ष, शोषण एवं प्रेम के प्रति समर्पित रूपों का चित्रण चित्रा जी ने अपने उपन्यासों में किया है। नारीगत समस्याओं का चित्रण अत्यधिक देखने को मिलता है जो आस-पास की घटनाओं से प्रेरित होता है, जो पाठक के मन में एक छाप छोड़ने का कार्य करता है। इनके उपन्यासों में नारी, शिक्षित, आत्मनिर्भर, संघर्षशील, साहसी, महत्वाकांक्षी एवं माँ के रूप में नारी का चित्रण उनके उपन्यासों को एक अलग ही महत्व लिए हुए है। चित्रा मुद्गल के उपन्यासों ने लगभग सभी प्रमुख पात्र शिक्षित तथा आत्मनिर्भर दिखाई देते है, एक जमीन अपनी की अंकिता, नीता, आवां की नमिता, स्मिता, गौतमी नाला सोपारा विनोद, आदि। जन्म से मृत्यु तक नारी संघर्ष रूपी जीवन व्यतीत करती है। नारी संस्कारी है परन्तु आधुनिक सोच लिए हुए है। नारी आज रूढ़िवादी सोच का विरोध करती है और स्वतन्त्र जीवन जीने वाली जो अपने अधिकारों के लिए लड़ना भी जानती है। नारी के विविध रूप चित्रा मुद्गल जी के उपन्यासों में पूर्णत: देखने को मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मुद्गल चित्रा, आवां, सामयिक प्रकाशन 1999
2. मुद्गल चित्रा, एक जमीन अपनी, राजकमल प्रकाशन 2001
3. शर्मा क्षमा,स्त्रीत्ववादी विमश : समाज और साहित्य,राजकमल प्रकाशन 2002
4. खेतान प्रभा, उपनिवेश में स्त्री, राजकमल प्रकाशन 2003
5. कुमार राकेश, नारीवादी विमर्श, आधार प्रकाशन 2004
6. मुद्गल चित्रा, गिलिगडु,सामयिक प्रकाशन 2005
7. चव्हाण अर्जुन, विमर्श के विविध आयाम, वाणी प्रकाशन 2008
8. थोरात डॉ. गोरक्ष, मुद्गल चित्रा के कथा साहित्य का अनुशीलन, अन्नपूर्णा प्रकाशन 2009
9. उपाध्याय करूणाशंकर,आवां विमर्श, सामयिक प्रकाशन 2010
10. के. वजना, चित्रा मुद्गल एक मूल्यांकन, सामाजिक प्रकाशन 2011
11. मुद्गल चित्रा, पोस्ट बॉक्स नंबर 203 नाला सोपारा,सामयिक प्रकाशन 2016

****

धर्मवीर भारती के उपन्यास में चित्रित सामाजिक प्रभाव

डॉ. आँचल श्रीवास्तव* सुनीता तिवारी**

शोध सारांश – धर्मवीर भारती जी एक प्रतिभाशाली कवि, कथाकार, नाटककार, उपन्यासकार है। आपके द्वारा रचित कहानियों और उपन्यासों में उन्होने सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं एवं गंभीर चित्रण को उठाते हुए बड़े ही जीवंत रूप में प्रस्तुत किया है। वे पूर्णत: सामाजिक एक विचारक थे। भारती जी एक समय की प्रख्यात साप्ताहिक पत्रिका धर्म युग के प्रधान संपादक भी थे। डॉ. भारती को 1972 में पद्य श्री से समानित किया गया। उनका उपन्यास 'गुनाहों का देवता' सदा बहार रचना मानी जाती है। 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' को कहानी कहने का अनुपम प्रयोग माना जाता है जिस पर श्याम बेनेगल इसी नाम की फिल्म बनायी। अंधायुग उनका प्रसिद्ध नाटक है।

प्रस्तावना – हिन्दी साहित्य जगत् में भारती जी प्रतिभा के धनी कलाकार है। उन्होने साहित्य की विभिन्न विधाओं में अपनी लेखनी चलाकर एक अलग ही पहचान बना ली। डॉ. भारती का जन्म 25 दिसम्बर 1926 को इलाहाबाद के अतरसुइया मोहल्ले में हुआ। स्कूली शिक्षा डी.ए.वी. हाई स्कूल में हुई और उच्च शिक्षा प्रयाग विश्वविद्यालय में हुई। उन्हे आर्य समाज की चिंतन शैली परिवार से विरासत के रूप में प्राप्त हुई। आपका परिवार आर्य सामाजी था। आलोचकों ने भारती जी को प्रेम और रोमांस का रचनाकार माना है। उनकी कविताओं कहानियों और उपन्यासों में प्रेम और रोमांस स्पष्ट रूप से मौजूद है परन्तु साथ-साथ इतिहास एवं पुराण की समकालीन स्थितियों पर भी उनकी पैनी दृष्टि रही है जिससे उनकी संपूर्ण कृतियों में मध्यम वर्गीय जीवन के यथार्थ चित्रण मिलते है। उनकी दृष्टि में वर्तमान को सुधारने और भविष्य को सुखमय बनाने के लिए आम जनता के दुख दर्द को समझने और उसे दूर करने की आवश्यकता है।

श्री धर्मवीर भारती के व्यक्तित्व के संबंध में श्री रामनारायण उपाध्याय का कथन दृष्टव्य है :- 'सरकारी साहित्यकारों की तरह जिसके चेहरे पर दंभ पहरा नहीं देता बड़े आदमियों की तरह जो अपने आस-पास प्रसिद्धि का लबादा ओढ़े नहीं चलता, छायावादियों की तरह जिसके नाज-नखरों से डरने की कतई जरूरत नहीं है और प्रयोगवादियों की तरह जो जन साधारण के नजदीक जाने से नहीं कतराता, नई पीढ़ी के ऐसे साहित्यकार का नाम है श्री धर्मवीर भारती'

साहित्य के क्षेत्र में – साहित्य में सम्मान और लोकप्रियता के शिखर पर प्रतिष्ठित हिन्दी पत्रकारिता के महत्वपूर्ण स्तम्भ भारती से किये गये साक्षात्कारों का यह विशिष्ट कृति है। धर्मवीर भारती से साक्षात्कार। कह सकते है कि यह पुस्तक भारती जी के जीवन और कर्म का जीवन्त दस्तावेज है। इसमें खट्टी-मीठी यादों की अनुभूतियों और राग-विराग, जीवन संघर्ष तथा समस्याओं से जुड़े अनेक बेलौस प्रश्नों के बेबाक उत्तर भारती जी ने दिये है।

सामाजिक परिस्थितियाँ – समाज और व्यक्ति एक दूसरे के पूरक और सहगामी है तथा उनका सह अस्तित्व अविछिन्न है। भारती ने परतंत्रता के कष्टों को भोगने के बजाए पढ़कर जाना। भारती के सम्पूर्ण लेखन पर और उनकी पकारिता पर सामाजिक बने रहने का आग्रह और सामाजिक सरोकारों से कहने के बजाय उनसे संवाद करते रहने का प्रयास स्पष्ट परिलक्षित होता है।

साहित्यिक परिस्थितियाँ – भारती जी का बचपन जब पीछे छूट रहा तब हिन्दी साहित्य में छायावाद भी अस्ताचल की ओर अग्रसर हो रहा था। सन् 1936 में छायावादी दौर हास की ओर उन्मुख हुआ नयी कविता की शुरूआत 1958 ई. में नरेश मेहता और श्रीकान्त वर्मा के संपादकत्व में कृति के प्रकाशन से हो गयी।

धर्मवीर भारती की कृतियाँ :-

उपन्यास – 'गुनाहों के देवता' (1949), 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' (1952), 'ग्यारह सपनों का देश'

काव्य संग्रह – 'दूसरा सप्तक' (1951), 'ठंडा लोहा' (1952),'सात गीत वर्ष' (1959), 'कनुप्रिया' (1959)

कहानी संग्रह – 'मुर्दो का गाँव' (1946), 'चाँद और टूटे हुए लोग' (1955), 'बंद गली और आखरी मकान' (1969),

काव्य नाटक और एकांकी – 'अंधा युग' (1954), 'नदी प्यासी थी' (54)

भारती जी के उपन्यास में चित्रित सामाजिक प्रभाव :-

गुनाहों का देवता (1949) – हिन्दी के लोकप्रिय उपन्यासों में गुनाहों का देवता का स्थान महत्वपूर्ण है। इस उपन्यास में चन्दर और सुधा की भावुक प्रेम कहानी को बताया गया है जिसमें चन्दर अनाथ है और सुधा से निम्न जाति का है। जिसके वजह से वह उससे विवाह नहीं कर पाता। चंदर एवं सुधा के विचारों में सामाजिक भिन्नता है। इसमें आधुनिक समाज का चित्रण है। जिसमें युवावर्ग अपनी भावनाओं को समाज में रहते हुए आगे बढ़ने को प्रेरित करता है। समाज अभी भी एक पूर्ण संबंध के बजाय विवाह को एक प्रकार का समझौता मानता है। श्री रामनारायण उपाध्याय 'गुनाहों के देवता' के संबंध में लिखते है कि 'मैंने जब उनकी गुनाहों के देवता नामक पुस्तक पढ़ी तो सोचता ही रह गया कि आखिर यह आदमी अपने आप में

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

स्नेह, दर्द और आंसुओं का समुंदर कहां छिपाये हुये है। लेकिन जब मैं उनसे मिला तो मैंने देखा जैसे कोई अपने दरवाजे पर चिक डाल दे, ऐसे वे अपने दर्द पर हंसी का पर्दा डाले हुये थे, जिस पर ठहाकों के बड़े-बड़े फल लदे हुये थे। अपनी झांकने की आदत से लाचार, जब मैने पर्दे के एक छोर को उठाकर अंदर झांका तो यह देखकर स्तब्ध रह गया कि वही भारती आसन जमाये बैठा था जो चन्दर की सुधा की विदाई पर अपने पाठकों को ही नही रूलाता वरन् अपनी चरम व्यथा-निराशा, अंधकार और दर्द के क्षणों में एक चोट खाये हुये बच्चे की तरह तकिये में मुँह छिपाकर रो लेने मे हल्कापन महसूस करता आया है।

सूरज का सातवाँ घोड़ा (1952) – इस उपन्यास में लेखक ने विभिन्न कारणों से एक समाज की कहानी और एक समाज के माध्यम से पूरे मध्यम वर्ग की कहानी कही है। इसमें हम सभी के भीतर घर कर गई वह भीषण सच्चाई है जिसने हमें खोखला नि:सत्व और निराश बना दिया है, एक कोढ़ और दुर्गन्ध की तरह हमें मानसिक जड़ता से भर दिया है। छ: घोड़े तो इस दुर्गन्ध और जड़ता में ही जकड़े हुए है। भविष्य के घोड़े के प्रति आस्थावान रहने के सिवा पाठक के पास कोई चारा नहीं है और इस स्थिति में लेखक रूपी बाजीगर दर्शकों को खूब उल्लू बनाकर तालियां बजवाता है। ऐसे ही इसमें मध्यम वर्गीय समाज का चित्रण है। इनकी सातों कहानियों में प्रेम परक समाज का मार्मिक चित्रण मिलता है। इस उपन्यास में सात कहानियाँ है।

पहली कहानी – 'नमक की अदायगी' – अर्थात् जमुना का नमक माणिक ने अदा किया इसमें भारती का व्यक्तित्व पर भी प्रकाश डाला गया तथा इसमें बीस वर्षीय जमुना का पन्द्रह वर्ष के माणिक ने अदा किया।

दूसरी कहानी – 'घोड़े का नाल' अर्थात् किस प्रकार घोड़े का नाल सौभाग्य का लक्षण है।

तीसरी कहानी – इसका कोई शीर्षक नहीं है। इसमें तन्ना के सुखद विवाह की कल्पनाएँ की गयी है।

चौथी कहानी – 'मालवा की युवरानी देवसेना की कहानी' इसमें माणिक और लीला के इन्द्रधनुषी रूमानी प्रेम तथा तन्ना के विवाह के कारण का वर्णन है।

पांचवी कहानी – 'काले बैंत का चाकू' नामक कहानी सुनायी इसमें सती के साथ माणिक की घनिष्ठता बतायी गयी है।

छठी कहानी – छठी कहानी में यही कहानी आगे बढ़ती है।

सातवी कहानी – इस कहानी का शीर्षक सूरज का सातवाँ घोड़ा है जो सपने भेजता है माणिक ने सात घोड़ों का तात्पर्य स्पष्ट किया है जो भविष्य के सपने दिखाता है। **नित्यानंद तिवारी** का मानना है कि 'हर उपन्यासकार अपनी दृष्टि से जीवन की समस्याओं को चीरकर उनके भीतर से इन तत्वों का संगठन करता है। ये तत्व यांत्रिक फार्मूले नहीं, इनकी भूमिका नहीं, निर्देशक है।' सूरज का सातवां घोड़ा में इन तत्वों की उपस्थिति एक संतुलित अनुपात में आता है लेकिन निजता पूरे कथा-विन्यास में अधिक सक्रिय रहती है।

'सूरज के सातवां घोड़ा' के संबंध में स्वयं श्री धर्मवीर भारती के विचार उक्त पुस्तक सार ही है – 'जो लोग भावुक होते है और सिर्फ रोते है, वे रो-धोकर रह जाते हैं, पर जो लोग हँसना सीख लेते है, वे कभी-कभी हंसते-हंसते उस जिन्दगी को बदल भी डालते है। जब पूरी व्यवस्था में बेइमानी हो तो एक व्यक्ति की ईमानदारी इसी में है कि वह उस व्यवस्था में लादी गई सारी विकृति को भी अस्वीकार करें और उसके द्वारा आरोपित सारी झूठी मर्यादाओं को भी, क्योंकि दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू है।

लेकिन जो इस विकृति से अपने को अल रखकर भी इस तमाम व्यवस्था के खिलाफ नहीं लड़ते उनकी मर्यादाशीलता सिर्फ परिष्कृत कायरता होती है।

कोई न कोई ऐसी चीज है जिसमें हमें हमेंशा अन्धेरा चीरकर आगे बढ़ने, समाज व्यवस्था को बदलने और मानवता के सहज मूल्यों को पुन: स्थापित करने की ताकत और प्रेरणा दी है। चाहे उसे आत्मा कहले चाहे कुछ और। और विश्वास साहस, सत्य के प्रति अडिग निष्ठा उस प्रकाशवाही आत्मा को उसी तरह आगे ले चलते हैं, जैसे सात घोड़े सूर्य को आगे बढ़ाते है।'

ग्यारह सपनों का देश – यह उपन्यास हिन्दी साहित्य का पहला सहयोगी उपन्यास है जो दस लेखकों के द्वारा लिखा गया है। इसे उपन्यास बनाने का पूर्णत: प्रयास किया गया परन्तु यह उपन्यास जैसा नहीं लगता है। इसमें सभी लेखकों द्वारा सामाजिक सपनों को दर्शाया गया है इन ग्यारह सपनों में भारती का सपना नि:संदेह कोमल है।

भारती जी के सभी उपन्यासों में सामाजिक स्वरूप पूर्णत: आया है वे हिन्दी साहित्य के मौलिक उपन्यासकार है समाज में रहते हुए सामाजिक वातावरण को अपने उपन्यासों में आये पात्रों के द्वारा उनकी वर्तमान सामाजिक दशाओं का पूर्णत: चित्रण किया गया है।

उपसंहार – भारती जी उपन्यासकार के साथ-साथ नाटककार एवं समाजिक विचारक है इन्होने अपनी लेखनी द्वारा अपने तीनों उपन्यास में समाज में फैले सामाजिक पहलुओं का जगह-जगह चित्रण किया है। जिसमें समाज की समस्याओं आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं परम्पराओं को हल करने का प्रयास किया है और समाज के प्रत्येक व्यक्तियों को यह उपन्यास सूचना देता है कि वे प्रत्येक परिस्थितियों से समझौता कर ले ताकि जीवन अच्छी तरह चले। भविष्य के सपने एवं वर्तमान के नवीन आंकलन को निरूपित करता है और दुख, दर्द, गरीबी, अनैतिक संबंध को दूर करने के लिए सक्षम हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. साहित्य और समाजशास्त्र – डॉ. नगेन्द्र पृ. 6
2. युगकवि स्वरूप – राम मनोहर, पृ. 51
3. हिन्दी उपन्यास की रूप रेखा – डॉ. गणेशन, पृ. 87
4. मध्य वर्गीय वस्तुत्व का विकास – बच्चन सिंह, पृ. 13-38
5. हिन्दी लघु उपन्यास – पृ. 195
6. जिनकी छाया भी सुखकर है – रामनारायण उपाध्याय

****

प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी एक विमर्श

डॉ. श्रद्धा हिरकने * रजनी पाण्डेय **

प्रस्तावना – आधुनिक हिन्दी साहित्य में महिला साहित्यकारों का योगदान प्रशंसनीय रहा है। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हिन्दी महिला साहित्यकारों की सूची में मैत्रेयी पुष्पा, कृष्णा सोवती, मन्नू भण्डारी, उषा प्रियंवदा, मालती जोशी, मंजुल भगत, चित्रा मुदगल, मृदुला गर्ग, ममता कालिया, सूर्यबाला इत्यादि के साथ जुड़ने वाला एक अहम् नाम है डॉ. प्रभा खेतान जी का है। डॉ. प्रभा खेतान का नाम हिन्दी साहित्य प्रेमियों के लिए चिर-परचित है। उच्चकोटि के स्त्रीवादी विमर्शकारों में प्रभा खेतान का नाम सबसे पहले आता है। हिन्दी उपन्यास साहित्य में अत्यंत गौरव पूर्ण स्थान पाने वाली प्रभा जी ने उपने साहित्य के माध्यम से विशेष रूप में स्त्री संवेदना के स्वर को मुखरित किया है।

नारी मुक्ति आंदोलन एवं स्त्री चिंतन की प्रसिद्ध लेखिका डॉ. प्रभा खेतान का जन्म 1 नवम्ब सन् 1942 ई. में दक्षिण कोलकत्ता के सबसे धनाढ्य प्रसिद्ध मारवाड़ी परिवार में हुआ था। प्रभा जी का बचपन संघर्ष से भरा हुआ मिलता है। उनके जन्म के बाद उनकी माँ बीमार रहने लगी, बचपन में अम्मा, भाई-बहनों का जो प्रेम प्रभा जी को मिलना चाहिए था, वह नहीं मिल सका।

सदियों से उपेक्षित वंचित नारी उसी रूप में समाज में स्थापित होती रही है, उसके जिस रूप को पुरूष ने चाहा या निर्धारित किया। अपनी निजी समस्याओं उपेक्षाओं को सीने में दबाए वह मौन रही, पर जैसे ही नारी ने अपनी चुप्पी को तोड़ा तो साहित्य एवं समाज दोनों करवटें लेने लगे। साहित्य जगत में नारी अपने भोगे हुए सच को लेकर उपस्थित होती है जिससे यह विश्व पूरी तरह से अनजान था। समय के साथ-साथ नारी चेतना एवं लेखन के तेवर बदले तथा युगान्द रूप एवं नये मूल्यों के साथ नारी की कलम चलती रही। स्त्री लेखन सुदूर परंपरा रही, स्त्री लेखन की सुदूर परंपरा प्रभा खेतान तक आते-आते लम्बी यात्रा तय कर चुकी थी।

प्रभा खेतान का लेखन स्त्री को घर परिवार की समस्याओं से बाहर निकालकर स्त्री की स्वतन्त्र अस्तित्व की खोज की ओर अग्रसर हुआ है। प्रभा खेतान का रचना संसार उनके अनुभवों का ही आइना है। कही कोई काल्पनिक आवरण उनके साहित्य में दिखाई नहीं देता, आधुनिक महिला कथाकारों में प्रभा खेतान अपना विशिष्ट स्थान रखती है या कहे स्त्री विमर्श तथा स्त्री मुक्ति के पर्याय के रूप में उन्हें जाना जा सकता है। इनका साहित्य विश्व जगत की नारी दुरावस्था तथा उससे बाहर निकलने के प्रयासों से जुड़ा हुआ है।

प्रभा जी ने एक ओर व्यवसाय जगत की बुलंदी को छुआ तो दूसरी ही ओर साहित्य जगत में खुब ख्याति अर्जित की। काव्य में अपने जीवन अनुभवों को अभिव्यक्त न कर पाने के कारण उन्होंने उपन्यास विधा का सहारा लिया। इस श्रृंखला में लगभग आठ उपन्यास आते हैं। जिनमें आओ पेपे, घर चलें, तालाबंदी, अग्निसंभवा, छिन्नमस्ता, अपने-अपने चेहरे, एड्स, पीली आँधी, स्त्री पक्ष के साथ-साथ उनकी बहुचर्चित आत्मकथा अन्या से अन्नया को शामिल किया जा सकता है।

प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी के विविध रूप देखने को मिलते है-

आओ पेपे, घर चले – वस्तुत: प्रभा खेतान का साहित्य उनकी ईमानदारी का निजी दस्तावेज कहा जा सकता है जो बेहद वेवाज, वर्जनाहीन और उत्तेजक है। आओ पेपे, घर चले अमेरी की पृष्ठभूमि पर लिखी उनकी सशक्त रचना है इसके माध्यम से लेखिका के सृजनात्मक एवं मानसिक सौन्दर्य का परिचय होता है। इस उपन्यास में कई समस्याओं को उजागर किया गया है। जैसे वैश्विक स्तर पर तूफानी जीवन संघर्ष, संबंधों का व्यावसायीकरण, भोगवादी मानसिकता, नस्लवादी, पारिवारिक विघटन, उच्चवर्गीय जीवन के अंर्तविरोध, भोगविलास के पीछे अंधी दौड़, पति-पत्नी की टकराहट में टूटते पिसते बच्चे आदि समस्याओं का चित्रण किया गया है।

अग्नि संभवा – यह उपन्यास प्रभा खेतान का हंस पत्रिका में मार्च सन् 1992 ई. से मई सन् 1992 ई. तक श्रृंखलाबद्ध रूप में प्रकाशित है। इसमें प्रभा जी ने आइवी, प्रभा, शिव आदि प्रभावी पात्रों को लेकर उपन्यास के कथानक को उभारना चाहा है। प्रभा जी वैसे भी इस उपन्यास को न छपवाना अपने आप में बहुत बड़ी बेवकूफी मानती है। इसके कथानक में प्रभा जी मुख्यत: दो विषयों पर प्रकाश डालना चाहती है- एक तो चीन की राजनीतिक उठापटक और दूसरा चीन के मामूली किसान की बेटी उपन्यास की नायिका आइवी के संघर्षमय जीवन से उभरकर हाँगकाँग के ब्राँच मैनेजर के पद पर नियुक्त होना।

छिन्नमस्ता – 'छिन्नमस्ता' यानि की कटा हुआ सिर। सन् 1993 ई. में प्रभा जी का यह उपन्यास प्रकाशित हुआ जो बहुचर्चित उपन्यास माना जाता है। इस उपन्यास में प्रभा जी ने प्रिया, नीना, जुड़ी, कस्तूरी देवी, दाई माँ, सरोज आदि नारी पात्रों को लेकर इस कथानक को आकार दिया है प्रभा जी ने इसमें अपनी स्वयं की कथा को विषय बनाया है जन्म से लेकर शादी तक की कथा प्रभा जी के अपने बचपन में भोगी हुई कथा है।

'छिन्नमस्ता' जिसे प्रारंभ में उनकी आत्मकथा समझ लिया गया लेकिन यह पूरी कहानी उनकी आत्मकथा नहीं है। प्रभा जी का यह उपन्यास मारवाड़ी परिवार की बहू प्रिया की यातना, विद्रोह और अस्तित्व बोध को अभिव्यक्त करने वाला है।

निष्कर्ष– निष्कर्ष रूप में देखा जाये तो लेखिका की रचना संसार बहुआयामी रहा है। उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व में उनके व्यक्तित्व के अनेकानेक प्रसंगों

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

का यथांकन हुआ है। एक सम्पन्न मारवाड़ी परिवार में जन्म लेकर साज की परम्पराओं को चुनौती देती हुई प्रभा जी ने स्वतन्त्र चमड़े का व्यवसाय प्रारंभ किया। प्रभा जी स्त्रीवादी अवधारणाओं की व्याख्याकार होने के साथ-साथ स्त्री संवेदनशीलता की प्रख्यात कथाकार थी। आज प्रभा जी हमारे बीच नहीं है पर उनका रचना संसार सदा के लिए हिन्दी प्रेमियों को प्रोत्साहित करता रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. खेतान डॉ. प्रभा, आओ पेपे, घर चले, राजकमल प्रकाशन, 1991
2. खेतान डॉ. प्रभा, अग्निसंभवा, हंस पत्रिका, 1992
3. खेतान डॉ. प्रभा, छिन्नमस्ता, राजकमल प्रकाशन, 1993
4. सेतिया सुभाष, स्त्री अस्मिता के प्रश्न, सामयिक प्रकाशन, 2009

****

कृष्णा सोबती के उपन्यासो में भाषा एवं संवाद विधान

डॉ. श्रद्धा हिरकने * दीपिका भंडारी **

शोध सारांश – हिन्दी कथा साहित्य में जिन कुछ लेखिकाओं के अपने साहस का परिचय दिया है उनमें से एक नाम कृष्णा सोबती है। हिन्दी साहित्य के समकालीन परिदृश्य पर कृष्णा सोबती एक विशिष्ट रचनाकार के रूप में समादृत है। स्वतंत्रता के बाद के कथा साहित्य की कृष्णा सोबती का लेखकीय व्यक्तित्व जिस परिवेश में विकसित हुआ वह परिवेश बंदिश से अधिक खुलेपन का सरोकार था। यही कारण है कि उनका रचनात्मक विकास वस्तु के स्तर पर ही नहीं भाषा और शिल्प के स्तर पर होता रहा है। कृष्णा सोबती ने हिन्दी की कथा भाषा को एक विलक्षण ताजगी दी है।

कृष्णा सोबती का जन्म 18 फरवरी 1925 को गुजरात में हुआ। सोबती जी अपने साहसपूर्ण रचनात्मक अभिव्यक्ति के लिए जानी जाती है। उनके रचनाकर्म में निर्भिकता खुलापन और भाषागत प्रयोगशीलता स्पष्ट परिलक्षित होती है। 1950 में कहानी लामा से साहित्यिक सफर शुरू करने वाली सोबती स्त्री की आजादी और न्याय की पक्षधर है। उन्होंने समय और समाज को केन्द्र में रखकर अपनी रचनाओं में एक युग को जिया है।

प्रस्तावना – कृष्णा सोबती जी का बचपन शिमला और दिल्ली में बीता। उनकी स्कूली शिक्षा दिल्ली व शिमला में हुई। भारत पाकिस्तान विभाजन के कारण उनकी शिक्षा अधूरी रह गई। उन्होंने सिर्फ बी.ए. (दर्शनशास्त्र) तक पढ़ने का अवसर मिला। पंजाबी परिवेश में रहने के कारण उनके व्यक्तित्व में पंजाब की संस्कृति एवं परिवेश की महक मिलती है। विविधता के दर्शन उनके सामाजिक व्यक्तित्व में है और साहित्य में भी। रचना के गठन में रचनाकार का अपना चिंतन होता है। उनकी राय में 'रचना न बाहर की प्रेरणा से उपजती है न केवल रचनाकार के मानसिक दबाव और तनाव से।' अपने लेखन के संबंध में वे स्वयं कहती है– 'मैं अपने समूचे होने में रचकर, पैठकर जीने की तरह लिखती हूं उसी वक्त लिखती हूं जब लिख डालने के सिवा कोई चारा न रह जाय'।

कृष्णा सोबती जी की रचनात्मक उपलब्धियों को परखने के लिए आपकी औपन्यासिक कृतियो की चर्चा अपेक्षित है। कृष्णा सोबती सामाजिक आधुनिक तथा मनोवैज्ञानिक कथाकार है। उनके कम से कम शब्दो में ज्यादा प्रकट करना उनकी विशेषता है। कृष्णा सोबती का महत्व सिर्फ इस बात से नहीं है कि उन्होने अपने साहित्य में अपने समकालीन संदर्भो को जगह दी है बल्कि उससे अधिक इस बात में कि जिस शिल्प और संवेदना के माध्यम से मानवीय संबंधो और संवेदनाओ का चित्रण किया। वह उन्हे अन्य लेखको से अलग पहचान दिलाता है। वे हिन्दी की सबसे सहज, सबसे गंभीर, सबसे आत्मीय, सबसे यथार्थनिष्ठ, सबसे विचारवती और सबसे प्रतिबद्ध महिला कथाकार है। एक नारी होने के नाते उन्होंने नारी मन के अंतरंग को पूर्ण ईमानदारी और सच्चाई के साथ अपनी रचनाओं में अंकित करने का साहस दिखाया है।

कृष्णा सोबती ने हिन्दी की कथा भाषा को एक विलक्षण ताजगी दी है। उनके रचना संसार की गहरी, सघन, एन्द्रियता, तराश और लेखकीय अस्मिता ने एक बड़े पाठक वर्ग को अपनी ओर आकृष्ट किया है। निश्चय ही कृष्णा सोबती ने हिन्दी के आधुनिक लेखन के प्रति पाठको में नया भरोसा पैदा किया है। अपने समकालीनो और आगे की पीढ़ियो को मानवीय स्वातंत्र्य और नैतिक उन्मुक्तता के लिए प्रभावित और प्रेरित किया है। निज के प्रति सचेत और समाजके प्रति चैतन्य किया है।

साहित्य के क्षेत्र में – श्रीमति कृष्णा सोबती की प्रतिभा बहुआयामी है। यो तो लेखनारंभ कविता से हुआ बाद में कथा में लेखन में अपने पदार्पण किया। कहानी, उपन्यास, संस्मरण, निबंध और साक्षात्कार आदि साहित्यिक विधाओं में आपने बहुचर्चित सृजनात्मक कार्य किया है।

सुविख्यात हिन्दी कथाकार सोबती जी की रचनाओ में एक खासी पंजाबी लहजा और तेवर के साथ साथ एक खुलापन है। यथार्थ को लेकर चलने वाले स्वाभाविक जीवन चित्रण को आपने विशेष महत्व दिया है। नारी जीवन के अंतरंग को पहचानने और उसका चित्रण करने में सोबती जी सिद्धहस्त है। शैली की सरलता एवं अद्‌भूत आकर्षण शक्ति आपके शिल्प की खास विशेषता है।

कृष्णा सोबती जी अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद अध्ययन कार्य में संलग्न हो गई और साथ ही लिखती भी रही। अब लंबे अरसे से स्वतंत्र लेखन में व्यस्त है। कृष्णा जी कम लिखने को अपना साहित्यिक परिचय मानती है और यही उनकी विशिष्टता भी है। उनके व्यक्तिव और रचना–धर्मिता के मूल तत्व है– लेखन के प्रति संपूर्ण निष्ठा, आत्मीयता और भावुकता कलात्मक सुधासन, बारीकी और कारीगरी, सत्य की निरंतर तलाश आदि। आपकी यात्रा कथा से गुजरते हुए ऐसा लगता है कि रचनाएं अलग अलग नहीं एक ही रचना के विभिन्न अध्याय है।

भाष शिल्प– महिला उपन्यासकारो की शैली में नवीनता और विविधता के तेवर के साथ बिंब, प्रतीक, जटिल भावबोध आदि के प्रचुर प्रयोग से उपन्यासो की कलात्मकता में वृद्धि हुई है। कृष्णा सोबती की भाषा अपने देशकाल और वातावरण से पूरी तरह संबद्ध है। इनकी भाषा ताप और त्वरा से परिपूर्ण

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

है। कश्य की अंतरंगता को उजागर करने वाले सार्थक शब्द प्रयोग है। रचना के विषय में चरित्र और वातावरण के अनुकुल भाषा पर उनका हाथ बिलकुल दक्ष है।' मित्रो मरजानी, यारो के यार, तिन पहाड़, सुरजमुखी अंधेरे के, डार से बिछुड़ी जैसे लघु उपन्यासो ने भाव का शिल्प दोनो दृष्टियों से जैनेन्ह की उपन्यास परंपरा को समृद्ध किया है। कृष्णा सोबती की भाषा शैली अपनी समकालीन लेखिकाओ से भिन्न और अभिव्यक्ति में सक्षम है। सोबती जी भाषा शैली में बेलाग, बेलौस, खरास मौजूद है। कृष्णा सोबती जी भाषा का अपना अनूठा अंदाज है। इनकी भाषा शैली में अत्यधिक विविधता व्याप्त है। कृष्णा सोबती अपनी विशिष्ट भाषा शैली को लेकर काफी चर्चित रही है।

कृष्णा सोबती की प्रमुख कृतियाँ–

उपन्यास :–

डार से बिछुड़ी (1958)
मित्रो मरजानी (1967)
यारो के यार (1968)
तिन पहाड़ (1968)
सूरजमुखी अंधेरे के (1972)
जिन्दगीनामा (1979)
ए लड़की (1991)
दिलो दानिश (1993)

कहानी संग्रह :–

बादलो के घेरे (1980)

संस्मरण :–

हम हशमत (1997)
हम हशमत–2 (1999)

निष्कर्ष– उपन्यास की सफलता में भाषा शैली का विशेष योगदान रहता है। अत: एक रचनाकार इस विषय में सदैव सजग रहता है। कृष्णा सोबती भाषा की जादूगर है और उनका हर एक उपन्यास भाषायी स्तर पर एक दूसरे से भिन्न है। 'डार से बिछुड़ी' में सरलता व्याप्त है। यारों के यार की भाषा अपने खुरदरेपन और व्यंग्यात्मकता को लेकर चर्चित रही है। वहीं 'तिन पहाड़' की भाषा कृष्णा सोबती की अन्य कृतियों से नितांत भिन्न है। इनकी भाषा रोमानी और संयत है। 'मित्रो मरजानी' की भाषा नोक झोक और दार प्रांतिय बोली की विशेषता लिए है। जिंदगीनामा में हंसी ठिठोली की मधुर अभिव्यक्ति के साथ साथ करूणा के आवेग को व्यक्त करने वाले शब्द भी है। सारे उद्गार जैसे हृदय से निकले मालूम पड़ते है। कृष्णा सोबती की गहन विचाराभिव्यक्ति ने कहीं कहीं भाषा को बोझिल भी बना दिया है।

कृष्णा सोबती के अभिव्यक्ति पक्ष में नवीन प्रभाव दृष्टिगोचर हुआ है। उपन्यास पढ़ने पर न केवल विचारों की गंभीरता प्रकट होती है वरन् पात्रो के मन में उमड़ते विचार सचित्र एलबम सा प्रस्तुत करते चले जाते है। अंत में कहा जा सकता है कि कृष्णा सोबती ने भावानुरूप तथा विचारनुकुल शैलियों के प्रयोग से कथानक में उद्देश्य प्राप्ति को सुगम बना दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सोबती कृष्णा, डार से बिछुड़ी, राजकमल प्रकाशन (2005)
2. सोबती कृष्णा, मित्रो मरजानी, राजकमल प्रकाशन (1992)
3. सोबती कृष्णा, तीन पहाड़, राजकमल प्रकाशन (2004)
4. जैन निर्मला, तीन हमसफर, राजकमल प्रकाशन
5. सोबती कृष्णा, हम हरामत (संस्मरण), राजकमल प्रकाशन (1999)
6. कुमार राकेश, नारीवादी विमर्श, आधार प्रकाशन (2004)
7. शर्मा क्षमा, स्त्रीत्ववादी विमर्श : समाज और साहित्य, राजकमल प्रकाशन (1992)

****

अमृता प्रीतम के उपन्यास पिंजर में नारी चित्रण एक अध्ययन

डॉ. आँचल श्रीवास्तव* सीता कुमारी**

शोध सारांश – भारतीय साहित्य में अमृता प्रीतम का नाम बडे आदर से लिया जाता है। अमृता जी एक ऐसी लेखिका है जिनकी कृतियों का अनुवाद विश्व की 36 भाषाओं में हुआ है, साथ ही अनेक भारतीय भाषाओं में भी अनुवाद किया गया है।

अमृता प्रीतम का जन्म 31 अगस्त 1919 में हुआ था उनकी माता का नाम 'राजबीबी' तथा पिता का नाम 'नंदसाधु' था, बचपन में माता का मृत्यु और पिता का संसार से विरक्त हो जाने से उनका विश्वास भगवान से ही उठ गया। उनका पालन पोषण नानी ने किया कम उम्र में शादी हुई बच्चे न होने से समाज के अनेक दशं झेले। एक बच्ची को गोद भी लिया, बाद में एक बच्चे को जन्म दिया जीवन यापन के लिए नौकरी की उस पर भी समाज को ऐतराज हुई। हर इच्छा को मारकर जीती रही परंतु लिखना नही छोड़ा, समाज की कड़वी सच्चाई सबके सामने खोलकर रख दी। जिससे उन्हे बहुत कुछ सहना पड़ा परंतु पिछे मुड़कर नही देखा, उनको लेखनी में अनेक पुरूस्कार भी प्राप्त हुए। भारत की दुसरी सबसे बड़ी सम्मान पद्यविभूषण से भी नवाजा गया और विदेशी पुरूस्कार भी मिला।

प्रस्तावना – साहित्य मानव जगत की भवनाओं की पूर्ण अभिव्यक्ति को पाठको से आत्मसात करवाता है। साहित्य शब्द में सहत्व अथवा सहचरत्व की भावना निहीत है जो साथ ले चले वही साहित्य है। अमृता प्रीतम का जन्म ऐसी युग में हुआ जब देश गुलामी की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था और इन बेड़ियों को काट फेकने की क्रांति देश के हर भाग में जागृत हो चुकी थी। उन्होंने अपने दौर में सबसे स्याह घटना का बयान अपने उपन्यास 'पिंजर' में किया है पिंजर उपन्यास को पढ़ने के बाद यह महसूस हुआ कि अमृता प्रीतम के साहित्य में मानव जीवन की अनुभूतियॉ, संवेदना, दर्द, दु:ख की दास्तान तो है ही साथ ही अपने समय से बहुत आगे की सोच है 'पिंजर' की नायिका 'पुरों' एक ऐसी स्त्री है जो अपनी मुक्ति किसी और में देखती है। मेरे शाध की प्रेरणा भूमि मूल्यत: अमृता प्रीतम के 'पिंजर' उपन्यास के अध्ययन की ओर गई और मेरा विषय अमृता प्रीतम के उपन्यास 'पिंजर' में नारी चरित्र एक अध्ययन'।

मानव इतिहास का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि आदिम मानव से लेकर आज तक के आधुनिक सभ्य समाज के निर्माण की प्रक्रिया में संघर्ष ही विकास की कुंजी रही है। जीवन का दुसरा नाम ही संघर्ष है। बिना संघर्ष के विकास के गुंजाइश ही नही है, हर नयी पीढ़ी प्रचलित मान्यताओं, विश्वासों, परिस्थितयों, जिन्दगी के उबड़–खाबड़ राह, भय, विषाद, आतंक, प्राकृतिक आपदा, समाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक समस्याओं आदि से संघर्ष करती हुई आज विकास के शिखर पर खड़ी है। जिसे स्पष्ट तौर पर 'पिंजर' उपन्यास में भी देखा जा सकता है।

'पिंजर' उपन्यास में नारी चित्रण को प्रस्तुत करते समय अमृता प्रीतम जी ने बहुत ही दयनीय स्थिति को दिखाया है। उन्होंने नारी की स्थिति, पीड़ा, विडम्बना और विसंगतियों को मुखर किया है। भारतीय नारी का चित्रण सृष्टि के उषा काल से अब तक परिस्थितियों के अनुकूल होता रहा है। कभी उसे देवी कहकर पूजा गया कभी माया कहकर उसके अस्तित्व को ही नकारा गया है। आधुनिक काल में अनेक आंदोलनों के साथ–साथ नारी मुक्ति आंदोलन को भी चलाया गया और परिणाम आपके सामने है।

अमृता प्रीतम जी ने नारी को न्याय दिलाने की पूर जोर कोशिश की और सफल भी रही। विशिष्ट प्रतिभा की धनी अमृता प्रीतम जी को अपने समाज और समाज की प्रत्येक समस्या की सच्ची परख थी इसलिए तो उन्होंने अपने समाज को जिस यथार्थ रूप में देखा, उसी का चित्रण अपने उपन्यास में किया।

'पिंजर' उपन्यास की कथा वस्तु स्त्री की पीड़ा, वेदना, संताप, त्याग और ममत्व का उदाहरण है प्रीतम जी ने मर्दो की मानसिकता और विचारों को स्पष्ट करते हुए उनके अंदर की संवेदना, आत्मग्लानी, दया,प्यार जो 'पिंजर' के नायक रशिद के अंदर कूट–कूटकर भरी पड़ी है। जातिगत भवना जो समाज द्वारा बनायी गयी है जिसमे वह बह गया है नायक बाद में पछताता है और अपने अंदर के दर्द को बंया नही कर पाता परंतु अंदर ही अंदर घुटता और मौके की तलास करता है। और उसे वह मौका भारत–पाकिस्तान के विभाजन के बाद मिलता है जिसे वह बखूबी उसे पूरा करता है। विभाजन के दंश में स्त्रियों को सबसे ज्यादा नुकसान पहुॅचता है, दोनों तरफ के लोग उसे भोग की वस्तु समझते है और अपने –अपने घर में बंधक बनाकर रखतें है। जिसमें से कुछ को 'पिंजर' का नायक रशिद आजाद कर उनके घर पहुॅचाता है उसमें से एक स्त्री नायिका की भाभी 'लाजो' रहती है जिसे नायक और नायिका दानों मिलकर उसे आजाद कराते है और उसके परिवार से मिलाते है। नायिका अपने भाई को कहती है ध्यान रखना इसका कभी किसी की वासना भरी दृष्टि इस पर न पड़े और कभी इसे कोई घृणित दृष्टि से न देखे। इसे पूरा सम्मान देना तभी 'पूरो' की आत्मा खुश होगी। वह कहती है– 'लाजो मेरी भाभी अपने घर लौट रही है। समझ लेना इसी में पूरो भी गई। मेरे लिए तो अब यही जगह रह गयी है........... चाहे कोई लड़की हिन्दू हो या मुसलमान, जो भी लड़की लौटकर अपने ठिकाने पहुचती है, समझो की उसी के साथ

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

पूरो की आत्मा भी ठिकाने पहुच गई'।

पूरो के इस चरित्र विशलेषण से यह स्पष्ट होता है कि उसमें बहन का प्यार, पत्नी का प्रेम, माता का वात्सल्य और सर्वोपरि नारी वर्ग की प्रति दया, करूणा,सहानभूति और आदर के भाव विद्यमान है यही से पूरो के जिन्दगी में बदलाव आता है और वह मानती है कि वर्तमान के यथार्थ को कबूल कर सबके गुनाह माफ करने होंगे और फिर से आगे बढ़ना होगा एक जिन्दगी के लिए, भविष्य के अनंत संभावनाओं के साथ।

यही 'पिंजर' उपन्यास की सार्थकता है कि अतित को खूले दिल से उसकी सम्पूर्णता को स्वीकार किए बगैर वर्तमान सुधारा नही जा सकता। वर्तमान सुधारे बगैर भविष्य उजला नही होगा मतलब अगर उजले भविष्य की रचना करनी है तो इतिहास के गुनाह माफ करना और सुधारना ही होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'पिंजर' – उपन्यास 1935 अमृता प्रीतम, ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. रसीदी टिकट – आत्मकथा 1996 अमृता प्रीतम, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स दिल्ली।
3. एक थी सारा – संस्मरण 1996 अमृता प्रीतम, प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स दिल्ली।

****

नाला सोपारा किन्नर समाज की आवाज

डॉ. रेखा दुबे* स्मृति उरांव **

शोध सारांश – लैंगिक दृष्टि से विवादित समाज के जो लोग प्राय: किन्नर या हिजड़ा कहकर बुलाये जाते है वे जीवन जीने के कश्मकश, दर्दनाक पर विवश हो जाते है। इसी सामाजिक पहलुओं को बताने के लिये बहुचर्चित लेखिका चित्रा मुद्गल किन्नर विषय में चचर्लित उपन्यास पोस्ट बॉक्स नं. 203 नारा सोपारा है।

10 सितम्बर 1944 को जन्मी चित्रा मुद्गल की प्रारम्भिग शिक्षा पैतृक ग्राम निहाली खेड़ा जिला उन्नाव उ.प्र. से लगे ग्राम भरतीपुर के कन्या पाठशाला में हुआ। हायर सेकेंडरी पूना बोर्ड से की और शेष पढ़ाई मुम्बई विश्वविद्यालय से की।

सामाजिक आर्थिक और मानवीय अधिकारों के लिए संघर्ष करने वाले विविध समुदायों लिये उनके न्याय के लिये काम किया है। उनका उपन्यास 'आवा' के लिये व्यास सम्मान 'एक जमीन अपनी' के लिये फणीश्वरनाथ रेणु सम्मान और 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा' के लिए साहित्य अकादमी सम्मान 5 दिसम्बर 2018 को मिला। अब तक नौ कहानी संकलन तीन उपन्यास एक लेख संकलन चार बालकथा संग्रह छ: संपादित पुस्तकें आदि।

आजाद भारत में हमने अपनी तमाम रूढ़ियों जैसे सती प्रथा, बाल विवाह, अस्पृश्यों से भेदभाव दलित पीड़ा आदि को तोड़ने का सफल प्रयास किया है लेकिन किन्नरों की जिंदगी अमूमन वैसी की वैसी ही रही। यह हमारे समाज के उस खास किन्नर तबके को आधार बनाकर रची-बुनी गई कृति है, जो किन्नर होने पर किस प्रकार से उसे सामाजिक तिरस्कार और परिवारिक तिरस्कार मानसिक दर्द झेलना पड़ा है।

प्रस्तावना – हमारा समाज स्त्रीकोष पर आधारित है स्त्री और पुरूष से हम अपना प्रथम समाज निर्मित करते है लेकिन इसके बाद भी कोई व्यक्ति और समाज है जो कि किन्नरों का समाज यानी 'हिजड़ा'।

ये किन्नर जीवन न तो स्त्री है न पुरूष है कार्डवेल का कथन है कि 'साहित्य का मोती समाज की सीपी में जन्म लेता है।'

अत: समाज में जो कुछ भी घटित होता है उसकी अभिव्यक्ति साहित्य के माध्यम से होती है। संसार मे दो ही लिंगों को मान्यता मिली है, इन दो विपरित लिंगों को ही सृष्टि का आधार माना गया है किन्तु समाज में और एक वर्ग उपस्थित है जिसे कई नामों से अभिभूत करते है जैसे उभयलिंगि, तृतीय लिंग, किन्नर, हिजड़ा आदि।

इस वर्ग को हमेशा ही समाज के द्वारा उपेक्षित रूप मे देखा जाता है वास्तव में यह वर्ग अपने आप में संघर्ष करते हुये जीवन व्यतीत करते चला आ रहा है। किन्नर हिन्दी के दो शब्दों से मिल कर बना है कि 'नर' जिसका तात्पर्य वर्ग से है जो पूर्ण रूपेण न स्त्री है ना पुरूष वस्तुत: जन सामान्य की भाषा में हिजड़ा किन्नर।

सन् 2016 में प्रकाशित चित्रा मुद्गल के उपन्यास पोस्ट बॉक्स नं. 203 नारा सोपारा यह एक उपन्यास ही नहीं बल्कि उस समाज की पीड़ा को दर्शाती है जिसे हम देखना नहीं चाहते और सभ्य समाज उसे नजर अंदाज कर पुन: जीवन के अंधेरे खाई में फेंकने का प्रयत्न करते है।

चित्रा मुद्गल अपने कलम के माध्यम से नयी सोच को जन्म देने का अथक प्रयास किया ताकि उस वर्ग को जो हम सबसे भिन्न है उसे स्थान दिया जा सके क्योंकि यह प्रकृति द्वारा निर्मित है। इसे नजर अंदाज करना इसका मतलब हुआ प्रकृति को नजर अंदाज करना है। बस अड्डे, रेल के डिब्बे, चौक चौराहों पर अजीब सी हरकत करते हुये दिखाई देते है किन्नरों के इस व्यवहार से त्रस्त व्यक्ति इनसे दूर भागते है नारा सोपारा में इस पीड़ा को चित्रा जी ने अपने उपन्यास के माध्यम से समाज के समस्त प्रस्तुत किया है किन्नरों की पीड़ा इनके उपन्यास में परिलक्षित होती है।

नारा सोपारा के प्रमुख पात्र विनोद उर्फ बिन्नी उर्फ बिमली के द्वारा किन्नर समाज के अंधेरे में छुपी हुयी कड़वाहट और उस कड़वाहट में छुपी हुयी सम्पूर्ण जीवन का बयान उकेरती है। मुम्बई महानगर के नारासोपारा नामक स्थान की आवाज है जहां हर वक्त रेल गाड़ियों की आवाज उठकर अपने मूल स्थान में पहुंच जाती है परन्तु कुछ एसी आवाजें जरूर गुंजती है जो रेल की आवाज में मिलकर महानगर के चकाचौंध में विलुप्त हो जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि वह अपने मूल स्थान तक पहुंचने में असमर्थ हो जाती है।

यह आवाज सभ्य समाज के लिये कठिन प्रश्न है आखिर क्यों उनकी आवाजें सूनकर भी अनसूनी कर देते है? क्या हमें यह नही जानना चाहिये कि किन्नर शब्द के प्रयोग से उस समाज को क्या एहसास होता है? और यह भी है कि कौन अपनी पहचान जाहिर करना चाहता है।

क्या वे पुरूष वाले वेशभूषा त्याग कर महिलाओं जैसे वेशभूषा धारण करना चाहते है। चित्रा मुद्गल जी ने नाला सोपारा के पात्र विनोद की स्थिति पूर्व में सामान्य लड़कों की तरह बताया है उसकी परवरिश अन्य लड़कों की तरह ही होती है उसकी कुछ बनने कुछ करने कि ख्वाहिश है परन्तु परिवार और समाज के भय की वजह से सब कुछ ओझल हो जाता है एक तरफ

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

परिवार के अनिक्षा को जन्म देता और हमारा समाज का उस परिवार के प्रति कड़वाहट घोलकर विनोद के सपने एक मुट्ठी में कैद होकर रह जाते है। एक तरफ विनोद और उसका परिवार दूसरी तरफ किन्नर समुदाय का बलपूर्वक मजबुरन विनोद को अपने समुदायों में ले जाने के लिये खड़ा है। इस अंतरद्वंद की घड़ी में विनोद की पीड़ा, मां और परिवार से बिछड़ने का दर्द, बरसात की उस मेघ की भांती है जो उसे भिंगों देता है। विनोद की आकांक्षा गणितज्ञ बनने की है परन्तु किन्नर समुदाय उसे साथ ले जाने के लिये खड़ा ताक रहा है।

वह अपने परिचय का मोहताज शिक्षा के प्रति लगाओं उसकी सोच उसे अन्य किन्नरों से अलग छवि देती थी। सभी उसका आदर करते थे, परन्तु समुदाय का जो मुखिया था वह विनोद की समक्ष से बाहर था।

विनोद अपने शिक्षा के बल पर एक राजनेता के पास काम पाने में सफल हो जाता है। यह काम अपने आत्मस्वाभिमान को पा सके उसकी लड़ाई थी। विनोद को यह अवगत् नहीं था कि उसके साथ राजनीकिरण किया जा रहा है। सभी राजनेताओं की तरह वह राजनेता किन्नर समाज को राजनैतिक फायदे के लिये एक वोट बैंक की तरह इस्तेमाल कर रहा है। परन्तु विनोद इस राजनीतिकरण को नकारते हुये किन्नर समाज के मूल अधिकार, शिक्षा और स्वाभिमान प्राप्त करने पर बल देता है।

इसी मध्य विनोद का साथी पूनम के साथ दुर्व्यवहार किया गया जिससे उसके मन को बहुत आगाध पहुँचता है।

न्याय की इस लड़ाई के लिये अथक प्रयास करने के पश्चात् भी उसे कोई समाधान प्राप्त नहीं होता है। राजनीतिकरण के चपेट में आकर मृत्यु की शैया पर पहुँच जाता है।

एक तरफ विनोद की माँ पोस्ट बॉक्स वाले पते से पत्र आने का इंतजार करती है, विनोद की मां के प्रति तड़प पिता के प्रति ख्याल भाई सिद्धार्थ, भाभी सेजल की नोकझोंक, मंजूल के प्रति स्नेह इसी पत्र के माध्यम से पूर्ण होता था, परन्तु मां के अंतिम पत्र का इंतजार एक लम्बी इंतजार में बदल गया, जिसमें माता पिता ने विनोद के प्रति क्षमा याचना मांगी और बेटे को देर से ही सही सम्मान देने कि इच्छा जाहिर किया परन्तु यह अंतिम पत्र व्यवहार विनोद तक नहीं पहुंच सका और न ही विनोद का पत्र के माध्यम से जो प्रतिउत्तर था वह उसके परिवार तक नहीं पहुंच सका।

निष्कर्षत: चित्रा मुद्गल जी ने किन्नर समाज की उकेरती दशा को अपने इस उपन्यास के माध्यम से दर्शाया है और समाज के समक्ष एक प्रश्न चिन्ह भी छोड़ा है कि विनोद, उर्फ बिन्नी उर्फ बिमली के बहाने हमारे समाज में लम्बे समय से चले आ रहे उस मानसिकता का विरोध है, जो अमीर-गरीब का पुराना टोटका नहीं महज शारीरिक कमी के चलते किसी इंसान को असामाजिक बना देने कि क्रूर विडम्बना है।

वैदिक काल से लेकर वर्तमान तक किन्नरो की सामाजिक आर्थिक, राजनैतिक जो लड़ाई है वह सतत् गतिमान है, जिससे उसका जीवन शैली रसहीन जीवन को रसमय करना अपने से अलग ना समझना हर व्यक्ति परिवार का दायित्व है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चित्रा मुद्गल 2017 के उपन्यास पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा दरियागंज, नई दिल्ली।
2. इण्डिया टुडे।
3. प्रतिनिधि हिन्दी उपन्यासो में चित्रित किन्नर विमर्श संवेदना शिल्प- गीतांजली (दयालबाग आगरा)।
4. समसमायकी हिन्दी साहित्य किन्नर विमर्श साहित्य और समाज विश्नोई मिलन (2018) कानपुर विधा प्रकाशन।

****

वयं रक्षाम: की प्रासंगिकता

डॉ. रेखा दुबे* आकाँक्षा गोपाल **

शोध सारांश – आचार्य चतुरसेन शास्त्री का जन्म अनुपशहर तहसील के निकट चंदोख ग्राम में रविवार दिनांक 26 अगस्त 1891 में हुआ। आचार्य जी ने जयपुर के संस्कृत महाविद्यालय से साहित्य और आयुर्वेद चिकित्सा शास्त्र का विधिवत अध्ययन कर वहीं से आचार्य की उपाधि प्राप्त की।

सेवा, श्रम, त्याग और साहस को जीवन का मूलमंत्र मानने वाले आचार्य चतुरसेन शास्त्री जी स्वभाव से अचल, निर्भिक, साहसी, अहंकारी, स्वाभिमानी, महत्वाकांक्षी तथा स्पष्ट वक्ता थे।

डी.ए.वी. महाविद्यालय लाहौर से आचार्य जी वरिष्ठ आयुर्वेद प्राध्यापक का पद त्याग देने के पश्चात् साहित्य साधना प्रारंभ कर अनेक साहित्य ग्रंथों की रचना की। आचार्य जी के सुप्रसिद्ध रचनाओं में 'वैशाली की नगर वधू', 'सोमनाथ', 'सोना और खून', तथा 'वयं रक्षाम:', जैसे अनेक साहित्य मिलते है।

आचार्य जी के इन्ही उपन्यासों में से 'वयं रक्षाम:' एक प्रागैतिहासिक और रामायण कालीन उपन्यास है। हिन्दी साहित्य में ऐतिहासिक उपन्यासों की परंपरा जब से प्रारंभ हुई है तब से आज तक यह पाठकों के समक्ष लोकप्रिय होती चली आई है। 'ऐतिहासिक उपन्यासों में अतीत के संदर्भ में वर्तमान का ऐसा अध्ययन है जिसमें अतीत वर्तमान संदर्भ में पर्याप्त संकेतों सहित प्रकट होता है।'[1]

ऐतिहासिक उपन्यास में आख्यान की प्राचीन निकटता और नवीनता के प्रति समन्वय की अभिव्यक्ति दृष्टिगोचर होती है जिसके पिछे युगों–युगों के अतीत से जुड़े संस्कार निहित है। आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने ऐतिहासिक उपन्यासों की परंपरा को गतिमान देते हुए वयं रक्षाम: की रचना की है जो कि पुरातन संस्कृति से परिचित होने और उन्हें समझने का हमें अवसर प्रदान करती है। रामायण के आधार पर उसके पात्रों से आज हम परिचित है, परन्तु 'वयं रक्षाम:' में उस युग की भौगोलिक स्थिति से लेकर सभी प्रकार की छोटी बड़ी चीजों को दर्शाया गया है। आचार्य जी के इस उपन्यास का मुख्य पात्र राम न होकर रावण है अर्थात् इसमें रावण से संबंधित प्रसंगों का उल्लेख किया गया है।

विश्रवा मुनि और कैकसी के पुत्र रावण ने पितृकुल की अपेक्षा मातृकुल के धर्म को अपनाते हुए अपने नाना सुमाली के पथ प्रदर्शक में चलना स्वीकार किया। उसने अपनी संस्कृति को 'रक्ष संस्कृति' का नाम दिया जिसका नारा 'वयं रक्षाम:' था। देवों और आर्यो के विरूद्ध जाकर रावण ने अपनी 'रक्ष संस्कृति' को संपूर्ण विश्व में फैलाना चाहा जिसके लिए उसने अपने अथक प्रयासों से अनेक द्वीपों को जीतकर उन्हें अपनी रक्ष संस्कृति के अधीन किया तथा स्वयं को उन द्वीपों का राजा घोषित किया। रावण ने अपने बल और बौद्धिक प्रतिभा से देवाधिदेव रूद्र को प्रसन्न किया और सदैव विजयीभव: का आशीर्वाद ले सम्पूर्ण उत्तर भारत में भी रक्ष संस्कृति के विस्तार के लिए प्रयत्न करने लगा। उसने अपनी राक्षस सेना उत्तर भारत के दण्डकारण्य और नैमिषारण्य में सफलतापूर्वक भेज दिया। यही दण्डकारण्य के पंचवटी में रावण ने राम से छन्द वेश में भेंट कर सीता का हरण किया। जिसके परिणामस्वरूप राम ने वानर सेना के साथ मिलकर रावण का युद्ध में वध किया और सीता समेत चौदह वर्ष की समाप्ति के पश्चात् अयोध्या वापस आये।

प्रस्तावना – 'वयं रक्षाम:' एक ऐतिहासिक उपन्यास है। 'ऐतिहासिक उपन्यास का संबंध अतीत– विशेष और वातावरण– विशेष से रहता है। ये समस्त तत्व समाज के विशिष्ट अंगों का प्रतिनिधित्व करते है। ऐतिहासिक उपन्यास समाजिक उपन्यास की भांति मनुष्यों के पारस्परिक संबंधों और उनकी समस्याओं की कहानी है।'[2]

ऐतिहासिक उपन्यास का उद्देश्य वयिष्ट में समिष्ट के दर्शन कराना है। युग विशेष के जीवन को साकार बनाकर प्रस्तुत करना और अतीत को वर्तमान से श्रेष्ठ समझकर उसके पुनर्स्थापना की कल्पना होती है। उसमें अतीत के गौरवगाथा, राज्यप्रेम, वीर पूजा के भाव भरे होते है। 'ऐतिहासिक उपन्यास यदि एक ओर ऐतिहासिक चरित्र से बंधा है तो दूसरी ओर कलात्मक सार्वभौमिकता के कारण सार्वकालिक तथा सार्वदेशिक भी है। उपन्साय जो आधुनिक समाज की ही देन है जो समाज और व्यक्ति के बीच नष्ट संतुलन के प्रतीक रूप में विकसित हुआ है। अत: ऐतिहासिक उपन्यास मानव के शास्वत जीवन की धारा और समाज के अनुभवों को संचित करता है।' [3]

'वयं रक्षाम:' मे मुख्यत: उस काल की विचारधारा, जीवन पद्धति आदि का समायोजन हुआ है जिसके माध्यम में हम युगीन यथार्थ और अतीत कालीन इतिहास से परिचित हो सकते है। 'वयं रक्षाम:' का अर्थ है हम रक्षा करते है। रावण का यह नारा उन लोगों पर सार्थक सिद्ध होता था जो उसके द्वारा बनायी हुई रक्ष संस्कृति के अधीन होते थे। हजारों सालों से कई पीढ़ीयों द्वारा सुनाई जा चुकी किवंद्तियाँ जिसमें विश्वास और आस्था की पकड़ है उसके ज्ञात के बिना ही इस उपन्यास को निष्पक्ष और स्वतंत्र रूप से अध्ययन कर इसकी वास्तविकता को जानना ही इस उपन्यास का मूल उद्देश्य है।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

'वयं रक्षाम:' के प्रमुख पात्रों में रावण, सुमाली, मंदोदरी, चित्रांगदा, मेघनाद, रूद्र (शंकर), राम, सीता, लक्ष्मण, हनुमान, सुग्रीव, ताड़का, सूर्पनखा, विभीषण तथा कुम्भकरण है। जो कि अपने-अपने किरदार को निभाये है, जिनकी छवी समाज में व्याप्त है।

इस उपन्यास के मुख्य पात्र रावण में आर्यकुल में जन्म लेने के कारण साहसी, मेधावी, प्रकण्ड विद्धान जैसे गुण विद्यमान थे परन्तु मातृकुल दैत्यवंश का उसमें प्रभाव ज्यादा होने के कारण वह अत्यंत खुरापाती अहंकारी, महत्वाकांक्षी तथा राक्षस प्रविृत्ति का था। सभी द्वीपों और लंकापुरी में विजय हांसिल करने के बाद वह स्वयं को तीनों लोकों का स्वामी समझने लगा था।

वयं रक्षाम: का एक प्रमुख पात्र सुमाली है जो रावण का नाना है। दैत्यवंश में उत्पन्न हुए सुमाली ने अपने दोनों भाईयों माल्यवान और माली के साथ लंकापुरी बसाई थी। युद्ध में देवताओं से पराजित होने के बाद वह स्वर्णपुरी लंका को छोड़कर चला गया था जहां बाद में रावण का सौतेला भाई धनेश कुबेर राज करने लगा। इसी लंकापुरी को वापस पाने के लिए उसने अपनी पुत्री कैकसी का विवाह कुबेर के पिता विश्रवा मुनि से करवा दिया। रावण के पैदा होने के बाद वह रावण को लंका वापस हांसिल करने के लिए उकसाने लगा। अपनी चतुर और चालाक बुद्धि से रावण के सलाहकार के रूप में लंका में पुन: राज ठाठ के साथ रहने लगा।

इस उपन्यास के एक और मुख्य पात्र धर के पुत्र रूद्र थे। रूद्र के दादा यम थे। रूद्र का वाद्य डमरू तथा शस्त्र त्रिशूल था। रूद्र पल में क्रोधित तथा पल में प्रसन्न होने वाले उदार प्रवृत्ति के थे। सारे देव-दैत्य उनसे भय भी खाते थे और संकट में उनके शरण भी जाते थे। इसलिए उन्हें देवाधिदेव रूद्र भी कहा जाता था। इन्हीं देवाधिदेव रूद्र से रावण को देवों से सदा विजयी रहने का आशीर्वाद प्राप्त था।

विश्रवा मुनि के पुत्र और रावण के छोटे भाई विभीषण में दैत्य प्रवृत्ती की अपेक्षा आर्य प्रवित्ती ज्यादा थी। अपनी सेना और मंत्री मंडल में विभीषण जैसे बलिष्ठ भाई तथा योद्धा को प्राप्त कर रावण खुद को बलशाली राजा समझता था। विभीषण के सदाचरण देखकर रावण द्धारा उसकी सेना से निकाले जाने के बाद विभीषण राम की शरण में आ गये। रावण की मृत्यु के बाद विभीषण को लंका का राजा घोषित किया गया।

उपन्यास के इन पात्रों के अतिरिक्त पात्रों में राम का आदर्श स्वरूप मर्यादा पुरूषोत्तम के रूप में व्याप्त है तो सीता को पतिव्रता के रूप में पूजा जाता है। अनूज लक्ष्मण का भ्राता प्रेम है तो हनुमान की दास भक्ति भी है। इन सभी पात्रों का अध्ययन करने पर हमारी आंखों के समक्ष इनका रूप चित्रित होने लगता है क्योंकि प्रारंभ से ही यही सूना जा रहा है तथा इन पात्रों का ये रूप ही हमारे ह्रदय में विराजमान है। इन सब से भिन्न दूसरी ओर हम रक्ष संस्कृति में पले बढ़े रावण के रूप को देखते है जिसकी प्रकृति शैतान, अन्याय और अभिमानी प्रकृति की मानी गई है। उसके इसी अभिमान ने उसके पांडित्य, विद्धता को धूमिल कर दिया था। प्रागैतिहासिक काल के नर, नाग, देव, दैत्य, दानव, आर्य, अनार्य आदि को सारे संसार ने धर्म के रंगीन शीशे में देखकर देवता मान लिया था जिसका अनुसरण आज तक चला आ रहा है।

रावण के सौतेले भाई तथा यक्ष संस्कृति को अपनाने वाले धनेश कुबेर की शानोशौकत को देखकर रावण उससे भी बड़ा बनना चाहता था। बचपन से ही तेज, तर्रार और चतुर रावण तीनों लोकों में बलशाली योद्धा था। वयस्क अवस्था में अपने नाना सुमाली और समस्त मामाओं के साथ रहते समय उसे ज्ञात हुआ कि स्वर्णपुरी लंका उसके नाना की थी फिर वह अपने नाना के साथ विजय यात्रा में निकल गया। एक तरफ नाना सुमाली की कुशाग्र बुद्धि तो दूसरी तरफ रावण के पराक्रमी बल ने मिलकर सभी द्धीपों में विजय हांसिल करना प्रारंभ कर दिया था। रावण अपने मामा प्रहस्त को कुबेर के पास लंका में राज करने का प्रस्ताव देकर भेजता है और संदेश में लिखता है :- 'लंकापुरी और लंका साम्राज्य हम दैत्यों का है। इसलिए इसे आप हमें लौटा दे तो ठिक है। यह एक धर्म की बात है। इससे हमारा और आपका प्रेम भी बना रहेगा।'[4] मातुल प्रहस्त द्धारा लाये हुए रावण के संदेश को सुनकर कुबेर ने इस संदेश के साथ प्रहस्त को रावण के पास लौटा दिया कि लंका जैसी मेरी है वैसी ही तुम्हारी भी है। तुम भी यहां आकर अधिकार पूर्वक राज करो। यह सून रावण लंका पहुंचकर वहां आतंक फैलाना शुरू कर देता है। जिससे परेशान होकर कुबेर अपने पिता की आज्ञा से लंका रावण को सौंप देता है। इस प्रकार रावण लंका का राजा बन जाता है।

उपन्यास का उद्देश्य था कि 'वयं रक्षाम:' नारा के साथ रावण की रक्ष संस्कृति सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त हो सके। आज हम वर्तमान में देखते है कि रक्ष संस्कृति जैसी ही व्यक्तिवादी संस्कृति विश्व में व्याप्त है तथा अहंकार, क्रूरता ने लोगों के बौद्धिक धरातल को धूमिल कर दिया है। मानवता की भावना शून्य में सिमटकर रह गई है। राम के स्वरूप, उनका व्यक्तित्व तथा उनकी पारदर्शिता की जरूरत सम्पूर्ण राष्ट्र और समाज को है। वयं रक्षाम: रक्ष संस्कृति का द्योतक है तो एक तरफ राम का आदर्श स्वरूप हम सबके लिए अनुकरणीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ऐतिहासिक उपन्यासो में इतिहास एवं कल्पना की भूमिका- डॉ. टी.पी. शाजू।
2. आचार्य चतुरसेन शास्त्री के उपन्यासो में चित्रित बैद्धकालीन समाज- डॉ. सरोज नागायज पृ. 57
3. आचार्य चतुरसेन शास्त्री के उपन्यासो में चित्रित बैद्धकालीन समाज- डॉ. सरोज नागायज पृ. 58
4. वयं रक्षाम:, आचार्य चतुरसेन शास्त्री पृ. 43

****

पंडित लोचनप्रसाद पाण्डेय का साहित्यक परिचय

डॉ. आँचल श्रीवास्तव* राधा शर्मा **

शोध सारांश – पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय जी बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी थे। उन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं का प्रवर्तन किया। छत्तीसगढ़ के प्रथम उपन्यासकार होने का गौरव भी उन्हें प्राप्त है। पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय जी द्विवेदी युगीन रचनाकार, थे और यही कारण है कि उनके साहित्य रचना में उस समय की विशेषता प्रकट होती है।पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय जी का नाम हिंदी साहित्य जगत में सदैव अमर रहेगा। साहित्यकार जीवन में न रहे परन्तु उनका साहित्य समाज के लिए दर्पण की भांति होता है जिसमें एक साहित्यकार के रचना को उनके विचारों को, मनोभावों को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

पाण्डेय जी उत्कृष्ट कवि, नाटककार, उपन्यासकार, जीवनी लेखक सुविख्यात पुरातत्वविद एवं अनुवादक थे। उन्होंने समाज को, समाज के युवा पीढ़ी को स्वाभिमान राष्ट्र प्रेम और स्वातंत्र्य चेतना की तरफ उन्मुख करने वाले कालजयी साहित्य का सृजन किया। पंडित लोचनप्रसाद पाण्डेय के लेखन में असाधारण विविधता है जो उनके बहुआयामी व्यक्तिव का परिणाम है।

प्रस्तावना – छत्तीसगढ़ राज्य के बिलासपुर संभाग में जांजगीर-चॉपा जिले के महानदी के तट पर बालपुर नाम का एक छोटा सा ग्राम है। इसी ग्राम में सन् 1887 पोष शुक्ल 10, 4 जनवरी दिन मंगलवार को पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय का जन्म हुआ सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री सतीश जायसवाल जी ने पांडेय़ जी के ग्राम बालपुर का वर्णन इस प्रकार किया है 'बिलासपुर जिले का नक्शा कछुए के आकार का है। जहॉं कछुआ का सिर होना चाहिए वह तो हुई चन्द्रपुर तहसील और जिसे कछुए की ऑख मान सकते हैं बस ठीक वहॉं बालपुर है। बालपुर बिलासपुर जिले का आखिरी गॉव है। जमीन का आखिरी टुकडा भी। इसके बाद महानदी का सागर , विस्तार। यहॉं महानदी का पार क्रम से कम तीन किलोमीटर चौड़ा है बालपुर पार करते ही महानदी ओड़िसा प्रान्त में बहने लगती है।'

आपके पिता का नाम पंडित चिंतामणि पांडेय था पंडित लोचन प्रसाद पांडेय आठ भाई और चार बहन थे। उनके नाम क्रमश: पुरूषोत्तम प्रसाद, पद्मलोचन प्रसाद चन्द्रशेखर, लोचन प्रसाद, विद्याधर , बंशीधर, मुरलीधर और मुकुटधर तथा बहनों में चंदनकुमारी, यशकुमारी, सूर्यकुमारी और आनंदकुमारी थी भाईयों में आप चौथे क्रम पर थे। आपके पितामह श्री शालिग्राम पांडेय साहित्यानुरागी, धर्मप्रेमी, अतिथि सेवक तथा प्रतिष्ठित ब्राम्हण थे। आप बालपुर के जमीदार एवं लोकल बोर्ड डिस्ट्रिक काउंसिल के सदस्य थे आपके पिता श्री पंडित चिंतामणी पांडेय साहित्य प्रेमी, आध्यात्मिक अभिरूचि सम्पन्न व्यक्ति थे। माता देवहुति देवी ममता की साक्षात प्रतिमूर्ति थी। धार्मिक अनुष्ठान पूजा-पाठ व्रत आदि उनके जीवन के आवश्यक अंग थे। घर परिवार में सर्वत्र साहित्यिक एवं धार्मिक वातापरण था आपके पितामह ने घर पर ही एक पुस्तकालय की स्थापना की थी जिसका नाम पार्वती पुस्तकालय था।

इस पुस्तकालय में रामचरित मानस ब्रज विलासकृत, चौरासी ब्राम्हणों की वार्ता, सबल सिंह चौहान कृत महाभारत का हिन्दी पद्यानुवाद, उड़िया रामायण, श्रीमद्‌भागवत महापुराण, वैदेही वनवास जैसे अनेक धार्मिक और साहिहत्यक ग्रंथ थे इस साहित्य, संस्कार और धार्मिक वातावरण में पांडेय जी का लालन-पालन हुआ। उनके पिता पंडित चिंतामणि पांडेय ने सन् 1887 में गांव में ही एक निजी पाठशाला की स्थापना की थी जिसमें इस अंचल के बच्चों को शिक्षा ग्रहण करने का अवसर प्राप्त हुआ। इस पाठशाला में भारतेन्दु युग के कवि पंडित अनन्तराम पांडेय ने भी शिक्षा ग्रहण की थी। वे पांडेय जी के मामा थे। इसके अलावा पांडेय जी सहित उनके सभी भाई-बहनों की शिक्षा-दीक्षा भी इसी पाठशाला में हुई थी। आधुनिक शिक्षा के प्रबल पक्षधर होने के कारण पांडेय जी के पिता जी ने पाठशाला में अंग्रजी शिक्षा के लिये एक मद्रासी संत श्री रामदास मंत्रमूर्ति को नियुक्त किया था।

पुरातत्वविद के रूप में छत्तीसगढ़ के लिए जो कार्य उन्होंने किया, उतना आज तक किसी ने भी नहीं किया छत्तीसगढ़ के प्राचीन गौरव को लुप्त और नष्ट होने से बचाने के लिए पाण्डेय जी ने 'छत्तीसगढ़ गौरव प्रचार मंडली' की स्थापना की। श्री सतीश जायसवाल के कथानानुसार पंडित लोचन प्रसाद पांडेय का नाम अनकी कविताओं और साहित्य से अधिक उनके पुराशोधो के कारण हुआ छत्तीसगढ़ का किरारीस्तम्भ और ओडिशा का विक्रम खोल का ऐतिहासिक शिलालेख उनकी उल्लेखनीय खोज हैं।

पाण्डेय जी ने अपने जीवन काल में बहुत अधिक सुयश और सम्मान अर्जित किया। पाण्डेय जी को यह सम्मान साहित्य, इतिहास तथा पुरातत्व के क्षेत्र में प्राप्त हुआ। सन् 1912 में वामंडा नरेश द्वारा 'काव्य विनोद' की उपाधि से, सन् 1948 में अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा साहित्य वाचस्पति की उपाधि से विभूषित किया गया।

पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय का साहित्यक परिचय – साहित्य की विविध विधाओं में महारत हासिल करने वाले पाण्डेय जी हिंदी के साथ ही साथ छत्तीसगढ़ी अंग्रेजी, संस्कृत, उड़िय़ा भाषा भी जानते थे और इन पर रचनाऍं भी लिखी हैं। सन् 1920 तक उनकी लगभग 40 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

हो चुकी थी और हिंदी साहित्य के प्रमुख साहित्कारों में उनका नाम आदर के साथ लिया जाने लगा।

पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय ने अपने साहित्यिक जीवन का शुभारंभ काव्य लेखन से किया। उनकी पहली रचना सन् 1904 में बालकृष्ण भट्ट के हिंदी प्रदीप में प्रकाशित हुई। उनकी प्रथम काव्य कृति 'प्रवासी' का प्रकाशन सन् 1907 में राजपूत, एग्लों इंडियन प्रेस आगरा से हुआ। सन् 1909 में 'नीति कविता', 'महानदी' और 'कविता कुसुम' (उड़िया काव्य) उनकी काव्य कृतियाँ एक-एक कर प्रकाशित होती चली गई।पाण्डेय जी ने सन् 1910 में ब्रज और खड़ी बोली के नए, पुराने कवियों की रचनाओं का संकलन संपादन कर 'कविता कुसुम माला' का प्रकाशन किया। इस प्रकाशन से पाण्डेय जी को हिंदी जगत में शिखर प्रतिष्ठा मिली, उनके साहित्य नेतृत्व को व्यापक समर्थन मिला और द्विवेदी युगीन शीर्षस्थ रचनाकारों में उनकी गिनती होने लगी। तदन्तर उनकी 'भक्ति-उपहार', 'पुष्पांजलि' और 'बाल विनोद जैसी शिक्षाप्रद रचनाएँ प्रकाश में आई। फिर आया उनकी रचनाशीलता का उत्कर्ष काल जिसमें सन् 1914 में 'माधव-मंजरी', 'मेवाड़ गाथा' और 'चरित माला' तथा सन् 1915 में 'पुष्पांजलि' और 'पद्य पुष्पांजलि' जैसी महत्वपूर्ण रचनाएँ प्रकाशित हुई। ये वर्ष उनकी सृजनशीलता के शिखर वर्ष हैं। साहित्य जगत में उनका स्थान कवि मनीषी के रूप में बन चुका था। डॉ. विनय मोहन शर्मा ने एक स्थान पर अपने संस्मरण में लिखा है कि 'पांडेय परिवार केवल साहित्य लिखता ही नहीं साहित्य जीता है। उनमें सहृदयता है और अपनी भावनाओं को किस तरह से कहॉ प्रस्तुत किया जाय यह स बवह जानता है।'

द्विवेदीयुगीन साहित्य में पाण्डेय जी का का योगदान – द्विवेदी युग में ही पाण्डेय जी ने अपनी काव्य साधना का श्रीगणेश किया। पाण्डेय जी 1904 से 1920 तक सतत रूप से साहित्य साधना की जो कि उनकी हिंदी साहित्य को अनुपम देन है। इस युग के कवियों ने अपनी कविता के माध्यम से खड़ी बोली की स्थापना के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया। द्विवेदी युग में उस आन्दोलन को निश्चित रूप प्रदान किया जिसे भारतेंदु ने प्रारंभ किया था। पाण्डेय जी पर समकालीन रचनाकारों का विशेष प्रभाव पड़ा। द्विवेदी युग में राष्ट्रीय भावना विषयक कविताएँ बहु संख्या में लिखी गयी। पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय जी की रचनाओं में इस भावना को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

पाण्डेय जी ने बाल विवाह आदि कुप्रथाओं का विरोध किया और विधवा विवाह पर बल दिया। द्विवेदी युग में नारी विषयक दृष्टिकोण में पर्याप्त परिवर्तन हुआ। नारी को अबला के बदले शक्ति स्वरूप समझा गया जिसे इस युग की एक उपलब्धि कहा जा सकता है। इस युग में नारी को पूर्ण रूप से गौरव मंडित करके काव्य में प्रस्तुत किया गया। नारी की अस्मिता को उजागर करना इस युग का एक उद्देश्य था। पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय ने अपने काव्य संग्रह 'माधव मंजरी' में अनेक अनुवाद प्रस्तुत किये जो इस प्रकार हैं 'थैंकफुलनेस' का 'निहोरा' 'दी चाइल्ड एंड दी बर्ड' का 'बालक और चिड़िया', 'द थ्री रूल्स' का 'नियमत्रय', दी वैस्प एंड बी का 'मधुमक्खी और बरैया', 'होम' का 'घर', और 'ट्रेवलर रिटर्न' का 'घर का प्रभाव' नाम से अनुवाद किया। द्विवेदी युग की बहुत सारी विशेषताएॅ हैं जिनमें से प्रमुख है खड़ी बोली का प्रयोग। भारतेंदु युग के पश्चात् जब हिंदी को राष्ट्र भाषा बनाने का आन्दोलन हुआ तब पाण्डेय जी ने इस आन्दोलन में सक्रिय हिस्सेदारी निभाई। खड़ी बोली के प्रारम्भिक गद्य पद्य लेखन का दायित्व पाण्डेय जी ने निभाया। पाण्डेय जी का जन्म गाँव में हुआ था और उनका लालन पालन भी, ऐसी स्थिति में पाण्डेय जी रचनाओं में ग्रामीण परिवेश को आत्मसात करती हुई उनकी रचनाएँ मन को छू जाती है जो उनेकी रचनाओं को पढ़ता है। पंडित लोचन प्रसााद पाण्डेय खड़ी बोली के समर्थ उन्नायक थे। पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय ने अपना स्थान न केवल द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि के रूप में बनाया, प्रत्युत उन्होंने एक गद्यकार के रूप में भी अपनी मौलिक प्रतिभा का परिचय दिया।

पंडित लोचन प्रसााद पाण्डेय का रचनात्मक विवेचन – पंडित लोचन प्रसााद पाण्डेय की 'दो मित्र' उपन्यास :- यह पाण्डेय जी पहली पुस्तक है। यह उनके द्वारा लिखा गया पहला उपन्यास भी है। इस पुस्तक का प्रकाशन 1906 के मुरादाबाद के लक्ष्मी नारायण प्रेस से हुआ था। इस ग्रंथ का परिचय सरस्वती में इस प्रकार छपा है 'पुस्तक पांडेय जी की पहली रचना होने पर भी शिक्षापूर्ण है।' कलिका प्रसाद दीक्षित ने इस उपन्यास का मूल्यांकन करते हुए लिखा है 'प्रान्त के द्विवेदी लेखकों द्वारा उपन्यास अधिक संख्या में नहीं लिखे गए, फिर भी उस समय के कुछ उपन्यासों की गणना अच्छे उपन्यासों में हो सकती है और कुछ में उपन्यास कला का विकास क्रम मिलता है। लोचन प्रसाद पाण्डेय का दो मित्र उपन्यास संभवत: इस प्रान्त के साहित्यकारों द्वारा लिखित उपन्यासों में सर्वप्रथम है। पांडेयजी ने इस उपन्यास में शराब सेवन से होने वाली बुराइयों का मार्मिक चित्र किया है।

पाण्डेय जी ने इसे काल्पनिक उपन्यास कहा है। उपन्यास में दो समानांतर कथाएॅ हैं। एक मुख्य कथा है दूसरी गौण। एक राजकुमार की कथा है तो दूसरी रामलाल और श्यामलाल की कथा है। दोनों कथाएॅ अपने अपने युग एवं काल का प्रतिनिधित्व करते हैं। उस समय उच्चवर्गीय शिक्षित समाज में पाश्चात्य सभ्यता का अधांनुकरण हो रहा था। इस विषय को भी उन्होंने लिया है। पाण्डेय जी ने यह बताया है कि हमें किसे अपना मित्र चुनना चाहिए, एक सच्चे मित्र का क्या कर्तव्य है। कठिन दुख के समय एक मित्र को किस प्रकार का आचरण करना चाहिए यह इस उपन्यास से प्रेरणा मिलती है।

प्रवासी – यह एक प्रबंध काव्य है इस पुस्तक का सृजन भी पांडेय जी ने 1907 में किया था इस पुस्तक में उन्होंने देश दशा, ग्राम्य-जीवन तथा गृह जीवन के महत्व पर प्रकाश डाला है उल्लेखनीय है कि उपयुक्त दोनों ग्रंथो की रचना के समय पाण्डेय जी की आयु 19 वर्ष की थी तथा वे सेंट्रल हिन्दू कालेज काशी के छात्र थे।

साहित्य सेवा – यह प्रहसन है। इस पुस्तक में गंभीर प्रवृत्ति के पांडेय जी का हास्य-व्यंग्य उजागर हुआ है। इसमें साहित्य सेवियों की दुर्दशा पर प्रकाश डाला गया हैं। अपनी आकर्षक एवं चुभती हुई संवाद योजना के कारण यह प्रहसन उस समय काफी लोकप्रिय हुआ था। साहित्य सेवा की दुर्दशा पर यह एक व्यंगात्मक रचना है। पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय सच्चे अर्थों में साहित्य सेवी थे। इस रचना में प्रत्यक्ष में तो हास्य व्यंग्य की छटा है किन्तु इस हास्य के पीछे रुदन का स्वर छिपा है, जो कठोर मेहनती और आत्म सम्मानी साहित्यकार होते हैं, उन्हें अनेक प्रकार के प्रकाशकों के ताने सुनने पड़ते हैं। पाण्डेय जी ने अपनी इस रचना में साहित्य के महत्त्व को प्रतिपादित करने का प्रयास किया है। साहित्य सेवा का मार्ग अत्यंत दुष्कर है। इसमें अनेक कठिनाइयाँ है। साहित्य प्रेमी अपने कार्य से मानसिक रूप से ही संतुष्ट रह सकता है क्यों कि अन्य सुविधाएँ उसे नसीब नहीं होती।

साहित्यकारों को अपनी साहित्य साधना जारी रखने के लिए किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, इसका उदाहरण भी पाण्डेय जी ने दिया है। कितने दु:ख की बात है कि जो साहित्य की सेवा करता है, और साहित्य सेवा के माध्यम से जन सेवा करता है, समाज उसकी उपेक्षा करता

है, उसे हीन दृष्टि से देखता है। वास्तव में पाण्डेय जी ने बहुत ही सूक्ष्म दृष्टि से इस बात का अवलोकन किया है और किस प्रकार एक साहित्यकार समाज में रहते हुए कठिनाइयों का सामना करते हुए अपने अस्तित्व को बनाए रखता है इसके बारे में पाण्डेय जी ने बताया है। सन् 1914 में पाण्डेय जी ने इसकी रचना की।

निष्कर्ष – पाण्डेय जी ने अपनी लेखनी विविध क्षेत्रों में चलाई है उनके द्वारा लिखी गई रचनाएँ, कवितायें, लेख नाटक, कोई भी भाषा में हो पर उनका बहुत महत्तव है। बीसवीं सदी में लिखी गई उनकी रचनाएँ आज भी पढ़ने में रोचक और ज्ञानवर्धक लगती है। उनकी अधिकांश रचनाएँ शिक्षा प्रद हैं जो हमें दिशा निर्देश देती हैं और जो हमें प्रेरित करती है चरित्र वान बनने के लिए उन्होंने ऐसी अनेक पुस्तकें लिखीं हैं जो पढ़ने में आज भी प्रासंगिक लगती है।

पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय जी ने लिखा है कि हमें कभी अभिमान नहीं करना चाहिए क्योंकि ये जीवन क्षणभंगुर है जो व्यक्ति ज्ञानी होता है वो इसका अभिमान नहीं करता और जो अभिमान करते हैं उनका कोई सत्कार नहीं करता है। हिंदी साहित्य में बाल साहित्य की रचना करने वाले कम रहे हैं और पाण्डेय जी उन गिने चुने कवियों में से एक हैं। बालकों के लिए उपादेय काव्य पुस्तक निकालने वाले पाण्डेय जी प्रथम कवि हैं। पाण्डेय जी के काव्य का उनके रचना जगत का समस्त पक्ष देखते हुए हम यह कह सकते हैं कि पाण्डेय जी ने परंपरा से हटकर अपने जीवन में साहित्य की अनमोल सेवा की। उन्होंने परम्परागत प्रचलित छंदों से हटकर नए छंदों में कवितायें लिखीं और उन छंदों को हिंदी में लोकप्रिय बनाया। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण वे हिंदी कालीन कवियों की अंग्रिम पंक्ति में परिगणित रहे। पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय ने साहित्य की नयी परम्पराओं को जन्म दिया। उन्होंने हिंदी में अंग्रेजी छंद सानेट लिखकर छंदों की दिशा में क्रांतिकारी परिवर्तन का सूत्रपात किया। पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय ने कविता के क्षेत्र में नयी शैली और भाषा के महत्व को अपनाया और उसे अपनी रचनाओं में स्थान दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तिवारी, राम चन्द्र (1972) – 'द्विवेदी युगीन काव्य' प्रथम संस्करण
2. द्विवेदी, महावीर प्रसाद – 'द्विवेदी काव्य माला'
3. पाण्डेय, ईश्वर शरण (2006) – 'बालपुर के पाण्डेय बंधु प्रथम संस्करण युगबोध डिजिटल प्रिंटर्स, रायपुर
4. पाण्डेय, ईश्वर शरण (2009) – 'पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय चयनिका' प्रथम संस्करण, छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी, रायपुर
5. पाण्डेय, लोचन प्रसाद (1910) – 'कविता कुसुम माला' इंडियन प्रेस, प्रयाग
6. पाण्डेय, लोचन प्रसाद (1915)– 'कृषक बाल सखा' जगन्नाथ प्रेस, बिलासपुर,
7. पाण्डेय, लोचन प्रसाद (1909)– 'नीति कविता', हरिदास एण्ड कम्पनी' कलकत्ता
8. पाण्डेय, लोचन प्रसाद (1997) – 'समय की शिला पर' (गुरूघासी दास विश्वविद्यालय का प्रकाशन, बिलासपुर) पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय जी की अंग्रेजी भाषा में लिखी आत्मकथा का हिंदी अनुवाद
9. पाण्डेय, लोचन प्रसाद (1920) – 'जीवन ज्योति'
10. पाण्डेय, लोचन प्रसाद (1914) – 'मेवाड़ गाथा' नरसिंह प्रेस कलकत्ता
11. पाण्डेय, लोचन प्रसाद (1912) – 'केदार गौरी', सरस्वती
12. छायावाद पुनर्मूल्यांकन(पंडित मुकुटधर पांडेय के संदर्भ में) (1995) – गुरू घासीदास विश्वविद्यालय बिलासपुर (छ.ग.)

****

मंगत रवीन्द्र के महाकाव्य प्रभात सागर का अध्ययन (संत गुरु घासीदास के विशेष संदर्भ में)

डॉ. रेखा दुबे* गणेश राम जांगडे **

शोध सारांश – सरिता की प्रवाहित धारा, समीर की निरंतरता, उदित रवि किरण, शशि की मनोहारी पुंज, इंद्रधनुष की अनुपम छटा, पुष्प की पावन परिमल, को कोई रोक नही सकता ऐसा ही एक साहित्यकार की साहित्यक प्रतिभा, कलाकार की कला पुष्प की तरह विकसित होती है। मंगत रवीन्द्र की प्रतिभा कला को इसी श्रेणी में प्रभात महासागर महाकाव्य का अध्ययन संत गुरु घासीदास के संदर्भ में रखा गया है। इन्होने अपने महाकाव्य में घासीदास के विविध सामाजिक अराजकता की स्थिति एवं उनसे किस तरह से छुटकारा पाने की प्रवृत्ति का वर्णन अपने महाकाव्य प्रभात सागर के माध्यम से किया है। जिसमें उसने उनकी सत्यता को सही एवं उचित ढंग से बखान कर उसका वर्णन किया है। इनकी प्रमुख कृतियॉ रतनजोत, छत्तीसगढ़ी भाषा व्याकरण, काव्य उर्मिला, कंचन पान, सतनाम सुधा, गुड़ ढिंढा, गीत गंगार, सुगंध धारा, दोहा मंजूषा, माता सेवा, मंगत रवीन्द्र बचपन से प्रतिभावान रहे। माता पिता भूमिहिन मजदूर थे। माता पिता की कृपा एवं स्वयं की मेहनत के बलबूतो पर इन्होने अपने मार्ग पर चले और सफलता की ओर अग्रसर भी हुए। इनका जन्म 04 अप्रैल सन् 1959 ग्राम गिधौरी कोरबा में हुआ। संघर्षो का सामना करते हुए उन्होने अपना अध्ययन किया और सफलता प्राप्त की।

प्रस्तावना – मंगत रवीन्द्र जी ने अपने महाकाव्य प्रभात सागर के माध्यम से संत गुरु घासीदास के बारे में जन्म से लेकर अंतिम क्षण तक का वर्णन विस्तार पुर्वक किया है। गुरु घासीदा द्धारा किया गया कार्य मानव जगत में व्याप्त वैमनस्य के तात्विक चिंतन से पूरित है। और इन्ही तात्विक चिंतन को पूर्ण करने के लिए संत गुरुघासी दास ने अपने सुविचारों के माध्यमों से सरलता और भाई चारा को विशेष महत्व प्रदान किया है। वास्तव में ज्ञान की प्राप्ति संतो की वाणी से आम जन मानस के लिए सहज एवं उचित होगा की उस मार्ग पर किस तरह से चल सकता है। और यही काम संत गुरु घासीदास ने आम जन मानस के लिए एक सच्चे पथ प्रदर्शक साबित हुए है। वह अपने विचारों का प्रमाण प्रस्तुत करते हुए अपने वाणी को अभिब्यक्त किया है। संत गुरु घासीदास का जन्म 18 दिसम्बर सन् 1756 को गिरौदपुरी में हुआ।

'वैचारिक क्रांति के जन्म दाता थे सद् गुरु घासीदास।
सतनाम ज्ञान के ज्योति जला के, मिटाया अंधविश्वास।।'

मंगत रवीन्द्र जी के कृतियों मनोरंजन के साथ–साथ सामाजिक परिवेश की कौतु हल स्थिति की रोचक साफ झलकती है। उसका सारा श्रेय मंगत रवीन्द्र के अनोखे और अप्रतिम बुद्धि बल का ही है। इन्होने सामाजिक समस्याओं को अपना क्षेत्र बनाकर नई क्रांति की जमीन तैयार की जहाँ तक रवीन्द्र जी के महाकाव्य प्रभात सागर की बात की जावे तो इसमें उन्होने संत गुरु घासीदास के सत्यता एवं समाज में व्याप्त कुसंगति को किस तरह से दूर किया है। इसके बारे में वर्णन किया है। साथ ही पशु के प्रति भी स्नेह की भावना का वर्णन है। मंगत रवीन्द्र का विचार है कि यह सृष्टि अपने आप में ही एक विचार है। और इनको जानना अत्यंत कठिन है। मंगत रवीन्द्र जी के महाकाव्य की सफलता का राज उनके अनुभव का होना है। प्रभात सागर ऐसा महाकाव्य है जो कि सतनाम समाज के लिए बहु उपयोगी और मार्ग दर्शक के रुप में है। इसकी भाषा शैली सरल सुबोध और बोधगम्य है। छंद, मात्रा, लय और ध्वनि एवं भाव के मोह वश पर्यायिक शब्दो का प्रयोग किया गया है। यह महाकाव्य ज्ञान विवेक और ऊर्जा का स्त्रोत है, जो कि समाज में व्यप्त कुरितियो को नि:सन्देह दूर करने में बहुत बड़ी भुमिका को निभा रहा है। गुरु घासीदास जी ने सत्य अहिंसा का मार्ग अपनाकर स्वान्त् सुखाय के साथ मानव समाज को नई दिशा एवं मानवीय गुणो से युक्त एक नयी किरण जगायी है। महाकाव्य प्रभात सागर में कुल सात प्रभात है। जिसमें प्रथम प्रभात में आरती से लेकर नारि धर्म का वर्णन है। द्धितीय प्रभात में सत्पुरुष अवतार पूर्व घटना, तृतीय प्रभात में गुरु घासीदास जी का जन्म और बाल लीलाएँ, चतुर्थ प्रभात में किशोर लीलाएँ, पंचम प्रभात श्री घासीदास की तपस्या एवं सिध्दि का वर्णन, षष्टम प्रभात गुरु घासीदास जी की कर्म भूमि की लीलाएँ एवं सप्तम प्रभात में सतनाम यात्राओं का क्रमश: वर्णन किया गया है।

'सत्यं धर्म: सत्यम् व्रत: सत्यहि यस्य जीवनम् ' (मनोहर दास नरसिंह)

अर्थात् सत्य ही धर्म है, सत्य ही व्रत है, तथा सत्य ही जीवन है। प्रभात सागर में विश्व को प्रकाशित करने वाले गुरु की महत्ता को दर्शाया गया है। गुरु की महिमा अलौकिक होती है, बिना गुरु के भव सागर से पार करना असम्भव है। जिस प्रकार भीषण गर्मी से धरती नदी, नाले वनस्पतियाँ सुख जाती है, और वर्षा की बुंदो से धरती हरी भरी हो जाती है। पशु पक्षी प्रफुल्लित हो जाते है, वन और बागों में नई कोपलें फुटने लगती है। ठीक उसी प्रकार गुरु का सानिध्य प्राप्त होने से व्यक्ति अपनी दुर्बुद्धि खो देता है। और सत् बुद्धि को प्राप्त करने लगता है। वाणी की मधुरता उतनी ही जरुरी है, जितना स्वाद में मीठा अर्थात् हमें ऐसी वाणी का प्रयोग करनी चाहिये जो सुनने में सुखदायक हो इस प्रकार गुरु घासीदास जी ने अपने विभिन्न उपदेशों के

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

माध्यम से समाज को दिशा प्रदान की और उन्हे सत्गति प्राप्त करने के के लिए मार्ग दर्शन प्रदान किया।

निष्कर्ष – मंगत रवीन्द्र के महाकाव्य प्रभात सागर में जो संतो की वाणी सत्यता भरी योगदान आम जन मानस के लिए उत्सुकता भरी योगदान रहा है। अपनी युवा अवस्था से लेकर गरीबी परिवेश पर इस महाकाव्य की रचना कर पाना बहुत ही कठिन काम रहा है। लेकिन उन्होने उस समाजिक वैमनस्य की स्थिति को सहकर प्रभात सागर महाकाव्य के माध्यमों से उन्होने संत गुरु घासीदास के सम्पूर्ण लीलाओं का बखान किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. खरे गणेश, 1983 सतनाम सुनील साहित्य सदन रायपुर
2. जोशी दादू दयाल, 2001 सत्य ध्वज पत्रिका
3. जांगड़े पं. मोती चरण 2001, गुरु घासीदास देव अमर ग्रंथ
4. नृसिंह श्री मनोहर सिंह 2002, सतनाम मणीमाला
5. मनहर राज राजमहंत मुन्नू राम 2003 गुरु घासीदास जीवन परिचय
6. मिश्र सुभाष 2000 छ.ग. में सामाजिक जागृति के प्रणेता

****

ओमप्रकाश वाल्मीकि के साहित्य का अध्ययन (दलितो के विशेष संदर्भ में)

डॉ. रेखा दुबे* सरोजनी सोनी **

शोध सारांश – पिछले दशक के हिन्दी साहित्य की एक महत्वपूर्ण घटना है, दलित साहित्य का उभार यद्यति आज के दलित साहित्य के लेखन में अनेक पीढ़ीयो के रचनाकार सक्रिय है, लेकिन उनमें से अधिकांश का साहित्य सन्1990 के बाद ही प्रकाशित हुआ है। दलित साहित्य में कविता, उपन्यास, नाटका, कहानी, जीवनी और आलोचना का लगातार प्रकाशन हुआ है, विभिन्न पत्रिकाओ के दलित साहित्य विशेषांक भी निकले है। दलित साहित्य का आलोचना केवल हिन्दी तक सीमित नही है बल्कि यह एक अखिल भारतीय आन्दोलन है और इस अखिल भारतीय आन्दोलन में सक्रिय एवं महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले ओमप्रकाश वाल्मीकि जी का विशेष रूप में अग्रणी स्थान है। ओमप्रकाश वाल्मीकि दलित साहित्य जगत के लिए सुपरिचित हस्ताक्षर है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि जी का जन्म 30 जून 1950 बरला, मुजफ्फरनगर, उतरप्रदेश भारत में हुआ उनका शिक्षा एम.ए.हिन्दी था, प्रकाशित कृतियाँ : कविता संग्रह – सदियो का संताम, बस्स, बहुत हो चुका, आत्म कथा –जुठन, कहानी संग्रह – सलाम, घुसपैठिए, आलोचना, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, डॉ.अम्बेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार, साहित्य भूषण पुरस्कार से सम्मानित हुए है।

प्रस्तावना – वाल्मीकि जी के दलित चेतना के प्रति तीव्र उत्सुकता और सतर्क संवेदनशीलता है, इसलिए वाल्मीकि अपनी रचनाशीलता के सामने खड़ी चुनौतियो का सामना करने मे सक्षम है । उनमें मनुष्य की प्रतिष्ठा है, जाति की पीड़ा है, वर्ण व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह है । समनावादी समाज की परिकल्पना है, मुक्ति संग्राम है, स्वतंत्रता की आकांक्षा है, भातृत्व है, लोकतांत्रिक आस्थाएं है । चुनौतियो से मुकाबला करने का साहस है, संघर्ष है । स्वाभिमान का बोध है और समाजिक परिवर्तन का लक्ष्य है ।

साहित्य के क्षेत्र में – ओमप्रकाश वाल्मीकि का हिन्दी साहित्य में प्रतिष्ठित स्थान है । जीवन की अनुभूतियो एवं हृदय की पीड़ा उन्हे साहित्य के क्षेत्र में शब्द विधान करने के लिए प्रेरित करती है। उनका साहित्य उनके द्वारा भोगे हुए यथार्थ का प्रतिनिधि है। वाल्मीकि जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार है। उन्होने कविता,कहानी,आत्मकथा आदि विद्याओ पर अपनी लेखनी चलाई है। साथ – साथ उन्होने आलोचना ,अनुसंधान ,अनुवाद सम्पादन आदि क्षेत्रो में भी अपना बहुमूल्यवान योगदान दिया है।

कविता संग्रह – सदियो का संनाप, बस्स ! बहुत हो चुका अब और नही

कहानी संग्रह – सलाम, घुसपैठिये, सलाम दलित जीवन का आईना है, इस कहानी संग्रह में कुल चौदह कहानियां हैं ।सलाम, बिरमबहु पच्चीस, चौका डेढ़ सौ इस संग्रह की चर्चित कहानियां है। सभी कहानियो में उपेक्षित और वचित दलित जीवन के विविध पक्षो को प्रस्तुत किया गया है। उन्होने दलित जीवन के पीड़ा संत्रास और छटपटाहट, जीवन की विवश्ता को रचनात्मक रूप प्रदान किया । उन्होने शोषित जन समूह के अस्मिता को उभारा और समाज की विसंगतियो पर प्रहार किया ।

घुसपैठिए एक ऐसी कहानी है जो मेडिकल कॉलेज के दलितो छात्रो पर लिखी गई है। जो वाल्मीकि जी ने इस कहानी द्वारा समाज में फैली जाति व्यवस्था को प्रकाश में लाने का प्रयास किया है। मेडिकल कॉलेज के एक–एक दलित छात्र कैसे बली की वेदी पर चढ़ता है । क्या दलित डॉक्टर या इंजिनियर नही बन सकते ? उनके दलित होने के कारण उन्हे आरक्षण मिलता है ,तो इनमें उनका क्या दोष ? कहानी में इन्ही सवालो को उढ़ाने का प्रयास हुआ है।

आत्मकथा – जुठन – जुठन समाजिक सडांघ को उजागर करने वाले दलित लेखन ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा है। लेखक के शब्दो में – दलित जीवन की पीड़ाए असहनीय और अनुभव –दग्ध है। ऐसे अनुभव जो साहित्य अभिव्यक्तियो में स्थान नही पा सके । एक ऐसी समाज व्यवस्था में हमनें सासे ली है जो बहद क्रुर और अमानवीय है। दलितो के प्रति असंवदेनशील भी।

आलोचनात्मक साहित्य – दलितो साहित्य का संदर्भशास्त्र सफाई देवता,मुख्य धारा और दलित साहित्य, नाटक, अनुवाद, पत्रपत्रिकाएं, सम्पादन इत्यादि क्षेत्रो में, ओमप्रकाश वाल्मीकि जीने योगदान दिये है ।

निष्कर्ष – ओमप्रकाश वाल्मीकि दलित साहित्य लेखन के अग्रणी कवि है, उन्होने दलित साहित्य के कवि के रूप में ही नही बल्कि कहनी, आलोचना के क्षेत्र में भी अपनी समर्थ पहचान बनाई है। उन्होने नाटक तथा आत्मकथा लिखकर दलित साहित्य लेखन में अपनी विशिष्टता का परिचय दिया है। दलित समाज में जन्मे, पले और बडे हुए ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपने साहित्य में 'दलित' भावना को प्रस्थापित किया है,जिसको समाज देखकर भी अनदेखा कर रहा था । वाल्मीकि जी ने दलित समाज की पीड़ा और आक्रोश को अपने साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. स्लाम ओमप्रकाश वाल्मीकि

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

2. दलित समाज दशा और दिशा –डॉ. राजवीर सिंह
3. घुसपैठिये – ओमप्रकाश वाल्मीकि
4. ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियो में समाजिक लोकतांत्रिक चेतना – सं. हरपाल सिंह ,अरूष
5. जुठन – ओमप्रकाश वाल्मीकि

****

चीन में बौद्ध आचार्य और दार्शनिक

डॉ. पूर्णिमा शर्मा *

शोध सारांश – छठी शताब्दी ई.पू. को धार्मिक क्रांति का युग मानने में हमें जो प्रेरणा बौद्ध धर्म के अभ्युदय से होती है, उतनी अन्य किसी धर्म से नहीं इसका प्रमुख कारण यह है कि इस धर्म ने विश्व के अधिकांश भागों को प्रभावित किया था और इसके अमर संदेश से सम्पूर्ण विश्व को शांति स्थापना की प्रेरणा मिली थी। धम्म के प्रचार के लिए महात्मा बुद्ध ने देश के कोने-कोने में पदयात्राएँ की। उनके शिष्यों ने भी इस प्रचार कार्य को आगे बढाया।
शब्द-कुंजी – बौद्ध आचार्य, चीनी, ग्रंथ, संस्कृत, प्रतिभा, कीर्ति।

प्रस्तावना – गुप्त युग में अनेक बौद्ध आचार्य और भिक्षुगण भारत से बाहर हिमालय की उंची श्रेणियों और शिखरों को तथा अगाध समुद्र को पार कर अन्य देशों में बौद्ध धर्म के प्रचार तथा भारतीय संस्कृति के प्रसार हेतु अदम्य उत्साह से गए। चीन में भी ऐसे बौद्ध भिक्षु, आचार्य और दार्शनिक भारत से पहुँचें और बौद्ध धर्म के संस्कृत और पाली ग्रंथों के प्रामाणिक अनुवाद चीनी भाषा में प्रस्तुत किए। इन बौद्ध आचार्यो और विद्वानों में गौतम संघदेव, कुमारजीव, बुद्धभद्र, बुद्धयश, धर्मरक्ष, गुणवर्मन, गुणभद्र, बौधिधर्म, संघपाल आदि अधिक प्रसिद्ध हैं। जिन मूल संस्कृत के ग्रंथों का इन्होंने चीनी भाषा में अनुवाद किया था, वे ग्रन्थ आज भारत में उपलब्ध नहीं है, परन्तु उनमें से कई ग्रंथों के चीनी अनुवाद आज प्राप्त है।

प्रमुख बौद्ध दार्शनिक निम्नलिखित हैं :

1. **गौतम संघ देव :** चीनी विद्वानों ने गौतम संघदेव की गणना बौद्ध धर्म के महान आचार्यों में की है। बौद्ध धर्म के प्रचार हेतु वह भारत से चीन गया और सन् 381 में वह दक्षिण चीन पहुँचा और बाद में चंगमान और नानकिंग भी गया। उसकी विद्वता, प्रतिभा और धर्म निष्ठा से प्रभावित होकर उसके निवास और अध्ययन-अध्यापन के लिए बौद्ध मठ का निर्माण किया गया। वह संस्कृत और चीनी भाषा का प्रकाण्ड विद्वान था। उसने कुछ महत्वशाली बौद्ध ग्रंथों का चीनी भाषा में स्वयं अनुवाद किया और कुछ बौद्ध ग्रंथों का अनुवाद अपने विद्यार्थियों की सहायता से सम्पन्न किया।

2. **बुद्धयश :** इसका जन्म काश्मीर के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। विदेशों के बौद्ध धर्म के प्रचार हेतु वह काशगर पहुँचा। वहाँ 10 वर्ष तक धर्म का प्रचार करने के बाद वह काशगर से कूचा होता हुआ चीन पहुँचा। वहाँ वह कुमारजीव के सम्पर्क में आया और उसके साथ रहकर बुद्धयश ने कई बौद्धग्रन्थों का चीनी भाषा में अनुवाद किया। कुमारजीव के देहावसान के बाद वह चीन से काश्मीर लौट आया था। मध्य एशिया एवं चीन में बौद्ध धर्म के प्रचार हेतु एवं बौद्ध ग्रंथों का चीनी अनुवाद हेतु बुद्धयश सदा चिरस्मरणीय रहेगा।

3. **गुणवर्मा :** यह काश्मीर के राजवंश से संबंधित था। बौद्ध धर्म के प्रचार हेतु वह काश्मीर से लंका और वहाँ से जावा चला गया। यहाँ जावा के राजवंश के सभी सदस्यों ने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया। जब उसकी विद्वता और प्रतिभा की कीर्ति चीन पहुँची तब नानकिंग के बौद्ध संघ ने चीनी सम्राट से निवेदन किया कि वह गुणवर्मा को चीन आमंत्रित करे। फलत: चीनी सम्राट के अनुरोध पर गुणवर्मा सन् 431 में नानकिंग पहुँचा, जहाँ राज्य की ओर से उसके निवास के लिए एक विशिष्ठ मठ निर्मित किया गया। उसने ग्यारह बौद्ध ग्रन्थों का चीनी भाषा में अनुवाद किया।

4. **धर्मक्षेम :** बौद्ध धर्म में दीक्षित होने के बाद वह बौद्ध धर्म के प्रचार हेतु काश्मीर, कुचा होता हुआ चीन पहुँचा। बौद्ध धर्म के प्रचार के साथ साथ उसने सन् 414 से 432 तक कई बौद्ध ग्रन्थों का चीनी भाषा में अनुवाद किया। सन् 432 में उसने चीन के स्थानीय शासक से भारत लौटकर कुछ प्रसिद्ध बौद्ध ग्रन्थों की पांडुलिपियाँ लेकर पुन: चीन आने की अनुमति मांगी किन्तु चीनी शासक ने उसे अनुमति नहीं दी। इसकी उपेक्षा करके धर्मक्षेम सन् 434 मे भारत के लिए चल पड़ा। नाराज होकर चीनी सम्राट ने उसका वध करवा दिया।

5. **कुमारजीव :** कुमारजीव के पिता कुमारायण बौद्ध भिक्षु होकर भारत से बाहर चीनी तुर्किस्तान में कूचा चले गए। कूचा नरेश ने इनकी विद्वता से प्रभावित होकर इनको राजगुरू के पद पर नियुक्त किया और कालांतर में अपनी पुत्री जीवा का विवाह इनसे कर दिया। कुमारायण और जीवा के पुत्र थे – कुमारजीव। सात वर्ष की आयु में कुमारजीव बौद्ध भिक्षु बन गए। कश्मीर में बौद्ध धर्म की शिक्षा ग्रहण करने के उपरांत कूचा लौट आए और तीस वर्ष तक वहीं रहें। 383 ई. में चीनी सेनापति ने कूचा पर आक्रमण करके वहाँ के अन्य कई व्यक्तियों के साथ कुमारजीव को भी बंदी बना लिया। कुमारजीव को चीनी सम्राट के सम्मुख प्रस्तुत किया गया। चूँकि कुमारजीव की कीर्ति चीन पहुँच चुकी थी इसलिए चीनी सम्राट ने उसे बंदीगृह से मुक्त कर राजधानी में रखकर उन्हें उच्च गुरू के पद पर नियुक्त किया। उन्होंने चीन में बौद्ध धर्म का उपदेश दिया और बौद्ध धर्म के अनेक ग्रन्थों का चीनी भाषा में अनुवाद किया। विभिन्न ग्रंथों के अनुवाद कार्य के लिए कुमारजीव की सहायता के लिए 800 बौद्ध भिक्षु नियुक्त किए गए और कुमारजीव के द्वारा कई भारतीय बौद्ध विद्वान चीन में आमंत्रित किए गए। कुमारजीव के अनुरोध पर पुण्यजात, संघभूति, बुद्धयश, गौतम संघदेव, धर्मयश, विमलाक्ष, बुद्धजीत, गुणवर्मन, गुणभद्र और बुद्धवर्मन विशेष उल्लेखनीय हैं। कुमारजीव के पर्यविक्षण में 106 संस्कृत के प्रामाणिक बौद्ध ग्रंथों का चीनी भाषा में अनुवाद किया गया। चीन में ही सन् 413 ई. में कुमारजीव का देहावसान हुआ। चीन में आए हुए बौद्ध आचार्य और प्रचारकों में कुमारजीव सबसे अधिक प्रसिद्ध माने जाते हैं।

6. **परमार्थ :** परमार्थ मालवा के उज्जैन के निवासी थे। अपनी शिक्षा

* सह-प्राध्यापक (इतिहास) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

समाप्त करने के बाद परमार्थ पाटलिपुत्र चले गए। वहाँ बौद्ध धर्म के प्रकाण्ड विद्वान के रूप में इनकी प्रसिद्धि फैल चुकी थी। सन् 538 में चीन के धर्मप्रेमी सम्राट उटी ने विद्वानों का एक दल भारत से बौद्ध धर्म के संस्कृत ग्रंथों को लाने के लिए भेजा। वह परमार्थ की कीर्ति सुनकर चीनी विद्वानों ने पाटलीपुत्र नरेश से परमार्थ को चीन भेजने का निवेदन किया। फलत: परमार्थ इस दल के साथ चीन चले गए। सन् 548 ई. में वे नानकिंग चले गए। वह 20 वर्ष तक रहकर उन्होंने लगभग 70 ग्रंथो का अनुवाद चीनी भाषा में किया। उनके द्वारा अनुवादित मूल संस्कृत ग्रंथ आज उपलब्ध नहीं है, किन्तु चीनी भाषा में अनुवादित ग्रंथ आज भी विद्यमान है। महत्वपूर्ण ग्रंथ इस प्रकार है – महायान, श्रद्धोत्पाद शास्त्र, संधिनिर्मोचन सूत्र, छेदिका प्रज्ञा पारमिता सूत्र, विज्ञप्ति मातृतासिद्धी, अभिधर्म कोष व्याख्या, लक्षणानुसार शास्त्र आदि। इसके अतिरिक्त इन्होंने ईश्वर कृष्ण के ग्रंथ सांख्यकारिका और संभवत: माठराचार्य की वृत्ति के साथ चीनी भाषा 'सुवर्णसप्तति शास्त्र' के नाम से अनुवाद किया। इन्होंने वसुबंधु का जीवन चरित्र भी लिखा। लगभग बीस वर्षो तक अनुवाद का और साहित्यिक ग्रंथों की रचना का कार्य करते रहने के बाद सन् 518 में चीन में कैण्टन मे इनका देहावसान हुआ।

7. जिनगुप्त : इनका जन्म कंधार और शिक्षा पुरूष पर में हुई थी। सत्ताईस वर्ष की उम्र में बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए वह कपिशा, ताशकुर्धान, खोतान होता हुआ 557 ई. में चीन पहुँचा। यहाँ उसके निवास और अध्ययन के लिए राज्य की ओर से एक बौद्ध विहार निर्मित किया गया। यहाँ रहकर जिनगुप्त ने कुछ बौद्ध ग्रंथों का चीनी भाषा में अनुवाद किया। कुछ समय तुर्की रहने के बाद चीनी सम्राट के आमंत्रण पर वह पुन: चीन लौट आया। सन् 585 तक उसने चीन में रहकर अनुवाद कार्य किया।

8. धर्मगुप्त : यह गुजरात का निवासी था। कन्नौज में रहकर बौद्ध धर्म ग्रंथों का अध्ययन कर वह बौद्ध भिक्षु बन गया। बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए कपिशा, तुखार, बदक्शा, बखान, ताशकुर्धान, काशगर होते हुए कूचा चले गए। सन् 590 में वे चंगगन पहुँचे। यहाँ कई वर्षो तक बौद्ध धर्म का प्रचार और प्रसार करते रहे और इसके बाद वह लो–यंग चले गए जहाँ सन् 610 में उनका देहावसान हो गया। अनेक बौद्ध ग्रंथों का उन्होंने चीनी भाषा में अनुवाद किया।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि भारत की आध्यात्मिक धन संपदा के प्रसार में धर्म गुरुओं की महती भूमिका रही है। यद्यपि इन बौद्ध विद्वानों, आचार्यो और भिक्षुओं की कीर्ति भारत में लुप्त हो गयी है, परंतु चीन में आज भी वह विद्यमान हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रबोधचन्द्र बागची – इंडिया एण्ड चायना
2. प्रभात कुमार मुकर्जी – इंडियन लिटरेचर अब्राड
3. बी.एन. लूणिया – गुप्त साम्राज्य का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास
4. रमेषचन्द्र मजूमदार – क्लासिकल एज
5. बुद्धप्रकाश – स्टडीज इन इंडिया हिस्ट्री एण्ड सिविलाईजेशन
6. परमेश्वरीलाल गुप्त – गुप्त साम्राज्य
7. यू.एन.घोशाल – स्टडीज इन इंडियन हिस्ट्री एण्ड कल्चर

****

Indian Naval Forces : Making nations sea power formidable and future alert - A Naval Build-up

Santosh Ambhore* Ashok Sharma**

Abstract - The Indian Navy has been focusing on developing indigenous platforms, systems, sensors and weapons as part of the nation's modernisation and expansion of its maritime forces. As of 2014 the Indian Navy has 41 vessels of various types under construction, including an aircraft carrier; destroyers; frigates; corvettes; and conventional-powered and nuclear-powered submarines. In 2013 a senior naval official, Rear Admiral Atul Kumar Jain, outlined the Indian Navy's intention to build a 200 ship navy over a 10-year period. According to Chief of Naval Staff, India has transformed from a buyer's navy to a builder's navy. All 41 ships under construction are being produced in Indian shipyards, both publicly and privately owned. However some projects have suffered from long delays and cost overruns. Among the many factors influencing the need for modernization of our naval forces, the looming threat of nations with their own political agendas is especially significant. The freedom of access offered by seas to every nation of the world makes it imperative for us to have a ready, capable force at all times. Ideally, the Indian naval force is expected to become a strong maritime power by 2030. While there have been delays in projects, the country is gradually inching towards that goal and stands ready to face potential threats.

Key Words - Indian Ocean, Indian Navy, Modernization, Defence, two-front war.

Introduction - The Indian Navy's Foray into indigenisation began over five decades ago with the design and construction of warships in the country. Today, forty eight of its state-of-the-art ships and submarines are under construction in Indian shipyards, both public and private, a clear reflection of the Indian Navy's enduring support to India's indigenous warship building endeavour. While much has been achieved in our pursuit of indigenisation over the past decades, the time is now ripe for launching into a new phase of self-reliance by manufacturing technologically advanced equipment within India, in pursuance of the Government of India's vision of 'Make in India'. Recognising this, the Indian Navy has embarked upon an initiative to evolve a guideline document, the "Indian Naval Indigenisation Plan (INIP) 2015-2030", to enunciate the need for developing various advanced systems for its platforms. This document supersedes the Indigenisation Plan published in 2008 for the period 2008-2022. This document is aimed to enable indigenous development of equipment and systems over the next 15 years. It attempts to formulate the requirements of Indian Navy and lists out the equipment which can be taken up for indigenisation in the coming years. It is expected that release of this plan would further synergise Indian Navy's relationship with the industry and encourage all sectors of industry to come forward and participate in indigenous development of weapons, sensors and other high end equipment for the Indian Navy, thereby making the nation self-reliant in this vital domain of defence technology

The Indian Navy is the naval branch of the Indian Armed Forces. The President of India is the Supreme Commander of the Indian Navy. The Chief of Naval Staff, a four-star admiral, commands the navy. The Indian Navy traces its origins back to the *East India Company's Marine* which was founded in 1612 to protect British merchant shipping in the region. In 1793, the East India Company established its rule over eastern part of the Indian subcontinent i.e. Bengal, but it was not until 1830 that the colonial navy was titled as *His Majesty's Indian Navy*. When India became a republic in 1950, the *Royal Indian Navy* as it had been named since 1934 was renamed to *Indian Navy*. The primary objective of the navy is to safeguard the nation's maritime borders, and in conjunction with other Armed Forces of the union, act to deter or defeat any threats or aggression against the territory, people or maritime interests of India, both in war and peace. Through joint exercises, goodwill visits and humanitarian missions, including disaster relief, Indian Navy promotes bilateral relations between nations. As of 1 July 2017, 67,228 personnel are in service with the Navy As of March 2018, the operational fleet consists of one aircraft carrier, one amphibious transport dock, eight landing ship tanks, 11 destroyers,13 frigates, one nuclear-powered attack submarine, one ballistic missile submarine, 14

*Department of Chemistry, Government Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA
** Department of Military Science, Government Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA

conventionally-powered attack submarines, 22 corvettes, one mine countermeasure vessel, four fleet tankers and various other auxiliary vessels.

The Indian Navy has been focusing on developing indigenous platforms, systems, sensors and weapons as part of the nation's modernisation and expansion of its maritime forces. As of 2014 the Indian Navy has 41 vessels of various types under construction, including an aircraft carrier; destroyers; frigates; corvettes; and conventional-powered and nuclear-powered submarines. In 2013 a senior naval official, Rear Admiral Atul Kumar Jain, outlined the Indian Navy's intention to build a 200 ship navy over a 10-year period.[1] According to Chief of Naval Staff Admiral RK Dhawan, India has transformed from a buyer's navy to a builder's navy. All 41 ships under construction are being produced in Indian shipyards, both publicly and privately owned. However some projects have suffered from long delays and cost overruns. Increasing Chinese People's Liberation Army Navy interest in the Indian Ocean region has led the Indian Navy to invest more in anti-submarine ships, such as the *Kamorta*-class corvette, long-range maritime reconnaissance aircraft, and ships such as the *Saryu*-class patrol vessel and unmanned aerial vehicles such as the IAI Heron-1. However the lack of a strong submarine fleet has diminished its capabilities to some extent.

Modernization of Indian Naval Forces - The maritime environment of the 21st century is highly complex, influenced by constantly varying political and socio-economic currents. Technology plays an indivisible role in determining the strength of the maritime forces today making it evident that modernization is the way forward if a nation aims to establish and maintain supremacy over the waters. When it comes to shipping, modernization is not limited to the huge frigates or stealth submarines. It encompasses all relevant spheres, from smaller boats, infrastructure, logistics and operations, to ports and service centres. Modernization entails a whole change in the basic approach towards boat building, right down to the basics. As one of the leading maritime nations in the world, India has embraced modernization as well, with the intention of becoming a technically strong adversary along its complete coastline. Seeing these intense preparations for a modern, technologically advanced navy, one wonders what the reason is, for all these efforts – or in other words, what is the need for modernization. Add to that the fact that modernization of varying levels is implemented across all the different naval powers functioning in India, such as the Indian navy, the Indian Coast Guards (ICG), the Border Security Force (BSF), and the merchant navy to name a few.

Among the many factors influencing the need for modernization of our naval forces, the looming threat of nations with their own political agendas is especially significant. The freedom of access offered by seas to every nation of the world makes it imperative for us to have a ready, capable force at all times. Maritime terrorism and piracy have increased over the years as well, which threaten the social integrity of our civilization. The rampage of these activities at sea causes great loss of life and property to the detriment of the economy. To combat these activities, a modern naval force is a must. The third reason is maritime diplomacy and regional expansion for safeguarding trade at sea. We know that 90% of India's trade by volume is carried out by sea. The security of these goods and their efficient transportation depends to a great extent on the efficiency of the ship. Consequently, this requires modernization. Last, but not the least, environmental considerations are a major factor influencing modernisation. Green is the new blue is gradually becoming the new mantra, as the fleet of the future is expected to be much more fuel-efficient and non-polluting than the ones we see currently. The Indian Navy is chiefly responsible for handling the military activities in our ocean territories. Consequently, the drive towards modernization has been from a military perspective, aimed at making India a strong maritime military power by 2030. According to the Maritime Security Strategy published in 2016, the Indian Navy has evolved over the years to become a multi-dimensional force, with a combination of ships, boats, submarines, and aircraft having strong satellite communication systems. Indigenization for self-reliance and self-sufficiency is one of the primary approaches under this modernization effort, as is maritime domain awareness, power projection, and sea control. To this end, some of the projects that are on the naval horizon are:

- **Indigenous Aircraft Carrier –** The INS Vikrant is under construction at the Cochin Shipyard, expected to be complete by 2023. The feasibility study for IAC-2 is also underway
- **Projects 15A and 15B –** These ships are follow-ons to the *Delhi* class destroyers, under development at Mazgaon Docks Limited, Mumbai.
- **Project 17A –** Seven stealth frigates of the *Shivalik* class are under construction at government and private docks.
- **Project 75 and 75(I) –** The projects helms the development of 6 Scorpene submarines, some in collaboration with international manufacturers, under construction at Mumbai. The first of these, the INS Kalvari was launched in 2015.
- **Immediate Support Vessel –** These are rescue boats equipped with modern life-saving equipment and made of sustainable material. An order for 14 ISVs was placed at SHM Shipcare, out of which 11 have been commissioned.
- **Training Ship –** Three new training ships are under construction at ABG Shipyard, Surat. It is evident that the Indian Navy is implementing a multi-pronged plan in developing national capabilities and simultaneously improving the supporting infrastructure for a holistic approach towards surface combat modernization.

Challenges for Modernization - The road for overcoming

challenges for naval modernization is far from smooth. The modernization of coastal protection forces is hampered by a lot of factors, some of which are discussed here.

1. Project Delays due to Limited Capital Allocation - The capital allocation for naval modernization has been sluggish over the years, with budget constraints leading to slashed quotas. As a result, several projects are being stalled or delayed indefinitely, till the projected expenses fall in place. This includes the postponing of several high-profile ships of the Indian fleet, which are expected to play an important role in bolstering the naval military strength.

2. Shortcomings of Existing Coast Protection - Despite the current three-tier structure of coastal protection, there have been glaring slips through the levels of the defence. There are many instances in the recent past where small boats and rouge ships have travelled close to coastline before being detected by fishermen or locals. These incidents expose the glaring shortcomings of the coastline protection forces, which does not seem to have improved although the number of boats and patrols is supposed to have increased.

3. Inadequate Training - The lack of training of coastal personnel in the new technology being implemented on boats is also one of the reasons why modernization is hampered. For efficient operation, training is a must. However, as the number of people available to train personnel is less, advanced technology cannot be used on the boat, which in turn leads to aversion towards technology.

Making India's sea power formidable and future-ready - China's growing interests, ambitions and military capabilities pose challenges for India. This paper examines China's maritime interests and the dynamics of Indian responses at the maritime operational levels. The paper examines opportunities to counter China in the IOR, as well as options for the Indian Navy in the South China Sea. At operational levels, the Navy may need to think differently about ASW, carrier operations and power projection, expeditionary capabilities as well as in space and cyber-warfare. In order to become formidable and future-ready, The Navy may have to think afresh about opportunity costs for force-structures that would be needed for greater effectiveness in likely future operational and tactical environments. The Indian Navy has been nurtured well and, when combined with agile force structuring, greater jointness, leveraging statecraft and maritime geography, it could become even more formidable and future-ready.

India and China will both observe their centennials in 2047 and 2049, respectively. In China's case, much of the world is already aware of the upcoming landmark year and the determined way in which Chinese leadership has steered the ship of state towards great power, especially in the last three decades. India, meanwhile, is on the slower track, steering steadily, but with less vigour. Indeed, there are far fewer "Project 2047" watchers in the scholarly world as there are for "China 2049". In the next two decades, China is certain to be even more deeply involved as a geopolitical and geo economic player in the entire IOR, as well as beyond the littoral into the African continent and deeper into West Asia. Neither the colonial period of competing empires, nor the American spread of influence during the Cold War provides much that is comparable. The Belt and Road Initiative (BRI) and its flagship, the China Pakistan Economic Corridor (CPEC), would be two major conduits for commerce and strategic influence. Never before has a synthesis of Mackinder Mahan and Spy man enabled any nation or empire to potentially straddle such a vast multi-continental expanse. This is not to say that the political and social dimensions of influence could be akin to what European empires had within their colonies. Neither would it be more biased towards the type of politico- military influence that the US had upon many regimes in the decades after World War II. Shah's Iran, some other West Asian countries, Pakistan, and the Philippines are some examples. It may be said that eventually the Chinese would be in a position to call the shots and pull strings in several countries in the IOR/ Indian Ocean Rim Association for Regional Cooperation (IOR-ARC). This would be an amalgam of some of the colonial as well as American influences that have been mentioned. There is, however, an important consequence for the world in general. It is that China's ambitious grand strategy will inevitably have to be underwritten by military power. For India, for other democracies or indeed for nations within Asia-Indo-Pacific, to pretend or hope that it would not be so could be an egregious "postponement of precaution."

The sobering arithmetic of a two-front war - As India's relations with both China and Pakistan continue to deteriorate, the country's policy-makers must contemplate the unpleasant possibility of a 'two-front' war with both countries. Whether or not such a war would be overtly collusive between China and Pakistan – that is, whether they would pre-plan a joint attack on India or it would be a case of strategic opportunism – it is clear to many in positions of authority that the Indian military remains fundamentally unprepared for such a challenge. But it can also be argued that a two-front force ratio (ratio of Pakistani and fraction of Chinese inventories to India's) has evolved and varied considerably over time, as China continues to rapidly modernise and numerically increase its military (through significant increases in defence spending) while Indian military preparedness flounders. In this report, such an evolution and variation of a two-front force ratio is quantitatively examined using time-series data constructed from ten IISS *Military Balance* volumes, from 2008 to 2017, with the assumption that the data are accurate and consistent across years. The key finding of the report is that this force ratio – never in India's favour to begin with – is currently shifting in favour of the adversary both for the Indian Army as well as – more strikingly – for the Indian Air Force, even after considering smaller fractions of the Chinese military involved in a two-front conflict. The naval picture, when it comes to the time-series trends, is

marginally better than that of the other two services, though the force ratios themselves remain problematic for India. The report also includes the overall nuclear balance between India, Pakistan, and China, for the sake of completeness (using *Bulletin of Atomic Scientists* data). A caveat is in order. The report works with only 11 (conventional) equipment variables and a simple quantitative assessment. Therefore, a much more granular study is necessary for a firm establishment of the results. It is also quite likely that should India face a two-front threat, other powers will step in on its behalf; therefore, the effective forces available to India may be much higher than just Indian forces. Having said that, the results that do appear are disturbing enough and portend ill for India in the event of a collusive threat from Pakistan and China. It also points to an urgent need to make qualitative and quantitative improvements in the Indian military.

A two-front war could start against India in three different ways. Firstly, Pakistan takes advantage of an India-China conflict. Secondly, China engages in strategic opportunism in an India-Pakistan conventional military engagement. Finally, China and Pakistan collude to launch a surprise-coordinated attack from both India's east and west. Of these scenarios, the first is the most probable given that China would be hesitant to be seen as being either opportunistic or overtly aggressive at a time when Beijing is engaging in a hard sell of its global aspirations throughout Asia. This also seems the case because of the simple fact that if China was to take on India directly, it could very well do so without Pakistani assistance. The likely possibility is a border war between India and China which Pakistan exploits to open a front across Kashmir to compensate for its inferior force ratio vis-à-vis India.

Naval Modernization Reflects India's 'Ambition to Project Power' - The Indian government recently approved more than 16 billion USD to build advanced naval warships as well as nuclear-powered submarines. A major spender on defense, India is the world's largest weapons importer. The South Asian nation depends on foreign countries, particularly Russia and the US, for most of its military gear. The reliance on imports reflects the inability of the country's armaments manufacturers to make state-of-art equipment that meets the requirements of the nation's armed forces. But since taking over in May last year, India's Prime Minister Narendra Modi has barely hidden his desire to change the state of affairs. In a bid to kick start the moribund domestic defense industry, the Modi administration has raised the foreign investment cap to 49 percent, and encouraged multinational arms companies to set shop and "Make in India." The decision to build naval vessels and submarines in India is seen as part of the administration's plan to ramp up the nation's domestic defense industrial base. Furthermore, the move is also viewed as an attempt by India to bolster its naval defenses, as the country's leaders seem increasingly concerned about China's expanding naval presence in the Indian Ocean region.

References :-

1. See distinctions on brown, green and blue waters navies, Paul Pryce, "The Brazilian Navy: Green Water or Blue?" Centre for International Maritime Security (CIMSEC), 27 January 2015.
2. James R. Holmes and Toshi Yoshihara, "China's Naval Ambitions in the Indian Ocean," *The Journal of Strategic Studies* 31, no.3 (June 2008): 372.
3. See S. Paul Kapur and William C. McQuilkin, "Preparing for the future Indian Ocean Security Environment," *Defence Primer 2017,* Observer Research Foundation, New Delhi, 23 February, 2017.
4. *Ensuring Secure Seas: Indian Maritime Security Strategy,* Integrated Headquarters (Ministry of Defence, New Delhi 2015), 55 *Navy Maritime Domain Awareness Concept,* Department of the Navy, Chief of Naval Operations, Washington D.C., 2007,
5. http://www.navy.mil/navydata/cno/Navy_Maritime_Domain_Awareness_Concept_FINAL_2007.pdf.
6. Darshana M. Baruah, "Expanding India's Maritime Domain Awareness in the Indian Ocean," *Asia Policy* 22, July 2016, 49–55.
7. Andrew S. Erickson and Michael S. Chase, "Informatization and the Chinese People's Liberation Army Navy," in *The Chinese Navy: Expanding Capabilities, Evolving Roles*, eds. Phillip C. Saunders, Christopher Yung, Michael Swaine and Andrew Nien-dzu Yang (Washington D.C.:enter for the Study of Chinese Military Affairs, Institute for National Strategic Studies, National Defense University, 2011), 256.
8. http://www.navy.mil/navydata/cno/Navy_Maritime_Domain_Awareness_Concept_FINAL_2007.pdf.
9. Friedman, "Shaping Naval Power: Implications of the naval build-up in Asia," 132 Interview with former Senior Indian Naval Officer.
10. "What is GSAT-7 Rukmini?" *The Indian Express,* 5 July2017, http://indianexpress.com/article/what-is/india-rukmini-gsat-7-satellite-china-indian-ocean-region-sikkim-standoff-4736318/.
11. Tapan Mishra, S.S. Rana, N.M. Desai, D.B. Dave. Rajeevjyoti, R.K. Arora, C.V.N. Rao, B.V. Bakori, R. Neelakantan and J.G. Vachchani, "Synthetic Aperture Radar Payload on-board RISAT-1: configuration, technology and performance," *Current Science* 104, no. 4 (25 February 2013): 447–448.
12. Cited in Ajai Shukla, "Pentagon Report: Indian Navy's new submarine hunter is ineffective," *Business Standard,* 5 February 2018, http://www.business-standard.com/article/economy-policy/pentagon-report-indian-navy-s-new-submarine-hunter-is-ineffective-114012500673_1.html.

****

हिन्दी उपन्यास एवं सिनेमा में अंतर्सम्बन्ध

डॉ. आँचल श्रीवास्तव* विजेन्द्र कुमार साहू**

शोध सारांश – हिंदी सिनेमा ने सदैव समाज को नई दिशा प्रदान की है। भारत में ऐसी कितनी ही फिल्में हैं जो हिंदी साहित्य पर बनाई गई हैं और दर्शकों ने उन्हें काफी सराहा भी है। हिन्दी उपन्यास पर बनी फिल्में सबसे अधिक दर्शकों के मन को भाया है। क्योंकि यह उपन्यास इतने रोचक ढ़ंग से लिखे गये थे कि पाठकों के ह्रदय को झकझोर कर रख दिया। यदि इस प्रकार के उपन्यास पर कोई फिल्मांकन करते है और उस फिल्म का अभिनय उतना ही अच्छा होता है तो यह उपन्यास एवं सिनेमा जगत की बहुत बड़ी उपलब्धि होती है। सिनेमा हिंदी साहित्य एवं उपन्यास से कभी भी अनभिज्ञ नहीं रह पाया है। हिंदी सिनेमा केवल मनोरंजन का पात्र नहीं बना किंतु उसने ऐसी कई भावनाओं को जन्म दिया जिसने एक नए भारत का भविष्य निर्धारित किया। हिंदी साहित्य के धरातल पर उतरी फिल्म न केवल एक फिल्म मात्र होती है अपितु वह एक वासना रहित सरल ह्रदय की कहानी होती है।

प्रस्तावना – हिन्दी उपन्यास और सिनेमा का मूल स्वभाव एक-दूसरे से काफी अलग है और यही अलगाव इस रूपान्तरण में बाधा पैदा करता है। उपन्यास/कहानी/नाटक को पटकथा के ढाँचे में फिट करना सबसे बड़े व्यवधान के रूप में सामने आता है। इन समस्याओं से निजात पाने के लिए निर्देशक कभी साहित्य में कुछ जोड़ता तो कभी घटाता है। फिल्मांकन के दौरान उपन्यासों में आये उन परिवर्तनों के कई परिप्रेक्ष्य हो सकते है। स्त्री-परिप्रेक्ष्य से इन परिवर्तनों को देखते हुए यदि हम प्रेमचंद के 'गोदान' पर बनी त्रिलोक जेटली की फिल्म 'गोदान' की बात करें तो पाते हैं कि, 'गोदान' उपन्यास को यदि हम फिल्म में ढूँढते हैं तो हमें निराशा ही हाथ लगेगी। सिनेमा की सीमाओं के कारण 'गोदान' के फलक को निर्देशक ने छोटा कर दिया है। 'गोदान' की प्रतिनिधि स्त्री पात्र है – धनिया। उपन्यास की ही तरह फिल्म में भी धनिया एक स्पष्टवादी, स्वाभिमानी और पितृसत्तात्मक समाज को चुनौती देने वाला चरित्र है। गलत बात के खिलाफ आवाज़ उठाते हुए उसे ज़रा भी संकोच नहीं होता। धनिया के चरित्र की सुदृढ़ता और अक्खड़ता भले ही तत्कालीन समाज के अनुरूप न हो लेकिन उसकी यह विशेषता अनायास ही नहीं है। प्रेमचंद्र की अग्रचेता दृष्टि आने वाले समय में स्त्री-पुरुष समानता के महत्व को पहचानती है। यही कारण है कि वे अपने उपन्यास की नायिका को एक विशेष सामर्थ्य देते हुए उसे सशक्त बनाते हैं। फिल्म प्रेमचंद्र की ही स्त्री-दृष्टि को पुख्ता करती है। ज़ाहिर है कि त्रिलोक जेटली भी उस पर अपनी फिल्म के द्वारा स्वीकृति की मुहर लगाते हैं।

परन्तु चर्चित उपन्यास और कालजयी रचनाओं पर आधारित फिल्में हर दौर में पसंद की जाती रही है यही वजह है कि निर्देशक और निर्माता उपन्यासों को टटोलना और उन पर फिल्म बनाना प्रारंभ कर दिए है। यह सही भी है इससे वे दर्शक जो उपन्यासों को पढ़ना पसंद करते है वे बड़े परदे पर उस पर आधारित फिल्में देखकर गौरवान्वित होते है इसके अलावा वे दर्शक जिन्हें साहित्य की रचनाओं का ज्ञान नहीं है उनमें साहित्य की समझ बढ़ती है।

हमारे यहाँ ज्यादा बड़ी संख्या में हिन्दी उपन्यासों पर फिल्मांकन नहीं हो पाया। सिनेमा की इन सौ सालों में हिन्दी में पॉच हजार से ज्यादा फिल्में बनी परंतु हिन्दी साहित्य कृतियों पर मात्र इकतालिस पर ही फिल्में निर्मित हो सकी जिसमें उपन्यास पर 18, कहानी पर 20 और नाटक पर 03 फिल्में बनी है। हिन्दी उपन्यास पर आधारित जिन फिल्मों का सफल फिल्मांकन हुआ वे फिल्में है ग़बन, डाकबंगला, ऑधी, मौसम, बदनाम बस्ती, सारा आकाश, सत्ताईस डाउन, तमस, सूरज का सॉतवॉ घोड़ा और नौकर की कमीज। इसी प्रकार जो असफल रही वे फिल्में हैं गोदान, सेवासदन, रंगभूमि, आपका बंटी, चित्रलेखा, धर्मपुत्र, त्यागपत्र।

हिन्दी उपन्यास पर बनीं कुछ चर्चित फिल्मों की सूची निम्न है:-

- **देवदास –** मूलरूप से बांग्ला में लिखित शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय के उपन्यास को आधार बनाकर हिन्दी में प्रमथेश बरूआ (1936), विमल राय (1955) और बाद में संजय लीला भंसाली (2002) द्वारा फिल्म देवदास का निर्माण हुआ।
- **धर्मपुत्र (1961) –** आचार्य चतुरसेन के उपन्यास को आधार बनाकर यश चोपड़ा ने धर्मपुत्र नाम से फिल्प का रूपांतरण किया।
- **साहेब बीबी और गुलाम (1962) –** बांग्ला उपन्यासकार विमल मित्र के उपन्यास पर इसी नाम से गुरूदत्त ने फिल्म बनायी, जिसको अबरार अल्वी ने निर्देशित किया।
- **गोदान (1963) –** उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद की अमर कृति पर आधारित फिल्म का निर्देशन त्रिलोक जेटली ने किया।
- **गाइड (1965)–** मूलरूप से अंग्रेजी में लिखे गये आर.के. नारायण के उपन्यास 'दि गाइड' पर देव आनंद ने हिन्दी में फिल्म का निर्माण किया, जिसे विजय आनंद ने निर्देशित किया था।
- **गबन (1966)–** मुंशी प्रेमचन्द्र के उपन्यास पर केंद्रित फिल्म का निर्माण ऋषिकेश मुखर्जी ने किया।
- **सारा आकाश (1969)–** हाल में ही दिवंगत कथाकार राजेन्द्र यादव के उपन्यास 'प्रेत बोलते हैं' के आधार बनाकर निर्देशक बासु चटर्जी ने फिल्म बनायी।

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

- **रजनीगंधा** (1974)– निर्माता–निर्देशक बासु चटर्जी ने कथा लेखिका मन्नू भण्डारी की कहानी 'यही सच है' को आधार बनाकर फिल्म बनायी।
- **आंधी** (1975)– कमलेश्वर के ही एक अन्य उपन्यास 'काली आंधी' को केन्द्र में रखकर गुलजार ने फिल्म बनायी।
- **सूरज का सातवां घोड़ा** (1992)– धर्मवीर भारती के उपन्यास पर निर्देशक श्याम बेनेगल ने उसी नाम से फिल्म बनायी।
- **थी इडियट्स** (2009)– निर्देशक राजकुमार हिरानी ने चर्चित लेखक चेतन भगत के उपन्यास 'फाइव प्वाइंट समवन' पर आधारित फिल्म का निर्माण किया।

निष्कर्ष– सिनेमा और साहित्य का धरातल अलग–अलग है। सिनेमा शुद्ध मनोरंजन प्रधान होता है जिसमें दर्शकों के मांग का ख्याल रखा जाता है, दर्शक को जो चाहिए फिल्म उद्योग वहीं परोसता है जिसका सीधा संबंध व्यवसाय से होता है, जबकि साहित्य, संवेदना और अनुभूति प्रधान होता है, साहित्य दर्शकों के मांग पर नहीं बल्कि साहित्यकार अपनी निजी संवेदना और अनुभूति को केंद्र में रखकर समाज के यथार्थ रूप को सामने लाने का प्रयास करता है। कुछ मौलिक आधुनिक हिंदी उपन्यासों पर फिल्मांकन हुआ है। लेकिन साहित्य कृतियों पर हुए फिल्मांकन, संख्या में बहुत ही कम है। आज उत्कृष्ट हिंदी साहित्यिक कृतियों का अधिकाधिक रूप से फिल्मांकन करने की आवश्यकता है। यह इसलिए जरूरी है कि साहित्य में हमारी सामाजिक, पारिवारिक, सांस्कृतिक विरासतें छिपी होती हैं, जिन्हें निर्देशक बेहतर फिल्मों के माध्यम से आगामी पीढ़ियों तक पहुँचा सकते हैं।

हिन्दी उपन्यास और सिनेमा जैसे अत्यंत महत्वपूर्ण कलारूपों पर शोधकार्य हिन्दी में अभी भी विरल ही हैं हिन्दी में इस प्रकार के शोधकार्य की आवश्यकता को ध्यान में रखकर हिन्दी उपन्यास और सिनेमा के स्वरूप एवं महत्व पर प्रकाश डालते हुए फिल्मांकन में आनेवाली समस्याएँ और उन समस्याओं का फिल्म निर्देशकों द्वारा उचित समाधान का अध्ययन इस शोधकार्य के अंतर्गत किया जायेगा। हमारे अधिकांश फिल्मकारों का यह मानना रहा है कि चूँकि सिनेमा का मूल उद्देश्य जनता का मनोरंजन करना है। अतैव साहित्यिक कृतियों के जरिये दर्शकों की अपेक्षाओं को पूरा करना कठिन हो जाता है। इसके बावजूद भी अनेक प्रबुद्ध और सजग फिल्मकारों ने समय–समय पर नामी लेखकों की साहित्यिक कृतियों व रचनाओं को आधार बनाकर सफल फिल्मों का निर्माण किया।

चूँकि फिल्म एक ऐसा माध्यम है जो जन–जन से जुड़ा है, इसलिए फिल्मकारों साहित्यिक कृतियों को फिल्माने में थोड़ी–बहुत छूट भी ली है। कई बार लेखकों ने अपनी कृतियों के साथ खिलवाड़ करने के आरोप भी लगाया है, लेकिन यह भी उतना ही सच है कि फिल्म के माध्यम से साहित्यिक रचनाओं को बड़े पैमाने पर पहचान भी मिलती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. तोंडे, रामदास नारायण (2014) 'आधुनिक हिन्दी साहित्य और फिलमांकन : स्वरूप एवं समस्याएँ' डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर मराठावाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद।
2. तिवारी, सचिन (2017), 'साहित्य और सिनेमा : अंर्तसंबंध', महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय उ.प्र.
3. डेविड मैमेट, थियेटर, फेबर एंड फेबर, 2010।
4. सैमुएल बैकेट, वेटिंग फॉर गोडो।
5. होमर, ओडिसियस, रैंडम हाउस, द मॉडर्न लाइब्रेरी, 1950, यू.एस.ए., अनुवाद– एच. एस. बुचर और ऐंड्रयू लैंग।
6. डेबोराह कार्टमेल और इमेल्डा ह्वेलेहान, सं. एडैप्टेशंस : फ्रॉम टेक्स्ट टू स्क्रीन, स्क्रीन टू टेक्स्ट, 1999, लंदन रटलेज।
7. घई, सुमन कुमार (2017), 'अन्तरजाल पर साहित्य–प्रेमियों की विश्राम स्थली' ISSN 2292–9754
8. क्षीरसागर, डॉ. गोकुल, 'सिनेमा और फिल्मांतरित हिन्दी साहित्य'

****

सुदामा पाण्डेय धूमिल के काव्यों में राजनैतिकता का समाजिक जीवन पर प्रभाव

डॉ. स्नेह लता निर्मलकर* वंदना वाधवानी **

शोध सारांश – नई कविता के समर्थ और सफल कवियों में सुदामा पाण्डेय 'धुमिल' का नाम महत्वपूर्ण है। धूमिल की काव्य कला, संवेदना तथा सामाजिक पक्षधरता को समझने के लिए उनकी कविता, पर कथा बहुत आवश्यक हैं। यहां का धूमिल का संपूर्ण साहित्य उनकी जनवादी चेतना का सबल प्रमाण हैं। धूमिल जी ने समकालीन कविता के दौर में एक ताकतवर आवाज के नाते इनकी पहचान रही है। इनकी कविताओं में संवादालनुता है, प्रवाह लकता है प्रश्नार्थकर्ता है।

प्रस्तावना – धूमिल के काव्य के उदेश्य मानव समाज में विघटित होते मूल्यों को बचाये रखना है। सुदामा पाण्डे धूमिल ने उस समय के समय को समझा और अपने काव्य का आधार बनाया है, उन्होने समाज में मूल्यों के ज्ञात होने पर दु:ख व्यक्त किया है साथ ही उन्होंने नये मूल्यों की स्थापना की है वे चाहते है जो मूल्य जनता को बताना चाहते है उन मूल्यों की समाज की सोच धरातल पर स्थापना हो। ताकि समाज के विघटित होते मूल्यों को बचाया जा सके।

1. **आधुनिकता बोध एवं नये मानव मूल्यो का निर्मित –** सुदामा पाण्डे धूमिल के रचना संसार में आधुनिकता बोध का स्पष्ट स्वर गॅुजता हुआ सुनाई देता है। धूमिल मे सामाजिक गंदगी और विसंगति को सर्जना के स्तर पर भोगे हुए यथार्थ के रूप में ईमानी शैली में व्यक्त किया है। आधुनिकता बोध के विशय में य मान्यता रही कि सर्जन के क्षेत्र में कैसा भी क्यों न भोग गया हो वह सौंदर्य की सृष्टि करता है।

हर तरफ उटब थी
संशय था
नफरत थी

मगर हर आदमी अपनी जरूरतो के ओर असहाय था। उसमें सारी चीजों को नये सिरे से बदलने की

बेचैनी थी शेष था
लेकिन उसका गुस्सा
एक तथ्यहीन मिश्रव था।
आग और ऑसू हाथ का

धूमिल के आधुनिकता बोध में मानव के अकेलेपन असमर्थता बोध अजनबीपन और जीवनत्यापी विसंगतियों को भी स्थान प्राप्त है।

2. **समकालीन अनुभव और मानव मूल्य दृष्टि –** कवि लिखता है। तो उसके लिए उसे आधार अपने आस पास के वातावरण समाज और अपने समय के अनुभवो से प्राप्त होता है। कवि तभी कुछ लिख पाता है ज बवह अनुभव करें उसस प्रभावित हो। धूमिल ने भी अपने काव्य में अपने अनुभव को जगह दी है जो उन्होंने अपने समाज परिस्थितियों से लिए है। धूमिल ने अपने काव्य का विषय व्यक्ति और उसके आस पास के वातावरण को बनाया है। समाज में आज के समय की मानव मूल्य ही नाम को उजागर किया है। संसद से सड़क तक मे तत्कालीन युग की समस्याओं का विषेश वर्णन किया है। इनमे भूख (रोटी,कपड़ा मकान) के साथ में बेरोजगारी शिक्षा, अकाल, साम्प्रदायिकता, छूआछूत, प्रांतीयता एवं भावा, विवाद सरीखे उनके विषय समस्या रूप में इनकी रचना में संयोजित है।

3. **मानव मूल्य हीनता और मूल्य संकल्प –** धूमिल ने समाज में विघटित होते हुए राजनीतिक, सामाजिक, पारिवारिक वैयक्तिक मूल्यो का उल्लेख किया है साथ ही साथ नये मूल्यों को स्थापित करने संकल्प लिया है। देश की प्रत्येक समस्या का उनहोंने अनुभव करना चाहा है कुछ से उन्हे स्वयं गुजरना भी पड़ा है 'पतझड' कविता में धूमिल ने बेकरि समस्या पर गहरा 'आघात' किया है। देश प्रेम की वास्तविकता धूमिल ने जानी है।

4. **वर्तमान से प्रासंगिकता –** अनेक प्रसंगों में वह व्यवस्था के पक्षधरों पर तीक्ष्ण व्यंग्य प्रहार करते है। धूमिल अपने युग का एक समर्थ कवि है। जिसका कविता युग में एकाएक बदलाव की सूचना देती है। समस्याओं को बाह्य या उपरी धरातल से देखने पर आम स्थिति का प्रस्तुतीकरण प्रतीत हो सकता है। सुदामा पाण्डे का प्रजातंत्र में संकलित कुछ कविताएं तो राजनीतिक व्यवस्था की यथार्थ स्थिति की व्यंजक है।

कवि पेट तथा प्रजातंत्र के बीच के संबंध की तलाश करता है। आम आदमी (सड़क) से वह संसद में पहुॅच व्यवस्था की नब्ज देखता है। तभी उसकी दृष्टि अपने देश की शसन व्यवस्था पर पक़्षी है प्रजातंत्र ।पत्रकथा में इस व्यवस्था के प्रति कवि की सही दुष्टि स्पष्ट प्रतीत होती है।

ऐसा जनतंत्र है जिसमें
जिंदा रहने के लिए
घोडे और घास को
एक जैसी छूट है
कैसी विडम्बना
कैसा झूठ है। दरअसल अपने यहां जनतंत्र
एक ऐसा तमाश है, जिनकी जान

* सहायक प्राध्यापक, डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी, डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

मदारी की भाषा है।

इससे बढंकर किसी जनतांत्रिक व्यवस्था की दूर्दशा क्या हो सकती है जिसका नाम लेना स्वयं मे किया हो। भेंड़िया शब्द मार्क्सी चिंतन का प्रमा है। धूमिल की कविता बुनियादी तौर पर केवल व्यवस्था से नही सुझती व्यवस्था की अमानवीय परिस्थिति से जूझती रही। धूमिल ने समाज तथा राजनीति के दिगंत तक गॅूज उपजाने वाली तंकार भी है। धूमिल ने समाज तथा राजनीति के व्यापक संदर्भी के प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष (उपसंहार) – धूमिल के काव्यों में आज के समाजिक में विघटित होते मूल्यों को दर्शाया है। उन्होंने अपने समय में महसूस किया जो उन्हें मिली उसी के आधार पर अपने काव्य में राजनैतिक दृष्टिकोण को सही रूप में दर्शाया है। वे चाहते है कि आज का आदमी मूल्यों को समझे और सहेजे तभी संस्कृति को बचाकर रखा सकता है। उन्होने अपने काव्य के माध्यम से नवीन मूल्यों की भी स्थापना की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पटकथा संसद से सड़क तक धूमिल प्र.सं 10
2. संसद से सड़क तक धूमिल पृ. सं.121,
3. सुदामा पाण्डे का प्रजातंत्र धूमिल पृ.सं. 53
4. समकालीन बोध और धूमिल का काव्य, डॉ हुकुमचंद
5. राजवाल पृ. सं. 80
6. संसद से सड़क तक धूमिल पृ.सं. 64
7. कल सुनना मुझे, धूमिल पृ.सं. 76

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

हरिवंश राय बच्चन की मधुशाला का एक अध्ययन

डॉ. श्रद्धा हिरकने * अमजद खान **

प्रस्तावना – छायावादोत्तर काव्यधारा के प्रवर्तक डॉ. हरिवंश राय बच्चन जी का कृतित्व काल सुदीर्घ कालावधि में फैला हुआ है। उन्होंने काव्य के इतिहास में 'सृष्टा' के रूप में अपना नाम अंकित किया है। भारतीय साहित्य की भूमि पर बच्चन जी द्वारा चलाई गई काव्य की अलख सदा जलती रहेगी। छायावादी दौर में उन्होंने जितनी सरल और सुन्दर भाषा में काव्य रचा, जिसने हिन्दी साहित्य को आलोकित किया है।

वे प्रोफेसर तो अंग्रेजी के थे, लेकिन लिखा हिन्दी भाषा में, वो भी जन-सामान्य की हिन्दी भाषा में बच्चन जी पहले भारतीय थे जिन्होंने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से अंग्रजी साहित्य में पी.एच.डी. की, लेकिन अपने पांव हिन्दी क्षेत्र की भूमि पर जमाए। हिन्दी और अंग्रेजी भाषा पर उनकी पकड़ के बारे में उनका साहित्य बोलता है। एक तरफ अंग्रेजी साहित्य में डब्ल्यू बी. यीट्स पर किया गया शोध, शेक्सपीयर की रचनाओं का किया गया अनुवाद, तो दूसरी तरफ भारतीय साहित्य में खैयाम की मधुशाला, रामायण शैली में लिखी गयी 'जनगीत' इसका सटीक उदाहरण है। बच्चन जी ने जितनी निष्ठा और कर्मठता से अपनी अनुभूतियों को शब्द दिए, उतने ही भावपूर्ण तरीके से अनुवाद कार्य किया। निस्संदेह बच्चन जी ने साहित्य की नई धारा का सूत्रपात किया।

बच्चन जी का व्यक्तित्व हिन्दी काव्य में अपनी अद्‌भुत विशेषता एवं महत्ता रखता है। वह मानव हृदय मर्मज्ञ, रससिद्ध गायक, भाव-धनी एवं युग प्रबुद्ध संदेश वाहक हैं। उनकी बहुमुखी प्रतिभा की झलक उनके रचना-संसार से तो मिलती ही हैं, उनकी जिन्दगी से भी मिलती हैं। बच्चन जी के चरित्र निर्माण एवं व्यक्तित्व विकास के लिये उनके युग, उनकी शिक्षा-संस्था, स्थानीय वातावरण, परिवार-पड़ोस और गुरूजनों का विशेष सहयोग रहा है। बच्चन जी को अपने परिवार से उदान्त धार्मिक संस्कार मिले। उनका कृष्ण के प्रति विशेष अनुराग है।

बच्चन जी की प्रतिभा लाजवाब थी। उनके अध्यापन के समय का किस्सा है – विद्यालय में अंग्रेजी के प्रोफेसर होने के बावजूद, डीन उन्हें हिन्दी पढ़ाने के लिए कह देते थे, और बच्चन बड़ी सहजता से हिन्दी कक्षा भी लेते थे। बच्चन जी ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य के अलावा उन्होंने ऑल इंडिया रेडियो और विदेश मंत्रालय में भी काम किया, फिर राज्य सभा के सदस्य मनोनीत किए गए। अपनी प्रतिबद्धता, कर्मठता और विशेष रूप से मौलिकता का परिचय बच्चन जी ने हर पद पर दिया है। बच्चन ने राजभाषा समिति के अध्यक्ष पद पर रहते हुए सौराष्ट्र मंत्रालय को गृह मंत्रालय और पर राष्ट्र मंत्रालय को विदेश मंत्रालय का नाम देने में योगदान किया। बच्चन जी के समकालीन साहित्यकार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, रामधारी सिंह दिनकर, भगवती चरण वर्मा, डॉ. धर्मवीर भारती, शिवमंगल सिंह सुमन उनके जबरदस्त प्रशंसक थे। सभी ने बच्चन जी पर, उनके साहित्य पर खुले दिल से अपनी-अपनी राय व्यक्त की है।

मधुशाला बच्चन जी की एक ऐसी कृति है, जिसने लोगों को उनका दीवाना बना दिया था। सन् 1935 ई. में 'मधुशाला' का प्रकाशन हुआ था। इसमें 135 रूबाईयां हैं। मंच पर जब बच्चन जी के नाम की घोषणा की जाती थी, तो पूरा पंडाल तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठता था। उनके प्रशंसकों की भारी-भीड़ जुटी रहती थी। लोग उनके ऑटोग्राफ लेने के लिए बेताब रहते थे, जैसे कि हरिवंश राय बच्चन अमिताभ बच्चन हों। शहरों और गांव की गली-गली में 'मधुशाला' की रूबाईयां गाई जाती थीं वो भी बच्चन के स्टाइल में, क्योंकि बच्चन जी का कविता-पाठ करने का अन्दाज मधुशाला की प्रसिद्धि का दूसरा स्तम्भ था। आधुनिक हिन्दी काव्य में 'मधुशाला' का प्रकाशन ऐतिहासिक घटना है, क्योंकि जितनी लोकप्रियता इस ग्रन्थ को मिली उतनी किसी भी तात्कालीन कृतियों को नहीं मिल सकी। बच्चन जी की 'मधुशाला' 'मधुबाला' और 'मधुकलश' रचनाएँ मधुकाव्य के अंतर्गत आती है।

'मधुशाला' का मूल स्वर समाज, धर्म और राजनीति की खोखली मान्यताओं का खंडन है। सामाजिक रूढ़ियाँ और वैमनस्य की भावना फैलाने वाले तत्वों के विरूद्ध बच्चन जी ने इसमें अपनी आवाज उठाई हैं। हिन्दु-मुसलमानों को आपसी ईर्ष्या द्वेष दूर करने की सलाह दी है। यदि हम युगीन परिस्थितियों की ओर दृष्टिपात करें तो हम पाते हैं कि 'मधुशाला' उस युग की कवि है जब समस्त भारत देश परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ा था, युवक वर्ग बेकार, थकित, निराश और किकर्तव्यविमूढ़ की सी मानसिक स्थिति में था। चारो ओर निराशा का साम्राज्य था। तब उल्लास और उन्माद कि मनोरम वातावरण का निर्माण करती हुई, 'मधुशाला' क्रांतिकारी कृति के रूप में अवतरित हुई बच्चन जी ने देशवासियों को स्वतंत्रता के लिये बलिदान करने की प्रेरणा दी- स्वतंत्रता है तृषित कालिका बलिदेवी है मधुशाला।

मधुशाला काव्य में बच्चन जी ने प्रियतम का परमात्मा से मिलन के लिये, एकाकार होने के लिये एक ही पथ पर अग्रसर होने के लिये उत्प्रेरित किया है। उनका मानना है कि एक राह पकड़ने से ही परमात्मा से मिलन होगा। बच्चन जी की आत्मीयता का कोई छोर नहीं था। उनके पास जाने वाला हर शख्स उनका अपना हो जाता था। संस्कार और अनुशासन तो उनके व्यक्तित्व के दो आयाम थे। जितनी सादगी से बच्चन जी रहते थे, उतनी ही सरलता और सहजता से उन्होने अपनी आत्मकथा लिखिी। जिसके लिए बच्चन जी को 'सरस्वती' सम्मान से पुरस्कृत भी किया गया। आचार्य

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (हिन्दी) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

द्विवेदी ने इनकी आत्मकथा को उम्र और परिवेश का लेखा-जोखा बताया तो डॉ. भारती ने इसे बहादुरी और पूरी ईमानदारी से अपने जीवन को कहने की कोशिश बताया।

अपनी इसी सादगी और बेबाकी की बूते ही बच्चन जी ने लोगों के दिलों पर राज किया। लोगों के बीच बच्चन जी की लोकप्रियता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है, कि लोकनायक जयप्रकाश नारायण जैसे जमीन से जुड़े नेता अपने आंदोलन की अलाव इनकी कविता से जलाते थे, वहीं गांधी जी भी मधुशाला की रूबाईयां सुनकर प्रसन्न हो गये थे। सुमित्रानन्दन पन्त जी ने लिखा है :

'बच्चन की मदिरा चैतन्य की ज्वाला है, जिसे पीकर मृत्यु भी जी उठती है। उसका सौन्दर्य -बोध, देश-काल की क्षण भंगुरता को अतिक्रम कर शाष्वत के स्पर्श से अम्लान एवं अनन्त यौवन है। यह निस्संदेह बच्चन के अन्तरतम का भारतीय संस्कार है, जो उसके मधु-काव्य में अज्ञात रूप से अभिव्यक्त हुआ है। बच्चन की मदिरा गम गलत करने या दुख को भुलाने के लिये नहीं है, यह शाश्वत जीवन-सौंदर्य एवं शाश्वत प्राणचेतना-शक्ति की सजीव प्रतीक है।'[1]

मधुशाला से लिये गए उद्धरण देखिए :

'पहले भोग लगा लूं तेरा, फिर प्रसाद जग पाएगा,
सबसे पहले तेरा स्वागत करती मेरी मधुशाला,
प्रियतम, तू मेरी हाला है, मैं तेरा प्यासा प्याला,
अपने को मुझमें भर कर तू बनता है पीनेवाला,'[2]

बच्चन जी की 'मधुशाला' की सभी रूबाईयां प्रतीकात्मक है। जिनमें कवि ने शराब, सुराही, प्याला, साकी और मीना को प्रतीक बनाया है।

बच्चन और उनके कृतित्व पर साहित्यकारों की राय :-

'बच्चन मुख्यत: मानव -भावना, अनुभूति, प्राणों की ज्वाला तथा जीवन-संघर्ष का आत्म-निष्ठ कवि हैं। मैंने कभी उसके लिए ठीक ही लिखा था -

'अमृत हृदय में, गरल कंठ में, मधु अधरों में,
आस तुम वीणा धर कर में जन-मन-मादन।'[3]

— सुमित्रानन्दन पन्त —

'ऐसी अभिव्यक्तियां नई पीढ़ी के लिये पाथेय बन सकेंगी, इसी में उनकी सार्थकता भी हैं।'[4]

— डॉ. शिवमंगल सिंह सुमन —

'(बच्चन की रचनाओं में) समूचा काल और क्षेत्र भी अधिक गहरे रंगों में उभरा है।'[5]

— डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी —

अगर बच्चन जी की कृतियां अनुदित होकर विश्व के अन्य देशों में पहुंचती, तो हाला, प्याला और मधुबाला के रसिक काव्य पर वहां के लोग भी झूमते और उसकी मस्ती नोबल पुरस्कार वालों तक पहुंचती। हालांकि जो सम्मान और आदर बच्चन जी को भारतीय लोगों ने दिया, वह नोबल से कई गुना अधिक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. हरिवंश राय बच्चन : मधुशाला : बच्चन प्रकाशन - हिन्द पॉकेट बुक्स नई दिल्ली सं. मार्च 2008।
2. हरिवंश राय बच्चन : मधुशाला : बच्चन प्रकाशन - हिन्द पॉकेट बुक्स नई दिल्ली सं. मार्च 2008, पृ. क्र. 1 व 3
3. हरिवंश राय बच्चन : मधुशाला : बच्चन प्रकाशन - हिन्द पॉकेट बुक्स नई दिल्ली सं. मार्च 2008।
4. हरिवंश राय बच्चन : मधुशाला : बच्चन प्रकाशन - हिन्द पॉकेट बुक्स नई दिल्ली सं. मार्च 2008।
5. हरिवंश राय बच्चन : मधुशाला : बच्चन प्रकाशन - हिन्द पॉकेट बुक्स नई दिल्ली सं. मार्च 2008।

- हरिवंश राय बच्चन : हलाहल : बच्चन प्रकाशन - राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली प्र.सं. 1970।
- हरिवंश राय बच्चन : उमर खैयाम की रूबाइयां : बच्चन प्रकाशन - पॉकेट बुक दिल्ली सांतवा सं. 1981।
- हरिवंश राय बच्चन : मधुबाला : बच्चन प्रकाशन - राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 16 वॉ सं. 1983।
- हरिवंश राय बच्चन : क्या भूॅलू क्या याद करूं भाग - 1 बच्चन प्रकाशन राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली सं. 2006।
- हरिवंश राय बच्चन : मधुशाला : बच्चन प्रकाशन - हिन्द पॉकेट बुक्स नई दिल्ली सं. मार्च 2008।
- हरिवंशराय बच्चन : के साहित्य मुख्य समाज चेतना :- शोध प्रबंध, मीना भगवान सहाय वाणस्थली एकतत्व विश्वविद्यालय 2013।

****

Musicality in Fiction

Dr. Rajkumari Sudhir*

Abstract - When we think of art-history and literary criticism, we naturally start with the problem of interchangeability of critical terms. When we use terms freely like a 'baroque' style of novel or the 'timbre' of a poem, or the "architectonics" of a play, and the Rasa in music, or the Dhwani in dance, what are we trying to suggest? As all fine arts employ different media-very different from words-are we only trying to catch what is ephemeral, or push the frontiers of language, or attempt to give a sound-sight picture to a deaf and blind?

Introduction - When we think of art-history and literary criticism, we naturally start with the problem of interchangeability of critical terms. When we use terms freely like a 'baroque' style of novel or the 'timbre' of a poem, or the "architectonics" of a play, and the Rasa in music, or the Dhwani in dance, what are we trying to suggest? As all fine arts employ different media-very different from words-are we only trying to catch what is ephemeral, or push the frontiers of language, or attempt to give a sound-sight picture to a deaf and blind? All senses and sensibility are constantly seeking some balance in imbalance.

Inter-relationship of literature and fine arts - What was called the quest for beauty and the discovery of bliss in classical poetics in the East and the West is no more mere "imitation of nature" or 'the best words in the best order'. The Brahman created world as play (Leela) and was a spectator and an outsider (Sakshin). A stroke of brush or a plucking of strings or a careful chiselling may achieve a world of its own which is beyond words. Art is the universal language, in this particular sense.

The "Folklorist Musicality" - Readers of the novel are attracted to Roy's use of language. She em-ploys her language which allows her readers an access to an Indian consciousness, reinventing itself on its own terms. She evokes Indian ambience. Her nature descriptions reveal her involvement with the place, she was born in and nurtured. She describes 'the June Rain' thus :

> Heaven opened and the water hammered down, reviving the reluctant old well, greenmossing the pigless pigsty, carpet bombing still, teacoloured puddles the way memory bombs still, teacol-oured minds, The grass looked wetgreen and pleased. Happy earth-worms frolicked purple in the slush. Green nettles nodded. Trees bent. Further away, in the wind and rain, on the banks of the river, in the suddun thunderdarkness of the day, Estha was walking (Roy 10).

The use of gripping metaphors, similes and comparisons makes the narrative arresting. The foregoing description of nature has certain amount of violence in it because of the words like "hammered," "bombing" and "thunderdarkness." On the other hand Roy describes Estha's mental state :

> Once the quiteness arrived, it stayed and spread in Estha. It reached out of his head and enfolded him in its swampy arms, It rocked him to the rhythm of an ancient, foetal heartbeart…. Slowly, over the years, Estha withdrew from the world. He grew accustomed to the uneasy octopus that lived inside him and squirted its inky tranquillizer on his past (11-12).

Linguistic Inventiveness - The nature descriptions also have allegorical significance. Roy rivets together human feelings and external nature, she has a style of her own. Though it conventionally means the use of language but it is a way of perceiving the world—it is a way of *seeing.* She possesses extraordi-nary linguistic inventiveness. Paranjape points out, -"Indeed, what distinguishes Roy's style is that there is something fevered, desperate, even excessive about her imagination" (Paranjape 4). She regards English language having a tremendous potential in portraying us Indians to ourselves and to the world, because it transcends all barriers, the transnational and the cross-cultural. But it is most fascinating in its innovative language use, with metaphors, alliterations, [folklorist] musically.

> A Wake
> A Live
> A Lert (227)

Is she, the writer, recording a likely pronunciation of the words or requiring a humorous response? But she has used the language the way she likes, with rule-bending creativity.

Arundhati Roy, offers occasionally some specimens of inappropriate English, with a bit of Malayalam at times, as direct or indirect speech. We also come across the reversed spelling of words, something like 'itahdnurA yoR. She follows the standard use of English and then suddenly,

*Asst. Professor (English) Govt. Sarojini Naidu Girls P.G. College, Bhopal (M.P.) INDIA

every now and then, from beginning to end, we are faced with, say, unexpected combinations or constructs of words, or a sentence without a verb as half a line or a paragraph. A number of incomplete sentences also appear together as a series of paragraphs. A few lines of poetry and music have occasionally been cited, but there is plenty of alliteration, rhyme, rhythm, reiteration as impressive of song and music.

Radical Metaphoric Approach - Let us cite a few examples. The title of the first chapter "Paradise Pickles & Preserves" refers to 'paradise' [as prayer and worship to begin the narrative?] and offers a specimen of alliteration, a rhetorical device which is also an aspect of modem advertisements but frequently appears in literary works, prose or poetry. At times we encounter parallel words with similar sound in the beginning, in the middle, and at the end. To go on, in the list of chapters, we come across,

Big Man the Laltain,
Small Man the Mombatti

Arundhati Roy had been trained as an architect once. The two lines as presented here, whether her own contribution or the publisher's/printer's, manifest an architect's talent, followed in the list of chapters as a whole. But it is particularly the connotational use in the chapter heading cited above that sounds interesting. Analogy is a significant aspect of everyday conversation, and in India we use mixed forms like 'cinedak,' for example. So, 'laltain' for 'lantern,' 'mombatti' for "candle,' exemplify a radical metaphoric approach.

Language for Entertainment - An alarm clock. A red car with a musical horn. A red mug for the bathroom. A wife with a diamond. A briefcase with important papers. A coming home from the office. An *I'm sorry, Colonel Sabhapathy, but I'm afraid I've said my say.* And crisp banana chips for the children.

He watched the trains come and go. He counted his keys.
He watched governments rise and fall. He counted his keys.
He watched cloudy children at car windows with yearning marshmallow noses.
The homeless, the helpless, the sick, the small and lost, all filed past his window. Still he counted his keys (61).

"His mind was full of cupboards." In the paragraph after that, we have phrasal nouns, each one of them as an independent sentence, with capital letters initially and full stops at the end. Then "He watched. ... He counted." A couple of times, followed by alliterative 'homeless, helpless,' 'sick, small,' Whatever the semantic properties, the quotation is fascinating in itself as inspirational, rhetorically instrumental. To cite another example of what we frequently come across,

There were so many stains on the road.
Squashed Miss Mitten-shaped stains in the Universe.
Squashed frog-shaped stains in the Universe.
Squashed crows that had tried to eat the squashed frog-shaped stains in the Universe.
Squashed dogs that ate the squashed crow-shaped stains in the Universe.
Feathers. Mangoes. Spit.
All the way to Cochin (79).

"Squashed, Squashed, . . . shaped, stains," four lines, each of them ending with 'Universe' [a rhyming property?]. We have then a line/paragraph of three single words. Obviously the language is to be read in a special way, with physical dancing movements.

A writer interested in the kind of language use we come across in the book is most unlikely to be concerned with politics or philosophy. But a non-ideological literary work may still have a certain appeal. It can be enjoyable like music and dancing. Roy's novel appears to be more interesting in this respect than in its material or technique. It implies welcome acceptance of everything in life, with whatever perspective, point of view or significance we may or may not assign it. But it goes beyond this into the folklorist use, so to say, of language for entertainment.

Conclusion - Because of the specific properties of language in the book, we feel every now and then while reading it that we are watching musicians in a huge gathering—Arundhati Roy we know has worked for films. After a few serious things, at times, we suddenly come across a theatrical performance, as if it were, with the humorous and the comic. Arundhati Roy's 'folklorist musicality' is that artistic pillar on which the mansion of fictional art in their respective works stands. Reading the writer is synonymous of being transported in the world where literature goes hand in hand with fine arts.

References :-

1. Lagerroth, Ulla Britta, Hansland, Erik. *Helding Interart. Poetics: Essays on the Interrelations of the arts and media*. Google Books, 1077. 13-15. Web. 30 July 2011.
2. Lubbock, Percy. *The Craft of Fiction.* New Delhi: B.I. Publication, 1954. Print.
3. Mardhekar, B. S. "Rhythm in Literature." *Critical Thought*. Ed. S. K. Desai and G. N. Devy. New Delhi : Sterling Publishers Pvt. Ltd.,1987. 58-59. Print.
4. *Art and Man : Lectures and Essays*. Bombay: Popualr Prakashan, 1966. Print.
5. Mawche, Prabhakar. "Interrelationship of literature and fine arts." *Triveni*. yabaluri.org (Oct. 2006) : n.pag. Web. 25 July 2011.
6. Roy, Arundhati. *The God of Small Things.* New Delhi: India Ink, 1977. Print.

****

आदिवासी बहुल्य क्षेत्र का विकासात्मक परिवर्तन (खरगोन जिले के विशेष सन्दर्भ में एक भौगोलिक अध्ययन)

प्रो.सुरेश अवारे *

प्रस्तावना – पश्चिम निमाड़ (खरगोन) जिलें का गठन 1 नवम्बर सन् 1956 को मध्यप्रदेश के गठन के साथ गठित किया गया खरगोन जिले का इतिहास उतना ही प्राचीन है, जितना की भारत में मध्यप्रदेश का है। यह सतपुड़ा एवं विन्ध्याचंल पर्वत के भाग के दक्षिण उत्तरी भाग में स्थित है। खरगोन जिला इन्दौर संभाग के अर्न्तगत आता है। जिले के उत्तर में धार् इन्दौर व देवास, दक्षिण में महाराष्ट्र पूर्व में खण्डवा, बुराहनपुर तथा पश्चिम में जिला बड़वानी स्थित है। खरगोन जिला म.प्र. राज्य की दक्षिणी–पश्चिमी सीमा में $21^0 22$ से $22^0 25$ उत्तरी आक्षांश तथा $74^0 25$ से $76^0 14$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। इस जिले की पूर्व से पश्चिम की चौड़ाई लगभग 186 कि.मी. एवं उत्तर से दक्षिण की लम्बाई 263 कि.मी. है। जो समुद्र सतह से 300 मीटर की ऊॅंचाई पर स्थित है एवं क्षेत्रफल 6541.870 वर्ग किलो मीटर है।

उद्देश्य :

1. आदिवासी बहुल्य क्षेत्रों में विकासात्माक परिवर्तन प्रतिरूप का विश्लेषण करना
2. आदिवासीयों का सामाजिक परिदृष्य

जनकल्याणकारी योजनाऐं :

1. आदिवासियों के विकास एवं परिवर्तन में शासन की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है राज्य में त्रिस्तरीय पंचायती राज के माध्यम से कई योजनाओं एवं उपयोजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है। पेंशन योजना से निराश्रितों को सम्मानजनक जीवन निर्वाह करने का आधार मिला है, वही जिन आदिवासियों के पास रहने के लिए छत नहीं थी उन्हें आवास कुटीर प्रदान की जा रही है। आर्थिक रुप से सक्षम बनाने हेतु कई ऋण सुविधाएँ प्रदान की जा रही है, सहकारिता की भावना विकसित की जा रही है संबंधित साहित्य अवलोकन से भी शोध क्षेत्र की प्रकृति, जनजातियों की सामाजिक परम्पराओं नई तकनीक के प्रति आदिवासियों के दृष्टिकोण को समझने में काफी मददगार साबित हुआ। आर्थिक विकास, अर्थव्यवस्था, निम्न जीवन स्तर, यातायात सेवाऐं, संचार सेवाऐं, स्वास्थ्य सेवाओं का प्रसार, शैक्षणिक सेवाओं का प्रसार, स्वास्थ्य एवं शिक्षा की लागत, व्यापार आदि स्थानिक वितरण को प्रभावित करते है।
2. सामाजिक एवं आर्थिक दोनों एक–दूसरे के पूरक है। अत: दोनों से धनिष्ट सम्बन्ध है।
3. खरगोन जिले में कृषि सम्बन्धी योजनाओं के अन्तर्गत जिलें में आदिवासियों को नि:शुल्क कृषि यन्त्र, उचित मूल्य पर खाद–बीज, न्यूनतम दर पर ऋण तथा बागाती कृषि को प्रोत्साहन देने हेतु शासन प्रयासरत है।
4. अध्ययन क्षेत्र जिला खरगोन में नि:शुल्क कृषि उपकरण के रूप में केवल हल एवं बक्खर, हार्वेस्टर ट्रैक्टर थ्रेसर तथा ड्रिप सिंचाई पाईप बड़े कृषकों को 80 प्रतिशत सब्सिडी पर प्रदान किये जाते है। जिले के 35.92 प्रतिशत सर्वेक्षित आदिवासी नि:शुल्क कृषि उपकरण प्राप्त करते है। इस योजना के अन्तर्गत सबसे अधिक कसरावद तहसील के 50 प्रतिशत सर्वेक्षित आदिवासी सेगाँव, महेश्वर तथ बड़वाह के कुछ ही सर्वेक्षित आदिवासी लाभ ले सकें है।
5. खरगोन जिले में उत्तम बीज वितरण योजना के अन्तर्गत 52.59 प्रतिशत सर्वेक्षित आदिवासी नि:शुल्क उत्तम बीज प्राप्त करते है। तहसील स्तर पर सबसे अधिक खरगोन तहसील के 61.66 प्रतिशत सर्वेक्षित आदिवासी तथा सबसे कम कसरावद तहसील के 40 प्रतिशत सर्वेक्षित आदिवासी उत्तम बीज प्राप्त करते है।
6. कृषक क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत जिले के 48.88 प्रतिशत सर्वेक्षित आदिवासी कृषक क्रेडिट कार्ड धारी है तहसील स्तर पर सबसे अधिक कसरावद तहसील के 61.66 प्रतिशत तथा सबसे कम बड़वाह तहसील के 41.66 प्रतिशत सर्वेक्षित आदिवासी लाभ ले रहें।
7. आदिवासियों का आर्थिक विकास हेतु शासन ने जीवनधारा योजना प्रारम्भ की जिसमें सिंचाई के साधनों में वृद्धि हो तथा सिंचाई के क्षेत्रफल में वृद्धि हो परन्तु जिले के केवल 35.37 प्रतिशत सर्वेक्षित आदिवासी इस योजना से लाभान्वित हो सकें है। तहसील स्तर पर सबसे अधिक सेगाँव तहसील के 51.66 प्रतिशत तथा सबसे कम महेश्वर तहसील के 25 प्रतिशत सर्वेक्षित आदिवासी इस योजना का लाभ उठा रहें है।

तालिका क्रमांक 1 **(अन्तिम पृष्ठ पर देखे)**

विकासत्माक परिर्वतन – खरगोन जिले के आदिवासी बहुल्य क्षेत्र में आदिवासियों की जीवन शैली को पद और शिक्षा ने काफी हद तक बदल डाला है। पैदल और बैलगाड़ी पर सफर करने वाला इस वर्ग का एक बड़ा तबका अब दोपहिया वाहन पर सवार होकर सफर करने लगा है। मुँह में सिगरेट तो हाथों में मोबाइल है। घर में टी0वी0 तो आँगन में ट्रैक्टर खड़ा है। पद और शिक्षा में आदिवासी वर्ग के 25 से 30 प्रतिशत लोगों को आधुनिकता की ओर तेजी से धकेला है। बावजूद इसके आदिवासियों का एक बड़ा वर्ग अब भी ब्याज और शराब के चंगुल से मुक्त नहीं हो पाया है। आजादी के बाद से इस वर्ग के लोगों का जिले में मुख्य व्यवसाय कृषि और खेतीकार मजदूर रहा है।

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविधालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

शनैः शनैः इस वर्ग ने 'कर' लिए और गाँव से बाहर निकालकर शहर की ओर कुछ किया है और वे शहरी क्षेत्र, में होने वाले भवन निर्माणों के मजदूर बने और नगरीय क्षेत्र के सम्पन्न वर्ग के कृषको के खेतों में हिस्सेदारी शुरू की पंचायतीराज लागू होने एवं आदिवासी बाहुल्य छोटे-छोटे गाँव और फालियों में भी स्कूल खुलने से इस वर्ग का विकास हुआ है।

पद और शिक्षा ने इस समुदाय के 25 से 30 प्रतिशत लोगों की जीवन शैली को बदल डाला है। पंचायतीराज में मिले पंच, सरपंच, जनपद अध्यक्ष, जनपद प्रतिनिधि, जिला पंचायत प्रतिनिधि जैसे पदों और शिक्षा में पैदल चलने वाले और बैलगाड़ी में सफर करने वाले आदिवासी को आधुनिकता की ओर ले जाने में योगदान दिया है।

पद और शिक्षा की बदौलत ही वर्तमान में 30 प्रतिशत आदिवासी मोबाइल का उपयोग कर रहे हैं। 25 प्रतिशत के पास दुपहिया वाहन है। पद और शिक्षा से जब आर्थिक स्थिति में बदलाव आया तो पहनावे और रहन-सहन में बदलाव आना ही था। लंगोटी, लहँगा और धोती के स्थान पर पेंट-शर्ट, सलवार-सूट और साड़ी ने स्थान लिया है। यह वर्ग फलियों, मजरो एवं टोलों में अब भी निवासरत है। शासन एवं जनप्रतिनिधियों के साझा प्रयासों से इन फालियों, मजरों, टोलों में पानी के लिए हैंडपंप, सिंचाई के लिये तालाब एवं स्टॉपडेम बनाए जाने लगे है, और फालियो तक बिजली पहुँचाने से इस वर्ग को अपना विकास करने में सहायता मिली है। वनांचलों में स्वास्थ्य सुविधाओं के पहुँचने से भी टोने-टोटके और ओझाओं से नजदीकियाँ घटी है। सड़कों की सुविधा ने भी इन्हें लाभान्वित किया है। पद, शिक्षा और सुविधा ने फालियों में निवासरत् आदिवासियों को शहरी से जोड़ा है। इस जुड़ाव से कृषि में भी आधुनिकता का समावेश हुआ है।

फालियों में पहुँचे टेलीविजन ने अंधविश्वास और बहु पत्नी प्रथा के साथ ही बच्चों की अधिक संख्या को नियंत्रित किया है। आजादी के समय तक यह वर्ग अशिक्षित और रुढ़ीवादी था। न शिक्षा थी न सुविधा थी और न ही कोई पद था। पंचायतीराज में मिले आरक्षण में इस वर्ग के एक बड़े तबके की काया पलटने में अहम भूमिका निभाई है। घर पर जुवार की रोटी और मूँग की दाल खाने वाला आदिवासी पद पर आने के बाद शहर की बेहतरीन होटलों में अपने खाने पर अच्छी खासी रकम व्यय करने लगा है।

आजादी के बाद शनैः-शनैः हुए बदलाव, शिक्षा पद और सुविधा की बदौलत हुए परिवर्तन के लाभ से इस वर्ग का एक बड़ा तबका अब भी वंचित है। ब्याज पर राशि जुटाकर कृषि करने वाले आदिवासियों की संख्या 25 प्रतिशत की कमी आई है 75 प्रतिशत दो से पाँच एकड़ की भूमि वाले कृषक वर्तमान में भी ब्याज पर पैसा लेकर कृषि करने में जुटे हुए हैं।

प्रकृति ने साथ दिया तो कर्ज चुकाने में कोई दिक्कत नहीं है। प्रकृति के साथ नहीं देने पर फिर वही बदहाली का आलम। आजादी के बाद आदिवासी बहुल्य खरगोन जिले में इस वर्ग में काफी बदलाव देखा जा रहा है। इस बदलाव के बावजूद शराब ने इनका घर नहीं छोड़ा है। शिक्षा और पद के बावजूद इस वर्ग के 40 से 50 प्रतिशत लोग इस बुराई से दूर नहीं हो पाए हैं। हुआ यह है कि पद और शिक्षा ने हाथ की बनी शराब के स्थान पर विदेशी शराब को करीब ला दिया है। इस वर्ग के शत्-प्रतिशत शिक्षित होने शराब से दूर रहने और ब्याज से मुक्त होने के बाद ही आना सम्भव लग रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कौशिक, एस.डी.: मानव भूगोल रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ पृष्ठ संख्या -14,16
2. मिश्र, उमाशंकर (1975): भारतीय आदिवासी संस्करण - पृष्ठ संख्या- 123
3. डॉ. कुमार ,प्रमिला (1995): मध्यप्रदेश एक भोगौलिक अध्ययन मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी ,भोपाल (म.प्र.) पृष्ठ संख्या - 147
4. डॉ. मामोरिया ,चतुर्भुज : मानव भूगोल साहित्य भवन पब्लिकेशन, नई दिल्ली पृष्ठ संख्या- 177,195
5. मुकर्जी ,रविन्द्रनाथ :सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी -2001 विवेक प्रकाशन ,जवाहर नगर ,नई दिल्ली -7 पृष्ठ संख्या
6. डॉ. नदीम हसनैन (2000): जनजातीय भारत जवाहर पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली -16 पृष्ठ संख्या- 34, 56

तालिका क्रमांक 1 : उत्तम बीज वितरण सर्वेक्षित ग्रामों में तहसील एवं जिला स्तर

तहसील	सर्वेक्षित ग्राम	सर्वेक्षित कृषक परिवार	सन्तुष्ट है	प्रतिशत	सन्तुष्ट नही है	प्रतिशत
महेश्वर	निमसर	20	9	45	11	55
	बबलाई	20	14	70	6	30
	केरियाखेड़ी	20	8	40	12	60
योग		**60**	**31**	**51.66**	**29**	**48.33**
कसरावद	पानवा	20	4	20	16	80
	बाजटपुरा	20	9	45	11	55
	झिरन्या	20	11	55	9	45
योग		**60**	**24**	**40**	**36**	**60**
बड़वाह	सुलगाँव	20	14	70	6	30
	आक्या	20	11	55	9	45
	अम्बा	20	13	65	7	35
योग		**60**	**38**	**63.33**	**22**	**36.66**
सेगाँव	सांगवी	20	13	65	7	35
	बिरला	20	15	75	5	25
	सिलोटिया	20	5	25	15	75
योग		**60**	**33**	**55**	**27**	**45**
भगवानपुरा	देजला	20	9	45	11	55
	मोहना	20	12	60	8	40
	पिपलझोपा	20	14	70	6	30
योग		**60**	**35**	**58.33**	**25**	**41.66**
झिरन्या	कोटड़ा	20	12	60	8	40
	धुपा-बुजुर्ग	20	11	55	9	45
	नरवट	20	7	35	13	65
योग		**60**	**30**	**50**	**30**	**50**
भीकनगाँव	मुहाली	20	12	60	8	40
	निमोनी	20	9	45	11	55
	भोपाड़ा	20	5	25	15	75
योग		**60**	**26**	**43.33**	**34**	**56.66**
खरगोन	डोंगर चिचली	20	17	85	3	15
	सिनखेड़ा	20	12	60	8	40
	घुघरी	20	8	40	12	60
योग		**60**	**37**	**61.66**	**23**	**38.33**
गोगाँवा	लिमड़ी	20	12	60	8	40
	दशनावल	20	9	45	11	55
	रूपखेड़ा	20	9	45	11	55
योग		**60**	**30**	**50**	**30**	**50**
जिले का योग	**योग**	**540**	**284**	**52.59**	**256**	**47.40**

****

शाजापुर जिले में शासकीय योजनाएँ एवं महिला उद्यमिता विकास

डॉ. जगदीश प्रसाद कुल्मी *

प्रस्तावना – आर्थिक विकास के नवीन विकास मॉडल में महिलाओं के लिये विकास सूचकांक तथा सशक्तिकरण माप की व्यवस्था की गई है। ये दोनो प्राचल महिलाओ के विकास से संबंधित है। महिला विकास का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष उनका आर्थिक सशक्तिकरण है। संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार आर्थिक क्षेत्र में महिलाओं के कार्यो को उचित सम्मान नहीं मिलता है। भारत सरकार ने विकास गतिविधियों में महिलाओं की महत्वपूर्ण भुमिका को पहचाना है और उनके लिए कई कार्यक्रमों और योजनाओं के रूप मे सकारात्मक कदम उठाए है, ताकि उन्हें विकास की मुख्यधारा में लाया जा सके। विकसित एवं विकासोन्मुखी,समाजवादी एवं पूँजीवादी राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था में स्वरोजगार योजनाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही है।

प्रस्तुत अध्ययन मे विभिन्न स्वरोजगार योजनाओं जैसे दीनदयाल स्वरोजगार योजना(**1-8-2004**), रानी दुर्गावती अनु.जाति/जनजाति स्वरोजगार योजना (**1-4-2003**) एवं प्रधानमंत्री रोजगार योजना(**2-10-1993**) जो वर्तमान मे प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम हो गई है, का विवरण दिया गया है। स्वरोजगार योजनाओ के अतिरिक्त गैर सरकारी संगठन भी महिला उद्यमिता के लिए कार्य कर रहे है। उनका योगदान भी महिला उद्यमिता के लिए महत्वपूर्ण है। अत: शासन की मंशानुसार उद्यमिता के विकास के लिए संचालित स्वरोजगार योजनाओं का सफलता-पूर्वक संचालन आवश्यक है। संचालन कार्य के लिए विभिन्न शासकीय विभागों और गैर सरकारी संगठनों का सहयोग आवश्यक है। इस प्रकार समस्त तथ्यो को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध-पत्र के द्वारा महिला उद्यमिता से संबधित समस्याओं को समझने एवं उन समस्याओं को किस प्रकार दूर किया जा सकता है, यह जानने का प्रयास किया गया है। यदि शोध-पत्र द्वारा प्रस्तुत सुझावों को अमल में लाया जाता है तो महिला उद्यमिता में सुधार आने की पूर्ण संभावना है।

उद्देश्य – यह शोध-पत्र निम्न उद्देश्यो को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है :

1. शाजापुर जिले में संचालित शासकीय योजना का महिला उद्यमिता विकास में योगदान का अध्ययन करना।
2. शाजापुर जिले में महिला उद्यमिता का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ – प्रस्तुत शोध-पत्र में निम्न परिकल्पना की गई है :

1. शाजापुर जिले में संचालित शासकीय योजनाएँ एवं गैर सरकारी संगठनो द्वारा महिला उद्यमियो को पर्याप्त साख एवं प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध हुई है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध -पत्र द्वितीयक समंको पर आधारित हैं।

द्वितीयक समंक – द्वितीयक समंक वे समंक होते है जो अनुसंधानकर्ता को प्रकाशित एवं अप्रकाशित शासकीय एवं अर्द्धशासकीय प्रलेखों, रिपोर्ट, सांख्यिकी, पत्र-पत्रिकाओं, डायरी आदि से प्राप्त होते है।

शाजापुर जिले में महिला उद्यमिता विकास में संस्थागत वित्त-एवं प्रशिक्षण – सरकार के द्वारा उद्यमिता विकास के लिए समय-समय पर विभिन्न स्वरोजगार योजनाओं का निर्माण किया गया। शाजापुर जिले में विभिन्न स्वरोजगार योजनाओं संचालन जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, शाजापुर द्वारा बैंको के सहयोग से हो रहा हैं। इन योजनाओं में प्रधानमंत्री रोजगार योजना (2-10-1993), दीनदयाल स्वरोजगार योजना (1-8-2004), रानी दुर्गावती अनुसूचित जाति जनजाति स्वरोजगार योजना (1-4-2003) आदि प्रमुख हैं। स्वरोजगार योजनाएँ बैंकों के सहयोग के बिना पूर्ण नहीं हो सकती हैं। इस प्रकार विभिन्न स्वरोजगार योजनाएँ शाजापुर जिले में स्थित विभिन्न राष्ट्रीयकृत बैंको के माध्यम से संचालित की जाती हैं। जिले के आर्थिक विकास में स्वरोजगार योजनाओं का योगदान जिले के विकास को प्रदर्शित करता हैं। स्वरोजगार योजनाओं के संचालन में बैंको की भूमिका महत्वपूर्ण होती हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र में प्रधानमंत्री रोजगार योजना (2-10-1993) , दीनदयाल स्वरोजगार योजना (1-8-2004), रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजना (1-4-2003), स्वर्ण जंयति रोजगार योजना (1-12-1997) के योगदान का अध्ययन किया जाएगा। यह अध्ययन वर्ष 2007-08 से 2011-12 तक किया जावेगा। प्रधानमंत्री रोजगार योजना की जगह 01.04.2008 से प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम को लागु किया गया हैं।

ऋण की राशि का वितरण – शाजापुर जिले में शासकीय योजनाओं के माध्यम से सर्वेक्षित महिला उद्यमियों को उद्योग स्थापित करने में जो ऋण प्राप्त हुआ हैं। उसमें महिला उद्यमियों ने वर्तमान स्थिति तक ऋण की राशि कितने प्रतिशत चुकाई हैं। यह तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका 1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 1 में शाजापुर जिले में सर्वेक्षित 200 महिला उद्यमियों के ऋण की राशि संबंधी विवरण को विकासखण्डवार ज्ञात किया गया हैं। जिले में विकासखण्डवार सर्वाधिक शाजापुर तहसील में 14, मो. बड़ोदिया में 13, शुजालपुर में 11, कालापीपल में 9, आगर में 14, बड़ौद में 6, सुसनेर में 11 तथा नलखेड़ा में 12 महिला उद्यमियों ने अपने ऋण की 60 प्रतिशत से अधिक राशि वर्तमान स्थिति तक चुकाई हैं। जिले में कुल 200 महिला उद्यमियों में से 90 महिला उद्यमियों ने अपने ऋण की राशि 60 प्रतिशत से अधिक राशि वर्तमान स्थिति तक चुकाई हैं।

इस प्रकार शाजापुर जिले में 1 प्रतिशत महिला उद्यमियों ने 20 प्रतिशत से कम, 17 प्रतिशत महिला उद्यमियों ने 20 से 40 प्रतिशत, 37 प्रतिशत

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, नलखेड़ा, जिला आगर मालवा (म.प्र.) भारत

महिला उद्यमियों ने 40 से 60 प्रतिशत तथा 45 प्रतिशत महिला उद्यमियों ने 60 प्रतिशत से अधिक राशि का भुगतान वर्तमान स्थिति तक किया हैं।

रेखाचित्र : स्थापित उद्योगों में ऋण की राशि का विवरण

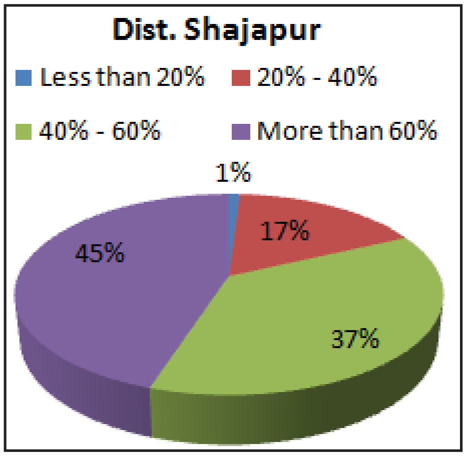

शाजापुर जिले में महिला उद्यमिता विकास का आर्थिक

आर्थिक स्थिति – शाजापुर जिले में शासकीय योजनाओं के माध्यम से उद्योग स्थापित करने के बाद सर्वेक्षित महिला उद्यमियों की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ या नहीं उसका विवरण तालिका में दर्शाया गया हैं।

तालिका 2 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 2 से ज्ञात होता हैं कि शाजापुर जिले में 76 प्रतिशत महिला उद्यमियों की आर्थिक स्थिति में उद्योग स्थापित करने के बाद सुधार हुअ हैं तथा शेष 24 प्रतिशत महिला उद्यमी ऐसे हैं जिनकी आर्थिक स्थिति में अपेक्षाकृत कोई सुधार नहीं हुआ हैं। अत: तालिका से स्पष्ट हैं कि योजना का लाभ लेने से अधिकांश महिला उद्यमियों की आर्थिक स्थिति अपेक्षाकृत सुदृढ़ हुई हैं।

रेखाचित्र : आर्थिक स्थिति संबंधी विवरण

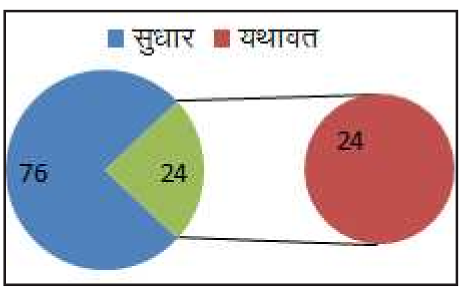

निर्वचन – शाजापुर जिले में उद्यमिता विकास के तहत चलाई जा रही शासकीय योजनाओं का महिला उद्यमियों की पारिवारिक, सामाजिक, जनांकिकीय तथा आर्थिक स्थिति पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन प्राथमिक सर्वेक्षण के माध्यम से किया गया हैं –

सर्वेक्षित विभिन्न व्यवसायों में घरेलू उद्योग तथा पारिवारिक उद्योग में महिलाओं की संलग्नता 50-50 प्रतिशत हैं।

शाजापुर जिले में चयनित कुल 200 महिला उद्यमियों का सर्वेक्षण किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि जिले में सर्वाधिक 55 प्रतिशत महिला उद्यमियों को उद्यम स्थापित करने की प्रेरणा स्वयं से, 25 प्रतिशत महिला उद्यमियों को उद्यम स्थापित करने की प्रेरणा मित्रों से, 8 प्रतिशत महिला उद्यमियों को उद्यम स्थापित करने की प्रेरणा रिश्तेदारों से तथा 12 प्रतिशत महिला उद्यमी ऐसे हैं जिन्होनें उद्यमिता से संबन्धित शासकीय योजनाओं के प्रचार – प्रसार के माध्यम से उद्योग स्थापित करने की प्रेरणा मिली हैं।

सर्वेक्षण से ज्ञात होता हैं कि शाजापुर जिले में शासकीय योजनाओं के माध्यम से महिला उद्यमियों को उद्योग स्थापित करने के लिए जो ऋण प्राप्त हुआ हैं उनमें से 1 प्रतिशत महिला उद्यमियों ने 20% से कम, 17 प्रतिशत महिला उद्यमियों ने 40 से 60% तथा 45 प्रतिशत महिला उद्यमियों ने 60% से अधिक राशि का भूगतान वर्तमान स्थिति तक किया हैं।

सर्वेक्षण से स्पष्ट होता हैं कि कुल 200 महिला उद्यमियों में से प्रति महिला उद्यमी औसतन ऋण **PMEGP** में सर्वाधिक 84800 रू. प्राप्त हुआ हैं। इसके अतिरिक्त **DDRY** में 48000 रू., **RDSY** में 24444 रू. **SJGSY** में 81851 रू., **SJSSY** में 50,000 प्रति महिला उद्यमी औसतन ऋण प्राप्त हुआ हैं।

इसी प्रकार कुल 200 महिला उद्यमियों में से प्रति महिला उद्यमी औसतन अनुदान भी **PMEGP** में सर्वाधिक 17400 रू. तथा इसके अतिरिक्त **DDRY** में 8888 रू., **RDSY** में 3500 रू. **SJGSY** में 8185 रू., **SJSSY** में 10000, अत: स्पष्ट हैं कि **PMEGP** योजनान्तर्गत सर्वाधिक प्रति महिला उद्यमी औसतन ऋण तथा प्रति महिला उद्यमी औसतन अनुदान महिला उद्यमियों को प्राप्त हुआ हैं, जो योजना के सफल क्रियान्वयन को दर्शाता हैं।

परिकल्पना :

1. शाजापुर जिले में संचालित शासकीय योजनाओं द्वारा महिला उद्यमियो को पर्याप्त साख एवं प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध हुई हैं।

शाजापुर जिले में महिला उद्यमिता से संबन्धित शासकीय योजनाओं का कुल व्यय

Year	SD PC income (in hund.)	Total Exp. (in lac.)
2007-08	693.91	2257.55
2008-09	783.6	2481.59
2009-10	854.65	2628.58
2010-11	924.5	3051.30
2011-12	612.71	2051.28

परिकल्पना परीक्षण – इस परिकल्पना परीक्षण में शाजापुर जिले में महिला उद्यमिता विकास से संबन्धित विभिन्न शासकीय योजनाओं में होने वाले व्यय (स्वतंत्र चर) एवं शाजापुर जिले की प्रति व्यक्ति आय (आश्रित चर) के मध्य प्रतीपगमन मॉडल को तालिका में दर्शाया गया हैं।

-Coefficients

Model	Unstandard-ized coef.		Stadard-ized coef.	t	Sig.
	B	Std. error	Beta		
(constant)	-2.408	70.697	.922	-.0346	.974
Total exp. In shaja-pur dist.	0.312	.050		.286	.000

तालिका के आधार पर प्रतीपगमन समीकरण निम्न प्रकार से बनेगा –

$$\hat{p}\, c = \hat{a} + \beta, TE + e$$

समीकरण में तालिका मूल्य रखने पर

$$\hat{p}\, c = (-2.408) + 0.312(TE) + e$$

विश्लेषण – तालिका में शाजापुर जिले के संबंध में बनाये गये मॉडल से स्पष्ट हैं कि प्रति व्यक्ति आय के सापेक्ष β_1 0.312 तथा इसका t मूल्य 6.286 (.000 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर) हैं, जो यह स्पष्ट करता हैं कि

β_1 में यदि 1% परिवर्तन होगा तो प्रति व्यक्ति आय 6.28 सार्थक एवं धनात्मक रूप से बढ़ेगी।

मॉडल में r = 0.84 तथा F का मूल्य 39.51 (.000 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर) हैं, अर्थात सम्पूर्ण मॉडल में 84% परिवर्तन लिये गये स्वतंत्र चर के कारण हो रहे हैं जबकि 16% परिवर्तन अन्य कारणों से हो रहे हैं जो हमारे अध्ययन की विषयवस्तु नहीं रहे हैं।

निर्वचन – परिकल्पना के परीक्षण से स्पष्ट होता हैं कि महिला उद्यमिता से संबन्धित शासकीय योजनाओं का शाजापुर जिले की प्रति व्यक्ति आय पर सकारात्मक प्रभाव पड़ रहा हैं। अत: परिकल्पना स्वीकार योग्य हैं।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हैं कि महिला उद्यमियों को अपने परिवार व उद्योग स्थल पर अनेक प्रकार की समस्याओं के बीच सामंजस्य बिठाते हुए कार्य करना होता हैं। अत: यदि इस अध्ययन में प्रयुक्त किये गए मौखिक तथा व्यवसायिक सुझावों को अमल में लाया जाता हैं तो निश्चित रूप से महिलाएँ अपनी समस्याओं का धीर – धीरे समाधान कर सकेगी एवं शासकीय योजनाएँ भी वास्तविकताओं के धरातल पर फलीभूत हो सकेगी।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता हैं कि महिलाएँ अपने अधिकारों व हितों के प्रति जागरूक हो, उनमें आत्मविश्वास और आत्मचेतना की प्रवृति विकसित हो ताकि वे उचित आय प्राप्त कर पारिवारिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान के साथ-साथ आर्थिक आत्मनिर्भरता प्राप्त कर सके। इस हेतु निचले स्तर से उपरी स्तर तक बेहतर प्रबंधन एवं क्रियात्मकता के स्तर पर गुणात्मक सुधार की आवश्यकता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल अंजु एंड अरोडा डी. आर (1989), वूमेन इन रुरल सोसाइटी,वोहरा पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्युटर्स, इलाहाबाद
2. आनंद सुचित्रा (1986), वूमेन एट वर्क इन इंडिया:ए बिब्लियोग्राफी, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
3. आर्य साधना (2000), वूमेन जेण्डर इक्वेलिटी एंड द स्टेट, दीप एंड दीप पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
4. अवस्थी आभा, ए.के.श्रीवास्तव (2001), मॉडर्निटी, फेमिलिज्म एंड वूमेन इम्पावरमेंट, रावत पब्लिकेशन्स,जयपुर
5. जी.एस. सुधा,2008, उद्यमिता विकास,रमेश बुक डिपो, जयपुर
6. पाठक अभय, 2009, उद्यमिता विकास, रामप्रसाद एण्ड संस, आगरा, 11-12
7. उद्यमिता मार्गदर्शिका,2009, उद्यमिता विकास केंद्र,मध्यप्रदेश (सेडमेप),भोपाल
8. जिला सांख्यिकी पुस्तिका,2009, जिला सांख्यिकीय कार्यालय, शाजापुर।
9. मानव विकास प्रतिवेदन,मध्य प्रदेश शासन, 2014।
10. जिला चिकित्सा पुस्तिका,2010, जिला चिकित्सालय,शाजापुर।
11. जिला सांख्यिकी संक्षेप,2012, मध्यप्रदेश शासन भोपाल।
12. जनसंख्या नीति पुस्तिका,2012, जिला साक्षरता समिति, शाजापुर।
13. वार्षिक प्रपत्र, 2014, जिला व्यापार एवं उद्योग केंद्र जिला शाजापुर।
14. उद्यम मार्गदर्शिका,2010, उद्यमिता विकास केंद्र म.प्र सेडमेप भोपाल
15. जिला पंचायत ग्रामीण विकास कार्यालय, शाजापुर
16. जिला शहरी विकास अभिकरण कार्यालय, शाजापुर
17. खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड, जिला पंचायत, शाजापुर
18. महिला एवं बाल विकास कार्यालय, शाजापुर
19. बैंक ऑफ इंडिया, अग्रणी बैंक, जिला शाजापुर
20. जिला परियोजनाधिकारी समस्त विकासखण्ड, जिला शाजपुर
21. जिला सांख्यिकीय कार्यालय,जिला शाजापुर

तालिका 1 : स्थापित उद्योगों में ऋण की राशि का विवरण

विवरण	विकास खण्डवार सर्वेक्षित महिला उद्यमी								जिला शाजापुर	प्रतिशत
	शाजापुर	मो. बड़ोदिया	शुजालपुर	कालापीपल	आगर	बड़ौद	सुसनेर	नलखेड़ा		
20 प्रतिशत से कम	-	-	-	2	-	-	-	-	2	1
20 से 40 प्रतिशत	-	2	3	8	3	10	5	3	34	17
40 से 60 प्रतिशत	11	10	11	6	8	9	9	10	74	37
60 प्रतिशत से अधिक	14	13	11	9	14	6	11	12	90	45
कुल	25	25	25	25	25	25	25	25	200	100

स्त्रोत :- प्रत्यक्ष सर्वेक्षण के आधार पर

तालिका 2 : आर्थिक स्थिति संबंधी विवरण

विवरण	विकासखण्डवार सर्वेक्षित महिला उद्यमी								जिला शाजापुर	प्रतिशत
	शाजापुर	मो. बड़ोदिया	शुजालपुर	कालापीपल	आगर	बड़ौद	सुसनेर	नलखेड़ा		
सुधार	21	19	24	17	16	17	18	20	152	76
यथावत	4	6	1	8	9	8	7	5	48	24
कुल	25	25	25	25	25	25	25	25	200	100

स्त्रोत :- प्रत्यक्ष सर्वेक्षण के आधार पर

A Comparative Study of Job Satisfaction among Physical Education Teachers of Government and Private Schools: With Reference to Bilaspur Division of Chhattisgarh

Mahendra Patel* Dr. Jaishankar Yadav**

Abstract - Job satisfaction of physical education teachers working in various government and private schools from Bilaspur division of Chhattisgarh was compared in this study. To conduct the study 50 physical education teachers working government schools (Average age 34.02 yrs) and 50 physical education teachers working in private schools (Average age 30.27 yrs) were selected as sample. To assess job satisfaction of selected subjects, Job Satisfaction Scale prepared by Singh and Sharma (2006) was used. Results revealed that job satisfaction in physical education teachers working in government school was significantly higher as compared to their counterparts working in private schools. It was concluded that type of school i.e. government and private schools do influence job satisfaction in physical education teachers.
Keywords : Physical education teachers.

Introduction - In modern time's good health, nutrition and physical fitness are key markers of nation's prosperity. It is important that school children possess good health and fitness so as to become future torch bearer of our nation. The overall development both in terms of physical and mental wellbeing is essential so as to generate strong human resources. This is where role of physical education teacher is significant because physical education teachers help students to know about the utility of physical activity and educate them about its long term benefits. Physical education teachers use holistic approach to educate and nurture students about health, nutrition, fitness apart from psychological benefits of physical fitness. In this sense physical education teachers are integral part in school education in India. Hence it is vital that physical education teachers are satisfied with job. Job satisfaction is associated with self motivation and person's satisfaction towards his/her work. Job satisfaction is meant by fulfilling the expectation of an individual both professionally and personally. Job satisfaction is of great psychological relevance because it is believed that an individual can contribute when he/she is satisfied with their job. Studies have been conducted by researchers namely Deshmukh (2004), Tajnia et al. (2014), Ahmadian et al. (2015), Rajasekaran and Selvan (2018) in which factors associated with job satisfaction of physical education teachers were identified. So far no study has been conducted in which job satisfaction of physical education teachers working in government and private schools of Bilaspur Division of Chhattisgarh has been compared. Hence the present study was planned.

Objectives - The objective of the present study was to compare job satisfaction of physical education teachers working government and private schools.

Hypothesis - It was hypothesized that job satisfaction in physical education teachers of government schools would be significantly higher as compared to job satisfaction in physical education teachers working in private schools.

Methodology -

The following methodological steps were taken in order to conduct the present study.

Sample - To conduct the study 50 physical education teachers working government schools (Average age 34.02 yrs) and 50 physical education teachers working in private schools (Average age 30.27 yrs) were selected as sample. To assess job satisfaction of selected subjects, Purposive sampling was used for selection of sample.

Tools:

Job Satisfaction Scale - To assess job satisfaction of selected subjects, Job Satisfaction Scale prepared by Singh and Sharma (2006) was used. This scale consists of 30 statements with 04 possible responses. This scale is highly reliable and valid.

Procedure - 50 physical education teachers working in government schools and 50 physical education teachers working in private schools were selected purposively. Job Satisfaction Scale (JSS) was administered to each subjects as per directions given in manual provided by authors of

***Advanced Postgraduate Student (Physical Education) Dr. CV Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**
**** Asso. Professor (Physical Education) Dr. CV Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**

this scale. After evaluation of responses data was tabulated in respective study groups. Independent sample 't' test was used as statistical tool for comparative purpose. The analysis of data is shown in table 1

Result & Discussion

Table 1 (see below)

Comparison of job satisfaction between two study groups revealed that physical education teachers working in government schools were significantly more satisfied with their jobs as compared to physical education teachers working in private schools. The calculated t=2.79 also confirms this finding at .01 level of statistical significance. The results points to a fact that there is a huge difference in salaries and other facilities given to government and private schools. Mariano (1999) also reported the similar findings.

Conclusion - On the basis of results, it may be concluded that type of educational institution in the form of government/ private management influence job satisfaction in physical education teachers.

References :-

1. Ahmadian, R., Farshbaf, M. and Vafaeian, M. (2015). The relationship between burnout and job satisfaction of physical education teachers in Shabestar city. Indian Journal of Fundamental and Applied Life Sciences, Vol. 5 (S2), pp. 1235-1241.
2. Deshmukh, D.S. (2004). Job Satisfaction of Physical Education Teachers in Marthwada Region of Maharastra. Hanuman Vyayam Vidnyan, Vol. 34, May 2004.
3. Mariano, P. and Baker P. (1999). Job satisfaction among American Teachers : Effect of work place conditions, background characteristics and teacher compensation. Statistical Analysis Report, p. 2.
4. Rajasekaran, D. and Selvan M.D. (2018). Job satisfaction of physical education teachers in Coimbatore district. International Journal of Scientific Research and Review, Vol. 7, Issue 12, pp. 367-372.
5. Tajnia, J., Honari, H., Ranjdust, S. and Ebadi, N. (2014). Job Satisfaction of Physical Education Teachers in East Azerbaijan Province, Iran. Bulletin of Environment, Pharmacology and Life Sciences, Vol 3 (Spl issue II) 2014: 57-62.

Table 1 : Comparison of Job Satisfaction among Physical Education Teachers Working in Government and Private Schools

Variable	Type of Educational Institution				t	Level of Significance
	Government (N=50)		Private (N=50)			
	M	S.D.	M	S.D.		
Job Satisfaction	64.50	15.06	56.80	12.35	2.79	.01

****

राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना का अध्ययन (बिलासपुर जिले के विकासखण्ड कोटा के संदर्भ में)

डॉ. रीना तिवारी* सुमन शर्मा **

प्रस्तावना – स्वस्थ शरीर प्रत्येक जीव के लिए एक वरदान है।

'पहला सुख निरोगी काया'

देश में कार्यबल की कुल संख्या में लगभग 93 प्रतिशत असंगठित क्षेत्र के कामगार हैं। निर्धन व्यक्ति बीमा के लागत के कारण स्वास्थ्य बीमा लेने के लिए अनिच्छुक होते हैं या सक्षम नहीं होते हैं। स्वास्थ्य बीमा करना और इसे लागू करना, खास तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत कठिन है। केन्द्र सरकार ने स्वास्थ्य बीमा की जरूरत को पहचानते हुए राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना (आरएसबीवाय) आरंभ की है। 25 मार्च 2013 तक, योजना में 34,285,737 स्मार्ट कार्ड और 5,097,128 अस्पताल में भर्ती होने के मामले हैं।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना को 01 अप्रैल 2008 को लागू किया गया है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के लाभ :

1. असंगठित क्षेत्र के कामगार और उनके परिवार (पांच की इकाई) शामिल किए जाएंगे।
2. प्रति परिवार प्रति वर्ष पारिवारिक फ्लोटर आधार पर कुल बीमा राशि 50,000/- रूपये होगी।
3. सभी शामिल बीमारियों के लिए नगद रहित उपस्थिति।
4. अस्पताल के व्यय, सभी सामान्य बीमारियों की देखभाल सहित कुछ निष्कासन संभव है।
5. सभी पूर्व-मौजूद रोग शामिल किए जाए।
6. परिवहन लागत (प्रति विजिट अधिकतम 100 रूपए के साथ वास्तविक) के साथ 1000 रू0 की समग्र सीमा।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि निर्धन परिवारों हेतु राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना एक उपयोगी योजना है।

अध्ययन क्षेत्र का परिचय – प्रस्तुत अध्ययन छ0ग0 राज्य के बिलासपुर जिले के विकासखण्ड कोटा अंतर्गत किया गया है।

कोटा विकासखण्ड के अंतर्गत 02 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, 09 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं 47 उप स्वास्थ्य केन्द्र आते हैं।

इन स्वास्थ्य केन्द्रों की जानकारी निम्नानुसार है:-

तालिका क्र 0 1

क्र.	गांव का नाम	स्वास्थ्य केन्द्र
1	कोटा	सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र
2	रतनपुर	सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र
3	टेंगनमाड़ा	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र
4	करगीकला	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र
5	बेलगहना	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र
6	शिवतराई	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र
7	सल्का नवागांव	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र
8	आमागोहन	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र
9	पोंड़ी	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र

इन अस्पतालों में स्मार्ट कार्ड द्वारा इलाज की सुविधा है। यहां के मरीजों को कुत्ते काटने से लेकर डिलीवरी एवं अनेक बीमारियों हेतु स्मार्ट कार्ड का उपयोग करके चिकित्सकीय सुविधाऐ प्रदान की जाती है।

तालिका क्र0 2

क्र.	गांव का नाम	जनसंख्या	स्मार्ट कार्ड धारी परिवार की संख्या	प्रतिशत
1	कोटा	31945	7986	25.00
2	रतनपुर	29989	7497	25.00
3	टेंगनमाड़ा	25506	6377	25.00
4	करगीकला	27119	6780	25.00
5	बेलगहना	26588	6647	25.00
6	शिवतराई	21900	5475	25.00
7	सल्का नवागांव	23832	5958	25.00
8	आमागोहन	22821	5705	25.00
9	पोंड़ी	21106	5277	25.00
10	चपोरा	22800	5700	25.00
11	केंदा	19976	4994	25.00
	योग	**273582**	**68396**	**25.00**

इस बीमा योजना के द्वारा 772 प्रकार के बीमारियों का इलाज किया जाता है। सन् 2009 में स्मार्ट कार्ड द्वारा 30000/- का बीमा किया जाता था जिसकी राशि वर्ष 2012 में बढ़ाकर 50000/- कर दी गई।

वर्तमान समय में राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना को संशोधित करते हुए आयुष्मान भारत योजना लागू किया गया है। जिसमें बीमा की राशि बढ़ाकर 1 लाख रू0 कर दी गई है एवं बीमारियों की संख्या भी बढ़ाया जाना प्रस्तावित है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना की मुख्य विशेषताएं :

* निर्देशिका (समाजशास्त्र एवं समाज कार्य विभाग) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (समाज कार्य) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

1. **बेहतर मेडिकल इलाज**:- इस योजना के अंतर्गत सरकार गरीबों को पहले की अपेक्षा बेहतर मेडिकल ट्रीटमेंट देने की कोशिश करेगी। इस योजना के अंतर्गत लगभग सभी सरकारी एवं निजी मेडिकल शाखा समाहित की जाएगी।

2. **स्टेकहोल्डर्स को लाभ**:-इस योजना के अंतर्गत ऐसी संरचना बनायी गई है जिससे कि यहाँ एक तरफ गरीबों को लाभ होगा, वहीं दूसरी तरफ सरकारी अस्पताल, प्राइवेट अस्पताल और इंश्योरेंस कंपनी को भी काफी लाभ प्राप्त हो सकेगा।

3. **इंश्योरेंस**:- इस योजना के अंतर्गत इंश्योरेंस कंपनी बीपीएल लोगों को लाभ देगी। इसके अंतर्गत ये इंश्योरेंस, कंपनी केन्द्र और राज्य सरकार को प्रदान करेगी। इस तरह से गरीबी रेखा के लोग इस पॉलिसी की तरफ आकर्षित होंगे।

4. **अस्पताल को लाभ**:- इस योजना के अंतर्गत सरकार अथवा प्राइवेट अस्पतालों को इस बात का भय नहीं होगा कि उनके मेडिकल बिल कौन भरेगा। इस कारण निजी अस्पताल भी बिना किसी संशय के गरीबों को ट्रीटमेंट दे सकेगी।

5. **प्राइवेट और पब्लिक मेडिकल के बीच स्वास्थ्य प्रतिस्पर्धा**:- इस योजना के अंतर्गत सरकार ने निजी और सरकारी अस्पताल को एक पंक्ति में लाने की कोशिश की है। इस वजह से दोनों मेडिकल सेक्टर में एक स्वास्थ प्रतिस्पर्धा आ रही है, जिसका लाभ लोगों को अच्छे उपचार के रूप में प्राप्त हो सकेगा।

6. **कई मध्यस्थ संस्थानों को लाभ**:-इस योजना के अंतर्गत कई एनजीओ और एमएफआई को भी लाभ प्राप्त हो सकेगा। कई ऐसे संस्थान जो केन्द्र और राज्य सरकार स सहायता लेकर गरीबों के लिए अच्छी दवा मुहैया कराने का कार्य करते हैं, उन्हें काफी सहायता प्राप्त होगी और वे बेहतर कार्य कर पाएंगे।

7. **आईटी सेक्टर का प्रयोग**:- केन्द्र सरकार अपने लगभग सभी योजनाओं में आईटी सेक्टर का प्रयोग कर रही है। सरकार अपनी इस योजना के लिए भी आईटी तथा आधुनिक तकनीकों का प्रयोग कर रही है, ताकि योजना का संचालन बेहतर तरीके से हो सके। इससे योजना संबंधित समस्त डाटा सरकारी सर्वर में सुरक्षित रहेगा।

8. **ट्रांसपोर्ट के भाडे.का लाभ**:- सरकार ने इस योजना के अंतर्गत दवाओं का लाभ देने के साथ ही, एम्बुलेंस खर्च देने का भी ऐलान किया है, इसके अनुसार सरकार रोगी को किसी ग्रामीण या पिछडे स्थान से हॉस्पिटल ले जाने का भी खर्च देगी। यद्यपि सरकार इसके लिए रू. 1000 से अधिक खर्च नहीं देगी।

9. **कैशलेस प्रक्रिया** :- इस योजना का लाभ उठा रहे लोगों को किसी भी तरह से पैसे जमा करने की चिंता नहीं होगी। इसके साथ ही लाभार्थी को किसी तरह के बिल का भुगतान करने की भी आवश्यकता नही है। भुगतान संबंधित सभी कार्य स्मार्ट कार्ड द्वारा किया जा सकेगा।

10. **भारत के हर कोने में होगा मान्य** :- स्मार्ट कार्ड इस बात से परे कार्य करेगा कि वह देश के कौन से हिस्से में बनाया गया है। कोई भी व्यक्ति जिसने देश के किसी भी हिस्से से स्मार्ट कार्ड बनवाया है, उसे देश के किसी भी स्थान पर इसका प्रयोग करने की आजादी होगी।

11. इस योजना के अंतर्गत समस्त कार्य सरकार आधुनिक तकनीक के प्रयोग से कर रही है। इस योजना के लिए आवेदक को अपने समस्त बायोमेट्रिक डिटेल होने की वजह से किसी भी तरह की गलती होने की आशा नहीं होगी।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के लाभ हेतु क्लेम कैसे करें:-

1. इस योजना के अंतर्गत लाभ क्लेम करने की प्रक्रिया तेज और सरल है कार्ड धारक यदि अस्पताल में भर्ती कराया जाता तो सर्वप्रथम यह कार्ड अस्पताल में दिखाने की आवश्यकता होती है।
2. अस्पताल के अथॉरिटी द्वारा स्मार्ट कार्ड लेकर स्कैन किया जाता है यदि सभी जानकारियाँ औपचारिक रूप से सही हुई तो इलाज में कोई समस्या नहीं आती।
3. अस्पताल स्वयं ही रोगी के संबंधित दस्तावेजों को इंश्योरेंश कंपनी भेज देते है। इंश्योरेंस कंपनी के अफसर दस्तावेजों के जांच के बाद तुरंत ही अस्पताल को पैसे भेज देते हैं।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के लिए आवश्यक योग्यताएं - इस योजना के अंतर्गत सरकार ने कुछ विशेष शर्तें जारी की हैं, जिसके अंतर्गत यह सुनिश्चित किया जा सकेगा कि योजना का लाभ सही लोगों को प्राप्त हो रहा है।

1. **गरीबी रेखा के नीचे**:- इस योजना के अंतर्गत सरकार ने केवल उन लोगों को लाभ देने की योजना बनायी है जो गरीबी रेखा से नीचे हैं।

2. **विभिन्न अव्यवस्थित सेक्टर के श्रमिक**:- इस योजना के अंतर्गत सरकार ने यह तय किया है कि जो भी व्यक्ति किसी ऐसे स्थान पर कार्य कर रहे है जहां पर वह अधिक पैसे नहीं कमा पाते हों वह भी स्मार्ट कार्ड से अपना इलाज करा सकते हैं।

3. **स्मार्ट कार्ड की आवश्यकता**:- यदि इंश्योरेंस प्राप्त लाभार्थी को इस योजना के तहत् कैशलेश सुविधा प्राप्त करना हो तो उसके पास स्मार्ट कार्ड का होना अनिवार्य है।

4. **पांच सदस्यों के लिए**:- इस योजना के अंतर्गत सरकार किसी भी परिवार के पांच लोगों को योजना का लाभ प्रदान करेगी।

5. **राशन कार्ड की आवश्यकता**:- आवेदकों के पास राशन कार्ड का होना अनिवार्य है, जिन लोगों के पास राशन कार्ड होगा इस योजना का लाभ वही ले पाएंगे क्योंकि राशन कार्ड से ही गरीबी रेखा के अंदर आने वाले लोगों की पहचान की जा सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. द इकोनॉमिक टाइम्स, ग्रामीण डेलिगेशन विजिटिंग इंडिया टू टेक राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना (2012)
2. मिश्रा, रमेन्द्रनाथ एवं अन्य, ने 'संदर्भ छत्तीसगढ', संशोधित संस्करण 2008 अनुसंधान पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स
3. एन.जी.ओ. 2016 द्वारा प्राप्त पुस्तिका
4. आरबीएवाय : नेशनल समरी 2011
5. संचालनालय स्वास्थ्य सेवायें बिलासपुर की पत्रिका (2018)
6. संचालनालय स्वास्थ्य सेवायें की पत्रिका (2018)
7. टूटेजा, अनिल, 'प्रतियोगिता सारांश' 2008 अमन प्रकाशन रायपुर

****

बाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड एवं अयोध्याकाण्ड में शकुन विचार

डॉ. वेदप्रकाश मिश्र* गणेश प्रसाद तिवारी**

प्रस्तावना - आदिकवि महर्षि वाल्मीकि की यह पावन कृति रामायण जहां एक ओर मर्यादापुरूषोत्तम श्रीराम के लोकवन्दित विक्रम की गौरवमयी गाथा है, वहीं दूसरी ओर इसे विविध शास्त्रों के आधारभूत सिद्धांतों का अनवद्य आकर भी माना जाता है। स्कन्द महापुराण के रामायण माहात्म्य में व्यासदेव का यह कथन सर्वथा अवधेय है, रामायण के संदर्भ में -

रामायणेन तर्तन्ते सुतसं ये जगडिगता:।
त एव कृतकृत्याश्च सर्वशास्त्रार्थको विदा:।।
धर्मार्थकाममोक्षणां साधनं च द्विजोत्तमा:।
श्रोतव्यं च सदा भक्त्या रामायणपतमृतम्।।[1]

यह काव्य धर्मादि पुरूषार्थ चतुष्टय की उपलब्धि का श्रेष्ठ साधन है तथा शाश्वत चिन्तन का उद्यावक-प्रस्तावक होने के कारण अमृत स्वरूप भी है। इस ग्रन्थ का आधार लेकर अपनी लोक यात्रा सम्पन्न करने वाले सर्वसुहृद् मनुष्य सभी शास्त्रों के परगामी विद्वान् हो जाते हैं।

'कार्य सर्वदा कारणका ज्ञापक होता है।' इस न्यायसे यह 'सर्दशास्त्रार्थकोविद' विशेषण रामायणीय विषयवस्तु के निशद फलक की व्यापकता को इंगित करता है। यह बतलाता है कि रामकाव्य केवल साधारण काव्य नहीं है अपितु इसमें काव्योंचित वर्णना के अतिरिक्त अन्य विषय भी समाविष्ट हुए है। पर मेरा शोध पत्र शकुन विचार पर केन्द्रित होगा।
शकुन विचार, रामायण में नानाविध शास्त्रीय तथ्य बीजरूप में विद्यमान हैं। इस शोध पत्र में रामायण काव्य के बालकाण्ड एवं अयोध्याकाण्ड में प्राप्त होने वाली शकुन सम्बन्धी मान्यताओं का समालोचन करणीय है। इन दोनों ही काण्डों में विभिन्न प्रसंगों के अन्तर्गत शकुन शास्त्रीय विचार उपलब्ध होते हैं, उनके क्रमिक उप स्थापन से पूर्व शकुन के स्वरूपादि को स्पष्ट करना आवश्यक है। रामायण मुख्यत: भौम, आन्तरिक्ष तथा दिव्य निमित्तों को शकुन के रूप में ग्रहण करता है।

शकुन शब्द प्राकृष्ट सामर्ध्ये धातु में शकेरूनोनतोन्तुनय:।।[2]

इस उणादिसूत्र से 'उन' प्रत्यय का विधान करने पर निष्पन्न हुआ है, शक्नोति शुभाशुभं विज्ञातुभनेन इत्यादित व्युत्पत्ति के आधार पर जो साधन व्यक्ति को शुभ और अशुभ भावी परिणामों को जानने में समर्थ बनाये, उसे शकुन कहते हैं' यह तात्पर्य ज्ञात होता है। शकुनविज्ञान ज्योतिषशास्त्र का अन्तर्वर्ती विज्ञान है। यह मुख्यत: ज्योतिष के संहिता नामक स्कन्ध से सम्बन्ध रखता है। परम्परांगत मान्यता है और शास्त्रीय उल्लेख भी है कि अन्य शास्त्रों की भाँति इसे भी भगवान् सदाशिव ने लोकहितार्थ प्रकट किया था। जैसा कि - 'स्वयं त्रिनत्रो भगवान् गणानामुपादिशत् शाकुन मुत्तमं च मत्। शकुन का एक अर्थ पक्षी भी होता हैं इस शास्त्र के अधिकांश निमित्त पक्षियों पर अवलम्बित हैं, अत: इसे पक्षियों की प्रवृत्ति, स्वर आदि के आधार पर फल को सूचित करने वाला शास्त्र कहने में कोई अनौचित्य नहीं है।

विभिन्न फलज्ञापक ग्रन्थों में पक्षियों की अस्वाभाविक चेष्टाओं के आधार पर इष्ट, अविष्ट फल शास्त्रकारों ने बताये भी है। शुकन विज्ञान एक व्यवहारोपयोगी विज्ञान है, जिसकी सूचनाओं का समुचित उपयोग करके मनुष्य प्रतिकूलताओं की दिशा को अवश्य ही परिवर्तित कर सकता है।

भारतवर्ष के सर्वदर्शी मनीषी ऋषियों ने पशु-पक्षी, विभिन्न जीव-जन्तुओं की चेष्टा, भाव, आकृति, प्रकृति, विकृति, आदि का गहन अध्ययन करके, उनके व्यवहारों का सूक्ष्म निरीक्षण करके सदसत् परिणामों का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन किया और उन निष्कर्षों को लोकहितार्थ लिपिबद्ध भी किया। इस प्रकार यह विज्ञान लोकमानस की श्रद्धा का पात्र और आवश्यकता का प्रामाणिक उपाय भी बन सका।

महर्षि बाल्मीकि परावरतंता त्रिकालदर्शी ऋषि हैं, अत: उनके महनीय प्रबन्ध में कालदर्शक तत्तवों का होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है, अपितु ऐसा होना तो सर्वथा स्वाभाविक ही है। आदिकवि के द्वारा मानित कतिपय मुख्य ज्ञापक निमितों को यहां संक्षेप में मीमांसा की जा रही है, जो लोकमानस का कल्याण करने में समर्थ होगी। रामायणकार ने तीन प्रकार के शकुनों अथवा निमित्तों को अपने वर्ण्य विषय बनाया है, वे हैं इष्टानिष्टार्थ ज्ञापन शकुन। यहाँ उनकी संक्षेप में यथाक्रम चर्चा की जा रही है।

रामायण में विभिन्न स्थलों पर ऐसे शकुनों की चर्चा की गयी है, जो कालान्तर में किसी विशेष अभीष्ट परिणाम की सूचना देने वाले हैं। जिस समय महाराज दशरथ ने पुत्र प्राप्ति की कामना में अश्वमेघ यज्ञ करने का प्रस्ताव वसिष्ठ आदि मुनियों के समक्ष किया था, तब महर्षियों ने उनकी ऐसी धार्मिक बुद्धि को अभीष्ट की सूचमित्री प्रतिपादित किया। जैसा कि रामायण में -

सरखाश्चोत्तरे तीरे यज्ञभूमिर्विधीयताम्।
सर्वथा प्राप्स्येसे पुत्रानभिप्रेतांश्च पार्थिव।।
यस्य वे धार्मिकी बुद्धिरियं पुत्रार्थ मागता।
ततस्तुष्टोऽभवद् राजा श्रुत्वैतद् द्विजभाषितम्।।[3]

किसी भी अभीष्ट की प्राप्ति हेतु लालायित चित्त में धर्म बुद्धि का उदय शकुन की ही परिधि में आता है। जहाँ दौर्मनस्यादि भाव उदित होते हैं, वहां कार्य की सिद्धि सन्दिग्ध हो जाती है- ऐसा पारम्परिक शकुनवेत्तओं का विश्वास है।

जब श्रीराम और लक्ष्मण को साथ लेकर महर्षि विश्वामित्र अयोध्या से चलते हैं, उस समय के शकुन भविष्य में होने वाले तीनों के ही अभीष्ट को

* प्रोफेसर कला संकायध्यक्ष (संस्कृत) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (संस्कृत) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

ज्ञापित करते हैं। जैसा कि –

ततो वायु: सुखस्पर्शो नीरजस्को ववौ तदा।
विश्वामित्रगतं रामं दृष्ट्वा राजीवलोचनम्।।
पुष्पवृष्टिर्महव्यासीत् देवदुन्दुभिनि: स्वनै:।
शंखदुदुभिनिर्घोष: प्रयातेतु महात्मनि।।[4]

इन श्लोकों में अनेक शकुन गूढ रूप से स्थित हैं। वे क्रमश: अवगन्तव्य हैं–

(क) सुखस्पर्शी वायु का बहना। रामायण के ही विभिन्न प्रसंगों में सदस्पर्शी वायु के बहने की बात आयी है, जिसने अभिष्टों को ही सूचित किया है।

(ख) वायु का नीरजस्क होना। रजोयुक्त वायु जहां स्वाभाविक होने पर ऋतु परिवर्तन को सूचित करती है, वहीं अकस्मात् बहने पर अविष्टों को। ये शकुन भी रामायण के विभिन्न काण्डों में उल्लेखित तत् स्थलों पर किया गया है।

(ग) पुष्पवृष्टि का होना।

(घ) प्रयाणकाल में शंख, दुन्दुभि आदि मंगलवाद्यों का सहसा बज उठना, कल्याणकारी, अभीष्ट साधक शकुन माना जाता है। बसन्त राज शाकुन, बृहत्संहिता आदि में स्पष्टत: इनका मांगलिक शकुन के रूप में निरूपण किया गया है।

(ड़) यात्राकाल में सवत्सा गौ का दर्शन।

(च) वेदवंता , ब्राह्मण का दर्शन।

(छ) प्रज्वलित अग्नि का दर्शन।

(ज) दधि, दूर्वा, शंख, चामर, मणि आदि का दर्शन।

ये सभी शकुन इष्टसिद्धि को ज्ञापित करने वाले बताये गये हैं। शब्दकल्पद्रुम के अन्तिम खण्ड में बसन्तराज शाकुन का एक शकुन सम्बन्धी उदाहरण अवधेय है।

कीर्तनात् श्रवणतो विलोकनात्।
सपर्शनात् समधिकं समोत्तरम्।।
मंगलाय दधिचन्दनादिकं,
स्यात् प्रवास भवन प्रवेशयो:।।[5]

इस प्रकार के शकुनों की चर्चा रामायण में अनेक बार की गयी है। अनिष्टार्थ ज्ञापन शकुन –रामायण में महाराज दशरथ और राजकुमार भरत के मुख से भी आदिकवि ने विभिन्न अपशकुनों का कथन करवाया है। मरण से पूर्व दशरथ को परिलक्षित होने वाले शकुन रामायण में इस प्रकार श्लोक में वर्णित हैं –

चद्युर्भ्यो त्वां न पश्यामि कौसल्ये त्वं हि मां स्पृश।
यमक्षयमनु प्राप्ता द्रक्ष्यन्ति न हि मानवा:।।
चक्षुषा त्वां न पश्यामि स्मृतिर्मम विलुप्यते।
दूता वैवस्वत स्मेते कौसल्ये त्वरमन्ति माम्।।[6]

क– मुमूर्षु व्यक्ति का मुखकान्ति का नष्ट होना।

ख– बिना कारण के भय का अनुभव करना।

ग– अपने प्रति घृणा या दमनीयता का भाव होना।

घ– वाणी में रूक्षता का आ जाना।

ड.– मन का सतत चलायमान रहना।

च– स्मणशक्ति का क्षीण हो जाना।

ऐसे ही भरत को भी राम के वनगमन एवं दशरथ मरण के पूर्व अपशकुनों का अनुभव हुआ था। जैसा कि रामायण में वर्णित है –

शुष्यहीन च में कण्डो न स्वस्थ मित्र में मन:।
न पश्यामि भयस्थानं भयं चैवोयधारये।।
भ्रष्टश्च स्वरयोगो ने छाया चापमता मम्।
जुगुपत इस चात्मानं न च पश्यामि कारणम्।।[7]

इस प्रकार के विविध अपशकुनों की चर्चा रामायण काव्य में प्राप्त होती है।

बाल्मीकि रामायण में जिस समय दशरथ अपने परिणीत पुत्रों के साथ अयोध्या की ओर प्रस्थान करते हैं, उसी समय शिवधनुष के भंग होने से कुपित परशुराम जी से राम का विवाद होता है। परशुराम के आने से पूर्व जो शुभाशुभ शकुन अनुभूत हुए थे, उन्हें कवि ने इस प्रकार वर्णित किया है –

धोरास्तु पक्षिणों वाचं व्यहरन्ति समन्तत:।
भौमाश्चैव मृगा: सर्वे गच्छन्ति स्म प्रदक्षिणम्।।[8]

क– क्रूर पक्षियों (गृध्र, काक, उलूक आदि) का धूलि से आच्छन्न होना अर्थात धूल स्नान करना।व।

ख– मृगों का प्रदक्षिण क्रम से गमन करना।पड्ढ।

ग– सूर्य का तमसावृत हो जानां वातावरण का धूलि से आच्छन्न होना||।

घ– भयानक आँधी का एकाएक चलना।[9]

इस प्रकार से रामायणकार ने विविध प्रसंगों में तद्धरूप विषयवस्तु वाले शुकन विज्ञान को संश्लिष्ट कर अपने काव्य को नितान्त व्यावहारिक बनाने का सत्पयन्त किया है। सूक्ष्म एवं व्यापक दृष्टि से देखने पर प्रतीत होता है कि समस्त पर्यावरण ही मानव के इष्ट तथा अनिष्ट को सूचित करने में समर्थ है। यह भारत का निजस्वत्व है कि उसने परोक्ष तथ्यों को भी अपनी विशद बुद्धि के माध्यम से अधिगत किया है। इस तथ्य की उपस्थापना में संशय निरवकाश है कि महर्षियों की ॠतम्भरा प्रज्ञा के लिये समग्र मानव जाति सर्वदा उनकी अधमर्ण रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. स्कन्द. उत्तर. रामायणमाहात्म 1/23:241
2. उणादिसूत्रम् 3/49
3. बाल्मीकि रामायण बालकाण्ड 8/12,13
4. बाल्मीकि रामायण बालकाण्ड 22/4,5
5. शब्दकल्पड्डम, खण्ड पाँच में बसन्तराज शाकुन का सन्दर्भ
6. बाल्मीकि रामायण अयोध्याकाण्ड 64/61, 65
7. बाल्मीकि रामायण अयोध्याकाण्ड 69/19,20
8. बाल्मीकि रामायण बालकाण्ड 74/9
9. बाल्मीकि रामायण बालकाण्ड 74/13,14

****

A Comparative Study Of Eye Hand Coordination And Reaction Time Among Various Ball Game Players

Asif Hussain Mir* Dr.Ganesh Khandekar**

Abstract - The main purpose of the study was to investigate the eye hand coordination and reaction time among various ball game players. For the present study, the data were collected from the inter-collegiate players of various ball games viz. Volleyball, Basketball, handball and cricket players of different affiliated colleges of Kashmir University. The data pertaining to eye hand coordination and reaction time was collected from 80 subjects and 20 subjects were selected from each game. I.e. (20) from Volley ball, (20) from Basketball, (20) from Handball and (20) from Cricket through simple random sampling for testing the hypothesis. The statistical analysis and interpretation was done on the basis of data collection. The data was analysed and interpreted by using' 'f' test. The finding of the study shows that there was found significant difference in the eye hand coordination and reaction time among various ball game players.
Keywords: Eye hand coordination, reaction time and ball game players.

Introduction - The researcher was very much interested to study the comparison of eye hand coordination and reaction time among different ball game players of various affiliated colleges of Amravati University because the main reason for this seems to be that the eye hand coordination and reaction time plays a very important role in the life of a sports person and being a sportsman is not general in nature; it varies from man to man. This has been done within the sport context and the results are encouraging. For the study, measure tested was used to know and compare the eye hand coordination and reaction time of the Volleyball, Basketball, Handball and Cricket players of affiliated colleges of Amravati University. The eye hand coordination and reaction time that was included in study was two sub-test Visual, auditory. Reaction time is the time that elapses between the movement a stimulus is detected by the brain and the movement of response starts. Tests have confirmed that nobody can react in less that 0.110 of seconds. Reaction time is quickest for young adults and gradually slows down with age. It can be improved with practice, up to a point, up to a point, and it declines under conditions of fatigue and distraction. Reaction time relating to, but is different from reflex time, movement time and response time. It is the interval between a stimulus and initiation of movement. Reaction time is time taken to process information and to initiate a movement after receiving a stimulus. Reaction times its role on the performance level of the players in various sports and games.

"Co-ordination is the ability to integrate muscles movements into an efficient pattern of movement". Co-ordination makes the difference between good performance and poor performance. The efficiency of skill patterns depends upon the interrelation of speed, agility, balance and muscle movements into as well co-ordinate pattern. It is the good advice to the performer and is necessary for judging such variables factor as speed, distance, direction, and size. Countless skills involve co-ordination of the eyes with hands. The players in Cricket, Volleyball, Basketball and handball do require eye- hand co-ordination when they exhibit their skills for successful performance. As there is lack of research available on important of eye-hand co-ordination for games. Where accuracy is more needed, the research worker was interested to conduct the study on Cricket, volleyball, Basketball and Handball players. The Nero-muscular co-ordination of the individual which includes his ability to learn new skill and finally achieve competency in physical activities as essential to all phase of physical education. Activities for developing such co-ordination, therefore, should be considered.

Methodology:

Source of Data - For the present study the researcher had taken the male subjects from affiliated colleges of Kashmir University, and these subjects were taken as sources of data.

Selection of Subject - The researcher selected 80 subjects for this study, 20 Volleyball players, 20 Cricket players, 20 Basketball players and 20 Handball players of inter

*Research Scholar (M. Phil) (Physical Education) Dr. CV Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Asso. Professor (Physical Education) Dr. CV Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

collegiate level from affiliated colleges of Kashmir University.

Sampling method - The 80 subjects were selected by the simple random sampling method.

Equipment used for collection of data - Following equipment and tests were used for collection of data.

Eye hand coordination: To find out the eye-hand coordination ability of the student.

Reaction time: This is a laboratory test used to measures the motor reaction to auditory and Visual stimulus.

Collection of data - The data will collected from the selected subjects by administering the appropriate test. The researcher explained the purpose of the study to the subject; so that they put their best.

Analysis And Interpretation Of Data - The statistical analysis and interpretation was done on the basis of data collection. The data was analysed and interpreted by using' 'f' test.

Table No-1 : Mean Of Reaction time in Audio of Different Ball Game Players.

Players	Mean
Handball	0.66
Basketball	0.60
Cricket	0.49
Volleyball	0.42

Table-1 reveals the eye hand coordination among the players of different ball games. The data collected from the different ball game players through 'f' test is shown in the above given table and the mean value of all the four ball game is as fallows Handball (0.66) , Basketball (0.60), Cricket (0.49) and Volleyball (0.42) .This data indicates that Handball players have better eye hand coordination because the mean value of Handball players is greater than all other three ball game players. The difference in the eye hand coordination of different ball game players is shown below graphically.

There is Mean difference in eye hand coordination among the players of different ball game players. Whether it is significant or not it can be shown by using special statistical technique 'F' test (ANOVA).

Graph-1 : Graphical Representation of Reaction time in Audio among the Players of Different Ball Games

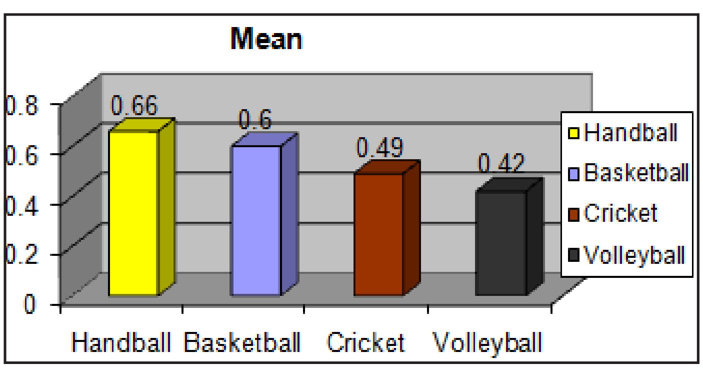

Table No-2 (see in last page)

Table-2 reveals that 'F' at degree of freedom between groups (df_b) is shown by the formula **K-1** where 'K' is number of groups which are 4 so it becomes 4-1=3.

'F' at degree of freedom within groups (df_w) is shown by the formula '**N-K'** where 'N' is total number of subjects in all groups and 'K' is number of groups which becomes 80 - 4 = 76 .So 'F' test at 3 and 76 is 2.79 which is called Tabulated 'F'.

In the given table the value of Calculated 'F' is 3.27 which is greater than Tabulated 'F' is 2.79 at 0.05 level of significance so it is said that there is significant difference in eye hand coordination of various ball game players and the groups were as under Volleyball, Basketball, Handball and Cricket players of different affiliated colleges of Kashmir university), hence the researchers hypothesis is accepted.

Table No-3 : Mean Of Reaction time in Visual of Different Ball Game Players

Players	Mean
Handball	0.32
Basketball	0.40
Cricket	0.34
Volleyball	0.48

Table-3 reveals the reaction time in audio among the players of different ball games. The data collected from the different ball game players through 'f' test is shown in the above given table and the mean value of all the four ball game is as fallows Handball (0.32) ,Basketball (0.40), Cricket (0.34) and Volleyball (0.48). This data indicates that Cricket players have better reaction time in audio because the mean value of Cricket players is greater than all other three ball game players. The difference in the reaction time in audio of different ball game players is shown below graphically.

There is Mean difference in reaction time in audio among the players of different ball game players. Whether it is significant or not it can be shown by using special statistical technique 'F' test (ANOVA).

Graph-2 : Graphical Representation Of Reaction time in Visual Among The Players Of Different Ball Games

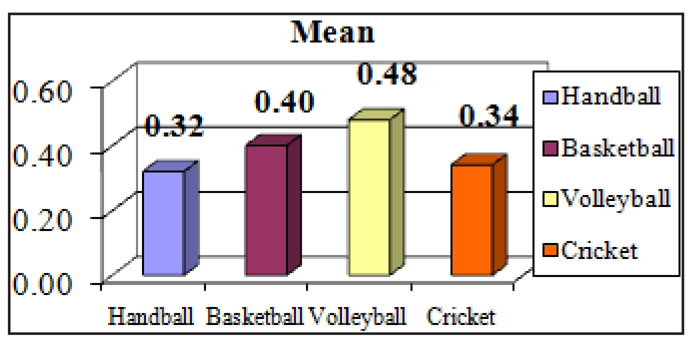

Table No-4 (see in last page)

Table-4 reveals that 'F' at degree of freedom between groups (df_b) is shown by the formula **K-1** where 'K' is number of groups which are 4 so it becomes 4-1=3.

'F' at degree of freedom within groups (df_w) is shown by the formula '**N-K'** where 'N' is total number of subjects in all groups and 'K' is number of groups which becomes 80 - 4 = 76 .So 'F' test at 3 and 76 is 2.79 which is called Tabulated 'F'.

In the given table the of Calculated 'F' is 1.66 which is less than tabulated 'F' is 2.79 at 0.05 level of significance, so it is said that there is no significant difference in reaction time in audio of various ball game players and the groups were as under Volleyball, Basketball, Handball and Cricket players of different affiliated colleges of Kashmir university), hence the researchers hypothesis is rejected.

Table No-5 : Mean Value of Eye hand coordination Among Different Ball Game Players.

Players	Mean
Handball	28.70
Basketball	27.55
Cricket	27.60
Volleyball	29.15

Table-5 reveals the reaction time in visual among the players of different ball games. The data collected from the different ball game players through 'f' test is shown in the above given table and the mean value of all the four ball game is as fallows Handball (28.70) , Basketball (27.55), Cricket (27.60) and Volleyball (29.15). This data indicates that Volleyball players have better reaction time in visual because the mean value of Volleyball players is greater than all other three ball game players. The difference in the reaction time in visual of different ball game players is shown below graphically.

There is Mean difference in reaction time in visual among the players of different ball game players. Whether it is significant or not it can be shown by using special statistical technique 'F' test (ANOVA).

Graph-3 : Graphical Representation Of Eye hand coordination Among The Players Of Different Ball Games.

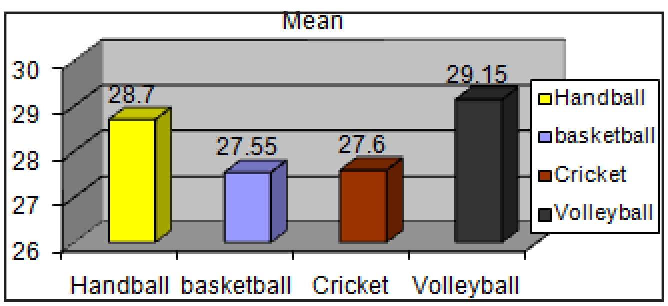

Table No-6 (see in next page)

Table-6 reveals that 'F' at degree of freedom between groups (df_b) is shown by the formula **K-1** where 'K' is number of groups which are 4 so it becomes 4-1=3.

'F' at degree of freedom within groups (df_w) is shown by the formula '**N-K'** where 'N' is total number of subjects in all groups and 'K' is number of groups which becomes 80 - 4 = 76 .So 'F' test at 3 and 76 is 2.79 which is called Tabulated 'F'.

In the given table the value of Calculated 'F' is 5.40 which is greater than than that of Tabulated 'F' is 2.79 at 0.05 level of significance so it is said that there is no significant difference in reaction time in visual of various ball game players and the groups were as under Volleyball, Basketball, Handball and Cricket players of different affiliated colleges of Kashmir university), hence the researchers hypothesis is accepted.

Conclusion - The finding of the study shows that there was found significant difference in the eye hand coordination and reaction time among various ball game players viz. Volleyball, Basketball, handball and cricket players of different affiliated colleges of Kashmir University, hence the researcher's hypothesis is partially accepted.

References :-

1. Ahlawat, Neetu, Principles Of Psychology, (New Delhi: Vishvabharti Publications, 2009).
2. Alderman, G. I., Psychological Behaviour In Sports, (Philadelphia: W.B. Saunders Company, Editing-1, 1974).
3. Bucher, C. A., Foundation of Physical Education and Sports, (Saint Louis: The C.V. Mosby Company), 1960.
4. Clarke, H. Harrison, Application of Measurement to Health and Physical Education , (Englewood Cliffs, New Jersey, Prentice Hall Inc), 1967.
5. Kamlesh, M. L., Education Sports Psychology, (New Delhi: Friends Publication, 2009).
6. Kundra, Sanjay, Text Book of Physical Education, (New Delhi: Evergreen Publications, 2010).
7. Bagheri, H., et al. **"**The Effect of Eye - Hand Coordination Activities on Hand Skills of Educable Mental Retarded Students (7-10 Years)**",** Modern Rehabilitation, Volume: 1, Issue: 3, 2007.
8. Bahman Aalizadeh and Fatemeh-Sadat Hosseini, "The Effect of a Long-Term Artistic Gymnastic Training on Reaction Time of Male Gymnasts", Annals of Applied Sport Science, Volume: 2, Issue: 4, 2014.
9. Bauermeister, S., et al. "Aerobic Fitness and Intra-individual Reaction Time Variability in Middle and OldAge", Revista de Artes Marciales Asiáticas, Volume: 6, Issue: 1, 2013.
10. Bhtano, Pankaj, et al. "A Comparative Study Of Agility And Eye-Hand Coordination Between Guard And Forward Players In Basketball", Indian Streams Research Journal, Volume: 5, Issue: 3, 2015.
11. Brito, António Vences**,** et al."Attention and Reaction Time in Shotokan Athletes", Revista de Artes Marciales Asiáticas,Volume: 6, Issue: 1, 2012.
12. Carnegie, E., et al. "Determining Eye-Hand Coordination Using The Sport Vision Trainer: An Evaluation Of Test-Retest Reliability", Research Sportys Medicine, Volume: 10, Issue: 1, 2014.
13. Cojocariu, A., et al. "Measurement Of Reaction Time In Qwan Ki Do", Biology of Sport, Volume: 28, Issue: 2, 2011.

Table No-2 : Showing One Way Analysis Of Variance (ANOVA) In Reaction time in Audio Among Different Ball Game Players

Source of variance	Df	Sum of squares	Mean Variance	FCalculated	FTabulated
Between Groups	K-1 4-1=3	0.66	0.22	3.27	2.79
Within Groups	N-K 80-4=76	5.15	0.06		

Table No-4 : Showing One Way Analysis Of Variance (ANOVA) In Reaction time in Visual Among Different Ball Game Players

Source of variance	Df	Sum of squares	Mean Variance	FCalculated	FTabulated
Between Groups	K-1 4-1=3	0.32	0.11	1.66	2.79
Within Groups	N-K 80-4=76	5.00	0.06		

Table No-6 : Showing One Way Analysis Of Variance (ANOVA) In Eye hand coordination Among Different Ball Game Players.

Source of variance	Df	Sum of squares	Mean Variance	FCalculated	FTabulated
Between Groups	K-1 4-1=3	38.50	12.83	5.40	2.79
Within Groups	N-K 80-4=76	180.50	2.37		

****

Comparison Of Resting Pulse Rate And Anxiety Profile Of The Players Belonging To Different Ball Games

Ferdous Ahmad Malik* Dr.Ganesh Khandekar**

Abstract - The main purpose of this study was to measure and compare the anxiety and resting pulse rate among different ball game players of various affiliated colleges of Kashmir University of Jammu And Kashmir State. For the present study, the data were collected from the inter-collegiate players of various ball games Volleyball, Basketball and Football players of different affiliated colleges of Kashmir University. The data pertaining to anxiety was collected from 90 subjects and 30 subjects were selected from each game i.e. (30) from Volley ball, (30) from Basketball and (30) from Football, through simple random sampling for testing the hypothesis. The standard questionnaire developed by Rainer Martens (1977) on anxiety (SCAT) was used to know and compare the anxiety of different ball game players and Resting pulse rate was measured by Pulse Palpation Method. After that the collected data was analyzed by comparing the means of anxiety and resting pulse rate of different ball game players and was again statistically analyzed by applying 'Anova' to check the significant difference among selected variables. The data was analysed and interpreted by using' 'f' test. The finding of the study shows that there was found significant difference in the anxiety and resting pulse rate among different ball game players.

Keywords: Resting pulse rate, Anxiety and ball game players.

Introduction - The researcher was very much interested to study the comparison of anxiety and resting pulse rate among different ball game players University because the main reason for this seems to be that the anxiety plays a very important role in the life of a sports person and being a sportsman is not general in nature; it varies from man to man. This has been done within the sport context and the results are encouraging. The coordinated movement required by athletic events becomes increasingly difficult when your body is in a tense state. Similarly, a certain amount of worry about how you perform can be helpful in competition, but severe symptoms of anxiety such as negative thought patterns and expectations of failure can bring about a self-fulfilling prophecy. If there is a substantial difference between how you perform during practice and how you do during competitions, anxiety may be affecting your performance. Our dedicated team can help you to overcome these fears in a variety of ways, programming yourself for success. Athletes love to perform with a clear mind and a great sense of confidence. If they feel good physically and mentally, they have a better chance to perform at their best. Conversely, an athlete who is troubled by events off the field or is worried about performing against a specific opponent may come to the field of play with anxiety and fear. This can lead to below-average play, failure or even choking, a term that all athletes hate. In some rare cases, athletes may use that anxiety in their favour and still find a way to succeed.

The resting heart rate is the number of times the heart beats when the body is completely at rest, and the best time to take this measurement is before rising from bed in the morning. Even getting up to take a quick trip to the bathroom may slightly elevate the heart rate levels and cause them to be not truly "resting." Thus it may take a little planning to accurately calculate the resting heart rate. For instance, having a small wristwatch or timer by the bed so a person can check rate in the morning is a good idea.The heart rate at rest can decrease markedly as a result of endurance training. A sedentary individual with an initial resting heart rate of 80 beats/min. can decrease resting heart rate by approximately 1 beat/min with each week of aerobic training, at least for the first few weeks. After weeks of moderate endurance training, resting heart rate can decrease from 80 to 70 beats/min. or lower. The actual mechanisms responsible for this decrease are not entirely understood, but training appears to increase purism-pathetic activity. It is important to recognize that several well controlled studies with large numbers of subjects have shown much smaller decreases in resting heart rate, that is fewer than 5 beats/min following up to 20 weeks of aerobic

*Research Scholar (M. Phil) (Physical Education) Dr. CV Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Asso. Professor (Physical Education) Dr. CV Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

training.

Bradycardia is a clinical term indicating a heart rate of fewer than 60 beats / min. In untrained individuals, Bradycardia is usually the result of abnormal cardiac function or a diseases heart. There for it is necessary to differentiate between training induced Bradycardia, which is a natural Response to endurance training, and pathological Bradycardia, which can be a serious cause for concern! A normal resting pulse rate for adults and children over 11 can be as low as 40 beats per minutes (bpm) or as high as 100 bpm. In children 1 and under, a normal resting pulse rate is between 100 bpm and 160 bpm. A resting pulse rate between 100 bpm and 140 bpm is normal in children ages 1 to 11.

Methodology:

Source of data - For the Present study the Subjects were selected from the inter-collegiate players of various ball games Volleyball, Basketball and Football players of different affiliated colleges of Kashmir University

Selection of Subjects - For the present study 90 players were selected. Thirty football players, thirty basketball players and thirty volleyball players were selected..

Sampling Methods - The players will be selected by using available sampling method.

Equipment used for collection of data:

Anxiety - The psychological Questionnaire developed by Rainer Martens (1977) on anxiety will be administered on the subjects for the collection of data. This is most reliable test and has been very often used in research in the profession of physical education and sports. However, the reliability and validity of the questionnaire for Indian population will be explicitly mentioned.

Resting pulse rate:

Radial Pulse (wrist) - The resting pulse rate will be measured by using place the index and middle fingers together on the opposite wrist, about 1/2 inch on the inside of the joint, in line with the index finger. Once find the pulse, count the number of beats feel within a one minute.

Collection of data - The data pertaining to the study will be collected by standard questionnaire of Anxiety by Rainer Martens and Resting pulse rate by Pulse Palpation Method.

Analysis And Interpretation Of Data - the collected data was analyzed by comparing the means of anxiety and resting pulse rate of different ball game players and was again statistically analyzed by applying 'Anova' to check the significant difference among selected variables. Therefore separate tables and graphs have been presented for each variable.

Table No-1 : Mean Value of Anxiety Among Different Ball Game Players.

Players	Mean
Basketball	19.10
Volleyball	19.50
Football	16.36

Table-1 reveals the anxiety among the players of different ball games. The data collected from the different ball game players through questionnaire related to the anxiety is shown in the above given table and the mean value of all the three ball games is as fallows Basketball (19.10), Volleyball (19.50) and Football (16.36). This data indicate that volley ball players have more anxiety because the mean value of volley ball players is greater than other two ball game players. The difference in the anxiety of different ball game players is shown below graphically.

There is Mean difference in anxiety among the players of different ball game players. Whether it is significant or not it can be shown by using special statistical technique 'F' test (ANOVA).

Graph-1 : Graphical Representation Of Anxiety the Players of Different Ball Games.

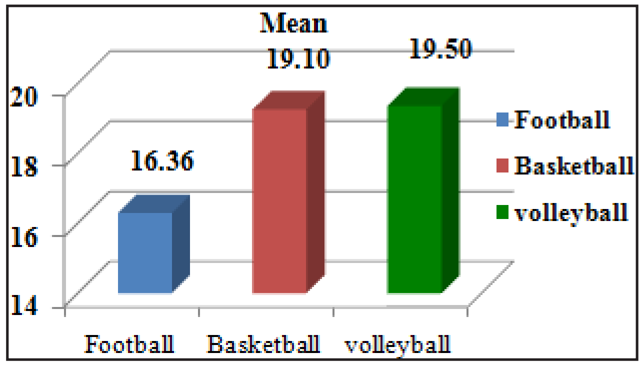

Table No-2 (see in next page)

'F' at degree of freedom between groups (df_b) is shown by the formula **K-1** where 'K' is number of groups which are 3 so it becomes 3-1=2.

'F' at degree of freedom within groups (df_w) is shown by the formula '**N-K'** where 'N' is total number of subjects in all groups and 'K' is number of groups which becomes 90- 3 = 87 .So 'F' test at 2 and 87 is 3.15 which is called tabulated 'F'.

In the given table the value of Tabulated 'F' is 3.15 and the value of Calculated 'F' is 17.12, which is more than tabulated 'F' at 0.05 level of significance so it is said that there is significant difference in anxiety of different ball game players (football, basketball and volleyball game players), hence the researchers' hypothesis is accepted.

Table No-3 : Mean Value of resting pulse rate Different Ball Game Players.

Players	Mean
Basketball	54.03
Volleyball	54.13
Football	51.26

Table-3 reveals the anxiety among the players of different ball games. The data collected from the different ball game players through questionnaire related to the anxiety is shown in the above given table and the mean value of all the three ball games is as fallows Basketball (54.03), Volleyball(54.13) and Football (51.26). This data indicate that volley ball players have more anxiety because the mean value of volley ball players is greater than other two ball game players. The difference in the anxiety of different ball game players is shown below graphically. There is Mean difference in anxiety among the players of different ball

game players. Whether it is significant or not it can be shown by using special statistical technique 'F' test (ANOVA).

Graph-2 : Graphical Representation of resting pulse rate of the Players of Different Ball Games.

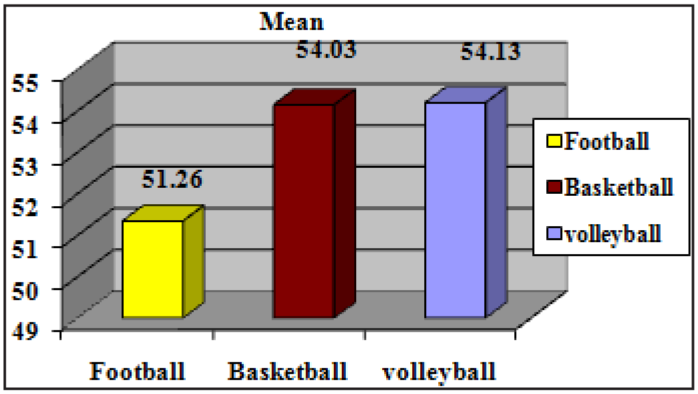

Table No-4 (see below)

'F' at degree of freedom between groups (df_b) is shown by the formula **K-1** where 'K' is number of groups which are 3 so it becomes 3-1=2.

'F' at degree of freedom within groups (df_w) is shown by the formula '**N-K'** where 'N' is total number of subjects in all groups and 'K' is number of groups which becomes 90- 3 = 87 .So 'F' test at 2 and 87 is 3.15 which is called tabulated 'F'.

In the given table the value of Tabulated 'F' is 3.15 and the value of Calculated 'F' is 8.44 which is more than tabulated 'F' at 0.05 level of significance so it is said that there is significant difference in Resting Pulse Rate of different ball game players (football, basketball and volleyball game players), hence the researchers hypothesis is accepted.

Conclusion - The researcher initially pre assumed that there will be a significant difference in the anxiety and resting pulse rate among the players of different ball game players of various inter-collegiate players of various ball games Volleyball, Basketball and Football players of different affiliated colleges of Kashmir University and after the statistical analysis interpretation of data it was found that there is significant difference in the anxiety and resting pulse rate among different ball game players because in all cases the calculated 'f' exceeded the tabulate 'f' at level of significance 0.05. Hence the Researchers pre assumed have been accepted.

References :-

1. Alderman, G. I., Psychological Behaviour In Sports, (Philadelphia: W. B. Saunders Company, Editing-1, 1974).
2. Bucher,C. A., FoundationOf Physical Education, (Saint Louis: The C. V. Mosby Company, 1983).
3. Jain,Deepak, Physical Education And Recreational Activities, (New Delhi: Khel Sahitya Kendra, 2004).
4. Kamlesh, M. L., Field Manual Of Sports And Games, (UtarPardash: NageenPrakashan Pvt. Ltd., 2011).
5. Kanchan, Ravi and Laxmi Kant Balwal, A New Book Of Physical Education, (Jammu: Narendera Publishing House, 2012).
6. Marples, Morris, A History of Football, Secker and Warburg, (London: 1954).
7. Naismith, James, "How Volleyball Began", Northern California Volleyball Association, 2007.
8. Orlick, Terry, ImpersuitOf Excellence, Canada: Human Kinetics And Coaching Association Of, Edition -1, 1980.
9. Bardhan,Sukanya, et al. "Effect Of Treadmill Training On Peak Expiratory Flow Rate And Resting Pulse Rate Among Young Adult", Biology of Exercise, Volume: 9, Issue: 2, 2013.
10. Bisht,Sunita, et al."Comparative Study Of Sports Competition Anxiety Between State Level Male Basketball And Football Players", Review of Research, Volume: 4, Issue: 3, 2014.
11. Donuk,Bilge, et al. "The Examination Of Sport Managers And Coaches' Stress Levels And Depressed Mood At Work In Turkey", International Journal Of Human Sciences, Volume: 10, Issue: 1, 2013, ISSN:1116-1127.
12. Ermolaeva, Y. S., "Level Of Anxiety As One Of The Criteria Of Efficiency Of Emotional Stability In Sport Dancing", Pedagogics, Psychology, Medical-Biological Problems Of Physical Training And Sports, Volume: 2, 2015.

Table No-2 : Showing One Way Analysis Of Variance (ANOVA) In AnxietyAmong Different Ball Game Players.

Source of variance	Df	Sum of squares	Mean Variance	FCalculated	FTabulated
Between Groups	K-1 3-1=2	174.48	87.24	17.12	3.15
Within Groups	N-K 90-3=87	443.16	5.09		

Table No-4 : Showing One Way Analysis Of Variance (ANOVA) in Resting Pulse Rate of Different Ball Game Players.

Source of variance	Df	Sum of squares	Mean Variance	FCalculated	FTabulated
Between Groups	K-1 3-1=2	158.82	79.41	8.44	3.15
Within Groups	N-K 90-3=87	818.30	9.40		

Comparative Study On Selected Anthropometric And Psychological Variables Of Inter Collegiate Kho-Kho And Kabaddi Players

Syed Irfan Hussain* Dr. Jaishankar Yadav**

Abstract - The purpose of this study was to find out the Anthropometric and Psychological variables between inter-collegiate Kho-Kho and Kabaddi Players ofs various colleges of Kashmir University. The data was collected qualitatively from all Kho-Kho and Kabaddi Players by applying various tests regarding Anthropometric Measurement and Psychological Variables of Kho-Kho and Kabaddi players. Eighty male subjects (40 from Kho- Kho and 40 from Kabaddi) were selected for the collection of data; the subjects were selected by using simple random sampling method. For the collection of data, the subjects were given full administration of the tests which were used for the collection of data in the study. The data for Height, Weight and Girth was measured by Stadiometer, weighing machine and Measuring Tape and the data for psychological variables was collected by standard questionnaires of stress inventory framed by Arun Singh, K. Singh and Arpana Singh and standard questionnaire of Anxiety constructed by (SCAT) was being used. The statistical analysis and interpretation was done and the data was analyzed by using independent't' test. The level of significance was set at 0.05 to test the hypothesis. The finding of the study shows that there was found insignificant difference in the Anthropometric variables and significant difference in the psychological variables between Kho-Kho and Kabaddi Players.
Keywords: Resting pulse rate, Anxiety and ball game players.

Introduction - Today the games and sports has become prime importance in the society. Everyone wants to win and stood first. With the enhanced status of sports in the society the provision of sports training has become very important although the need for competent training has long been recognized. Without provision of effective sports training the sportsperson's potential will never be fulfilled. As it has been rightly said, the comprehensive sports training programme is the key factor in producing skilful high performers.

Anthropometry plays an important role in deciding the particular built of the body with various measurements of the body segments, suitable for a particular game and sports and essentially helpful to excel in that game. Changes in body dimensions reflect the overall health and welfare of individuals and populations. Anthropometry is used to assess and predict performance, health and survival of individuals and reflect the economic and social well-being of populations. Anthropometry is a widely used, inexpensive and non- invasive measure of the general nutritional status of an individual or a population group. Recent studies have demonstrated the applications of anthropometry to include the prediction of who will benefit from interventions, identifying social and economic inequity and evaluating responses to interventions. Tanner (1964) pointed out that it might be assumed that an individual's physique and body composition either greatly limits or in some instance, pre-disposes that individual, successful participation in one activity or another. Addison like height and limb lengths etc. A well planed physical education programme has to be developed throughout the nation by which the people were aware about the maintenance of health. The Anthropometry and Psychology plays an important role in overall psychological and physical fitness of an individual a person having good psychological capacity he is able to bear more resistance.

Stress has been defined as the adaptative physiological response of the human organism to internal and external force and events which disturb the homeostatic balance of the individual. The imbalance may be caused by psychic, physical and social agents or conditions. The researcher is the student of Post Graduate Department of Physical Education and he observes that the stress level of the students is increasing day by day as the competition in the modern society is so high that is impossible for all the students to hold their position or rank in any field of life for

*Research Scholar (M. Phil) (Physical Education) Dr. CV Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Asso. Professor (Physical Education) Dr. CV Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

well settlement. So every student has to struggle very hard for livelihood because due to increasing population in the world especially in India is increasing at tremendous level. Anxiety is a feeling of fear, uneasiness, and worry, usually generalized and unfocused as an overreaction to a situation that is only subjectively seen as menacing. It is often accompanied by muscular tension, restlessness, fatigue and problems in concentration. Anxiety can be appropriate, but when experienced regularly the individual may suffer from an anxiety disorder.

Methodology:

Source of Data - For the present study subjects were selected from inter collegiate Kho- Kho and Kabaddi Players from the various colleges of Kashmir University.

Selection of Subjects - Eighty male subjects (40 from Kho-Kho and 40 from Kabaddi) were selected for the collection of data.

Sampling Method - The subjects were being selected by using simple random sampling method.

Criterion measures - For the collection of data, the subjects were given full administration of the tests which were used for the collection of data in the study. The data for Height, Weight and Girth was measured by Stadiometer, weighing machine and Measuring Tape and the data for psychological variables was collected by standard questionnaires of stress inventory framed by Arun Singh, K. Singh and Arpana Singh and standard questionnaire of Anxiety constructed by (SCAT) was being used.

Analysis And Interpretation Of Data - The statistical analysis and interpretation will be done on the basis of data collection. The data will be analyzed by using independent 't' test and interpretations will be drawn. The level of significance will be set at 0.05 to test the hypothesis.

Table No. 1 : Comparison of Height between Kabaddi and Kho-Kho Players

Game	Mean	S.D.	Mean Differ -ence	Degree of free -dom	O.T	Tabul-ated't'
Kabaddi	171.77	4.45	3.65	78	3.33	2.02
Kho-Kho	168.12	5.29				

Level of Significance = 0.05

Table No 1 reveals that there is difference between means of Kho-Kho and Kabaddi players. The mean of Kho-Kho players is 168.12 which is less than the mean of Kabaddi Players which is171.77.So this mean difference is found as 3.65.To check the significant difference between Kho-Kho and Kabaddi players the data was again analyzed by applying 't' test. Before applying 't' test, standard deviation is calculated between Kho-Kho and Kabaddi players which is 5.29 and 4.45 respectively and the calculated value of 't' is found as 3.33 which is more than tabulated 't' which is 2.02 at 0.05 level of significance. Hence the hypothesis which was given by the researcher is accepted. This is presented graphically in figure No. 1.

Graph-1 : Graphical Representation of Mean differenceof Height between Kho-Kho and Kabaddi Players

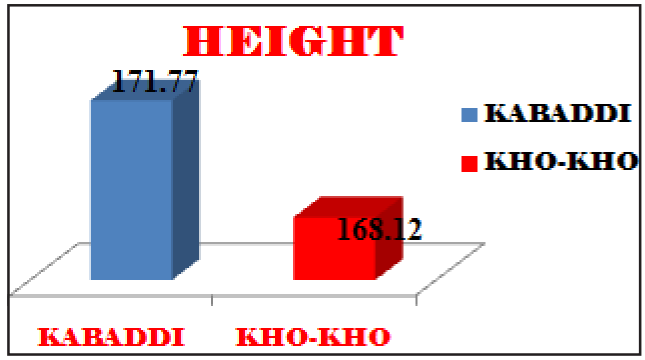

Table No. 2 : Comparison of Weight between Kabaddi and Kho-Kho Players

Game	Mean	S.D.	Mean Differ -ence	Degree of free -dom	O.T	Tabul-ated't'
Kabaddi	70.00	6.19	0.37	78	0.66	2.02
Kho-Kho	69.62	5.82				

Level of Significance = 0.05

Table No. 2 reveals that there is difference between means of Kho-Kho and Kabaddi players. The mean of Kho-Kho players is 69.62 which is less than the mean of Kabaddi Players which is 70.00. So this mean difference is found as 0.37.To check the significant difference between Kho-Kho and Kabaddi players the data was again analyzed by applying't' test. Before applying 't' test, standard deviation is calculated between Kho-Kho and Kabaddi players which is 5.82 and 6.19 respectively and the calculated value of 't' is found as 0.66 which is less than tabulated 't' which is 2.02 at 0.05 level of significance. Hence the hypothesis which was given by the researcher is rejected. This is presented graphically in figure No. 2.

Graph-2 : Graphical Representation of Mean differenceof Weight between Kho-Kho and Kabaddi Players

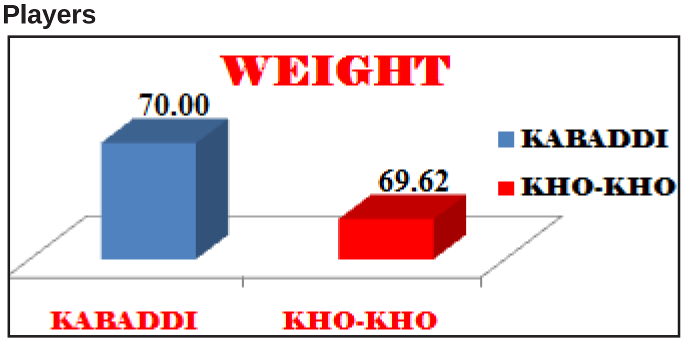

Table No. 3 : Comparison of Calf Girth measurement between Kabaddi and Kho-Kho Players

Game	Mean	S.D.	Mean Differ -ence	Degree of free -dom	O.T	Tabul-ated't'
Kabaddi	34.33	2.36	0.42	78	0.92	2.02
Kho-Kho	33.77	1.68				

Level of Significance = 0.05

Table No. 3 reveals that there is difference between means

of Kho-Kho and Kabaddi players. The mean of Kho-Kho players is 33.77 which is less than the mean of Kabaddi Players which is 34.33. So this mean difference is found as 0.42.To check the significant difference between Kho-Kho and Kabaddi players the data was again analyzed by applying't' test. Before applying 't' test, standard deviation is calculated between Kho-Kho and Kabaddi players which is 1.68 and 2.36 respectively and the calculated value of 't' is found as 0.92 which is less than tabulated 't' which is 2.02 at 0.05 level of significance. Hence the hypothesis which was given by the researcher is rejected. This is presented graphically in figure No. 3.

Graph-3 : Graphical Representation of Mean difference of Calf Girth between Kho-Kho and Kabaddi Players

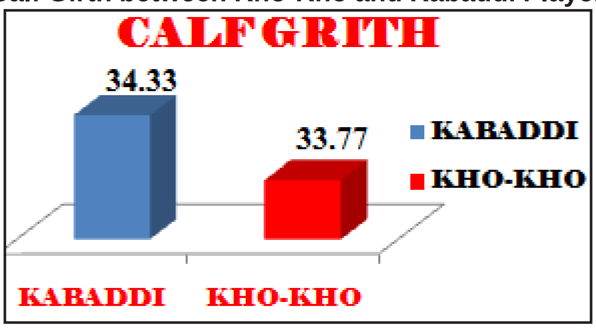

Table No. 4 : Comparison of Upper Arm Girth measurement between Kabaddi and Kho-Kho Players

Game	Mean	S.D.	Mean Differ -ence	Degree of free -dom	O.T	Tabul-ated't'
Kabaddi	25.85	2.45	0.37	78	0.66	2.02
Kho-Kho	26.22	2.58				

Level of Significance = 0.05

Table No. 4 reveals that there is difference between means of Kho-Kho and Kabaddi players. The mean of Kho-Kho players is 26.22 which ismore than the mean of Kabaddi Players which is 25.85. So this mean difference is found as 0.37.To check the significant difference between Kho-Kho and Kabaddi players the data was again analyzed by applying't' test. Before applying 't' test, standard deviation is calculated between Kho-Kho and Kabaddi players which is 2.58 and 2.45 respectively and the calculated value of 't' is found as 0.66 which is less than tabulated 't' which is 2.02 at 0.05 level of significance. Hence the hypothesis which was given by the researcher is rejected. This is presented graphically in figure No. 4.

Graph-4 : Graphical Representation of Mean difference of Upper Arm Girth between Kho-Kho & Kabaddi Players

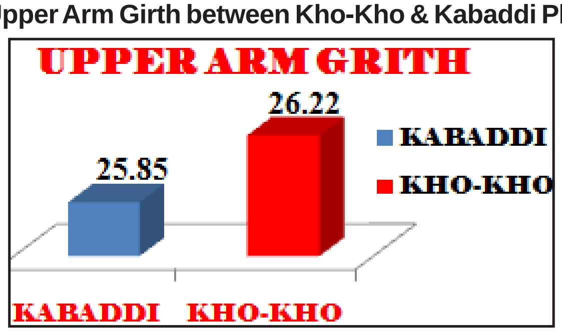

Table No. 5 : Comparison of Stress Level between Kab5addi and Kho-Kho Players

Game	Mean	S.D.	Mean Differ -ence	Degree of free -dom	O.T	Tabul-ated't'
Kabaddi	58.97	19.76	1.96	78	0.82	2.02
Kho-Kho	60.60	7.72				

Level of Significance = 0.05

Table No. 5 reveals that there is difference between means of Kho-Kho and Kabaddi players. The mean of Kho-Kho players is 60.60 which is less than the mean of Kabaddi Players which is 58.97. So this mean difference is found as 1.96. To check the significant difference between Kho-Kho and Kabaddi players the data was again analyzed by applying' test. Before applying 't' test, standard deviation is calculated between Kho-Kho and Kabaddi players which is 7.72 and 19.76 respectively and the calculated value of 't' is found as 0.82 which is less than tabulated 't' which is 2.02 at 0.05 level of significance. Hence the hypothesis which was given by the researcher is rejected. This is presented graphically in figure No. 5.

Graph-5 : Graphical Representation of Mean difference of Stress Level between Kho-Kho and Kabaddi Players

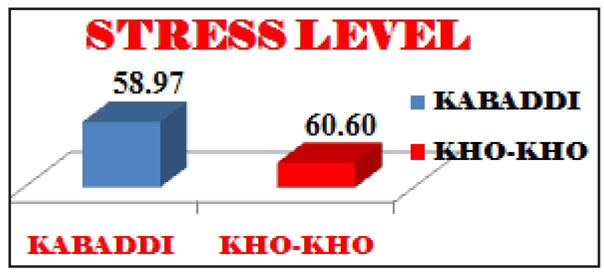

Table No. 6 : Comparison of Anxiety Level between Kabaddi and Kho-Kho Players

Game	Mean	S.D.	Mean Differ -ence	Degree of free -dom	O.T	Tabul-ated't'
Kabaddi	19.95	3.21	1.17	78	1.85	2.02
Kho-Kho	18.77	2.38				

Level of Significance = 0.05

Table No. 6 reveals that there is difference between means of Kho-Kho and Kabaddi players. The mean of Kho-Kho players is 18.77 which is less than the mean of Kabaddi Players which is 19.95. So this mean difference is found as 1.17. To check the significant difference between Kho-Kho and Kabaddi players the data was again analyzed by applying't' test. Before applying 't' test, standard deviation is calculated between Kho-Kho and Kabaddi players which is 2.38 and 3.21 respectively and the calculated value of 't' is found as 1.85 which is less than tabulated 't' which is 2.02 at 0.05 level of significance. Hence the hypothesis which was given by the researcher is rejected. This is presented graphically in figure No. 6.

Graph-6 : Graphical Representation of Mean difference of Anxiety Level between Kho-Kho and Kabaddi Players

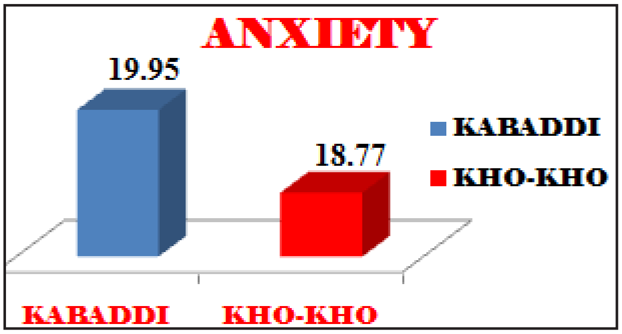

Conclusion - The finding of the study shows that there was found insignificant difference in the Anthropometric variables and also there was found significant difference in the psychological variables between Kho-Kho and Kabaddi Players,hence the researcher's hypothesis was partially accepted.

References :-

1. Ahmad, Shamshad, "Psychological Basis Of Physical Education", (Delhi: Isha Books), 2005.
2. Buss Amold11, Psychology Behaviour In Personality.2nd Edition, p. 469.
3. Frost, Bubruven B., Physical Education Practice, (Philadelphia London: Addison Waslay Publishers Company, 1975).
4. Jha, K.N., UGC-NET/SET Junior Research Fellowship & Lectureship Exam Physical Education, (New Delhi: Ramesh Publishing House), 2013.
5. Kamlesh, M.L., Physical Education, (New Delhi: Khelsahitya Kendra, Ansari Road Darya Ganj) 2009.
6. Singh, Agyajit, Sports Psychology For Coaches, Khel Sahitya Kendra, New Delhi: 2013,
7. Abraldes, Arturo, "The Anthropometric Profile Of Elite Roller Figure Skaters", Journal Of Human Sport And Exercise, Volume: 8, Issue: 3, 2013.
8. Amador Blas Redondo, et al. "Psychosocial Stress And Sport Injuries In Tennis Players",Universities Psychological, Volume: 10, Issue: 3, 2011.
9. Amhadi, Mohammad Syed, et al. "The Comparison Of Sport Competition Anxiety Of Athletes Participating In The 2ths Students Sport Olympiad Of Islamic Azad Universities 9 Region",Electronic Physician, Volume: 3, Issue: 3, 2011.
10. Bisht, Sunita,et al."Comparative Study Of Sports Competition Anxiety Between State Level Male Basketball And Football Players", Review of Research. Volume: 4, Issue: 3, 2014.
11. Erceg, Marko, et al. "Pre-Competitive Anxiety In Soccer Players", Research in Physical Education, Sport and Health. Volume: 2, Issue: 1, 2013.
12. Erik, Strumbelj, "Analysis Of Experts' Quantitative Assessment Of Adolescent Basketball Players And The Role Of Anthropometric And Physiological Attributes",Journal Of Human Kinetics,Volume: 42, Issue: 1, 2014.

****

मन्दसौर जिले के औद्योगिक विकास में राष्ट्रीयकृत बैंकों के योगदान का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. दिनेशचन्द्र गुप्ता* शिखा नलवाया**

प्रस्तावना – भारत सरकार ने स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् से ही समाजवादी अर्थव्यवस्था स्थापित करने का लक्ष्य बनाया इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु सर्वप्रथम उत्पादन के सभी महत्वपूर्ण साधनों का राष्ट्रीयकृत करने का निर्णय लिया। इस अर्थव्यवस्था में समस्त उद्योगों को दो भागों में विभक्त किया गया। जिसमें प्रथम सार्वजनिक क्षेत्र एवं द्वितीय निजी क्षेत्र को रखा गया।

सन् 1968 में भारतीय व्यापारिक बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण सम्बंधी कानून लागू कियां यह नियंत्रण बैंकों पर एक वर्ष तक रहा लेकिन बैंकों की कार्य प्रणाली पर उसका कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा और सामाजिक क्षेत्र के उत्थान का उद्देश्य प्राप्त नहीं हुआ। फलत: विवादित दबावों में क्रमश: वृद्धि होती रही जिससे सरकार को लगा कि बैंकिंग व्यवस्था में जो दोष है, उन्हें दूर करने के लिए बैंकों के राष्ट्रीयकरण के अलावा दूसरा कोई रास्ता नहीं है।

19 जुलाई, 1969 को भारत सरकार ने एक अध्यादेश जारी करके देश में 50 करोड़ रूपयें से अधिक जमा वाले 14 बड़े व्यापारिक बैंकों सर्वरूपेण सरकारी अधिकार में ले लिया गया। इन 14 बैंकों के राष्ट्रीयकरण की प्रमुख विशेषताएँ निम्नांकित थी, इन 14 बैंकों के नाम निम्नलिखित है –

(1) सेंट्रल बैंक ऑफ इण्डिया, (2) बैंक ऑफ इण्डिया (3) पंजाब नेशनल बैंक, (4) बैंक ऑफ बड़ौदा (5) यूनाईटेड कमर्शियल बैंक, (6) केनरा बैंक (7) देना बैंक (8) यूनाईटेड बैंक ऑफ इण्डिया (9) सिण्डीकेट बैंक (10) यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया (11) इलाहाबाद बैंक (12) इण्डियन बैंक (13) बैंक ऑफ महाराष्ट्र (14) इण्डियन ओवरसीज बैंक

छ: और व्यापारिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण – बैंकों के राष्ट्रीयकरण का जो कदम 1969 में उठाया गया था, इसी क्रम में दूसरे चक्र में 15 अप्रेल 1980 को छ: और बड़े बैंकों को राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। इस सम्बंध में राष्ट्रपति ने अध्यादेश जारी किया। जिन बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया उनके नाम इस प्रकार थे –

(1) आन्ध्र बैंक (2) कार्पोरेशन बैंक लिमिटेड (3) न्यू बैंक ऑफ इण्डिया (4) ओरियंटल बैंक ऑफ कामर्स (5) पंजाब एण्ड सिंध बैंक (6) विजया बैंक।

इन बैंकों के पास जमा राशि 14 मार्च 1980 को 200 करोड़ रूपयें से अधिक थी। इस प्रकार राष्ट्रीयकरण के पश्चात् 20 बैंक सरकारी क्षेत्र में आ गए एवं लगभग 90 प्रतिशत जमा राशि सरकार के स्वामित्व में आ गई। इससे सरकार समाजवादी समाज के तथ्यों की पूर्ति करने में समर्थ हो गई।

सार्वजनिक क्षेत्र में 27 वाणिज्यिक बैंकों का जाल देशभर में फैला हुआ है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की 82 बैंकों की 12000 शाखाएँ कार्यरत है। विदेशी बैंकों में 22 पुराने व 8 नए बैंके कार्यरत है। 1 मार्च 2012 में राष्ट्रीयकृत एवं निजी बैंकों की मुल शाखा से 1,21,588 थी। इनमें से 50 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत थी।

मन्दसौर जिले में राष्ट्रीयकृत बैंकों का औद्योगिक विकास में योगदान का तुलनात्मक अध्ययन –

सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया – वर्ष 2007-08 में सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया ने मन्दसौर जिले में लघु उद्योग को 52 लाख रू. के लक्ष्य के विरूद्ध 47 लाख के ऋण दिए है। इस प्रकार बैंक का निष्पादन 90.38 प्रतिशत रही है। वर्ष 2009-10 में बैंक ने 22.69 लाख के लक्ष्य के प्रति 204.31 लाख रू. के ऋण दिए है। जो अन्य वर्षो की तुलना में अधिक थे। आगे के वर्षो में बैंक का लक्ष्य के प्रति ऋण अदायगी का कोई बराबरी का ही रहा है जो लीड बैंक के नाते बनाये रखना आवश्यक भी है। इस प्रकार स्पष्ट है कि बैंक ने समग्र 10 वर्षो के औसत लक्ष्य को पूरा किया है। यह ज्ञात है कि सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया जिले में लघु उद्योगों की स्थापना के लिए केवल ऋण को प्रदान नहीं करता है बल्कि जिले का अग्रणी बैंक होने के नाते शासन की स्व-रोजगार योजनाओं को औद्योगिक विकास हेतु क्रियान्वित भी करता है।

निष्कर्ष रूप में सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया ने विगत 10 वर्षो में 523.543 लाख रू. के ऋण के बदले 527.21 लाख रू. के निष्पादन किया जो औसत रूप में 100.27 प्रतिशत है। अत: यह स्पष्ट है अग्रणी बेंक के नाते यह जिले के औद्योगिक विकास में अहम भूमिका का निर्वाह करता रहता है।

देना बैंक – देना बैंक ने मन्दसौर जिले के लघु उद्योगों के विकास में वर्ष 2007-08 में लक्ष्य का निष्पादन किया है जो 233.33 प्रतिशत रहा है। यह अच्छी उपलब्धि रही है वर्ष 2008-09 में बैंक पिछड़ गया है। वर्ष 2009-10 से 2013-14 तक इन पांच वर्षो में बैंक की उपलब्धि शून्य प्रतिशत रही है। इन वर्षो में बैंक का जिले में लघु उद्योगों के विकास में निराशाजनक स्थिति रही है। वर्ष 2014-15 से 2016-17 तक बैंक ने लक्ष्य का निष्पादन किया है जो क्रमश: 98, 73 व 50 प्रतिशत ही रहा है। समग्र 10 वर्षो में बैंक द्वारा 124.47 लाख रू. के निष्पादन में केवल 56.11 लाख का ऋण प्रदान किया जो औसत 45.08 प्रतिशत रहा है। यह बैंक कार्य प्रणाली पर प्रश्न चिन्ह लगाता है। अर्थात् जिले के औद्योगिक विकास पर निराशाजनक योगदान रहा है।

ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स – ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स ने वर्ष 2007-08 में 10 प्रतिशत ऋण का निष्पादन किया जो नगण्य है। वर्ष 2008-09 में बैंक ने प्रगति की है। वर्ष 2008-09 में अधिक ऋण का

* प्राध्यापक (वाणिज्य) रा.गा.शा.स्ना. महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, रा.गा.शा.स्ना. महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

निष्पादन किया है। अर्थात 202.36 प्रतिशत जो उल्लेखनीय है। समग्र 10 वर्षो में बैंक ने 100.89 लाख रू. लक्ष्य के विरूद्ध 66.792 लाख रू. का निष्पादन किया। यह औसत रूप से 66.20 प्रतिशत होता है जो अन्य बैंकों की तुलना में कम है।

पंजाब नेशनल बैंक – पंजाब नेशनल बैंक ने जिले के लघु उद्योगों के विकास में 10 वर्षो में कुछ न कुछ ऋण अवश्य ही प्रदान किए। वर्ष 2008-09, 2009-10 व 2010-11 में बैंक द्वारा क्रमश: 233.35, 148.59 व 146.61 प्रतिशत ऋण दिए है अर्थात् बैंक ने लक्ष्य से भी अधिक ऋण प्रदान करके स्वरोजगार योजना में सहयोग किया है। समग्र 10 वर्षो में बैंक ने 102.62 प्रतिशत ऋण दिए जो लक्ष्य की पूर्ण पूर्ति की है।

यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया – यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया ने 2007-08 में लघु उद्योगों को 7 लाख रूपयें के लक्ष्य पर बैंक ने 3 लाख रू. का ऋण निष्पादित किया जो लक्ष्य पर उपलब्धि का 42.86 प्रतिशत ही होता है। वर्ष 2008-09 में बैंक ने केवल 13 प्रतिशत ही ऋण के लक्ष्य पर उपलब्धि प्राप्त की है जो पिछले दो वर्षे की तुलना में बहुत कम है। वर्ष 2009-10 में बैंक ने लक्ष्य के विरूद्ध उपलब्धि 108.85 प्रतिशत की है। वर्ष 2010-11 में बैंक ने कोई ऋण उपलब्ध नहीं कराया है।

इसी प्रकार वर्ष 2012-13, 2013-14 में कोई ऋण उपलब्ध नहीं किया है। वर्ष 2015-16 से 2017-18 के मध्य 68 प्रतिशत औसत रूप में ऋण उपलब्ध किए हैं। समग्र 10 वर्षो में बैंक ने 50.78 प्रतिशत ही ऋण उपलब्धि है। बैंक लघु उद्योगों के विकास के प्रति उदासीन रही है।

यूनाईटेड कमर्शियल बैंक – यूको बैंक ने वर्ष 2008-09 व 2009-10 में लघु उद्योगों को कोई भी ऋण प्रदान नहीं किया है इन वर्षो में बैंक की उपलब्धि शून्य प्रतिशत रही है जो निश्चय ही प्रबंधकीय उदासीनता का प्रतीक है। समग्र 10 वर्षो में यूको बैंक की लक्ष्य के निष्पादन में औसत उपलब्धि 16.10 प्रतिशत रही है जो बिल्कुल ही प्रबंधन की कार्य प्रणाली पर प्रश्न चिन्ह लगाता है। बैंक का लीड बैंक द्वारा दिए गए लक्ष्य की पूर्ति में सहयोगी नहीं रहा है।

बैंक ऑफ बड़ौदा – वर्ष 2007-08 व 2008-09 में बैंक ऑफ बड़ौदा ने लघु उद्योगों को ऋण प्रदान नहीं किया है। इन वर्षो में बैंक की उपलब्धि शून्य रही है। वर्ष 2007-08 में बैंक ने लघु उद्योगों की स्थापना में 1.00 लाख रू. के लक्ष्य के विरूद्ध 325.00 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो इस वर्ष की उपलब्धि का 32500 प्रतिशत होता है, यह उल्लेखनीय सहयोग कहा जा सकता है। वर्ष 2009-10 और 2010-11 में बैंक ने लक्ष्य के विरूद्ध निष्पादन का उल्लेखनीय वर्ष माना जा सकता है। इन दोनों वर्षो में बैंक ने शासन की नीतियों के अंतर्गत महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन 10 वर्षो में 2947 प्रतिशत की उपलब्धि हासिल की है।

बैंक ऑफ इण्डिया – बैंक ऑफ इण्डिया ने वर्ष 2009-10 से 2013-14 तक इस वर्ष बैंक की उपलब्धि शून्य प्रतिशत है। वर्ष 2007-08 एवं 2008-09 में बैंक ने बहुत कम मात्रा में ऋण प्रदान किए जो निष्पादन का क्रमश: 55, 6.79 प्रतिशत की उपलब्धि लक्ष्य के विरूद्ध हासिल की गई। उद्योगों की स्थापना के प्रति बैंक की उदासीनता की प्रवृत्ति का सूचक है।

स्टेट बैंक ऑफ इन्दौर – बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण का अवलोकन करने पर ज्ञात हुआ है कि मन्दसौर जिले में लघु उद्योगों के विकास में वर्ष 2007-08 से 2010-11 तक निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति विगत 4 वर्षो में राशि 143.44 लक्ष्य के निष्पादन में 99.86 लाख रूपयें ही उपलब्ध कराये जो 6.62 प्रतिशत होता है। अत: बैंक ने लघु उद्योगों को वित्तीय साख उपलब्ध कराने में बहुत पीछे रहा है। इसके साथ बैंक का कार्यकाल भी कम रहा हैं।

भारतीय स्टैट बैंक – बैंक ने वर्ष 2007-08 से 2011-12 तक लक्ष्यों की तुलना में उपलब्धि के प्रतिशत में लगातार वृद्धि की प्रवृत्ति रही है। बैंक की सर्वाधिक लक्ष्य तुलना में उपलब्धि 2009-10 व 2010-11 में अधिक रही जो क्रमश: 284.6 व 294.08 प्रतिशत की है। वर्ष 2008-09 में उपलब्धि का 75 प्रतिशत रहा है, वहीं 2007-08 में 78 प्रतिशत की उपलब्धि रही है। निष्कर्ष रूप में विगत 10 वर्षो में बैंक ने औसत रूप से 505.076 लाख रू. प्रतिवर्ष के लक्ष्य की तुलना में 634.559 लाख रू. के ऋण वितरित करके 125.72 प्रतिशत की उपलब्धि हासिल की है जो अन्य राष्ट्रीयकृत बैंकों की तुलना में स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया समूह ने अच्छा सराहनीय कार्य किया है।

इलाहाबाद बैंक – इलाहाबाद बैंक की मन्दसौर जिले में शुरूआत वर्ष 2010 में हुई थी। बैंक ने प्रथम वर्ष 2010-11 व 2011-12 की शुरूआत में ही लघु उद्योगों के विकास से अपने कार्य का निष्पादन पूर्ण तत्परता से किया है। दूसरे 2012-13 में लक्ष्य को निष्पादन में शून्य हो गया है। बैंक ने वर्ष 2013-14 व 2014-15 में लघु उद्योगों को ऋण उपलब्ध करवाने में क्रमश: 177 प्रतिशत व 103 प्रतिशत का योगदान दिया हैं जो सरहानीय कार्य कहा जा सकता है। आगामी वर्षो में फिर बैंक का कार्य निष्पादन में ढिलाई दिखाई दी। मौखिक साक्षात्कार से ज्ञात हुआ है कि प्रबंधक के बदल जाने से ऋण प्रदान करने में शिथिलता आ जाती है। समग्र बैंक के कार्यकाल में अर्थात 2011-12 से 2016-17 तक इन 6 वर्षो में औसत 75.93 प्रतिशत लक्ष्य की पूर्ति कर के अच्छा कार्य निष्पादन किया है।

कार्पोरेशन बैंक – कार्पोरेशन बैंक की स्थापना से वर्ष 2010-11 से 2013-14 तक मन्दसौर जिले के औद्योगिक विकास में लीड बैंक द्वारा दिए गए लक्ष्य के प्रति कोई लक्ष्य निष्पादित नहीं किए है। बैंक की स्थापना होते ही बैंक ने तत्परता नहीं दिखाई। बैंक के मौखिक साक्षात्कार में यह बताया गया है कि कई हितग्राही बैंक के अध्ययन में खरे नही उतरे। अत: अयोग्य हितग्राही को ऋण देना मुनासिब नहीं समझा। आगामी वर्षो में 2014-15 से 2016-17 में लक्ष्य के निष्पादन में हितग्राहियों को ऋण उपलब्ध कराने में तत्परता दिखाई। समग्र 10 वर्षो के औसत रूप में 56.19 प्रतिशत ही बैंक से ऋणों का निष्पादन किया है। यह स्थिति बहुत अच्छी नहीं रही।

इण्डियन बैंक – इण्डियन बैंक ने अपने स्थापना वर्ष 2010-11, 2011-12 व 2013-14 में मन्दसौर जिले के औद्योगिक विकास में लघु उद्योगों के एम.एस.एम.ई. के अंतर्गत लीड बैंक से प्राप्त प्रकरण पर लक्ष्य के प्राप्ति के निष्पादन में कोई रूचि नहीं दिखाई। इन वर्षो में लक्ष्य के प्रति निष्पादन शून्य रहा है। वर्ष 2013-14, 2014-15 व 2015-16 में बैंक ने लघु उद्योगों के प्रकरण निष्पादन में ऋण उपलब्ध कराने में तत्परता दिखाई क्रमश: 94, 96 व 74 प्रतिशत कार्य निष्पादन किया है। जो संतोषजनक कहा जा सकता है। वर्ष 2016-17 में लक्ष्य की पूर्ति में केवल 23 प्रतिशत ही निष्पादन किया है। समग्र 8 वर्षो में बैंक का कार्य लक्ष्य के प्रति औसत रूप से 56.48 प्रतिशत रहा है। यह आंशिक रूप से अच्छा कार्य कहा जा सकता है।

इण्डियन ओवरसीज बैंक – इण्डियन ओवरसीज बैंक की स्थापना वर्ष 2009-10 के दौरान हुई। इस वर्ष और आगामी वर्षो में 2013-14 तक कोई ऋण बैंक द्वारा लघु उद्योगों के विकास में नहीं दिए गए। बैंक स्थापना के बाद वर्ष 2014-15 में 76 प्रतिशत ऋण उपलब्ध करावाऐं। वर्ष 2015-

16 व 2016-17 में भी बैंक ने क्रमश: 83 व 65 प्रतिशत बैंक ने कार्य निष्पादन किया है। अन्य बैंक की तुलना में इस बैंक का कार्य निष्पादन कम अवधि में बहुत अच्छा कहा जा सकता है।

विजया बैंक - विजिया बैंक की स्थापना हाल ही वर्ष 2015-16 में हुई। बैंक ने स्थापना से लेकर दो वर्षो में केवल औसत 37% का ऋण लक्ष्य के निष्पादन किया।

कैनरा बैंक - बैंक की स्थापना से अभी तक बैंक ने चार वर्षो में प्रथम दो वर्ष 2013-14 व 2014-15 में कोई ऋण नहीं दिया है। अगले दो वर्षो में 2015-16 व 2016-17 में बैंक ने लक्ष्य के निष्पादन में क्रमश: 62 व 62 प्रतिशत ऋण देकर कार्य सम्पादित किया है। इन चार वर्षो के कार्यकाल में बैंक ने औसत रूप से 80 प्रतिशत ऋण देकर जिले की श्रेणीबद्ध बैंक में अपना स्थान बनाया है।

सिंडिकेट बैंक - सिंडिकेट बैंक द्वारा 0 लक्ष्य के विरूद्ध 3.00 लाख का ऋण स्वीकृत किया गया। यह बैंक लक्ष्य के विरूद्ध भी ऋण प्रदान कर औद्योगिक विकास में सहयोग कर रहा है ऐसा प्रतीत होता है।

उपर्युक्त सभी 17 राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा मन्दसौर जिले में लघु उद्योगों को लीड बैंक द्वारा प्रदत्ता लक्ष्य एवं उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करने हेतु निम्न तालिका में प्रस्तुत किया गया है।

मन्दसौर जिले में राष्ट्रीयकृत बैंकों के ऋण के लक्ष्य एवं उपलब्धि (वर्ष 2007-08 से 2016-17 तक 10 वर्षो की कुल राशि)

(राशि लाख रू. में)

क्र.	बैंक का नाम	सूक्ष्म, लघु उद्योगों को ऋण			श्रेणी
		लक्ष्य	उपलब्धि	प्रतिशत	
1	बैंक ऑफ बड़ौदा	15.803	465.738	2947	I
2	बैंक ऑफ इण्डिया	366.720	221.260	63.33	
3	सेंट्रल बैंक ऑफ इण्डिया	523.543	527.21	100.70	IV
4	देना बैंक	124.470	56.110	45.08	
5	औरियण्टल बैंक ऑफ कामर्स	100.890	66.792	66.20	
6	पंजाब नेशनल बैंक	477.084	489.580	102.62	III
7	भारतीय स्टैट बैंक	505.076	634.959	125.72	II
8	स्टैट बैंक ऑफ इन्दौर	143.440	99.860	69.62	
9	यूको बैंक	173.200	27.892	16.10	
10	यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया	58.690	29.800	50.78	
11	सिंडीकेट बैंक	00.000	3.000	00.00	
12	इलाहाबाद बैंक	76.421	58.025	75.93	
13	कार्पोरेशन बैंक	17.331	9.739	56.19	
14	इण्डियन बैंक	17.331	9.789	56.48	
15	इण्डियन औवरसीज बैंक	3.941	2.914	73.94	
16	विजिया बैंक	2.500	0.934	37.00	
17	कैनेरा बैंक	6.407	5.185	80.00	V
	योग	**2612.847**	**2708.787**	**103.68**	

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि मन्दसौर जिले के औद्योगिक विकास में राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा दी गई वित्तीय सहायता में बैंक ऑफ बड़ौदा प्रथम स्थान पर है। इसका विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि अन्य बैंकों की तुलना में लक्ष्य की राशि कम मात्रा में थी और लक्ष्य के निष्पादन में वितरण की राशि की मात्रा अधिक होने से बैंक अन्य बैंकों की तुलना में प्रथम स्थान पर प्रतिशत की दृष्टि से आता है। यहाँ यह भी स्पष्ट है कि अन्य बैंकों की तुलना में लक्ष्य एवं वितरण की दोनों ही राशियां कम है।

भारतीय स्टैट बैंक अन्य राष्ट्रीयकृत बैंकों की तुलना में द्वितीय स्थान पर प्रतिशत की दृष्टि से है। यह प्रतिशत 125.72 का है, जो अन्य समस्त 17 राष्ट्रीयकृत बैंकों में द्वितीय स्थान पर आता है। पंजाब नेशनल बैंक का प्रतिशत की दृष्टि से तृतीय स्थान पर है इसका 102.62 प्रतिशत का लक्ष्य के निष्पादन में कार्य सम्पन्न किया है।

जिले के औद्योगिक विकास में राष्ट्रीयकृत बैंकों के योगदान में राशि व लक्ष्य वितरण की दृष्टि से स्पष्ट है कि सेंट्रल बैंक ऑफ इण्डिया का समग्र 10 वर्षो में लक्ष्य सभी राष्ट्रीयकृत बैंकों की तुलना में 523.593 लाख रू. का जो सर्वाधिक है। इसी प्रकार इस बैंक का लक्ष्य से निष्पादन की राशि 527.21 लाख रू. है जो अन्य बैंकों से वितरण भी अधिक है। इसी प्रकार से भारतीय स्टैट बैंक का समग्र 10 वर्षो में औद्योगिक विकास में लघु एवं कुटीर उद्योगों को राशि के लक्ष्य एवं वितरण में द्वितीय स्थान पर है। जो क्रमश: 505.076 लाख रू. में लक्ष्य प्रति 634.959 लाख रू. की राशि के वितरण किया है।

समग्र 10 वर्षो के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि राष्ट्रीयकृत बैंकों का औद्योगिक विकास में राशि दृष्टिकोण से सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया एवं भारतीय स्टैट बैंक ही निर्धारण लक्ष्यों के निष्पादन में सक्रिय एवं शासन नीति के पालन में अग्रणी रहे हैं। अन्य बैंकों ने विभिन्न वर्षो में निर्धारित लक्ष्यों में एवं वितरण राशि में समन्वय का अभाव रहा है। फिर भी समग्र 10 वर्षो के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि कुल लक्ष्य पर निष्पादन अधिक रहा है। अर्थात मन्दसौर जिले के औद्योगिक विकास में समस्त राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा दिए लक्ष्य 2612.847 लाख रू. के विरूद्ध कार्य निष्पादन की उपलब्धि 2708.787 लाख रूपयों की रही है जो समग्र औसत उपलब्धि का 103.68 प्रतिशत है। अत: स्पष्ट है कि राष्ट्रीयकृत बैंकों ने मन्दसौर जिले में औद्योगिक विकास में उल्लेखनीय सहयोग प्रदान कर शासन की नीतियों एवं रोजगारमूलक कार्यक्रमों के संचालन में सराहनीय योगदान रहा है।

निष्कर्ष - मन्दसौर जिले के औद्योगिक विकास में राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा दिए गए ऋण सहायता का बैंकवार अध्ययन करने के पश्चात् यह ज्ञात होता है कि अग्रणी बैंक द्वारा दिए गए निर्धारित लक्ष्यों के अनुसार कुछ ही बैंक लक्ष्य को ध्यान में रखकर ऋण सहायता वितरित की जाती रही है। विभिन्न वर्षो में विभिन्न बैंकों द्वारा निर्धारित लक्ष्यों में और वितरण राशि में समन्वय का अभाव रहा है।

जब बैंकों से प्रत्यक्ष सम्पर्क किया तो प्रबंधक द्वारा लक्ष्य की पूर्ति करने में अनेक गोपनीय कारणों से अवगत कराना उचित नहीं समझा गया है। इन्हीं कारणों से बैंक में लक्ष्य राशि से वितरण राशि में अन्तर पाया जाता है। समग्र रूप से राष्ट्रीयकृत बैंकों का औद्योगिक विकास में उल्लेखनीय योगदान रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

वतन परस्त मालव केसरी महाराजा यशवन्तराव होलकर का ब्रिटिश सत्ता से प्रतिशोध

डॉ. कैलाश राय *

प्रस्तावना – मराठा संघ के राजवंशों में इन्दौर के होलकर राजवंश का स्थान विशिष्ठ रहा है। जहां एक ओर देवी अहिल्याबाई होलकर (1767-1795 ई.) के गौरवपूर्ण कार्यो से इस वंश की कीर्ति सदा गुंजायमान रही, वहीं इस वंश के सर्वश्रेष्ठ जुझारू योद्धा मालव केसरी महाराजा यशवन्तराव होलकर (प्रथम 1798-1811 ई.) के अदम्य साहस, वीरता, सैनिक एवं रणनिपुणता के आधार पर पतोन्मुख होलकर राज्य में न केवल नव जीवन का संचार हुआ। अंधकार में उसका उदय प्रकाश की एक धूमिल किरण के रूप में हुआ, जिसका उजियारा निरन्तर फैलता ही गया। व्यक्तित्व वीरता एवं शौर्यपूर्ण कार्यो से उसने सत्ता हस्तगत की। यशवन्तराव होलकर सैनानी महाराजा तुकोजीराव होलकर (प्रथम 1795-1797 ई.) का पराक्रमी पुत्र था। अपने राजनीतिक जीवन के आरम्भिक वर्षो में उसने अपने भतीजे खण्डेराव के नाम से शासन संचालित किया और ई.1799 में वह अपने पैतृक राज्य सिंहासन पर आरूढ़ हुआ और देवी अहिल्या की प्राचीन राजधानी महेश्वर में उसका राज्याभिषेक सम्पन्न हुआ।[1]

यशवन्तराव होलकर जीवन पर्यन्त फिरंगियों से जूझता रहा और अपनी सैनिक प्रतिभा के बल पर ही उसने ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के विरूद्ध सक्रिय सैनिक अभियान किये। उस काल में ऐसा कोई भी देशी नरेश नहीं था, जो अपनी संकीर्ण भावना को त्यागकर तथा राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत होकर भारत राष्ट्र के विषय में सोचे और उस दिशा में प्रयास करें, किन्तु महाराजा यशवन्तराव होलकर के रक्त में नि:संदेह ब्रिटिश शक्ति को धराशाही कर देने की विद्रोही भावना व्याप्त थी। सेन्ट्रल इण्डिया में उसकी बढ़ती हुई शक्ति के रूप में वह स्वयं फिरंगियों के लिए एक भीषण चुनौती के समान था। वह मालव प्रदेश का प्रथम ऐसा नरेश था, जिसने आंग्ल सत्ता के विरूद्ध युद्ध का शंखनाद किया तथा अपने जीवन काल में अंग्रेजों को होलकर राज्य पर प्रभुत्व जमाने से रोके रखा।

ईस्ट इण्ड़िया कम्पनी ने सर जॉन शोर के पश्चात् रिचर्ड कोले वेलेजली (अर्ल ऑफ मर्निंगटन : 1798-1805 ई.) को ब्रिटिश भारत का गवर्नर जनरल नियुक्त किया। लार्ड वेलेजली के शासन काल में भारत में महत्वपूर्ण उलट-फेर हुए। मार्क्विस वेलेजली ने 2 अक्टू.ई.1800 को कलकत्ते से अपने एक मित्र के नाम इंग्लैण्ड़ पत्र लिखा, पत्र की भाषा शैली से वेलेजली की साम्राज्य पिपासा, कम्पनी के तथा उसके स्वयं के उद्देश्यों का स्पष्ट पता चलता है। वह लिखता है-'मैं भारत में राजमुकुटों के ढ़ेर लगा दूंगा और फतह पर फतह तथा मालगुजारी पर मालगुजारी लाद दूंगा मैं इतनी शान, विपुल घन और इतनी सत्ता इकठ्ठी कर दूंगा कि एक बार मेरे महत्वाकांक्षी और धन लौलुप मालिक भी त्राहि-त्राहि चिल्लाने लगेंगे।'[2]

लार्ड वेलेजली देशी नरेशों के विनाश के लिए अति व्यग्र था। अत: उसके लिए सर जॉन शोर की 'अहस्तक्षेप एवं गुट मुक्तता की नीति' का अनुशरण करना असंभव था। वह तो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आगे रहने में विश्वास करता था और अपने इसी विश्वास के फलस्वरूप उसने सात वर्ष की छोटी सी अवधि में चमत्कार कर दिखाया।

भारत में उस समय ईस्ट इण्डिया कम्पनी का ग्रहण देशी नरेशों को क्रमश: ग्रसता ही जा रहा था। जिस छल-कपट अथवा कूटजाल के द्धारा लार्ड वेलेजली ने अपनी 'सबसीडियरी एलायन्स'(सहायक सन्धि) का जाल बिछाया, उसी सशक्त माध्यम से उसने भारत के मुस्लिमों और मराठों को वश में किया। निजाम तथा पेशवा को फांसकर अपना मुखापेक्षी (मुंह देखा) बना लिया, कर्नाटक के नवाब, तंजौर के राजा, अवध के नवाब व वजीरों को ध्वस्त किया। सूरत और फर्रूखाबाद के नवाबों के इलाकों का अपहरण किया तथा हैदरअली और टीपू को अपने अधीनस्थ करके मराठों पर जोरदार चोंट की। उसने सिन्धिया और भोंसले को भी अपने कूटजाल की गिरफ्त में ले लिया।

लार्ड वेलेजली ने देशी शासकों की भावनाओं की कभी चिन्ता ही नहीं की। अवध के मामले में तो उसके एक पक्षपोषक को उसने लिखा था कि - 'अंग्रेजी नीति को ऊपर रखने के लिए वह अपने मित्र शासकों की भावनाओं एवं उनके हितों को जिस ढ़ंग से कुचल देता था, उसमें धैर्य, सहनशीलता एवं उदारता के नाम के भी दर्शन नहीं होते थे।'[3]

वेलेजली की दृष्टि में मालवा में केवल यशवन्तराव होलकर ही एक शक्तिशाली तथा अपराजय योद्धा शेष बच रहा था। अंग्रेजों को उसकी प्रगतियों का भान था। इसके अतिरिक्त वे ये भी जानते थे कि मालवा का वह स्वतंत्र सिंह बिना संघर्ष के ब्रिटिश प्रभुता को स्वीकारने वाला नहीं है। यशवन्तराव स्वयं भी सिन्धिया के पतन के पश्चात् शक्ति संचय में लगा हुआ था।

यशवन्तरा होलकर की बढ़ती हुई शक्ति से चिन्तित होकर जनरल वेलेजली ने लार्ड लेक को लिखा-'यशवन्तराव होलकर की अतुलनीय पराक्रमशीलता, उसके अपराजय युद्ध कौशल और उसकी महत्वाकांक्षाओं को देखते हुए भारतवर्ष में पूर्ण शान्ति कायम रखने के लिए यह आवश्यक प्रतीत होता है कि उसकी शक्ति को अत्यधिक कमजोर कर दिया जावे।'[4]

उसी मध्य यशवन्तराव होलकर को यह पता चला कि जनरल लेक उसकी सेना के तीन योरोपियन अधिकारियों के साथ जिनके नाम - केप्टन विर्कस, केप्टन टाड तथा केप्टन रायन थे, गुप्त षड़यंत्र कर रहे थे। ये तीनों अपने स्वामी यशवन्तराव को त्याग कर अंग्रेजों से मिल जाना चाहते थे।

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन एवं अध्यक्ष-इतिहास अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) (म.प्र.) भारत

अतः यशवन्तराव ने अपनी सेना में कार्यरत इन तीनों अधिकारियों को मौत के घाट उतार दिया।[5]

लार्ड लेक को यह स्पष्ट भान हो चुका था कि होलकर के सम्मुख उसकी साजिशों का सफल होना इतना सुगम न था, जितना सिन्धिया के साथ।

जनवरी 1804 ई. में यशवन्तराव होलकर ने तत्कालीन प्रमुख ब्रिटिश सैन्य अधिकारी लार्ड लेक को अपनी मांगों से अवगत कराते हुए परम्परागत चौथ वसूलने के अधिकार तथा गंगा-जमुना के प्रदेश में स्थित 12 जिले साथ ही बुन्देलखण्ड़ जिले की मांग की। वह अंग्रेजों से केवल अपने वादों की पूर्ति चाहता था। ई.1804 में लार्ड लेक ने यशवन्तराव की मांगों को अस्वीकार करते हुए लिखा कि - 'आपकी मांगे बे-बुनियाद है और इस तरह की मांगे सुनना भी अंग्रेजी सरकार की शक्ति व शान के खिलाफ है।'[6]

अपनी मांगों के अस्वीकार होने पर यशवन्तराव होलकर आक्रोश से भर उठा और फरवरी 1804 ई.को उसने जनरल वेलेजली को अपने चुनौती भरे पत्र में लिखा-'युद्ध की दशा में यद्यपि मैं समरभूमि में ब्रिटिश तोपखाने का सामना नहीं कर सकता, तथापि सैकड़ों कोस का प्रदेश पद दलित कर दूंगा। मैं उनको भस्मीभूत कर दूंगा तथा मैं फिरंगियों को एक क्षण भी सांस लेने तक की फुरसत नहीं दूंगा। मैं अपनी सेना के आक्रमणों द्वारा लाखों मनुष्यों को खून के आंसू रूला दूंगा। मेरी सेना के आक्रमण 'समुद्री तूफानी लहरों' की भांति प्रलयकारी होते है।'[7]

लार्ड लेक अपनी पुरानी आदतों के अनुसार यशवन्तराव के विरूद्ध गुप्त साजिशों में लगा हुआ था। उसने यशवन्तराव के विश्वस्त सहायक और पिण्डारी नेता अमीर खां को भी अपने पक्ष में फोड़ लेने के भरसक प्रयास किये। उक्त अवसर पर जनरल वेलेजली ने 2 मार्च, ई.1804 को पूना से सर जॉन मालकम को लिखा-'मानसन अमीर खां के साथ समझौते का प्रयास कर रहा है और यदि उसने अमीर खां को यशवन्तराव होलकर से फोड़ लिया तो यशवन्तराव का खात्मा हो जावेगा।'[8]

उस समय तक ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी का यशवन्तराव होलकर के साथ गंभीर रूप से युद्ध आरम्भ हो चुका था। फिरंगियों ने तीन ओर से तीन सुदृढ़ सेनाएं होलकर पर हमला करने के लिए तैयार थी। सबसे प्रबल एवं विशाल सेना लार्ड लेक के अधीन, दूसरी सेना दक्षिण में कर्नल वेलेस के अधीन और तीसरी सेना गुजरात में कर्नल मरे के अधीन नियुक्त की गई। 24 अगस्त को बनास नदी के तट पर भयानक युद्ध हुआ। होलकर के शौर्य के सम्मुख मॉनसन टिक न सका और उसे पलायन का सहारा लेना पड़ा। मानसन के विपत्तिपूर्ण समाचारों से ब्रिटेन में रोष और खलबली मच गई।[9]

इन सब बातों ने मिलकर वेलेजली को अपने ही देश में बदनाम करना आरम्भ कर दिया। इंग्लैण्ड में इसकी प्रतिक्रिया बहुत तेज हुई और 66 वर्षीय लार्ड कार्नवालिस को लार्ड वेलेजली से शासन भार लेने के लिए भारत भेजा गया।[10]

लार्ड कार्नवालिस भी वेलेजली के समान ही साम्राज्य पिपासु व्यक्ति था। ब्रिटिश प्रधानमंत्री पिट को उसकी प्रतिभा व दक्षता पर पूर्ण विश्वास था। कार्नवालिस भी स-सम्मान एवं शांतिपूर्ण प्रयासों से होलकर के विरूद्ध चल रहे युद्ध को समाप्त कर देना चाहता था।

इसी मध्य यशवन्तराव होलकर ने अंग्रेजों के विरूद्ध भारतीय तथा एशियाई नरेशों को अपने पक्ष में करने के सक्रिय प्रयास किये थे। पंजाब के महाराजा रणजीतसिंह तथा उसके चाचा बाघसिंह, अफगानिस्तान के शाह, बेगम समरू से भी उसे अंग्रेजों के विरूद्ध मैत्रीपूर्ण संदेश मिले थे, किन्तु भविष्य में ये सब संदेश कोरे आश्वासन ही सिद्ध हुए। ब्रिटिश कूटनीति ने यशवन्तराव के समस्त मन्सूबों पर पानी फेर दिया था। ये सभी शासक राष्ट्रीय भावनाओं को तिलांजलि देकर अंग्रेजों के हाथ बिक चुके थे।

व्यक्तिगत वीरता चाहे जितनी उच्च क्यों न हो, किन्तु अपरिमित ब्रिटिश शक्ति की तुलना में वह नहीं ठहर सकती थी। यही स्थिति यशवन्तराव होलकर के साथ भी घटित हुई। 13 दिसम्बर, 1805 ई. को डींग में यशवन्तराव होलकर को ब्रिटिश सैन्य शक्ति ने परास्त कर दिया।

अन्ततः अपने समर्थकों के प्रबल परामर्श से तथा साथ ही अत्यन्त दु:खी और निराश होकर यशवन्तराव होलकर ने 24 दिसम्बर, 1805 ई. में ब्रिटिश सरकार से 'राजपुर घाट' की सन्धि करके आत्म समर्पण कर दिया।[11]

राजपुर घाट की यह सन्धि होलकर के लिए अत्यधिक बन्धनकारक और अपमानजनक थी, जिसकी पीड़ा उसको जीवन पर्यन्त सालती रही तथापि उस स्वाभमानी सिंह ने ब्रिटिश सत्ता की चौखट पर नाक रगड़ना स्वीकार नहीं किया। उसके चिर प्रतिशोध का अभी अन्त नहीं हुआ था। उसका यह दृढ़ विश्वास था कि शक्तिशाली तोपखाने से फिरंगियों को परास्त किया जा सकता है। अतः अटूट विश्वास के साथ उसने अपनी सामरिक राजधानी भानपुरा में तोपों की एक निर्माण शाला स्थापित की, जहां शोभाराम नामक निपुण तोपची के नेतृत्व में तोपें ढ़लवाई जाती थी। उड़ती हुई चिनगारियों एवं पिघली हुई धातुओं के मध्य वह स्वयं कई घण्टों खड़ा रहकर भीषण गर्मी में भी तोपों के निर्माण की प्रक्रिया का निरीक्षण करता रहता था। गहन शारीरिक परिश्रम तथा अत्यधिक मदिरापान का व्यसन तथा ब्रिटिश प्रतिशोध की तीव्र उत्कण्ठा ने उसके मस्तिष्क में विकृति उत्पन्न कर दी।[12]

अन्ततः 28 अक्टूबर, 1811 ई. को 30 वर्ष की अल्पायु में वह महान पराक्रमी योद्धा अपने प्रतिशोध की अग्नि को अपने सीने में दफन किये हुए ही इस संसार से विदा हो गया। भानपुरा में बना उसका स्मारक (छत्री) आज भी निरन्तर संघर्ष का संदेश लिए हुए उस पराक्रमी पुरूष की स्मृति को ताजा कर रही है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यदुनाथ सरकार : मुगल साम्राज्य का पतन, जिल्द 4, हिन्दी अनुवादक-डॉ.मथुरालाल शर्मा, पृ.154
2. सुन्दरलाल : भारत में अंग्रेजी राज, जिल्द-1, पृ.320
3. सर ए ल्याल : ब्रिटिश डोमिनियन इन इण्डिया (भारत में ब्रिटिश अधिराज्य), पृ. 246
4. सुन्दरलाल : भारत में अंग्रेजी राज्य, जिल्द-1, पृ.325
5. ग्राण्ड डफ : हिस्ट्री ऑफ दि मराठाज, पृ.773-745 तथा जे.टेलबॉयज व्हीलर : समरी ऑफ अफेयर्स ऑफ दि मराठा स्टेट्स, पृ.120-21
6. सर जी.एस.देसाई : मराठों का नवीन इतिहास, जिल्द-3, पृ.455
7. मार्टिन : वेलेजली डिस्पेचेस, जिल्द 4, पृ.46-47
8. सुन्दरलाल : भारत में अंग्रेजी राज, जिल्द-1, पृ.474
9. डब्ल्यू. एच.हटन : मार्क्सि वेलेजली, पृ.77
10. पी.ई.राबर्टस:ब्रिटिश कालीन भारत का इतिहास, तृतीय संस्करण,अनुवादक-रामकृष्ण शर्मा कंवल, पृ.196
11. न.र.फाटक : यशवन्तराव होलकर थोरले, पृ.112
12. सर जॉन मालकम : ए मेमॉयर ऑफ सेन्ट्रल इण्डिया, जिल्द 1, पृ.246-47

होलकर राजवंशीय महिलाएं और 'महानुभाव पंथ'

डॉ. कैलाश राय *

प्रस्तावना – होलकर राजवंश के इतिहास में 'महानुभाव पंथ' का विशेष स्थान रहा है। धार्मिक दृष्टि से होलकर राजवंश की महिलाएं 'महानुभाव पंथ' की उपासिकाऐं थी। कुल की परम्परानुसार यद्यपि राजवंश में 'मल्हारी मार्तण्ड' अर्थात शिव की उपासना की जाती थी तथापि राजवंश की राज महिलाओं ने धार्मिक संकीर्णता को कभी नहीं अपनाया और वे शिव, विष्णु (गोपाल कृष्ण) तथा महानुभाव पंथ की अनुयायी बनी रही। होलकर राजवंश की नारियों में धार्मिक परम्परा की दृष्टि से सूबेदार मल्हारराव होलकर (प्रथम) की उप-पत्नी हरकूबाई का अति विशिष्ट योगदान रहा है। हरकूबाई के माध्यम से ही होलकर राजवंश में हिन्दू धर्म की एक विशिष्ट शाखा 'महानुभाव पंथ' का आगमन हुआ। हरकूबाई एक महानुभाव पंथी थी और वह इस पंथ के संतों के प्रति अपार श्रृद्धा-भक्ति एवं निष्ठा रखती थी। हरकूबाई की आध्यात्मिक प्रेरणा एवं प्रभाव से इस पंथ का राजवंश में आगमन हुआ। हरकूबाई की प्रेरणा से ही महाराजा यशवन्तराव (प्रथम) की प्रेयसी एवं उप-पत्नी तुलसाबाई होलकर का रूझान भी इस पंथ के प्रति हुआ और वह महानुभाव पंथ में दीक्षित हो गई। महानुभाव पंथी अन्याबा (आजीबा) की प्रिय शिष्याओं में हरकूबाई, तुलसाबाई तथा मीनाबाई का विशिष्ठ स्थान रहा है।

महानुभाव पंथ का अभ्युदय 12 वीं, 13 वीं शताब्दी के मध्य हुआ। गुजरात प्रदेश के नगर भृगुकच्छ (भड़ौंच) के नरेश हरपालदेव जो कालान्तर में श्री चक्रधर स्वामी (1194-1273 ई) के नाम से विख्यात हुए थे, ने शक संवत 1190 में पैठण (प्रतिष्ठानपुर) में सन्यास ग्रहण करने के उपरान्त ऋद्धिपुर नामक स्थान पर 'महानुभाव पंथ' की स्थापना की।[1] यह पंथ 'महात्मा पंथ', 'जय श्रीकृष्णीय पंथ' तथा 'अच्युत पंथ' आदि नामों से विख्यात है।[2]

इस पंथ के धार्मिक मत के अनुसार आद्य शंकराचार्य ने जैन, बौद्ध आदि धर्मों का खण्ड़न करके जिस ब्राहम्ण धर्म का पुनरूद्धार किया, वही परिष्कृत सिद्धांत इस पंथ के मुख्य सिद्धांत है। श्रीमद भागवत गीता महानुभाव पंथ का मुख्य धर्मग्रन्थ है।[3] इस पंथ के अन्तर्गत हिन्दू देवी-देवताओं में से श्रीकृष्ण एवं श्री दत्तात्रय का पूजन किया जाता है। इस पंथ के मतानुसार इन दोनों को ही भगवान का पूर्ण अवतार माना जाता है तथा अन्य देवी-देवताओं को अंशावतार।

महानुभाव पंथ पूर्ण सात्विक पंथ है। इस पंथ में अहिंसा को सर्वाधिक महत्व देकर मूर्तिपूजा का निषेध किया गया है किन्तु श्रीकृष्ण एवं श्री दत्तात्रय के पवित्र पूजा स्थल (ओटले) बना कर इनकी आराधना का विधान है। अत: ये विशिष्ठ प्रकार के मूर्तिपूजक हिन्दु श्रेणी में आते हैं किन्तु मुस्लिम शासकों ने इन्हें मूर्तिपूजक न मानते हुए एक विशिष्ठ प्रकार का हिन्दु माना था। इसलिए औरंगजेब जैसे कट्टर शासक ने भी इस पंथ को जजिया कर से मुक्त रखा और उन्हें ईमान की सनदे प्रदान की थी।[4]

श्रीकृष्ण एवं श्री दत्तात्रय के पश्चात् क्रमश: – श्री चांगदेव उर्फ चक्रपाणी तीसरे, श्री गोविन्द प्रभु महानुभाव (1188-1285 ई.) चौथे तथा चमत्कारिक व्यक्तित्व के धनी श्री चक्रधर स्वामी इस पंथ के पांचवे तथा अंतिम अवतार माने गये है। श्री चक्रधर स्वामी ने अनेक चमत्कारिक कार्य किये है, जिसकी कथा 'लीला चरित्र' नामक ग्रन्थ में पाई जाती है।

श्री चक्रधर स्वामी के पंथ प्रचार के 500 शिष्यों में से श्री नागदेवाचार्य (1236-1302 ई), श्री जर्नादन स्वामी (1504-1575 ई.), श्री दामोदर पण्ड़ित, श्री महिन्द्र भट्ट एवं श्री भाण्डारेकर को महानुभाव सम्प्रदाय में मुख्य स्थान प्राप्त है।[5]

होलकर राजवंश की राज महिलाओं का उदार संरक्षण पाकर यह पंथ राज्य के विभिन्न भागों में प्रसारित होता चला गया। हरकूबाई होलकर ने इस पंथ को चिरस्थायी बनाने की कामना से इन्दौर में राजबाड़े के निकट एक मंदिर का निर्माण कराया था, जो 'श्री बांके बिहारी महानुभाव मंदिर' के नाम से जाना जाता है। यद्यपि सर्जेराव घाटगे (दौलतराव सिन्धिया का ससुर) ने जब इन्दौर के राजबाड़े को भस्मीभूत किया था तथापि वह इस मंदिर को किसी भी प्रकार की क्षति न पहुंचा सका था और इस पंथ तथा मंदिर के प्रति श्रृद्धानवत हो उठा था।[6]

होलकर राजवंश की राजमाता कृष्णाबाई होलकर (1817-1849 ई.) भी इस पंथ से अछूती नहीं रही। वे कृष्ण भक्ति से औतप्रोत थी। अत: इस पंथ के मुख्य देवता के प्रति अपनी श्रृद्धा अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने इन्दौर के राजबाड़े के निकट 'श्री गोपाल मंदिर' की स्थापना की। इन मंदिरों को राजवंश की परवर्ती महिलाओं ने भी पर्याप्त संरक्षण प्रदान किया था। खासगी से होने वाली मद से इन मंदिरों की सहायता की जाती थी। भागीरथीबाई होलकर ने अपने कार्यकाल में इन मंदिरों को सनद प्रदान की थी।

इस प्रकार होलकर राजवंश की हरकूबाई होलकर तथा तुलसाबाई होलकर का उदार, संरक्षण पाकर यह महानुभाव पंथ न केवल इन्दौर राज्य में अपितु अपनी धार्मिक उदारता के कारण गुजरात, संयुक्त प्रांत (उत्तरप्रदेश), पंजाब, लाहौर, अमृतसर तत्पश्चात् काश्मीर, पेशावर, काबुल-कन्धार और गजनी के मुस्लिम प्रसारित भू-भाग तक प्रसारित होता चला गया।[7]

इस पंथ के विषय में परम्परागत रूप से कुछ बातें विद्धेषपूर्ण कही गई है तथापि सत्य कुछ भी रहा हो, इस पंथ की विशेषताएं, कार्य एवं सिद्धांत स्पृहरणीय है।

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन एवं अध्यक्ष-इतिहास अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) (म.प्र.) भारत

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. य.र.दाते तथा चि.ग.कर्वे : सुलभ विश्व कोष, भाग-5, पृ.1924-25; व्यंकटेश केतकर : महाराष्ट्रीय ज्ञानकोश, जिल्द-18, पृ.76-79
2. के.विनायक लक्ष्मण भावे तथा शा.गो तुलपुले : महाराष्ट्र सारस्वत, पृ. 656-673
3. दाते एवं कर्वे : सुलभ विश्वकोष, भाग-5, पृ. 1924-25
4. दाते एवं कर्वे : सुलभ विश्वकोष, भाग-5, पृ. 1924-25; महाराष्ट्र सारस्वत, पृ. 59
5. चित्रावशास्त्री : भारतवर्षीय मध्युगीन चरित्र कोष, पृ. 391, 480, 350, 354;दाते एवं कर्वे : सुलभ विश्वकोष, भाग-5, पृ. 1924-25
6. मालव साहित्य - इन्दूर विशेषांक, पृ. 36
7. दाते एवं कर्वे : सुलभ विश्वकोष, भाग-5, पृ. 1924-25

****

Comparative Analysis of Mental Toughness Between Judo, Taekwondo and Boxing National Players

Dr. YuwrajShrivastava* Prasun Kumar Singh**

Abstract - The main purpose of the study was to compare the mental toughness between Judo, Taekwondo, and Boxing national players. In this study, the questionnaire of Mental Toughness was distributed among the national players. The study was conducted on forty(40) taekwondo, forty(40) judo, and forty (40) boxing national players. For this study, the standard questionnaire of Mental Toughness was used and the data was collected through standard questionnaire prepared by (Dr. Alan Goldberg contains 30 items). The subjects were selected by simple random sampling method. After the collection of data from the National players of Judo, Taekwondo, and Boxing the raw data were converted into standard one by using a statistical technique 'F'test for testing of hypothesis. The finding of the study shows that there was no significant difference in the mental toughness between Judo, Taekwondo, and Boxing national players.

Keywords - Mental Toughness, Taekwondo, Judo, boxing.

Introduction - Mental toughness may be an assortment of attributes that permit someone to preserve through troublesome circumstances (such as troublesome coaching or troublesome competitive things in games) and emerge while not losing confidence. In recent decades, the term has been normally utilized by coaches, sports psychologists, sports commentators, and business leaders.

Mental toughness could be a disputed term; therein many of us use the term generously to discuss with any set of positive attributes that helps someone to address troublesome things. Coaches and sports commentators freely use the term mental toughness to explain the psychological state of athletes World Health Organization hold on through troublesome sport circumstances to succeed. For example, it's usually merely applied as a default rationalization for any end, which is extremely problematic as AN attribution. Only among the past 10 years has research project tried a proper definition of mental toughness as a psychological construct and criticisms concerning the shortage of specificity of this umbrella term abound. For example, Moran (2012) states that sizable caution is needed in trying to draw conclusions concerning the character, characteristics, determinants, and development of mental toughness in sport because of the theoretical nature of the definitions, that owe a lot of to anecdotal believability than to inquiry.

Dr. Jim Loehr of the Human Performance Institute, in his book The New Toughness coaching for Sports, outlined mental toughness as "the ability to systematically perform towards the higher vary of your talent and talent notwithstanding competitive circumstances.

Methodology:

Source of Data - The national players of Judo, Taekwondo, and Boxing were selected as a subject.

Selection of subject - 120 subjects were selected for this study, 40 Judo, 40 Taekwondo and 40 Boxing players.

Sampling Method - The subjects were selected by simple random sampling method.

Equipment's used for collection of data - The data pertaining to the mental toughness of Judo, Taekwondo, and Boxing national players were collected through standard questionnaire prepared by (Dr. Alan Goldberg contains 30 items).

Analysis And Interpretation of Data - After the collection of data from the National players of Judo, Taekwondo, and Boxing the raw data were converted into standard one by using a statistical technique 'f 'test for testing of hypothesis

Finding of the study - The data for the mentioned study was collected from the National players of Judo, Taekwondo, and Boxing.

Table No. 1 : Showing One Way Analysis Of Variance (ANOVA) In Mental Toughness between Taekwondo, Judo and Boxing Players

Source of variance	Df	Sum of squares	Mean Variance	F Calculated	FTabulated
Between Groups	K-1 3-1=2	15.517	7.758	0.884	3.07
Within Groups	N-K 120-3 =117	1027.275	8.780		

Table-1 reveals that 'F' at degree of freedom between groups ($df_{between}$) is shown by the formula K-1 where 'K' is

*Assistant Professor (Physical Education) Dr C. V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Research Scholar (M. Phil) (Physical Education) Dr C. V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

number of groups which are 3 so it becomes 3-1=2.

'F' at degree of freedom within groups (df_{within}) is shown by the formula 'N-K' where 'N' is total number of subjects in all groups and 'K' is number of groups which becomes 120 - 3 = 117 .So 'F' test at 2 and 117 is 3.07 which is called Tabulated 'F'.

In the given table the value of Tabulated 'F' is 3.07 and the value of Calculated 'F' is 0.884 which is less than tabulated 'F' at 0.05 level of significance so it is said that there is no significant difference in mental toughness of Taekwondo, Judo and Boxing players, hence the researchers hypothesis is rejected

Graph 1 : Graphical Representation of the Mean of Mental Toughness Between Taekwondo, Judo And Boxing Players

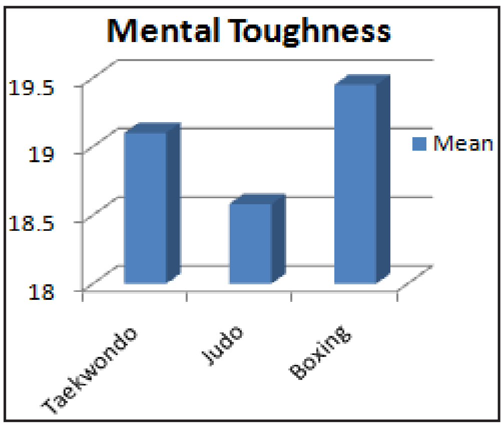

Discussion on Hypothesis - In the earlier the researcher was hypothesized that there will be a significant difference in the mental toughness between Judo, Taekwondo, and Boxing national players.

The finding of the present study has revealed that there is no significant difference in mental toughness between Judo, Taekwondo, and Boxing national players. Hence the hypothesis given by the researcher is rejected.

References :-

1. Afshari, et al. "The Comparison Of Mental Toughness In Athlete Men And Women At Different Levels Of Skill", Electronic Physician, Volume: 3, Issue: 3, 2011, p. 226.
2. Ahlawat, NeetuPrinciples Of Psychology, (New Delhi: Vishvabharti Publications, 2009).
3. Fontana, David, Psychology For Teachers, (The British Psychological Society In Association With Macmillan Publisher Ltd., 1988).
4. Gangopadhyay, S. R., Sports Psychology, (New Delhi: Sports Publication), 2008.
5. Kanwar, Chand Ramesh, Educational And Sports Psychology, (Nagpur. Amit Brothers Publication, 2007).
6. Kundra, Sanjay.,Text Book Of Physical Education, (New Delhi: Evergreen Publications), 2010.
7. Pillsbury, W. B., The Fundamentals Of Psychology, (New Delhi: Deep and Deep Publications), 1990.
8. Robert, S. Late and Worth Wood, Basic Facts In Psychology, (Delhi: Sports Publication, 2001).
9. Shyam, Anand, UPKAR'S UGC NET/JRF/SLET PHYSICAL EDUCATION, (Agra: UpkarPrakashan, 2007).
10. Singh Ajmer, et al. Essentials Of Physical Education, (New Delhi: Kalyani Publishers), 2012.

****

Comparative Study Of Selected Motor Fitness Components Between Volleyball and Badminton National Players

Dr. YuwrajShrivastava* Devraj Diwakar**

Abstract - The main purpose of the study was to find out the selected motor fitness components among national volleyball and badminton players. In this study four different types of motor fitness test were conducted. The study was conducted on Forty (40)Volleyball, and Forty (40)Badminton national players. For this study four different types of test were taken these are Cardio vascular endurance, Speed, Agility, and Explosive strength test.The subjects were selected by simple random sampling method. After the collection of data from the volleyball and badminton national players the raw data were converted into standard one by using a statistical technique 't 'test for testing of hypothesis. The finding of the study shows that there was significant difference in selected motor fitness components among badminton and volleyball players.
Keywords - Volleyball, Badminton, Cardio vascular endurance, Agility, Speed, and Explosive strength.

Introduction - Physical fitness is the positive state of well-being allowing you enough strength and energy to participate in a full, active lifestyle of your choice. Physical fitness is the general capacity to adapt favorably to physical effort. Individuals are physically fit when they are able to meet both the usual and unusual demands of daily life, safely and effectively with undue stress or exhaustion. Physical fitness is the capability to hold out moderately well-varied kinds of physical activities while not being unduly tired and includes qualities necessary to the individual's health and well-being. The fit person is one who is free of limiting and debilitating ailments, who has the stamina and skill to do the day's work and who has sufficient reserve of energy not only to meet emergencies but also to participate in leisure time activities. Physical fitness is one phase of total fitness, and it may be used interchangeably with motor fitness. Other phases of total fitness include social fitness, emotional fitness, mental fitness, etc.

Methodology:

Source of Data - The national player of Volleyball and badminton were selected as a subject.

Selection of subject - Eighty (80) subjects were selected for this study. Forty (40) subjects were taken from Volleyball while the remaining Forty (40) were taken from badminton players.

Sampling Method - The subjects were selected by simple random sampling method.

Equipment's used for collection of data - equipment would be used for collection of data:

See table in last page

Analysis and Interpretation of Data - After the collection of data from the national players of volleyball and badminton the raw data were converted into standard one by using a statistical technique 't 'test for testing of hypothesis.

Finding of the study - The data for the mentioned study was collected from Volleyball and Badminton national players.

Table No. 1 : Comparison in Agility of Inter Badminton and Volleyball Players

Game	Mean	S.D.	M.D.	S.E.	D.F.	O.T.	T.T.
Volleyball	9.31	0.37	0.87	0.13	78	6.90	1.99
Badminton	10.18	0.71					

Level of significance = 0.05

Table no. 1 reveals that there is significant difference between the mean of national Badminton and Volleyball Players because mean of Badminton game = 10.18 which is greater than the mean of Volleyball game = 9.31 so the mean difference where found as 0.87 and the standard error where found as 0.13. To check the significant difference between Badminton and Volleyball players the data is again analysed by applying 't' test. Before applying 't' test, standard deviation is calculated between Badminton and Volleyball players which is 0.71 and 0.37 respectively and the calculated value of 't' is found as 6.90, is greater than the tabulated 't' which is 1.99 at 0.05 level of significance. This shows that the Volleyball players are having the more agility than the Badminton players. Hence the hypothesis which was given by the researcher is accepted.

Graph No. 1 : Graphical Representation of Mean Difference between Agility of National Badminton and Volleyball Players

*Assistant Professor (Physical Education) Dr C. V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Research Scholar (M. Phil) (Physical Education) Dr C. V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

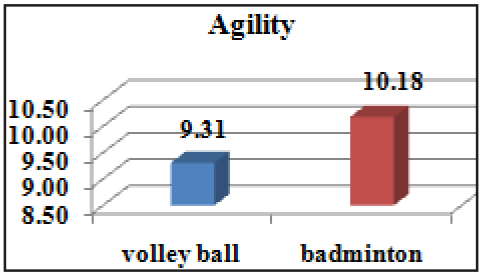

Table No. 2 : Comparison in Cardiovascular Endurance of National Badminton and Volleyball Players

Game	Mean	S.D.	M.D.	S.E.	D.F.	O.T.	T.T.
Volleyball	78.28	3.16	2.43	0.79	78	3.10	1.99
Badminton	75.85	3.83					

Level of significance = 0.05

Table no. 2 reveals that there is significant difference between the mean of National Badminton and Volleyball Players because mean of Badminton players = 75.85 which is less than the mean of Volleyball players = 78.28 so the mean difference where found as 2.43 and the standard error where found as 0.79. To check the significant difference between Badminton and Volleyball players the data is again analysed by applying ‘t’ test. Before applying ‘t’ test, standard deviation is calculated between Badminton and Volleyball players which is 3.83 and 3.16 respectively and the calculated value of ‘t’ is found as 3.10, is greater than the tabulated ‘t’ which is 1.99 at 0.05 level of significance. This shows that the Volleyball players are having the more cardiovascular endurance than the Badminton players. Hence the hypothesis which was given by the researcher is accepted.

Graph No. 2 : Graphical Representation of Mean Difference between Cardiovascular Endurance of National Badminton and Volleyball Players

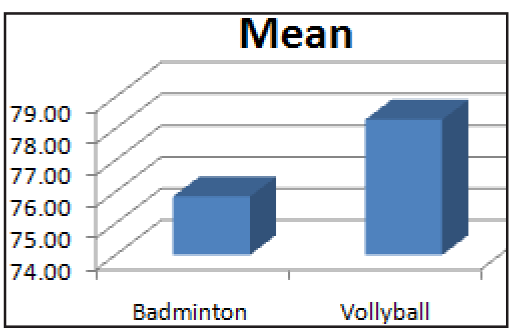

Table No. 3 : Comparison in Speed of National Badminton and Volleyball Players

Game	Mean	S.D.	M.D.	S.E.	D.F.	O.T.	T.T.
Volleyball	7.51	0.27	0.31	0.06	78	4.97	1.99
Badminton	7.82	0.28					

Level of significance = 0.05

Table no. 3 reveals that there is significant difference between the mean of National Badminton and Volleyball Players because mean of Badminton players = 7.82 which is greater than the mean of Volleyball players = 7.51 so the mean difference where found as 0.31 and the standard error where found as 0.06. To check the significant difference between Badminton and Volleyball players the data is again analysed by applying ‘t’ test. Before applying ‘t’ test, standard deviation is calculated between Badminton and Volleyballplayers which is 0.28 and 0.27 respectively and the calculated value of ‘t’ is found as 4.97, is greater than the tabulated ‘t’ which is 1.99 at 0.05 level of significance. This shows that the Volleyball players are having the more speed than the Badminton players. Hence the hypothesis which was given by the researcher is accepted.

Graph No. 3 : Graphical Representation of Mean Difference between Speed of National Badminton and Volleyball Players

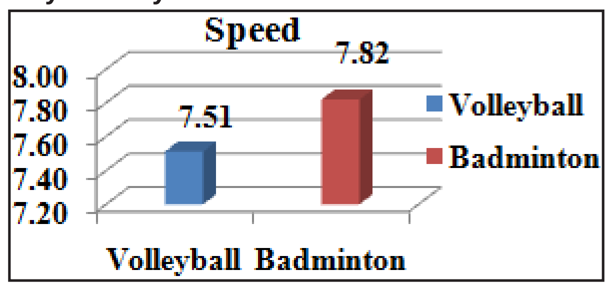

Table No. 4 : Comparison in Explosive Strength of National Badminton and Volleyball Players

Game	Mean	S.D.	M.D.	S.E.	D.F.	O.T.	T.T.
Volleyball	2.36	0.11	0.12	0.02	78	5.98	1.99
Badminton	2.24	0.07					

Level of significance = 0.05

Table no. 4 reveals that there is significant difference between the mean of National Badminton and Volleyball Players because mean of Badminton players = 2.24 which is less than the mean of Volleyball players = 2.36 so the mean difference where found as 0.12 and the standard error where found as 0.02. To check the significant difference between Badminton and Volleyball players the data is again analysed by applying ‘t’ test. Before applying ‘t’ test, standard deviation is calculated between Badminton and Volleyball players which is 0.07 and 0.11 respectively and the calculated value of ‘t’ is found as 5.98, is greater than the tabulated ‘t’ which is 1.99 at 0.05 level of significance. This shows that the Volleyball players are having the more explosive strength than the Badminton players. Hence the hypothesis which was given by the researcher is accepted.

Graph No. 4 : Graphical Representation of Mean Difference between Explosive Strength of National Badminton and Volleyball Players

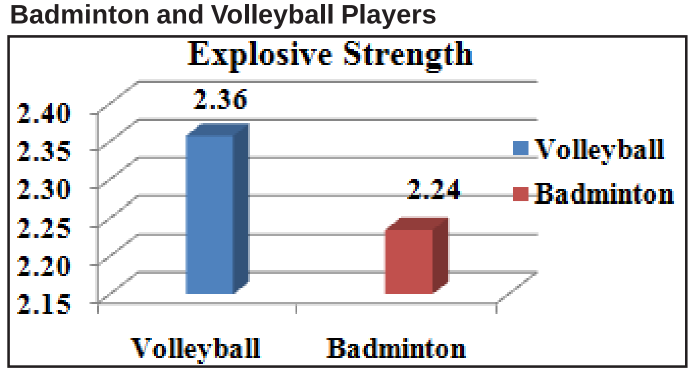

Discussion on Hypothesis - In the beginning of this study it was hypothesized that there might be significant difference in selected motor fitness components among badmintons and Volleyball players. In overall numerical and statistical analysis the comparison of selected motor fitness components among badminton and Volleyball players, it is found that there is significant difference in selected motor fitness components among badminton and Volleyball players. Therefore the hypothesis which the researcher has given is accepted.

References :-

1. Anna, Mihailova, et.al., " Physical Activity And Its Relation To Health-Related Physical Fitness In Students", Series Physical Education and Sport/ Science, Movement and Health, Volume: XII, Issue: 2, June, 2012, ISSN(s): 1224-7359.
2. Arnolds, Peter, Education, Physical Education and Personality Development, London: HeinermAnd Educational book Ltd., 1972.
3. Balakrishnan, Annida, et.al., "A Study Of Selective Motor Fitness Components Empowers On Playing Ability Among Low And High Performers Of State Level Volleyball Players", International Multidisciplinary Research Journal, Volume: 2, Issue: 3.
4. Barbosa, T.M., et.al., "The Power Output And Sprinting Performance Of Young Badmintons", Journal of Strength Condition Research, July, 2014.
5. Biswas, Ashoke Kumar, et.al., "Comparison of Motor Fitness between 6 to 9 years of Boys and Girls", Asian Journal of Physical Education and Computer Science in Sports, Volume: 4, Issue: 1, February, 2011.
6. Bucher, C.A., Foundation Of Physical Education, St. Louis: The C.V. Mosby Corporation, 1960.
7. Cristina, et.al., "Inter limb Coordination, Strength, And Power In Soccer Players Across The Lifespan", Journal of Strength and Conditioning Research23.9, Dec., 2009.
8. Dhokrat, G.K., "Comparative Study Of Selected Motor Fitness Components Of Volleyball And Kho–Kho Players", International Journal Of Physical Education, Sports And Yogic Sciences, Volume: 1, Issue: 2, February, 2012.
9. Gaurav, Vishaw, et.al.,"Comparison Of Physical Fitness Variables Between Individual Games And Team Games Athletes", Indian Journal of Science and Technology, Volume: 4, Issue: 5, ISSN: 0974- 6846.
10. Gill, Manmeet, et.al.,"Comparative Study Of Physical Fitness Components Of Rural And Urban Female Students Of Punjabi University, Patiala", Anthropologist, Volume: 12, No. 1, 2010.

Equipment's used for collection of data

S.	Motor fitness components	Methods	Equipment/ Test items	Unit/Measures
1.	Cardio-vascular endurance	Harvard step test	Stopwatch, 20 inch high bench, metronome or tape recorder (optional), stethoscope.	Minutes
2.	Speed	50 meters run	Electronic stopwatch, starting Clapper.	Seconds
3.	Agility	Shuttle run	Playfield area, measuring tape, stopwatch, whistle and two wooden blocks.	Seconds
4.	Explosive strength	Standing broad jump	Measuring tape and marking powder.	Meters

****

अमर टापू धाम का ऐतिहासिक महत्व

डॉ. अंजू तिवारी* मनीषा कोसले**

शोध सारांश – गुरू अमरदास जी ने मोतिमपुर अमर टापू धाम में मनुष्य जाति को सदैव सतनाम के मार्ग में चलने के लिए प्रेरित किया है उन्होने यह संदेश दिया है कि मानव –मानव एक समान है कोई बड़ा छोटा नही है अत: सभी मानव जाति को प्रेम व भाई चारे के साथ जीवन निर्वाह करने के लिए प्रेरित किया है। गुरू अमरदास जी ने जब अपने प्रवास के दौरान ग्राम मोतिमपुर में सत्संग व प्रवचन कहते थे तो उन्होनें यह संदेश दिया कि सभी धर्मो में विद्या धन सर्वश्रेष्ठ है, धीरज ही विपत्ति क सबसे बड़ा मित्र है, संयम से मनुष्य की आयु बढ़ जाती है तथा सतकर्म ही मानव को श्रेष्ठ बनाती है।

शब्द कुंजी – मुंगेली, घासीदास, अवतरण, टापू, अहिंसा, अंधकार, कंतेली।

प्रस्तावना – छत्तीसगढ़ राज्य के जिला मुंगेली के ग्राम मोतिमपुर का महत्व अपने प्राकृतिक संरचना एवं सामाजिक, धार्मिक विश्वास और श्रद्धा का केन्द्र के रूप में निरंतर प्रगति पर है। यह एक प्रसिद्ध दर्शनीय स्थल है। अमरटापू धाम मुंगेली से लोरमी मुख्य मार्ग पर जमकोर कंतेली से पश्चिम दिशा में 4 कि.मी. तथा मुंगेली से पंडरिया मुख्य मार्ग पर ग्राम बांघामुड़ा से उत्तर दिशा में 5 कि.मी. दूरी पर स्थित है।

लोकमान्यता के आधार पर छत्तीसगढ़ में सतनाम धर्म के प्रवर्तक सद्गुरू घासीदास बाबा जी के ज्येष्ठ पुत्र परमज्ञानी, तपस्वी और परमसाधक सतगुरू बाबा अमरदास जी इसी टापू पर अपने प्रवास के दौरान एकाधिक बार यहॉ पड़ाव डालकर सत्संग करके लोगो को सतनाम का संदेश दिये थे इसलिए इस टापू का नाम अमरटापू पड़ गया।

संत शिरोमणी गुरूबाबा घासीदास जी व सफूरा माता की गोद में ज्येष्ठ पुत्र अमरदास जी का अवतरण जुलाई 1794 को पूर्णिमा के दिन पावन गॉव गिरौदपुरी में हुआ था। गुरू अमरदास जी बचपन से ही निर्गुण लक्षण तथा प्रभाव गुणों के धनी थे। वे अपने पिता के समान ही तन मन व वचन से परोपकारी सतधारी जीवन व कार्यो से समुचे संसार को सतनाम का बोध कराया। गुरू अमरदास जी अचेतन समाज में चेतना जगाकर मानवता को समानता के अधिकार व अहिंसा पूर्वक कर्त्तव्यों का पालन करना सिखाया। गुरू अमरदास जी ने अपने ज्ञान उपदेशों में सतनाम पंथ उच–नीच, छुत–अछुत, अमीर–गरीब, काले–गोरे के भेद भाव से परे सभी मानव जाति को प्रत्यक्ष और प्रमाणित संदेश से मोहग्रस्त जीवों का अंधकार दूर किया करते थे।

गुरू अमरदास जी के वैराग्य रूप के लक्षण बाल्यकाल में संतजनो को मिल गया। गुरू अमरदास जी 7 वर्ष की अवस्था में सतपुरूष का ध्यान कर अनुभवी ज्ञान के उपदेश को देखकर उसके तपस्या, प्रभाव, निर्भरता से संत जनों को ज्ञान हो गया था। कि गुरू अमरदास जी अपने सिद्धांत विचार एवं उद्देश्य को लेकर अपने पिता के सत मार्ग को आगे कि ओर ले जाने कि संकल्प ले लिया है। वे मात्र 7 साल की आयु में समझदार व आत्मनिर्भर हो गया था।

बाल ब्रम्हचारी गुरू अमरदास जी द्वारा 12 वर्ष तक कठोर तपस्या किया। तब सतपुरूष साक्षात दर्शन देकर अपने अंश अवतार को उनके मानव जीवन की उद्येश्य से अवगत कराते हुए। कहा कि आपका अवतरण जगत के संतो को जन्म–मरण, सुख–दुख:, लाभ–हानि, संयोग–वियोग, शुभ–अशुभ, गुण–अवगुण, प्रकाश–अंधेरा, के भ्रमजाल से मुक्त कराकर उन्हे सतनाम कि शक्ति जो संसार के कण–कण व सभी सजीव–निर्जीव में समान रूप से समाहित है। संत से कोई भिन्न नही हो सकता, संसार का मूल कारण सतनाम है और संत से भी जगत का सृजन हुआ है।

जब गुरू अमरदास जी को सत् का ज्ञान हुआ तब उन्होने पूरे संसार में इसका प्रचार करने के उद्येश्य से निकल पड़े और ग्राम मोतिमपुर में भी गुरू अमरदास जी ने प्रवास के दौरान इस टापू का निर्माण किया है।

अमरटापू धाम ग्राम पंडरिया के भुरकुण्ड पहाड़ से निकलने वाली आगर नदी के दो धाराओं के बीच एक टापू में स्थित है यह क्षेत्र लगभग 2 एकड़ के क्षेत्र में फैला है। यह प्राकृतिक रूप से निर्मित टापू है जिसके चारो ओर नदी की कल–कल, छल–छल, करती हुई बहती जल धाराऍं है। नदी के निचले छोर में दोनो जल धाराओं का मिलन दर्शको को बेहद मनोहक और सुहावना लगता है। नदी के निर्मल जल के मध्य एक द्वीप जैसा स्थान विकसित है जिसमे अमरटापू के प्राकृतिक सौन्दर्य अद्धितीय, अनुपम और अविस्मरणिय हो जाता है।

पवित्र अमरटापू धाम पहुंचने के लिए चारो तरफ सड़क निर्माण हो चुका है। धाम में स्थित सतनाम धाम जाने के लिए नदी के दोनो तरफ आकर्षक पुलिया का निर्माण कराया गया है।

यहा शुद्ध पेयजल की व्यवस्था की गई है। यहॉ मुख्य गेट के पास पानी की सुविधा के लिए सौर उर्जा की व्यवस्था की गई है। तथा बीजली की भी व्यवस्था है। टापू के चारो तरफ पेड़ पौधो का रोपण किया गया है। जिसमें महालीम, गुलमोहर, अशोक पेड़, मधुकामिनी, गहिमन आदि पेड़ लगाये गये है। इनमें सबसे ज्यादा विशेषता यहा लगे चंदन पेड़ की है। क्योकि चंदन के पेड़ से ही सारे भक्तजनो के माथे पर इसी की टिका लगाया जाता है।

अमरटापू धाम के ठीक नीचे 100 मीटर आगर नदी में 45 मीटर लंबा

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल. शोधार्थी (इतिहास) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

तथा 2 मीटर ऊंचा स्टापडेम का निर्माण कराया गया है। ताकि श्रद्धालुओं के उपयोग के लिए तथा टापूओं के सुन्दरता के लिए पानी की कमी न हो यहाँ श्रद्धालुओं, दर्शनार्थियों तथा पर्यटकों के विश्राम के लिए सतनाम भवन तथा एक मंगलम भवन का निर्माण किया गया है।

अमरटापू धाम में गुरू घासीदास बाबा जी के जयंती पर्व पर 18 दिसम्बर को मनाया जाता है। इस दिन मोतिमपुर में बाबा व विशाल मेला लगता है। यहाँ मेला प्राय: एक दिवसीय होता है। इस मेला में देश और प्रदेश के अति महत्तवपूर्ण लोग उपस्थिति देकर सतनाम धाम और जैतखाम में माथा टेककर अपने को धन्य करते है। मोतिमपुर में मेला का प्रारंभ 18 दिसम्बर 1996 के जैतखाम की स्थापना के साथ हुआ था। मेला में लाखों की संख्या में सभी समाज के श्रद्धालु अपनी उपस्थित दर्ज कराते है। यहाँ जयंती कार्यक्रम में प्रसिद्ध गायको, कलाकारो और पंथी नृत्य दलो द्वारा मंगल भजन और प्रवचन के साथ आकर्षक पंथी नृत्य प्रस्तुत किया जाता है। सतनामी सामज का प्रमुख नृत्य पंथी नृत्य है। यह नृत्य महिला एवं पुरूष दोनो के द्वारा किया जाता है। इस नृत्य में जैतखाम के चारो तरफ गोलाकार बनाकर यह नृत्य किया जाता है। प्रतिवर्ष मोतिमपुर में पंथी नृत्य प्रदर्शन करने वाले पार्टी के लिए ईनाम भी रखा जाता है। और यह ईनाम मेला में उपस्थित मंत्री तथा विशिष्ट लोगों के द्वारा दिया जाता है।

महासंत गुरूघासी दास जी के स्मरण को जीवित बनाये रखने के लिए यहाँ एक सुन्दर मंदिर का निर्माण किया गया है। जो श्रद्धालुओं के लिए विशेष श्रद्धा का केन्द्र है।

अमरटापू धाम में दो जैतखाम स्थापित है। जिसमें पहला 1996 में स्थपित किया गया तथा दूसरा 1997 व मंदिर का शिलान्यास खाद्य मंत्री पून्नूलाल मोहले के द्वार किया गया था। सन् 2000 में मंदिर का निर्माण पूर्ण किया गया यहाँ 1996 से ही मेला का आयोजन किया जाने लगा था। यहाँ के मुख्य मंदिर में चटुवाधाम से गुरू अमरदास जी के समाधि स्थल से इस मंदिर के लिए आसन, सिहासन, गद्दी, चरणपादूका तथा खडाहू लाकर समस्त ग्रामवासी तथा दुर्गादास बघेल के द्वारा स्थापना किया गया था। यह पुरे मंदिर का क्षेत्र लगभग 2 एकड़ के आस-पास बताया गया है।

अमरटापू धाम में दो जैतखाम स्थापित है। जिसकी ऊंचाई लगभग 25 फीट की होगी इन दोनो जैतखाम के बीच में यहाँ की मुख्य मंदिर स्थापित है। जिसकी ऊंचाई लगभग 40 फीट के आस-पास की बतायी गयी है। मुख्य मंदिर के अंदर जाने के लिए 3 गेट का निर्माण किया गया है। जो उड़ीसा के मिस्त्री के द्वारा बनवाया गया है। मंदिर परिसर में चारों तरफ काला पत्थर लगा हुआ है। मंदिर परिसर के चारों तरफ हरा-भरा पेड़ पौधे लगाया गया है। गुरू अमरदास जी के इस धाम में आने से सभी श्रद्धालुओं की मनोकामना पूर्ण होती है। यहाँ गिरौदपूरी जैसे जमीन मापने की परंपरा है। जब मनोकामना पूर्ण हो जाती है तो ऐसा किया जाता है।

अमरटापू धाम के मंदिर में 12 महिने दिन और रात ज्योति कलश जलता रहता है। यहाँ कि मुख्य मंदिर के ऊपर जाने के लिए सीढ़िया बनी हुई है। जिसमें मंदिर के ऊपर जाने के लिए 30 सीढ़ी तथा मंदिर से नीचे उतरने के लिए 25 सीढ़ी बनी हुई है मंदिर के अंदर में 3 बड़ा घण्टा लगा हुआ है मंदिर में गुरू ज्योतिकलश, अमरदास जी की गद्दी, दो चरणपादूका, खड़ाहू, आसन स्थापित है। यहाँ सादा कपड़ा, नारियल, लौग, इलायची, पंचमेवा चीला, खीर आदि चढ़ाया जाता है।

अमरटापू धाम की प्रमुख विशेषता यह है कि यहाँ पर लोग जति, धर्म, संप्रदाय मान्यता के बंधनों से उपर उठकर आते है, तथा अपनी सक्रिय भागीदारी गुरू अमरदास जी के अध्यात्म शक्ति पर दिखाते है। यहाँ मेला और कार्यक्रम दलगत राजनीति से उपर उठकर किया जाता है। जो इस मोतिमपुर धाम को और आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। यहाँ के मेला मे कोई जाति बंधन, भेदभाव, ऊंच-नीच, छोटा-बड़ा, काला-गोरा, नही होता है। सभी मेला में उपस्थित देकर मेला का आनंद उठाते है। यहाँ कभी भी कोई भेद भाव नही रहा है। सभी भाईचारा, सौहाद्र तथा प्रेम व्यवहार के साथ मेला का आनंद लेते है।

तपस्वी गुरू अमर दास जी ने ग्राम मोतिमपुर में प्रवास के दौरान सतनाम संदेश दिए संतशिरोमणी गुरू बाबा घासीदास जी ने अपने ज्येष्ठ पुत्र अमरदास जी को समाज को सही रस्ता सतनाम के मार्ग बतलाने धर्मनीति मानव जीवन का बोध कराने की जिम्मेदारी देकर क्रमश: भण्डारपुरी, तेलासीपुरी, गिरौदपुरी, चटुवापुरी धाम, कुआँ, बोड़सरा, बारादेरा, खपरीपुरी धाम, चक्रवाय तथा मोतिमपुर अमरटापू धाम सहित मध्य प्रांत के अनेको स्थलों पर ज्ञान उपदेश से पथ, धर्म, दर्शन, प्रेम, चेतना, विचार, कर्म से सतनाम की व्याख्या कर मानव जीवन की सार्थकता को समझाया।

तपस्वी गुरू अमरदास जी ने अपने प्रवचन व सतसंग के दौरान निम्न लिखित अनमोल वाणी बोले जो अग्र लिखित है-

1. अपने सभी कार्य समय पर कर लेना चाहिए।
2. धीरज ही विपत्ति का सबसे बड़ा मित्र है।
3. सदैव सतनाम को याद कर हमें सच बोलना चाहिए।
4. जन्म है तो मरण भी है, दुख: है तो सुख भी है।
5. सत्य अहिंसा श्रेष्ठ मानव धर्म है।
6. गुरू व माता पिता का सदैव सम्मान करों।
7. सभी धनों में विद्या धन सर्वश्रेष्ठ धन है।
8. संयम से मनुष्य की आयु बढ़ जाती है।
9. सतकर्म ही मानव को श्रेष्ठ बनाती है।
10. मित्र और शत्रु, पुत्र, रिश्तेदारो किसी के प्रति आश्रित मत रहो।
11. सतनाम का जपन करते हुए शासस्त नियमों का यथाशक्ति पालन करों।
12. सत्य का अर्थ है मन, वचन व कर्म में कपट आचरण का आभाव।
13. सतनाम ही श्रेष्ठ मानव धर्म है।
14. सत्य ही सतपुरूष व सतपुरूष ही सत्य है।
15. अपने आप पर विश्वास होना सबसे बड़ा सहायक है।
16. शिष्टाचार व सतचरित्र गुणों से युक्त मनुष्य का समग्र सफलता प्राप्त करता है।
17. काम, क्रोध, लोभ व मोह का परित्याग कर मानव सतनाम के पथ पर चलों।
18. सत्त अभ्यास से जीवन में निश्चित सफलता मिलती है।
19. साधुता हमारा जीवन व सतनाम संस्कारों दिव्य मंजूरा है।
20. प्राणियों पर दया लेकिन उनके ज्ञान, ज्ञान व सतकर्म उन्हें अमर बनायें रखता है।
21. मानव मरता है लेकिन उनके ज्ञान, ज्ञान व सतकर्म उन्हे अमर बनाये रखता है।
22. कोई भी जीवन सफल नही होता क्योकि जीवन,मुत्यु, सुख:, दुख: में सतपुरूष समान रूप से संसार के कण कण में विराजमान है।

तपस्वी गुरू अमरदास जी ने अपने सत्संग व प्रवचन के द्वारा संतों को बतलाया कि अध्यात्मिक का अर्थ उस चेतना पर विश्वास करना जो

जीवधारियों को एक दूसरे से जोड़ते है। इसमें मानव सहित अन्य जीव जंतु का जीवन प्रकृति के पदार्थो पर निर्भर है। हम प्रकृति चक्र के अनुरूप जीवन शैली से शरीरगत प्रवरता और चेतना क्षेत्र की पवित्रता बढ़ती है। तथा जीवों के गुण कर्म व स्वभाव में समानता की लक्षण स्वमेव दिखाई देते है। आध्यात्मिक जीवन से सुख के संवर्धन तथा दुख के निवारण की स्वभाविक आकांक्षा केवल नीज शरीर, परिवार से कही अधिक व्यापक बनाती है।

गुरू अमरदास जी ने अपने प्रवचन के द्वारा आम लोगो को सतनाम का संदेश दिया है। अध्यात्मक से आंतरिक जीवन में आत्म सुधार, आत्मनिर्माण, आत्म संयम, इद्रियों पर नियंत्रण, मर्यादा का पालन, सादगी, नम्रता, चरित्र निर्माण, कर्तव्य बोध, धैर्य, आकांक्षाओं तथा अभिरूचियों में परिवर्तन होता है। तथा बाहरी जीवन में सत्व्यवहार, ईमानदारी, शालीनता, न्यायशीलता, परोपकारिता, जनसेवा व श्रमशिलता आदि आवरणों में परिवर्तन होता है। आध्यात्मिकता सत्पुरूष पिता सतनाम की ज्ञान है। जिसके बोध से होने पर प्राणियों का विवेक जागृत हो जाता है तथा मानव के लिए अमरत्व का रास्ता मिल जाता है।

गुरू अमरदास जी का विवाह सन् 1822 के प्रतापपुर के अवतारी देव कन्या अंगारमती उर्फ देवकी उर्फ रूखमणी उर्फ प्रतापपुराहिन माता के साथ हुआ था। गुरू अमरदास जी की वैवाहिक स्थित को जीवित रखने के लिए मोतिमपूर में भी विवाह करवाया जाता है।

ग्राम मोतिमपुर अमरटापू धाम में सन् 2008 से विवाह कार्यक्रम किया जाता है। यह विवाह यहॉ के अमरटापू विकास समिति के द्वारा सम्पन्न कराया जाता है। जिसके अध्यक्ष डॉ. दुर्गादास बघेल जी है। इस मंदिर में अभी तक 700 से 800 जोडों के आस-पास विवाह हो गया है। शादी के फेरे विवाहित जोड़ो के द्वारा मंदिर व दोनो जैतखाम के चारो तरफ घुमकर फेरे लिए जाते है। यहॉ कि एक प्रमुख विशेषता है कि यहॉ मांघ भरने के लिए दुल्हा को सिंदुर का उपयोग नही करने देते बल्कि सादा का चंदन के द्वारा मांघ भरा जाता है। तथा सभी शादी पूरी रीति रिवाज के साथ होती है। यहॉ शादी करवाने के लिए लड़के व लड़की दोनो का आधार कार्ड या अंकसूची देखा जाता है। ताकि दानो पूर्ण रूप से बालिक हो यहॉ नाबालिकों की शादी नही करायीं जाती। शादी पूर्ण होने पर एक रशीद वहॉ के सेवको के द्वारा दिया जाता है। जो रशीद कानून को भी मान्य है। दोनो पक्षों के 5 -5 सदस्यो की विवाहित जोडों सहित रजिस्टर में हस्ताक्षर लिया जाता है जो गवाह के रूप मे मान्य है। यहॉ शादी के लिए कोई निश्चित समय नही किया गया है। यहॉ पूरे साल भर शादी का कार्यक्रम होता है। मंदिर में श्रद्धालुओं की भीड़ सालभर लगी रहती है। यहॉ का दृश्य अति मनोहारी है। प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण होने के कारण यहॉ पूरे क्षेत्र के लोग सालभर आते रहते है। यह एक पर्यटन का अच्छा केन्द्र है।

मोतिमपुर की अपनी स्थित इतिहास, प्राकृतिक सौन्दर्य, सुविधाऍ, मेला आयोजन और कार्यक्रमों का स्वरूप तथा सर्व समाज के श्रद्धालुओं की आस्था, श्रद्धा, विश्वास और अधिक जनसंख्या में जनमानस की उपस्थिति के कारण अमरटापू धाम का महत्व कई गुना बढ़ गया है।

अमरटापू धाम का स्थापना विकास और कार्यक्रम आयोजनों में मेला समीति के उत्साही और ऊर्जावान अध्यक्ष डॉ. दुर्गादास बघेल जी का प्रमुख योगदान रहा है, जो बचपन से ही बहुमुखी प्रतिभा के धनी योग्य, मिलनसार तथा कर्मठ सामाजिक कार्यकर्ता रहे है। उनके कुशल नेतृत्व के कारण अमरटापू धाम आगे भी राष्ट्रीय और विश्व स्तर पर अपना विशिष्ट स्थान बना पायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पटेल, हरिराम, छत्तीसगढ़ प्राकृतिक भाग-1 व सांस्कृतिक भाग-2
2. शर्मा, रामगोपाल, छत्तीसगढ़ दर्पण,
3. शुक्ल, प्रदीप एवं अन्य, छत्तीसगढ़ में पर्यटन,
4. सुरजन, ललित, संदर्भ छत्तीसगढ़,
5. वर्मा, भगवान सिंह, छत्तीसगढ़ का इतिहास,
6. यदू, हेमू, छत्तीसगढ़ का गौरवशाली इतिहास,
7. मुंगेली दर्पण
8. स्मारिका, जिला प्रशासन मुंगेली
9. साक्षात्कार
10. अवलोकन

****

म.प्र. में नगरपालिकाओ की प्रशासनिक स्थिति (धार जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. रसिक दवे* सन्तोष बर्डे **

शोध सारांश – भारत में केन्द्र सरकार व राज्य सरकार की भांति स्थानीय सरकार भी संविधान का अंग बन गयी है। अत: धार जिले की नगरपालिकाओ – धार, मनावर, पीथमपुर की प्रशासनिक स्थिति का विश्लेषण किया जाकर नगरपालिकाओ की प्रशासनिक संरचना, वार्डो की संख्या, विस्तार पर प्रकाश डाला गया है। नगरपालिकाओ की प्रशासनिक संरचना से आशय ऐसे व्यक्तियो, समितियो की नियुक्ति एवं गठन से है जो कि म.प्र. नगरपालिका अधिनियम 1961 के अनुसार नगरपालिका के गठन के लिए आवश्यक है।

नगरपालिकाओ की कार्यपालिक संरचना का निर्माण मुख्य नगरपालिका अधिकारी तथा विभिन्न अधिकारियों, कर्मचारियों से मिलकर होता है, जो कि परिषद एवं सलाहकार समितियों के द्वारा लिये गये निर्णयो को क्रियान्वित करते है। अध्यक्ष, उपाध्यक्ष एवं पार्षद की नियुक्ति निर्वाचन प्रक्रिया के तहत निर्वाचन पद्धति द्वारा नियुक्त किये जाते है। नगरपालिका की विमर्शकारी निकाय 'परिषद' इस प्रणाली की प्रमुख संस्था होती है।

शब्द कुंजी – परिषद, प्रशासनिक, निर्वाचन निकाय।

प्रस्तावना – भारत में स्थानीय स्वशासन का प्रशासनिक ढाँचा समय-समय पर परिवर्तित होता दिखाई देता है। नगरपालिकाओ में प्रशासनिक व्यवस्था म.प्र. नगरपालिका अधिनियम 1961 द्वारा अधिशासित है। धार जिले की नगरपालिकाओ- धार, मनावर, पीथमपुर के कार्य संचालन में संस्था की प्रशासनिक एवं कार्यपालिका संरचना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। धार जिले के जिला मुख्यालय धार में स्थापित धार नगरपालिका शहर के वर्तमान परिदृष्य और विकास की आवश्यकताओ जैसे शुद्ध जल आपूर्ति, पक्की सडके, सीवरेज, निकास, शहर का सौन्दर्यीकरण आदि को ध्यान में रखकर विकास हेत प्रयत्नरत है, जबकि पीथमपुर नगरपालिका पीथमपुर औधोगिक क्षेत्र के चहुमुखी विकास में अहम भूमिका का निर्वहन कर रही है वही मनावर नगरपालिका परिषद के सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है। कि मनावर को पहचान दिलाने वाली यह संस्था शीघ्र मनावर तहसील को अपने विकास कार्यो से जिले की श्रेणी में खडा कर देगी, इसका श्रेय वास्तव में इसकी संरचना और कार्यप्रणाली को जाता है।

शोध का उद्देश्य :

1. नगरपालिका के कार्यो की कार्यशैली जानना।
2. नगरपालिका की प्रशासनिक व्यवस्था जानना।
3. नगरपालिका से जनता की अपेक्षाओं को जानना।
4. परिषद की कार्यप्रणाली को जानना।

नगरपालिकाओं में प्रशासनिक नेतृत्व – नगर पालिका परिषद् की नीति निर्धारक संरचना द्वारा बनाई गई योजनाओं, प्रस्तावों, नीतियों को कार्य रूप में परिणित करने का दायित्व कार्यपालिका संरचना का है जो कि वास्तविक रूप से सार्वजनिक कल्याण हेतु अधिनियमानुसार कार्यो को संपादित करती है। राज्य सरकार परिषद् के कार्यो को सुचारू रूप से संचालित करने के लिये राज्य नगरपालिका सेवा का गठन करती है जिनमें कार्यपालक स्वास्थ्य इंजीनियरिंग तथा अन्य कर्मचारी सेवा में सम्मिलित होते है। इस प्रकार नगरपालिका सेवा में कार्यरत सभी श्रेणियों के अधिकारी/कर्मचारी नगरपालिका के कार्यो को मिलकर सम्पन्न करते है। जिन्हें सेवा शर्तो के अनुसार राज्य सरकार से वतेन, भत्तों आदि भुगतान प्राप्त होते है। राज्य सरकार राज्य नगरपालिका सेवा के किसी भी सदस्य को परिषद् से दूसरी परिषद् में स्थानान्तरण कर सकती है। स्थानांतरण के सम्बन्ध में राज्य शासन ने कर्मचारी में स्थानान्तरण करने के अधिकार सम्भाग में आयुक्त व जिले में जिलाधीश को प्रदान कर दिये है।

नगरपालिका परिषद् में मुख्य कार्यकारी अधिकारी के रूप में मुख्य नगर पालिका अधिकारी की नियुक्ति की जाती है तथा उसके अधिन अन्य कर्मचारीयों की नियुक्ति की जाती है जो कि विभागानुसार एवं क्षेत्रानुसार दायित्वों का निर्वहन करते है।

किसी भी संस्था के लिए प्रबंधक का महत्व सर्वविदित है। एक कुषल प्रबन्धक तमाम बुराईयों को जड़ से समाप्त कर देता है, अत: यह जरूरी है कि अधिकारों एवं दायित्वों का भारार्पण सैद्धांतिक है। संस्था अपने उद्देश्यों को तभी प्राप्त कर सकती है जब अधिकारी एवं कर्मचारी, प्रशिक्षित, अभिप्रेरित एवं अनुशासित हो।

धार जिले की नगरपालिका परिषद् में प्रशासनिक नेतृत्व हेतु निम्नलिखित को शामिल किया जाता है।

मुख्य कार्यपालन अधिकारी (मुख्य नगरपालिका अधिकारी) – नगरपालिका सेवा में मुख्य अधिकारी नगरपालिका मुख्य अधिकारी होता है। यह प्रत्येक नगरपालिका का परिषद् का प्रधान कार्यपालक अधिकारी होता है और परिषद् के अन्य अधिकारी और कर्मचारी उसके अधीन होते है। मुख्य कार्यपालक अधिकारी की नियुक्ति को कार्यान्वित करने के लियं उत्तरदायी होता है। मुख्य कार्यपालक अधिकारी राज्य नगर पालिका सेवा का सदस्य होता है परंतु उस पर परिषद् का अनुशासनात्मक नियन्त्रण नही होता है। परिषद् उसे निलम्बित नही कर सकती। वह केवल राज्य शासन को

* प्राध्यापक, श्री वैष्णव वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, मण्डलेश्वर, जिला खरगोन (म.प्र.) भारत

वापस बुलाने के लिये अनुरोध कर सकती है, जिस पर निर्णय लेना राज्य सरकार के विवके पर है। इस प्रकार परिषद् को मुख्य नगरपालिका अधिकारी को निलम्बित करेन का संकल्प उसके अधिकार की सीमा के बाहर है। धारा 323 के अन्तर्गत निलम्बन का अधिकार जिलाधीष को प्राप्त है।

नगरपालिका परिषदों में नियुक्त मुख्य नगरपालिका अधिकारी प्राय: नगर निगम में आयुक्त की भाँति की सरकारी कार्यो का सम्पादन करता है, किन्तु नगर निगम से इसकी स्थिति किंचित भिन्न है। नगर निगम में जहाँ आयुक्त को प्रशासनिक निकाय सर्वेसर्वा बनाया गया है और इसके कार्यो में मेयर की कोई भूमिका या नियन्त्रण नही होता है वहीं नगरपालिकाओं में नियुक्ति यह अधिकारी प्रशासनिक शक्तियों का उपयोग नगरपालिका के अध्यक्ष के साथ संयुक्त रूप से करता है। मुंख्य नगरपालिका अधिकारी को कर्मचारीयों की नियुक्ति तथा पदच्युक्ति करने की शक्ति प्राप्त नहीं होती है।

मुख्य नगर पालिका अधिकारी के कार्य – अधिनियम के द्वारा मुख्य नगर पालिका अधिकारी के कार्य निम्नलिखित हैं :

1. अध्यक्ष के साधारण नियन्त्रण में रहते हुए, परिषद् के वित्तीय तथा कार्यपालक प्रशासन पर नियन्त्रण रखना।
2. अधिनियम द्वारा प्राप्त शक्तियों या प्रत्योजित शक्तियों का प्रयोग करना।
3. परिषद् द्वारा पारित नियमों व उपनियमों तथा अधिनियम के अधीन बताये गये नियमों के अनुसार कार्य करना।
4. कार्यो की प्रगति की रिपोर्ट परिषद् को प्रस्तुत करना।
5. अधीनस्थ अधिकारों को समय-समय सही तथा शीघ्र कार्य करने के लिये कार्यो को प्रदत्त करना।
6. दण्ड़ाधिकारी प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करना।
7. परिषद् की मांग पर अभिलेख, पत्र-व्यवहार तथा अन्य दस्तावेज प्रस्तुत करना। तथा
8. चतुर्थ श्रेणी कर्मचारीयों की नियुक्ति करना – आदेश क्र. 155-4697 अठारह -एक-79 दिनांक 5.2.1980 द्वारा नियुक्ति की शक्ति मुख्य नगर पालिका अधिकारी को प्रत्यायोजित कर दी गई है।

नगर पालिका में नियुक्त अन्य अधिकारियों एवं कर्मचारियों के बीच कार्यो का आंवटन – स्थानीय निकाय के सामान्य कार्य संचालन हेतु मुख्य कार्यपालन अधिकारी को कई अधिकारी एवं कर्मचारी सहायता करते है। इनके अभाव में सार्वजनिक स्वास्थ्य, प्रकाश व्यवस्था, जलपूर्ति, सड़क निर्माण, जल एवं मल निवारण की कल्पना भी असम्भव प्रतित होती है। नगर पालिका के कार्यो को उचित ढंग से सम्पन्न करने के लिए राज्य सरकार स्वास्थ्य एवं इंजिनियर की नियुक्ति करती है। स्वास्थ्य अधिकारी एवं इंजिनियर राज्य नगरपालिका सेवा क्रमश: स्वास्थ्य तथा इंजिनियर के सदस्य होते है। इन अधिकारीयों की नियुक्ति केवल 5 लाख या अधिक आय वाली नगरपालिकाओं मे ही की जा सकती है। इसके अतिरिक्त अपने कर्तव्यों को दक्षतापूर्वक निर्वहन करने के लिए जिन परिषदो की आय 5 लाख रूपये से अधिक है, राज्य शासन की पूर्ण अनुमति से राजस्व अधिकारी, लेखा अधिकारी, स्वच्छता निरीक्षक, राजस्व निरीक्षक, सब इंजिनियर तथा लेखापाल की नियुक्ति कर सकती है। नियुक्ति के पश्चात् कार्यसम्बन्ध इस तरह से स्थापित किये जाते हैं कि मुख्य अधिकारी के प्रति अधिनस्थ अधिकारी एवं कर्मचारी दायी हों तथा उचित आदेश एवं निर्देश सही समय पर प्राप्त होते रहें जिससे की सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके।

मध्यप्रदेश नगर पालिका सेवा नियमों में सेवीवर्ग की वरिष्ठता सूची, परीविक्षा अवधि, स्थायीकरण, सेवामुक्ति, सेवाविकृत आयु, स्थायीकरण, वेतन, भत्तो पदोन्नति, पेन्शन आदि का प्रावधान किया गया है। इन नियमों में किये जाने वाले संशोधनों को राज्य सरकार द्वारा केबिनेट में मंजुरी के उपरांत म.प्र. राजपत्र (असाधारण) में प्रकाशित किया जाता है। इस प्रकार नये नियम म.प्र. अधिनियम में अन्त: स्थापित हो जाते है और प्रदेश की नगरपालिकाओं द्वारा उन्हें लागू करना होता है।

नगरपालिका प्रशासनिक संरचना :

1. परिषद (निर्वाचित/निकाय/पार्षद)
2. अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, पार्षद
3. मुख्य नगरपालिका अधिकारी, अन्य अधिकारी, व कर्मचारीगण।

(1) संवैधारिक समितियाँ :

1. **स्थायी समिति:-** अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, धारा 71 के अधीन गठित विभागीय समितियो के सभापति अध्यक्ष द्वारा मनोनित दो निर्वाचित पार्षद।
2. **विभागीय समितियाँ:-** लोक निर्माण समिति, जल कार्य, स्वास्थ्य, राजस्व, बाजार, खाध व नागरिक आपूर्ति, शिक्षा, महिला व बालकल्याण, विधि व सामान्य प्रशासन।
3. **कार्यपालन समितियाँ:-** अधिनियम की धारा 71 (2) कार्यपालन समितियों के गठन का उल्लेख किया गया है।

(2) गैर संवैधानिक समितियाँ – परामर्श समितियाँ, संयुक्त समितियाँ।

समस्याएँ :

1. नगरपालिका की समस्याऐ प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से शासन नीतियों की उपज है।
2. नगरपालिकाओ में व्यय की अधिकता विद्यमान है।
3. जनता द्वारा नगरपालिका कर का समय पर भुगतान न करने से घाटे की स्थिति निर्मित होती है।
4. नगरपालिकाओ में प्रशिक्षित लेखापाल का अभाव।

सुझाव :

1. शासकीय नीति में परिवर्तन से ही नगरपालिका की प्रशासनिक व्यवस्था में सुधार किया जा सकता है।
2. नगरपालिकाओ में आय अर्जन क्षमता में वृद्धि कर आत्म निर्भर बना जा सकता है।
3. नगरपालिका में प्रशिक्षण के माध्यम से लेखापाल प्रशिक्षित किये जा सकते है।
4. नगरपालिकाओ मे पारदर्शिता द्वारा प्रशासनिक व्यवस्था सुदृढ की जा सकती है।

शोध विधि – प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीय समंको एवं धार, मनावर, एवं पीथमपुर नगरपालिका की प्रशासनिक व्यवस्था के संबंध में स्थानीय नागरिको के अभिमत को शोधार्थी ने शोध सर्वेक्षण के दौरान प्रत्येक नगरपालिका से 100 कुल 300 नागरिको से नगरपालिका की प्रशासनिक व्यवस्थ की जानकारी ली गई।

निष्कर्ष – म.प्र. में नगरपालिकाओ में प्रशासनिक व्यवस्था धार जिले के विशेष सन्दर्भ में पाया गया कि नगरपालिका की समस्याऐ प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से शासन नीतियों की उपज है, जो कि नीतियों में परिवर्तन से समस्याओ का हल सम्भव है, नगरपालिकाओ में प्रशिक्षण आयोजित कर लेखापाल प्रशिक्षित किये जा सकते है। इसके साथ ही नगरपालिका द्वारा दुकाने निर्माण करके आय अर्जन क्षमता में वृद्धि की जा सकती है। जिससे

नगरपालिकाऐ आत्मनिर्भर बन सकें तथा नगरपालिकाओं में पारदर्शिता द्धारा प्रशासनिक व्यवस्था को सुदृढ किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. म.प्र. में स्थानीय स्वशासन लेखक आनंद प्रकाश अवस्थी पृष्ठ 52।
2. शहर विकास योजना मनावर मई 2010 पृष्ठ 93।
3. शहर विकास योजना धार/मनावर मई 2010 पृष्ठ 53/47।
4. शहर विकास योजना धार/मनावर मई 2010 पृष्ठ 54/48।
5. म.प्र. में स्थानीय स्वशासन लेखक आनंद प्रकाश अवस्थी पृष्ठ 309/ 311।

****

Pattern Of Population Distribution And Density Of Bilaspur City

Dr. Kajal Moitra* Dr. Ratnesh Kumar Khanna Sandip Mondal*****

Abstract - The distribution of population is more locational, while the density is more proportional. The former refers to the spatial pattern in which the population finds its location such as linear, dispersed, nucleated, agglomerated, etc. and the latter is concerned with the ratio between the size of population and the area. Thus, when one is dealing with distribution, the concern is more for the pattern of spread of population and when one is dealing with density, the concern is more for some kind of access land ratio.
Key words - agglomerated ,nucleated, dispersed.

Introduction - There are several means of describing the spatial distribution of population and many devices have been developed to population distribution and population density. Recognizes that the land and people constitute the two significant elements of an area and, therefore, the ratio between the two is of fundamental interest of all scholars concerned with population analysis. The simple ratio between total population and the total land area and expressed in terms of persons as per unit of area was designated as arithmetic or general density.

Objectives - The main objectives of present research work is analysis of population distribution and density pattern in bilaspur city.

Methodology - The present study is based on secondary sources.data were collected published and unpublished sources.

Disscussion- Administrative limits of Bilaspur Municipal Corporation encompass an area of 30.42 k.m². The Population density is 11, 022 persons/ k.m². (as per the 2011 Census provided by Bilaspur Municipal Corporation there classify density of population in Bilaspur City Such as high density, medium density, moderate density and low density of population area.

Areas of High Density (Above 2400 persons/ k.m²) - Bilaspur City area such as Vishnu Nagar Ward 2573 persons, Guru Ghasi Das Nagar Ward 2722 persons, Dr. Ambedkar Nagar Ward 1438 persons, Rani Laxmibai Ward 2569 persons and Basant Bhai Patel Ward 2744 persons. Majority of population was engaged in non agricultural occupations, also displayed acute population pressure as the density here is 2744 persons/k.m² market, communication, and Health and Education are there well. But burning point of view there have highly generated solid waste due to increasing population because poor handling Garbage and land filling system so people are effects by pollution, Show Table

Areas of Moderate Density (1800-2400 persons/k.m²) - Since then the urban population of the Bilaspur City has been growing rapidly. The intensification and commercialization of Industry have a consequence of simulated growth of market due to change population density of Bilaspur CityThese areas were transitional zones between the high and the moderate density area. 1801-2400 persons/k.m² are called there medium density area such as Nehru Nagar Ward 1817 persons/k.m², Vinoba Nagar Ward 2048 persons/k.m², Shivaji Nagar Ward 2022 persons per sq. k.m, Krishana Nagar Ward 2388 persons/ k.m², Arvind Nagar Ward 1874 persons/k.m², Shahid Mangal Panday Nagar Ward 2244 persons/k.m² and Kamala Nehru Nagar Ward 2042 persons per sq. k.m , It may be said that recent development in the field of mining and industry in Bilaspur City surroundings area which influence the density of population, Show Table

Areas of low Density (Below 1800 persons/k.m²) - Density varied from 1201-1800 persons/k.m. such area are Nirala Nagar Ward, Sanjay Gandhi Nagar Ward, Dr. Ambedkar Nagar Ward, Kasturba Nagar Ward, Bhakt Kanwar Ram Nagar Ward, Azad Nagar Ward, Ram Nagar Ward, Pt. Munnulal Shukla Ward, Lala Lajpatrai Nagar Ward, Ram Das Nagar Ward, Shankar Nagar Ward, Vivekanand Nagar Ward, Wiress Colony, Shashtri Nagar Ward, Pt. Devkinandan Dixt Ward, Rani Durgawati Nagar Ward detail show Table No. 3.3 Below 1200 persons/k.m. are Vikas Nagar Ward. Tilak Nagar Ward, Rajendra Nagar Ward. Gayatri Nagar Ward, Priya Darshini Nagar Ward, Shahid Ashfaqullah Nagar Ward, Subhash Nagar Ward,

*Asso. Prof. & Head (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Assistant Professor (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
*** M.Phil Scholar (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

Gandhi Nagar Ward, India Nagar Ward, Shahid Hemu Colony Ward, Ganash Nagar Ward, Dr. Shyama Prasad Mukerjee Nagar Ward, Tripur Sunderi Nagar Ward, Bapu Nagar Ward, Loko Colony Ward. Bharat Mata Nagar Ward, Shri Jagannath Nagar Ward and very low density 500 perxons/k.m. Bilasa Nagar Ward, Show Table

Bilaspur City : Population Distribution, 2011

Ward No.	Ward Name	Total Population	Concentration Index
1	Vikash Nagar Ward	3509	0.70
2	Vishnu Nagar Ward	7977	1.59
3	Nehru Nagar Ward	5089	1.02
4	Kasturba Nagar Ward	4997	0.99
5	Bhakt Kanwar Ram Nagar Ward	3912	0.78
6	Tilak Nagar Ward	5310	1.06
7	Guru Ghasi Das Nagar Ward	9528	1.91
8	Rajendra Nagar Ward	3531	0.71
9	Gayatri Nagar Ward	4361	0.87
10	Mother Teresa Ward	4889	0.98
11	Dr. Ambedkar Nagar Ward	4342	0.87
12	Kranti Kumar Bhartiya Nagar Ward	8394	1.68
13	Rani Laxmibai Ward	7966	1.59
14	Vinoba Nagar Ward	7375	1.48
15	Sanjay Gandhi Nagar Ward	5954	1.19
16	Priya Darshini Nagar Ward	3020	0.60
17	Nirala Nagar Ward	4257	0.85
18	Azad Nagar Ward	4102	0.82
19	Shahid Ashfaqullah Nagar Ward	2593	0.52
20	Ran Nagar Ward	3645	0.73
21	Subhash Nagar Ward	2821	0.56
22	Pt. Munnulal Shukla Ward	2873	0.57
23	Lala Lajpatrai Nagar Ward	2695	0.54
24	Shivaji nagar Ward	5216	1.04
25	Sant Ravi Das Nagar Ward	4848	0.97
26	Nago Rao Shesh nagar Ward	2097	0.42
27	Krishana Nagar Ward	4299	0.86
28	Basant Bhai Patel Ward	6587	1.32
29	Shahid Ram Prasad Bismilla Ward	3456	0.69
30	Gandhi Nagar Ward	3769	0.75
31	Indira Nagar Ward	3628	0.73
32	Tatya Tope Nagar Ward	4457	0.89
33	Ram Das Nagar Ward	5169	1.03
34	Bhagat Singh Nagar Ward	3219	0.64
35	Maharana Pratap Nagar Ward	3204	0.64
36	Vivekanand Nagar Ward	5943	1.19
37	Shankar Nagar Ward	4081	0.82
38	Shahid Hemu Colony Ward	5209	1.04
39	Ganash Nagar Ward	3918	0.78
40	Kamala Nehru Nagar Ward	6536	1.31
41	Thakur Dev Nagar Ward	6807	1.36
42	Dr. Shyama Prasad Mukerjee Nagar Ward	7610	1.52
43	Rani Durgawati Nagar Ward	5363	1.07
44	Shahid Mangal Panday Nagar Ward	7630	1.53
45	Arvind Nagar Ward	9184	1.84
46	Shashtri Nagar Ward	8023	1.61
47	Pt. Devkinandan Dixt Ward	6225	1.25
48	Ram Krishana Paramhans Ward	6817	1.36
49	Bilasa Nagar Ward	2602	0.52
50	Wirless Colony	4568	0.91
51	Bharat Mata Nagar Ward	3182	0.64
52	Shri Jagannath Nagar Ward	3814	0.76
53	Bapu Nagar Ward	4694	0.94
54	Loko Colony Ward	4004	0.80
55	Tripur Sunderi Nagar Ward	5618	1.12
	Total Population	3,35, 293	

Source : Census of India – 2011, Chhattisgarh Series – 23 Provisional Population total, paper – 1 of 2001 P. 19

Distribution Of Population In Bilaspur City - Population distribution of Bilaspur cities is uneven. The total City is divided into 55 wards. Population Concentration Index is another significant measure of population studies. Distribution of Population is Some of the typical characteristics of Bilaspur City population and its distribution that carry wide range political, social and economic implications, at national levels include huge population base (Gosal, G.S and Chandana R.C; 1979) .

The Bilaspur city could have emerged as a strong politico economic power but for the problems emanating from its huge population size. A part from the problems associated with its size, Distribution was another typical feature of Bilaspur's population mentioned above. The concentration Index (The concentration index was calculated by dividing actual population of the ward in 2001 by the average population of city for 2001, there are three catagories (i)High Concentration Index (ii) Medium Concentration Index (iii) Low Concentration Index

High population Concentration index (1.2-1.80) - Concentration Index there is 1.2-1.80 highy populatin showing Table No.3.4 Wards suchas Arvind Nagar Ward there concentration index is 1.84, Shashtri Nagar Ward, Pt. Devkinandan Dixt Ward Ram Krishana Paramhans Ward, Shahid Mangal Panday Nagar Ward , Kamala Nehru Nagar Ward, Thakur Dev nagar Ward, Dr. Shyama Prasad Mukerjee Nagar Ward, Vishnu Nagar Ward , Guru Ghasi Das Nagar Ward 1.91the high concentration index , Kranti Kumar Bhartiya Nagar Ward, Rani Laxmibai Ward , Vinoba Nagar Ward.

Medium Population Concentration index (0.6-1.2) - Medium population concentration index Vikas Nagar Ward 0.70 , Nehuru Nagar Ward 1.02, Kasturba Nagar Ward 0.99 , Bhakt Kanwar Ram Nagar Ward 0.78,Tilak Nagar Ward 1.06, Rajendra nagar Ward 0.71, Gayatri Nagar Ward 0.87 ,near about 1.01and above Mother Teresa Ward, Dr. Ambedkar Nagar Ward 1.48, Sanjay Gandhi Nagar Ward 1.19 ,detail show Table No. 3.4 Nirala Nagar Ward , Azad nagarWard , Ram Nagar Ward, Shivaji Nagar Ward, Sant Ravi Das Nagar Ward, Krishana Nagar Ward, Shahid Ram Prasad Bismilla Ward, Gandhi Nagar Ward, Indira Nagar Ward, Tatya Tope nagar Ward, Ram Das Nagar Ward,

Bhagat Singh Nagar Ward, Maharana Pratap Nagar Ward, Vivekanand Nagar Ward, Shankar Nagar Ward, Shahi Hemu Colony Ward, Ganash Nagar Ward, Wirless Colony , Bharat Mata nagar Ward, Shri Jagannath Nagar Ward, Tripur Sunderi Nagar Ward, Loko Colony Ward 0.80, Bapu Nagar Ward 0.94 are respectively.

Low Population Concentration index (Below 0.6) - Low population index is below 0.6 Priya Darshini Nagar Ward 0.6, Shahid Ashfaqullah Nagar Ward 0.52, Subhash Nagar Ward 0.56, Pt. Munnulal Shukla Ward 0.57, Lala Lajpatrai Nagar Ward0.54, very low population index Nago Rao shesh Nagar Ward is 0.42, Bilasa Nagar Ward0.52 respectively.

Conclusion - The Administrative limits of Bilaspur Municipal Corporation (BMC) in encompass an area of 30.42 Km². The population density is 2,394 persons per Km². Residential areas are spread over the Municipal Corporation area and some of the major residential areas include Narmada Nagar, Nehru Nagar, Sadar Bazar, Tikarapara, Vidya Nagar, Bharati Nagar, Vinoba Nagar, Agey Nagar and Priyadarshini Nagar. However, these are characterised by irregular street patterns and low rise buildings mainly with terracotta tiled roofs. Planned residential areas are located mainly in the south & south–western parts of the City and are characterised by organised, hierarchical street patterns, open spaces and medium low- rise pucca buildings (BilaspurDevelopment Plan, 2011) Commercial areas are located along the main transportation corridorsaround the City centre. The core consists of high density areas such as the Sadar Bazar, Gol Bazar areas abutting to Dayalbagh Road and Railway Station Road that are characterised by narrow, irregular streets and comparatively high built mass with few open spaces. (Tiwari V.K. ;2004) The industrial areas are located towards the south – western periphery of the City. Publicand semi-public use areas are in the form of large open spaces, gardens, green areas, sport complexes etc. These places are mostly distributed in the newly developed parts of the City, as the core area is totally deprived of recreational areas.

References :-

1. Personal Research.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

Health And Educational Quality In Bilaspur City (An Study Of Urban Life)

Dr. Kajal Moitra* Dr. Ratnesh Kumar Khanna Supriyo Halder*****

Abstract - The "quality of urban life" is a culture based concept in the sense that this phrase means different things to different people. In the developing quality of .urban life has been a topic of common discussion among the geographers , sociologist, and economist and up to some extent politicians. Sociologist referred it to the satisfaction of needs and wants of the population.

The meaning of quality of urban life differs from region to region and time to time means having a spatiotemporal dimension. 1960's has been regarded as the period of economist dominance in this field of study. After thathumanistic concept, such as environmental quality, social well being and the quality of urban life became prevalent in geographic research in 1970's. Since ,the geographers are seriously concerning the subject in a changing global scenario and means awareness towards the environment.

Introduction - Demographic indicators are very important while studying about human well-being or the quality of urban life of the people, because population makes great impact on their living condition. Generally speaking the more thepopulation increase greater is the strain on the infrastructural facilities availablein the region.

In the developing countries urbanization is not due to any mark industrial development, but only due to the poverty and increasing pressure of population on land in rural areas. People in rural areas are very poor and most of them unemployed they come to the city to earn their livelihood. A vas tmajority of them work as domestic servants, laborers, and do other petty jobs.

Since their income is very low they are unable to live in decent dwellings anddo not have access to even the basic urban amenities e.g. drinking water,sanitation and health care.

High rate of urbanization with a low level of urbandevelopment creates disparity between urban population growth and rate ofdevelopment and slow expressions of urban based industrialization in the background of mounting pressure on land in rural areas have resulted in theincreased stress on urban amenities and services. So if not directly, at least in directly population figure (as that of density) contribute to determining the well-being of the people. To set an example Delhi which was once a very beautiful city is slow turning into a big slum .Social indicators are very relevant and important while studying the quality of urban life of the people. It is not meant to deny the usefulness of economic indicators such as income which also influence the well-being. Social indicators do play a very prominent role in determining the well-beingof the people. As Knox pointed out that "there are many elements of people well-being as health, education, leisure and security", which cannot be presented by economic indicator. These measures are also query for in positivistic approach which has inculcated the brief that increased technological and industrial development automatically leads to be better life.

Objectives - This present research work has certain research objectives -

1. To study the health status of urban life.
2. To study the educational status of urban life .
3. To assess the social problems among different socio- economical groups of sampled wards.

Methodology - The data were collected both from primary and secondary sources.

The data from secondary sources have been collected principally from government and non government sources.

Disscussion - Economic Indicators are very relevant to assess the quality of urban life. The income of a person affects his socio-economic life e.g. cloths, house, convince, domestic appliances, human relations, educations. Political opinion, tastes, age and even life expectancy.

Income is one of the most important factors which determine the standard of living of people. In fact money makes man able to buy all his material needs. Generally an increase in the incomes promotes the well-being or living condition of the people. A man with a high income can use his money to buy necessities, comforts and luxuries. But a

*Asso. Prof. & Head (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Assistant Professor (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
*** M.Phil Scholar (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

poor cannot satisfy even his basic needs. If additional income is provided to him, he will be able to satisfy some of his urgent needs and thus cause of enhancement in his well-being.

Analysis Of Health Standard Of Heads Of The Family - Table below reveals that, the percentage of underweight population is maximum among the heads of the poor income family.

Table 1 (see in next page)

Overweight people are largely found among the families of very high income category where 76.5 percent are underweight, while 35.9 percent weight people are also found among the families of middle and high income categories, the percentages are 45.7 and 57.7 respectively.

Table 2 (see in next page)

Analysis Of Educational Status Of Heads Of The Family - In a way an analysis of educational level of any group of people could be taken as an indicator in its development activities. Keeping this point in view, it has been analysed the educational attainments of heads of the families of urban households at different levels. As quality of life of a family is dependent on the educational status of the head of the concerned family.

Percentage of illiterate people is high in ward No. 01, which is account for percent.

Table 3 : Educational level of the Heads of the families in Sample wards

Wards Literate	Population (in %)
Vikas Nagar	62.4
Vishnu Nagar	49.8
Bhakt Kanwar Ram Nagar	50.2
Gayatri Nagar	42.5
Nirala Nagar	44.9
Shivaji Nagar	39.8
Ram Das Nagar	32.45
Shahid Hemu Colony	45.19
Dr. S. P. Mukherjee	42.19
Shastri Nagar	48.15

Source : House Hold survey

Analysis On The Basis Of Quality Of Life Index - Composite score of different indicators plays an important role in determining quality of life of the people. Considering the highest weight of all the above indicators the composite index has been worked out be 32.

Index of Quality of life	Range of index value
High quality of life	24-32
Moderate quality of life	16-24
Poor quality of life	8-16
Very poor quality of life	< 8

The household of Bilaspur city have been identified and these are grouped into four broad classes.

The Economist intelligence units has been developed a new "Quality of life" index that link the result of subjective life satisfaction surveys to the objective determinants of quality of life index that link the result of subjective life satisfaction surveys to the objectives determinants of quality of life across countries.

Conclusion :

1. In the study area 47.4% heads of family are under weight.
2. Out of the total, 13% heads of family are found illiterate during survey.
3. Among the households under study most of the family living in 250-500 sq. ft. area.
4. Television is a most popular recreational items among the families of urban area of Bilaspur City.
5. Among the household under study most of the family have electricity facility.
6. Maximum percentages of the household used 10 to 20 letters petrol in a months.

References :-

1. Gilber, A., and Gugler, J., 'Cities poverty and Development, urbanization in the third world, oxford university press, 1982.
2. Harrison, G.A. and Gibson, J.B. (eds.), 'Man in Urban Environments, London, 1976.
3. Herbert, D.T. and smith, D.M. (eds.), Social problems and the city', Oxford, 1979.
4. Hoyt, H., 'The Structure and Growth of Residential Neighbourhood in American cities, Washington, 1939.
5. Johnston, R.J., 'Towards a General Model of Intra urban Residential pattern', in C. Board, R.J., Chorley, P.Hagget, and D.R. Stoddart, (eds.), progress in Geography, vol.4, 1972.
6. Jones, E., 'Town and cities', Oxford University press, London, 1966.
7. Jones, D.M. and Flax M.J., The Quality oflife in Metropolitan Washington, D.C. some statistical Bench marks, Washington, 1970.
8. Knox, P.L., Social well-being: Spatial perspective oxford, 1975.

Table 1 : Health standard of heads of the family among different income category

Income Category	Total population	Underweight in %	Overweight in %	Normal weight in %
Poor	90	54.7	33.5	9.4
Middle	120	49.2	45.1	5.7
High	60	35.2	57.7	7.1
Very High	30	19.8	76.5	3.7
Total	300	47.4	45.2	7.4

Source : House Hold survey

Table 2 : Health standard of heads of the family in sample wards

Wards	Total Household	Underweight in %	Overweight in %	Normal weight in %
Vikas Nagar	30	42.1	44.7	13.2
Vishnu Nagar	30	48.3	45.7	6.0
Bhakt Kanwar Ram Nagar	30	43	45	12
Gayatri Nagar	30	58.7	34.0	7.3
Nirala Nagar	30	35.2	57.7	7.1
Shivaji Nagar	30	19.8	76.5	3.7
Ram Das Nagar	30	54.7	35.9	9.4
Shahid Hemu Colony	30	42.1	44.7	13.2
Dr. S. P. Mukherjee	30	44.2	49.5	6.3
Shastri Nagar	30	47.4	45.7	13.0

Source : House Hold survey

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Distribution And Density Of Population In Raigarh District

Dr. Kajal Moitra* Sanjit kisku Dibyendu bhattacharjee*****

Abstract - According Sawant and Athavale (1994)[1] Population distribution is related to location and area. The studies related to distribution tell us how many people live in which area, which areas have concentration of population and which areas have very few people.

Information on the size and characteristics of the total population of a country is not sufficient for various aspects of studies. In most countries the Geographical distribution and density of the population is not even because people lives dense in some place and sparse in others.

The analysis of distribution of population and density hold significant for population geographers. The concept of population distribution density of population are interrelated to each other.

Key Words - population,information,geographical distribution.

Introduction - The regional distribution of population in the world is not uneven. There are wide regional contracts in the degree of concentration of population.

Robert (1979) analysis various population attributes like fertility, mortality and mobility. There are various factors affecting the growth of population. Out of these birth rate, death rate and migration are the important demographic components for the measurement of population.

All the major factors affecting the population distribution, density and growth may broadly be classified into category.

Population distribution and density influence of the physical factors. Physical features, climate and other factors are affected of population distribution, density and growth. There are main physical factors.

(i) Climate
(ii) Land forms
(iii) Soil
(iv) Resources
(v) Accessibility

(i) Climate – Climate effects the regional distribution of population, through variation of climate, precipitation and weather condition.

(ii) Land form – Land forms effects the distribution of population and density both at macro and micro regions. Different types of landforms are effects of population concentration of any region.

(iii) Soils – The attraction of region for human settlement may depend partly upon the available soil of the region.

(iv) Resources – Energy resources and mineral resource are major influencing factors of concentration of population in any region.

(v) Accessibility – Transport system is the major influencing factors of concentration of population in any region.

B) Socio-Economic Factors - There are many social and economical factor influencing of concentration of population distribution, density and growth –

(i) Economy
(ii) Advancement in technology
(iii) Political decisions
(iv) Social organization
(v) Settlement

(i) Economy – The ratio of diversification of economy and the ratio of density of population have also been found to be positively correlated.

(ii) Advancement in technology – Technology advancement is the other major effecting factor of population distribution

(iii) Political decisions – The role of political policies is directly effects on distributional tendencies among population.

C) Demographic Factors - Demographic is one of the most important effecting factor of distribution of population density and growth.

The demographic factors of vital rates and migration, fertility and mortality are main controlling factors of population distribution, density and growth.

Objectives :

1. To study the population distribution in raigarh district.

***Asso. Prof. & Head (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**
**** Ph.D.Scholar (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**
****** M.Phil Scholar (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**

2. To study the population growth pattern.
3. To study the population density in raigarh district.

Methodology - Present study is based on census data 2011.Analytical study is used for study.

Discussion

Distribution Of Population In Raigarh District - Population distribution is an important factor while studying population density, growth and other implied socio – economic problems in a geographical area. Similar to the distribution of any other natural resources, the distribution of Human resources on the surface of the earth is uneven. Distribution of population in the district is very unveven.

The mean centre, or as sometimes also called as mean point the simplest measure of centre of the distribution of population

At the census 2011, there were 09 tehsil and 09 development block in the study area. The number of total village is 1466 and 10 towns in the raigarh district.

The total population of Raigarh district is 14,93,984 with 750278 male population and 743706 female population. Rural Population of Raigarh district Rural Population of Raigarh district is 12,47,682 and Urban population is 246302.

Raigarh district occupics swenth place for population.

Table 1 (see in next page)

Diagram 1 (see in next page)

Table 1Indicates decacal variation of both rural and urban areas of the district. It is seen that the district has registred a pere % decadal growth rate of 18.01 during the census 2001-2011.

Table 2 (see in next page)

Diagram 2 (see in next page)

The data Provided in Table 2 Shows the population distribution of Raigarh District. It is observed That Raigarh tehsil has recorded highest population both in rural and Urban area.

In Nawagan village out of total population, were engaged in work activities, 85.25% of workers deseribe their world as mainwork (Employmant or earthing more than 6 months) while 14.75% were unvolved in manginal activities providing livelihood for less than 6 months of 305 workers enagaged in main work, Buere caltivators Corner Or- Co-ouner) while 235 were agriculthural labourer.

In Nawagaon village, most of the village population is from schedule tribe (ST) Schedule Tribe (ST) Constitubes 75.80% of total Population in Nawagaon village. There is no population of Schedule Caste (SC) in Mawagon Village of Takhatpur.

There is no railway Station near to nawagoan in less than 10 km. How ever Bilaspur Jn Railway station is major railway station 35 km. Near to Newagaon.

Whereas, Ghargoda tehsil has the lowest population in the census of 2011. In the Raigarh District.

Table 3 (see in last page)

Diagram 3 (see in last page)

Denisity Of Population - Population density is one of the basic and important part of population studies. The density of population is measurement of population on the per square km. Of atea. The term density of population was first used Henry D. Harness in 1837 while preparing map. His purpose was however altogather different. This is ratio between population and area. This is used an indicator to measure Concentration of population (Sawant and Athavale, 1994)[1]

Density of Population helps us in understanding between nature and population. Desity of population helps to know possibilities for development of a region.

Study of Density nis important for Geographers, demegraphes, Sociologists etc.

Table 4 (see in last page)

Diagram 4 (see in last page)

On the basis of table 4 we can have there areas of population density in the Raigarh district.

The study area divided different categaries of land use Pattern as follows:-

1. Areas of high population Density - The group includes such areas. of the country where the population density more than 300 persons per square Km. nTwo tehsils of Raigarh district strtehes this group. Raigarh (603) and pusaur (349) includes this category.

2. Area of moderate population Density - This group includes such areas of the country where the population density between 200-300 persons per square km. It include 02 tehsils of the Raigarh district, which is Tamnar (226) and sarangarh (270) tehsil. This is moderate Density:

This group Includes by population density between 200-100 person per 2 Km. It includes maximum 05 tehsils of the district.IT includes Dharmjaigarh (135) Lailunga (143) Gharghoda (169), Kharsia (160) and Baramikala (194) tehsils of the Raigarh district.

Conclusion - Growth of Population is related to the ration between birth rate and death rate of the Country. The socio-economic development of any region is reglected the growth of population.

Population growth is determined by birth rate, death rate, migration and other demographic factors. The population growth of aperiod can be calculated in two parts, such as-

(i) Natural Growth of Population.
(ii) Mechanical growth of Population.

References :-

1. Swant S.B. and A.S. Athavale (1994) : Population Geography, Pune, Mehta publishing house.
2. Woods, Robert (1979) : Population Analysis in Geography, Longman, London pp. 19.
3. United Nations (1953) : Determinants and consequences of population trends. Population studies no. 17, New York : Department of Social Affairs.
4. Chandra R.C. (1986) : Geography of population, New Delhi, Kalyani Publication.
5. Clarke, John I (1971) Population Geography, pergamon Press, Oxford, pp. 88 – 89

6. WHO (1978) Health for All, Sr. No.1
7. United Nation (1953) : "Principles for vital statistic system, statistical papers, series M. P – 7 Number 19
8. Trewarth G.T. (1969) : "Geography off population : World Pattern" New York : John Willey and Sons Inc.

Table 1 : Raigarh District : Distribution of Pipulation (2001-2011)

S.	Census	Population	Rural Population	Urban Population	% in total state population
1	2001	1265529	1096073	169456	6.07
2	2011	1493984	1493984	246302	5.08

Source- Census 2011

Diagram 2 : Raigarh District : Distribution of Pipulation (2001-2011)

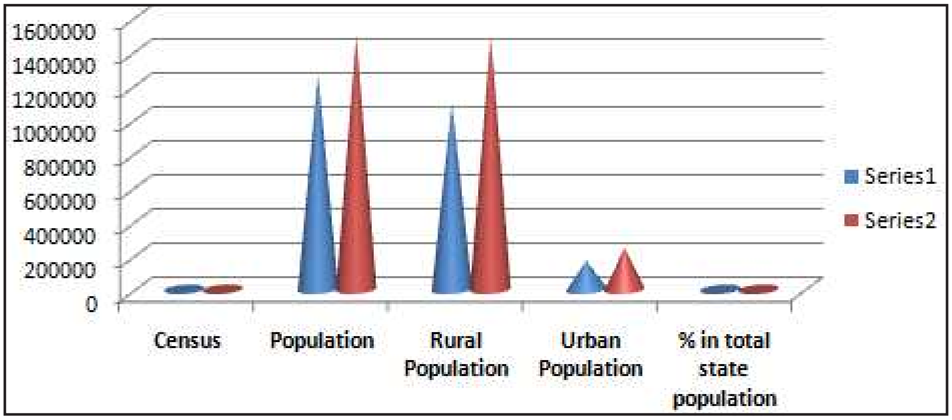

Table 2 : Raigarh District : Tehsil wise population Distribution 2011

S.	Teheil/District	Population	Female population	Total population
1	Dharmjaigarh	103310	103720	207030
2	Laimaga	65035	65578	130613
3	Gharghoda	39330	40095	79425
4	Tamnar	49342	48633	97975
5	Raigarh	157560	14995	307513
6	Pusar	70261	69538	1397799
7	Kharsia	57194	75433	150627
8	Sarangarh	114164	115439	229603
9	Barankela	76082	55317	151399
	District	790278	743706	149398

Source – census 2011

Diagram 2 : Raigarh District : Tehsil wise population Distribution 2011

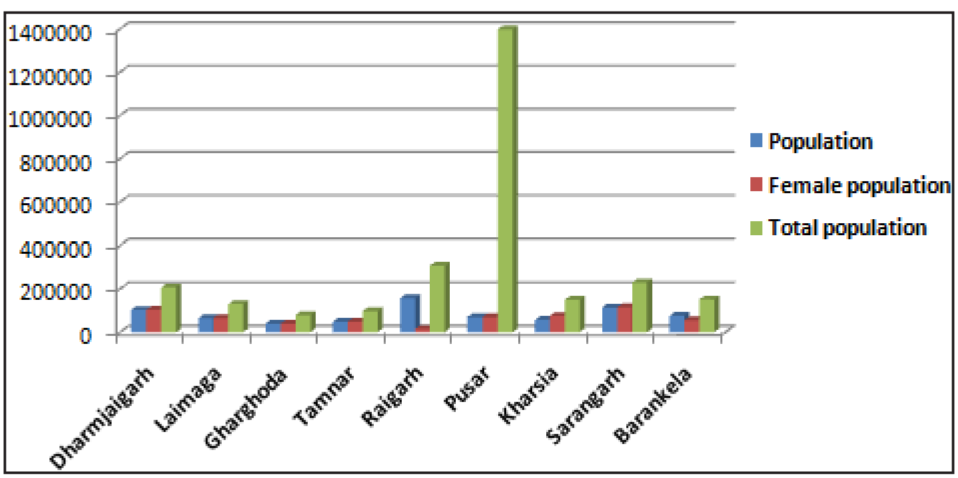

Table 3 : Raigarh District: Distribution of Rural and Urban Population 2001-2011

S.	Tehsil/District	Rural Population 2001	Rural population 2011	Urban population 2001	Urban population 2011
1	Dharmjaigarh	166150	192676	13598	14354
2	Laimaga	113531	122405	0	8208
3	Gharghoda	140800	69970	8103	9455
4	Tamnar	97975	0	0	
5	Raigarh	248379	144392	115908	163121
6	Pusar	135055	0	4744	
7	Kharsia	111769	131688	17388	18939
8	Sarangarh	315444	214649	14459	14954
9	Barankela	138872	0	12527	
	Total	1096073	1247682	169456	246302

Source – census 2011

Diagram 3 : Raigarh District: Distribution of Rural and Urban Population 2001-2011

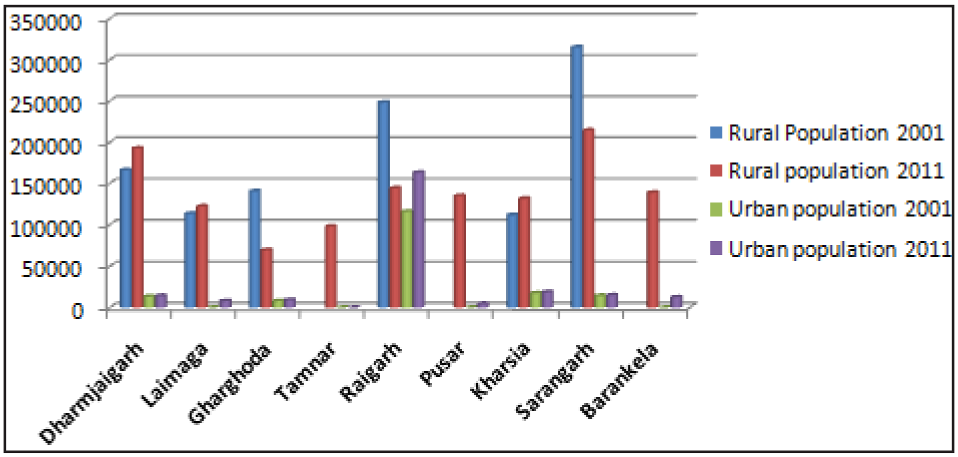

Table 4 : Raigarh District : Density of Population (2001-2011)

S.	Tehsil/Dist	2001	2011
1	Laimaga	125	143
2	Gharghoda	165	169
3	Tamnar	165	22222 226
4	Raigarh	400	603
5	Pusar	400	349
6	Kharsia	137	160
7	Sarangarh	202	270
8	Barankela District	202 185	194 218

Source census 2011

Diagram 4 : Raigarh District : Density of Population (2001-2011)

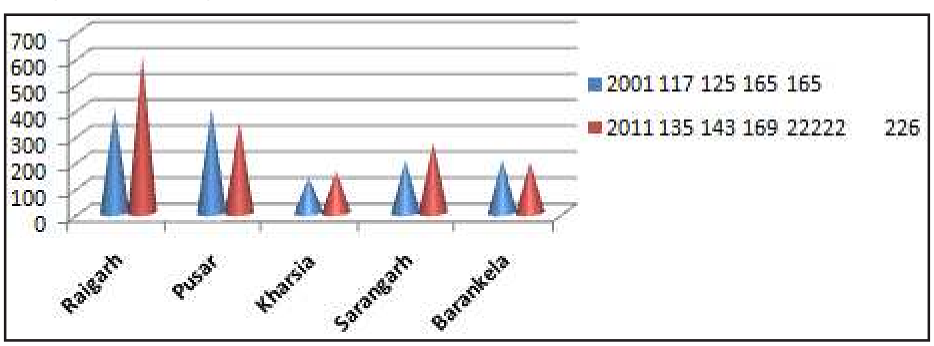

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767,
E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

Agricultural Land Use In Bilaspur Disrtict

Dr. Kajal Moitra* Sanjit kisku Gobinda De*****

Abstract - Production is the function of land, labour, capital and organization; however in agricultural sector the importance of organisation is thought to be less important in the context of developing countries as our peasants are cultivated their land in subsistence basis. Different aspects of land as a factor of agriculture have been discussed in this paper.

Cropping pattern and production and development of rural area basically depends upon agriculture organization. Such organization very often develops few systems, land ownership system is one of them.
Key words - organisation,cropping,owners.

Introduction - Production is the function of land, labour, capital and organization. However, in agricultural sector the importance of organization is thought to be less important in the context of developing country as our peasants are cultivated their land in subsistence basis. Different aspects of land as a factor of agriculture have been discussed below. Crop production and development of rural area basically depends upon agricultural organization. Such organization very often develops few systems; land ownership system is one of them.

Objectives :

1. To study the agricultural landuse of bilasspur district
2. To study of distribution of agricultural landuse in study area.

Methodology - This research based on the secondary data .the secondary data has been collected from agricultural office

Discussion - Before independence of India there were two types of land holding practices i.e. Zamindary land ownership and Ryotwari land ownership. These systems were not mean to use the land ownership policies in the development of the country or increasing the production of all crops or for the social and economic development of hard working agricultural farmers. Understanding the importance of land reform policies in the economic development of the country like India, which is mainly agricultural based. Immediately after independence, rapid steps were taken to solve these problems. For the development and reforms in agriculture in 1948 , Indian National Congress established village reform society who gave many important proposals. At the time of recognition of the state of Madhya Pradesh, in the Bilaspur district 3 types of land ownership system is found.

Malgujari System - In this system person who used to take a particular portion of the produced commodity from the farmers in the name of the tax and used to submit in the government treasury were known as Malgujars. But level of taxes changed along with the changing of rural of the state. This type of system started in the period of Mughal when the central power became weak of the Mughals the border official were given to theses peoples from the farmers and they came to be known as revenue farmers.

Ryotwari System - This type of land ownership was started in the year 1872. Under this system, farmers have a direct relation with the states ownership. Although, total land was under the jurisdiction of the state is maintained by this law. But in using the land each farmer was the owner of his hold. His right over the land can be away if he continues to forbidden to provide the rent over his plot of land to the state regularly and directly. He has right of using that land, selling, mortgaging or any other type of changing of possessions.

Mahalwari System - This land owner system was first started in the year 1933 in Agra and Awadh state. Simultaneously it is started in Punjab as well as Madhya Pradesh. Under this type of system total land of village is considered one and the state tax is determined on it. The right of land of the village remains on a cooperative basis on the village farmers. A farmer can till his own personnel land but in the question of giving the revenues the responsibility remains on a united basis.

Above types of land ownership was in practice in Madhya Pradesh before its reorganization. So the economic and social objectives were not fulfilled at that time. But after

*Asso. Prof. & Head (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Ph.D.Scholar (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
*** M.Phil Scholar (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

the reshuffle of the state and after the implementation of land Revenue Act in 1950, mainly land ownership went to the hands of the farmer. They become completely the owner of the land.

Present Land Ownership System - At the present time, in the Bilaspur district mainly three types of land ownership policies are in practice:

Land For Public Use - In this category land remains under the districts government organization which is used an universal basis like the public building, grazing, land and gram panchayat office etc.

Self Land Holding - In this type of land holding is owned by individual farmer. In this type of land owner can sell his piece of land to transfer the land to another person or donate the land. In the Bilaspur district 93.75% land is under this type.

Holding Given On Rent - These types of land ownership are the form as some farmers not owned by him but he gives the land for cultivation in rent. It is one kind of temporary ownership system.

Agricultural Landuse Of Bilaspur District - In the Bilaspur district all size of land holding is unevenly distributed. Among various sized of holding small size of holdings are maximum in number due to reason of inheritor system. In the year 2010, the total numbers of operated holdings are 266388 and they consist of 253729.55 hectares area.

Marginal Holding - In the Bilaspur district number of marginal holding is 185791 which are 69.74% of the total number of holding and it covers 74057.1 hectare area which is about 29.18% of the total area of the holding. In the district great difference is observed in the distribution of the marginal fertile so the concentration of rural population is found very high. In the some parts of Lormi plateau and Pendra plateau marginal holdings distributions are found low.

Small Holdings - In the Bilaspur district numbers of small holding found 48464 which are about 18.19% of total number of holdings. It occupies 67116.9 hectare area, which is about 26.45% of total land holding area. High no. of small holding is found in the plain of Bilaspur. Because in these tehsils very high concentration of scheduled caste population which worked as agricultural labours. Small holding are found less in Kota and Bilha tehsils.

Semi Medium Holding - This type of holding is unevenly distributed in the Bilaspur district. Total numbers of semi medium holding are 23820 which are contribute about 8.94% total number of holding. Area under this class is 26449.01 hectare which constitutes about 24.61% of total area. In northern portion of Bilha tehsils this type of land holdings are low in number and observed high in southern portion of Bilha development tehsils.

Medium Holding - In the Bilaspur district medium size of land holding are 7747 in number which is about 2.90% of total number of holdings and it cover 41929.07 hectare areas which is about 16.52% of total area. High number of this class holding is found in the northern portion of Pendra tehsil. Least expansion of such type of holding is found in the southern portion of Bilaspur district.

Large Size Of Holding - In the Bilaspur district very large size of holdings is found, 566 in numbers which is only 0.21% in counting but its covers 8181.57 hectares area of total area under operated holdings. This type of holdings occupies near about 3.22% of total area in the Bilaspur district.

Land Use In Kharif Season - In the mid nineties, most of Chhattisgarh was still a mono – crop belt. Only ¼ to 1/5 of the sown area was double cropped, where nearly 805 of a state area is covered only mono cropping this agricultural pattern is needs immediate attention to turn into double crop areas. Also there are very few cash crops grown in the Chhattisgarh state.

The agriculture year is divided into 02 main seasons of the year "Kharif" – The season of summer crops.

"Rabi" – The season of winter crops.

The season started with pre – monsoon rain in the May – July month. The crops are harvested during month of September to November. Major Kharif crops is rice and Jowar, Maize and Paddy Jute and Pulses etc. Kharif crops play a major role in Chhattisgarh economy for agricultural benefits.

Table – 1 : Land use in Kharif Season of Bilaspur District

S.	Crops	Crop Name	Area in 000 hectare	Percen -tage
1.	Cereals	Rice	219.766	
2.		Jowar	0.356	
3.		Maize	3.013	
4.		Millets	1.906	
	Total Cereals		233.272	76.98
5.	Pulses	Pigeonpea	2.308	
6.		Green Gram	0.081	
7.		Black Gram	1.542	
	Total pulses		1.623	0.53
8.	Oil seeds	Groundnut	0.011	
9.		Seasamun	0.637	
10.		Soyabean	7.1	
	Total Oilseed		7.748	2.55
	Total pulses		1.623	0.53
8.	Oilseeds	Groundnut	0.011	
9.		Seasamun	0.637	
10.		Soyabean	7.1	
	Total Oilseed		7.748	2.55
11.	Others	Vegetable Other	19.8	6.53 14.29
	Total			100%

Source:- Agricultural statistics 2013 commissioner of land records, Govt. Of Chhattisgarh.

Land Use In Rabi Season - The Rabi season begins in November and ends around April month. Rabi crops are take after the departure of monsoon. The seeds are sown after the rain had gone and harvesting begins in April and May month. Also crop is the main of the state, which grown

in this season. Wheat, oilseeds, arhar, tivra etc is the main crops of this season.

Table – 2 : Land Use In Rabi Season Of Bilaspur District

S.	Crops	Crop Name	Area (in 000 hec.)	%
1	Cereals	Wheat	8.231	
	Total		43.6	3.94
2	Pulses	Gram	2.578	
3		Green Gram	0.031	
4		Black Gram	0.092	
5		Horse Gram	0.744	
6		Pea	0.730	
7		Lentil	0.380	
8		Lathyrus	33.253	
9		Total	37.807	18.10
10	Oil seeds	Repeseed	1.804	
11		Mustard		
		Linseed	1.746	
12		Sea Samur	0.011	
13		Sunflower	0.012	
14		Safflower	0.022	
		Niger	0.328	
		Total	19.1	
15	Vegetables			13.08
16	Others			17.88
	Total			100%

Source:- Agricultural statistics commissioner of land recoras, Govt. Of Chhattisgarh

Agricultural landuse is controlled by environment. In some environments cropping is favoured by climate, soil and physiography of that area. In Bilaspur district all crops cultivation depends on the monsoon rainfall because irrigation sources are very limited. Only 49.40% of the total area of the district is used for net sown area.

References :-

1. Singh Jasbir (1972) : "A new technology for measuring agricultural efficiency in Haryana, India, The Geographers, vol. 1, pp – 14 – 33.
2. Hussain M. (1982): "Systematic Agricultural Geography", pp 125 – 126.
3. Tiwari P.d. (1986) : "Level of Agricultural development in Rewa plateau" The deccan geographer, vol. XXVI No. 22 – 23.
4. Chandrakar A. R. (1979) : "Agricultural landuse and nutrition in Raigarh district" Ph. D. Thesis.
5. Gupta, Manju (1992): "Bilaspur jile me krishi utpada kata par prabhav ; ek bhugolik Adhyayan: Ph.D. thesis, Gurughasidas Vishwavidyalaya Bilaspur
6. Gole, Uma (2003) : "Masturi tehsil me krishi vikas Aum Poshan star" Ek bhugolik Adhyayan" Ph.D. thesis Gurughasidas Vishwavidyalaya, Bilaspur

Table – 3 : Chhattisgarh State : Production of Major crops 2011

S.	District	Rice	Wheat	Jawar	Bajra	Jow	Maize	Kodokudki
1	Korea	73896	3346	494	0	67	13334	1184
2	Sarguja	232612	23737	1671	0	930	63804	920
3	Jashpur	247335	1773	169	7	9	10002	718
4	Raigarh	336652	3791	23	11	0	1764	64
5	Korba	130510	667	484	4	121	6860	381
6	J-Champa	659384	4033	0	0	0	687	6
7	Bilaspur	551672	17878	479	6	3	6215	933
8	Kabirdham	151006	6895	364	5	0	3982	2510
9	Rajnandgaon	438569	14313	83	0	29	1920	2615
10	Durg	844764	26725	76	0	37	485	493
11	Raipur	771395	11842	161	4	0	1002	24
12	Mahasamund	486688	2149	53	0	0	177	24
13	Dhamtri	395133	1708	32	0	0	177	5035
14	Kanker	385716	1428	550	0	0	18868	2535
15	Bustar	401486	1420	916	0	0	40570	2503
16	Dantewada	261296	7	1775	0	0	12607	7438
17	Bijapur	127052	0	854	0	0	1034	89
18	Narayanpur	51571	33	9	0	0	6525	653
	Total	6637737	121745	8193	37	1196	190013	26021

Source:- Agricultural statistics 2011 : Land Record office, Raipur.

****

Concept And Scope Of White Collar Crimes : A Study

Ritik Arora* Dr. Vijay Srivastava**

Introduction - Our age is seeing a rush of financial violations as at no other time. It watches difficult to leave them. In such conditions numerous inquiries emerge before us. The most essential of those is, regardless of whether there was ever a dread of these financial violations of such an awesome power, to the point that it will wind up unthinkable for us to manage them? On the off chance that yes, why we have not felt caution of this dread? So as to find the consistent solution to these inquiries, it is essential to comprehend the idea of salaried wrongdoings given by E. H. Sutherland, who terms these monetary violations as Socio-financial wrongdoings since this class of violations influence the whole society.

Verifiable Background - The idea of cushy wrongdoing is normally connected with E. H. Sutherland whose entering work around there concentrated of criminologists on its unsettling impact on the aggregate wrongdoing picture. Sutherland brought up that other than the conventional violations, for example, strike, burglary, dacoity, kill, assault; seizing and different acts including savagery, there are sure hostile to social exercises which the people of upper strata bear on in course of their occupation or business.

Differential Association Hypothesis - Differential affiliation is a learning hypothesis which centers around the procedures by which people come to carry out criminal acts. As indicated by Sutherland, criminal conduct is found out in connection with different people in a procedure of correspondence. The primary piece of the learning of criminal conduct happens inside cozy individual gatherings. At the point when criminal conduct is found out, the learning incorporates, (a) methods of perpetrating the violations, which are in some cases extremely muddled, now and then extremely basic; (b) the particular course of thought processes, drives, justifications and states of mind. The particular bearing of thought processes and drives is found out from meanings of the lawful codes as positive or troublesome.

Idea Of White Collar Crimes - A desk wrongdoing is a moderately more up to date idea. It is related with the prominent criminologist, E. H. Sutherland. He displayed his idea of "clerical" wrongdoing in his deliver to the American sociological society in 1939, which was later distributed as "cushy culpability" in American sociological audit in 1940. He later composed his book entitled "White Collar Crimes" in 1949.

Reasons for White Collar Crimes - Since the distinguishing proof of desk violations as the imperative zone of study, numerous reasons for its bonus in the public arena have additionally been recognized. Investigation of the reasons for cushy violations is likewise imperative since, at that point just we will have the capacity to recommend the measures to control the developing hazard of salaried wrongdoings, for example, defilement, pay off, proficient offense, legitimate unfortunate behavior, unreliability of the huge organizations and so forth "desk wrongdoing must be put on an indistinguishable balance from 'mass rebellion' of laws in atmosphere of general assessment, which view business rehearses as fundamental for fruitful execution regardless of whether they are illicit. The outcome is 'mass balance' of lawfulness which offer ascent to a gathering standard which endorses professional wrongdoings as 'typical reaction'.

According to the 29th Law Commission Report, "the failure of all segment of society to acknowledge in full the need of exclusive expectation of moral conduct) brings about the development and development of white apprehended and financial violations, renders implementation of law, more troublesome".

White Collar Crimes In Certain Professions - A portion of the callings including specialized mastery aptitude give adequate chances to desk culpability. Those incorporate therapeutic calling, building, lawful practice, private instructive establishments and so on.

Medical Profession - Clerical violations which are ordinarily dedicated by people having a place with restorative calling incorporate issuance of false therapeutic endorsement, helping illicit fetus removal, mystery administration to dacoits by giving master conclusion prompting their exoneration and offering test medication and solution to patients or physicists. Late strategies embraced by the individuals from this calling in treatment of their patients with a view to removing colossal aggregates from them has turned into an acknowledged standard, especially with those therapeutic men who don't have a decent practice or have

*B.B.A.L.L.B. Xth Sem Student, Faculty Law College, Uttaranchal University, Dehradun (Uttarakhand) INDIA
** Assistant Professor, Law College Dehradun, Uttaranchal University, Dehradun (Uttarakhand) INDIA

just a peripheral winning.

Phony and deluding promoting is yet another zone in which the white guest crooks work. They make illicit and misdirecting cases of therapeutic cure through notices in daily papers, magazines, radio and TV in this manner adding to human hopelessness.

Numerous patent solutions are useless as well as hurtful. Comparative notices for makeup and contaminated nourishment are likewise far reaching practically speaking which are damaging to open helth[1]. These people may not infringe upon the letter of the law but rather, by abusing its soul, they perpetrate wrongdoings which are hostile to social as well as damaging to general wellbeing .

Engineering - In the designing calling, underhand dealings with temporary workers and providers, going of sub-standard works and materials and support of sham records of work-charged work are a portion of the regular cases of clerical wrongdoing. Outrages of this kind are accounted for in daily papers and magazines relatively consistently. Development of structures, streets, trenches, dams and extensions with sub-standard material imperils open wellbeing as well as results into gigantic misfortune to open exchequer . "it is presented that numerous ventures of ward amusements couldn't be finished in time on account of outrages of this sorts."

Legal Profession - In India, the attorneys calling isn't looked with much regard nowadays. There are two clear explanations behind this. The crumbling guidelines of lawful training and exploitative practices turned to by the individuals from lawful calling to get clientage are for the most part in charge of the corruption of this calling which was once thought to be one of the noblest jobs.

Educational Institutions - However another field where desk lawbreakers work with exemption are secretly run instructive establishments in this nation. The overseeing assemblages of these organizations figure out how to secure extensive aggregates by method for government awards or money related guide by submitting invented and counterfeit insights about their establishments. The instructors and other staff working in these organizations get a pitiful pay far not as much as what they really sign for, in this manner enabling an edge for the brilliant to snatch tremendous sum in this illicit way.

White Collar Crimes in Business Deals - The expression "office violations" was begat by Sutherland primarily for the business world and it is as yet wild. There have dependably been examples of infringement of trust. Sutherland made cautious investigation of various vast partnerships and business houses in United States and found that they were associated with unlawful contracts, blends and tricks in restriction of exchange, deception in publicizing, encroachment against copyrights and exchange marks, out of line work works on, influencing open authorities et cetera. The general population scarcely knows the craftiness of business culprits as they regard it as not very vital for their motivation. Sutherland credited the most astounding level of guiltiness to business world which incorporate exchange, agents and industrialists.

Criticism of Sutherland's Views on White Collar Crimes - Sutherland's meaning of cushy wrongdoing has evoked feedback from specific quarters. Coleman and Moynihan called attention to that absence of positive criteria for figuring out who are 'people of respectability and status' has made Sutherland's meaning of professional wrongdoing generally controvercial. It appears to be likely that what Sutherland implied by this is nonattendance from feelings for wrongdoings other than cushy violations. The component of 'high societal position's as utilized as a part of the definition additionally prompts disarray: unmistakably it has far smaller significance than is given to that term in regular utilization. Sutherland himself did not adhere to this significance and included robberies and cheats conferred by center or even lower white collar class laborers in course of their business or work. A few pundits have recommended that a few wrongdoings ought to have been called as 'word related violations' as opposed to being named as 'clerical violations'. It is further contended that in actuality the vital "component in the meaning of office wrongdoing isn't the financial status of the individual, but instead the sort of wrongdoing and the conditions of its bonus. These ordinarily incorporate appropriating, false bookkeeping, pay off; misappropriation and so on tax-avoidance isn't a valid office wrongdoing, at any rate regarding Sutherland's definition in light of the fact that in spite of the fact that related with work, it isn't submitted over the span of an occupation. A few commentators additionally assert that such infringement come surprisingly close to the Special Commition, Tribunals and Boards rather than typical criminal equity chairmen. In this manner, entirely, they can't come about into conviction of the guilty party and thus he can't be called 'criminal' in genuine sence of the term. Remarking on this part of the issue, tappan watches that treating individual carrying out office wrongdoing as criminal would mean veering off from lawful meaning of wrongdoing while individual esteem thought of the head would increase essential set up of accuracy and clearness of legitimate arrangements in choosing such cases. Sutherland, in any case, legitimizes the extraordinary technique of trial for desk hoodlums by regulatory organizations on the ground that it would shield the guilty party from the disgrace of criminal indictment[2] .

Another feedback regularly progressed against Sutherland's meaning of clerical wrongdoing is that incorporate even those infringement of law which are not dedicated in course of occupation or calling and these infringement don't really have a place with upper strata of society or the purported 'renowned gatherings'. For instance, tax-avoidance isn't conferred just by individual of high status yet it can be submitted by people having a place with center or even lower strata of society.

However another protest against the meaning of clerical wrongdoing is that it doesn't really require mens rea which is a fundamental element of a wrongdoing. The

precept of mens rea in view of custom-based law has no application to statutory offenses in India and the necessity of blameworthy personality might be prohibited either explicitly or by suggestion in such cases [3].

Conclusion - Sutherland has given another measurement to the comprehension of criminology. It was he, who began the efficient investigation of the violations carried out by high society individuals, to be specific financial wrongdoings. These violations by and large go unheated and unpunished. Regardless of whether these crooks are rebuffed, still the discipline is light. This class of hoodlums appreciates the sensitivity of judges in the courts.

Mindfulness should be spread quick against the financial wrongdoings, for example, defilement. Quickly developing media can assume an essential part in spreading mindfulness against the hazard of financial violations. It is critical to advance an extraordinary system to bargain independently with these violations. Those organizations managing the financial violations, require extraordinary preparing to manage the risk.. These offices ought to be avoided the political impact. Laws ought to be made more stringent to manage these wrongdoings. It is imperative and in light of a legitimate concern for the general public to manage this class of violations as viably as could be expected under the circumstances. It is difficult to battle with the hazard without the more extensive open cooperation. Political will must be extremely solid in the event that we need to accomplish the objective in speedy time.

References :-

1. V. N. Paranjape, *Criminology and Penology*, 14^{th} Ed. Central Law Publication, 2010, pp. 122-125
2. Walter Reckless : The Crime Problem, p. 345
3. Coleman & Moynihan : Understanding Criminal Data (1996) pp. 8-10

****

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. संगीता अग्रवाल* पारूल शर्मा **

प्रस्तावना – भारत में महिलाओं की स्थिति ने पिछली कुछ सदियों में कई बड़े बदलावों का सामना किया है, प्राचीन काल में पुरूषों के साथ बराबरी की स्थिति से लेकर मध्य युगीन काल में निम्न स्तरीय जीवन और साथ ही कई सुधारकों द्वारा समान अधिकारों को बढ़ावा दिए जाने तक, भारत में महिलाओं का इतिहास काफी गतिशील रहा है। आधुनिक भारत में महिलाएं राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, लोकसभा अध्यक्ष, प्रतिपक्ष की नेता आदि जैसे शीर्ष पदो पर आसीन हुई है।

'पता रक्षति कौमारे, भर्ता रक्षति भौवन।
पुत्रो रक्षति वार्हक्ये, न स्त्री स्वातंत्रय भर्हति।'

नर तथा नारी सृष्टि विकास में एक दूसरे के पूरक है, नर के साथ नारी का सृष्टि में आरम्भिक काल से संबंध रहा है लेकिन प्राचीन भारतीय संस्कृति में वर्तमान की अपेक्षा नारी की स्थिति अति गौरवपूर्ण थी। रामायण काल तक यज्ञो आदि के समायोजन तथा सामाजिक अनुष्ठानों के पवित्र अवसरों पर नारी की उपस्थिति अति अनिवार्य समझी गई।

पतंजलि और कात्यायन जैसे प्राचीन भारतीय व्याकरणविदो का कहना है कि प्रारम्भिक वैदिक काल में महिलाओं को शिक्षा दी जाती थी। ऋगवैदिक ऋचाए यह बताती है कि महिलाओं की शादी एक परिपक्व उम्र में होती थी और संभवत: उन्हें अपना पति चुनने की भी आजादी थी। ऋगवैदिक और उपनिषद जैसे ग्रन्थ कई महिला और साध्वियों और संतो के बारे में बताते है जिनमें गार्गी और मैत्रेयी के नाम उल्लेखनीय है।

भारतीय स्मृतिकार मनु ने कहा है कि –

'यत्र नार्यस्तु रमन्ते तत्र देवता'

अर्थात जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ पर देवता वास करते है और जहाँ नारी का आदर नहीं होता है वहाँ पर ग्रहस्थ असफल रहता है। प्राचीन भारतीय संस्कृति में नारी को गायत्री सावित्री, सरस्वती, लक्ष्मी आदि के रूप में पूजा जाता था। भूतकाल में नारी को जब भी अवसर मिला वह पुरूषों से कभी भी पीछे नहीं रही। पुरातन काल में मनु की पुत्री इला ने अपने पिता को पुरोहित बनकर धर्म क्षेत्र में प्रवेश कर उसे आगे बढाया।

समस्या कथन – समस्या कथन से तात्पर्य होता है –समस्या को शीर्षक देने से। शीर्षक जो प्रस्तावित अनुसंधान की लिखित रूपरेखा के आरम्भ में लिखा जाता है प्रस्तुत शोध की समस्या कथन निम्न है :–

'ग्रामीण व शहरी क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता का तुलनात्मक अध्ययन'

शोध के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध के निम्न उद्देश्य निर्धारित किये गये है :–

1. ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतन्त्रता का अध्ययन करना।
2. शहरी क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतन्त्रता का अध्ययन करना।
3. ग्रामीण व शहरी क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनाएँ :

1. ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता का स्तर सामान्य ।
2. शहरी क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. ग्रामीण व शहरी क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता में तुलनात्मक कोई सार्थक अन्तर नही है।

शोध निष्कर्ष :

1. ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता का स्तर सामान्य ।

निष्कर्ष :

1. ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता का स्तर सामान्य पाया गया। अत: परिकल्पना को स्वीकृत किया जाता है।
2. शहरी क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. शहरी क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया। अत: परिकल्पना 2 को स्वीकृत किया जाता है।
4. ग्रामीण व शहरी क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता में तुलनात्मक कोई सार्थक अन्तर नही है।

निष्कर्ष – ग्रामीण व शहरी क्षेत्र की महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता में तुलनात्मक कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया। अत: परिकल्पना 3 को स्वीकृत किया जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. पाठक, पी.डी. (2010) : 'शिक्षा मनोविज्ञान', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
2. जायसवाल, सीताराम (2012) : 'व्यक्तित्व का मनोविज्ञान', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
3. उपाध्याय, विनोद कुमार (2009) : 'अधिगम का मनोसामाजिक आधार एवं शिक्षण', अरिहन्त शिक्षा प्रकाशन, जयपुर
4. कपिल, एच.के. (2008) : 'सांख्यिकी के मूल तत्व', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2
5. अग्रवाल विपिन (2010) : 'मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2

* अस्सिटेन्ट प्रोफेसर, श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** एम.एड. छात्रा, श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

उच्च माध्यमिक स्तर के किशोर विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य और व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. संगीता अग्रवाल* विजय प्रताप सिंह **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में उच्च माध्यमिक स्तर के किशोर विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य और व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। न्यादर्श के रूप में 100 विद्यार्थियों का चयन किया गया, जिसमें 50 बालकों एवं 50 बालिकाओं का चयन किया गया है। शोध विधि के लिए सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया। आँकड़ों के एकत्रीकरण के लिए Mental Health Battery (MHB) Test एवं Dimentional Personality Inventory (DPI) Test का प्रयोग किया गया है। आँकड़ों के विश्लेषण हेतु सांख्यिकी प्रविधियों के रूप में मध्यमान, मानक विचलन तथा टी-मूल्य का प्रयोग किया गया है। विश्लेषण में पाया गया कि उच्च माध्यमिक स्तर के सरकारी विद्यालय के किशोर बालक-बालिकाओं में मानसिक स्वास्थ्य के आधार पर कोई अन्तर नहीं पाया जाता है एवं गैर-सरकारी विद्यालय के किशोर बालक- बालिकाओं में भी मानसिक स्वास्थ्य के आधार पर कोई अन्तर नहीं पाया जाता है।

प्रस्तावना – शिक्षा एक मानवीय प्रक्रिया है, जो मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु तक अर्थात् जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। इसे सीमित शब्दों में वर्णित नहीं किया जा सकता है। समय के साथ अच्छा जीवन गुजारने के लिए शिक्षा मनुष्य के लिए आवश्यक गुण बन गया है। जो व्यक्ति के सदाचारी जीवन और जीवन की नागरिकता के नेतृत्व के लिए महत्वपूर्ण है। वास्तविक अर्थों में शिक्षा मनुष्य को पूर्ण बनाती है, जो न केवल अपने लिए अपितु देश एवं समाज के लिए लाभदायक सिद्ध होता है।

शिक्षा किशोर बालक-बालिकाओं की योग्यताओं व क्षमताओं का अधिकतम प्रयोग करते हुए उसके व्यक्तित्व का विकास करती है। शिक्षा के द्वारा ही किशोर बालक अपने उत्तारदायित्वों का निर्वाह सफलतापूर्वक कर पाता है। किशोर बालक के समस्त गुण उसके व्यवहार का दर्पण है। शिक्षा सम्पूर्ण रूप में बालक के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में अपना प्रयोजन रखती है। व्यक्तित्व में मानव को सम्पूर्ण बनाने से सम्बन्धित सभी पक्ष समाहित होते हैं। व्यक्तित्व समूचे व्यवहार को प्रभावित करता है। व्यक्तित्व व्यक्ति के सामाजिक, शारीरिक, मानसिक तथा संवेगात्मक संरचना का योग है, जो इच्छाओं, रूचियों, आदर्शों, व्यवहारों, तौर-तरीकों, ढंगों, आदतों, स्वभावों और लक्षणों में प्रकट किया जाता है। शिक्षा का सीधा सम्बन्ध विद्यार्थियों के स्वास्थ्य से भी है। यदि बालक का मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा होगा तभी वह समुचित रूप से वांछित शिक्षा ग्रहण कर सकता है। अरस्तु के शब्दों में 'स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है' अर्थात् कहने का तात्पर्य है कि अच्छी शिक्षा प्राप्त करने के लिए छात्रों को शारीरिक एवं मानसिक दोनों रूप से स्वस्थ होना अति आवश्यक है। अगर बालक इन दोनों रूप में स्वस्थ नहीं है तो उसे शिक्षा प्राप्त करने में बहुत सारी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। मन और मस्तिष्क का स्वस्थ रहकर कार्य करने की क्षमता बनाये रखना ही मानसिक स्वास्थ्य कहलाता है। अत: मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति वातावरण से सामंजस्य स्थापित करता हुआ अपने परिवार व समाज की उन्नति में योगदान दे सकता है।

शोध की आवश्यकता एवं महत्व – राष्ट्र की भावी पीढ़ियों के वांछित विकास हेतु शिक्षा अपरिहार्य है। विद्यालयों में अध्ययनरत किशोर छात्र-छात्राओं के अध्ययन स्तर का सीधा सम्बन्ध देश की प्रगति से है। यदि विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों को स्वच्छ एवं पूर्ण शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था कर दी जाए तो देश के विकास में वांछित सहयोग दिया जा सकता है। किशोर अवस्था तक बालक के व्यक्तित्व में स्थायित्व आने लगता है। किशोर अवस्था में बालक समाज के लोगों के साथ सामंजस्यपूर्ण निर्वाह करना सीख लेता है। इसके लिए विद्यार्थियों का स्वास्थ्य उत्तम होना चाहिए। न केवल शारीरिक रूप से बल्कि मानसिक रूप से भी स्वस्थ होना चाहिए। तभी वह अपने व्यक्तित्व का सन्तुलित विकास कर सकता है। वह पूर्णतया समायोजित, आत्मविश्वासी, आत्मनियंत्रित, संवेगात्मकता से पूर्ण होना चाहिए, परन्तु यदि बालकों में इन गुणों का अभाव है तो वह मानसिक रूप से अस्वस्थ व अधूरे व्यक्तित्व वाला व्यक्ति माना जाएगा।

अत: इस लघु शोध में उच्च माध्यमिक कक्षाओं के किशोर बालक-बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य का उनके व्यक्तित्व पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया गया है, जो कि शोध की महत्वपूर्ण एवं विशेष आवश्यकता है। अत: इस प्रकार व्यक्तित्व का मानसिक स्वास्थ्य के संदर्भ में अध्ययन एक आवश्यक विषय है।

समस्या कथन – प्रस्तुत शोध का समस्या कथन निम्न प्रकार से है –

'उच्च माध्यमिक स्तर के किशोर विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य और व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन।'

प्रस्तुत शोध के उद्देश्य – शोधकर्त्ता ने अपने शोध में निम्नलिखित उद्देश्य सम्मिलित निर्धारित किए हैं –

1. सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं में मानसिक स्वास्थ्य के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. गैर सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं में मानसिक स्वास्थ्य के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन करना।

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर, श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** एम.एड. छात्र, श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

3. सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के व्यक्तित्व के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. गैर सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के व्यक्तित्व के आधाार पर तुलनात्मक अध्ययन करना।

प्रस्तुत शोध की परिकल्पनाएँ – शोधकर्त्ता ने अपने शोध में निम्नलिखित परिकल्पनाएँ निर्धारित की हैं :

1. सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं में मानसिक स्वास्थ्य के आधार पर कोई सार्थक अंतर नहीं है।
2. गैर सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं में मानसिक स्वास्थ्य के आधार पर कोई सार्थक अंतर नहीं है।
3. सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं में व्यक्तित्व के आधार पर कोई सार्थक अंतर नहीं है।
4. गैर सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं में व्यक्तित्व के आधाार पर कोई सार्थक अंतर नहीं है।

शोध में प्रयुक्त विधि – प्रस्तुत शोध में शोधकर्त्ता द्वारा **सर्वेक्षण विधि** का प्रयोग किया गया है।

शोध में प्रयुक्त न्यादर्श :

1. प्रस्तुत शोध में श्रीगंगानगर जिले के उच्च माध्यमिक स्तर के 100 विद्यार्थियों को चयनित किया गया है।
2. प्रस्तुत शोध में 50 किशोर बालकों एवं 50 किशोर बालिकाओं को चयनित किया गया है।
3. प्रस्तुत शोध में 50 किशोर बालकों में से 25 किशोर बालक सरकारी विद्यालयों से एवं 25 किशोर बालक गैर-सरकारी विद्यालयों से एवं 50 किशोर बालिकाओं में से 25 किशोर बालिकाएँ सरकारी विद्यालयों से एवं 25 किशोर बालिकाएँ गैर-सरकारी विद्यालयों से चयनित की गई हैं।

शोध में प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोध में शोधकर्त्ता ने तथ्यों के संकलन हेतु निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग किया है :-

1. Mental Health Battery (MHB) Test - Dr. Arun Kumar Singh, Dr. Alpana Sen Gupta (Patna)
2. Dimentional Personality Inventory (DPI) Test - Dr. Mahesh Bhargava

शोध में प्रयुक्त साँख्यिकी :

(1) मध्यमान
(2) प्रमाणिक विचलन
(3) सी/टी-मूल्य

तथ्यों का विष्लेषण :-

सारणी 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या – सारणी 1 द्वारा सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य के आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। सारणी का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी आंकड़ों का मध्यमान 83.70 एवं 82.56 तथा मानक विचलन क्रमश: 9.30 एवं 9.24 प्राप्त हुआ है तथा मानक त्रुटि 2.62 के आधार पर सी-मूल्य 0.43 प्राप्त हुआ है, जो स्वतन्त्रता की कोटि 48 के आधार पर टी-तालिका के स्तर 0.01 के मान 2.68 और 0.05 के मान 2.01 से कम है, जिससे निष्कर्ष निकलता है कि सरकारी विद्यालय के किशोर बालक-बालिकाओं में मानसिक स्वास्थ्य के आधार पर कोई अन्तर नहीं है। इस आधार पर परिकल्पना संख्या 1 'सरकारी विद्यालय के किशोर बालक एवं बालिकाओं में मानसिक स्वास्थ्य के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है', स्वीकृत होती है।

सारणी 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या – सारणी 2 द्वारा गैर-सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य के आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। सारणी का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि गैर-सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी आंकड़ों का मध्यमान 85.50 एवं 83.50 तथा मानक विचलन क्रमश: 17.40 एवं 16.00 प्राप्त हुआ है तथा मानक त्रुटि 4.73 के आधार पर सी-मूल्य 0.42 प्राप्त हुआ है, जो स्वतन्त्रता की कोटि 48 के आधार पर टी-तालिका के स्तर 0.01 के मान 2.68 और 0.05 के मान 2.01 से कम है, जिससे निष्कर्ष निकलता है कि गैर-सरकारी विद्यालय के किशोर बालक-बालिकाओं में मानसिक स्वास्थ्य के आधार पर कोई अन्तर नहीं है। इस आधार पर परिकल्पना सं. 2 'गैर-सरकारी विद्यालय के किशोर बालक एवं बालिकाओं में मानसिक स्वास्थ्य के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है', स्वीकृत होती है।

सारणी 3 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या – सारणी 3 द्वारा सरकारी विद्यालयों के किशोर बालक व बालिकाओं के व्यक्तित्व के आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। सारणी का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के व्यक्तित्व सम्बन्धी आंकड़ों का मधयमान 70.50 एवं 80.10 तथा मानक विचलन क्रमश: 14.10 एवं 14.70 प्राप्त हुआ है तथा मानक त्रुटि 4.07 के आधार पर सी-मूल्य 2.36 प्राप्त हुआ है, जो स्वतन्त्रता की कोटि 48 के आधार पर टी-तालिका के स्तर 0.01 के मान 2.68 और 0.05 के मान 2.01 से अधिाक है, जिससे निष्कर्ष निकलता है कि सरकारी विद्यालय के किशोर बालक-बालिकाओं में व्यक्तित्व के आधार पर सार्थक अन्तर है। इस आधार पर परिकल्पना सं. 3 'सरकारी विद्यालय के किशोर बालक एवं बालिकाओं में व्यक्तित्व के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है', अस्वीकृत होती है।

सारणी 4 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या – सारणी 4 द्वारा गैर-सरकारी विद्यालयों के किशोर बालक व बालिकाओं के व्यक्तित्व के आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। सारणी का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि गैर-सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के व्यक्तित्व सम्बन्धी आंकड़ों का मधयमान 84.88 एवं 79.00 तथा मानक विचलन क्रमश: 7.32 एवं 10.99 प्राप्त हुआ है तथा मानक त्रुटि 2.64 के आधार पर टी-मूल्य 2.23 प्राप्त हुआ है, जो स्वतन्त्रता की कोटि 48 के आधार पर टी-तालिका के स्तर 0.01 के मान 2.68 और 0.05 के मान 2.01 से अधिाक है, जिससे निष्कर्ष निकलता है कि गैर-सरकारी विद्यालय के किशोर बालक-बालिकाओं में व्यक्तित्व के आधार पर सार्थक अन्तर है। इस आधाार पर परिकल्पना सं. 4 'गैर-सरकारी विद्यालय के किशोर बालक एवं बालिकाओं में व्यक्तित्व के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है', अस्वीकृत होती है।

शोध निष्कर्ष – सरकारी व गैर सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य से सम्बन्धी आँकड़ों का विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि किशोर बालक – बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य में

कोई सार्थक अन्तर नहीं है क्योंकि वर्तमान समय में परिवार, विद्यालयों एवं सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में किशोर बालक व बालिकाओं पर समान रूप से ध्यान दिया जाता है, जिससे उनके मानसिक स्वास्थ्य में कोई विशेष अन्तर नहीं आता है।

सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में किशोर बालक व बालिकाओं में व्यक्तित्व के आधार पर भी कोई सार्थक अन्तर नहीं है क्योंकि सरकारी विद्यालय में ही नहीं वरन् गैर-सरकारी विद्यालयों में भी बालकों के साथ-साथ बालिकाओं की किशोरावस्था में व्यक्तित्व से सम्बन्धित समस्याओं का पर्याप्त ध्यान रखा जाता है और उनके समाधान के लिए उन्हें पर्याप्त अपनत्व का अनुभव करवाया जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. पाठक, पी.डी. (2010) : 'शिक्षा मनोविज्ञान', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
2. जायसवाल, सीताराम (2012) : 'व्यक्तित्व का मनोविज्ञान', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
3. उपाध्याय, विनोद कुमार (2009) : 'अधिगम का मनोसामाजिक आधार एवं शिक्षण', अरिहन्त शिक्षा प्रकाशन, जयपुर
4. कपिल, एच.के. (2008) : 'सांख्यिकी के मूल तत्व', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा-2
5. अग्रवाल विपिन (2010) : 'मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा-2

सारणी 1 : सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य को दर्शाती हुई सारणी

क्रं.	विद्यार्थी	विद्यार्थियों की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	परिणाम
1.	सरकारी विद्यालय के किशोर बालक	25	83.70	9.30	2.62	0.43	स्वीकृत
2.	सरकारी विद्यालय की किशोर बालिकाएँ	25	82.56	9.24			

सारणी 2 : गैर सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य को दर्शाती हुई सारणी

क्रं.	विद्यार्थी	विद्यार्थियों की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	परिणाम
1.	गैर सरकारी विद्यालय के किशोर बालक	25	85.50	17.40	4.73	0.42	स्वीकृत
2.	गैर सरकारी विद्यालय की किशोर बालिकाएँ	25	83.50	16.00			

सारणी 3 : सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के व्यक्तित्व को दर्शाती हुई सारणी

क्रं.	विद्यार्थी	विद्यार्थियों की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	परिणाम
1.	सरकारी विद्यालय के किशोर बालक	25	70.50	14.10	4.07	2.36	स्वीकृत
2.	सरकारी विद्यालय की किशोर बालिकाएँ	25	80.10	14.70			

सारणी 4 : गैर-सरकारी विद्यालय के किशोर बालक व बालिकाओं के व्यक्तित्व को दर्शाती हुई सारणी

क्रं.	विद्यार्थी	विद्यार्थियों की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	परिणाम
1.	गैर सरकारी विद्यालय के किशोर बालक	25	84.88	7.32	2.64	2.23	स्वीकृत
2.	गैर सरकारी विद्यालय की किशोर बालिकाएँ	25	79.00	10.99			

****

जयपुर जिले के उच्च प्राथमिक स्तर पर हिन्दी पाठ्यक्रम में सम्मिलित कहानियों में निहित मूल्यों के प्रति छात्रों एवं शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन

डॉ. संगीता अग्रवाल* रीता कुमारी**

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में जयपुर जिले के उच्च प्राथमिक स्तर पर हिन्दी पाठ्यक्रम में सम्मिलित कहानियों में निहित मूल्यों के प्रति विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन किया गया है। न्यादर्श के रूप में 100 शिक्षकों एवं विद्यार्थियों का चयन किया गया, जिसमें 50 शिक्षकों एवं 50 छात्रों का चयन किया गया है। शोध विधि के लिए सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया। आँकड़ों के एकत्रीकरण के लिए अध्यापकों हेतु अभिमतावली (प्रश्नावली) – स्वनिर्मित एवं विद्यार्थियों हेतु अभिमतावली (प्रश्नावली) – स्वनिर्मित का प्रयोग किया गया है। आँकड़ों के विश्लेषण हेतु सांख्यिकी प्रविधियों के रूप में मध्यमान, मानक विचलन तथा टी–मूल्य का प्रयोग किया गया है। विश्लेषण में पाया गया कि उच्च प्राथमिक विद्यालय के हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के प्रति छात्रों एवं शिक्षकों के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है एवं उच्च प्राथमिक विद्यालय के हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के प्रति महिला व पुरुष अध्यापकों एवं छात्र व छात्राओं के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

प्रस्तावना – प्राचीन समय में शिक्षक की भूमिका ईश्वर के रूप में थी। शिक्षक मोक्ष मार्ग का दाता था तथा शिक्षा मोक्ष प्राप्ति का मार्ग थी। प्राचीनकालीन शिक्षा में आध्यात्मिकता पर विशेष बल दिया जाता था, लेकिन अब यह भौतिकता पर केन्द्रित हो गई है। शिक्षार्थियों का सर्वांगीण विकास सुयोग्य, सच्चरित्र, सात्विक वृत्ति के शिक्षकों के माध्यम से ही सम्भव था। उन शिक्षकों के मूल में सांस्कृतिक आध्यात्मिक चेतना का दीपक प्रज्वलित था, फलस्वरूप समाज में शिक्षक का चयन, उसके व्यवहार की प्रभावशीलता तथा समाज के विकास में उसके कार्यो की भूमिका विशिष्ट मिशाल के रूप में होती थी। शिक्षक वृत्ति को आराध्य एवं पवित्र माना जाता था तथा शिक्षक की सामाजिक प्रतिबद्धताएँ उच्च स्तर पर पाई जाती थी।

अध्यापक एक प्रकाशमान आदित्य के सदृश है, जो अपने ज्ञान एवं शिक्षा की स्वर्णिम रश्मियों से अपने शिष्य को अज्ञान एवं अशिक्षा के तिमिर से मुक्त करता है। इतिहास साक्षी है कि भारत की गौरवमयी गुरू परम्परा के फलस्वरूप ही द्रोणाचार्य ने अर्जुन एवं चाणक्य ने चन्द्रगुप्त जैसे दो महान पुरूष इस भारत को प्रदान किये। गुरू का महत्व सर्वकालिक है। इसे नकारना, परमात्मा के अस्तित्व को नकारने के समान है। एक कुशल अध्यापक ही एक विद्वान, धीर, वीर, तेजस्वी, राष्ट्रभक्त धैर्यशील, क्षमाशील व्यक्तित्व का निर्माण कर सकता है।

मूल्य – वर्तमान मानव की कुण्ठा का एक मात्र कारण मूल्यों का अभाव है। मूल्यों के अभाव में हम घोर स्वार्थी हो गए हैं। प्राचीन मूल्यों प्रेम, दया, सहयोग, परोपकार पर घोर संकट उत्पन्न हो गया है। आए दिन समाचार पत्रों में चोरी, लूट–पाट, बलात्कार, पुत्र द्वारा पिता की हत्या, पिता द्वारा पुत्री की हत्या, कर्मचारियों द्वारा काम के बदले रिश्वत लेते पकड़े जाना, बम विस्फोट, मन्दिरों, मस्जिदों, गुरूद्वारों पर हमले, अफीम, स्मैक, इत्यादी के अवैध व्यापार करते पकड़े जाना, स्त्रियों एवं बच्चों की खरीद–बिक्री, भ्रुण हत्या, दहेज हत्या, सांसदों द्वारा प्रश्न पूछने के बदले रिश्वत लेना, स्टाम्प घोटाला, चारा घोटाला, तेल घोटाला, इत्यादि समाचार भारत में मूल्यहीनता के संजीव उदाहरण हैं।

बालकों की शिक्षा एवं संस्कारों का गुरूतर दायित्व शिक्षा संस्थानों का है। शिक्षा का मूल उद्देश्य बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास है, जो शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं भावात्मक पक्षों से मिल कर बनता है।

कहानी –हिन्दी साहित्य का सबसे अधिक मनोरंजन अंग कहानी है। आदिकाव्य से ही कहानी मनोरंजन तथा उपदेश का साधन रही है। कहानी मानव–मन में विद्यमान 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' को उभारकर उसे आचरण में ढालने के लिए प्रेरित करती है। जो कार्य ढेरों साहित्य नहीं कर सकता वह अकेली कहानी कर दिखाती है। कहानी 'गागर में सागर' होती है उसके माध्यम से जीवन की जटिलताओं एवं व्यापक प्रभावशाली घटनाओं को कल्पनाओं के सहारे कथानक में पिरोकर भाषा के धरातल पर उपस्थित किया जाता है उपन्यास की भांति उसमें मानव जीवन का सम्पूर्ण तथा वृहत रूप दिखाने का प्रयास नहीं किया जाता, न उसमें उपन्यास की भांति सभी रसों का समावेश होता है। कहानी एक लघु गद्य रचना है जिसमें मानव जीवन एवं चरित्र का वर्णन बड़े ही हृदयस्पर्शी, कलात्मक एवं आकर्षक रूप में होता है।

शोध की आवश्यकता एवं महत्व – आज मानव मूल्य एवं सामाजिक दायित्व का बोध दिनो–दिन क्षीण हो रहा है। प्रत्येक जगह स्वार्थलोलुप, स्वकेन्द्रित संहारक एवं विघटनकारी प्रवृत्तियों का बोलबाला है। मानव प्रेम, आस्था एवं विश्वास के अभाव में लुप्त होता जा रहा है। आत्मिक विकास से उसका कोई सरोकार नहीं रहा है। इसी के अभाव में आज देश में चारों ओर अराजकता, भ्रष्टाचार एवं हिंसा फैली है। भ्रष्टाचार व अपराधों के ग्राफ में भारत का स्थान प्रमुख श्रेणी में आ गया है। इन सब सामाजिक दुर्गुणों के उन्नमूलन हेतु मूल्य परक शिक्षा की आवश्यकता है और इन सब समस्याओं

* अस्सिटेन्ट प्रोफेसर, श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** एम.एड. छात्रा, श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

का मूलभूत कारण बालकों में मूल्यों का ह्रास है। वर्तमान समय में नवीन पीढ़ी में मूल्यों में गिरावट नजर आ रही है। अत: समस्या की ज्वलन्तता को देखते हुए शोधकर्त्री को इस अध्ययन की आवश्यकता महसूस हुई।

मूल्यों के आधार पर ही समाज में एक आदर्श स्थिति या व्यवस्था बनाये रखना संभव होगा। मूल्यों के संगठन द्वारा ही समाज अपनी मान्यताओं की रक्षा करता है तथा यह मूल्य ही समाज को वे नैतिक सूत्र प्रदान करते हैं, जो कि समाज के विभिन्न व्यक्तियों को परस्पर, एक साथ बांधते हैं। व्यक्ति के व्यवहारों को नियंत्रित एवं सही मार्ग की ओर निर्देशित करने में मूल्य महत्वपूर्ण योग देते हैं। मानवीय मूल्य व्यक्ति के तनावों एवं संघर्षो को सुलझाते हुए आन्तरिक सुसंगठन एवं सम्बद्धता उत्पन्न करते हैं।

अत: इन्हीं समस्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए शोधकर्त्री द्वारा प्रस्तुत विषय पर शोध कार्य करने का निर्णय लिया गया।

समस्या कथन – प्रस्तुत शोध का समस्या कथन निम्न प्रकार से है –

'जयपुर जिले के उच्च प्राथमिक स्तर पर हिन्दी पाठ्यक्रम में सम्मिलित कहानियों में निहित मूल्यों के प्रति छात्रों एवं शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन।'

प्रस्तुत शोध के उद्देश्य – शोधकर्त्री ने अपने शोध में निम्नलिखित उद्देश्य सम्मिलित निर्धारित किए हैं :

1. उच्च प्राथमिक विद्यालय में हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के मूल्यों के प्रति शिक्षकों व छात्रों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
2. उच्च प्राथमिक विद्यालय में हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के मूल्यों के प्रति महिला व पुरुष अध्यापकों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
3. उच्च प्राथमिक विद्यालय में हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के मूल्यों के प्रति छात्र व छात्राओं के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।

प्रस्तुत शोध की परिकल्पनाएँ – शोधकर्त्री ने अपने शोध में निम्नलिखित परिकल्पनाएँ निर्धारित की हैं :

1. उच्च प्राथमिक विद्यालय में हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के मूल्यों के प्रति शिक्षकों व छात्रों के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. उच्च प्राथमिक विद्यालय में हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के मूल्यों के प्रति महिला व पुरुष अध्यापकों के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं है।
3. उच्च प्राथमिक विद्यालय में हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के मूल्यों के प्रति छात्र व छात्राओं के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं है।

प्रस्तुत शोध की परिसीमाएँ – शोधकर्त्री ने अपने शोध में निम्नलिखित परिकल्पनाएँ निर्धारित की हैं :

1. प्रस्तुत शोध कार्य जयपुर जिले तक ही सीमित रखा गया है।
2. प्रस्तुत शोध उच्च प्राथमिक विद्यालयों तक ही सीमित रखा गया है।
3. प्रस्तुत शोध हिन्दी के शिक्षकों एवं छात्र–छात्राओं तक सीमित रखा गया है।
4. प्रस्तुत शोध गैर–सरकारी विद्यालयों तक ही सीमित रखा गया है।

शोध में प्रयुक्त चर – प्रस्तुत शोध में निम्नलिखित चरों पर अध्ययन किया गया है :–

(1) स्वतन्त्र चर :–		कहानियों में निहित मूल्य
(2) आश्रित चर :–		
(1) शिक्षक	1.	अध्यापक–अध्यापिकाएँ
(2) विद्यार्थी	2.	छात्र–छात्राएँ

शोध में प्रयुक्त विधि – प्रस्तुत शोध में शोधकर्त्री द्वारा **सर्वेक्षण विधि** का प्रयोग किया गया है।

शोध में प्रयुक्त न्यादर्श :

1. प्रस्तुत शोध हेतु कुल 100 शिक्षकों एवं विद्यार्थियों को चयनित किया गया है।
2. प्रस्तुत शोध हेतु 50 शिक्षकों एवं 50 विद्यार्थियों को चयनित किया गया है।
3. प्रस्तुत शोध हेतु 50 शिक्षकों में से 25 महिला अध्यापिकाओं एवं 25 पुरूष अध्यापकों को चयनित किया गया है।
4. प्रस्तुत शोध हेतु 50 विद्यार्थियों में से 25 छात्राओं एवं 25 छात्रों को चयनित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोध में शोधकर्त्री ने तथ्यों के संकलन हेतु निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग किया है :

1. अध्यापकों हेतु अभिमतावली (प्रश्नावली) – स्वनिर्मित
2. विद्यार्थियों हेतु अभिमतावली (प्रश्नावली) – स्वनिर्मित

शोध में प्रयुक्त साँख्यिकी :

1. मध्यमान
2. प्रमाप विचलन
3. टी परीक्षण

तथ्यों का विश्लेषण :–

सारणी 1 – (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या – सारणी 1 द्वारा उच्च प्राथमिक स्तर के हिन्दी पाठ्यक्रम में सम्मलित कहानियों में निहित मूल्यों के प्रति छात्रों एवम् शिक्षकों का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है। सारणी का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि उच्च प्राथमिक स्तर के हिन्दी पाठ्यक्रम में सम्मिलित कहानियों में निहित मूल्यों के प्रति छात्रों एवं शिक्षकों का मध्यमान 17.02 एवं 20.04 तथा मानक विचलन क्रमश: 3.02 एवं 2.50 प्राप्त हुआ है तथा मानक त्रुटि 0.56 के आधार पर सी–मूल्य 0.56 प्राप्त हुआ है, जो स्वतन्त्रता की कोटि 98 के आधार पर टी–तालिका के स्तर के मान 2.63 और 1.98 से कम है, जिससे निष्कर्ष निकलता है कि उच्च प्राथमिक विद्यालय के हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के प्रति छात्रों एवं शिक्षकों के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं है। इस आधार पर यह शून्य परिकल्पना संख्या 1 'उच्च प्राथमिक विद्यालय के हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के मूल्यों के प्रति छात्रों एवं शिक्षकों के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं है', स्वीकृत होती है।

सारणी 2 – (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या – सारणी 2 द्वारा उच्च प्राथमिक स्तर के हिन्दी पाठ्यक्रम में सम्मलित कहानियों में निहित मूल्यों के प्रति महिला व पुरुष अध्यापकों का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है। सारणी का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि उच्च प्राथमिक स्तर के हिन्दी पाठ्यक्रम में सम्मिलित कहानियों में निहित मूल्यों के प्रति महिला एवं पुरुष अध्यापकों का मध्यमान क्रमश: 18.36 व 19.20 तथा मानक विचलन क्रमश: 3.43 व 3.39 प्राप्त हुआ है तथा मानक त्रुटि 2.89 के आधार पर सी–मूल्य 0.29 प्राप्त हुआ है, जो स्वतन्त्रता की कोटि 48 के आधार पर टी–तालिका के स्तर के मान 2.65 और 2.01 से कम है, जिससे निष्कर्ष निकलता है कि उच्च प्राथमिक विद्यालय के हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के प्रति महिला एवं पुरुष अध्यापकों के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं है। इस आधार पर यह शून्य परिकल्पना संख्या 2 'उच्च प्राथमिक विद्यालय के हिन्दी पाठ्यक्रम में

उपस्थित कहानियों के मूल्यों के प्रति महिला एवं पुरुष अध्यापकों के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं है', स्वीकृत होती है।

सारणी 3 – (निचे पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या – सारणी 3 द्वारा उच्च प्राथमिक स्तर के हिन्दी पाठ्यक्रम में सम्मलित कहानियों में निहित मूल्यों के प्रति छात्र व छात्राओं का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है। सारणी का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि उच्च प्राथमिक स्तर के हिन्दी पाठ्यक्रम में सम्मिलित कहानियों में निहित मूल्यों के प्रति छात्र एवं छात्राओं का मध्यमान क्रमश: 18.24 व 18.96 तथा मानक विचलन क्रमश: 2.67 व 2.51 प्राप्त हुआ है तथा मानक त्रुटि 0.73 के आधार पर सी–मूल्य 0.99 प्राप्त हुआ है, जो स्वतन्त्रता की कोटि 48 के आधार पर टी–तालिका के स्तर के मान 2.65 और 2.01 से कम है, जिससे निष्कर्ष निकलता है कि उच्च प्राथमिक विद्यालय के हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के प्रति छात्र एवं छात्राओं के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं है। इस आधार पर यह शून्य परिकल्पना संख्या 3 'उच्च प्राथमिक विद्यालय के हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के मूल्यों के प्रति छात्र एवं छात्राओं के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं है', स्वीकृत होती है।

शोध निष्कर्ष – उच्च प्राथमिक स्तर पर हिन्दी पाठ्यक्रम में सम्मिलित कहानियों में निहित मूल्यों के प्रति छात्रों एवं शिक्षकों का दृष्टिकोण से सम्बन्धित आँकड़ों का विश्लेषण, मध्यमान, मानक विचलन एवं टी परीक्षण के आधार पर किया गया है। प्राप्त परिणामों से परिकल्पनाओं की सार्थकता की जाँच की गई है तथा परिणाम में पाया गया कि उच्च प्राथमिक स्तर पर हिन्दी पाठ्यक्रम में सम्मिलित कहानियों में निहित मूल्यों के प्रति छात्रों एवं शिक्षकों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. आर.पी. भटनागर एवं डॉ. मीनाक्षी भटनागर (2007) : 'शिक्षा अनुसंधान', इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ
2. डॉ. शशिकला सरीन एवं डॉ. अंजली सरीन (2010) : 'शैक्षिक अनुसंधान विधियाँ', अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा–2
3. चौधरी, रेणु (2008) : 'मूल्य एवं नैतिक शिक्षण', श्री कविता प्रकाशन, जयपुर
4. शर्मा, श्रीमती राजकुमारी (2005) : हिन्दी शिक्षण', राधा प्रकाशन मंदिर, आगरा
5. शर्मा, डॉ. राजेन्द्र (2007) : 'नैतिक मूल्य शिक्षा', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
6. उपाध्याय, विनोद कुमार (2009) : 'अधिगम का मनोसामाजिक आधार एवं शिक्षण', अरिहन्त शिक्षा प्रकाशन, जयपुर

सारणी 1 : उच्च प्राथमिक विद्यालय के हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के मूल्यों के प्रति छात्रों एवं शिक्षकों के दृष्टिकोण को दर्शाती सारणी

क्रं.	चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	परिणाम
1.	छात्र	50	17.02	3.02	0.56	0.56	स्वीकृत
2.	शिक्षक	50	20.04	2.50			

सारणी 2 : उच्च प्राथमिक विद्यालय के हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के मूल्यों के प्रति महिला व पुरुष अध्यापकों के दृष्टिकोण को दर्शाती सारणी

क्रं.	चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	परिणाम
1.	अध्यापिकाएँ	25	18.36	3.43	2.89	0.29	स्वीकृत
2.	अध्यापक	25	19.20	3.39			

सारणी 3 : उच्च प्राथमिक विद्यालय के हिन्दी पाठ्यक्रम में उपस्थित कहानियों के मूल्यों के प्रति छात्र–छात्राओं के दृष्टिकोण को दर्शाती सारणी

क्रं.	चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	परिणाम
1.	छात्र	25	18.24	2.67	0.73	0.99	स्वीकृत
2.	छात्राएँ	25	18.96	2.51			

****

योग शिक्षा के प्रति ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों में अभिवृति का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. संगीता अग्रवाल* सुमित कुमारी**

प्रस्तावना – जीवन का प्रत्येक अनुभव शिक्षा है। जीवन के अनुभव ज्ञान की परिधि को विस्तृत करते है। अन्तर्दृष्टि को गहरा करते है, भावनाओं व क्रियाओं को उत्तोजित करते है। सभी मिलकर शिक्षा बनते है। शिक्षाशास्त्री मनुष्य की आंतरिक शक्तियों के सर्वागीण विकास को ही शिक्षा मानते है। शिक्षा का ध्येय ज्ञान प्राप्ति है। ज्ञान आत्मा का प्रकाश है। मनुष्य को बाहर से ज्ञान प्राप्त नहीं होता। आत्मा के अनावरण से ज्ञान प्राप्त होता है। स्वामी विवेकानन्द जी के शब्दों में – **'मनुष्य में अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।'** इस प्रकार शिक्षा का लक्ष्य नये सिरे से कुछ निर्माण करना नहीं पर मनुष्य में पहले से जो सुप्त रहता है, उसका अनावरण करना ही उसका विकास करना है।

अन्त:करण आत्मा की अभिव्यक्ति का माध्यम – अन्त:करण के माध्यम से ही आत्मा की अभिव्यक्ति होती है। अन्त:करण के चार रूप है :–

मन :– मन तर्क–वितर्क और संशय करता है।
बुद्धि :– बुद्धि निश्चय करती है।
अंहकार :– ये गर्व की अभिव्यक्ति है।
चित्त :– स्मरण का कार्य करता है।

अन्त:करण जड़ तत्व है। आत्मा के प्रकार्य से ही अन्त:करण द्धारा ज्ञान प्रक्रिया सम्पन्न होती है। चारों तत्व शुद्धि बनकर मन एकाग्र होता है तब ज्ञान की प्रक्रिया होती है। इसीलिए शिक्षा का कार्य है – मन की एकाग्रता का अभ्यास करना। भारत के प्राचीन ऋषि मुनियों ने जगत के रहस्यों को समझने के लिए जीवन, मन, बुद्धि, स्मृति व चेतना के रहस्यों को स्पष्ट किया था। परन्तु आधुनिक युग में से सब बातें पीछे छूट गयी है।

शिक्षार्थी के चतुर्मुखी व्यक्तित्व विकास के प्रति भी पूर्णतया सजग थी। अत: विद्यार्थी के मानसिक पक्ष की सम्पुष्टता के साथ–साथ अनेक पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाएँ भी चला करती थी, जिसमें विविध प्रकार के शारीरिक व्यायाम तथा युद्ध कौशल से जुड़ी हुई अनेक कलाएँ भी थी। गुरूकुल अथवा प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली में शिक्षार्थियों की दिनचर्या ही जिन शारीरिक क्रियाओं अथवा व्यायामों से प्रारम्भ होती थी, उन्हें आज भी योग के नाम से जाना जाता है।

समस्या कथन – योग शिक्षा के प्रति ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों में अभिवृति का तुलनात्मक अध्ययन।

अध्ययन के उद्देश्य – यह शाश्वत् सत्य है कि कोई भी कार्य बिना उद्देश्य उपयोगी नहीं हो सकता, अत: प्रत्यन की दिशा तय करने व सही परिणाम प्राप्ति करने हेतु यह आवश्यक है कि शोध समस्या के उद्देश्य स्पष्ट हो। इस दृष्टि से शोध समस्या के निम्नांकित उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं :–

1. शहरी व ग्रामीण विद्यार्थियों की योग शिक्षा के प्रति अभिवृति का अध्ययन करना।
2. शहरी विद्यार्थियों की योग शिक्षा के प्रति अभिवृति का अध्ययन करना।
3. ग्रामीण विद्यार्थियों की योग शिक्ष्ज्ञा के प्रति अभिवृति का अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनाएँ :

1 शहरी व ग्रामीण विद्यालय के विद्यार्थियों की योग शिक्षा के प्रति अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2 शहरी विद्यार्थियों की योग शिक्षा के प्रति अभिवृति में कोई सार्थक नहीं है।
3 ग्रामीण विद्यार्थियों की योग शिक्षा के प्रति अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध निष्कर्ष :

परिकल्पना 1 :– योग शिक्षा के प्रति शहरी विद्यार्थियों की अभिवृत्ति सामान्य स्तर की हैं।

निष्कर्ष –योग शिक्षा के अन्तर्गत शैक्षिक क्षेत्र के प्रति शहरी विद्यार्थियों की अभिवृति सकारात्मक है।

परिकल्पना 2 :–योग शिक्षा के प्रति ग्रामीण विद्यार्थियों की अभिवृति सामान्य स्तर की है।

निष्कर्ष – योग शिक्षा के अन्तरगत शैक्षिक क्षेत्र के प्रति ग्रामीण विद्यार्थियों की अभिवृति उच्च सकारात्मक है।

परिकल्पना 3 :– योग शिक्षा के प्रति शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

निष्कर्ष – योग शिक्षा के अन्तर्गत शैक्षिक क्षेत्र के शहरी व ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की अभिवृति सार्थक रूप से एक दूसरे से भिन्न है। एवं शैक्षिक क्षेत्र के प्रति ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की अभिवृति ज्यादा सकारात्मक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची : –

1. उपाध्याय, विनोद कुमार (2009) : 'अधिगम का मनोसामाजिक आधार एवं शिक्षण', अरिहन्त शिक्षा प्रकाशन, जयपुर
2. कपिल, एच.के. (2008) : 'सांख्यिकी के मूल तत्व', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2
3. अग्रवाल विपिन (2010) : 'मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2
4. पाठक, पी.डी. (2010) : 'शिक्षा मनोविज्ञान', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
5. जायसवाल, सीताराम (2012) : 'व्यक्तित्व का मनोविज्ञान', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

* अस्सिटेन्ट प्रोफेसर, श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** एम.एड. छात्रा, श्रीगंगानगर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

जशपुर जिले में कृषि भूमि उपयोग का परिवर्तनशील स्वरूप : एक भौगोलिक अध्ययन (जशपुर जिले के कांसाबेल तहसील के विशेष संदर्भ में)

दमयन्ती लकड़ा* डॉ. रत्नेश कुमार खन्ना**

शोध सारांश – कृषि भूमि उपयोग खेती के लिए ही न करके तथा उसका इस्तेमाल गैर-कृषि कार्यों के लिए भी होता है और इसे विकास का नाम दिया जाता है। कृषि के लिए भूमि की प्रासंगिकता इसी प्रकार समझाया जा सकते है। पहला होता है, कृषि एक गहन जमीन क्रियाकलाप है इसका अर्थ होता है जो उत्पादन के सापेक्ष कृषि के लिए गैर कृषि कार्य अधिक भूमि की आवश्यकता होती है। दूसरा कृषि में भूमि की गुण शक्ति का प्रति इकाई क्षेत्रफल को पैदावार से बहुत कम प्रभाव पड़ता है।

जबकि गैर कृषि करने में जो उत्पादन पर जिसमें सीमित प्रभाव पड़ता है, तीसरा ग्रामीण इलाके में भूमि की मिलकियत विशत ढुनिया के ऐसे फसल परिवर्तन की प्रथा मानव के द्वारा हजारों लाखों से सभ्यता की शुरूआत से ही अपनायी गयी है।

शब्द कुंजी – क्रियाशील जशपुर जिले में कृषि भूमि उपयोग का परिवर्तनशील।

प्रस्तावना – कृषि भूमि विभिन्न मानवीय तथा आर्थिक क्रियाकलापों हेतु भूमि के प्राकृतिक लक्षणों के आधार पर उसका उपयोग किया जाता है। जिससे उपलब्ध भूमि प्रतिरूप मानवीय सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक लक्षणों का निर्माण करता है तथा परिवर्तनशील प्रवृत्तियॉ को भी व्यक्त करता है। भूमि उपयोग पृथ्वी के किसी क्षेत्र का मनुष्य द्वारा उपयोग को सूचित करता है। सामान्यत: जमीन के हिस्से पर होने वाले आर्थिक क्रिया-कलाप को सूचित करते हुए उसे वन भूमि, कृषि, पर्वतों , चारागाह इत्यादि वर्गो में बॉटा जाता है।

कृषि खेती और वानिकी के माध्यम से खाद्य और अन्य सामान के उत्पादन से संबंधित है। कृषि एक मुख्य विकास था जो समास्याओं के उदय का कारण बना इसमें पालतू जानवरों का पालन किया गया और पौधों (फसलों) को उगाया गया जिससे खाद्य का उत्पादन हुआ। इसमें अधिक घनी अबादी और स्तरीकृत समाज के विकास को सक्षम बनाया। कृषि का अध्ययन कृषि विज्ञान के रूप में जाना जाता है तथा इसी संबंधी विषय बागवानी का अध्ययन बागवानी में किया जाता है।

तकनीकों और विशेषताओं को बहुत सी किस्मे कृषि के अन्तर्गत आती है, इसमें वे तरीके शामिल है। जिनसे पौधे उगाने के लिए उपयुक्त भूमि का विस्तार किया जाता है। इसके लिए पानी के चैनल खोदे जाते है और सिचाई के अन्य रूपों का उपयोग किया जाता है कृषि योग्य भूमि पर फसलों को उगाना और चारागाहों और रेंजलैड पर पशुधन को नागरिक के द्वारा चराया जाना, मुख्यत: कृषि से संबंधित रहा है।

कृषि भूमि देश का कुल क्षेत्रफल उस सीमा को निर्धारित करता है, जहां तक विकास प्रक्रिया के दौरान उत्पत्ति के साधन के रूप में भूमि का समतल विस्तार संभव होता है। जैसे जैसे विकास प्रक्रिया आगे बढ़ती है और नये मोढ़ लेती है समतल भूमि की मांग बढ़ती है नये कामों और उद्योगों के लिए भूमि की आवश्यकता होती है व परम्परागत उपयोग के लिए भूमि की आवश्यकता होती है। व परम्परागत उपयोगों में अधिक मात्रा में भूमि की मांग की जाती है। सामान्यत: इन नये उपयोगों व परम्परागत उपयोग में बढ़ती हुई भूमि की मांग की आपूर्ति के लिये कृषि के अंतर्गत की मांग की आपूर्ति के लिये कृषि के अंतर्गत भूमि को काटना पड़ता है इस प्रकार भूमि कृषि उपयोग से गैर कृषि कार्यों में प्रयुक्त होने लगती है । एक विकासशील अर्थव्यवस्था के लिये जिसकी मुख्य विशेषताएं श्रम अतिरिक्त व कृषि उत्पादों के अभाव की स्थिति का बना रहना है। कृषि उपयोग से गैर कृषि उपयोगों में भूमि का चला जाना गंभीर समस्यों का रूप धारण कृषक के निर्वाह श्रोत का विनाष होता है। कृषि पदार्थो को आपूर्ति में अर्थव्यवस्था में अनेक अन्य गंभीर समस्याओं को जन्म दे सकती है। इसलिये यह आवश्यक समझा जाता है कि विकास प्रक्रिया के दौरान जैसे जैसे समतल भूमि का मांग बढ़ती है उसी के साथ ही बंजर परती तथा बेकार पड़ी भूमि को कृषि अथवा गैर कृषि कार्यों के योग्य बनाने के लिये प्रयास करना चाहिए प्रयास यह होना चाहिये कि खेती बाड़ी के लिये उपलब्ध भूमि के क्षेत्र में किसी प्रकार की कमी न आये वरन जहॉं तक संभव हो कृषि योग्य परती प्रकार भूमि में सुधार करें। कृषि कार्यों के लिये उपलब्ध में वृद्धि की जानी चाहिए।

पूर्व साहित्य की समीक्षा – पूर्व साहित्य की समीक्षा करे तो विभिन्न शोधकर्ताओं ने उच्च द्वितीयक शिक्षा को लेकर शोध कार्य किया है। कृषि के संबंध में काफी कार्य हुए है लेकिन अध्ययन होने में कृषि भूमि उपयोग पर कम कार्य हुए है। भारत में सर्वप्रथम प्रो. शफी ने (1960) में कृषि भूमि उपयोग गहनता, भूमि की निर्वहन क्षमता का अध्ययन किया है।

उत्तर प्रदेश के वृहद क्षेत्र के भूमि उपयोग के सर्वेक्षण का श्रेय प्रो. मोहम्मद शफी को जाता है। उनके अध्यक्ष द्वारा भूमि उपयोग को मानचित्रों में प्रदर्शित किया गया । 1960 में पूर्वी उत्तर प्रदेश के भूमि उपयोगिता प्रो शफी का एक महत्वपूर्ण प्रयास था जिसके द्वारा भूमि उपयोग की वहन क्षमता का आंकलन करना संभव हो पाया। इसके द्वारा प्रति हेक्टेयर उत्पादन

* एम.फिल. शोधार्थी (भूगोल) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

को कुल क्षेत्रीय उत्पादन के सह संबंध उस स्थान विशेष की जनसंख्या जो कि उस भूमि उपयोग पर निर्भर थी किया गया। ग्राहित कैलोरी का आंकलन कर पोषण तत्व न्यूनतम कुपाषण क्षेत्र कर निर्धारण किया गया तथा यह बताया गया कि कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए नियोजन अत्यंत आवश्यक है ।दक्षिण भारत में प्रो. व्ही. एल. राव के द्वारा भूमि उपयोग पर महत्वपूर्ण कार्य किया गया। प्रो. ओ.पी. भारद्वाज ने (1961) में जलंधर जिले के विल्ट ढोआव के अंतर्गत मोहिया और अकीकुंज ग्राम के भूमि उपोग का अध्ययन किया।

स्थानीय स्तर पर भी भूमि उपयोग पर महत्वपूर्ण कार्य हुए है। विभिन्न अध्ययनों के द्वारा शोधकर्ताओं ने खाद्य उत्पादन व पोषण स्तर में सहसंबंध स्थापित करने का प्रयास किया गया है हालांकि एक भूगोल देता खाद्य का रासायनिक विश्लेषण कर शरीर पर उसका क्या प्रभाव पड़ता जानने में पूर्णता सक्षम नहीं है। परंतु फिर भी वह वातावरण 'भौतिक एवं मानवीय कर प्रभाव पड़ता है।' जो कि पोषण स्तर को निर्धारित करता है। जानने में कुछ हद तक सक्षम है।

पोषण के संबंध में मोहम्मद शफी का किया गया कार्य सराहनीय है। इस अध्ययन में प्रो मोहम्मद शफी द्वारा पूर्वी उत्तर प्रदेश में बारह इन गावों का चयन किया गया जिनकी मिट्टी अलग-अलग प्रकार की थी एवं व्यक्तिगत जानकारी के आधार पर उन्होंने 'भोजन संतुलन तालिका' का निर्माण किया जिसके द्वारा व्यक्ति प्रतिदिन कैलोरी का आकलन किया गया इन्हीं के समक्ष प्रो. साजिद व पोषण स्तर में रोचक एव संबंध स्थापित किया।

अन्य शोधकर्ताओं के द्वारा भी पोषण और उससे संबंधितम समस्याओं पर कार्य किये गये। इस संदर्भ में प्रो एन. पी अय्यर प्रो. जौहर अली खान है भाटिया (1976) तथा सिंह (1972) ने अपने अध्ययनों में साख्यिकीय विधियों का प्रचर उपयोग किया। प्रो. जसवीर सिंह का (1974) दिशा में एक महत्वपूर्ण कार्य है। प्रो. अली मोहम्मद ने अपनी पुस्तक (1977) में भूमि उपयोग शास्य संयोजन प्रदेश पोषण एवं अल्प पोषण जन्य रोगों का अध्ययन किया प्रो. माजिद हुसैन ने (1982) में फसलों की श्रेणी-शास्य संयोजन में परिवर्तन तथा प्रस्तावित शास्य संयोजन प्रस्तुत किया।

पटेल व्ही.के. (1886) अपर महानदी बेसिन में भूमि उपयोग का बदलता स्वरूप मानो ग्राम भूमि मानचित्र नेंटमो कलकत्ता । राजपूत बी. एस एवं सिंह ए. एन (1983) दक्षिण पूर्वी बुन्देलखण्ड में भूमि उपयोग क्षमता शान्द तीब्रता विविधता।

डॉ एस.के. गुप्ता ने अपने लेरत (1986) जोत के आकार को कृषि क्षमता निर्धारित करने वाला कारक माना तथा इसमें मध्यप्रदेश जोत आकार के वितरण एवं असमानता का अध्ययन किया। प्रो. वर्षा वैध एवं व्ही. एस. दाते के लेख (1989) में कुल निवेश एवं निर्गत अनुपात पर प्रकाश डाला है कृषि भूगोल के क्षेत्र में महत्वपूर्ण संदर्भ पुस्तक। जिसका संपादन प्रो. मूर मोहम्मद ने 1992 में किया है।

पाठक डॉ. गणेश कुमार यादव हरेंद्र नाथ (2002) निचले घाघरा दोबार में कृषि विकास प्रतिरूप एक भौगोलिक अध्ययन पेज नं. 151-155 सिंह अजीत कुमार (2009) मिनीपुर जनपद (उत्तरप्रदेश) का भूमिगत जल संसाधन एवं उसका कृषि गत उपयोग एक भौगोलिक अध्ययन बी.एच.यू. थीसिस।

भारत में कृषि क्षमता, शस्य स्वरूप एंव कृषि गहनता से संबंधित अनेक कार्य किये गये इनमें मो. शफी. भाटिया, बी.बी. सिंह , जसवीर सिंह, त्यागी बी.एन. सिंह, आर. सी. तिवारी माजिद हुसैन आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय है। सामान्य भूमि उपयोग करूणेश प्रताप सिंह 2000, जिला दुर्ग (छ.ग.) का भूमि उपयोग एवं शस्य गहनता का कालिक एंव स्थानिक स्वरूप उमा गोले-2011।

शस्य गहनता एवं कृषि प्रतापगढ़ का एक प्रतीक अध्ययन-डॉ सरिता सिह एवं डॉ अनुप सिंह- 2016 दौसा जिले के कृषि भूमि उपयोग में परिवर्तन श्रवण कुमार मीना -2018

अध्ययन क्षेत्र - जशपुर जिला छत्तीसगढ़ राज्य के सबसे पूर्वी भाग से स्थित हैं जो सरगुजा संभाग के अन्तर्गत आता है। इसका विस्तार छत्तीसगढ़ का पूर्वी भाग से $22^0 17'$ से 23^0 15' उत्तरी अक्षांश 83^0 30' से 84^0 24' पूर्वी देशान्तर के मध्य विस्तृत है। और यहॉ की औसत तापमान अधिकतम 38^0 और न्यूनतम 50 वर्षा 215 आसपास होता है।

जशपुर जिला का स्थापना 1 नवम्बर 1956 में हुआ जशपुर जिला का क्षेत्रफल 645741 वर्ग किलोमीटर 16वॉ है, 2011 की जनगणना के अनुसार जशपुर जिला की जनसंख्या 851669 लाख है जिसमें 192570 परिवारों की संख्या है। वनक्षेत्र 998 वर्ग किलोमीटर और यहॉ की जलवायु समान्यत: एक होता है।

छत्तीसगढ़ के उत्तर पूर्व में स्थित जशपुर घने जंगल और हरी वनस्पतियों से समृद्ध है, जिले के उभरी क्षेत्र में पहाड़ियों और पहाड़ों की एक लंबी श्रृंखला होती है। कभी कभी एक दूसरे के समानांतर चलती है या कही-कही क्रेस क्रांसिग होता है, हरे भरे इलाके और घाटियों में सुरूचिपूर्ण प्राकृतिक सुंदरता मौजूद है समुद्र स्तर से 2500 से 3500 मीटर ऊपर औसत रखने के लिए जिले 22^0 17' एन से 23^0 15' एन अक्षांश और 83^0 30' ई टू ई रेखांश के बीच स्थित है। यह पूर्व में झारखंड के गुमला परिचय में सरगुजा और दक्षिण में रायगढ़ और सुंदरगढ़ (उड़ीसा) जिलों में घिरा हुआ है। मांग बढ़ती है उसी के साथ ही बंजट परती तथा बेकार पड़ी भूमि को कृषि अथवा गैर कृषि कार्यो के योग्य बनाने के लिये प्रयास करना चाहिए । प्रयास यह होना चाहिए कि खेती बाड़ी के लिये उपलब्ध भूमि के क्षेत्र में किसी प्रकार की कमी न आये वरन जहॉ तक संमत हो कृषि कार्यो के लिये उपलब्ध में वृद्धि ही की जानी चाहिए। किसी भी क्षेत्र में शुद्ध बोये गये क्षेत्र की अपेक्षा कुल फसली क्षेत्र का अधिक होना शस्य गहनता की मात्रा को प्रदर्शित करता है जशपुर जिले में घने जंगल एवं हरे भरे लहलहाते खेत दिखाई पड़ते है। जिले का अधिकांश भाग उॅची-निची पाट क्षेत्र में विस्तृत है। नीचघाट (जशपुरघाट) सामरीपाट या ऊपरघाट को सीमांकित करने वाले कागार के दक्षिण का क्षेत्र नीचघाट या जशपुरपाट कहलाता है। ईब मैनीघाट भी कहते है। इसका अधिकांश भाग ईब-मैनीघाट भी कहते है। इसका अधिकांश भाग ईब-मैनी तथा इसकी सहायक नदियों के किनारे-किनारे रेतीली एवं सकरा है।

ईब नदी जशपुर के पंडरापाठ के निकट 230^0 6' उत्तर अक्षांश तथा 830^0 43' पूर्व देशांतर में खुर्जा पहाड़ियों से निकलती है। कुछ किलोमीटर तक उत्तर पूर्व में बहने के बाद दक्षिण-पुर्व की ओर प्रवाहित होती हुई पूर्व में ईब नदी में मिल जाती है। दक्षिण पूर्वी भाग में खोरूंग नदी उदयपुर हिल से पूर्व की ओर प्रवाहित होती हुई इसमें मिल जाती है। यह महानदी की सहायक नहीं है अध्ययन क्षेत्र में कुल क्षेत्रफल का 52.5 प्रतिशत भाग पर कृषि की जाती है कुछ धरातल सामान्यत: सीढ़ीनुमा है जिले का मुख्य फसल धान है। छ.ग. में स्थित जशपुर को भौगोलिक दृष्टि से दो भागों में बांटा जा सकता है। इसके उत्तरी भाग को उपर घाट दक्षिणी भाग को नीचघाट के नाम से जाना जाता है, प्राकृतिक रूप से जशपुर बहुत खुबसुरत है और पर्यटकों को

बहुत पसंद आता है। पर्यटक इसके उपरी घाट में घने जंगल और पहाड़ व नीचले घाट में हरे भरे खेत दिखाई देते है। पर्यटकों को पहाड़ों और जंगलों की रोमांचक यात्रा व हरे –भरे खेतों में सैर करना बहुत पसंद आता है।

परिकल्पना :

1. कृषि भूमि उपयोग में वनों एवं परती भूमि के क्षेत्रफल में कमी हो सकता है।
2. कृषि भूमि पर फसलों की विभिन्नता में अंतर हो सकता है।
3. कृषि भूमि के उत्पादकता एवं फसल समूहों में अंतर हो सकता है।
4. कृषि एवं अर्थ व्यवस्था एक दूसरे के पूरक है।
5. कृषि के जोतों के आकार एवं क्षेत्रफल में कमी हो सकता है।

उद्देश्य :

1. अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि उपयोग का परिवर्तनशील का अध्ययन करना।
2. अध्ययन क्षेत्र के विभिन्न धरातलीय व भौगोलिक पृष्ठभूमि में भूमि उपयोग को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन करना।
3. अध्ययन क्षेत्र में प्रमुख फसल तथा समूहों का उत्पादन दरों में परिवर्तन का अध्ययन करना।
4. कृषि भूमि से संबंधित समस्याओं के निराकरण का अध्ययन करना।
5. कृषि विकास संबंधी योजनाओं से कृषकों की स्थिति में सुधार का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि एवं आंकड़ों का संकलन–शोधार्थी द्वारा क्षेत्र भ्रमण, सर्वेक्षण और लोगों से साक्षात्कार आदि के माध्यम से प्राथमिक ऑकड़े एकत्र किये जायेंगे।

द्वितीयक विभिन्न सरकारी विभागों संगठनों, संस्थाओं अध्ययनकर्ताओं द्वारा पूर्व में किए गए सर्वे शोध व विशिष्ट अध्ययनों के प्रकाशित और अप्रकाशित रिपोर्ट आदि। प्रस्तुत शोध अध्ययन में अध्ययन क्षेत्र के रूप में जशपुर जिले का एक कृषि प्रधान तहसीलों के कृषि परिवेश को चयनित किया गया है। तथा अन्य आंकड़ों के संकलन जिला कलेक्ट्रेट जनपद पंचायत तथा जिला तहसीलों सांख्यिकीय व अन्य शासकीय एवं अर्धशासकीय कार्यालय से प्राप्त किया गया है।

शोध कार्य के अपेक्षित परिणाम – प्रस्तुत शोध कार्य से अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि उपयोग के परिवर्तनशील स्वरूप का ज्ञान होगा जिससे भविष्य में नियोजन की दिशा निर्धारित होगी तथा शासकीय प्रयासों का भी विश्लेषण किया जाएगा।

निष्कर्ष एवं सुझाव – अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि उपयोग में व्यापक रूप से परिवर्तनशील होता है जिसमें प्राकृतिक कारकों का विशेष रूप से इसका प्रभाव पड़ता व जोत का आकार में भूमि उपयोग में परिवर्तन देखा जा सकता है तथा आर्थिक कारकों में बाजार, मशीनीकरण, परिवहन आदि का विशेष योगदान मिलता है।

सुझाव :

कृषि भूमि में सुधार –अध्ययन क्षेत्र में बंजर भूमि को अधिकता होने पर उसमें सुधार लायागया है। इसमें जीवांश की कमी व सोडियम की मात्रा अधिक पाई जाती है कृषि भूमि को योग्य बनाने के लिए पाईराइड उपयोग जाता है जिसमें कृषि भूमि में वृद्धि अधिक किया जाता है।

जलसंचय की व्यवस्था–अध्ययन क्षेत्र में कृषि कार्य करने तथा ऊसरीकरण रोकने तथा भूमि को कृषियोग्य भूमि बनाने में जल संचय की तथा कृषि भूमि में जल संचय करने के लिए व्यवस्थित किया जाना चाहिए। बंजर भूमि को कृषि भूमि योग्य बना कर कृषि कार्य किया जा सकता है यहाँ की कृषि की मुख्य समस्या किया जा सकता है यहाँ की कृषि को मुख्य समस्या जोत का छोटा आकार है और कृषि सिंचाई में मानसुन पर ही निर्भर और सिंचाई साधनों का विशेष प्रभाव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. **भारद्वाज ओ. पी. (1961)** :– **सतलज नदी के निचले भू–भागों में भूमि उपयोग जालंधर के विशेष संदर्भ में**
2. **हुसैन माजिद (1967)**:–Food and Nutrilion of India K.B. Publication New Delhi p-17
3. F.A.O (1970):-Production year Book, Food and Agriculture Organization V.N. Poone-24
4. **अय्यर एन . पी. (1972)** :–The Agriculture Geography of the upper narmada basin university sagar
5. **गुप्ता एच.एस (1974)**:–Food and Grand production efficiency in M.P.G.N.91 uaranshi India 131-139
6. **सिंह जसवीर (1974)**:–An Agriculture Atlas of India
7. Dasguta (1978):-Land use in Developing Contaces 21 Geography Cong Pro cecdingas Natconm for Geog Calcutta P-230
8. Mitra:-Agricultural Geography of the Chhattisgarh Publishing Company New Delhi
9. **गुप्ता एच.एस (1986)** :–Distribution of Land Holding in M.P.
10. **दाते व्ही .एस. (1989)** :–Agricultural labour product Tivity in Maharashtra
11. **सिंह प्रताप** :–**शास्य गहनता एवं कृषि दक्षता : प्रतापगढ़ का एक प्रतीक**
12. (2000)Indira Gandhi:-Kshetriye Krishi Aur Anusandhan Kendra Sarkanda Bilaspur (C.G.)
13. Joshi Y.G. :-Narmada Basin ka krishi Bhugol M.P. Hindi granth Academi Bhopal
14. Joshi Y.G. :-Agricultural development Around City a case study of Indore Tahsil, Madhya Pradesh

****

Socio Economic Status Of Industrial Workers In Surved Area In Bilaspur District

Biplab Majumder*

Abstract - According to Herold Rabinson "The geographical study of any economic activity is concerned with the ways and Problems of making a living . while according to Ronald Hope 2 It means the systematic study of the wealth which has its origin in the earth, such wealth being found not only in the earth's crust or core, but in its oceans and seas and its gaseous envlope, the atmosphere ,to the producting Economic features is closely related to the production, exchange distribution and consumption of goods and services".

The term "Industrialization" used to designate the growth of manufacturing' industry. It is defined "as a process in which change o a series of strategical production functions are taking place. It involves those basic changes that accompany the mechanization of an enterprise, the building of a new industry, the opening of a new territory. This is in a way a process of deepening as well as well as widening of capital (According to pei-kangchang)

Key Words- Industrilisation ,enterprise and accompany.

Introduction - Industrialization in India started during the British rule bit it was restricted to some metropolitan cities like Bombay and Calcutta. At the end of British rule, India Possessed a larger industrial sector with a stronger element of indigenous enterprise, then most other underdeveloped Countries of the world. (According to Ebid, P-15).

But before IInd worked war textile industry/ developed in India. During Second world war supply of resource and other mechanic are stopped.

The industrial growth in Chhattisgarh into being on 1st November 2000, A number of large scale industries of resources. The Industrial policy of Chhattisgarh is based on two primary factors-I best planning for encouragement. Chhattisgarh is the richest state in terms of mineral resoures.

Bilaspur district a developing district of the Chhattisgarh state, terms of industrial growth sirgitti, silpalari, and Tifra around is major industrial area of Bilaspur district.

Objectives Of The Study - The main objects of this research is-

1. To study the spatial and temporal industrial growth in the region.
2. To analyse the effect of industrial development in the region.
3. To study the Problems related to economic development in the study area and to present their solution.

Hypothesis - The Economic development is completely depend on the industrial developed in any area. Industrial development has an impact on the socio-economical level of the area. The level of industrial development in the area is high, the living standard of in the area is high, the living standard of the residents is also high.

Disscusion - In modern era with the development of Indian economy and rapid expansion of trade, the small scale industrial sector has emerged as a vibrant and dynamic segment in the process of industrialization which is considered not only the key factor to lift up the per capita income but also a vital mechanism for a larger transformation of Indian economy. Workers are those who produce or transform goods or provide services for their own consumption and for that of others. (IES, P.564).

The present study is analysed the socio – economic profile of workers.

A) General Profile of Industry Workers

1) Age - Industrial development to a large extent is depended upon the composition of the work force engaged in the industries. The productivity depends on the efficiency which in term is related to the factors such as age, sex and the workers health is the well accepted fact. Age is one of an – achieved characteristic in the life cycle of human being. Age is one of the significance social factors that influence upon the socio – economic and demographic situation of the country (Rao, RMK 1997)[2].

Table 1 and Diagram (see in last page)

2) Sex - Sex role peculiarity was also obvious in terms of occupation with male more likely to be involved in pursuit requiring strength and technical skills and women in task requiring skills and women in task requiring strength in child bearing, home making and other such operations (Verma, 2001, p.27)[3].

Table No. 2 : Industry wise Distribution of workers

*M. Phil Scholar (Geography) Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.) INDIA

according to sex, 2019

S.	Type of industry	Male (in %)	Female (in %)
1	Metal industry	68.28	30.72
2	Sponge & iron industry	70.22	29.78
3	Power & steel industry	67.69	32.31
4	Food ware industry	89.13	10.87
5	Soft drink industry	60.00	40.00
6	Fertilizer industry	90.00	10.00
7	Rice mill	84.00	16.00
8	Bakery	66.67	33.33

Source – Field survey

Industry wise Distribution of workers according to sex, 2019

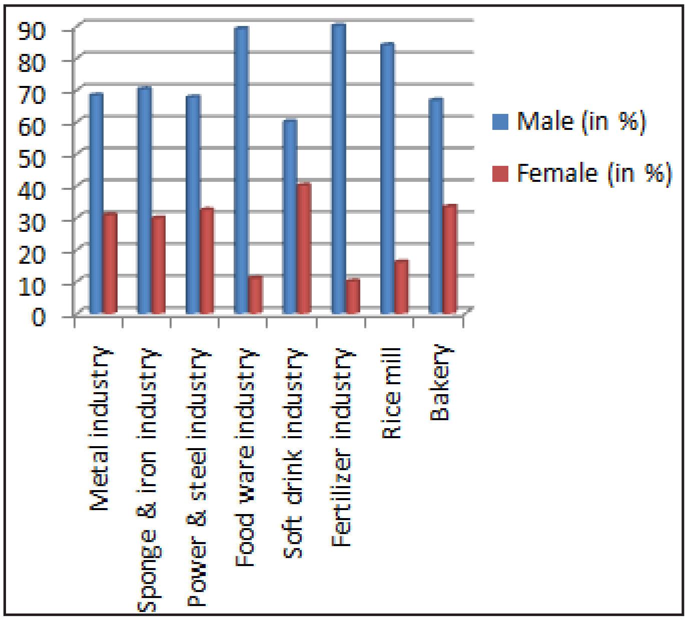

Diagram - This table shows that an analysis on the sex distribution of workers presents that the majority of the worker about 75% in the industry are male while female workers.

3) Religion - In a country like India religion plays a vital role in the social and cultural structure. Every religion has its own customs and its main role in the cultural environment.

The religion wise distribution of industry workers is present that 79.27% of workers in sampled industry is Hindu and 21.73% is other caste religion.

4) Caste - Caste in the Indian society divided into different communities like General, backward class, schedule caste and schedule tribe the traditions and customs depends upon the community which is turn influence of society. Caste is an important social variable especially in the present day Indian context. The community are broadly subdivided into various sub – castes and in that people as per caste criteria (Mishra 1994)[4].

Table 3 : Industry wise distribution of workers according to caste (in %)

S.	Type of industry	General	OBC	SC/ST
1	Metal industry	27.59	6.9	65.52
2	Sponge & iron industry	11.11	13.89	75
3	Power & steel industry	23.08	7.69	69.23
4	Food ware industry	32.78	57.43	9.78
5	Soft drink industry	10.41	13.11	86.49
6	Fertilizer industry	1.20	55.80	33.00
7	Rice mill	26.32	21.05	52.63
8	Bakery	70.33	20	9.77

Source – Field survey 2019

Present table shows that the almost 70% workers in the sampled industries are from SC/ST caste and 30% workers belongs to General or OBC caste.

5) Educational Level - Education is one of the important social variables that influence both social and economic development of a country. Education certainly is means to all round progress of individual. In other words the path to human development goes through the lanes of education. Moreover the education is the sole basis of achieving one's purpose in life. Its education only that can as certain ultimate peace for a human being. Education is considered the inner capability of man which guides him in every stage of life. It is the processes which leave an impact upon the mind, character and moral strengths and plays a vital role in the human development (Kalam 2005)[5].

Table 4 : Literacy status in sampled industrial area (in %)

S.	Literate	Illiterate
01.	51.99	49.01

B) Economic Characteristics – Economic characteristics is directly affect on workers and their households economic status

1. Payment - Present study reveals that the 95% sampled area workers get payment in cash while about 05% percent workers do not get receiver cash payment.

2. Nature Of Wages - It is an important indicator to present the primary level in the economic and earning structure. The nature of wages are classified into 03 main groups –

(i) Daily
(ii) Weekly
(iii) Monthly

The present table shows nature of wages of sampled industry workers

Table 5 : Industry wise distribution of workers according to nature of wages (in %)

S.	Type of industry	Daily	Weekly	Monthly
1	Metal industry	18.4	26.4	55.2
2	Sponge & iron industry	10.00	36.67	53.33
3	Power & steel industry	10.52	10.48	79.00
4	Food ware industry	11.09	25.27	61.64
5	Soft drink industry	20.00	30.00	50.00
6	Fertilizer industry	11.00	25.37	63.63
7	Rice mill	11.58	55.00	33.42
8	Bakery	20.00	30.00	50.00

Source – Field survey 2019

Monthly Income - Monthly income is the most basic

indicator of overall development. It has considered as the key indicator of economic development of a nation or group of people. The mode of saving, investment and overall standard of people depend on it (According to Sajjad, 1998, p.143)[6].

Table 6 : Industry wise : Distribution of workers according monthly income 2019 (in %)

S.	Type of industry	Less than 5000	5000-10000	More than 10000
1	Metal industry	70.34	15.86	2.00
2	Sponge & iron industry	16.67	60.67	6.00
3	Power & steel industry	32.00	32.00	26.00
4	Food ware industry	30.00	34.00	26.00
5	Soft drink industry	52.38	36.10	2.00
6	Fertilizer industry	46.67	18.00	2.00
7	Rice mill	46.67	20.00	14.13
8	Bakery	60.00	30.00	20.00

Source – Field Survey 2019

C) Family Structure - Demographic characteristic helps us to provide a better understanding for workers households.

According to Sahay (1969)[7] family may be nuclear or joint. Nuclear family may be defined as a social group, consisting of married man and woman with their children under the same roof and sharing a common health. Joint family as defined by Sahay "as the social group consisting of several related individual families, especially those of a man and his sons (in case of patrilineal) of a woman and her daughter (in case of matrilineal), residing single large dwelling".

Table shows the distribution of family type of workers. Most of the household is joint family and only 20.00% had a nuclear family system.

Table 7 : Industry wise : percentage distribution of family structure of workers, 2015

S.	Type of industry	Sampled workers	Family Type	
			Nuclear	Joint
1	Metal industry	20	40.00	60.00
2	Sponge & iron industry	20	36.11	63.89
3	Power & steel industry	20	29.77	70.23
4	Food ware industry	20	28.43	71.57
5	Soft drink industry	20	57.46	42.54
6	Fertilizer industry	20	26.57	73.43
7	Rice mill	20	60.16	39.84
8	Bakery	20	33.00	77.00

Source – Field Survey 2019

D) Housing Condition - Housing is one of the basic requirements for human survival. From the social point view house provides economic status security and status in the society. House brings a complete social change in the existence endowing person identity and gives scope with his immediate social milieu (NSS 58th Round state sample)

Table shows distribution of different types of houses of workers. Houses are constructed with bricks/concrete or mud and wood.

Industry wise data in the table shows that highest percentage of workers are living in bricks and concrete houses.

Table 8 : Industry wise : Percent Distribution of workers according to House types (in %)

S.	Type of industry	Brick & concrete	Mud & Thatched	Wood & Jhuggi
1	Metal industry	63.45	18.07	4.00
2	Sponge & iron industry	72.22	16.67	0.00
3	Power & steel industry	53.85	46.15	0.00
4	Food ware industry	86.96	13.04	0.00
5	Soft drink industry	59.46	40.54	0.00
6	Fertilizer industry	38.10	52.38	9.52
7	Rice mill	63.16	36.84	0.00
8	Bakery	53.13	33.33	13.33

Source – Field Survey 2019

Conclusion - Industrialization plays a vital role in the economic development and therefore being considered as the most predominant component of the development strategies in the third world countries in these countries development economist thought that drive for diversifications of the economy through rapid industrialization was necessary for up liftment of the economies form the quagmire of poverty and unemployment (Guru basappa, 2008, p.1 this chapter discussed the interlink between industrial development and socio – economic conditions.

The rapid changing social value in modern society have direct relevance to the technology advancement at local national and regional level in agriculture, industrial and urbanised sector of economy. Therefore the selection of indicator or weighing of indicator is the dominant activity of the region. (Kulkarni, 1990 p.13).

References :-

1. The European Industrial Relation Dictionary. Working Condition. Retrieved 31 July 2013 from http://www.enrofound.europa.eu/areas/industrialrelations.dictionary/definitions/
2. Rao, R.M.K. (1997). Impact of handicraft co-operation on the socio-economic condition of weavers in Vishakhapatnam district. Indian Co-operative Review, 35(2), 126-137.
3. Varma. S.K.(2001). Women in Agriculture: A Socio – economic Analysis. New Delhi: Concepts Publishing Company.
4. Mishra, A.K. (1994). Social impact of handicraft co – operatives on weavers in western Orissa: An empirical study. Indian Co-operative Review, 32(2), 146-168.
5. Kalam, A.P.J.A. (2005). Education for dignity of human life. Yojana, 49.
6. Sajjad, Haroon (1998). Employment of Landless Labourers, B.R. Publishing corportation, Delhi.
7. Sahay, B.N. (1969). Pragmatism in Development: Application of Anthropology. New Delhi: Bookhive Publishers and Book sellers.

Table 1 : Industry wise distribution of workers according to age – group, 2019 (in %)

S.	Type of industry	Age group (in years)				
		>15	15-25	26-35	36-45	<45
1	Metal industry	11.15	21.62	32.03	22.11	11.11
2	Sponge & iron industry	13.14	20.11	14.05	23.11	10.10
3	Power & steel industry	18.11	25.12	22.81	20.11	8.11
4	Food ware industry	10.11	26.11	23.11	22.48	9.11
5	Soft drink industry	18.12	24.11	25.11	23.11	7.11
6	Fertilizer industry	09.11	23.09	31.11	20.11	6.15
7	Rice mill	10.11	19.04	39.41	31.46	7.22
8	Bakery	9.42	10.10	29.11	32.11	6.11

Source – Field Survey 2019

Industry wise distribution of workers according to age – group, 2019 (in %)

Diagram

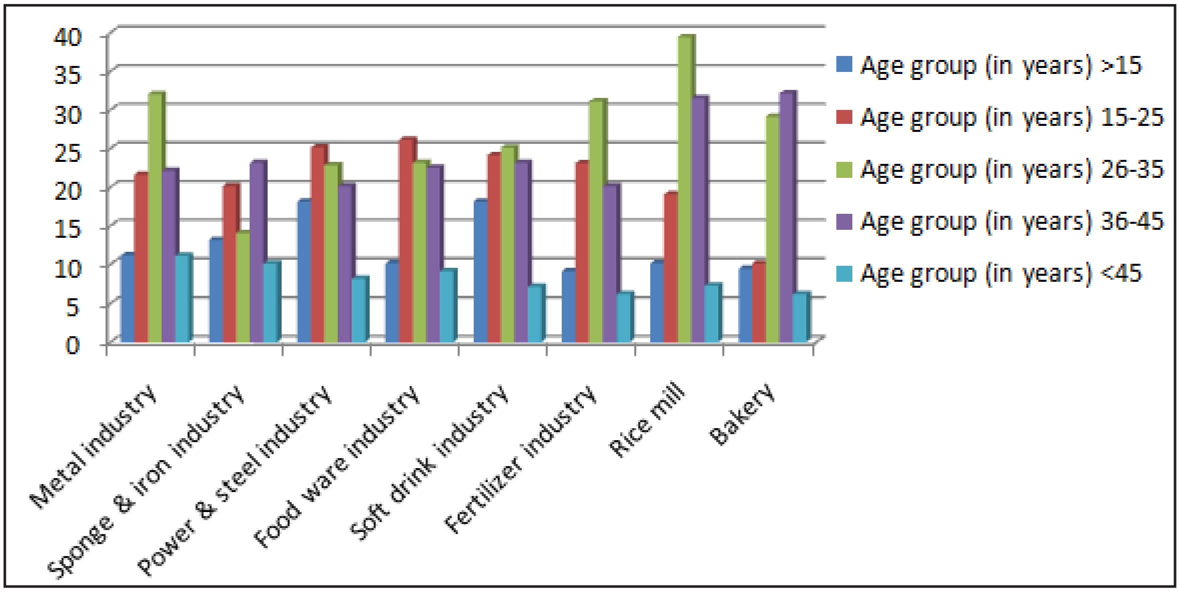

****

भारत में गरीबी - सरकार द्वारा चलाये गये कार्यक्रमों का अवलोकन

डॉ. विजय प्रकाश मिश्रा *

प्रस्तावना – सामान्यता निर्धनता उस सामाजिक स्थिति को कहते है, जिसमें लोग अपने जीवन की बुनियादी आवश्कताओं को पूरा नहीं कर पाते। निर्धनता को दो भागों में बॉटा गया है –

1. निरपेक्ष गरीबी
2. सापेक्ष गरीबी

निर्धनता से तात्पर्य उस स्थिति से लगाया जाता है जिसमें गरीबी के लिये न्यूनतम वस्तुओं और सेवाओं का न्यूनतम स्तर निर्धारित कर दिया जाता है और यह माना जाता है कि यदि इस न्यूनतम स्तर तक वस्तु व सेवाएॅ किसी व्यक्ति को नही मिलती है तो कहा जाता है वह गरीब है और गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहा है इसे निरपेक्ष गरीबी भी कहा जाता है।

इसी प्रकार से सापेक्ष गरीबी से तात्पर्य आय की विषमता से लगाया जा सकता है जैसे जब किसी दो देशों में प्रति व्यक्ति आय की तुलना करते है और उसमें अन्तर के आधार पर अमीर व गरीब देश का निर्धारण करते है तो इस प्रकार की गरीबी को सापेक्षिक गरीबी कहा जाता है।

भारत में गरीबी रेखा का निर्धारण – योजना आयोग द्वारा गठित 'टास्क फोर्स ऑन मिनीमम नीडस् एण्ड इफैक्टिव कॅन्जमशन डिमाण्ड' विशेषज्ञ दल के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में प्रति व्यक्ति 2400 कैलोरी तथा शहरी क्षेत्र में 2100 कैलोरी प्रतिदिन के हिसाब से तथा रूपये में ग्रामीण क्षेत्र में 18000 सालाना तथा 24000 रूपये शहरी क्षेत्र से कम मिलता है तो वे गरीबी रेखा के अन्तर्गत आते है।

निर्धनता का आर्कलन – योजना आयोग ने प्रोफेसर डी0 टी0 लकड़वाला की अध्यक्षता में भारत में गरीबी का ऑकलन करने हेतु एक विशेषज्ञ दल बनाया इससे पहले योजना आयोग राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के सर्वेक्षणों के आधार पर निर्धनता रेखा के नीचे रहने वाले लोगों का आर्कलन करता था। इस आधार पर 1993 - 94 के लिये 18.96 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे पायी गई। लकड़वाला फार्मूले में शहरी गरीबी के ऑकलन के लिए औद्योगिक श्रमिकों के उपभेक्ता मूल्य सूचकॉक एंव ग्रामीण क्षेत्र के ऑकलन के लिये कृषि श्रमिकों के उपभोक्ता मूल्य सूचकॉक को आधार बनाया गया है योजना आयोग ने लकड़वाला फार्मूला को 11 मार्च 1997 से स्वीकार कर लिया और 1993-94 में इस फार्मूला के अनुसार निर्धनता रेखा के नीचे 36 प्रतिशत लोग पाये गये इसी आधार पर 1999-2000 में 26.1 प्रतिशत निर्धन लोग पाये गये। इस फार्मूलें के आधार पर अलग अलग राज्यों में अलग अलग निर्धनता रेखा (कुल 35 निर्धनता रेखा बनायी गई)

निर्धनता रेखा से नीचे की जनसंख्या

वर्ष	निर्धनता अनुपात (प्रतिशत में)			निरपेक्ष संख्या (करोड रू0)		
	शहरी	ग्रामीण	अखिल भारत	शहरी	ग्रामीण	अखिल भारत
1973-74	49.0	56.4	54.9	6.0	26.13	32.13
1977-78	45.2	53.1	51.3	-	-	32.89
1983	40.8	45.7	44.5	7.09	25.20	32.29
1987-88	38.2	39.1	38.9	-	-	30.71
1993-94	32.4	37.3	36.0	7.63	24.40	32.03
1999-00	23.62	27.09	26.10	6.70	19.32	26.02
2001 -02	15.1	21.1	19.3	-	-	-
2007	15.1	21.1	19.3	4.96	17.05	22.01

स्रोत - राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन 50 एवं 55वें राउण्ड की रिपोर्ट

10वीं पंचवर्षीय योजना में यह अनुमान लगाया गया कि 2007 में लगभग 22 करोड व्यक्ति (19.34 प्रतिशत) निर्धनता रेखा से नीचे होगे। इसमें सबसे ज्यादा गरीब बिहार में तथा सबसे कम निर्धन व्यक्ति पंजाब, हरियाण व गुजरात में होगें। 11 वी पंचवर्षीय योजना में निर्धनता अनुपात को घटाकर 10 प्रतिशत तक करने का लक्ष्य रखा गया है।

भारत में गरीबी के प्रमुख कारण–(1) बेरोजगारी (2) प्रति व्यक्ति कम आय (3)निम्न उत्पादकता (4) जन संख्या का अत्यधिक दबाव (5) सामाजिक सेवाओं का असमान वितरण आदि।

सरकार द्वारा गरीबी दूर करने के लिये चलाये जा रहे कार्यक्रम– प्रारम्भ से सरकार द्वारा सभी पंचवर्षीय योजनाओं में 'सामाजिक न्याय' को प्राथमिकता पर रखा गया है लेकिन वास्तविक्ता के धरातल पर अभी भी हमे कोई विशेष सुधार नही हुआ और 6वी पंचवर्षीय योजना में यह स्वीकार किया कि भारत वर्ष में 50 प्रतिशत से ज्यादा आबादी पिछले काफी समय से निर्धनता रेखा के नीचे रह रही है। 6वी पंचवर्षीय योजना का एक प्रमुख उद्देष्य यह भी बनाया गया है बेरोजगारी व निर्धनता को लगातार कम करते रहना। सातवीं, आठवी व नौवी योजना में गरीबी योजना में गरीबी उन्मूलन पर जोर दिया गया और नौवीं योजना में तो इसे दूर करने के लिये कृषि और ग्रामीण विकास को प्राथमिकता दी गयी। वास्तव में देश में ऐसे कार्यक्रमो को चलाने की आवश्यकता महसूस की गयी जो न केवल पूरे देश में चला सके बल्कि निर्धनता दूर करने में सहायक हो, सरकार ने गरीबी दूर करने के लिए अनेक योजनाओं चलायी है स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना, स्वर्ण जंयती, शहरी रोजगार योजना, प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम, अन्नपूर्णा योजना अन्तोदय योजना, जय प्रकाश नारायण रोजगार गारण्टी

*अस्सिटेंट प्रोफेसर (व्यवहारिक अर्थशास्त्र विभाग) जे.एन.पी.जी. कालेज, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

योजना राष्ट्रीय रोजगार गारण्टी योजना।

1. **स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना –** इसमे पूर्व की 6 योजनाओं का मिला दिया गया समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, स्वरोजगार के लिये युवाओं को प्रशिक्षण, ग्रामीण महिला एवं बाल उत्थान योजना, दस लाख कूप योजना, उन्नत टूल किट योजना, गंगा कल्याण योजना, 1 अप्रैल 1999 से प्रारम्भ हुई इस योजना में स्वरोजगार के लिये बैंक ऋण व सब्सिडी के माध्यम से स्वयं सहायक समूह में संगठित करके गरीबी रेखा से ऊपर लाया जाता है।

2. **शहरी रोजगार योजना –** 1 दिसम्बर 1997 से चल रही यह योजना शहरी क्षेत्र के गरीबी निवारण के लिए बनायी गयी और इससे पहले चल रही तीन योजनाओं को शामिल किया। नेहरू रोजगार योजना। गरीबों के लिए शहरी बुनियादी सेवायें। प्रधानमंत्री की समन्वित शहरी गरीबी उन्मूलन योजना, इस योजना का मुख्य उद्देश्य शहरी क्षेत्र को स्वरोजगार उपक्रम स्थापित करने के लिये वित्तीय सहायता। तथा सवेतन रोजगार सृजन करने के उत्पादक परिसम्पत्ति का निर्माण है।

3. **प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम –** 15 अगस्त 2008 से शुरू हुई इसमे पूर्व की दो योजनाओं प्रधानमंत्री की रोजगार योजना व ग्रामीण रोजगारी सृजन कार्यक्रम का विलय किया गया। 11 वी पंचवर्षीय योजना में इसमें 37 लाख रोजगार के अवसर पैदा होने का उम्मीद थी।

4. **अन्नपूर्णा योजना –** यह योजना 1 अप्रैल 2000 सें प्रारम्भ हुई इसका मुख्य उदद्देष्य 65 वर्ष या उससे अधिक के वृद्ध जो राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन पाने के पात्र है लेकिन उनको मिली नही पा रही है इस कमी को दूर करने के लिए खाद्य सुरक्षा प्रदान करता है और उनका 10 किलो खाद्यान प्रतिमाह निशुल्क उपलब्ध करवाता है। 2002–03 से राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम में इस योजना को शामिल कर लिया गया है।

5. **अन्त्योदय अन्न योजना –** इस योजना का प्रारम्भ दिसम्बर 2000 में हुआ इसके अन्तर्गत सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा निर्धनता रेखा से नीचे रहने वाले लोगो को खाद्य पदार्थो की उपलब्धता सुनिश्चित करवाना है इसके अन्तर्गत बी0 पी0 एल0 परिवार को प्रतिमाह 35 किग्रा खाद्य पदार्थ विशेष रियायती दर पर उपलब्ध कराया जाता है।

6. **जय प्रकाश नारायण रोजगार गारण्टी योजना –** यह योजना जय प्रकाश नारायण के जन्म शताब्दी वर्ष में देश के सर्वाधिक पिछडे जिलो के बेराजगारो को रोजगार देने के लिए प्रारम्भ की गयी। 130 सर्वाधिक पिछडे जिलों की पहचान करके उसको दूर करने की योजना बनने के लिये ग्राम विकास मंत्रालय द्वारा एक विशेष समुह बनाया गया है।

7. **राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना –** इस योजना को कांग्रेस सरकार द्वारा 2006 से चलाया गया इसके अन्तर्गत प्रत्येक घर के बालिग सदस्य को अनिवार्य रूप से 100 दिन का अवकुशल श्रम वाला रोजगार उपलब्ध कराया जायेगा इस योजना में महिलाओं को 33 प्रतिशत भाग में हिस्सेदारी सुनिश्चित की गयी है। काम के बदले अनाज व सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना का इस योजना में मिला दिया गया इसके अन्तर्गत इच्छुक व पात्र व्यक्ति पंजीकरण कराने के 15 दिन के अन्दर रोजगार न मिलने पर सरकार द्वारा निर्धारित दर से बेरोजगार भत्ता दिया जायेगा इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र में पारिश्रमिक वाले रोजगार के सृजन से आजीविका की सुरक्षा करना है।

निष्कर्ष – गरीबी सम्बन्धी उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गरीबी के माप दण्ड को बदला जाये जो कि काफी समय से चला आ रहा है हालाकि सरकार द्वारा जो भी कार्यक्रम योजनाओं चलायी जा रही है जनता उससे सीधे लाभांवित हो रही है लेकिन देश में बेरोजगारी का जो विकराल रूप है और बढती जनसंख्या तथा निम्न उत्पादकता से ये सब चीजे देश के विकास को अवरूद्ध कर रही है। दसवीं योजना में कुल गरीबों की संख्या जो लगभग 22 करोड थी। 11 वी योजना में 13 करोड रह जाने की अनुमान है। इसे सरकार की सार्थक पहल का परिणाम कहा जा सकता है हालाकि गरीबी अभी भी बहुत है लेकिन सरकार द्वारा निरन्तर सार्थक प्रयास किये जा रहे है।

'भारत 2020 तक आर्थिक महाशक्ति बनेगा इसके लिए पूरे देश को एक जूठ हो कर सार्थक प्रयास करना पडेगा तभी हम इस दिशा में सफल हो पायेगें।'

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1 भारतीय अर्थव्यवस्था : मामोरिया व जेन

2 भारतीय अर्थव्यवस्था : दत्त व सुन्दरम

3 भारतीय अर्थव्यवस्था : एल एन कोहली व बृजेश रावत

4 भारतीय आर्थिक संरचना : जे0 पी0 मिश्रा

5 भारतीय अर्थव्यवस्था : मिश्रा व पुरी

****

Role of Panchayats in Implementation of MGNREGA in Rural Areas: A Case Study of Anantnag District (J&K)

Javid Ganie* Dr. Sarla Nirankari**

Abstract - This paper is a modest attempt to envisage the role of PRIs in the successful implementation of MGNREGA and to identify opportunities and gaps for strengthening the role of PRI's. It also analyses the official figures and their limitations and provides field reflections on some of the limitations in the proper implementation of the scheme. It also highlights the issues and challenges on the smooth functioning of PRIs in the proper implementation of scheme. The study has been carried out in district Anantnag of J&K with a proper scientific methodology and survey is carried out in Shangus block covering various panchayats and households. In summation from this study, policy conclusions can be drawn based on a general analysis of the se-up, past experience and findings from the field study.

Key words: PRIs, MGNREGA, Implementation, Rural development, Poverty, Social audit, Anantnag.

Introduction - The British rule drops various social, political and economic aspects on the Indian soil which were both of positive and negative nature. On the economic front, the people of India were badly affected. On that very reason, the government of India after gaining independence took several measures to improve the economic conditions of the people. A large number of poverty alleviation programs were launched especially for the rural areas which include TRYSEM, IRDP, JRY, NRY, etc. These programs show a little bit of performance because of various shortcomings. The various shortcomings in their failure were likely to be lack of awareness, lack of participation, lack of planning and proper implementation, problem of weak monitoring and verification processes, etc. To overcome these deficiencies, the Parliament of India in 2005 enacted a new program called MGNREGA formerly known as NREGA and was given a legal status (Goel and Rajnesh, 2009: 369). MGNREGA is an Indian labor law and social security measure that aims to guarantee the right to work.

Under the MGNREGA Act 2005; it is assured that a rural individual should be provided 100 days of work annually. The MGNREGA 2005 states: " An act to provide for the enhancement of the livelihood security of the households in rural areas of the country by providing at least 100 days of guaranteed wage employment in every financial year to every household whose adult members volunteer to do unskilled manual work and for matters connected there with or incidental there to (The gazette if India, 2005:48).

MGNREGA is regarded as a program that integrated overall social protection and labor system in the country (World bank2018). Besides providing employment for the rural sector, MGNREGA ensures overall sustainability in terms of natural resources and wellness society (Bhat and Yadav, 2005).

The rights based on MGNREGA emphasizes on community participation in planning, implementation, monitoring and evaluation of the program. It also requires social reporting for exhibiting transparency in the implementation process. Thus the community participation and the effectiveness of the institutional performance determine the overall progress of MGNREGA.

As far as J& K state of India is concerned where about 26% of rural population is living below the poverty line, there was a dire need of a MGNREGA type initiative to protect not only the present but also the expected future infirmity. Recognizing this need, the MGNREGA program was initially extended to three districts of J&K viz: Doda, Kupwara and Poonch in 2006. Later on it was extended to two more districts namely Anantnag and Jammu and finally to the entire state in 2008-2009.

There were a lot of reasons which hindered the proper implementation of the scheme in J&K. Among these hindrances were the special status given to the state under article 370. It was because of this special constitutional status of the state that the act was formally extended to the state in April 2007 under the rural employment guarantee scheme (Alam et al 2010). Besides this, the J&K Panchayat Raj Act 1989 didn't guarantee the same powers to the panchayat institutions as granted by 73rd constitutional amendment act of India. Moreover, there was absence of panchayat raj institutions in the state when the JKREGS was formulated. Later on the state employment guarantee council was constituted in August 2007 and the first tier of

*University Institute of Education, Sant Baba Bhag Singh University, khiala, distt. Jalander (Punjab) INDIA
**University Institute of Education, Sant Baba Bhag Singh University, khiala, distt. Jalander (Punjab) INDIA

the panchayat elections was held in 2001 and 2011. The three tier panchayat elections held in 2018 were meant for the proper implementation of the scheme. Because of the turmoil situation of the state, 76% of the panchayat halqas in Anantnag district of J&K saw no contest. It was also because of the reason that the regional parties i.e., National Conference and People's Democratic Party remain aloof from the election processes. This all created a lot of problems for the proper implementation of the scheme.

The performance of the scheme in district Anantnag can be revealed from the fact that in current financial year i.e.; 2019-20, the total number of 372 works was completed up to June 2019 and the expenditure on these works was 258.58 lack rupees. There are also 8201 number of which are ongoing or suspended which costs Rs 3660.4 lack. Besides this 2512 number of works are approved but still not in progress.

As far as employment generation is concerned, a total number of 3058 households were provided employment during the current financial year 2019-2020 and a total number of 89204 person days were generated.

The role of panchayats in the implementation of MGNREGA can't be neglected. The following data shows the number of works taken by Gram panchayats in district Anantnag under the MGNREGA in FY 2019-2020.

INFRASTRUCTURE	NO. OF WORKS
Anganwadi	01
Food control and protection	30
Micro irrigation works	113
Rural sanitation	13
Water conservation	11
Renovation of traditional water bodies	01

Objectives: This study was carried out to discuss about the role and performance of the panchayats in the implementation of MGNREGA in Anantnag district of J&K and to convey the measures which should be taken for the successful implementation of the scheme.

Methodology - In order to gain a deeper understanding of the problem a case study design has been employed under which 12 villages of block Shangas of Ananatnag were studied to draw the conclusions. The period of study is from March 2018 to March 2019.

Panchayats and Implementation of MGNREGA in Rural Areas - The role of Panchayats in the implementation of the MGNREGA is described under the following headings.

Registration of households and issuance job cards: - It is the role of the Panchayat to get the households registered under the scheme. The registered households are then issued job cards which legally empower the registered households to apply for work, ensure transparency and protect workers against fraud. On the ground level, the households aren't ready to get them registered under MGNREGA because of the minimum wage rate. The reason is also that the wages aren't paid at the right time. On visiting the block Shangas the work done under MGNREGA during the period March 2018 to March 2019 costs Rs 28307.99 lacks but only Rs 28073 lacks were paid under the scheme.

Receiving applications, issuing dated receipts, allotment of work and conducting of periodical surveys: - The panchayats receive the application of work and issue dated receipts for the application for work. It is the work of Panchayat to allot work within 15 days of submitting the application and to make periodical surveys to assess demand for work. On visiting panchayat halqa krad, the situation is different. The people refused that they are given the work within 15 days of submitting the application. They don't even know that if demanded employment isn't provided within 15 days, the applicant is entitled to an unemployment allowance. It is because of the public unawareness about the scheme and also the poor functioning of the panchayat Institution in the area.

Identification, planning and monitoring records for works: - The panchayat forward the list of works to program officer for scrutiny and preliminary approval. The Panchayat also maintain records as specified in the MGNREGA operational guidelines. The people at various places are of the view that most works forwarded by the panchayat doesn't get approval as there is less coordination between the panchayat members and the administrative officers.

Monitoring implementation, preparing annual reports and proactively disclosing details of work: - The panchayat monitors the implementation of the works taken under the scheme. It also monitors the quality and quantity of the material used in the work taken under the scheme. It is the role of the panchayat to prepare annually a report containing the facts, figures and achievements relating to the implementation of the scheme within its jurisdiction. The panchayat had to proactively disclose the details of work both completed and ongoing. While visiting the panchayat halqa - A, it was found that the panchayat members are on routinely basis inspecting the works taken under the MGNREGA scheme. This had made the scheme more successful as the quality and quantity of the material used in the works had improved a lot. The people in the said area respond positively for the role played by the panchayat in monitoring the works taken under the scheme.

Organising Rozgar Diwas: - The panchayats had made it possible for the people to directly take part in the better result oriented planning of the scheme. By organising rozgar diwas, people came to know about the real benefits of the scheme and are hence motivated to take part in the proper implementation of the scheme. The organization of rozgar diwas not only facilities job card registration process for inclusion of new families but also to receive work applications from interested households and provide dated receipts on spot. It also helps to record grievances and submit the same to authorities for redressal. The rozgar diwas is organized at least once in a month.

Better connectivity between rural people and govt.:- The panchayat act as a bridge of connectivity between the

government and the rural people. The panchayat made it easier for the rural people to directly take the benefit of the government schemes and in turn helps the government to attain the results which were prospected at the implementation of the scheme for the development of the country.

Conclusion - MGNREGA has been successful in created a justifiable "Right to Work" for all rural households in in Kashmir valley. The act is an unprecedented intervention by the govt. of India in reforming and reenergizing the rural labor market by providing livelihood security to thousands of people in Anantnag district. In conflict ridden Kashmir, the rural areas that are caught in widespread poverty, lack of basic infrastructure and vulnerability, the launching of MGNREGA brought a lot of hope and optimism. Besides reducing rural unemployment, it also impacted the stagnant wage structure for the rural unskilled workers. MGNREGA is also a glaring example which has ensured community participation through panchayat raj institutions (PRIs) in planning, implementation, monitoring and evaluation (social audit). It also aims at enabling the PRIs towards good governance through the transparency, accountability and participatory mechanisms. Even the successful performance and active participation of the community determine the overall effectiveness of NREGS. However, govt. official figures, the only major available information source about the state, don't show a healthy picture as compared to other parts of India and generate a lot of questions and ambiguity.

References :-

1. Goel, S.L; and Rajnesh Shalini (2008), Panchayat raj in India: Theory and practice, Deep and Deep publication, (p) Ltd. New Delhi.
2. The Gazette of India (2005)," The National Rural Empowerment Guarantee Act,2005," Ministry of Law and Justice, (Sept.), No 48
3. Dr. Gazala Firdous, "Study of MGNREGA in District Budgam in J&K."
4. Greater Kashmir,"NREGA in J&K (March 14, 2015).
5. Bhat, Fayaz Ahmad;(2014), "MNREGA in J&K, some field experiences", Indian journal of economics and development, vol.10, No. 1, Pp 40-46.
6. Poverty and Equity- India (2012)," The World Bank".
7. Government of Jammu and Kashmir Rural Development Department of J&K. Govt. Press Srinagar.

****

Assessment of Scenario and Problems of Diversified Crop Apple in District Pulwama of J&K

Showkat Ahmad Beigh* Dr. Sarla Nirankari**

Abstract - The state of Jammu and Kashmir overall shows a high level of diversification. In recent past there has been a remarkable progress in the development of horticulture crops particularly apple in district Pulwama. The decision to diversify crops are taken at micro level or at household level and the main reason behind these decisions has been to enhance agriculture productivity and cultivate high value crop apple with positive outcome. The insurgency in the Kashmir valley over the years has caused a great damage to apple industry resulting in a number of bottlenecks for its growth. In the present paper an endeavor has been made to analyze the scenario of apple and to assess the problems faced by apple orchardists in different stages of cultivation, marketing, storage, and export in Kashmir in general and Pulwama district in particular.
Keywords - Apple, Orchards, Kashmir, Scenario, Problems, Economic, Crop diversification, Horticulture.

Introduction - Agricultural diversification is an important mechanism for economic growth. To meet the challenges of a globalizing market in agriculture as well as the growing and changing needs of the population, many countries in have undertaken crop diversification to enhance productivity and cultivate high value crop with positive outcome. These countries are gradually diversifying their crop sector in favor of high value commodities, especially fruits, vegetables and spices. The state of Jammu and Kashmir, with its varied and diversified geographic, agro-climatic and topographic features, has great potential for growth of agriculture and horticulture crops. The state has witnessed a shift from low income generating crops to high income generating commercial crop apple during recent past.

The Apple (Malus domestica) is one of the principal fruits, grown in temperate region of the world. It has colorful appearance, crispy flesh, pleasant flavor and sweet taste that attract the consumers and fetch good price. Jammu and Kashmir and Himachal Pradesh have roughly equal production area for apple, but J & K has the higher average yield (output) which accounts to 67 percent of total apple production in India (Anonymous 2003). Jammu and Kashmir is the major apple Producing state which produces about 1.33 million tons per year (Anonymous, 2009) and it exports apple to Middle East, Gulf and East Asian countries through state marketing intermediaries (Javid and Banerjee, 2003). Its cultivation is done in all the districts of Kashmir valley and major share to the apple production comes from Baramulla, Shopian, Pulwama, Kulgam and Anantnag.

Objectives of the Study - The study was carried out to evaluate and assess the scenario and problems of apple orchardists of J&K in general and district Pulwama in particular.

Methodology - For the collection of primary data four villages were selected at random sharing good heritage of apple and responses of the respondents were obtained by questionnaire method. Besides secondary data was availed from reliable sources such as National Horticulture Board(NHB), Economic survey, Directorate of Economics and Statistics, J&K, books, journals, journals, magazines, websites, and other agencies of the Department of horticulture of the Kashmir valley.

Scenario of apple in district Pulwama - The **Jammu and Kashmir farming** is an important economic activity of the state. The majority of the indigenous local population of **Jammu and Kashmir** depends on **apple production** and its related activities to earn their livelihood. Most of the districts of Jammu and Kashmir are unaffected and unaltered by the industrial developments of the modern era. With no other major source of income, a good number of the indigenous population of the state depends on Apple cultivation in Pulwama. The salubrious weather and fertile land of the area produces several varieties of Apples that help the state to earn a large amount of revenue.

The area and production of fruits in general and apples in particular has increased many folds during the last about fifteen years. This has also brought in many problems with regard to marketing of the fruits. The various marketing facilities, necessary for economic disposal of the produce have, however, not been able to keep pace with the fast expanding fruit industry. The main characteristics of fruits viz. seasonality in production, bulkiness perishability render

*University Institute of Education, Sant Baba Bhag Singh University, khiala, distt. Jalander (Punjab) INDIA
**University Institute of Education, Sant Baba Bhag Singh University, khiala, distt. Jalander (Punjab) INDIA

the task of marketing of fruits more difficult and delicate. In the absence of any planned marketing program for these fruits, the producers are often deprived of their getting good returns and at the same time the consumer suffers by not getting fruits at reasonable price.

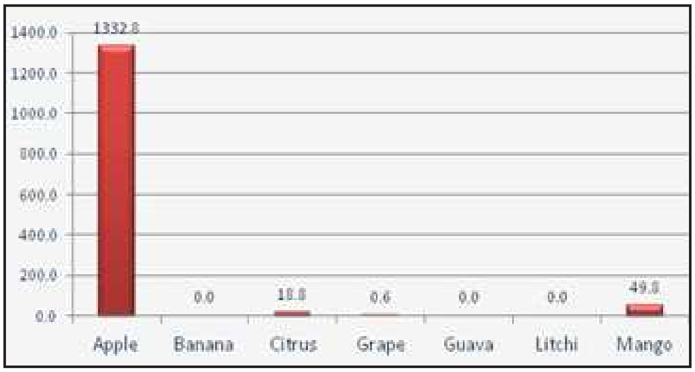

Source: statsindia.com
Fig1: Fruit production in Jammu and Kashmir

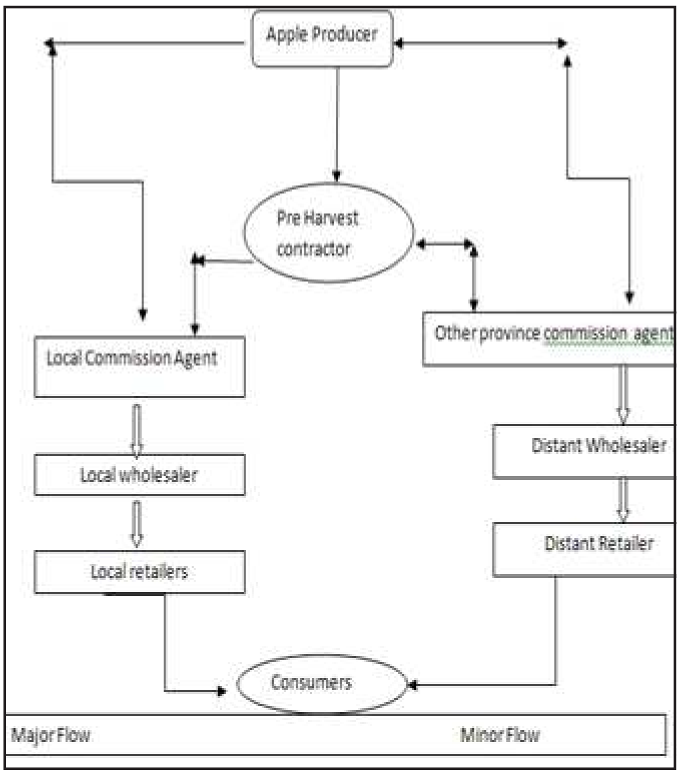

Fig 2: Marketing channels of apple in Pulwama district.
Low prices for domestic apples, despite the presence of a 50 percent tariff and relatively high-priced imports in the market, are due to the large difference in quality between domestic and imported apples. Because of superior cold chain infrastructure, imported apples arrive in Indian retail outlets in fresh, crisp, and juicy condition throughout the marketing year. Equivalent quality domestic apples, in contrast, are generally available only during the August-November harvest season because they do not benefit from refrigerated storage and transport. In south India and other areas distant from producing regions, the availability of quality domestic apples is even more limited. Imported apples generally look better than domestic apples because of uniformity of size, color, and shape, as well as very low levels of latent damage due to higher quality packing.

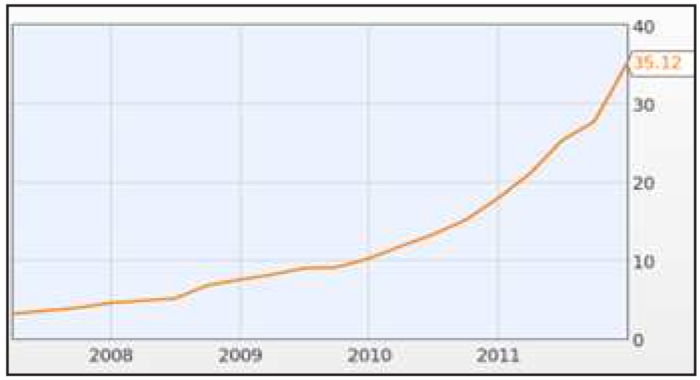

Fig 3: Apple earning per share TTM

Prices are generally determined in these markets by auction. Auctions are often not conducted in a transparent manner and are prone to manipulation due to secret bidding practices. Although the Azadpur market reports volumes sold and average prices at the end of each day based on information supplied by the traders, the actual transaction prices are known only to the buyer and seller. These practices do not necessarily result in prices that are divorced from overall supply and demand conditions over the longer term, but they impede the flow of accurate information and limit competition that might reduce trader margins.

The emergence of Apple production in Pulwama district has been driven by growth in per capita incomes and the removal of quantitative import restrictions. A small but expanding segment of upper middle class consumers now have sufficient income to diversify and upgrade their diets by purchasing high-priced and high-quality products, such as imported apples. However, the high cost of domestic and, particularly, imported apples compared with other Indian fruit is likely to restrict consumption of apples by middle- and lower-income consumers who make up most of India's population. The extent to which domestic apple producers will be able to boost productivity and quality are key uncertainties in evaluating the prospects for the Indian apple market. Low productivity compared with most other domestic fruits as well as other apple-producing countries raises apple prices relative to substitute foods and limits growth in domestic apple consumption. It is unclear if the production constraints imposed by terrain and climate can and will be overcome by the introduction of improved varieties and cultivation practices. The poor quality of domestic apples is also due to poor grading, packing, refrigeration, and transport practices. So far, there is little evidence that the influx of high-quality and high-priced imported apples is leading Apple growers and traders to invest in improved production or post-harvest practices. The advent of apple imports has been controversial among Pulwama stakeholders because of concern with impacts on domestic producers. Imported apples do not compete

with domestic apples as close substitutes because of the sharply higher price and quality of imports. The only exception is during the peak harvest period, when domestic apples still have the crispness and sweetness that imported apples have year round. Because of the large gap in price and quality, the presence of imported apples seems to have provided an opportunity for domestic intermediaries to earn greater profits with little impact on domestic growers. For the most part, domestic growers have yet to exploit the opportunity to boost their earnings by improving quality to compete with imported apples.

The post-harvest practices like grading, storage, packing, handling and transport followed by Kashmiri apple growers and contractors are poor compared with those followed in the United States and other major producing countries. In the past, incentives to improve postharvest practices were weak, likely because of the limited domestic market for higher quality and higher priced products, as well as the price risk faced by growers and contractors. Although there is some evidence of a few growers' improving their practices to take advantage of the emerging market for higher quality products,

A key finding of this analysis is that efforts to reduce the margins—or profits and unaccounted costs-received by importers, wholesalers, and retailers in the marketing of imported apples are likely to have a greater impact on imports than efforts to reduce import prices, the tariff, or marketing costs. Also, weak market integration and poor storage, handling, and transport infrastructure, suggest that imported apples can compete most effectively in markets distant from Delhi, such as Chennai, Bangalore, and Mumbai, particularly if retail prices can be reduced.

Major problems of the apple orchardists:

1. No healthy source of Purchasing Apple saplings and Grafts - It is found that the farmers are purchasing saplings and grafts from various sources, which include their own source, private nurseries and the horticultural department. The Table 1 reveals the sources of purchase of the apple grafts by the sample respondents. The fruit growers in the district procure the saplings mainly from private nurseries (57.14 percent). Table further depicts that horticulture department provides only over one-fourth of saplings to the growers which is not a healthy sign Only 9.52 per cent of the growers use their own saplings, the main reason of which is that the growers have little knowledge and exposure to develop their own saplings. The study also provides an insight about the subsidy on plantation from the government. It shows that three fourth respondents do not receive any sort of subsidy for their saplings and rest one fourth are getting subsidy from horticulture.

Table 1: District wise source of saplings of the respondents (% Farmers)

District	Nurseries	Own produce	Horticulture Dept.	Subsidy of saplings
Baramulla	57.58	15.15	27.27	27.27
Budgam	52.38	4.76	42.86	30.35
Pulwama	**57.14**	**9.52**	**33.33**	**33.33**
Shopian	56.10	21.95	21.95	24.39
Total	56.5	14.80	28.7	27.79

Source: Field Survey

2. Unscientific Grading and Pacing of Apple - The practicing of the systematic method of grading of the apple, based on scientific grading standards, has not so far been followed by any agency involved in the distribution of this fruit. The fruit is seldom graded in the orchards. At best, the grower removes the immature, rotten or diseased fruits and picks up the better quality bigger fruits from the bulk of apple harvested. The sample apple orchardists of Pulwama area were asked about the problems which they were facing regarding grading and packing of apples. They reported that higher wage rates and shortage of skilled labor were the main problems. But a few orchardists also reported non-availability of labor for grading. However, the problem of higher wages was more in case of large farmers whereas shortage of skilled labor was more with small farmers.

3. Problems of Packing Material - Apple being fragile in nature needs good packaging which may ensure least damage to the fruits during transportation from producing areas to the distant markets. Without proper packing it is rather impossible to market the apple. The apple orchardists were asked about the problems faced by them regarding packing boxes and material. The problems revealed by them were shortage of packing boxes and packing material, high prices of these, non-availability in time, lack of credit, supply at inconvenient places, etc. About 73 per cent of the sample orchardists complained of high prices of pacing box and material whereas 69 per cent reported shortage of packing material and box. About 40 per cent were of the view that the boxes were not available at desired places and this costs them more.

4. Storage Problem - Most of the fruits produced in Jammu and Kashmir reach the market during rainy season. There being generally no facilities at the orchard sites for storing apples even for a few days some shady space is improvised or ill-ventilated cattle-sheds, etc., are used for this purpose. This brings down the quality of the produce. There is also inadequate facility of cold storage which could help the orchardists to reserve the produce and sell it in future to get more profits. The sample orchardists were asked regarding problems of storage which they sample orchardists were asked regarding problems of storage which they were facing. Majority of the orchardists revealed that they had no storage facilities at their orchards. About 25 per cent confirmed that they did have storage facility but that is inadequate. Needless to add that absence of storage facilities size of holding increases, the problem becomes more acute. About 27 per cent did not report any problem in this regard.

5. Problem of Transportation - Transportation is the most important factor in the marketing of apples which have to be carried from producing areas to the consuming

markets situated all over the country. The problems faced by apple growers with regard to the transportation of apples have been examined and main problems identified were lack of vehicles, vehicles not available in time, villages not linked with metaled roads, high transportation charges, lack of all-weather feeder roads in apple producing areas for facilitating the movement of apple produce, non-availability of labor/porters and no road up to 1km. form orchard site.

6. Lack of Market Intelligence - Market intelligence plays an important role in the marketing of apples. The prices of produce are dependent mainly on the market situation. If the grower does not have proper information regarding the market, he cannot take the advantage of high prices whenever those are prevalent. Problems in this regard have been classified into different components viz., late information, information available for limited markets only, inadequate information, misleading information, etc. Fruit growers in Pulwama are also not fully aware of markets prices, because they happen to be located at distant places. Regular visit to terminal markets like Delhi may solve the problem to a great extent but farmers being mostly poor cannot afford to bear huge expenditure on this. In such situations, they have to accept the rate quoted by the commission agents or intermediaries. Experience shows that the information given by commission agents is invariably incorrect as their main purpose is to extract maximum benefits, from the growers through biased information.

7. Market losses on account of numerous marketing channels - The marketing system in the study areas is neither regulated nor efficient because of the availability of a number of marketing channels. Contractors play an important role by maintaining temporary or permanent relationships with producers and other forwarding agents. To protect the interests of growers the pooling of surplus and marketing through cooperatives would have been a better option but the poor performance of cooperatives has paved the way for distress sales. The poor farmers have to depend largely on different intermediaries for marketing of their apple. About 80 per cent of the total fresh fruit production is exported through unorganized marketing system to the markets outside the state. However, supplies are made in discrimination to the demands that often cause glut in terminal markets resulting in losses and lower prices to the produce. Accordingly, the number of fruit boxes exported to other states of the country has increased significantly yet the average price in different markets has remained almost stagnant.

8. Problem of Malpractices - Sometimes apple growers get very little out of their sale and this may be because of low prices in the market, high marketing cost, malpractices by commission agents and other market functionaries etc. The sample orchardists were asked to elicit their problems regarding various malpractices. About 62 per cent of the orchardists disclosed that commission agents deduct more charges. About 28 per cent reported that the payments are unduly delayed and that the money is often paid in installments. About 55 per cent of the orchardists reported that the commission agents also deduct undue charges. This problem was more with Pulwama orchardists.

9. Inadequate space at fruit markets - Although there has been opened some fruit markets in Pulwama district recently in Prichoo and Gulshanabad but main problem here is that there is not enough space to accommodate the production during the top season which taking a heavy toll on the growers and their business as they are unable to showcase their crop to the buyers, resulting in low sales The traders using the market blamed the authorities' negligence for developing the infrastructure which is hurting not only the apple growers but also the overall economic development of the State. Prichoo fruit market caters to hundreds of villages across the district. Every day hundreds of growers along with traders, commission agents and transporters throng the market for the trading activities but face extreme difficulties to carry their business. The fruit growers are complaining that the trade facilities are dismal as there are only enough auction sheds.

10. Improper awareness among Farmers about Apple Cultivation Practices - Awareness of apple cultivation is very important for farmers as it helps in utilizing scientific inputs and modern techniques for cultivation purposes for effective farming. In the study area it has been observed that orchardists have inadequate information about apple cultivation practices which is depicted in the table below.

TABLE 2 (see in next page)

11. Problems in Marketing - Marketing is an extensive function; it is concerned with each part of deliver from its initiation, outline, pricing, dissemination, setting and advancement until it at long last achieves the hands of the purchaser. An important problem faced by of the villages taken up for study relates to the marketing of their apple cultivated on commercial scale. According to estimates over 500,00 tons of apple are ruined every year in the valley because of this problem. There are many reasons for this. Farmers allege that spurious fungicides, pesticides and fertilizers are being supplied to them at exorbitant rates. Jammu and Kashmir being the major apple producing and marketing area is connected with rest of India by highly mountainous terrain, transport costs thus increase. Over this, the actual retail price is highly disproportionate as per farmers to the price they get at the farm gate. Incidentally, Delhi is the main node for distribution of apple in the state, a closer integration with the Delhi market is required.

However, the other problems faced by the farming community are shown in below table.

Table 3 (see in last page)

Conclusion - Agricultural diversification is an important mechanism for economic growth. The state of Jammu and Kashmir overall shows a high level of diversification towards commercial crop apple. The pace of diversification has almost come to halt. The main aim of the paper is to analyze the scenario and problems of production of apple in

Pulwama district. The paper has mainly focused on production of apple in Pulwama district, cultivation practices and the problems faced by the Pulwama orchards. The Pulwama district is famous for different verities of apple production. The production of apple by farmers has many constraints in the district, the pre and post cultivation practices of apple are challenging tasks for farmers. Most of the farmers in the study area have been found very informative in terms of usage of fertilizers and spraying of pesticides in their orchards. The apple growers of the district are currently facing different types of obstacles to grow apples that may gain foreign exchange. The farmers face the problem in grading of apples and most of the apple growers do not grade their fruits properly. In addition, the farmers of the district also face the pacing problems, transportation problem, packing problem, and poor fruit production.

References :-

1. Malik, Zahoor Ahmad (2013), *"Assessment of Apple Production and Marketing Problems in Kashmir Valley"* Journal of Economic & Social Development, Vol - Ix, No. 1, pp. 152-156. D.
2. D. Jha, Rapporteur's *Report on Diversification of Agriculture and Food Security in the Context of New Economic Policy,* Indian Journal of Agricultural Economics Vol. 51, 1996,829-832.
3. Gupta, G.S. (2001), *Macroeconomics Theory and Applications*, Tata McGraw-Hill, New Delhi.
4. Haque. T. (1996), *Small Farm Diversification: Problems and Prospect,* NCAP, New Delhi.
5. Hasan, B.(1999), *Rainfall Climatology of Jammu and Kashmir State, India*, Drought Network News (1994-2001). Paper 44.
6. Lone hafiz, Irfan. (2012), J&K government gives Damn to flagship apple industry" Greater Kashmir Daily. June 9 2012.
7. lqbal. M. (1989), *Pakistan Marketing Farm Products in Asia and Pacific,* Asian Productivity Organization, Commercial Agricultural Marketing and Storage Limited, Islamabad, Pakistan. pp: 295-318.
8. g Sikra BK and Swarup R (1987), *Production and Marketing of Apples,* Mittal Publications, New Delhi.
9. Jammu and Kashmir, "Economic Survey", Planning and Development Department, Govt. of J&K
10. Directorate of Economics and Statistics, J&K
11. Shaheen F.A and Gupta S.P, 2002 "Economics of apple marketing in Kashmir province" "Agriculture Marketing Journal" p.5.
12. Ahmad. N, (et.al) 2008, "Problems and prospects of temperate fruits and nut production scenario in India vis-à-vis international scenario "central institute of temperate Horticulture Srinagar"
13. The apple is the pomaces fruit of the apple tree *(http://en.wikipedia.org/wiki/Apple)*, (2010)
14. Reshi, Mohd Iqbal et al (2010), "Assessment of problems and prospects of apple production and marketing in Kashmir valley, India" Journal of Environmental Research and Development Vol. 4 No. 4, April-June 2010

TABLE 2: Information Awareness of Apple cultivators of Jammu and Kashmir (% Farmers)

District	Source of information	Attended horticultural training Programs	Attended demonstration camps	Attended exhibitions	Progressive apple grower	Personal expert visits
Baramulla	90.91	39.39	39.39	60.61	63.64	54.55
Budgam	92.86	40.48	35.71	50.00	73.81	47.62
Pulwama	90.48	42.86	28.57	57.14	71.43	52.38
Shopian	85.37	30.49	48.78	64.63	57.32	56.20
Total	89.73	37.76	39.88	59.82	64.35	53.78

Table 3: Problems faced in marketing of fruits by growers in different markets of India and their responses towards problems in Pulwama District.

S.	Problem	Yes	No	No Answer
01	Underprivileged Orchard	48.58	28.52	22.88
02	Location of Village	45.76	15.36	38.87
03	Transport charges	49.24	14.10	26.64
04	Monopoly	63.00	10.34	26.64
05	Low Economic status	50.47	09.71	39.81
06	Lack of Education	56.42	06.26	37.30
07	Transport security	53.29	11.91	34.89
08	Pest incidence	59.91	20.68	46.39
09	Lack of Cooperative agencies	34.48	27.89	37.61
10	Market information	68.65	03.44	27.89
11	Checking at tool posts	53.00	22.00	25.00
12	Lack of finance	45.00	24.00	31.00
13	Marketing problem	69.27	05.01	26.33
14	Unnecessary funds	49.21	06.89	25.00
15	Quality of pesticides	77.74	05.01	17.25
16	No knowledge about fruit marketing	30.10	27.89	27.00
17	Commission deduction	49.00	24.00	22.00
18	Insurgency	63.00	15.00	22.00
19	Orchards occupied by Indian Army	41.00	33.50	25.50

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

A study of impact and challenges of Digital India program

Vaibhav Sharma *

Introduction - Digital technologies provide opportunities for inclusive and sustainable economic growth in all the sectors of economy. Digital India is the inauguration of digital uprising. It is important for us to carry out planned efforts to create and harness the benefits of *Digital India Program* which has been launched by the Prime Minister of India Narendra Modi on 1 July 2015 - with an objective to transform India into a digitally empowered society and knowledge economy. The Digital India would ensure that Government services are available to citizens electronically. The pace at which India is taking up digital technologies will lead to digital transformation and digitally empowered society.

Objectvies :

1. To study the concept of digital India program.
2. To find out its importance and challenges to be faced in execution of this program.
3. To find out solutions to convert the digital India program into reality.

Research Methodology - The paper is based on the secondary data and all the facts and material is retrieved from the internet through various magazines, research papers, news papers and expert views on the same subject belongings.

Vision Areas And Pillars Of Digital India Program - Three key vision areas are:

1. Digital infrastructure as a core utility to every citizen.
2. Governance and services on demand.
3. Digital empowerment of citizens.

besides these there are nine pillars of this program which are as follows:

- i. Broadband Highways
- ii. Universal Access to mobile connectivity
- iii. Public internet access program
- iv. eGovernance (Reforming government through technology)
- v. eKranti (Electronic delivery of services.)
- vi. Information for all
- vii. Electronics manufacturing
- viii. IT for jobs
- ix. Early harvesting programmes

Social And Economic Impact Of Digital India Program

Contribution to Economic Growth - Digital technologies in many instances have boosted growth, expanded opportunities, and improved service delivery. Digital technologies have the power to deeply transform the economy as a whole and across various sectors. According to analysts, the Digital India plan could boost GDP up to $1 trillion by 2025. It can play a key role in macro-economic factors such as GDP growth, employment generation, labor productivity, growth in number of businesses and revenue leakages for the Government. As per the World Bank report, a 10% increase in mobile and broadband penetration increases the per capita GDP by 0.81% and 1.38% respectively in the developing countries. India is the 2nd largest telecom market in the world with 915 million wireless subscribers and world's 3rd largest Internet market with almost 259 million broadband users. There is still a huge economic opportunity in India as the tele-density in rural India is only 45% where more than 65% of the population lives. Future growth of telecommunication industry in terms of number of subscribers is expected to come from rural areas as urban areas are saturated with a tele-density of more than 160%.

According to Forbes19, 125,000 large organizations are launching digital business initiatives with estimated digital revenue increase by more than 80% by 2020. There is an evidence that the companies that are adapting digital technologies are 26% more profitable than their industry peers. New opportunities for entrepreneurship and self-employment are also growing rapidly in the digital economy.' The rise of e-commerce platforms is creating a new group of micro-entrepreneurs, who are able to access global markets in a way that was impossible before.

Contribution to Society - Social segments such as education, healthcare, and banking are unable to reach out to the citizens due to obstacles and limitations such as middleman, illiteracy, ignorance, poverty, lack of funds, information and investments. These challenges have led to an imbalanced growth in the rural and urban areas with marked differences in the economic and social status of the people in these areas.

Our governments are making it easier for citizens to access public services and shifting from simply administering services to regularly engaging and empowering citizens to participate in the design and the

***Assistant Professor, IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA**

delivery of these services. This help not only increasing choice and well-being but also boosting government productivity and efficiency of public administration. The poor literacy rate in India is due to unavailability of physical infrastructure in rural and remote areas. This is where m-Education services can play an important role by reaching remote masses. According to estimates, the digital literacy in India is just 6.5% and the internet penetration is 20.83 out of 100 population. The digital India project will be helpful in providing real-time education and partly address the challenge of lack of teachers in education system through smart and virtual classrooms. Education to farmers, fisher men can be provided through mobile devices. The high speed network can provide the adequate infrastructure for online education platforms like massive open online courses (MOOCs). Mobile and internet banking can improve the financial inclusion in the country and can create win-win situation for all parties in the value-chain by creating an interoperable ecosystem and revenue sharing business models. Telecom operators get additional revenue streams while the banks can reach new customer groups incurring lowest possible costs.

Factors such as a burgeoning population, poor doctor patient ratio, high infant mortality rate, increasing life expectancy, fewer quality physicians and a majority of the population living in remote villages, support and justify the need for tele medicine in the country. M-health can promote innovation and enhance the reach of healthcare services. Digital platforms can help farmers in know-how (crop choice, seed variety), context (weather, plant protection, cultivation best practices) and market information (market prices, market demand, logistics).

Challenges :

1. Cyber security risks are growing exponentially with the increasing digitization of the economy. We do not have requisite skills to inspect these for hidden malwares
2. Digital illiteracy is the biggest challenge in the success of digital India programme. Low digital literacy is key hindrance in adaptation of technologies.
3. India has low internet speed.
4. India's digital infrastructure is comprehensively inadequate to tackle growing increase in digital transactions.
5. There is a broad digital partition between urban and rural India. Till now funds have not been deployed effectively to meet the cost of infrastructure creation in rural areas.
6. India has many languages. Non availability of digital services in local languages is a great barrier in digital literacy.

Suggestions :

1. Digital literacy is the must for the successs of digital india program.
2. The digital gap between rural and urban areas should be filled up first.
3. Number of Hotspots shuld be increased sufficiently so that digitilization may take place smoothly.
4. People shoul know how to secure their online data. We need to introduce cyber security course at graduate level and encourage international certification bodies to introduce various skill based cyber security courses.
5. PPP models must be explored for digital infrastructure.

Conclusion - The vision of Digital India is Great. The younger generation is growing up in a new digital culture. The rapid growth of new technologies and business models, demographic shifts, and economic trends are likely to have significant global impacts Technology is the new intermediary. Goods and Services Tax (GST) is going to usher in a new era altogether to bring in transparency. The government has put in place a completely transparent e-platform to enable transparent and fair procurement and so on. Digital wallets and payments—UPI, AEPS, APB—are growing exponentially and it is heartening to see people getting conscious about the power of biometrics. . The overall growth and development can be realized through supporting and enhancing elements such as literacy, basic infrastructure, overall business environment, regulatory environment, etc. All this and much more will to a great extent serve to transform the Indian society into a digitally knowledgeable empowered society.

References :-

1. www.digitalindia.gov.in
2. Digital India. Unlocking the trillion Dollar Opportunity: ASSOCHAM –Deloitte report, November 2016. Retrieved from www.assocham.org.
3. Digital India Retrieved from http://www.indiacelebrating.com/government/digital-india/
4. http://iasscore.in/national-issues/digital-india-programme-importance-and-impact
5. Digital India Digital Economy By Aruna Sundararajan.
6. Discussion Paper For International Seminar 'Digital Economy Concept, Trends and Visions: Towards a Future-Proof Strategy.

****

Study of Popularity of E-banking in developing cities with special reference to Indore City

Vaibhav Sharma * Archana Dwivedi **

Introduction - Indore is a tier 2 city, the largest city of the Indian state of M.P. by population. A central city, Indore exerts a significant impact upon commerce, finance, media, art, fashion, research, technology, education and entertainment and has been described as the commercial capital of the state and houses campuses of both the Indian Institute of Technology and the Indian Institute of Management. Located on the southern edge of Malwa Plateau, the city is located 190 km west of the state capital of Bhopal. The Indore Metropolitan Area's population is the state's largest, with 3.2 million people living there. Indore traces its roots to its 16th century founding as a trading hub between the Deccan and Delhi.Indore's financial district, anchored by central Indore, functions as the financial capital of the Madhya Pradesh and is home to the Madhya Pradesh Stock Exchange, India's third oldest stock exchange. Indore's real estate market is among the most expensive in Central India. Here, we have made a study of Indore a developing city with respect to the popularity of e-banking. E-banking is defined as an automated delivery of new and traditional banking products and services directly to customers through personal computer.

Objectives:

1. To identify customer engagement barriers in online banking.
2. To know user perception and attitude towards online banking.

Hypothesis:

1. Time is being saved.
2. Internet banking provides convenience in dealing and secured transaction.

E-banking - Electronic banking is defined as the automated delivery of new and traditional banking products and services directly to customers through personal computers. E-banking is a new way doing business without setting foot outside. Internet was created by a company called ARPA (Advanced Research Project Agency) in 1966/1967 associated with U.S. government for military use. The original name of internet was ARPANET. E-banking was created as a result of various technological change which have affected the banking industry. Internet banking was first adopted in New York. The first online banking service was introduced in October, 1994 by Stanford Federal Credit Union, a financial institution. In internet banking client can access his/her bank account via the internet through a PC or cellular phone and web browser. It is movable and people can access to it wherever they are on a 24 hour basis. Online banking is beneficial for both bank and user. Main benefit are cost saving, it allowsbank to reach new customer, also raises the reputation of the bank and provide better service and satisfaction to customer. To access a financial institution's online banking facility, a customer with internet access would need to register with the institution for the service, and set up a password and other credentials for customer verification. The credentials for online banking is normally not the same as for telephone banking. Financial institutions now routinely allocate customers numbers, whether or not customers have indicated an intention to access their online banking facility. Customers' numbers are normally not the same as account numbers, because a number of customer accounts can be linked to the one customer number. The customer number can be linked to any account that the customer controls, such as cheque, savings, loan, credit card and other accounts.

The customer visits the financial institution's secure website, and enters the online banking facility using the customer number and credentials previously setup. Online banking services usually include viewing and downloading balances and statements, and may include the ability to initiate payments, transfers and other transactions, as well as interacting with the bank in other ways.

Analysis - To study the popularity of online banking in developing cities with reference to Indore, we have conducted a survey by the means of questionnaire and telephonic interview. Through this survey we analyzed that online banking is quite popular in Indore. We have studied the view point of 100 individuals and we came to know different perspectives of the people regarding internet banking and the use of internet banking. Around 80% of the people believed that their time is being saved by using online banking. For 65% of the individuals, internet banking is far much convenient to them as compared to that of the traditional banking. On the other side, the percentage of individuals is very low, when asked about the security of

*Assistant Professor, IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA
**Assistant Professor, IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA

online banking. We have also analyzed that more than 70% of the individuals are using www for more than a year. Also, most of the people have purchased products through www. 90% of the individuals have bank account for which they interact with their banks through a www browser and also they "somewhat" trust those banks that operates online. Through this study it was also found that almost everyone have had an ATM card and they very often frequently use it in a month or so. On an average 30% of the individuals performed online activities such as, tax filling and purchase/ sale of financial products (stock/bond). Some of the views of the people who had never used online banking services were because either they found the process too difficult or because they do not have internet services at home. For the users of electronic banking their satisfaction level was around 60%-80%. The study of popularity of electronic banking brought us to certain disadvantages of e-banking from the user point of view such as, overall difficulty in using online banking, security concerns and dependence on internet service.

Graph of the overall analysis -

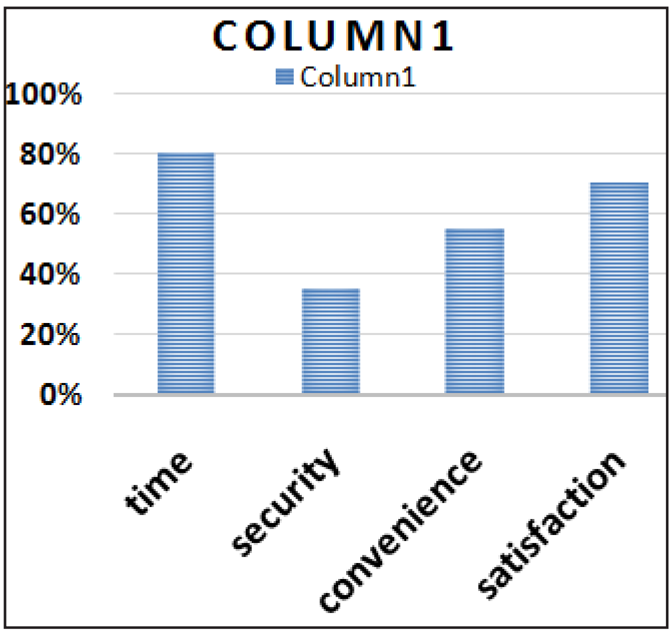

- **E-banking Services**

Testing of hypothesis - We had gone through the perception and attitude of various individuals towards electronic banking. Our main assumptions/hypothesis formulated for this research is that by using electronic banking services the precious time of people is being saved and also it provides convenience in dealings to the users along with secured transactions.

We thoroughly studied the data collected from the individuals to test the hypothesis being formulated by us. Here, we came to know that 80% of the people believed that their time is being saved by using online banking. We had found that our hypothesis regarding time saving and convenience of electronic banking has been proved, but we are failed to prove that electronic banking provides secured transactions.

Conclusion - We had thoroughly studied the popularity of electronic banking in Indore city. By this we concluded that e-banking is popular in Indore. People felt their time is being saved by using electronic banking and they found it very convenient. But they also agreed that the main engagement barrier in internet banking is its security. They cannot believe on the security of electronic banking.

References :-

1. Internet:
2. Wikipedia.com
3. Encyclopedia.com
4. Businessdictionary.com
5. Slideshare.com
6. Books:
7. E-banking awareness

Pie chart of the analysis:

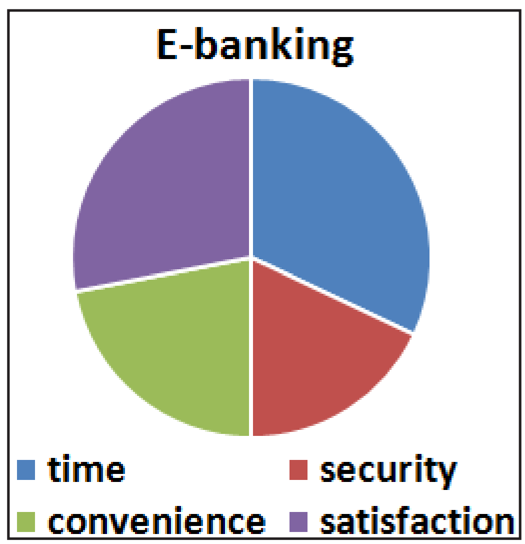

- **E-banking services**

****

विकास एवं पर्यावरण

राजेश भारतीय *

प्रस्तावना – प्रकृति ही मानव का पर्यावरण और यही उसके संसाधनों का भण्डार है। आज का मानव प्रकृति की गोद में पलकर अज्ञानता वश अपनी विज्ञान यांत्रिकी जानकारी से पर्यावरणीय संसाधनों के अतिशय दोहन में लिप्त है। पिछले 25 वर्षो से पारिस्थितिकी विदों ने समझने और समझाने का अथक प्रयास किया है कि काल स्थान की सीमाओं में हमारे संसाधन असीमिति नहीं है। अति उपभोगी सभ्यता में औद्योगिक उत्पादन प्राकृतिक संसाधनो और ऊर्जा स्त्रोत भण्डारों पर आधारित है जो दोनों निश्चय ही त्वरित गति से क्षीण हो रहे है। इस प्रक्रिया में संसाधनों द्वारा निर्मित जीवपोशी तंत्र संकीर्ण,दूषित और विशाक्त होता जा रहे है। विज्ञान ने हमें दो विकल्पों के चौराहे पर खड़ा कर दिया है। एक तो विवके,मितव्यय और नैतिकता का लम्बा रास्ता दूसरा भोग विलास का जिस पर पर्यावरण तथा मानव जाति का शीघ्र ही सर्वनाश निश्चित है।

महात्मा गांधी ने सत्य,अहिंसा तथा अपरिग्रह पर आश्रित एक नए धर्म ओर नैतिकता को जन्म दिया था, इसमें पर्यावरण का संतुलन केन्द्रित था। संसाधनों का बंटवारा न्यायपूर्ण था, और प्राणी मात्र के लिये प्रेम था। चर्खे ने मिलों को चुनौती दी थी। ऊर्जा प्रवाह तथा पदार्थ संचरण उसमें नियंत्रित था विडम्बना तो यह है कि पाश्चात्य देशों में जैसे लोग गॉधीजी को याद कर रहे है। वैसे ही भारतवासी उन्हें और उनके दर्शाये मार्ग को भूलते जा रहे है।

मनुष्य प्राचीन काल से ही सजीव व निर्जीव जगत पर प्रभाव डालने का प्रयास कर रहा है। **डार्विन के अनुसार –** 'मनुष्य यह उपलब्धि व वर्चस्व बिना हाथों की सहायता के प्राप्त नहीं कर सकता था। मनुष्य के सोचने की शक्ति,कार्य कुशलता की सहायता से उसने कई औजार व नए आविष्कार किए जो उसकी मानसिक विद्वता को दशति थे। उसने हजारों सालों के अथक प्रयत्नों से वे उपलब्धियॉं प्राप्त की जो अन्य कोई सजीव प्राप्त नहीं कर सका लेकिन उसका दूसरा पहलू सुखद नहीं है अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में वह इतना लालची हो गया कि जिस पर्यावरणीय संसाधनों के माध्यम से वह प्रगतिशील बना है उसी का निन्तन दोहन व ह्रास कर रहा है।

आज से लगभग चार दशक पूर्व पर्यावरण शब्द यदा–कदा ही पढ़ने और सुनने में आता था, किन्तु हाल ही के वर्षो में भारत में ही नहीं अपितु समूचे विश्व में पर्यावरण चर्चा का विषय है। विकास के साथ प्रदूषण भी बढ़ा है, इसलिए पर्यावरण प्रदूषण तुलनात्मक रूप से अधिक चर्चित है। इसमें आर्थिक सामाजिक,राजनीतिक,सांस्कृतिक आदि घटनाओं को सम्मिलित किया जाता है। मनुष्य को आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अनेक आर्थिक क्रियाऐं करनी पड़ती है। इन आर्थिक क्रियाओं पर वातावरण का प्रभाव पड़ता है। मानव वातावरण की उपज है आज मनुष्य वातावरण को पक्ष में करने के लिए प्रयासरत है।

पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ है हमारे चारों ओर छाया आवरण (परि+आवरण त्र पर्यावरण) जीवन और पर्यावरण में अटूट संबध है। प्रकृति में जल, वायु भूमि पेड़–पौधों, जीवन–जन्तु आदि में एक संतुलन कायम है। यह संतुलन ही प्राणी के अस्तित्व का आधार है।

बेबस्टर शब्द कोश के अनुसार – 'पर्यावरण से अभिप्राय उन घेरे रहने वाली पारिस्थितियों,प्रभावों एवं शक्तियों से है जो प्राकृतिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक दशाओं के समूह द्वारा व्यक्ति अथवा समुदाय के जीवन को प्रभावित करता है।'

प्राकृतिक संसाधनों के बाद आर्थिक पर्यावरण को प्रभावित करने वाला दूसरा महत्वपूर्ण घटक मानव संसाधन है। जनसंख्या आर्थिक गतिविधियों का साधन और साक्ष्य दोनों होती है। जनसंख्या में गुणात्मक वृद्धि का आर्थिक पर्यावरण पर अनुकूल तथा संख्यात्मक वृद्धि का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। भारत में मानव संसाधन आर्थिक विकास में अवरोध सिद्ध हुआ है। यद्यपि जानाधिक्य के कारण भारत दुनिया के बड़े बाजार के रूप में उभरा है। सस्ती श्रम शक्ति के कारण विदेशी निवेशकों का आकर्षण बढ़ रहा है। किन्तु जनसंख्या की बहुलता से अनेक समस्याऐं यथा गरीबी बरोजगारी पिछड़ापन मुखर हो गई है। आर्थिक प्रगति जनसंख्या रूपी बाढ़ में बह जाती है।

आज विश्व में पर्यावरण प्रदूषण की विकट समस्या है। पृथ्वी पर बढ़ते प्रदूषण के कारण 'ओजोन' तक प्रभावित हो गई है। प्रदूषण के बढ़ने का प्रमुख कारण औद्योगीकरण और बढ़ती जनसंख्या है। गरीबी के कारण वनों की अंधाधुन्ध कटाई हो रही है। बहुसंख्यक जनसंख्यक जनसंख्या प्रदूषित जल पीने के लिए अभिशप्त है। शहरों में कोलाहल पूर्ण वातावरण है। ध्वनि और वायु प्रदूषण ने गंभीर रूप धारण कर लिया है। भारत में तीव्रता से बढ़ रही जनसंख्या आर्थिक विकास के मार्गो में बड़ी बाधा है। भारत में प्राकृतिक संसाधन प्रचुरता में नहीं होते तो आज विशाल आबादी के भरण पोषण की कठिनाई उत्पन्न हो जी है।

'आज भारत की स्थिति उस चिंता की भांति हो गई है जिसके पास आवास और सुविधाओं का अभाव है, और बहुत सारे मेहमान आ गए है और ऐसी स्थिति में वह किंकर्तव्यविमूढ़' की स्थिति में आ जाता है। भारत में बढ़ती जनसंख्या के संबंध में एक पंक्ति का उल्लेख किया जाना समीचीन है –

'परवरिश नही हो, हम कर पए फूलों की, । घर में फुलवारी लगाना गलती है।'

पर्यावरण–प्रदूषण से तात्पर्य वातावरण के भौतिक,रसायनिक,जैविक अवस्था में ऐसा परिवर्तन जिससे मानव जानवर वनस्पति अथवना नैसर्गिक

* प्राचार्य, शासकीय हाई स्कूल, बडोदिया तालाब, नरसिंहगढ, जिला राजगढ़ (म.प्र.) भारत

प्रतीकों को हानि पहुँचे। प्रदूषण का अर्थ होगा मानव अभिप्रेरित ऐसे परिवर्तन जिनसे प्राकृतिक वातावरण की गुणवत्ता का ह्रास हो। जीव या प्राणियों के लिए अनिष्ट कारक कतिपय बाह्य पदार्थो के पर्यावरण में समावेश को प्रदूषण कहते है।

पर्यावरण को गरीब और अमीर,दोनों वर्ग तेजी से क्षत विक्षत कर रहे है – एक जीवित रहने के लिये और दूसरा अपना जीवन स्तर ऊँचा बनाए रखने के लिए धनी देशों द्धारा पर्यावरण की उपेक्षा करके उच्च जीवन स्तर को बनाए रखने की दृष्टि से संसाधनों का अपव्यय और अंधाधुन्ध इस्तेमाल बन्द करना होगा। और पर्यावरण के अनुकूल जीवन शैली अपनानी होगी , जिससे पर्यावरणिक संसाधनों का चिरजीवन सुनिश्चित किया जा सकें मानव जाति के सामने आज नैतिक मुद्दा यह है कि विनश्वर पृथ्वी का कैसे बचाया जाए।

राजीव गॉधी न कहा था – 'गरीबी और डर से तनाव और संघर्ष पैदा होते है और अवकृष्ट पर्यावरण जिनमें गरीब और डर तत्रस्थ है सदैव अनर्थपूर्ण और संकटमय हो सकता है।'

जॉन मेजर के अनुसार – 'एक शताब्दी पूर्व रास्केन ने कहा था कि परमेश्वर ने यह पृथ्वी हमे अपने जीवन भर के लिए उधार पट्टे पर दी है। और हमारी हैसियत केवल पट्टाधारी की है। हमारे प्रयासों पर अरबों लोगों की आशाऐं टिकी है। हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनके आसमान और विभिन्न आवश्यकताओं में सामन्जस्य स्थापित करने का प्रयास करें। यह भी हमारा कर्त्तव्य बनता है कि हम जीवित लोगों की जरूरतों और भावी संतति के प्रति अपने उत्तरदायित्वों में सामन्जस्य बिठाएं। प्राणियों की उत्तरजीविता के लिये पर्यावरण के शोषण और संरक्षण में हमें संतुलन बनाए रखना है। पर्यावरण की जो क्षति हुई है वह हमने कोई लोभवश नहीं अपितु अज्ञानवश की है।'

हम प्रकृति की संतान है स्वामी नही – 'मानव सभ्य हो या बर्बर प्राकृति की संतान है। उसका स्वामी नहीं। यदि उसे अपने पर्यावरण पर प्रभुत्व बनाए रखना है तो उसके लिए कतिपय प्राकृतिक नियमों के अनुसार चलना आवश्यक है। वह जब प्रकृति के नियमों का उल्लघंन करता है तभी वह उस प्राकृतिक पर्यावरण तेजी ये बिगड़ने लगता है, तब उसकी सभ्यता का पतन भी होने लगता है।'

पर्यावरण ने यह कहकर इतिहास की संक्षिप्त रूपरेखा बताई है कि– 'सभ्य मानव पृथ्वी के एक छोर से चलकर दूसरे छोर पर पहुँच गया है और वह जहॉ से भी गुजरा है वही भूमि मरूस्थल हो गई है।'

पर्यावरण और सभ्यता– प्रो.ई.एफ. शुमाखर ने ठीक ही कहा है – 'अपनी वैज्ञानिक व तकनीकी शक्ति के मुखरित होने के उत्साह में आधुनिक मानव ने उत्पादन की ऐसी प्रणाली का निर्माण कर लिया है जो प्रकृति के साथ अनाचार करती है और ऐसे समाज की रचना कर ली है जो मनुष्य को विकृत करती है।'

उच्छंकल,विज्ञान और हिंसक प्रोद्योगिकी के जरिये औद्योगिक मानव ने प्रकृति पर आधिपत्य जमाने की सोची। उसके विध्वंसक दुष्परिणाम आज सामने है। पर्यावरण प्रदूषण का जहर घुलता जा रहा है ,पारिस्थितिक असंतुलन बढ़ता जा रहा है, और समूचा परिवेश दम घोटू हो चला है। औद्योगिक मानव ने प्रकृति की सौम्यता सदाशयत्न और सुन्दरता के साथ खिलवाड़ किया है।

गॉधीजी की दृष्टि में – 'यह धरती अपने प्रत्येक निवासी की आवश्यकता को पूरा करने के लिये यथेष्ट साधन उपलब्ध करती है लेकिन हर व्यक्ति के लालच की पूर्ति नहीं कर सकती।'

पर्यावरण का मानव प्रभाव के संबंध में **स्व.श्रीमती इंदिरा गॉधी** ने कहा था –'आधुनिक युद्ध जैसी बेतुकी बात और कोई नहीं हो सकती। भयंकर हथियार जितनी शीघ्रता से विनाश करते है, उतनी शीघ्रता से और कोई हथियार कार्य नहीं करता क्योंकि ये भयंकर हथियार न केवल मारते है बल्कि जीवित अजन्मे शिशुओं को भी जीवित रहते हुए मार देते है , विकृत और अपंग कर देते है यह भूमि का विशाक्त कर देते है। कुरूपता,अनउर्वरता,बंजरता का लम्बा सिलसिला अपने पीछे स्थायी तौर पर छोड़ देते है।

मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण – मानव का स्वास्थ्य स्वच्छ एवं संतुलित पर्यावरण पर निर्भर है विगत शताब्दी में मानवीय गतिविधियों के पर्यावरण पर तीव्रता से प्रहार के कारण पर्यावरण असंतुलित हो गया है। भूमि संसाधन वन संसाधन,जल संसाधन कोयला एवं पेट्रोलियम का युद्ध स्तर पर दोहन करने से एक ओर इनकी घटती मात्रा द्धारा पर्यावरण संतुलन बिगड़ गया और दूसरी ओर इनसे पर्यावरणीय गुणवत्ता में ह्रास हुआ है जिस पर प्रत्यक्षतः मानव स्वास्थ्य निर्भर है। इस प्रकार मानव जीवन पूर्णता पर्यावरणीय तन्त्र से सम्बद्ध है।

पर्यावरण एवं मानव अधिकार – उच्चतम न्यायालय ने ए.पी. पल्यूशन कन्ट्रोल बोर्ड–2 बनाम प्रोफेसर एम.वी.नायडू के बाद में यह अभिनिर्धारित किया है कि स्वास्थ्य पर्यावरण और सतत विकास जीने के अधिकार में निश्चित मौलिक मानवाधिकार है।

आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर प्रसंविदा 1966 में भी मानव प्राणी को कुछ ऐसे अधिकार प्रदान करता है जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि पर्यावरण एक मानवाधिकार है।

अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के प्रधान न्यायमूर्ति डॉ.नगेन्द्र सिंह का मत है – 'सुरक्षित एवं पर्याप्त वातावरण में शांतिपूर्ण ढंग से मानव को रहने का अधिकार है जो उसके मूलभूत अस्तित्व से सम्बंधित है। ऐसी स्थिति में जो मानव के अपने अस्तित्व का मूलभूत कारण है, उसे निःसंदेह मौलिक अधिकार की श्रेणी में रखा जाना चाहिये या मौलिक अधिकार का नाम दिया जाना चाहिए।'

औद्योगिक संस्कृति और बढ़ती आबादी – यदि आज भौतिकवादी सभ्यताओं के अनुरूप पाश्चात्य जगत के मानव का जीवन स्तर ऊँचा है तो वह अन्य विकासशील राष्ट्रों के साधारण नागरिकों के अधिकारों पर अत्याचार करके ही। **प्रो. गुन्नार मिर्डल** ठीक ही कहते है कि – 'पश्चिमी राष्ट्र अपव्यय –प्रदूषण और धरती के संसाधनों के अन्धाधुन्ध दोहन की भयानक कीमत पर ही अपने जीवन यापन का स्तर ऊँचा बनाऐं रख पा रहे है।

जनसंख्या वृद्धि कर विस्फोटक स्थिति पारिस्थितिकी संतुलन के लिए एक चुनौती है। विश्व की जनसंख्या इस शताब्दी के अन्त तक लगभग दुगुनी होने की संभावना है।

भारत जनसंख्या के आकार की दृष्टि से चीन के बाद दुनिया का सबसे बड़ा देश है। भारत की अर्थव्यवस्था विश्व की छठी बड़ी अर्थ व्यवस्था है। चीन की तुलना में भारत की जनसंख्या दर अधिक है। भारत को तीसरी दुनिया की बड़ी औद्योगिक शक्तियों में गिना जाता है। लेकिन इसके बावजूद भी आम आदमी के जीवन स्तर में विशेष बदलाव नहीं आया है।

जनसंख्या राष्ट्र के लिए संपत्ति और दायित्व है।

प्रो. हिपल के अनुसार – 'एक राष्ट्र की वास्तविक सम्पत्ति उसकी भूमि,जल,वनों, खानों, पशु, संपत्ति या डालरों में निहित न होकर उस राष्ट्र के धनी और प्रसन्न जन समुदाय में निहित होती है।'

वर्तमान में संसाधन एवं पर्यावरण के मध्य जनसंख्या एक महत्वपूर्ण कड़ी का कार्य करती है।

तालिका क्रंमाक 1 : 1

विश्व में जनसंख्या वृद्धि

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ो में)
1850 ई.	100 करोड़
1930 ई.	200 करोड़
1962 ई.	300 करोड़
1975 ई.	406 करोड़
1987 ई. (11.07.1987)	500 करोड़
1999 ई. (12.10.1999)	600 करोड़
2001 ई.	613.7 करोड़
2015 ई.	720.7 करोड़
2025 ई.	781.8 करोड़
2300 ई.	900 करोड़

Source – World development report 2002 population reference Bureau U.S.A. 2001-P-2004

एक अनुमान के अनुसार सन् 2025 तक जनसंख्या बढ़कर 7810 अरब हो जाएगी तथा सन् 2050 तक यह जनसंख्या 9039 अरब तक पहुँच जाएगी।

11 मई 2000 को भारत की जनसंख्या 1 अरब तक पहुँच गई। सन् 2050 तक भारत दुनिया का जनसंख्या के आधार पर सबसे विख्यात देश होगा।

इस आशंका ने पर्यावरण विदों के सामने कई प्रश्न उत्पन्न कर दिये है।

1. क्या पृथ्वी के आकार से जनसंख्या अधिक हो जाएगी ?
2. क्या प्राकृतिक स्त्रोत लुप्त व प्राय: हो जाएंगे ?
3. क्या प्रकृति निवास लुप्त व असंतुलित हो जाएंगे ?
4. क्या मानव जाति भुखमरी का सामना करेगी ?
5. क्या गॉव वासी शहरों की ओर निरन्तर पलायन करेंगें ?

अत: हमें जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण कर इन सभी प्रश्नों का विवेकपूर्ण हल निकालना है।

पर्यावरण के आधार पर पृथ्वी एक निश्चित सीमा तक ही भार सहन कर सकती है। जनसंख्या वृद्धि से पृथ्वी पर भी भार बढ़ रहा है। ऐसा माना जाता है कि पृथ्वी 15 अरब जनसंख्या समूह तक भारत सहन कर सकती है।

भारत के पर्यावरण विज्ञान के जनक प्रो. रामदेव मिश्र – लोक परिस्थितिक विदों से पूछते है कि क्या हम स्वच्छ और अच्छे जीवन के लिये पाषाण युग में चले जाऐं। क्या विज्ञान,तकनीकी तथा सामाजिक विकास को हम तिलॉजली दे दें। समाधान पीछे जाने में नहीं है। हमें पर्यावरण की रक्षा करनी है। स्वस्थ पर्यावरण ही विकास है,फिर वह जैसे भी हो।

उर्जा प्रवाह और पदार्थों का संचरण,प्राकृतिक परितंत्रों के अनुसार सामाजिक सेवा में इस धारणा से लगाना है कि पर्यावरण से उधार ली हुई चीजें फिर उसे वापस कर देनी है। हमारा कल्याण तब तक नहीं हो पाएगा जब तक हमारे अर्थ और विज्ञान नैतिकता का सहारा नहीं लेगें। एक नई सभ्यता का विकास करना है, जिसमें व्यक्ति समाज भौतिक तथा जैविक संसाधन उन्नत किए जा सकें।

प्रख्यात गॉधीवादी वैज्ञानिक डॉ. आत्माराम ने कहा – 'जिन्दगी में रहन–सहन में सादगी आए तो फिजूल की चीजें बनाने वाले कारखाने कम होगें और उनसे पैदा होने वाला प्रदूषण भी कम होगा। मुट्ठी भर लोगों को सकल ऐश्वर्य उपलब्ध कराने की बजाए सबकों रोटी कपड़ा मकान और पीने का पानी दिलवाना हमारा लक्ष्य हो तो हम प्रकृति को कम से कम पीड़ित करते हुए प्रगति कर सकेगें।

हेलमुट कोल के अनुसार – 'आज अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय भूमण्डलीय पर्यावरणिक संरक्षण के क्षेत्र में मूलत: बढतें हुए सहयोग के प्रति केन्द्रीय चुनौती से पूर्णत: सजग है। पृथ्वी के वायुमण्डल में परिवर्तन जिसका कुप्रभाव जलवायु पर भी पडता है उष्ण कटिबंधीय वर्षा का निरन्तर क्षय ओजोन परत का विध्वंश और विभिन्न जातियों का लोप ये सब प्रकृति और महाद्वीपों में मानव जाति के लिए खतरा पैदा करते है,जिनसे हम चिन्तित है जो विश्व हमें सौपा गया है उसके संरक्षण के लिए अपने पुत्रों–पोत्रों–प्रपोत्रों आदि के जीवन और स्वास्थ्य के लिए हम चिन्तित है। इसी कारण हम विश्वव्यापी पर्यावरणिक भागीदारी चाहते है।'

पर्यावरण संरक्षण के संदर्भ में 1989 में टोरन्टो सम्मेलन को संबोधित करते हुए वहॉ के प्रधानमंत्री ने कहा था– 'कि प्रकृति के साथ बहुत खतरनाक खेल–खेल चुके है। अब समय आ गया है कि हम अपनी मानसिकता में परिवर्तन लाए। मानव विकास और पर्यावरण ये तीन सहजीवी है और इनके पारस्परिक संबंधो को ही परिस्थितिकी संतुलन कहा जाता है। इनमें से किसी एक के द्धारा दूसरे क्षेत्र में अतिक्रमण या अवलंघन से पर्यावरणीय प्रदूषण और पारिस्थितिक असंतुलन हो जाता है। उचित ही कहा गया है – कि संसार को कैंसर हो गया है। और वह कैंसर है मनुष्य। मनुष्य ही है जो अपने स्वार्थ साधन के लिए इस संतुलन को बिगाड़ता है क्योकि शक्ति अधिकार और धन अर्जन की उत्कट इच्छा और प्रबल लालसा और सुखमय जीवन व्यतीत करने की उसकी व्यग्रता और उत्कण्ठा के कारण ही पर्यावरण में संतुलन होता है।

हमें अपने आर्थिक और सामाजिक विस्तार में मौलिक परिवर्तन करना पड़ेगा। प्रकृति का संतुलन धींरे–धींरे स्थापित होता है। किन्तु हम इस बात का ध्यान न रखते हुए तेजी से प्रदूषणों द्धारा वातावरण का विशाक्त करते है तो अपने लिए संकट ही उत्पन्न कर लेगे।

अगले पचास सौ वर्षो में अंतरिक्ष में वायुयान इतने उड़ेगे कि 20–30 हजार फुट की ऊँचाई तक का वातावरण विषाक्त हो जाएगा। प्रदूषण को दूर करने के साधन तो सोचने ही चाहिए पर इससे भी अधिक आवश्यक है कि जिन विधियों के उपयोग से प्रदूषण उत्पन्न होते हो,उन्हें ही मूलत: समाप्त किया जाए इसलिए अब हमें सभ्यता और संस्कृति के विकास का कोई नया रूप देना होगा। हमने स्वयं प्रदूषण नामक महादानव को जन्म दिया और यह दानव हमें ही त्रस्त करने की बाट जोह रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची एवं पत्रिकाऍ :–

1. दी इकोनॉनिक टाइम्स नई दिल्ली – 20 जून 1999
2. इण्डियन इकोनॉमिक सर्वे – 1989–99 एस–12
3. राजस्थान पत्रिका – 7 जुलाई 1999
4. इण्डियन इकोनॉमिक सर्वे –1968–99
5. राजस्थान पत्रिका – जुलाई 1999
6. गोपीनाथ श्रीवास्तव – पर्यावरण प्रदूषण
7. शुकदेव प्रसाद – पर्यावरण और हम
8. प्रेमानन्द चन्दोल – पर्यावरण और जीव
9. प्रो.धनन्जय वर्मा – पर्यावरण चेतना

10. डॉ.एस.एस. पुरोहित, डॉ.पी.पी.देव, डॉ.अशोक के.अग्रवाल – पर्यावरण अध्ययन
11. डॉ. रामकुमार गुर्जर, डॉ. बी.सी.जाट – पर्यावरण अध्ययन
12. डॉ. ओ.पी. शर्मा – भारत में आर्थिक पर्यावरण
13. डॉ. एच.एस.शर्मा – पर्यावरण शिक्षा
14. डॉ. आर.डी. गुप्ता, डॉ. के.वी.सिंह – पर्यावरणीय अध्ययन
15. श्याम सुन्दर शर्मा – सागर प्रदूषण
16. अन्तर्राष्ट्रीय विधि के सिद्धान्त के रूप में एवं सतत विकास का अधिकार–जर्नल ऑफ इण्डियन लॉ इन्स्टीट्यूट खण्ड 29 (1987) पेज – 290

****

सरिस्का राष्ट्रीय उद्यान एवं पर्यावरण पर्यटन स्थल का एक अध्ययन

प्रो. बी. एल. वर्मा * मनीषा साहु **

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध-लेख राजस्थान राज्य के सरिस्का पर्यावरणीय पर्यटन क्षेत्र पर आधारित है। दिल्ली – अलवर – जयपुर सड़क मार्ग पर स्थित सरिस्का राष्ट्रीय उद्यान, जो सरिस्का टाइगर रिजर्व भी है,राजस्थान के अलवर जिले में स्थित है। यह स्थान जो कभी अलवर राज्य में एक शिकारगाह थी,1955 में वन्यजीव अभयारण्य घोषित हुआ तथा 1979 में इसे एक राष्ट्रीय पार्क का दर्जा मिला। यह राष्ट्रीय उद्यान सुंदर अरावली की पहाड़ियों में स्थित है तथा 800 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है। यहां घास, शुष्क पर्णपाती वन,चट्टानें और चट्टानी परिदृश्य दिखाई पड़ते हैं। इस क्षेत्र के बड़े हिस्से में धाक के वृक्ष पाये जाते है और यहां विभिन्न वन्यजीव प्रजातियं रहती हैं। सरिस्का राष्ट्रीय उद्यान विविध प्रजातियों के जंगली जानवरों- तेंदुए, चीतल, सांभर, नीलगाय, चार सींग वाला हिरण, जंगली सुअर, रीसस मकाक, लंगूर, लकड़बग्घा और जंगली बिल्लियों का शरणस्थल है। इस राष्ट्रीय उद्यान में बड़ी संख्या में मोर,सैंडग्राउस, स्वर्ण कठफोड़वा और कलगी नागिन ईगल भी हैं। 10 वीं और 11 वीं सदी के गढ़ – राजौर के मध्ययुगीन मंदिरों के अवशेष भी पार्क में हैं। सरिस्का राष्ट्रीय उद्यान में एक पहाड़ी की चोटी पर एक 17 वीं सदी का महल भी मौजूद है,तथा यह गिद्धों और चील की उड़ान का एक मनोरम दृश्य प्रस्तुत करता है। टाइगर रिजर्व तेंदुआ, जंगली कुत्ता, जंगली बिल्ली, लकड़बग्घा, सियार, और चीता सहित अन्य मांसाहारी जानवरों का भी शरणस्थल है।

इतिहास – इस क्षेत्र में अलवर के महाराज और सरिस्का पैलेस के साथ जुड़ाव है। इस महल को प्रसिद्ध और महान महाराज जय सिंह के शाही शिकार केबिन के रूप में इस्तेमाल किया गया था। सरिस्का टाइगर रिजर्व, प्राचीन मत्स्य साम्राज्य का एक हिस्सा था और ऐसा माना जाता है की निर्वासित पांडवों ने यहाँ आश्रय लिया था। हिंदू महाकाव्य 'महाभारत' के अनुसार यह माना जाता है कि भीम ने पांडु पोल में अपनी कुंडल के साथ चट्टान को कुचल दिया और अभयारण्य में एक कण्ठ के माध्यम से एक मार्ग बनाया।

वनस्पति और जीव सरिस्का टाइगर रिजर्व की सबसे अच्छी और सबसे आकर्षक विशेषता हमेशा अपनी बंगाल टाइगर्स रही है। बंगाली टाइगर के अलावा, सरिस्का टाइगर रिजर्व में तेंदुए, जंगली बिल्ली, कार्काल, धारीदार हिन, गोल्डन जैकल, चित्तल, सांभर, नीलगाई, चिंकारा, चार सींग वाले एनललोच 'चोसीसा' जंगली सूअर, खरगोश, हनुमान लंगूर, रीसस बंदर, पक्षी प्रजातियां और सरीसृप शामिल हैं। सरिसका राष्ट्रीय उद्यान में पाए जाने वाले पेड़ों की विभिन्न प्रजातियां हैं जैसे बरगद या बरगद, अर्जुन, गगल या बांस। सरिस्का पुराने मंदिरों, महलों और झीलों जैसे पांडु पोल, भांगगढ़ किला, अजैबगढ़, प्रतापगढ़, सिलिसर झील और जय समंद झील के लिए भी प्रसिद्ध है। (सरिस्का टाइगर रिजर्व)

अध्ययन के उद्देश्य :

1. सरिस्का में पर्यावरणीय पर्यटन की प्रसिद्धी को जानना।
2. पर्यटन क्षेत्र से रोजगार एवं पर्यटकों की संतुष्टी को जानना।

अध्ययन विधि – अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए सरिस्का पर्यावरणीय पर्यटन क्षेत्र से 50 ईकाइयों का चयन किया गया है। जिनसे प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर प्रस्तुत अध्ययन को सम्पन्न किया गया है।

अध्ययन उपकरण – अध्ययन हेतु अनुसंधानकर्ता द्वारा प्राथमिक तथा आवश्यकतानुसार द्वैतियक उपकरणें का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक उपकरण विधियों के अर्न्तगत अवलोकन और साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है। द्वैतियक उपकरण विधियों के अर्न्तगत पूर्व में किये गए अध्ययनों की समीक्षा एवं प्रलेख सामग्री का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक तथ्य प्राप्त करने हेतु अनुसंधानकर्ता ने अवलोकन और साक्षात्कार- अनुसूची का प्रयोग किया है।

साक्षात्कार-अनुसूची में अनुसंधानकर्ता द्वारा अध्ययन विषय से संबंधित उत्तरदाताओं से जिन्हें निदर्शन विधि द्वारा चुना गया है, सीधा संपर्क कर बातचीत करके आवश्यक सूचनाएँ एकत्र की गयी है।

पर्यटन स्थल की प्रसिद्धी – सरिस्का पर्यावरणीय पर्यटन स्थल पर 50 उत्तरदाताओं से पर्यटन स्थल की प्रसिद्धी पर प्रश्न पूछा गया जिसकी निम्नलिखित प्रतिक्रिया प्राप्त हुई :-

पाई डायाग्राम : 01 **(अगले पृष्ठ पर देखे)**

पाई डायाग्राम 01 में सरिस्का राष्ट्रीय उद्यान की राष्ट्रीय स्तर की प्रसिद्धी पर 38 प्रतिशत (आवृत्ति 19) उत्तरदाता पूर्ण सहमत है और 44 प्रतिशत (आवृत्ति 22) उत्तरदाता सहमत एवं 4 प्रतिशत (आवृत्ति 2) उत्तरदाता तटस्थ तथा 8 प्रतिशत (आवृत्ति 4) उत्तरदाता असहमत जबकि 6 प्रतिशत (आवृत्ति 3) उत्तरदाताओं ने अपनी पूर्ण असहमति दी है। इस प्रकार उक्त डायाग्राम से स्पष्ट होता है कि सरिस्का पर्यावरणीय पर्यटन स्थल की प्रसिद्धी के पक्ष में अधिक तथ्य है।

रोजगार में वृद्धी – सरिस्का पर्यावरणीय पर्यटन स्थल पर 50 उत्तरदाताओं से पर्यटन स्थल से रोजगार में वृद्धी पर प्रश्न पूछा गया जिसकी निम्नलिखित प्रतिक्रिया प्राप्त हुई :-

पाई डायाग्राम : 02 **(अन्तिम पृष्ठ पर देखे)**

पाई डायाग्राम 02 में सरिस्का राष्ट्रीय उद्यान में पर्यटन से रोजगार में वृद्धी पर 28 प्रतिशत (आवृत्ति 14) उत्तरदाता पूर्ण सहमत है और 32 प्रतिशत (आवृत्ति 16) उत्तरदाता सहमत एवं 10 प्रतिशत (आवृत्ति 5) उत्तरदाता

* व्यवसाय प्रशासन विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

तटस्थ तथा 16 प्रतिशत (आवृत्ति 8) उत्तरदाता असहमत जबकि 14 प्रतिशत (आवृत्ति 7) उत्तरदाताओं ने अपनी पूर्ण असहमति दी है। अत: डायाग्राम के अवलोकन से यह प्रतीत हो रहा है कि पर्यटन के कारण स्थानीय रोजगार की वृद्धी हुई है।

पर्यटकों की संतुष्टी – सरिस्का पर्यावरणीय पर्यटन स्थल पर 50 उत्तरदाताओं से पर्यटन स्थल से संतुष्टी पर प्रश्न पूछा गया जिसकी निम्नलिखित प्रतिक्रिया प्राप्त हुई :-

पाई डायाग्राम : 03 (अगले पृष्ठ पर देखे)

पाई डायाग्राम 03 में सरिस्का राष्ट्रीय उद्यान में पर्यटन से पर्यटकों की संतुष्टी पर 28 प्रतिशत (आवृत्ति 14) उत्तरदाता पूर्ण सहमत है और 22 प्रतिशत (आवृत्ति 11) उत्तरदाता सहमत एवं 10 प्रतिशत (आवृत्ति 5) उत्तरदाता तटस्थ तथा 16 प्रतिशत (आवृत्ति 8) उत्तरदाता असहमत जबकि 24 प्रतिशत (आवृत्ति 12) उत्तरदाताओं ने अपनी पूर्ण असहमति दी है। डायाग्राम के अवलोकन से यह स्पष्ट हो रहा है कि पर्यटन स्थल सरिस्का से पर्यटक संतुष्ट हैं।

निष्कर्ष – सरिस्का पर्यावरणीय पर्यटन क्षेत्र पर अध्ययन से कुछ मूल्यमूक्त निष्कर्ष प्राप्त हुए है :-

1. 38 प्रतिशत प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि सरिस्का पर्यावरणीय पर्यटन स्थल की प्रसिद्धी है।
2. 28 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार सरिस्का में पर्यटन स्थल से रोजगार बढ़ा है।
3. 28 प्रतिशत उत्तरदाता सरिस्का पर्यावरणीय पर्यटन स्थल के प्रबन्धन से संतुष्ट है और 24 प्रतिशत असंतुष्ट है।

सुझाव :

1. राज्य सरकार पर्यावरण-पर्यटन आयोजना, व्यवहारता, मूल्यांकन और जहाँ उचित हो, व्यापार आयोजना के बारे में दिशा-निर्देश तैयार कर सकती है।
2. राजस्थान में आदर्श पर्यावरण-पर्यटन कार्यक्रम और यात्रावृतांत विकसित करने में सहायता की जा सकती है जिससे स्थानीय समुदायों को लाभ हो सके।
3. पर्यटकों के लिए कैम्पिंग स्थलों के संचालन करने से भी स्थानीय युवकों को काम मिल सकता है। इसके लिए उन्हें प्रशिक्षित कर सकते हैं।
4. राज्य के खान-पान का विपणन कर सकते है जिसमें स्थानीय पकवान, स्थानीय फल और सब्जियाँ, मीट, दूध, पोल्ट्री, अण्डे, तथा मछलियाँ स्थानीय रूप से प्राप्त की जा सकती हैं। कुछ ग्रामवासी प्रयास करके इन चीजों की आपूर्ति कर सकते हैं।
5. राज्य में स्थानीय युवकों को गाइड के रूप में काम करने के अवसर मिल सकते हैं। ये आने वाले पर्यटकों को अड़ोस-पड़ोस की पहाडियों और जंगलों की सैर करा सकते हैं और स्थानीय वनस्पतियों और जीव-जन्तुओं तथा ऐतिहासिक और पौराणिक स्थलों की तरह अपने समुदाय और लोक जीवन का परिचय दे सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Dang, Himraj (2005) Sariska National Park. Indus Publishing Company, New Delhi. ISBN 81-7387-177-9.
2. Sharma, Sunayan (2015) Sariska: The Tiger Reserve Roars Again. Niyogi Books, New Delhi. ISBN 9789383098712.
3. Ziddi, Suraj (1998) A guide to the wildlife parks of Rajasthan. Photo Eye Publications, Jaipur.

पाई डायाग्राम : 01

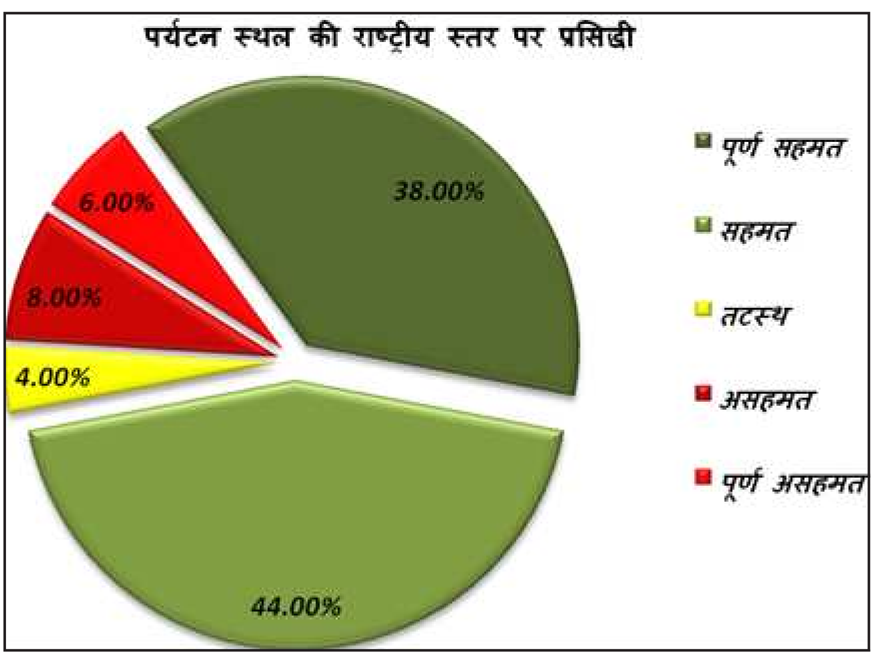

पाई डायाग्राम : 02

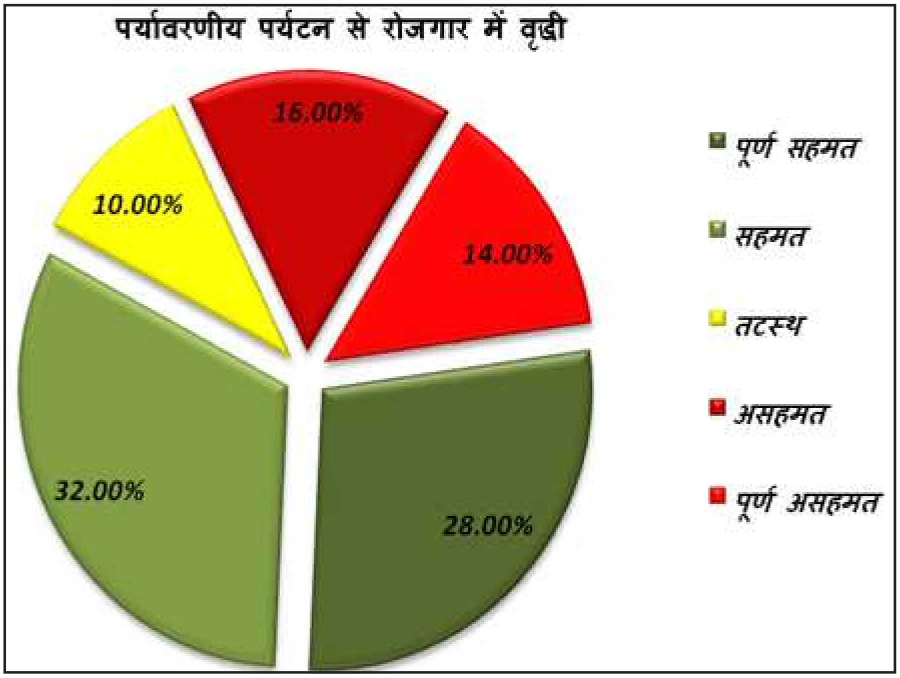

पाई डायाग्राम : 03

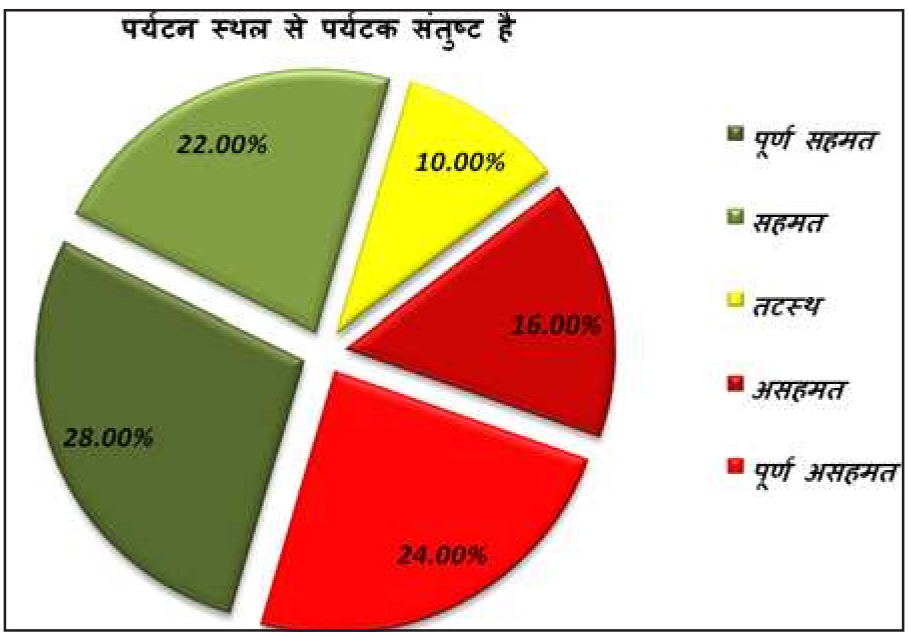

****

A study of management of emergency care providing to the swine flu patient

Aju Joseph* Dr. Shalini Gautam**

Introduction - Swine influenza is an infection caused by any one of several types of swine influenza viruses. Swine influenza virus (SIV) or swine-origin influenza virus (S- OIV) is any strain of the influenza family of viruses that is endemic in pigs. As of 2009, the known SIV strains include influenza C and the subtypes of influenza A known as H1N1, H1N2, H2N1, H3N1, H3N2, and H2N3.

The Swine flu was initially seen in humans in Mexico in 2009, where the strain of the particular virus was a mixture from 3 types of strains. Six of the genes are very similar to the H1N2 influenza virus that was found in pigs around 2000.

Swine influenza virus is common throughout pig populations worldwide. Transmission of the virus from pigs to humans is not common and does not always lead to human flu, often resulting only in the production of antibodies in the blood. If transmission does cause human flu, it is called zoometric swine flu. People with regular exposure to pigs are at increased risk of swine flu infection.

Around the mid-20th century, identification of influenza subtypes became possible, allowing accurate diagnosis of transmission to humans. Since then, only 50 such transmissions have been confirmed. These strains of swine flu rarely pass from human to human. Symptoms of zoometric swine flu in humans are similar to those of influenza and of influenza-like illness in general, namely chills, fever, sore throat, muscle pains, severe headache, coughing,weakness, shortness of breath, and general discomfort. In August 2010, the World Health Organization declared the swine flu pandemic officially over.

Cases of swine flu have been reported in India, with over 31,156 positive test cases and 1,841 deaths up to March 2015.

The study was conducted from January to March 2015. During this period, 6716 nasal and throat samples were received from patients of all ages with influenza-like illness (ILI) and their clinical details were recorded. ILI is defined as fever (>100 °F) with cough and/or sore throat. Total of 6716 samples were processed by real-time RT-PCR. Out of 6716 samples, 1800 samples were from Civil Hospital, Udaipur, from different wards, and outpatient department; and 4916 samples were from different private hospitals of Udaipur city and nearby areas. Confirmed diagnosis of H1N1 flu requires testing of a nasopharyngeal and or pharyngeal swab from the patient. Real-time RT-PCR was carried out as other tests are unable to differentiate between H1N1 and regular seasonal flu. After admission, specimens taken from nose pharynx and or pharynx of patients with ILI for confirmation of diagnosis of H1N1 were received to Microbiology Department of Civil Hospital, Udaipur, with duly filled up laboratory request form that contains all medical records of these patients as soon as possible. If any delay occurred to transfer of sample, it was kept on cold packs and cold chain was maintained. The previous hospitalization records, of patients on ventilator at the time of presentation, were evaluated and time of seeking medical intervention in the form of antiviral therapy was recorded. Other laboratory investigations such as chest X-ray, hologram, arterial blood gas (ABG) analysis, serum electrolytes, blood sugar, renal and liver function tests, and end tracheal aspirate and blood culture results, coagulation profile were carried out. Patients were studied on the basis of severity of disease, presentation characteristics, diagnostic findings, treatment modalities, and the final outcome. Patients who required ventilator support for minimum of 24 h secondary to positive H1N1 virus infection, the mode of ventilation and respiratory/ ventilator parameters were recorded.

Management of patients with swine flu at the present hospital - The present hospital is an autonomous body which came into existence by an Act of Parliament of India in 1967 and it is an 'institute of national importance'. It provides high quality treatment and tertiary care to the patients from various states of northern India. A comprehensive emergency department (ED) exists in this hospital, which provides life saving medical and surgical services to the patients under one roof. The ED consists of 110 beds. It caters to medical, surgical and traumatic emergencies round the clock. It has an attached laboratory, digital X- ray/ultrasound/ECG and 6 operation theatres functioning round the clock. The patients with poly trauma are treated in the ED by various specialists (general surgeon, anesthetist, orthopedic surgeon, neurosurgeon, cardiothoracic surgeon, ENT surgeon etc.), nurses and other paramedical personnel.

* Research Scholar, Maharaj Vinayak Global University, Jaipur (Raj.) INDIA
** Assistant Professor, Maharaj Vinayak Global University, Jaipur (Raj.) INDIA

The annual hospital statistics of the institute under study is provided in Table 1. Annual hospital statistics of the tertiary care institution under study

Variables (service)	Number
Hospital	
Total number of hospital beds	50
Bed occupancy rate	100
Annual OPD	142
OPD patient per day	250
Indore patients	70
Indore patients per day	22
Total nurses	85
Emergency	
Total beds	145
Annual OPD	282
OPD patient per day	150
Indore patients	175
Indore patients per day	83
Nurses in Emergency	100

Source : Statistical Report 2017 from swine flu Deportment of the Udaipur hospital

The procedure being followed in the ED to treat patients with swine flu.

Step 1: Initial assessment and preparation of treatment plan. As the patient enters the emergency he is attended by a general surgeon.

Step 2: Patient's information sent to other referral specialties. After the initial assessment, the general surgeon informs the doctors on duty of the concerned specialties over the phone and enters the patient's particulars in the master register which is maintained by the general surgery department.

Step 3: Assessment by various specialties. On receiving the call, the resident doctor on duty of the concerned specialty attends the patient.

Step 4: Referral to specialties other than initially planned. While the patient is undergoing treatment, some patients might require the consultation of other specialties. In such a case, the concerned doctor will be required to inform by specialty himself or co-ordinate with the general surgeon.

Step 5: Clearance of the patient. The specialty referred by the general surgeon has to decide whether to admit or discharge the patient.

Step 6: Final responsibility/ownership. In case of patients with poly trauma requiring various specialties for consultation, the specialty which clears the patient in the end is ultimately responsible for the treatment and discharge of the patient (Table 2).

Table 2 (see in last page)

Statement of problem - In the ED, there are frequent complaints, in particular, regarding the management of the patients with poly trauma, which leads to delay in their discharge. Delayed discharge of these patients leads to an increase in average length of stay (ALS) of the patients, further resulting in unavailability of the beds to other patients requiring emergency treatment. Thus the present study was conducted to elicit the constraints at various steps of management of the patients with poly trauma and to design a standard operating procedure (SOP) for the management of these patients.

Methods - The cross-sectional study was carried out in the ED of the tertiary care institute of northern India. A total of 210 patients visiting the ED were studied in a period of 2 months (1 January to July 31, 2018). The details of the patients visiting the ED (as per the criteria described above) were recorded on a day-to-day basis from the master register maintained by the general surgery department. The files and cards of these patients were also reviewed from the emergency surgical OPD. Information was retrieved from the cards to achieve the required objectives. There were six possible steps in the delay of management and the delay at each step was studied. The criteria for the delay at each step are shown in Table 2.

Results - Profiles of patients with poly trauma of the 210 patients with swine flu, 69 (80.47%) were male and 23 (19.52%) female. Their age ranged from 15 years to 85 years in males and 12 years to 70 years in female, with a mean of 32 years. Most of the patients with swine flu were in the age group of 15 to 30 years, followed by 31 to 45 years. The patients reported in the emergency department were from the different states of the country, most of them from Rajasthan 37% (n=78) followed by Chandigarh 22% (n=46), M.P. 15% (n=32) and Gujrat 13% (n=28). Regarding the referral status, 53% (n=112) of the patients were referred from various hospitals of the region and 43% (n=98) directly came to the ED of the institute. Of the patients, 72% (n=150) were due to road side accidents, followed by fall from height 15% (n=31) and railway accident 5% (n=11). The profile of the patients with swine flu is shown in Table 3.

Table 3 (see in last page)

Referrals for consultations

Altogether 671 consultations were done for 210 patients by various specialties (Table 4). On an average, each patient required about 3.2 consultations.

Orthopedics required 27% (n=184) of the consultations, neurosurgery 22% (n=149), plastic surgery 17% (n=114), and anesthesia 10% (n=64).

Besides the above stated problems, some other problems were also observed in the management of the patients with swine flu. Firstly, there was absence of a triage system and non-availability of a separate area for the admitted swine flu patients in the emergency department. This resulted in mixing up of the patients with swine flu with the patients from other specialties. Secondly, in emergency surgical OPD (ESOPD) there was no separate area for resuscitation of the patients with swine flu nor anesthetist to perform resuscitation. Thirdly, the time regarding the call sent to and attended by various specialties was not mentioned on the OPD card or the master register (no column to mention the time). There was also lack of coordination amongst various specialties while managing patients with swine flu.

The results of our study were similar to those of a study conducted in a Udaipur Hospital where most of swine flu patients were in the age group between 16 and 30 years. We found that males were affected more often than females (19:1) and that road traffic accident was a predominant etiological factor followed by falls from height. As a tertiary care institute, the cases of swine flu have been reported from various regions and many cases have been referred from various hospitals. The results of our study showed that the problems faced at various steps while managing swine flu patients were observed mostly in cases requiring consultations of 3–4 departments. The lack of co-ordination was probably the main cause leading to delay in management of swine flu patients.

References :-

1. Rowan K, Harrison D, *et al.* The Swine Flu Triage (SwiFT) study: development and ongoing refinement of a triage tool to provide regular information to guide immediate policy and practice for the use of critical care services during the H1N1 swine influnza pandemic. *Health Technol Assess* 2010;14(55).
2. Charles PG, Wolfe R, *et al.* SMART-COP: a tool for predicting the need for intensive respiratory or vasopressor support in community-acquired pneumonia. *Clin Infect Dis* 2008;47:375–384.
3. Miller RR, Markewitz BA, *et al.* Clinical findings and demographic factors associated with ICU admission in Utah due to novel 2009 influnza A (H1N1) infection. *Chest* 2010;137:752–758.
4. Nguyen-Van-Tam J, Openshaw P, *et al.* Risk factors for hospitalisation and poor outcome with pandemic A/ H1N1 influnza: United Kingdom first wave (May-September 2009). *Thorax* 2010;65:645–651.
5. ANZIC Influnza Investigators. Critical care services and 2009 H1N1 influnza in Australia and New Zealand. *N Engl J Med* 2009;361:10.1056/ NEJMoa0908481

Questionnaire about swine flu hospital management and patients

Name of the Research Scholar ………………………....

Name of the Hospital …………………………….....

Date ……………....

1) How is swine flu ?
A) Mosquito bites B) pig bites C) Insect bites
2) How many swine flu hospitals in Rajasthan ?
A) 1 B) 2 C) 3
3) How to assessment of the swine flu patient by the general surgeon?
A) Within 4 hour B) Within 2 hour C) Within 1 hour
4) How much time can be done of the swine flu patient by the general surgeon?
A) Within 2 hour B) Within 1 hour C) Within 3 hour
5) How much time can be done preparation of treatment plan, referral of the patient and information to different specialties ?
A) 1 hour B) 3 hour C) 5 hour
6) How much time can be done Patient attends by different specialties as per the treatment plan ?
A) 24 hours B) 15 hours C) 10 hours
7) How much time can be done Patient attended by other specialties not initially planned by the general surgeon ?
A) 24 hours B) 15 hours C) 10 hours
8) How much time can be given clearance given by different specialties?
A) 24 hours B) 15 hours C) 10 hours
9) How long does the ultimate responsibility of the patient for the treatment and discharge?
A) 24 hours B) 15 hours C) 10 hours
10) How many numbers of the beds in Hospital ?
A) 50 B) 30 C) 45
11) What is the bed occupancy rate of per day in this hospital ?
A) 100 B) 50 C) 75
12) What is annual OPD in this hospital?
A) 142 B) 130 C) 145
13) How many OPD patients come per day in this hospital? A) 250 B) 230 C) 275
14) How many Indore swine flu patients come in this hospital ?
A) 22 B) 30 C) 25
15) How many nurses care for swine flu patients?
A) 88 B) 85 C) 90
16) How many emergency beds for swine flu patients?
A) 145 B) 150 C) 135
17) What is annual OPD in this hospital?
A) 252 B) 280 C) 1283
18) How many emergency OPD patients come per day in this hospital?
A) 145 B) 150 C) 135
19) How many Indore emergency swine flu patients come in this hospital?
A) 175 B) 150 C) 185
20) How many emergency nurses care for swine flu patients?
A) 100 B) 150 C) 75

Table 2 - Procedure for management of patients with poly trauma in the institute

Steps	Procedure	Time limit
I	Assessment of the poly trauma patients by the general surgeon	Within 1 hour
II	Preparation of treatment plan, referral of the patient and information to different specialties	1 hour
III	Patient attended by different specialties as per the treatment plan	24 hours
IV	Patient attended by other specialties not initially planned by the General surgeon	24 hours
V	Clearance given by different specialties	24 hours
VI	Ultimate responsibility of the patient for the treatment and discharge	24 hours

Table 3 - Profile of the patients with swine flu attending emergency OPD of the institute

Variables	Number (n=210)	Percentage (%)
Age (yr)		
>15	22	10.47
15–30	78	37.14
31–45	52	24.76
46–60	40	19.04
61–65		SRFT
12	5.71	SRFT
76–90	6	2.85
Gender		
Male	169	80.4
Female	41	19.5
Referral status		
Referred patients	112	53
Direct patients	98	47
Area of origin		
Punjab	78	37
Chandigarh	46	22
Haryana	32	15
Himachal pradesh	28	13
Uttar pradesh	10	5
Bihar	6	3
Address unknown	10	5
Causes of poly trauma		
Road side accident	150	72
Fall from height	31	15
Railway accident	11	5
Burn	7	3
Gun shot injury	3	1
Others	8	4

****

An Analytical Study Of MSME'S

Dr. Hitesh A. Kalyani*

Abstract - Micro, Small and Medium Enterprises play a pivotalrole in the economic and social development of the country. It alsoplay a key role in the development of the economy with its effective,efficient, flexible and innovative entrepreneurial spirit. MSME can be the backbone for the existing and future highgrowth businesses with both domestic and foreign companies investing in the 'Make in India' initiative and make significant impact in the area of indigenisation.The MSMEs constitute over 90% of total enterprises in most of the developing economies and credited with generating the highest rate of employment growth and accounting for a major share of industrial production and exportsMSMEscontribute 45% in the industrial output, 40% of exports, employing60 million people, create 1.3 million jobs every year. It producesmore than 8,000 quality products for the Indian and internationalmarkets.This paper analyses the various aspectsassociated with MSMEs in India.
Keywords— Economic Growth, Innovative, Digital, Make in India, Skill India, khadi.

Introduction - Micro, Small and Medium Enterprises (MSME) sector has emerged as a highly vibrant and dynamic sector of the Indian economy. MSMEs not only play crucial role in providing large employment opportunities at comparatively lower capital cost than large industries but also help in industrialization of rural & backward areas, thereby, reducing regional imbalances, assuring more equitable distribution of national income and wealth. MSMEs are complementary to large industries as ancillary units and this sector contributes enormously to the socio- economic development of the country.Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises envisions a vibrant MSME sector by promoting growth and development of the MSME Sector, including Khadi, Village and Coir Industries, in cooperation with concerned Ministries/Departments, State.The Micro, Small and Medium Enterprises Development (MSMED) Act was notified to address policy issues affecting MSMEs as well as the coverage and investment ceiling of the sector. The Act seeks to facilitate the development of these enterprises as also enhance their competitiveness. It defines medium enterprises for the first time and seeks to integrate the three tiers of these enterprises, namely, micro, small and medium.

Today, the sector produces a wide range of products, from simple consumer goods to high-precision, sophisticated finished products. It has emerged as a major supplier of mass consumption goods as well as a producer of electronic and electrical equipment and drugs and pharmaceuticals.

More than 55 per cent of these enterprises are located in six major States of the country, namely, Uttar Pradesh, Maharashtra, Tamil Nadu, West Bengal, Andhra Pradesh and Karnataka.The MSME sector has slowly come into the limelight, with increased focus from the government and other government institutions, corporate bodies and banks. Policy based changes; investments into the sector; globalization and India's robust economic growth have opened up several latent business opportunities for this sector.

Under the MSME Development Act, 2005 the meaning of the terms Micro, Small and Medium enterprise is understood with respect to the investment made in the plant and machinery/equipment.

The investment limit for each enterprise is as follows:

Table 1 (see in last page)

In case of the manufacturing enterprises, investment in plant and machinery is the original cost excluding land and building and the items specified by the Ministry of Small Scale Industries, vide its notification No. S.O. 1722(E) dated October 5, 2006.

Contribution of the MSMEs:-

1. MSMEs contributes about 40% of India's total exports.
2. MSMEs contributes about 45% of India's manufactur -ing output.
3. This sector has given employment to 73 million people.
4. MSME manufacture more than 10,000 products.
5. MSME's Contribution towards GDP in 2011 was 22%

Contribution to Economy - MSMEs are the backbone of the Indian economy. They contribute in GDP and GNP of India. It acts as a breeding ground for entrepreneurs to grow from small too big. MSME Sector are increasing enormously in India. India has nearly 12 million MSMEs, which is almost 50% of industrial output and 42% of India's total export. The reasons are as follows:-

1. Extensive promotion and support by Government
2. Man power training, machinery procurement

*Assistant Professor (Commerce) S.N. Mor College, Tumsar, Dist. Bhandara (Maharashtra) INDIA

3. High contribution to domestic products
4. Investment of less capital
5. Significant export earnings
6. Operational flexibility
7. Capacity to develop appropriate indigenous technology.
8. Technology- oriented industries

Innovative schemes used in the MSME sector are:

1. International Cooperation Scheme
2. Collateral requirement
3. Marketing Assistance Scheme
4. Design clinic Scheme Key

Potentials in MSMEs - The lots of potentials are available in the field of MSME'S.

The prospectus of this sector are explained as under-

1. Minimization of regional imbalance-
2. Customer satisfaction oriented-
3. Employment generation-
4. Attraction to the foreign investment –
5. Enhancement of export-

Challenges of MSME:

1. Absence of adequate and timely supply of bank finance
2. High cost of credit
3. Low production capacity
4. Lack of access to global market
5. Multiplicity of labour laws
6. Problems of storage, designing, packaging and product display
7. Low technology levels
8. Inadequate infrastructure facilities
9. Limited capital and knowledge
10. Collateral requirements
11. Lack of power
12. Lack of social security
13. Low quality inputs
14. Lack of water
15. Non-availability of suitable technology
16. Limited access to equity capital
17. Limited access to equity capitalProcurement of raw material.
18. Low return
19. Non-availability of suitable technology
20. Low production capacity
21. Problems to supply to government departments
22. Ineffective marketing strategies
23. Identification of new markets
24. Constraints in modernisation and expansions
25. Transportation problems
26. Lack of adequate warehousing
27. Lack of information
28. Lack of availability of timely credit
29. Lack of skilled manpower
30. Lack of training
31. High competition
32. Non availability of highly skilled labour
33. Inability to access finance
34. Inability to access capital
35. Mistreatment by large procurement companies
36. Difficult bureaucratic procedures for registration
37. Lack of management skills,
38. Increasing availability of cheap foreign imports
39. Lack of experience
40. Competition from large scale sector
41. Lack of marketing knowledge
42. Lack of sales promotion

Opportunities in MSMEs:

1. Less capital intensive
2. Employment generating sector.
3. Effective tool for promotion of balanced regional development
4. It is extensively promoted and supported by the Government
5. Finance and subsidies are provided by the government
6. Produced goods are purchased by the Government
7. 40% exports in India
8. Procurement of machinery and raw material
9. Globalization has offered new opportunities
10. Trade fares and exhibitions played a vital role in the economic growth of the countries
11. Develop entrepreneurship and support growth
12. Significantly increasing the share of MSME contribution to GDP from the current 8 per cent to 15 per cent by 2020;
13. Generate employment levels to the extent of 50% of the overall employment
14. MSME workforce of 106 million across agricultural, manufacturing and services sectors; and
15. Increasing the share of MSME contribution
16. Emergence of domestic demand
17. Increase in spending in infrastructure and defence sectors;
18. Increase in foreign direct investments
19. Foreign companies investing in India for their global market requirements (Make in India); and
20. The double digit growth expected in numerous business sectors.
21. Growth of the new wave MSME led by entrepreneurshipfocused on innovation and technologies, creatingopportunities for women entrepreneurs and developingskilled resources across the following opportunity areas
22. Digital IndiaPromote MSMEs' manufacturing and service capabilities
23. Export contribution
24. Public procurement policyPromote an ecosystem for supplies to defence and publicsector enterprises
25. Procurement by large Indian and foreign corporateacross industry sectors from MSMEs
26. IndigenisationIncentivise any investments and outputs by large players
27. Traditional and heritage industriesIncentivise and support any stakeholder that invests indevelopment

28. InfrastructureNational, regional and sector specific clusters and business centers for MSME
29. RegulatoryOne "all India all-purpose" enactment as MSME regulation
30. FundingOpen environment and incentives for investments by HNWI andfunds into MSME
31. Performance incentivesDirect incentives in form for direct taxes rebates and set offs,
32. Skill IndiaRewarding MSME for initiatives towards skill development andemployment generation, particularly for women and specialclasses.

Recent initiatives taken by the Government - Considering the importance of the MSME sector in the overall growth of the economy, a Task Force under the Chairmanship of the Principal Secretary to the Prime Minister was constituted in August 2009.

1. Provide a roadmap for the development and promotion of MSMEs
2. Immediate action to provide relief and incentives to the MSMEs
3. Setting up of appropriate legal and regulatory structures
4. The Task Force has laid emphasis on timely implementation of the recommendations and has set up a system for its continuous monitoring in the Prime Minister's Office.
5. MSMEs are transitioning to a new business environment with emergence of global supply chains
6. Formation of new trade linkages that transcend
7. Government of India has developed key strategies to promote and support the MSME sector to promote competitiveness.
8. MSMEs such as high contribution to domestic production, significant export earnings, low investment requirements, operational flexibility
9. Some of the key announcements for MSMEs in the Union Budget, are:

a. allocation for MSMEs to be increased by 25% every year.

10. corpus for Micro Finance Development and Equity Fund to be doubled.
11. extension of existing interest subvention of 2 per cent for one more year for exports covering handicrafts, carpets, handlooms and small and medium enterprises
12. limit of turnover for the purpose of presumptive taxation of small businesses enhanced to Rs 60 lakh
13. The increase in the extension of existing interest subvention of 2 per cent to the small and medium enterprises is a positive development.
14. Setting up of High Level Council on MSME to monitor the implementation of the recommendations of Prime Minister's High Level Task Force and increase in the allocation for MSMEs augurs well for the overall development of this sector.

Suggestions - According to our study and the annual reports of MSME'S, we strongly recommend the following suggestions for the growth and development of the MSMEs in India:

1. Mutual Supply of Technologies: A number of appropriate technologies for the MSME sector have developed in various sectors. A comprehensive list of all sorts of technologies should be prepared and made available accordingly to the MSMEs requiring it
2. Constitution of a Panel of Consultants: For the purpose of technological advancement and guidance a panel of experts and consultants should be prepared
3. Determination of Technological Needs: There should be detailed survey to assess the technical and financial needs of the MSME. So that, the proper arrangement could be make to fulfill the needs of the MSME'S.
4. Training and development, awareness programs: There must be conduction of training and development programs by the MSME ministry.
5. Sufficient availability of the credit- Our banking system does not provide sufficient amount of credit to fulfill their requirement of establishment of MSME and as well as not for the operational activities.
6. Relaxation in labor laws and red tape-There should be relaxation in complex labor laws.

References :-

1. Annual Report 2012-13, Govt. of India, Ministry of Micro, Small and Medium Enterprises
2. Morris,S. R. Basant; K. Das; K. Ramachandran; and A. Koshy. (2001). The Growth and Transformation of Small Firms in India. New Delhi: Oxford University Press.
3. MSME Development Act.(2006). Ministry of the District Industry Centers (DIC) MSME,Government of India.
4. Sonia and Kansai Rajeev (2009), "Globalisation and its impact on Small Scale Industries India" , PCMA Journal of Business, Vol. 1, No. 2 (June, 2009).
5. Thiripurasundari, K and V. Gurumurthy (2009), " Challenges for Small Scale Industries in the Era of Globalization" in "Small and Medium Enterprises under Globalization: Challenges and Opportunities" L. Rathakrishnan (Ed),.
6. NalabalaKalyan,Kumar. Sardar,Gugloth.(2011). Competitive performance of micro,small and mediumenterprises in India. Asia pacific journal of social sciences.
7. Khalique, Muhammad, Abu Hassan Md. Isa "Challenges faced by the small and medium enterprises in Malaysia: Intellectual Capital perspective." International Journal of Current Research Vol. 33, Issue, 6, June, 2011.
8. Siringoringo, Hotniar and Prihandoko and Tintri, Dharma and Kowanda, Anacostia (2009)
9. K. Hallberg – Small and Medium scale enterprises
10. Annual Report 2010-11 Govt. of India , Ministry of Micro, Small and Medium Enterprises
11. O.N. Dutta Small scale industries in India

12. P.KDhar- Indian Economy
13. Entrepreneurship development- Basant Desai
14. Annual Reports, Ministry of SmallScale Industries, Government ofIndia
15. "Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises, 2007
16. Micro, Small andMedium Enterprises in India: AnOverview", Ministry of Micro Smalland Medium Enterprise, Governmentof India
17. MSME Development Act 2006,Ministry of MSME, Government ofIndia
18. Vision 2020: Implications for MSMEs
19. MSME Annual Report 2013 -14
20. Inter-Ministerial Committee for Accelerating Manufacturing in Micro, Small & Medium
21. Planning Commission Report (2012) – Creating a Vibrant Entrepreneurial Ecosystem inIndia – Sunil Mitra
22. Ministry of MSME Annual Report 2013-14
23. Department of Economic Affairs, Ministry of Finance – India the Incredible InvestmentDestination, Fact Book – June 2012
24. CII - Micro, Small & Medium Enterprises Issues & Recommendations May 2014
25. CRISIL Report – Skilling India
26. Planning Commission (2012) – Creating a Vibrant Entrepreneurial Ecosystem in India – SunilMitra
27. www.smechamberofindia.com
28. www.indiabudget.nic.in
29. www.rbi.org.
30. www.msme.gov.in
31. www.eria.org
32. www.disr.gov.in
33. www.wikepedia.org

Table 1

	Investment Limit (in INR)	
	Plant and Machinery(if manufacturing or producing goods)	**Equipment(if providing or rendering services)**
Micro Enterprise	Not more than 25,00,000 (Rupees Twenty Five Lakhs only).	Not more than10,00,000 (Rupees Ten Lakhs only).
Small Enterprise	Between 25,00,000 (Rupees Twenty-Five Lakhs only) to 5,00,00,000 (Rupees Five Crores only).	Between 10, 00, 000 (Rupees Ten Lakhs only) and 2,00,00,000 (Rupees Two Crores only).
Medium Enterprise	Between 5,00,00,000 (Rupees Five Crores only) to 10,00,00,000 (Rupees Ten Crores only).	Between 2,00,00,000 (Rupees Two Crores only) and Rs. 5,00, 00,000 (Rupees Five Crores only).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

Effects of Employee Selection Process in the Public and Private Sectors in Punjab

Gaurav Tiwari* Dr. Shalini Gautam**

Introduction - The highly competitive and changing market of today requires quick and effective response. To be highly competitive, managers are realizing that the success of a business enterprise depends largely on the efficient selection of its Human Resources. In human resource management, recruitment is the foundation for selection process . Recruitment involves using application form, resume, interview schedule, employment and skills test and reference check to evaluate and screen job candidates. Selection is the process of choosing from numerous applicants a suitable candidate to fill a job position. Selection in modern organizations can be said to be anchored or rooted on the Biblical saying that; many are called but a few are chosen". Selection is among the major functions of human resource department and as well an important first step towards creating the competitive strength and the strategic advantage for the organization. Searching for, and obtaining potential job candidates in sufficient numbers and quality and at the right cost is the best way for organization to get the most appropriate people to fill its job positions. The importance of adhering to selection process is vital for organizational competitiveness and a failure to approach this function effectively will result to selection of wrong and underperforming employees which will in turn lead to low level of productivity.

Statement of the problem - The success of organizations depends on the caliber of the manpower that steers their day to day affairs. When the right person is selected, the productivity of the selected person tends to be high or meet the standard set by the organization. Though it is the wish of every organization to attract the best human resource in order to channel their collective efforts into excellent performance,unconventional selection practices canmar attainment of Organizational objectives. It is regrettably, many organizations in Nigeria ignore standard selection programmers, this makes selection of personnel inundated with myriad of unethical practices; bias, discrimination and favoritism. It is obvious that hiring someone who does not fit into a particular job or who does not suit the culture of the organization may bring about disciplinary problems, disputes, absenteeism, high labor turnover, fraud, poor service delivery to customers, suppressed creativity, innovations and learning, inability to cope with new challenges or changes, non-competitiveness, poor quality production, waste of organization's money, time and other valuable resources. All these may culminate to low level of organizational productivity. It is against the backdrop of the above vexing problems, that this study was designed.

Objectives of the Study - The major objective of this study is to determine the effect of selection process on employee productivity in the private and public sectors.

The specific objectives are:

i. To ascertain significant difference between the selection process employed by the private and public sectors.
ii. To determine the selection process employed by the private and public sectors helps them to achieve productivity.
iii. To examine significant difference between the factors influencing selection process in private and public sectors.

Research hypotheses

Following the problems identified and the objectives of this study, the following null hypotheses were formulated.

H01: There is no significant difference between the selection processes employed by the private and public sectors.

H02: The selection process employed by the private and public sectors do not help them to achieve productivity.

H03: There is no significant difference between the factors influencing selection process in private and public sectors.

Significance of the study - This study would benefit the following: To the human resource (HR) managers of organizations, it would help them to know how to attract qualified and suitable applicants to apply for job openings in the organization. The study would also benefit employees because, selection process when appropriately adhered to ensures selection of qualified and suitable candidates. In addition, it will enhance government and general public participation in addressing the problems of human resource management in public and private sectors.

The study would also be relevant to future researchers as it will serve as a guide and reference material for further studies.

Conceptual Framework Concept of selection - Selection

* Research Scholar, Maharaj Vinayak Global University, Jaipur (Raj.) INDIA
** Assistant Professor, Maharaj Vinayak Global University, Jaipur (Raj.) INDIA

is the process of collecting and evaluating information about an individual in order to extend an offer of employment. Selection is choosing from numerous applicants a suitable candidate to fill a post. It is a decision-making activity and the psychological calculation of suitability of the candidate. Selection differs from recruitment, although these are two phases of the employment process.

Employee selection process

Selection process steps/stages are:

1. Carry out job analysis, description and specification.
2. Application blank/soliciting for/receiving application.
3. Short listing of qualified candidates and screening out the unqualified applicants.
4. Arranging for and conducting preliminary interview or initial screening.
5. Employment test designed to find out how well an individual can do a job.
6. Checking of reference source.
7. Medical/physical examinations to ensure that the individual is in good health.
8. The selection decision.
9. Final approval/placement/engagement.

Factors influencing selection process - Ineffective selection process predisposes organizations to the following consequences according to Michael.

i. Inability to cope with new challenges or changes.
ii. Non-competitiveness.
iii. High rate of employee turnover as a result of incessant layoff of workers.
iv. Lack of service excellence.
v. Poor quality production.
vi. Waste of organization's resources such as money, time and other valuable resources.
vii. Poor productivity such as low return on investment, unsatisfied customers.
viii. Under performance of employees.
ix. Business failure.

Theoretical Framework - It is intended for both personnel selection and for vocational guidance purposes. The plan is intended to be used to interpret a job analysis in human terms and to set standards against which individual candidates may be measured.

The attributes are as presented below:

i. Physical Make-up: Has the applicant any defects of health or physique that may be of occupational importance?
ii. Attainments: What types of education has he had? How well can he do educationally?
iii. General Intelligence: How much general intelligence can he display?
iv. Special Aptitudes: Has he any marked mechanical aptitude, manual dexterity, facility in the use of words or figures, talent for drawing or music?
v. Interest: To what extent is his interest intelligent? Practically constructional? Physically active? Social? Artistic?
vi. Disposition: How acceptable does he make him-self to other people? Does he influence others? Is he steady and dependable? Is he self-reliant?
vii. Circumstances: What are his domestic circumstances? What do the other members of the family do for a living? Are there any special openings available to him? The five-fold grading scheme propounded by Munro Fraser (1953) states measures as:

i. Impact on Others – Physical make-up, appearances, speech and manner.
ii. Acquired Qualifications – Education, vocational training, and work experience.
iii. Innate Abilities – Natural quickness of comprehension and aptitude for learning.
iv. Motivation – The kinds of goals set by the individual, his or her consistency and determination in following them up, and success in achieving them.
v. Adjustment – Emotional stability, ability to stand up to stress and ability to get on with people.

Review of Empirical Literature

Mufu [2013] carried out a research on recruitment and selection in the National Oil Refinery Company, in Cameroon. The research design adopted was descriptive survey. The result showed that company recruitment was based on a befitting personality and competencies of the candidates.

Mavis [2014], conducted a study on "employee recruitment and selection practices in the construction industry in Ashanti Region". The study used a cross sectional survey design for data collection and analysis. This study revealed that the recruitment and selection practice of firms has a relationship with their performances. Raymond and Caroline [2015], carried out an investigation on factors influencing employee selection in the public service in Kenya. The study used a descriptive design and it was found that a strong positive relationship exists between employee selection and the public service. In addition, employee selection mechanisms such as academic qualifications, background checks, work experience and personal characteristics affect pre-employment process.

Methodology - This study was carried out in Corporation Jalandhar Punjab State and Government Printing Corporation Jalandhar Punjab. The survey design method was adopted and a researcher designed questionnaire used to elicit responses from respondents.

A population size of 392 employees used in the study. Corporation Bank Jalandhar Punjab

State with182 employees which represent 46% of the population and Punjab State Government Printing Corporation, Jalandhar Punjab. has 210 employees which gave 54% of the population. The research instrument was validated through face validity and content validity. The test-re-test reliability method was used to ascertain the reliability of the instrument and it was deemed reliable and considered appropriate for use.

Data presentation and analysis was carried out using tables, frequencies and percentages. Independent t-test was used as the statistical tool to test the hypotheses aided by Statistical Package for Social Science (SPSS).

Data presentation and analyses - The organization strictly use application form(s) for selection, 40 respondents representing 36% strongly agreed, 36 (32%) agreed, 2 (2%) undecided, 19 (19%) disagreed and 14 respondents (13%) strongly disagreed. On whether interview is used for their selection, 48 respondents (43%) strongly agreed, 30 (27%) agreed, 24 (22%) disagreed and 9 respondents (8%) strongly disagreed. On whether the organization's selection process is based on skills and abilities of the applicants, 29 respondents (26%) strongly agreed, 43 (39%) agreed, 8(7%) undecided, 4 (4%) disagreed and 27 respondents (24%) strongly agreed. On the issue of selection based on personality test, 13 respondents representing 12% strongly agreed, 51 (46%) agreed, 3(3%) undecided, 26 (23%) disagreed and 18 respondents (16%) strongly disagreed. On whether all the selection processes mentioned above are used for their selection, 22 respondents (20%) strongly agreed, 36 (32%) agreed, 29 (26%) disagreed and 24 respondents (22%) strongly disagreed. On whether the organization strictly uses application form(s) for their selection, 4 respondents representing 4% strongly agreed, 21(20%) agreed, 11 (10%) undecided, 44 (42%) disagreed and 25 respondents (24%) strongly disagreed. On whether interview is used for their selection, 15 respondents (14%) strongly agreed, 18 (17%) agreed, 1(1%) undecided, 50 (48%) disagreed and 21 respondents (20%) strongly disagreed. On whether the organization's selection process is based on skills and abilities of the applicants, 9 respondents (9%) strongly agreed, 19 (18%) agreed, 4(4%) undecided, 55 (52%) disagreed and 18 respondents (17%) strongly agreed. On the issue of selection based on personality test, 4 respondents representing 4% strongly agreed, 19 respondents (18%) agreed, 3 respondents (3%) undecided, 58 respondents (55%) disagreed and 21 respondents (20%) strongly disagreed. On whether all the selection processes mentioned above are used for their employee selection, 23 respondents (22%) strongly agreed, 22 (21%) agreed, 7 (6%) undecided, 29 (28%) disagreed and 24 respondents (23%) strongly disagreed. From the whether the output of selected employees equal input, 20 respondents representing 18% strongly agreed, 56(51%) agreed, 6 (5%) undecided, 16 (14%) disagreed and 13 respondents (12%) strongly disagreed. On whether the selected employees produce up to the minimum standard set by the organization, 12 respondents (11%) strongly agreed, 18 (16%) agreed, 59 (53%) disagreed and 22 respondents (20%) strongly disagreed. On whether the organization's sales volume increase after selecting new employees, 16 respondents (14%) strongly agreed, 67 (61%) agreed, 4(4%) undecided, 7 (6%) disagreed and 17 respondents (15%) strongly agreed. On whether the organizational sales exceed cost of sale after selecting employees, 22 respondents representing 20% strongly agreed, 54 (50%) agreed, 2(2%) undecided, 24 (22%) disagreed and 9 respondents (8%) strongly disagreed. On whether the organization's market share increased after selecting new employees, 10 respondents (10%) strongly agreed, 30 (27%) agreed, 34(30%) undecided, 23 (20%) disagreed and 14respondents (13%) strongly disagreed. On whether the output of selected employees equal input, 7 respondents representing 7% strongly agreed, 40 (38%) agreed, 15 (14%) undecided, 21 (20%) disagreed and 22 respondents (21%) strongly disagreed. On whether the selected employees produce up to the minimum standard set by the organization, 16 respondents (15%) strongly agreed, 21 (20%) agreed, 4 (4%) undecided, 41 (39%) disagreed and 23 respondents (22%) strongly disagreed. On whether the organization's sales volume increase after selecting new employees, 14 respondents (13%) strongly agreed, 39 (38%) agreed, 11 (10%) undecided, 26 (25%) disagreed and 15 respondents (14%) strongly agreed. On whether the organizational sales exceed cost of sale after selecting employees, 21 respondents representing 20% strongly agreed, 40 (38%) agreed, 5 (5%) undecided, 22 (21%) disagreed and 17 respondents (16%) strongly disagreed. On whether the organization's market share increased after selecting new employees, 15 respondents (14%) strongly agreed, 18(17%) agreed, 10 (10%) undecided, 35 (33%) disagreed and 27 respondents (26%) strongly disagreed (Table 5). From the whether educational achievement affects organization's selection process, 29 respondents representing 26% strongly agreed, 43 (39%) agreed, 2 (2%) undecided, 21 (19%) disagreed and 16 respondents (14%) strongly disagreed. On whether experience is also a criterion for their pre-employment process, 44 respondents (39%) strongly agreed, 35 (32%) agreed, 6 (5%) undecided, 14 (13%) disagreed and 12 respondents (11%) strongly disagreed. On whether location is considered in their selection process, 23 respondents (21%) strongly agreed, 52 (47%) agreed, 19 (17%) disagreed and 17 respondents (15%) strongly agreed. On whether the selection process in their organization is characterized with discrimination and favoritism, 34 respondents representing 31% strongly agreed, 42 (38%) agreed, 3(3%) undecided, 21 (18%) disagreed and 11 respondents (10%) strongly disagreed. On whether sex (gender) difference form part of their selection process, 32 respondents (29%) strongly agreed, 56 (27%) agreed, 14 (13%) disagreed and 9 respondents (8%) strongly disagreed. On whether educational achievement affects organization's selection process, 36 respondents representing 34% strongly agreed, 44 (42%) agreed, 6 (6%) undecided, 14 (13%) disagreed and 5respondents (5%) strongly disagreed. On whether experience is also a criterion for their pre-employment process, 11 respondents (10%) strongly agreed, 14 (13%) agreed, 15 (14%) undecided, 39(38%) disagreed and 26 respondents (25%) strongly disagreed. On whether location is considered in their

selection process, 22 respondents (21%) strongly agreed, 47(45%) agreed, 12 (11%) undecided, 17(16%) disagreed and 7 respondents (7%) strongly disagreed. On whether the selection process in their organization is not characterized with discrimination and favoritism, 5 respondents representing 5% strongly agreed, 14(13%) agreed, 1 (1%) undecided, 60 (57%) disagreed and 25 respondents (24%) strongly disagreed. On whether sex (gender) difference form part of their selection process, 7 respondents (7%) strongly agreed, 41(39%) agreed, 4 (4%) undecided, 36(34%) disagreed and 17 respondents (16%) strongly disagreed.

Test of hypothesis one

H0: There is no significant difference between the selection processes employed by the private and public sectors. Result showed that t (201.926)=-2.959, p=0.003. Since the p- value (0.003) is less than 0.05 (0.003 < 0.05), the null hypothesis is rejected and the alternative hypothesis accepted.

Testing hypothesis two

H0: The selection process employed by the private and public sectors do not help them to achieve productivity. Result showed that t (212.658)=6.129, p=0.001. The null hypothesis is rejected because the p-value (0.001) is less than 0.05 (0.001 < 0.05). This implies that the alternative hypothesis is accepted. Result showed that t (203.773)=0.308, p=0.758. The result for the above analysis fails to support the rejection of the null hypothesis because the p-value (0.758) is greater than 0.05 (0.758 > 0.05). Therefore, the null hypothesis is accepted and alternative hypothesis rejected.

Discussions of Findings - In the test of Hypothesis one, the SPSS analysis gave a p-value of 0.003 which is less than the minimum value of 0.05 null hypothesis acceptance levels. Therefore, the null hypothesis is rejected and the alternative hypothesis which states that there is a significant difference between the selection process employed by the private and public sectors is accepted. In the test of Hypothesis two, the SPSS analysis gave a p-value of 0.001 which is less than the minimum value of 0.05 null hypothesis acceptance levels. Therefore, the null hypothesis is rejected and the alternative hypothesis which states that the selection process employed by the private and public sectors helps them to achieve productivity is accepted. Hypothesis three was tested and the SPSS analysis gives a p-value of 0.758 which is greater than the minimum value of 0.05 null hypothesis acceptance levels. In this case, the null hypothesis is accepted and the alternative hypothesis is rejected. This implies that there is no variability or difference between the factors influencing selection process in both private and public sectors. This is in confirmation of the views of John et al. [15], who said that employee selection mechanisms such as academic qualifications, background checks, work experience and personal characteristics affects pre-employment process of organizations.

Conclusion :

1. There is a significant difference between the selection process employed by the private and public sectors.
2. The selection processes employed by both the private and public sectors do help them to achieve productivity but the extents to which they achieve productivity vary from each other.
3. There is no significant difference between the factors influencing selection process in both the private and public sectors.

Recommendations - Based on the findings, the following recommendations were made: For both the private and public sector organizations to have healthy and suitable employees capable of achieving high productivity, they should devise a formal and logical selection process and consistently adhere to it without deviations. Also, they should always consider factors such as experience, educational qualification, location, etc., with no iota of bias, discrimination or favoritism during their selection process.

References :-

1. Nankervis AR, Compton RL, McCarthy WJ (1999) Effective Recruitment and Selection Practices, (3rdedn) Australia; Pty Press Ltd.
2. Barrick M, Feild HS, Gatewood RD (2011) Selection in Human Resource Management. (7thedn) South-Western: Canada.
3. Mamah A, Ulo F (2009) Competitive Edge by Employee outsourcing. The Nigeria Journal of Management Research: University of Nigeria, Enugu Campus; Enugu State, Nigeria.
4. Grobler PA, Wamich S, Carrell MR, Elbert NF, Hatfield RD (2005) Human Resource Management in South Africa (3rdedn) London: Thomson Leaning.

Questionnaire (see in next page)

Questionnaire

Employee Selection Process in the Public and Private Sectors In MP

Name of the Research Scholar………………………......

Public /Private Organization ……………………………......

Date ……………..

Sr.	Statement	agree	some times	Undecided	Disagreed
1	Do you feel proud of your organization ?				
2	Do you feel enjoy in the work of yourorganization ?				
3	Are you satisfied with the generalworking condition of your organization ?				
4	Do you feel that your department iscompletely safe from your future ?				
5	Do you feel that the government organization is batter than working witha private organization ?				
6	Do you feel that the salary of government organization is batter thanthen private organization ?				
7	Do you feel that the government organization has batter facilities provided to employs than the privateorganization?				
8	Do you feel that the government organization's employs opportunities for promotions is batter than private organization's employs ?				
9	Do you feel that there is moreexploitation then private organization in government organization ?				
10	Do you feel that the governmentorganization's employs collaborate with each other?				
11	Do you feel that the privateorganization's employs collaborate with each other?				
12	Do you feel that the governmentorganization's employs are disciplined like the private organization's employs?				
13	Do you feel that the government organization's employs work on time totime like the organization's employs?				
14	DO you feel that there are more opportunities for transfer to the private organization's then the governmentorganization's?				
15	DO you feel that it is easy to work in agovernment organization's then a private organization's?				

****

लोक जीवन और लोक चेतना के वाहक भारत के लोकनाटक

अमित रंजन *

प्रस्तावना – लोकगीत, लोक कला, लोक नाट्य आदि लोक जीवन के वाहक होते हैं। अत: किसी भी भाषा के किसी भी कला रुप में उस भाषा-भाषी समाज अथवा जनसमुदाय की सभ्यता- संस्कृति को पहचाना और ढूँढ़ा जा सकता है।

शास्त्रीय नियमों से इतर जनसाधारण द्धारा जनसाधारण के रंजन के उद्देश्य से लोकनाटकों की सृजना होती है जो लोक जीवन के वाहक होते हैं। लोकनाटकों का लोकजीवन से अत्यंत घनिष्ठ संबंध है तभी तो लोक उत्सवों, अवसरों तथा मांगलिक कार्यो के समय इनका अभिनय किया जाता है। विवाह के अवसर पर अनेक जातियों की स्त्रियाँ बारात विदा हो जाने पर किसी 'स्वाँग' करती हैं जिसे 'भोजपुरी' प्रदेश में 'डोमकछ' कहते हैं। सीधी सादी सरल आसानी से बोधगम्य भाषा, अत्यंत संक्षिप्त और छोटे संवाद, लंबे कथोपकथन का अभाव, ऐतिहासिक, पौराणिक, धार्मिक या सामाजिक कथानक, प्राय: पुरुष पात्र, स्वाभाविक चरित्र- चित्रण, सहज रंग योजना, खुला रंगमंच आदि लोकनाटक को लोकजीवन से सीधा जोड़ते हैं।

लोक नाटक लोक और नाटक दो शब्दों से मिलकर बना है अत: लोकनाटक के विवेचन के पूर्व इन दोनों शब्दों की मूल अवधारणा को समझना आवश्यक है। हिन्दी का लोक और अँग्रेजी का फोक प्राचीन और विकासशील शब्द है जिसकी परंपरा आदि ग्रंथ ऋग्वेद से आरंभ होती है, हिन्दी के लोक और अंग्रेजी के फोक को भारतीय और पाश्चात्य विद्धानों ने अनेक ढंग से व्याख्यायित किया है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्धिवेदी की परिभाषा सर्वसार है- लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं है बल्कि नगरों और ग्रामों में फैली हुई वह समूची जनता है जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं है। ये लोग नगर में परिष्कृत, रुचि सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रुचि वाले लोगों की समूचित विलासिता और सुकुमारता को जीवित रखने के लिए जितनी वस्तुओं की आवश्यकता होती है उन्हें उत्पन्न करतेहैं।[1] अत: स्पष्ट है कि अपने आप में पूर्णता का बोध लिये अभिजात्य शिक्षा एवं संस्कृति से विलग प्रकृतिक परिवेश में परंपरा प्रवाही जीवन व्यतीत करने वाले लोग ही लोक हैं जिनके ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं बल्कि अनुभव है जो ये व्यवहार से सीखते हैं।

नाटक दृश्य काव्य है, जिसमें रमणीयता और सम्प्रेषणीयता श्रव्य काव्य की अपेक्षा काफी अधिक होती है। फलत: यह लोक चेतना से अपेक्षाकृत अधिक घनिष्ठ रूप से संबद्ध है। भरतमुनि के नाट्य शास्त्र में लोक चेतना को नाटक के लेखन और मंचन की मूल प्रेरणा माना गया है। नाटक में अभिनय, रंगमंच, कथानक, पात्र, संवाद, वेश विन्यास द्धारा जन- मन- रंजन का कार्य संपादित होता है।[2]

नाटक की उत्पत्ति के संबंध में कहा जाता है कि इन्द्रादि देवताओं ने ब्रह्मा से एक ऐसे मनोविनोद का साधन उत्पन्न करने प्रार्थना की जो दृष्य और श्रव्य दोनों हो और जिसमें सभी वर्णो के लोग समान रूप से भाग ले सकें।[3] चूँकि वेदों का पठन- पाठन शुद्रों के लिए निषिद्ध था इसलिए सभी वर्गो के मनोरंजन के लिए पंचम वेद नाट्य शास्त्र की रचना ऋगवेद से पाठ, सामवेद से गान, यदुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद से रस लेकर की गई।

जग्राह पाठ्यं ऋगवेदात्सामभ्योगीतमेव च।
यजुर्वेदादभिनयान् रसमाथर्वणादपि।।[4]

नाटक की अपील सार्वजनीन होती है और यह साधारण जनता के मनोरंजन का सबसे बड़ा साधन है। आदिकवि कालिदास कहते हैं- नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधनम् ।

भारत में नाटक का इतिहास काफी प्राचीन है, सिन्धुघाटी के ध्वंसावशेषों और ईसा पूर्व सरजुगा रियासत की पहाड़ी में सीताबैंगा और जोगीमारा की गुफाओं में पुराना प्रेक्षागृह मिलता है।[5]

संस्कृत नाटकों की सुदीर्घ परंपरा इस देश में रही है, भास, अश्वघोष और कालिदास के नाटकों के पश्चात तो संस्कत साहित्य में नाटकों की रचना अबाध गति से होने लगी जिसकी परंपरा बाद में हजारों वर्षो तक अक्षुण्ण रही।[6]

नाटक की व्यापकता और प्रभवोत्पादकता को ले कर भरतमुनि कहते हैं कि न कोई ऐसा वेद है, न शिल्प, न विद्या, न कला, न योग और न कर्म जो इस नाट्यवेद में नहीं दिखाया जा सकता।[7]

हिन्दी नाटकों का आरंभ भारतेन्दु हरिश्चंद्र करते हैं। भारतेन्दु से शुरु हुई हिन्दी नाटकों की यह यात्रा उनके युगीन नाटककारों, जयशंकर प्रसाद, मोहन राकेश, भीष्म साहनी आदि सैकड़ों नाट्य लेखकों के साथ चलती रही और आज तक जारी है।

लोक के लिए लिखे और मंचित किए जाने वाले नाटक लोकनाटक हैं पाश्चात्य साहित्य में इन्हें आदिमनाटक भी कहा जाता है। अमेरिका, आस्ट्रेलिया, ग्रीक, चीन, जापान में आदिम नाटकों की बड़ी सुदीर्घ परंपरा है। शास्त्रीय नाटकों से भिन्न वे नाटक जिन्हें जनसाधारण बिना नाट्यकला सीखे रच कर प्रस्तुत करते हैं, लोकनाटक हैं। मौखिक परंपरा, रचनाकार के व्यक्तित्व का अभाव आदि लोक साहित्य की सर्वमान्य विशेषताएं लोक नाटकों में भी मौजूद हैं।

देश में मुगल शासन की प्रतिष्ठा के पश्चात्य राजनीतिक एकसूत्रता के समापन, शासकों की नाट्यकला के प्रति उदासीनता, राजाश्रय के अभाव में संस्कृत साहित्य में हजारों वर्षो से अबाध गति से चली आ रही नाट्यपरंपरा सदा के लिए नष्ट हो गई। तो वहीं भक्ति आंदोलनों ने लोकनाटकों के विविध रूपों को जन्म दिया।

* शोधार्थी (हिन्दी) जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार) भारत

गोस्वामी वल्लभाचार्य के अनुयायियों ने भागवत के दशम स्कंध की कथा को अभिनय के माध्यम से प्रचारित किया। श्रीकृष्ण की बाल लीलाओं का अभिनय मंदिरों, मठों तथा अन्य स्थानों में होने लगा, इसी लीला मंचनों ने 'रासलीला' का रूप धारण किया जो आज भी मथुरा तथा वृंदावन में जीवंत परंपरा है। गोस्वामी तुलसीदास ने सर्वप्रथम काशी में रामलीला करानी प्रांरभ की। इस प्रकार भक्ति आंदोलन के प्रभाव से उत्तर प्रदेश में दो लोकधर्मी नाट्य परंपराओं रासलीला और रामलीला का जन्म हुआ, आज भी जगह पर नाट्य मंडलियाँ इनकी प्रस्तुतियाँ करती हैं।

इसी समय बंगाल में चैतन्य महाप्रभु ने कृष्णभक्ति का प्रचुर प्रचार किया। ये श्रीकृष्ण की स्तुति का गान करते समय आत्मविभोर हो कीर्तन भी किया करते थे। उन्होंने अनुयायियों समेत अनेक तीर्थो की यात्रा की। इन यात्राओं तथा कीर्तनों ने लोकनाट्य का रूप धारण कर लिया, जिसमें श्रीकृष्ण की लीलाएँ अभिनय के माध्यम से दिखलाई जाने लगीं। आज बंगाल में यात्रा या जात्रा तथा कीर्तन का प्रचुर प्रचार है। इसी प्रकार उत्तरी भारत में अनेक लोकनाट्यों का विकास हुआ जिनकी पृष्ठभूमि धार्मिक है।

लोकनाटकों की भाषा बड़ी सरल तथा सीधी सादी होती है जिसे कोई अनपढ़ व्यक्ति भी बड़ी आसानी से समझ सकता है। लोकनाटक का अभिनय जहाँ किया जाता है, कलाकार वहाँ की स्थानीय बोली का ही प्रयोग करते हैं। लोकनाटकों में प्राय: गद्य का ही प्रयोग होता है परंतु बीच-बीच में गीत भी आ जाते हैं।

लोक नाटकों के संवाद बहुत छोटे तथा सरस होते हैं। लंबे कथोपकथनों का इनमें नितांत अभाव होता है। लंबे संवादों को सुनने के लिए ग्रामीण दर्शकों में धैर्य नहीं होता। लोक नाटकों के पात्र संक्षिप्त संवादों का ही प्रयोग करते हैं।

लोकनाटक का कथानक प्राय: ऐतिहासिक, पौराणिक, या सामाजिक होता है। धार्मिक कथावस्तु को लेकर भी अनेक नाटक खेले जाते हैं। लोकनाटक में प्राय: पुरुष ही स्त्री पात्रों का कार्य किया करते हैं।

लोकनाटक के अभिनेता वेशभूषा, किसी विशेष प्रकार के प्रसाधन, अलंकार या बहुमूल्य वस्त्र आदि की अपेक्षा अभिनय द्वारा ही लोगों को आकृष्ट करते हैं। कोयला, काजल, खड़िया आदि देशी प्रसाधनों से मुख को प्रसाधित कर तथा उपयुक्त वेशभूषा धारण कर पात्र रंगमंच पर आते हैं।

लोकनाटक खुले हुए रंगमंच पर खेले जाते हैं। दर्शकगण मैदान में आकाश के नीचे बैठकर अभिनय देखते हैं। किसी मंदिर के सामने का ऊँचा चबूतरा या ऊँचा टीला ही रंगमंच के लिए प्रयुक्त किया जाता है। कहीं काठ के ऊँचे तख्तों का बिछाकर मंच तैयार किया जाता है। इन रंगमंचों पर परदे-नेपथ्य नहीं होते। अभिनेता किसी पेड़ या दीवाल की आड़ में बैठकर प्रसाधन करते हैं।

लोकनाटकों के लिए पर्दे या नेपथ्य की आवश्यकता नहीं होती। संस्कृत नाटकों की भांति यहाँ अंक और दृश्य नहीं होते अभिनेता एक साथ मंच पर आते हैं और मंगलाचरण कर पूरा नाटक प्रस्तुत कर ही मंच से उतरते हैं। लोक नर्तक - नाटकों में सामगान और नर्त्तक के नृत्य से ही दृश्य बदल जाते हैं, कथानक आगे बढ़ता है। अभिनेता मंच का एक गोल घेरा लगा कर धरती से चाँद की यात्रा कर लेता है।

संस्कृत नाटकों की तरह मंच पर उपकरणों (प्रोपर्टीज) की जरुरत लोकनाटकों में नहीं होती। अभिनेता एक लाठी का ही उपयोग कभी बंदूक तो कभी हल तो कभी लाठी तो कभी डोली के रुप में कर लेता है।

उत्तर प्रदेश का ही लोकप्रिय लोक नाटक नौटंकी है, हाथरस की नौटंकी काफी प्रसिद्ध है। इसका विषय सामाजिक होता है, नगाड़े की थाप पर अभिनेता गीतों और गेय संवादों का ज्यादा उपयोग करते हैं। इसे भगत या स्वाँग भी कहते हैं।

मध्य भारत मालवा में माच संगीत प्रधान प्रसिद्ध लोकनाट्य है, मंच चारो ओर से खुला रहने से दर्शक कहीं से भी नाटक देख सकते हैं। राजस्थान में माच ख्याल के रुप में प्रचलित है।

गुजरात में प्रसिद्ध भवाई में अभिनय करने के लिए किसी भी ऊंची भूमि, मंदिर अथवा छत के चबूतरे पर रंगमंच अस्थायी रुप से तैयार किया जाता है। संस्कृत नाटकों की भांति न तो ये अंकबद्ध होता है और न ही इसमें कथावस्तु का व्यवस्थित रुप से तारतम्य ही पाया जाता है। भवाई की प्रसिद्धि इसकी वेशभूषा, दैनिक जीवन से संबंधिक घटनाओं के अभिनय और धार्मिक कथाओं के विश्वास पर आश्रित है। दो तीन व्यक्ति कपड़ा फैला (तानकर खड़े) हो जाते हैं तथा तबले, नगाड़े एवं अन्य तेज आवाज लाले वाद्यों के साथ कभी सम्मिलित रूप में, कभी स्वतंतत्र रुप से अभिनेता गा कर अभिनय करते हैं। इसमें स्त्रियों का अभिनय पुरुष ही करते हैं।[8]

बंगाल की जात्रा के साथ ही गभीरा खासा प्रसिद्ध है जिसमें शिव की लीलाओं की प्रस्तुति की जाती है। इसमें अभिनेता विभिन्न प्रकार के मुखौटे लगा कर मंच पर आते हैं और शिव की वेश भूषा में अभिनेता जनता को प्रणाम कर ढाक (एक तरह का वाद्ययंत्र) के थाप पर नृत्य करता है, गायक मंडली उसके पीछे गाती है। नृत्य का लय क्रमश: ठाह से आरंभ हो कर अंत में अति द्रूत हो जाता है।

महाराष्ट्र में तमाशा, ललित, गोंधल, बहुरुपिया और दशावतार मराठी लोक रंगमंच के आधार हैं। तमाशा महाराष्ट्र का प्राचीन नाट्य है। तमाशा करने वाली मंडली फड़ का मुखिया सरदार कहलाता है। इस फड़ में ढ़ोलकिया, सोंगरड़िया (विदूषक), नचिया, नर्तकी और सुरतिया (स्वर भरने वाला) आदि होते हैं। नर्तकी तमाशा का प्राण होती है जो अपनी भावभंगिमों और मधुर गीत से ग्रामीण जनता के हृदय को आकृष्ट कर लेती है।[9]

ललित मध्युगीन धार्मिक नाटक है वस्तुत: यह नवरात्र संबंधी विशिष्ट कीर्तन है जिसें भक्तों के स्वाँग दिखलाये जाते हैं। आनुष्ठानिक महत्त्व का गोंधल धर्ममूलक लोकनाट्य है। विवाहादि अवसरों पर प्रस्तुत गोंधल में मंडप के नीचे वस्त्र बिछाकर आम के पत्तों तथा कलश सहित अम्बा की प्रतिष्ठा कर गोंधल का आरंभ किया जाता है। इसमें ग्रामीण वाद्यों के साथ पवाड़े गाए जाते हैं।[10]

दक्षिण भारत के तमिल, तेलुगु, कन्नड भाषायी क्षेत्र में यक्षगान प्रसिद्ध लोकनाटक है। इसे विथि या विथिभागवतम भी कहते हैं इस नृत्य नाट्य में गीतिबद्ध संवादों का प्रयोग होता है। इसकी कथावस्तु प्राय: रामायण, महाभारत और भागवत से ली जाती है, यह वर्णन प्रधान होता है तथा लंबे बोल अभिनेताओं को कंठस्थ होते हैं।[11]

बिहार में जट जटिन, सामा चकेवा, बिहुला विषहरी, विदेशिया लोकनाटक प्रचलित हैं। विदेशिया का कथानक सामाजिक होता है तथा संगीत इसका प्राणतत्व है। विदेशिया करने वाली मंडली को समाजी कहते हैं जिसमें मुख्य गायक और गायकों के दल के अलावा ढ़ोलकिया, क्लारनेट, बैंजो वादक, नर्तकी, लबार मुख्य होते हैं। देश के तमाम प्रख्यात निर्देशकों की लोकनाटक के रुप में पहली पसंद भिखारी ठाकुर की विदेशिया, गबरघिचोर और बेटी वियोग हैं जिनकी प्रस्तुति देश विदेश में की जा रही है। अत: स्पष्ट है कि लोक नाटक लोक के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक जीवन के सच्चे वाहक हैं। बिडम्बना है कि आज रंगकर्मियों की सभ्रांतता

जनित उपेक्षा, सरकारी सहयोग के अभाव जनित आर्थिक विपन्नता, मनोरंजन के डिजिटल साधनों की प्रचूरता के कारण लोकनाटकों के अस्तित्व पर खतरे मंडरा रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, जनपद वर्ष 1 अंक 1
2. भरत मुनि, नाट्यशास्त्र
3. भरत मुनि, नाट्यशास्त्र, 1/17
4. भरत मुनि, नाट्यशास्त्र 1/17/18
5. डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय, लोकसाहित्य की भूमिका, पृष्ठ 144
6. डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय, लोकसाहित्य की भूमिका, पृष्ठ 144
7. भरत मुनि, नाट्यशास्त्र 1/ 82
8. डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय, लोकसाहित्य की भूमिका, पृष्ठ 148
9. डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय, लोकसाहित्य की भूमिका, पृष्ठ 148
10. डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय, लोकसाहित्य की भूमिका, पृष्ठ 149
11. डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय, लोकसाहित्य की भूमिका, पृष्ठ 149

****

समावेशी शिक्षा के संदर्भ में प्रयुक्त शिक्षण रणनीतियों का अध्ययन : दिव्यांग विद्यार्थियो के उच्चतर शिक्षा के संदर्भ में

सरिता बाजपेई * डॉ. मृत्युन्जय मिश्रा **

प्रस्तावना – शिक्षण रणनीतियों से तात्पर्य शिक्षण विधियों, शिक्षण परिस्थितियों, शिक्षण उपकरणों आदि के कक्षा में उचित प्रयोग से है। इसको इस प्रकार समझा जा सकता है, जैसे श्रीमान भट्टाचार्य जी समावेशी कक्षा में दृष्टिबाधित विद्यार्थियों को पढ़ाने में सक्षम हैं, किन्तु उन्हें श्रवण बधिर विद्यार्थियों को पढ़ाने में कठिनाई आती है। कुछ समय के पश्चात वह श्रवण बधिरों को पढ़ानें का प्रशिक्षण लेते हैं और कक्षा में पुन: श्रवण बधिरों को पढ़ाने का प्रयास करते हैं। इस बार वह सफल होते है क्योंकि उन्हें प्रशिक्षण द्वारा यह ज्ञात हो चुका है कि श्रवण बधिरों को मौखिक विधि से नहीं बल्कि अन्य शिक्षण रणनीतियों जैसे– समस्या समाधान, योजना विधि, कोलाबोरेटिव आदि रणनीतियों का प्रयोग करके आसानी से पढ़ाया जा सकता है।

वर्तमान समय में यह सिद्ध हो चुका है कि सभी विद्यार्थियों को अधिगम का तरीका भिन्न–भिन्न होता है केवल एक ही प्रकार की शिक्षण रणनीति का कक्षा में प्रयोग करके शिक्षण को गुणात्मक नही बनाया जा सकता है।

पारम्परिक तथा आधुनिक शिक्षण रणनीतियाँ – भारत में शिक्षा का प्रारम्भ वैदिक काल से माना जाता है। वैदिक काल में ज्ञान का आधार वेदों को ही माना जाता था। भारत की उच्च शिक्षा का प्रारम्भ भी इसी शताब्दी से माना जाता है।मौखिक विधि में छात्र उच्चारण अनुकरण करके कंठस्थ करते थे। तत्पश्चात् उसका चिंतन मनन करते थे। इनके अलावा व्याकरण, प्रश्नोत्तर विधि, वाद विवाद आदि शिक्षण रणनीतियों का प्रयोग किया जाता था। प्राचीन समय में उच्च शिक्षा के मुख्य केन्द्र के रूप में तक्षशिला, पाटलीपुत्र, मिथिला, कन्नौज को जाना जाता था।

बौद्ध काल में उच्च शिक्षा विहारों तथा मठों में दी जाती थी। बौद्ध काल में लौकिक तथा धार्मिक दोनों प्रकार की शिक्षा प्रदान की जाती थी। शिक्षक सर्वप्रथम विषय वस्तु को सामान्य अर्थ में स्पष्ट करते थे। तत्पश्चात् सूक्ष्म विवेचन करके पढ़ाते थे अर्थात आगमन तथा निगमन शिक्षण रणनीति का प्रयोग करते थे। बौद्ध काल में भी शैक्षिक रणनीतियों की सफलता के लिए पाठ्यक्रम को विभिन्न समयान्तराल में बांट दिया जाता था। बौद्धकाल के मुख्य शिक्षा के स्थान बौद्धमठ, वल्लभी, विक्रमशिला आदि थे।

मध्यकालीन समय में उच्च शिक्षा का सम्बन्ध मदरसों से होता था जो प्राय: किसी मस्जिद से जुड़े होते थे। मदरसों में भाषण विधि से शिक्षा प्रदान की जाती थी। मध्यकालीन शिक्षण रणनीतियों में मौखिक विधि तथा रटने पर विशेष जोर दिया जाता था।

इस प्रकार उपरोक्त विवरण से वैदिक कालीन शैक्षिक रणनीतियों से लेकर मध्यकालीन शैक्षिक रणनीतियों की जानकारी प्राप्त की, जिससे यह ज्ञात हुआ कि पारम्परिक शिक्षण विधियों के रूप में भाषण विधि, व्याख्यान विधि, आगमन तथा निगमन विधियों का ही मुख्य रूप से प्रयोग किया जाता था।

समय के साथ जैसे–जैसे मनुष्य के जीवन में बदलाव आया वैसे–वैसे ही शिक्षा के उद्देश्यों में भी परिवर्तन होता गया। प्राचीन समय में शिक्षा का उद्देश्य केवल मोक्ष प्राप्ति या ज्ञान प्राप्ति था किन्तु वर्तमान समय में शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान प्राप्ति कर धन कमाने से तथा रोजगार के अवसरों में वृद्धि से है उच्च शिक्षण में शैक्षिक रणनीतियों का महत्वपूर्ण स्थान है। शिक्षण रणनीतियाँ शिक्षक की सबसे अधिक सहायक होती हैं। वर्तमान समय में पढ़ने की अपेक्षा सीखने पर अधिक जोर दिया जा रहा है। समय के साथ जिस प्रकार विज्ञान एवं तकनीकी का विकास हुआ है उसी के फलस्वरूप आज शिक्षण को उच्चतम व्यवसायिक क्रिया समझा जाने लगा है।

उच्च शिक्षा में समावेशी शिक्षा – उच्च शिक्षा में समावेशन से तात्पर्य है कि महाविद्यालय या विश्वविद्यालयों की कक्षाओं में सभी विद्यार्थियों की शिक्षा एक ही साथ, एक ही कक्षा में हो। मानव विकास संसाधन मंत्रालय के समावेशित शिक्षा स्कीम 2003 के अनुसार – 'समावेशी शिक्षा से तात्पर्य सभी सीखने वाले दिव्यांग तथा गैर दिव्यांग नवयुवक/नवयुवतियों पूर्व विद्यालय प्रावधानों, विद्यालय और सामुदायिक शैक्षिक स्थानों पर उपयुक्त तंत्र एवं सहायक सुविधाओं के साथ एक साथ सीख (पढ़) सकें।'

कक्षा में सभी विद्यार्थियों की अधिगम क्षमता भिन्न–भिन्न होती है। शिक्षण का मुख्य उद्देश्य एक ही प्रकार के पाठ्यक्रम को कक्षा के सभी विद्यार्थियों को समान रूप से समझाना है और इस कार्य को सम्पूर्ण करने में शिक्षण रणनीतियाँ सबसे बड़ी सहायक सिद्ध होती हैं। शिक्षण रणनीतियों का उद्देश्य शिक्षण को प्रभावशाली तथा विद्यार्थियों के लिए शिक्षा को लाभकारी बनाना होता है। विद्यार्थी किसी भी पाठ्य वस्तु को तभी प्रभावशाली ढंग से सीख सकते हैं, जब विद्यार्थियों को सीखने के उद्देश्य भली भांति ज्ञात हों। विद्यार्थियों को यह ज्ञात हो कि क्या और कैसे सीखना है। शिक्षक स्वयं द्वारा निर्धारित किये गये उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न प्रकार की शिक्षण रणनीतियों का कक्षा में प्रयोग करता है।

बी. ओ. स्मिथ के अनुसार 'शिक्षण रणनीतियों का अर्थ कार्य के उन रूपों से है जो कुछ उपलब्धियों को प्राप्त करने के लिए किये जाते हैं तथा कुछ अन्य कार्यो से रक्षा करते हैं।'

वैश्विक परिदृश्य में दिव्यांगो की शिक्षा – जनगणना 2011 के अनुसार भारत में लगभग 26 मिलियन दिव्यां्ग हैं जोकि कुल जनसंख्या का 2–3 भाग हैं। समय–समय पर दिव्यांग शिक्षा सशक्तिकरण के लिए कई नीतिया

* शोधार्थी (विशेष शिक्षाशास्त्र विभाग) डॉ. शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.) भारत
** एसोसिएट प्रोफेसर (श्रवण बाधितार्थ) डॉ. शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

तथा कानून लागू किए गए हैं जिससे दिव्यांगो के शिक्षण कार्य को सही से चलाया जा सके। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में बताया गया कि दिव्यांग विद्यार्थी सभी स्तर की शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं।

पी. डबल्यू. डी एक्ट भारतीय संसद द्वारा 2005 में पारित किया गया। इस अधिनियम से भारत में दिव्यांगो की शिक्षा के लिए नए युग का आरंभ हुआ।

सलामांका स्टेटमेंट और फ्रेमवर्क फॉर एक्शन ऑन स्पेशल नीड्स फॉर एडुकेशन 1994 मे भारत द्वारा अंगीकार किया गया। इस सम्मेलन में समेकित शिक्षा पर सर्वाधिक जोर दिया गया। विद्यालय मे बिना भेद-भाव के शिक्षा को सभी प्रकार के विद्यार्थियो के लिए आवश्यक बनाया गया।

अंतर्राष्ट्रीय दबाव के चलते भारत मे समवेशी शिक्षा को बढ़ावा देते हुए इसके लिए कई नीतिया तथा कानून बनाए गये। दिव्यांग विद्यार्थियों के अधिकारों की बात यू.एन. सी. आर. पी. डी. 2008 में की गयी। इस अधिवेशन मे दिव्यांगो की पूर्ण सहभागिता तथा उनकी शिक्षा मे पहुच पर अधिक ध्यान दिया गया। सभी के लिए अवसरों की समानता पर बात की गयी।

समवेशी शिक्षा के बाद शिक्षण रणनीतियों पर ध्यान देने की आवश्यकता महसूस की गयी। इसके लिए 'इंचेओन रणनीति' बनाई। इस रणनीति के अंतर्गत 10 लक्ष्य तथा 10 उद्देश्य बनाए गये और समवेशी कक्षा में शिक्षको द्वारा सभी विद्यार्थियो के अधिगम के आवशयकतानुसार शिक्षण रणनीतिया प्रयोग करने की सलाह दी गयी।

नागार्जुन 2010 कि रिपोर्ट मे दिखाया गया कि जहा चाइना के 22% दिव्यांग विद्यार्थी तथा यू. एस. के 28% विद्यार्थी ऊच्च शिक्षा मे भागीदारी लेते है, वहा भारत के केवल10% दिव्यांग विद्यार्थी ही ऊच्च शिक्षा मे भाग ले पाते हैं। जिसमे 22 से 35 वर्ष के विद्यार्थी में 15% उत्तार भारत के तथा 13% दक्षिण भारत के विद्यार्थी होते हैं।

पीडबल्यूडी 1995 मे कहा गया है कि दिव्यांग विद्यार्थी सभी स्तर की शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। ऊच्च शिक्षा में यूजीसी ने सभी विश्वविद्यालय को दिव्यांग विद्यार्थियो की शिक्षा में सशक्तिकरण के लिए स्कीम टीईपीएसई तथा एचईपीएसएन की शुरुवात की। एमएचआरडी की वार्षिक रिपोर्ट से पता चलता है कि ऊच्च शिक्षा में दिव्यांग विद्यार्थियों का नामांकन औसत से कम है। लारेन सेवेज के द्वारा 2017 को प्रकाशित एक आर्टिकल मे विभिन्न प्रकार की दिवयांगताओ वाले जैसे -अधिगम अक्षमता, स्वलीन, वाणी और भाषा बाधित, शारीरिक दिव्यांग विद्यार्थियो के लिए प्रोवेन शिक्षा रणनीति की बात की। सेवेज ने कहा कि शिक्षण रणनीति ऐसी होनी चाहिए जो समावेशी वातावरण मे अधिगम को दिव्यांग विद्यार्थियो के लिए आरामदायक बनाये।

उच्च शिक्षा में समावेशी शिक्षण रणनीतियों के उद्देश्य - उच्च शिक्षा में समावेशी शिक्षण रणनीतियों का मुख्य उद्देश्य समावेशी कक्षा के विद्यार्थियों के लिए शिक्षा को आसान बनाना तथा उच्च शिक्षा तक विद्यार्थियों की सुगम्यता को बढ़ावा देना है। इसके कुछ उद्देश्य निम्न प्रकार हैं

1. उच्च शिक्षा में भिन्न भिन्न प्रकार के विद्यार्थियों की पहुंच को बढ़ाना।
2. अच्छी तथा लाभकारी शिक्षण रणनीतियों का प्रयोग करके विद्यार्थियों की रूचि कक्षा में बनाये रखना।
3. समावेशी कक्षा के विद्यार्थियों के लिए समावेशन में नई नई तकनीकियों का प्रयोग।
4. समावेशी कक्षा के सभी प्रकार के विद्यार्थियों को सभी प्रकार की तकनीकियों से अवगत कराना तथा उनका प्रयोग करना सिखाना।
5. कक्षा में विद्यार्थियों की अधिगम क्षमता के अनुसार शिक्षण रणनीतियों का प्रयोग करना।
6. शिक्षकों को शिक्षण रणनीतियों का प्रयोग करना बेहतर ढंग से सिखाना ताकि वह सभी प्रकार के विद्यार्थियों की आवश्यकता को समझकर उचित शिक्षण विधि का प्रयोग कर सकें।

उच्च शिक्षा में शिक्षण रणनीतियां - प्राचीन समय में केवल मौखिक रूप से शिक्षा प्रदान की जाती थी किन्तु वर्तमान समय में विद्यार्थियों के अधिगम के तरीकों को ध्यान में रखकर कक्षा में शिक्षण रणनीतियों का प्रयोग किया जाने लगा है। इस आधार पर शिक्षण रणनीतियों को तीन भागों में बांटा गया है :

(अ) परम्परागत शिक्षण रणनीतियाँ - परम्परागत शिक्षण रणनीतियों में प्राचीन समय में प्रयोग की जाने वाली शिक्षण रणनीतियों को स्थान दिया गया है। इसमें प्राय: अरस्तू की आगमन निगमन विधि तथा सुकरात की प्रश्नोत्तर विधि को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। पाठ्यपुस्तक विधि भी परम्परागत शिक्षण रणनीति का एक महत्वपूर्ण भाग है।

(ब) शिक्षक प्रधान रणनीतियाँ - शिक्षक प्रधान रणनीतियों में शिक्षक केन्द्र बिन्दु होता है। कक्षा में शिक्षक सक्रिय भूमिका अदा करता है जैसे - व्याख्यान शिक्षण रणनीति, कहानी शिक्षण रणनीति आदि। व्याख्यान शिक्षण रणनीति को प्रभुत्ववादी शिक्षण रणनीति के नाम से भी जाना जाता है इसका प्रयोग अधिकतर सामाजिक विषयों को पढ़ाने में किया जाता है।

(स) विद्यार्थी प्रधान शिक्षण रणनीतियाँ - इस प्रकार की शिक्षण रणनीतियों में शिक्षा का केन्द्र विद्यार्थी होते हैं। विद्यार्थी प्रधान रणनीतियों में शिक्षक केवल मार्गदर्शक एवं वातावरण के निर्माता के रूप में कार्य करते हैं जैसे योजना शिक्षण रणनीति, समस्या समाधान शिक्षण रणनीति, प्रयोगशाला शिक्षण रणनीति, विचार-विमर्श शिक्षण रणनीति, निरीक्षण-शिक्षण रणनीति आदि।

शिक्षार्थी केन्द्रित शिक्षण रणनीतियाँ एक नजर में -

योजना शिक्षण रणनीति - योजना शिक्षण रणनीति का प्रयोग प्राय: व्यवसायिक पाठ्यक्रमों को पढ़ाने के लिए अधिक किया जाता है। यह सामाजिक वातावरण में किया जाता योजना शिक्षण रणनीति एक ऐसी शिक्षण रणनीति है जिसमें छात्रों को कार्य की योजना और सम्पन्नता के लिए उत्तरदायी बनाया जाता है।

समस्या-समाधान शिक्षण रणनीति - यह एक नवीन शिक्षण रणनीति है। इसमें शिक्षार्थियों को यह सिखाने का प्रयास किया जाता है कि किसी समस्या का वैज्ञानिक ढंग से हल किस प्रकार खोजते हैं।

प्रयोगशाला शिक्षण रणनीति - इस विधि में समस्त शिक्षण रणनीतियों के सर्वोत्तम लक्षण निहित होते हैं। यह रणनीति थार्नडाइक के यकरके सीखना पर आधारित है। इस विधि की सहायता से श्रवण बधिर विद्यार्थियों तथा सामान्य विद्यार्थियों का प्रभावशाली अधिगम किया जाता है।

वाद-विवाद शिक्षण रणनीति - इस विधि की सहायता से उच्च समावेशी कक्षा में किसी भी प्रकरण पर चर्चा की जा सकती है। यह विधि दृष्टिबाधित विद्यार्थियों के लिए अधिक लाभकारी है।

शिक्षार्थी केन्द्रित तकनीकियों की आवश्यकता - वर्तमान समय में समवेशी शिक्षा का प्रचलन है। इसके अंतर्गत एक ही कक्षा मे सामान्य तथा कई प्रकार की अक्षमता वाले विद्यार्थी एक साथ एक ही शिक्षक से शिक्षा प्राप्त करते हैं किन्तु सभी विद्यार्थियो की अधिगम आवश्यकता भिन्न-भिन्न

होती है इसके लिए आवश्यक है अधिगम को सभी विद्यार्थियो की आवश्यकता अनुसार गुणवत्ता पूर्ण बनाने के लिए शिक्षक को एक से अधिक अधिक शिक्षण तकनिकियों का प्रयोग करने की आवशयकता है। जैसे- यदि शिक्षक कोई प्रकरण पढ़ा रहा है तो वह उसकी पी पी टी भी बना सकता है। कक्षा में जहा तक सम्भव हो समूह गतिविधियों पर अधिक जोर देना चाहिए।

उच्च समावेशी कक्षा में श्रवण बाधितों के लिए शिक्षण रणनीतियों में सुधार – श्रवण बधिरता एक अदृश्य दिव्यांगता है। श्रवण बधिरों को उच्च शिक्षा में शिक्षक द्वारा कक्षा में पढ़ाई गई विषय वस्तु को समझने में काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसलिए आवश्यक है कि शिक्षक अपनी शिक्षण रणनीतियों में सुधार करें। जैसे :

1. शिक्षकों द्वारा दिए गए व्याख्यान को सांकेतिक भाषा में रिकार्ड करके सभी छात्रों को उपलब्ध कराये जा सकते हैं।
2. कक्षा शिक्षण के समय कक्षा में शिक्षकों को व्याख्यान देते समय बहुत शीघ्रता से नहीं अपितु धीमी गति के साथ उचित हाव-भाव का प्रयोग करके श्रवण दिव्यांग के लिए कक्षा व्याख्यान लाभकारी बनाया जा सकता है।
3. कक्षा में शिक्षक को एक ही प्रकार की शिक्षण रणनीति न अपनाकर मिश्रित रणनीतियों का प्रयोग करना चाहिए जैसे – व्याख्यान विधि के साथ प्रश्नोत्तर विधि का प्रयोग किया जा सकता है।
4. कक्षा में जाने से पूर्व शिक्षक द्वारा पढ़ाई जाने वाली विषय वस्तु का पी.पी.टी. या माडल बनाया जा सकता है। कक्षा में प्रोजेक्टर का प्रयोग करके विषय वस्तु को चित्रों के रूप में भी दिखा सकते हैं। जैसे- यदि शिक्षक कक्षा में भूगोल का कोई प्रकरण पढ़ा रहा है तो वह उसे प्रोजेक्टर की सहायता से विद्यार्थियों के सामने वीडियो तथा चित्रों के रूप में पेश कर सकता है।
5. शिक्षक दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए समस्या समाधान शिक्षण रणनीति का प्रयोग सफलतापूर्वक कर सकता है। शिक्षक विद्यार्थियों को छोटी-छोटी समस्याए देकर उनका हल ढूढ़कर लाने के लिए कह सकता है।
6. श्रवण बधिर छात्रों के लिए उच्च शिक्षा में विषय वस्तु को चुनने में छूट की व्यवस्था भी हो सकती है। उनके पाठ्यक्रम में थ्योरी पेपर कम और प्रैक्टिकल पेपर अधिक दिये जा सकते हैं।
7. श्रवण दिव्यांगों से प्रोजेक्ट के रूप में भी कार्य कराया जा सकता है।
8. शिक्षक को श्रवण बधिर छात्रों से कक्षा में सम्प्रेषण अवश्य करना चाहिए ताकि शिक्षक समस्या का पता लगाकर शिक्षण रणनीति में सुधार कर सकें।
9. शिक्षक राइट वन्स रीड मैनी तकनीकी का प्रयोग करना श्रवण दिव्यांग विद्यार्थियों को सिखा सकते हैं इसमें विद्यार्थी स्वयं फाइल निर्मित कर ग्राफिक बिम्बों को संग्रहण कर सकते हैं।

उच्च समावेशी कक्षा में दृष्टि बाधितों के लिए शिक्षण रणनीतियों में सुधार :

1. दृष्टि बाधितों को पढ़ाये गये सभी व्याख्यानों को आडियो फार्म में रिकार्ड करके दिया जा सकता है ताकि वह विषय वस्तु को शिक्षण उपरान्त दोहरा सकें।
2. दृष्टि बाधितों के लिए अधिक से अधिक श्रव्य सामग्रियों को उपलब्ध कराया जा सकता है।
3. शिक्षक कक्षा में छोटी-छोटी सामूहिक गतिविधियाँ करवा सकता है जैसे पाठ्यक्रम में किसी विषय वस्तु का चुनाव कर उस पर कक्षा में प्रस्तुतीकरण करवाना।
4. दृष्टि बाधित छात्रों को ब्रेल में लिखने के लिए व्याख्यान को धीमी गति से बोला जा सकता है।
5. शिक्षक को कक्षा में पढ़ाते समय कक्षा में बीच-बीच में प्रश्नोत्तर विधि का प्रयोग भी करना चाहिए ताकि विद्यार्थियों का ध्यान शिक्षक की ओर केन्द्रित रहे।
6. दृष्टि बाधित विद्यार्थियों के लिए वाद-विवाद शिक्षण रणनीति का प्रयोग किया जा सकता है।
7. कक्षा में दृष्टिबाधितों को अपनी अभिव्यक्ति का अवसर भी दिया जाना चाहिए।
8. शिक्षक कक्षा में छोटे-छोटे विद्यार्थियों के समूहों का निर्माण कर सकता है। प्रत्येक समूह में कुछ दिव्यांग विद्यार्थी तथा कुछ गैर दिव्यांग विद्यार्थियों को सम्मिलित कर शिक्षा से सम्बन्धित कार्य सफलतापूर्वक कराये जा सकते हैं।
9. शिक्षक दृष्टि बाधित छात्रों को अधिक से अधिक तकनीकियों का प्रयोग करने के लिए जागरूक कर शिक्षण को उनके लिए आसान बना सकता है।
10. शिक्षक दृष्टिबाधित विद्यार्थियों को नवीन एप्स की जानकारी दे सकता हैं।

उच्च समावेशी कक्षा में अस्थि दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए शिक्षण रणनीतियों में सुधार :

1. अस्थि दिव्यांगता में से तात्पर्य उन सभी दिव्यांगों से होता है जो हड्डियों से सम्बन्धित होती हैं जैसे -चलन क्रिया सम्बन्धी, हस्त सम्बन्धी। अस्थि दिव्यांग छात्रों के लिए शिक्षण रणनीतियों में बहुत अधिक सुधार की आवश्यकता नहीं होती है। यह देखकर तथा सुनकर विषय-वस्तु को समझ सकते हैं।
2. कक्षा शिक्षण के समय शिक्षक उनके बैठने की व्यवस्था का सही चुनाव करवा सकता है ताकि जो चीजें श्यामपट्ट या प्रोजेक्टर पर दिखाई जा रही है वह अस्थि दिव्यांग विद्यार्थी आसानी से देख पाये।
3. अस्थि दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए प्रोजेक्ट शिक्षण रणनीति या वाद-विवाद शिक्षण रणनीति भी अपनायी जा सकती है।
4. शिक्षक अस्थि दिव्यांगों को जिम्मेदारी वाले कार्य देखकर उन्हें सामाजिकता की ओर अग्रसर कर सकते हैं। कार्य में सहायता के लिए अन्य विद्यार्थियों को भी जोड़ा जा सकता है।
5. सहकर्मी समूह गतिविधि में अस्थि विकलांगों के साथ सामान्य छात्रों को सम्मिलित कर सकते हैं ताकि ये अपने कार्य आसानी से कर पाये। जैसे -शिक्षक कई छोटे-छोटे समुदाय बनाकर पाठ्यचर्या की समस्याओं को समूहों में बाट सकते है और अधिन्याश के रूप में विद्यार्थियों से हल करवा सकते है।
6. अस्थि विकलांगों के लिए सभी सामान्य शिक्षण रणनीतियों का प्रयोग किया जा सकता है।
7. यदि किसी को लेखन में समस्या है तो विषय-वस्तु लिखित रूप से उपलब्ध करायी जा सकती है।
8. अस्थि दिव्यांगों के लिए मुख्यत: व्याख्यान शिक्षण-रणनीति वाद-विवाद, कोलबोरेटिव आदि रणनीतियों का प्रयोग कर उनकी शिक्षा को गुणात्मक बनाया जा सकता है।

सुझाव :

1. दिव्यांग विद्यार्थियों को उच्च समावेशी कक्षा में शिक्षण रणनीतियां विद्यार्थियों की आवश्यकतानुसार प्रयोग की जानी चाहिए। जैसे सभी विद्यार्थियों को अधिकार के तरीके के अनुसार शिक्षण रणनीति उपयोग करनी चाहिए।
2. कक्षा में अधिक से अधिक तकनीकियों का प्रयोग जैसे – प्रोजेक्टर, उचित लाइट व्यवस्था, पंखा आदि करना चाहिए।
3. शिक्षक को कक्षा में सकारात्मक वातावरण का निर्माण करना आना चाहिए।
4. समावेशी कक्षा में शिक्षक को पढ़ाने के लिए पूर्ण प्रशिक्षित होना चाहिए।
5. कक्षा में वीडिया के साथ अनुशीर्षक का प्रयोग किया जा सकता है।
6. श्रवण दिव्यांगों तथा अस्थि दिव्यांगों को आगे की सीटों पर बिठाना चाहिए।
7. दृष्टि बाधित छात्रों के लिए बोलने वाली किताबों की व्यवस्था करायी जा सकती है।
8. सभी कक्षाओं में sign language interpreter की व्यवस्था होनी चाहिए।
9. सफल शिक्षण रणनीति के लिए आवश्यक है कि शिक्षक शिक्षार्थी कम होना चाहिए।
10. उच्च समावेशी शिक्षा में शिक्षण रणनीतियों को सफल बनाने के लिए दिव्यांगों के लिए कई प्रकार की तकनीकियों का प्रयोग किया जा सकता है जैसे राइट–वन्स–रीड मैनी, ऑडियो कॉम्पैक्ट डिक्स, डिजिटल, ऑप्टिकल डिस्क, आप्टिकल वीडियो सिस्टम, मैग्नेटो आप्टिकल माध्यम आदि।
11. शिक्षक विद्यार्थियों की आवश्यकतानुसार उनके लिए उचित शिक्षण रणनीति जानने के लिए आई ई पी का प्रयोग कर सकते हैं।
12. निदानात्मक शिक्षण की व्यवस्था की जा सकती है।
13. समय–समय पर शिक्षक प्रशिक्षण भी किया जा सकता है।
14. शिक्षक को विद्यार्थियों से अधिक से अधिक वार्तालाप करने का प्रयास करना चाहिए।
15. कक्षा का वातावरण बाधा मुक्त होना चाहिए।
16. शिक्षक को शिक्षण रणनीति को गुणात्मक बनाने के लिए शिक्षण अधिगम सामाग्री का प्रयाग करना चाहिए।
17. द्रश्य,श्रव्य सामाग्री का प्रयोग अनिवार्य रूप से करना चाहिए।
18. यदि किसी छात्र को मानसिक समस्या या कुंठा है, तो परामर्श तथा निर्देशन की व्यवस्था की जा कसती है।
19. समय–समय पर विद्यार्थियों में समुदायिक गातिविधियाँ कराते रहना चाहिए।
20. छात्रों को सृजनात्मक कार्य अधिक देने चाहिए।
21. विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार की तकनीकियों की जानकारी तथा उन्हें प्रयोग करने का प्रशिक्षण भी देना चाहिए।
22. दृष्टिबाधित दिव्यागों की सुविधा के लिए कक्षा में बोले गये नोट्स को दूसरे विद्यार्थियों द्वारा कार्बन की सहायता से तैयार कराया जा सकता है। जिससे वह विषयवस्तु को रिकार्ड करवाकर किसी भी समय कंठस्थ कर सकते है।
23. यदि कोई विषयवस्तु बार–बार समझाने के बावजूद भी विद्यार्थियों को समझ नही आ रही है तो शिक्षक को अपनी शिक्षक रणनीति एवं प्रस्तुतीकरण में बदलाव लाना चाहिए।
24. समय–समय पर विद्यार्थियों का मूल्यांकन भी करते रहना चाहिए ताकि विद्यार्थियों के कक्षा के प्रदर्शन स्तर को जाना जा सके।

अन्य सुझाव – वर्तमान समय में इंटरनेट एक ऐसा क्षेत्र हैं जिसमे कई प्रकार के कार्यक्रम केवल दिव्य्ग्गो के लिए ही चलाये जा रहे हैं। इसमे कई प्रकार के पोर्टल तथा ऐप बनाए गये है जिनसे सभी प्रकट की दिवयांगता वाले आसानी ने ऑनलाइन शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। जैसे– दिवयांग सारथी, स्वयं (कार्यक्रम भारत सरकार द्वारा), मूक (ऑनलाइन कोर्स) ।

संदर्भ सूची

1. Orlich, Donald C.2013.Teaching Strategies: A GuideTo Effect Instruction,10th ed.Belmont, CA: wordsworth
2. Savage, Lorraine March20.2017, Teaching Strategies: Student with Learning Disabilities.
3. Justeen, T.R. et al. College Student with Disabilities – ACCOMMODATING, SPECIAL LEARNINGNEEDS Retrived from http://education.stateuniversity.com/pages/1865/College-Students-with Disabilities.html on 11-05-2017 at 9:36pm
4. Rao, S.K. & Singh, and M.150 years of University Education in India: Challenges Ahead Retrived fromhttp://www.as Aggarwall, J. (2014).Principles, Method& Techniques of Teaching (second revised editioned.). Noida: Vikas Publishing House pvt ltd.
2. Agarwal, P. (2006).Higher Education in India: The Need for Change, Working paper No 180, Indian Council for Research on International Economic Relations.
3. Sharma, K. (2012).Re-Thinking Special Needs Education (First Editioned.). New Delhi: S R Publications.
4. Yadav, S. “Curriculum Development” (in hindi) (fifth edition ed.). Agra: agrawal publications.Retrived from erf.org.in/presentations/150_years_of_Hr_edu.pdf on 11-5-2017at 10:15

****

अनुवाद : अर्थ, परिभाषा और क्षेत्र

रचना शाही *

प्रस्तावना – आधुनिक युग के जिस चरण मे हम आज है, उसे वैश्वीकरण का युग, सूचना प्रौद्योगिकी का युग, उत्तर आधुनिक युग आदि कहा जाता है। इन विभिन्न प्रकार के युग कहे जाने एवं उन्हे समझने के लिये जितनी आवश्यकता अनुवाद की है या यूं कहां जाये कि अनुवाद के बिना किसी भी युग को समझ पाना आसान ही नहीं बल्कि नामुमकिन सा लगता है। क्योंकि अनुवाद के बिना किसी भी सूचना, भाषा, साहित्य, ज्ञान- विज्ञान को समझ पाना असंभव है। ऐसे में इस युग को यदि अनुवाद का युग कहा जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। विश्वभर में फैले अपार ज्ञान संपदा का प्रचार प्रसार करने में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। भारतीय दर्शन, गणित, चिकित्सा आदि शास्त्रों का ज्ञान विवेक अनेक देशों में विशेषकर पश्चिमी देशो में तथा वहां पर हुए आधुनिक आविष्कारों की जानकारी भारतीयों को होना अनुवाद के कारण ही संभव हो पाया है

अनुवाद भाषाओं के मध्य सम्प्रेषण की प्रक्रिया है। इसके लिए अंग्रेजी में 'ट्रॉस्लेशन', फ्रेंच में 'ट्रुडक्शन', अरबी में 'तर्जुमा', तमिल में 'मोलिपेयरपु' और कन्नड़ तथा मराठी में 'अनुवाद' पंजाबी में 'उल्था', कश्मीरी में 'तरजुम', सिंधी में 'तर्जुमोय', 'अनुवाद' आदि शब्द प्रचलित है।

अनुवाद –अनुवाद संस्कृत भाषा का शब्द है जिसका उपयोग दो या दो अधिक भाषा के शब्दों के समान अर्थ लिखने के लिए किया जाता है।

अनुवाद दो शब्दों से मिलकर बना है :- 'अनु' जो कि उपसर्ग है जिसका अर्थ है समान, और वाद शब्द की उत्पत्ति 'वद' धातु से हुई है जिसका अर्थ है- 'लिखना या बोलना' इस प्रकार अनुवाद का अर्थ होता है समान बोलना या लिखना।

इसे संस्कृत में इस प्रकार समझा जा सकता है -'या ज्ञातार्थतस्य प्रतिपादने' अर्थात पहले कहे गये शब्द हो फिर से कहना।

दो विभिन्न भाषाओं के व्यक्तियों के मध्य सवांद एवं विचारों के आदान प्रदान के लिए अनुवाद सबसे सशक्त माध्यम है। दो भिन्न सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिवेश में बहुभाषिक स्थिति की विडंबना से बचने के लिए दोनो के मध्य संबंध स्थापित करने में अनुवाद की मुख्य भूमिका रहती है।

सीधे सीधे शब्दों में कहा जाये तो- किसी भाषा में कही गई बात को किसी अन्य भाषा में सार्थक परिवर्तन करना अनुवाद कहलाता है।

अनुवाद को अंग्रेजी भाषा में ट्रांस्लेशन कहा जाता है। जो कि स्वयं लेटिन भाषा के शब्द ट्रांस और लेशन के संयोग से बना है जिसका अर्थ होता है- 'पार ले जाना'

अनुवाद के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए **डॉ. नगेन्द्र** लिखते है कि - अनुवाद परिभाषित शब्द में न विज्ञान है और न कला। इसके अतिरिक्त उसको निश्चित रूप से शिल्प भी कहना तर्कसंगत नहीं होगा। वास्तविक स्थिति यह है कि आधार विषय के अनुसार अनुवाद में इन तीनो ही तत्वों का यथानुपात में समावेश रहता है। साहित्यिक अनुवाद विशेष रूप से काव्यानुवाद का अंतर्भाव जहाँ कला में ही हो जाता है, वहाँ वैज्ञानिक तथा शास्त्रीय अनुवाद में विज्ञान के आधार तत्वों का प्राधान्य रहता है जबकि, शिल्प का प्रयोग प्राय: सर्वत्र ही मिलता है। इस प्रकार अनुवाद एक स्वतंत्र विधा है।

अनुवाद की अनिवार्यता को किसी भाषा की समृद्धि का शोर मचा कर टाला नहीं जा सकता और न अनुवाद की बहुकोणीय उपयोगिता से इंकार किया जा सकता है।

अनुवाद का कार्य हमारे साहित्य की तरह ही प्राचीनकाल से चला आ रहा है। पहले लोग पाण्डुलिपि में साहित्य को एकत्रित करते थे, परन्तु समय के साथ-साथ विकास हुआ और पाण्डुलिपि का स्थान किताबों ने ले लिया और वर्तमान में इंटरनेट पर ही किसी भाषा का साहित्य किसी अन्य भाषा में जिसमें पाठक पढ़ना चाहे पढ़ सकता है।

जिस प्रकार अनुवाद के लिए हिन्दी में उल्था का प्रचलन है उसी प्रकार ट्रांस्लेशन के लिए ट्रांसक्रिप्शन का प्रचलन है जिसे हिन्दी में लिप्यानतरण कहा जाता है।

अनुवाद की परिभाषा एवं क्षेत्र

अनुवाद संबंधी सिद्धान्तों व स्वतंत्र ग्रंथो का लेखन वस्तुत: बीसवी शताब्दी मे प्रारम्भ हुआ।

अनुवाद का अर्थ स्पष्ट करने के लिए भारतीय व पाष्चात्य विद्धानों की परिभाषाएँ-

1) डॉ सुरेश कुमार - 'भाषा भेद के विशिष्ट पाठ को दूसरी भाषा में इस प्रकार प्रस्तुत करना अनुवाद है, जिसमें वह मूल के भाषिक अर्थ, प्रयोग के वेशिष्ट्य को यथासंभव संरक्षित करते हुए दूसरी भाषा के पाठक को स्वाभाविक रूप से ग्राह्यप्रतीत होय'।

2) डॉ. कृष्ण कुमार गोस्वामी - 'एक भाषा में व्यक्त भावों या विचारों को दूसरी भाषा में समान और सहज रूप से व्यक्त करने का प्रयास अनुवाद है।'

3) जी. गोपीनाथ- 'अनुवाद वह द्वन्द्वात्मक प्रतिक्रिया है जिसमें स्त्रोत पाठ की अर्थ संरचना (आत्मा) का लक्ष्य पाठ की शैलीगत संरचना (शरीर) द्वारा प्रतिस्थापित होता है।'

4) पट्टनायक - 'अनुवाद वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सार्थक अनुभाव (अथपूर्ण संदेश या संदेश का अर्थ) को एक भाषा समुदाय से दूसरे भाषा समुदाय में संप्रेषित किया जाता है।'

भारतीय विद्वान विश्वनाथ अय्यर के अनुसार - अनुवाद की प्रविधि एक भाषा से दूसरी भाषा में रूपान्तरित करने तक सीमित नहीं है। एक भाषा

* शोधार्थी (हिन्दी) अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

के रूप के कथ्य को दूसरी भाषा में रूपान्तरित करना भी अनुवाद है, छंद में बताई गई बात को गद्य में उतारना भी अनुवाद है।

पाश्चात्य विद्वान डार्ट (DOSTRET) के अनुसार – अनुवाद अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान की वह शाखा है, जिसका संबंध विशेष रूप से अर्थान्तरण की समस्या से है, यह अर्थान्तरण एक भाषा के सुसंद्ध प्रतीको में होता है।

(Translation is that brands of applied science of language which is specially concerned with the problem or the fact of the transference of meaning from one set of patterned symbol into another of patterned.)

अनुवाद के प्रमुख क्षेत्र

शिक्षा – ज्ञान, विज्ञान, समाज, संस्कृति आदि सभी को समझने एवं जानने तथा उसके अनुसार स्वयं के ज्ञान को बढ़ाने और दूसरों तक पहुचाने के लिए शिक्षा की अहम भूमिका रहती है। विज्ञान एवं तकनीकी की उच्च शिक्षा तो अभी भी अंग्रेजी माध्यम में चल रही है किन्तु विद्यालय स्तर की शिक्षा हेतु भारतीय भाषाओ का प्रयोग हमारे देश में आरम्भ हो गया है। भारत के अलग अलग प्रान्त के अलग अलग भाषाओं का उपयोग किया जाता है जिस कारण से एक भाषा को दूसरी भाषा में अनुवाद की आवष्यकता अधिक होती है साथ ही ज्ञान–विज्ञान संबंधी पाठ्य पुस्तको के निर्माण में अंग्रेजी पुस्तको के अनुवाद अथवा रूपान्तरण का सहारा लेना पड़ता है।

धर्म – प्राचीन काल से ही विश्व स्तर पर सभी धर्मो की अपनी अपनी विशिष्ट भाषा रही है। प्रत्येक धर्म की पुस्तके एवं साहित्य को अपनी विशेष भाषा में ही लिखा गया है। किन्तु धर्म के प्रचार प्रसार के लिये एक स्थान से दूसरे स्थान तथा एक देश समुदाय विदेश से दूसरे समुदाय जाति विशेष के लोगो के मध्य जाने और अपने धर्म की बातों को बताने, समझाने के लिए भाषा का अनुवाद करना अत्यन्त आवश्यक है। इसी प्रकार प्रचार प्रसार के साथ साथ अन्य भाषा भाषी जब किसी धर्म के अनुयायी बन जाते है तो उनकी सुविधा के विशेष धर्म की पुस्तक को अन्य भाषा में अनुवाद करना अनिवार्य हो जाता है। जैसे कुरआन शरीफ के मूल पाठ का बंगाल लिपि में अंतरण या गीता का देवनगरी से इतर लिपियों में प्रकाशन और धर्म प्रचारकों को धर्म ग्रन्थो की बातों को अनुयायियों की भाषाओं में अनुवाद करके समझाना पड़ता है।

यथा हैदराबाद जैसे बहुभाषी बाहर के चर्चो में अलग अलग समय पर अंग्रेजी, मलयालम, तेलुगु, तमिल भाषाओं में प्रार्थनाए होती है। इसी कारण से बाईबिल का विश्व की आधी से अधिक भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

शोध – देश में और विदेश में हो रहे शोध कार्यो की जानकारी विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं में उपलब्ध कराने के लिए अनुवाद ही एकमात्र माध्यम है। जिसकी सहायता से प्रत्येक प्रान्त के शोध कार्यो में समरसता लाने में बहुत मदद मिलती है। किसी शोध कार्य को करने के लिए भाषा के शोध की आवश्यकता होती है, ऐसे में अन्य भाषा के शोध को अपनी भाषा में अनुवाद के माध्यम से ही पढ़ा व समझा जा सकता है।

साहित्य – साहित्य के क्षेत्र में अनुवाद का उपयोग एवं प्रयोग जग जाहीर है। क्या प्राचीन वाड्गम्य क्या समकालीन।

साहित्य के अध्ययन में अनुवाद का महत्व अत्यधिक व्यापक हो चुका है। साहित्य यदि जीवन और समाज के यर्थात् को प्रस्तुत करता है तो विभिन्न भाषाओं के साहित्य के सामूहिक अध्ययन से किसी भी समाज, देश या विश्व की चिन्तन धारा एवं संस्कृति की जानकारी मिलती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अनुवाद और भाषा विज्ञान :– डॉ. बी बालाजी
2. अनुवाद अर्थ और परिभाषा :– सागरिका
3. अनुवाद की परिभाषाएँ :– काम्बले प्रकाशन

****

राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों पर उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण के प्रभाव के प्रति अभिधारकों का प्रत्यक्षण

अभिमन्यु वशिष्ठ *

प्रस्तावना – शिक्षा मानव से सम्बन्धित हर परिस्थिति को प्रभावित किया है। सभ्यता के कालक्रम में शिक्षा ने मानव को सक्षम व कुशल बनाने के लिए सशक्त माध्यम का कार्य किया है। शिक्षा व्यवस्था को पूरा समर्थन राज व्यवस्था का मिलता रहा है। भारत के सन्दर्भ में भी लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में संविधान को आत्मसात करते हुए एक उचित शिक्षा पद्धति तथा व्यवस्था को अपना रखा है। 1990 के बाद उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के प्रभाव से भारत का हर क्षेत्र प्रभावित हुआ है। जिसमें राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्र तथा शिक्षा भी एक अहम् क्षेत्र है। सम्बन्धित शोध साहित्य के अध्ययन के दौरान उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (LPG) का प्रभाव शिक्षा के सन्दर्भ में देखने का विचार आया। राजनीतिक दल की विचारधाराएँ, उद्देश्य व नीतियाँ घोषणा पत्र के माध्यम से जनता तक अपने दृष्टिकोण को रखती रही है। इन्हीं घोषणाओं में शिक्षा के विभिन्न आयामों के अध्ययन तथा उन आयामों पर उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (LPG) के प्रभाव के अध्ययन का प्रश्न शोधकर्ता के अन्तर्मन में आया और प्रस्तुत शोध कार्य प्रारम्भ किया गया।

शोध प्रश्न :

(i) प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के विभिन्न आयामों के प्रति अभिधारकों का प्रत्यक्षण क्या है ?

(ii) प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के विभिन्न आयामों में ङझत्रके प्रभाव के प्रति अभिधारकों का प्रत्यक्षण क्या है ?

(iii) प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के विभिन्न आयामों पर शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं के क्रियान्वयन के प्रति अभिधारकों का प्रत्यक्षण क्या है ?

शोध उद्देश्य

1. प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के निम्नांकित आयामों के प्रति अभिधारकों का प्रत्यक्षण ज्ञात करना :–
   (1) शिक्षा का सम्प्रत्यय, (2) शिक्षा का उद्देश्य, (3) शिक्षा का पाठ्यक्रम, (4) शिक्षण विधियाँ, (5) शिक्षा के संसाधन, (6) शिक्षा का माध्यम, (7) शिक्षा में मूल्यांकन, (8) विद्यालयी, महाविद्यालयी एवं विश्वविद्यालयी शिक्षा, (9) शिक्षा में शोध, (10) शिक्षक शिक्षा, (11) शिक्षा का बजट, (12) शिक्षा की गुणवत्ता, (13) शिक्षा और राष्ट्रीय विकास, (14) शिक्षा के प्रबन्धन।
2. प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के उपरोक्त आयामों में LPG के प्रभाव के प्रति अभिधारकों का प्रत्यक्षण ज्ञात करना।
3. प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के उपरोक्त आयामों सम्बन्धी घोषणाओं के क्रियान्वयन के प्रति अभिधारकों का प्रत्यक्षण ज्ञात करना।

शून्य परिकल्पनाएं :

(i) राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी आयामों के प्रति प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(ii) राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी आयामों पर ङझत्र के प्रभाव के प्रति प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(iii) राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं के क्रियान्वयन के प्रति प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(iv) राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी आयामों के प्रति शिक्षक प्रशिक्षकों एवं एम.एड. विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(v) राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी आयामों पर ङझत्र के प्रभाव के प्रति शिक्षक प्रशिक्षकों एवं एम.एड. विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(vi) राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं के क्रियान्वयन के प्रति शिक्षक प्रशिक्षकों एवं एम.एड. विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

समस्या कथन – ***'राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों पर उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण के प्रभाव के प्रति अभिधारकों का प्रत्यक्षण'***

शोध विधि – शोधकार्य की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध अध्ययन केअन्तर्गत आदर्शमूलक सर्वेक्षण विधि (Normative Survey Method) एवं घटनोतर विधि (Ex Post Facto Method)का प्रयोग किया गया है।

परिसीमन –इस अध्ययन राजस्थान के सन्दर्भ में केवल पिछले पाँच चुनावों के निम्नांकित अवधि के घोषणा पत्रों को ही सम्मिलित किया गया –

(i) 1999, 2004, 2009, 2014 तथा 2019 के राजस्थान लोकसभा चुनावों में शामिल राजनीतिक दलों के घोषणा पत्र।

(ii) 1998, 2003, 2008, 2013 तथा 2018 के राजस्थान विधानसभा

* शोधार्थी, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

चुनावों में शामिल राजनीतिक दलों के घोषणा पत्र।

(iii) उदयपुर संभाग के निम्नांकित 5 जिलों को शामिल किया गया –
(1) उदयपुर (2) चित्तौड़गढ़ (3) प्रतापगढ़ (4) बाँसवाड़ा
(5) डुंगरपूर

न्यादर्श :

1. शोधकार्य में राजस्थान के निम्नांकित प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों को न्यादर्श में सम्मिलित किया गया है :–
(1)भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (Indian National Congress/INC), (2)भारतीय जनता पार्टी (Bharatiya Janata Party/BJP), (3)भारतीय साम्यवादी दल (Communist Party of India/CPI), (4)भारतीय साम्यवादी दल मार्क्सिस्ट (Communist Party of India Marxist/CPIM), (5)समाजवादी पार्टी (Samajwadi Party/SP), (6)बहुजन समाजवादी पार्टी (Bahujan Samaj Party/BSP), (7)राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी (Nationalist Congress Party/NCP), (8)आम आदमी पार्टी (Aam Aadmi Party/AAAP), (9)राष्ट्रीय जनता पार्टी (National People's Party/NPEP), (10)जमींदारा पार्टी (National Unionist Zamindara Party/NUZP)

2. प्रस्तुत अध्ययन में जिन अभिधारकों के प्रत्यक्षण का अध्ययन किया गया, उनका विवरण निम्नांकित सारणी में प्रस्तुत है –

क्र.	जिला	शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय	प्राचार्य	शिक्षक प्रशिक्षक	एम.एड. विद्यार्थी
1	उदयपुर	10	10	20	10
2	प्रतापगढ़	10	10	20	10
3	डूंगरपुर	10	10	20	10
4	बाँसवाड़ा	10	10	20	10
5	चित्तौड़गढ़	10	10	20	10
		50	50	100	50
कुल अभिधारक			**200**		

शोध में प्रयुक्त उपकरण

(i) वर्ष 1998 से 2019 तक के घोषणा पत्र (विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा निर्मित)।

(ii) प्रत्यक्षण के अध्ययन हेतु स्वनिर्मित प्रश्नावली (Questionnaire).

(iii) घोषणा पत्र के अध्ययन हेतु स्वनिर्मित जाँच प्रपत्र (Check List).

प्रदत्तों का सारणीयन, विश्लेषण एवं व्याख्या

परिकल्पना संख्या–1 : प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी विभिन्न आयामों के प्रति प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी सं. 1 –प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों का घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों सम्बन्धी घोषणाओं के प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत एवं x^2

क्र.	अभिधारक	औसत प्रतिशत		योग	x^2	सार्थकता स्तर 0.05
		हाँ	नहीं			
1.	प्राचार्य (N=50)	74	26	100	1.0164	सार्थक अंतर नहीं(NS)
2.	शिक्षक प्रशिक्षक (N=100)	80	20	100		
	कुल (N=150)	154	46	200		

df = 1 सारणीमान (0.05 = 3.84)

विश्लेषण एवं व्याख्या – उपरोक्त सारणी सं.1 से स्पष्ट है कि x^2 (1.0164) सारणी मान (0.05=3.84) से कम है। जो यह दर्शाता है कि घोषणा पत्रों की घोषणाओं में शिक्षा के आयामों/पक्षों/क्षेत्रों इत्यादि सम्बन्धी घोषणाओं/वादों के सम्बन्ध में प्राचार्यों और शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

अत: यह परिकल्पना की 'प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी विभिन्न आयामों के प्रति शिक्षक शिक्षा के प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' **स्वीकार** की जाती है।

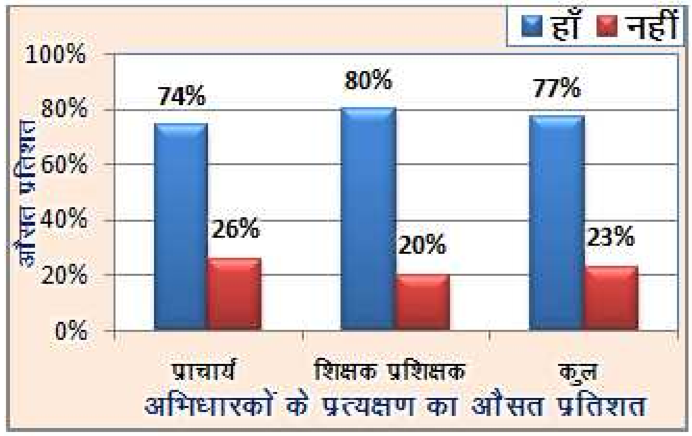

आरेख सं. 1 – राजस्थान के प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों का घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों सम्बन्धी प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत

परिकल्पना संख्या–2 : प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी विभिन्न आयामों पर डझ्रक्रके प्रभाव के प्रति प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी सं. 2 – प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों का घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों सम्बन्धी घोषणाओं पर LPG के प्रभाव संबंधी प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत एवं x^2

क्र.	अभिधारक	औसत प्रतिशत		योग	x^2	सार्थकता स्तर 0.05
		हाँ	नहीं			
1.	प्राचार्य (N=50)	78	22	100	0.1129	सार्थक अंतर नहीं(NS)
2.	शिक्षक प्रशिक्षक (N=100)	76	24	100		
	कुल (N=150)	154	46	200		

df = 1 सारणीमान (0.05 = 3.84)

विश्लेषण एवं व्याख्या – उपरोक्त सारणी सं.2से स्पष्ट है कि x^2(0.1129) सारणी मान (0.05=3.84) से कम है। जो यह दर्शाता है कि घोषणा पत्रों की घोषणाओं में LPG के प्रभाव के सम्बन्ध में प्राचार्यों और शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

अत: यह परिकल्पना कि 'प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी विभिन्न आयामों पर LPG के प्रभाव के सम्बन्ध में प्राचार्यों और शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' **स्वीकार** की जाती है।

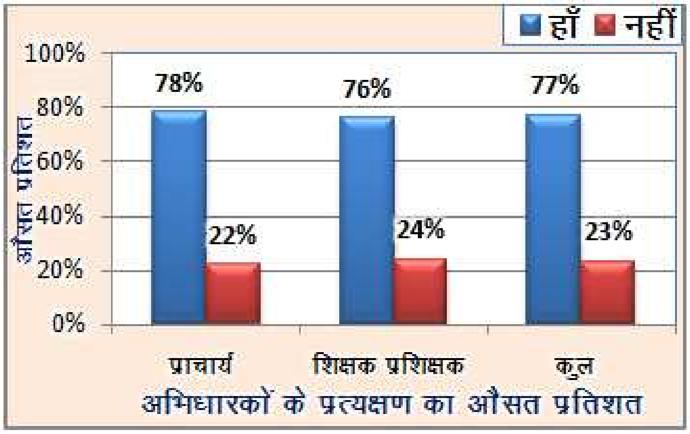

आरेख सं. 2 – राजस्थान के प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों का घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों पर LPG के प्रभाव सम्बन्धी प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत

परिकल्पना संख्या–3 : प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं के क्रियान्वयन सम्बन्धी घोषणाओं के प्रति प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी सं. 3 – प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों का शिक्षा संबंधी घोषणाओं के क्रियान्वयन सम्बन्धी घोषणाओं सम्बन्धी प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत एवं x^2

क्र.	अभिधारक	औसत प्रतिशत			योग	x^2	सार्थकता स्तर 0.05
		हाँ	नहीं	पता नहीं			
1.	प्राचार्य (N=50)	72	20	8	100	0.2731	सार्थक अंतर नहीं (NS)
2.	शिक्षक प्रशिक्षक (N=100)	69	23	8	100		
	कुल (N=150)	141	43	16	200		

df = 1 सारणीमान (0.05 = 3.84)

विश्लेषण एवं व्याख्या – उपरोक्त सारणी सं.3 से स्पष्ट है कि x^2 (0.2731) सारणी मान (0.05=3.84) से कम है। जो यह दर्शाता है कि घोषणा पत्रों की घोषणाओं में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

अत: यह परिकल्पना की 'प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धीघोषणाओं के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' **स्वीकार** की जाती है।

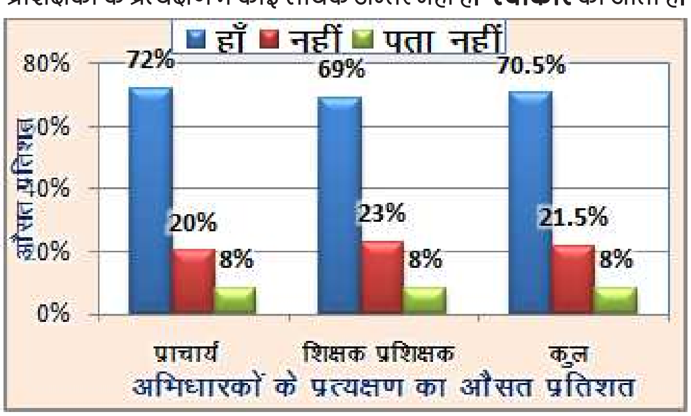

आरेख सं. 3 – राजस्थान के प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों का शिक्षा सम्बन्धी घाषणाओं के क्रियान्वयन सम्बन्धी प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत

परिकल्पना संख्या–4 : प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी विभिन्न आयामों के प्रति एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी सं. 4 – एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों का घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों सम्बन्धी घोषणाओं के प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत एवं x^2

क्र.	अभिधारक	औसत प्रतिशत		योग	x^2	सार्थकता स्तर 0.05
		हाँ	नहीं			
1.	एम.एड. विद्यार्थी (N=50)	56	44	100	13.2353	सार्थक अंतर (S)
2.	शिक्षक प्रशिक्षक (N=100)	80	20	100		
	कुल (N=150)	136	64	200		

df = 1 सारणीमान (0.05 = 3.84)

विश्लेषण एवं व्याख्या – उपरोक्त सारणी सं. 4 से स्पष्ट है कि x^2(13.2353) सारणी मान (0.05=3.84) से अधिक है। जो यह दर्शाता है कि घोषणा पत्रों की घोषणाओं में शिक्षा के आयामों/पक्षों/क्षेत्रों इत्यादि सम्बन्धी घोषणाओं/वादों के सम्बन्ध में एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में सार्थक अन्तर है।

अत: यह परिकल्पना की 'प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी विभिन्न आयामों के प्रति एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' **अस्वीकार** की जाती है।

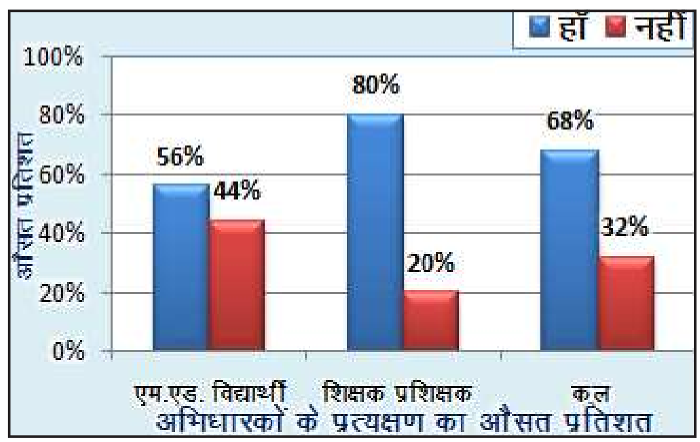

आरेख सं. 4 – राजस्थान के एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों का घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों सम्बन्धी प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत

परिकल्पना संख्या–5 : प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी विभिन्न आयामों पर LPG के प्रभाव के प्रति एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी सं. 5 – एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों का घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों सम्बन्धी घोषणाओं पर इझ्त्र के प्रभाव संबंधी प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत एवं x^2

क्र.	अभिधारक	औसत प्रतिशत		योग	x^2	सार्थकता स्तर 0.05
		हाँ	नहीं			
1.	एम.एड. विद्यार्थी (N=50)	51	49	100	13.4829	सार्थक अंतर (S)
2.	शिक्षक प्रशिक्षक (N=100)	76	24	100		
	कुल (N=150)	127	73	200		

df = 1 सारणीमान (0.05 = 3.84)

विश्लेषण एवं व्याख्या – उपरोक्त सारणी सं.5सेस्पष्ट है कि x^2(13.4829) सारणी मान (0.05=3.84) से अधिक है। जो यह दर्शाता है कि घोषणा पत्रों की घोषणाओं में ङझऋके प्रभाव के सम्बन्ध में एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में सार्थक अन्तर है।

अत: यह परिकल्पना कि 'प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी विभिन्न आयामों पर LPG के प्रभाव के सम्बन्ध में एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' **अस्वीकार** की जाती है।

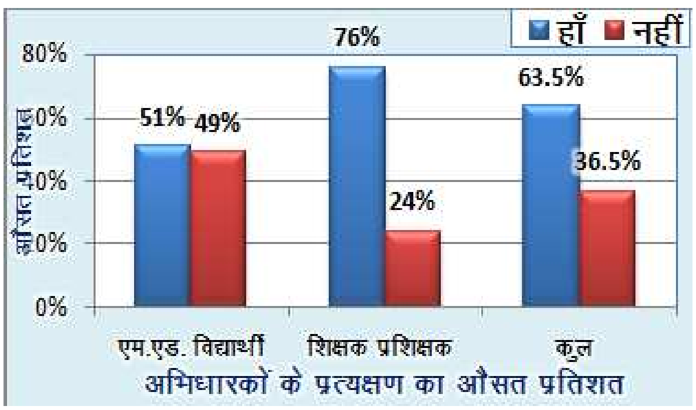

आरेख सं. 5 – राजस्थान के एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों का घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों पर LPG के प्रभाव सम्बन्धी प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत

परिकल्पना संख्या–6 : प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं के क्रियान्वयन सम्बन्धी घोषणाओं के प्रति एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी सं. 6 – एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों का शिक्षा संबंधी घोषणाओं के क्रियान्वयन सम्बन्धी घोषणाओं सम्बन्धी प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत एवं x^2

क्र.	अभिधारक	औसत प्रतिशत			योग	x^2	सार्थकता स्तर 0.05
		हाँ	नहीं	पता नहीं			
1.	एम.एड. विद्यार्थी (N=50)	54	25	21	100	7.7402	सार्थक अंतर (S)
2.	शिक्षक प्रशिक्षक (N=100)	69	23	8	100		
	कुल (N=150)	123	48	29	200		

df = 1 सारणीमान (0.05 = 3.84)

विश्लेषण एवं व्याख्या – उपरोक्त सारणी सं.6से स्पष्ट है कि x^2(7.7402) सारणी मान (0.05=3.84) से अधिक है। जो यह दर्शाता है कि घोषणा पत्रों की घोषणाओं में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में सार्थक अन्तर है।

अत: यह परिकल्पना की 'प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्रों में शिक्षा सम्बन्धीघोषणाओं के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' **अस्वीकार** की जाती है।

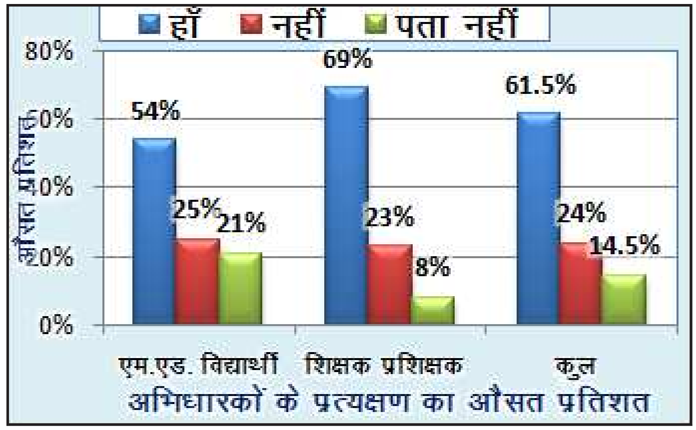

आरेख सं. 6 – राजस्थान के एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों का शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं के क्रियान्वयन सम्बन्धी प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत

प्रमुख निष्कर्ष :

1. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों के प्रति प्राचार्यों के प्रत्यक्षण का स्तर उच्च पाया गया।
2. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों के प्रति शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण का स्तर उच्च पाया गया।
3. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों सम्बन्धी घोषणाओं तथा शिक्षा के सम्प्रत्यय, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, विधियों तथा संसाधन संबंधी घोषणाओं के प्रति एम.एड. विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण का स्तर उच्च पाया गया तथा शिक्षा के माध्यम, मूल्यांकन, बजट, शिक्षक शिक्षा, शोध, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, शिक्षा से राष्ट्रीय विकास, शैक्षिक प्रबंधन, पूर्व प्राथमिक शिक्षा, प्राथमिक शिक्षा, उच्च प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, उच्च माध्यमिक शिक्षा, उच्च शिक्षा तथा व्यावसायिक शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं के प्रति एम.एड. विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण का स्तर निम्न पाया गया।
4. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों पर LPG के प्रभाव सम्बन्धी घोषणाओं के प्रति प्राचार्यों के प्रत्यक्षण का स्तर उच्च पाया गया।
5. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों पर LPG के प्रभाव सम्बन्धी घोषणाओं के प्रति शिक्षकों प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण का स्तर उच्च पाया गया।
6. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों पर LPG के प्रभाव सम्बन्धी घोषणाओं के प्रति एम.एड.

विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण का स्तर निम्न पाया गया।

7. प्राचार्यों के मत में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं पर ङ्झऋका प्रभाव 44 प्रतिशत प्राचार्यों के लिए 30 प्रतिशत तक रहा वहीं केवल 02 प्रतिशत प्राचार्य शिक्षा संबंधी आयामों पर 100 प्रतिशत तक LPG का प्रभाव देखते हैं।
8. शिक्षक प्रशिक्षकों के मत में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं पर LPG का प्रभाव 40 प्रतिशत शिक्षक प्रशिक्षकों के लिए 30 प्रतिशत तक रहा वहीं केवल 05 प्रतिशत शिक्षक प्रशिक्षक शिक्षा संबंधी आयामों पर 100 प्रतिशत तक LPG का प्रभाव देखते हैं।
9. एम.एड. विद्यार्थियों के मत में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं पर LPG का प्रभाव 32 प्रतिशत एम.एड. विद्यार्थियों के लिए 30 प्रतिशत तक रहा वहीं केवल 03 प्रतिशत एम.एड. विद्यार्थी शिक्षा संबंधी आयामों पर 100 प्रतिशत तक LPG का प्रभाव देखते हैं।
10. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं की क्रियान्विति सम्बन्धी घोषणाओं के प्रति प्राचार्यों के प्रत्यक्षण का स्तर उच्च पाया गया।
11. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं की क्रियान्विति सम्बन्धी घोषणाओं के प्रति शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण का स्तर उच्च पाया गया।
12. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं की क्रियान्विति सम्बन्धी घोषणाओं के प्रति एम.एड. विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण का स्तर निम्न पाया गया।
13. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों सम्बन्धी घोषणाओं के सम्बन्ध में प्राचार्यों, शिक्षक प्रशिक्षकों एवं एम.एड. विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण का स्तर (औसत प्रतिशत) उच्च पाया गया।
14. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों सम्बन्धी घोषणाओं पर LPG के प्रभाव संबन्धी घोषणाओं के सम्बन्ध में प्राचार्यों, शिक्षक प्रशिक्षकों एवं एम.एड. विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण का स्तर (औसत प्रतिशत) उच्च पाया गया।
15. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं के क्रियान्वयन सम्बन्धी घोषणाओं के सम्बन्ध में प्राचार्यों, शिक्षक प्रशिक्षकों एवं एम.एड. विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण का स्तर (औसत प्रतिशत) उच्च पाया गया।
16. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों की घोषणाओं में शिक्षा के आयामों/पक्षों/क्षेत्रों इत्यादि सम्बन्धी घोषणाओं/वादों के सम्बन्ध में प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
17. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों की घोषणाओं में शिक्षा के आयामों सम्बन्धी घोषणाओं में LPG के प्रभाव के सम्बन्ध में प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
18. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं की क्रियान्विति के सम्बन्ध में प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
19. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों की घोषणाओं में शिक्षा के आयामों/पक्षों/क्षेत्रों इत्यादि सम्बन्धी घोषणाओं/वादों के सम्बन्ध में एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में सार्थक अन्तर पाया गया।
20. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों की घोषणाओं में शिक्षा के आयामों सम्बन्धी घोषणाओं में LPG के प्रभाव के सम्बन्ध में एम.एड. विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण में सार्थक अन्तर पाया गया।
21. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं की क्रियान्विति के सम्बन्ध में शिक्षक प्रशिक्षकों एवं एम.एड. विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण में सार्थक अन्तर पाया गया।
22. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणाओं में शिक्षा के आयामों पर LPG के प्रभाव के सम्बन्ध में प्राचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के प्रत्यक्षण सम्बन्धी शून्य परिकल्पना **स्वीकृत** हुई।
23. राजस्थान के प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों की घोषणाओं में शिक्षा के आयामों पर LPG के प्रभाव के सम्बन्ध में शिक्षक प्रशिक्षकों एवं एम.एड. विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण सम्बन्धी शून्य परिकल्पना **अस्वीकृत** हुई।

शोध के प्रमुख परिणाम एवं शैक्षिक निहितार्थ :

1. देश के विभिन्न राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा के पाठ्यक्रम, संसाधन, बजट, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा एवं शैक्षिक प्रबन्ध सम्बन्धी घोषणाएँ पर्याप्त मात्रा में हुई है लेकिन शिक्षा के माध्यम, विधियाँ, मूल्यांकन, शिक्षक शिक्षा संबंधी घोषणाएँ किए जानेकी आवश्यकता है।
2. घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों सम्बन्धी घोषणाओं के प्रति अभिधारकों के प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत उच्च है। अत: शिक्षा के जिन आयामों पर घोषणाओं की मात्रा कम है, उनमें वृद्धि किया जाना अपेक्षित है।
3. घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों पर उदारीकरण का प्रभाव तुलनात्मक रूप से सभी दलों में पाया गया लेकिन निजीकरण एवं वैश्वीकरण के तत्वों के प्रभाव में अन्तर है, जिन्हें तुलनात्मक रूप से संतुलित करना अपेक्षित है।
4. घोषणा पत्रों में शिक्षा के आयामों पर LPG के प्रभाव सम्बन्धी घोषणाओं के प्रति अभिधारकों के प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत उच्च है। अत: अभिधारकों के उच्च प्रत्यक्षण के आधार पर LPG सम्बन्धी घोषणाओं में वृद्धि अपेक्षित है।
5. घोषणा पत्रों में शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं की क्रियान्विति के प्रति अभिधारकों के प्रत्यक्षण का औसत प्रतिशत उच्च है। अत: शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं की क्रियान्विति किया जाना आवश्यक है।

प्रस्तुत शोध के परिणामों के आधार पर शैक्षिक उन्नयन हेतु सुझाव

निर्वाचन आयोग के लिए सुझाव :

1. निर्वाचन आयोग को प्रत्येक प्रतिभागी दल के लिए घोषणा पत्र जारी करने की अनिवार्यता नियमानुसार सुनिश्चित करनी चाहिए जिससे सम्बन्धित राजनीतिक दल विशेष का शिक्षा संबंधी दृष्टिकोण स्पष्ट हो सके।
2. निर्वाचन आयोग को शिक्षा संबंधी घोषणाओं की पूर्ति करने हेतु राजनीतिक दलों को नियमानुसार बाध्य करना चाहिये।

राजनीतिक दलों के लिए सुझाव :

1. शिक्षा जैसे अहम विषय की गम्भीरता को समझकर घोषणाएँ तथा

उनके क्रियान्वयन को सुनिश्चित करें।

2. राजनीतिक दलों को अपने शिक्षा संबंधी विचार घोषणा पत्रों में स्पष्टतया उल्लेख करने चाहिए।
3. राजनीतिक दलों को शिक्षा संबंधी घोषणाओं को पूरी करने की राजनीतिक इच्छाशक्ति एवं कार्य योजना होनी चाहिए।
4. राजनीतिक दलों को शिक्षा संबंधी घोषणाएँ करते समय 21वीं सदी की आवश्यकतानुरूप LPG के सकारात्मक तत्वों को अपनी घोषणाओं में समाहित करना चाहिए।

शिक्षाधिकारियों के लिए सुझाव – सत्ता में आये राजनीतिक दल के घोषणा पत्रों में उल्लेखित शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं के क्रियान्वयन की चरणबद्ध योजना स्वीकृत कराकर उसे पूर्णत: लागू करावें।

सेवारत शिक्षाविद् एवं शिक्षकों के लिए सुझाव – सत्ता पक्ष के राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों की शिक्षा संबंधी घोषणाओं के पूर्णत: क्रियान्वयन में निष्पक्षता से प्रतिभागिता प्रदर्शित करें।

विद्यार्थियों के लिए सुझाव – विद्यार्थियों को चाहिए कि वे घोषित योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए अपनी जागरूकता बढ़ावे तथा नियमानुसार शालीनता से अपनी वाज़िब मांगों को लोकतान्त्रिक ढ़ंग से उठावें।

अभिभावकों के लिए सुझाव – वे प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में शिक्षा संबंधी घोषणाओं के प्रति जागरूकता बढ़ावें तथा प्रजातान्त्रिक तरीके से वाज़िब मांगों को पूर्ण कराने का प्रयास करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Best, J.W.,& Kahn,J.V. (2012). *'Research in Education.*(10th ed.)' New Delhi: Prentice Hall of India Learning Private Limited.
2. Good, C.V.(1959)'*Introduction to Educational Research*. (2nded.)' New York : Appleton Century Crafts Ins.
3. भटनागर, आर.पी. एवं भटनागर, ए.बी. (1995) '*शिक्षा अनुसंधान*' मेरठ : लॉयल बुक डिपो।
4. गुप्ता, एम. पी. (2008) '*भारतीय शिक्षा का विकास एवं समस्याएँ*' आगरा : साहित्य प्रकाशन,pp. 63–69.
5. कपिल, एच.के. (2001) '*अनुसंधान विधि*' आगरा : एच.पी. भार्गव हाउस।
6. कुमारी, एन. (2010) 'लोकतंत्र में घोषणा पत्र का महत्त्व' (pp. 207–209). In डॉ. मुकेश कुमार/सुधांशु शेखर (ed.) '*लोकतंत्र नीति और नियति*', सागर (मध्य प्रदेश) : विश्वविद्यालय प्रकाशन।
7. कोठारी, आर. (2007) '*भारत में राजनीति कल और आज*' नयी दिल्ली : वाणी प्रकाशन, p.19.
8. कटारिया, एस. (2018) '*शोध प्रविधि*' जयपुर : नेशनल पब्लिशिंग हाउस।

****

A Compartive Study Of Financial Performance Of Public Sector And Private Sector Bank In India

Dr. Narendra Marwada* **Dr. Divya Solanki ****

Abstract - The success of every business enterprises is depends upon its leadership quality and funds management system. The aim of every business organization is to maximize the profit with minimize the cost. This paper is an attempt to analysis the financial performance of public sector bank and private sector bank and to find which sector bank performance in terms of profitability, solvency, liquidity, managerial efficiency etc. for this purpose five banks of public sector and five banks of private sector has taken. Ratio analysis and t test will be used. The study shows that the performance of private sector bank is relatively better than public sector bank during period of 2015-2019.
Keywords - Financial Performance, Public sector bank, Private sector bank, Profitability.

Introduction - The major portion of GDP of India has been contributed by service sector. In this area, banking sector plays an important role. In India, banking scenario both public and private sector acts unexplanatory role for the development of Nation. Today, every business wants fund to operate and accelerate its operations. "Finance is blood of all organization without it organization cannot take breath". Financial Performance is a picture of financial affairs of business enterprise. The aim of all organization is to increase its financial performance in terms of minimization of cost and maximization of the profit. To examine this fact we studied various ratios of finance structure of banks. For this purpose we conducted a comparative study of financial performance of public sector bank and private sector bank. For this research we prepared list of 25 review of literature. In this literature we found several work has been done in banking sector for examine financial performance on the basis of profitability, Liquidity, solvency, Managerial efficiency etc. On the basis of above research work concluded that all research outcomes are very useful and contributing good result and provide scope for further research. So on, this path our aim is to do detailed comparative study of financial performance of public sector banks (SBI, BOB, BOI, PNB, OBC) and private sector banks (AXIS, YES, ICICI, HDFC, KOTEK MAHINDRA on various parameters like Dividend payout ratio, Profitability ratio, Management efficiency ratio, Investment ratio, Leverage ratio, Cash flow Indicator ratio, Debt equity ratio, Liquidity ratio, Earning per share ratio etc.

Review of Literature - Murad Mohammed Gafil Al-Kaseasbah and Abdul karim Salim Issa Albkour(2018) In this article researcher conducted a study to measure the financial performance of banking sector. For this purpose, SBI and ICICI Bank are selected. The study is based on secondary data. The outcome of study shows SBI recorded fluctuating trend on other side ICICI failed to manage increasing trend. Nayana, N and Dr. Veena KP(2018) this research paper study Profitability position and profitability performance of SBI. On the basis of annual reports of bank it concluded that Profitability level decline due to unsecured loans and advances. Alemu Melaku, Aweke Melaku(2017) this research examine the overall performance of private commercial bank in Ethiopia using CAMEL rating approach. In this study six private sector banks have been taken and the results revels that overall performance of bank increased in the terms of profitability. Rao KP, Venu Gopala, Ibrahum Farha(2017) this study focus on comparison of financial performance of IDBI Bank with the industry average on the basis of financial ratio for the period 2011-2016. It found that Solvency position of bank and employment of assets are in similar with industry average and for increasing financial performance bank should raise deposit in order to procure funds. Srinivasan Palamalai, Britto John(2017) the aim of study to evaluate financial performance of selected Indian commercial bank, representing public sector and five firm private sector banks. The study summarize that the financial performance of private sector bank is comparatively better than the public sector banks. Sonaje vijay Hemant, Nerlekar shriram(2017) In this paper researcher analyze the performance of commercial bank in India during period of 2013-2017 using CAMEL approach. They found that financial position and soundness of commercial private sector banks are performing better than public sector banks. Nagarkar Jeevan Jayant(2015) this paper examines the performance of five major public, private and foreign bank. On the basis of financial parameters results revels that for increasing performance, bank has to reduce NPA and to do focus on deposit money and borrowed money. Gudata Abara(2015) this study evaluate the financial

*Assistant Professor (ABST) Govt. Girls College, Kherwara, Udaipur (Raj.) INDIA
** Assistant Professor (EAFM) Govt. Girls College, Kherwara, Udaipur (Raj.) INDIA

performance of Ethiopia commercial banking sector for period of 2007-2011. The results show that commercial bank have positive trend in profitability ratio but in case of efficiency, solvency and risk is average.

Research Objective

- To examine financial performance position between public sector banks and private sector banks.

Data Collection - This study is based on secondary data which is used in form-

1. Annual audited report of concerning banks
2. Money control website etc
3. Books and websites

Research Methodology - The data analysis tools is used to evaluate the performance of banks which include-

1. Descriptive Statistics (Mean, Standard Deviation, Co variance)
2. Ratio analysis technique
3. Student t- test

Hypothesis

H01: There is no significant difference between financial performance of public sector and private sector bank.

Scope of study - The research paper will help to better understand the financial performance of public sector and private sector bank. Through this study, financial performance of both sectors bank will be evaluate on the basis of various parameters and its helps both sector banks to achieve better results in financial activities.

Data Analysis & Interpretation Table-1 (see in next page)

Table no. 1 provides following results after analysis of financial performance of public sector and private sector bank on the basis of research methodology tools:

1. In the head of Investment ratio, private sector banks dividend payout ratio is high as compare to public sector bank but net operating profit margin ratio is low so because of paying high dividend private sector banks maintains low net operating profit ratio.
2. In the head of Profitability ratio, net profit ratio and interest spread ratio of private sector bank is more than as compare to public sector bank, other profitability ratios are negative in case of public sector bank.
3. In the head of Management efficiency ratio, all Managerial efficiency ratio of private bank is more than public sector bank it shows level of Managerial leadership and efficiency of making optimum utilization of resources by private sector bank
4. In the head of Profit &loss ratio, except Interest expand to interest earned ratio private sector banks are performing better than public sector bank.
5. In the head of Balance sheet ratio, Capital adequacy ratio is high in case of private sector bank which shows lower level of risk and enable the bank to meets its financial obligations.
6. In the head of Debt coverage ratio, except total debt to owners fund ratios remaining other ratios are more than public sector banks.
7. In the case of Leverage ratio, current ratio of both sector bank is less than 1 which shows current Bank is unable to meet its current obligations.
8. In the head of Cash flow Indicator ratio, except cash earning retention ratio of public sector bank remaining all ratio of private sector bank are greater than public sector bank.

Conclusion - Financial Performance is blue print of all financial activities of organization, so it is important to know the performance level of organization to evaluate the current position of business. After doing critical analysis of both sector banks financial data the result of comparative **Ratio analysis** and "**t**" test analysis revels that the overall performance of private sector bank in all areas are better than public sector bank.

References :-

1. Murad Mohammed, Gafil Al- Kaseasbah and Abdul karim Salim Issa Albkour(2018) A Financial performance of Indian banking sector(A case study of SBI and ICICI bank, Journal of basic & applied science, volume 2, Issue2, page 126-137, ISSN 2581-5059
2. Nayana, N and Dr. Veena KP(2018) A study of financial performance of SBI, International Journal of Current research, volume 10, Issue4, ISSN 0975-833X
3. Alemu Melaku, Aweke Melaku(2017) A Financial Performance analysis of private commercial banks in Ethiopia CAMEL rating approach, Journal of Scientific and research publication, volume 7, Issue10, ISSN 2280-3153
4. Rao KP, Venu Gopala, Ibrahum Farha(2017) Financial Performance analysis of Banks(A case study of IDBI Bank, International Journal of Research of IT and Management, Volume 7, Issue 1, pp 64-72, ISSN 2231-4334
5. Srinivasan Palamalai, Britto John(2017) Analysis of Financial performance of selected commercial bank in India, Journal of scientific research publishing, Theoretical economic letters 7, ISSN 2162-2086
6. Sonaje vijay Hemant, Nerlekar shriram(2017) Financial performance analysis of selected banks using CAMEL approach, Indira Management Review, volume 1,Issue 2
7. Nagarkar Jeevan Jayant(2015) Analysis of Financial performance of bank in India, Annual research Journal of symbiosis center for management studies, Volume 3, pp26-33, ISSN 2348-6661
8. Gudata Abara(2015) Research on Financial Performance analysis in Banking sector, International Journal of current research, Volume 7, Issue 10, pp 21883-21886,ISSN 0975-833X
9. Islam Md Aminol(2014) An Analysis of the financial performance of National Bank Limited using Financial ratios, Journal of Behavioural Economics, Finance, Enterpreneurship, Accounting and transport, volume 2, Issue 5, pp 121-129s

Bibliography :-

1. Bank website
2. Money control website
3. Annual Audited balance sheet
4. Books

Table-1 - *COMPARATIVE RATIO ANAYLISIS OF PUBLIC SECTOR BANK AND PRIVATE SECTOR BANK*

	Public sector bank							***Private sector bank***					
RATIO	***SBI***	***BOB***	***PNB***	***BOI***	***OBC***	***AVERAGE***	***YES***	***HDFC***	***AXIS***	***ICICI***	***KOTAK MHINDRA***	***AVERAGE***	***t test value***
Investment Valuation Ratios													
Face Value	1	2	2	10	10	5	6.8	2	2	2	5	3.56	0.5761536
Dividend Per Share	2.9	2.2	3.3	5	2	3.08	7.14	11.3	3.9	3	0.7	5.208	0.35824613
Operating Profit Per Share (Rs)	22.582	24.11	22.59	27.38	42.2	27.776	28.086	58.52	25.116	14.198	15.806	28.3452	0.95751078
Net Operating Profit Per Share (Rs)	230.944	184.43	199.75	380.5	445	288.2212	234.926	274.93	179.97	90.444	108.076	177.6692	0.264604
PROFITABLEITY RATIOS													
Interest Spread	6.346	6.082	6.402	6.184	6.46	6.2952	6.86	7.594	6.652	6.648	7.51	7.0528	0.03004547
Adjusted Cash Margin(%)	4.066	0.212	-6.7	-7.17	-5.1	-2.94	14.406	18.876	10.346	12.94	16.852	14.684	0.0009028
Net Profit Margin	3.602	-1.154	-8.8	-8.81	-7.22	-4.4772	16.598	21.11	11.63	15.384	18.442	16.6328	0.00067374
Return on Long Term Fund(%)	80.59	70.982	67.112	81.73	88.4	77.7632	82.524	64.186	60.33	45.816	51.086	60.7884	0.1065351
Return on Net Worth(%)	4.168	-1.224	-11.33	-10.5	-12	-6.1832	14.69	16.042	9.19	9.002	11.324	12.0496	0.00107508
Adjusted Return on Net Worth(%)	4.168	-1.224	-11.33	-10.5	-11.6	-6.098	14.69	16.042	9.19	9.002	11.324	12.0496	0.00100243
Management Efficiency Ratios													
Interest Income / Total Funds	7.286	6.324	7.144	6.654	7.87	7.056	8.658	8.786	7.812	7.302	9.254	8.3624	0.01680239
Net Interest Income / Total Funds	2.572	2.084	2.346	1.93	2.13	2.212	2.938	4.188	3.156	2.968	4.172	3.4844	0.02100692
Non Interest Income / Total Funds	1.27	0.82	1.114	0.834	1.01	1.0092	1.792	1.596	1.882	2.106	1.77	1.8292	0.00260671
Interest Expended / Total Funds	4.714	4.24	4.766	4.722	5.74	4.8368	5.72	4.602	4.564	4.332	5.082	4.86	0.9415663
Operating Expense / Total Funds	1.85	1.254	1.55	1.458	1.42	1.5072	1.874	2.356	2.044	1.816	2.858	2.1896	0.05632608
Net Profit / Total Funds	0.272	-0.074	-0.574	-0.57	-0.51	-0.2912	1.434	1.854	0.946	1.148	1.68	1.4124	0.00063442
Loans Turnover	0.122	0.108	0.116	0.112	0.13	0.1172	0.146	0.14	0.126	0.124	0.148	10.1916	0.00200962
Total Income / Capital Employed(%)	8.558	7.144	8.226	7.488	8.88	8.0596	10.448	10.384	9.694	9.41	11.022		
Interest Expended / Capital Employed(%)	4.714	4.24	4.766	4.722	5.74	4.8368	5.72	4.602	4.654	4.332	5.082	4.878	0.89550895
Total Assets Turnover Ratios	0.072	0.062	0.07	0.066	0.08	0.07	0.088	0.088	0.076	0.074	0.092	0.0836	0.01849963
Asset Turnover Ratio	0.076	0.064	0.075	0.068	0.08	0.0726	0.09	0.094	0.082	0.076	0.098	0.088	0.02090635

Profit And Loss Account Ratios														
Interest Expended / Interest Earned	64.69	67.086	67.144	70.93	72.9	68.5448		65.908	52.288	59.614	59.268	54.646	58.3448	0.03843377
Other Income / Total Income	14.838	11.474	13.608	11.18	11.5	12.5212		17.166	15.388	19.418	22.312	16.12	18.0808	0.02085785
Operating Expense / Total Income	21.644	17.522	18.876	19.53	16.2	18.7512		17.986	22.698	21.178	19.428	25.856	21.4292	0.30378531
Selling Distribution Cost Composition	0.164	0.215	0.1	0.075	0.11	0.1323		0.475	0.2425	0.2525	0.7	0.5475	0.4435	0.04146148
Balance Sheet Ratios														
Capital Adequacy Ratio	12.71	12.898	10.952	12.4	11.6	12.114		16.8	15.76	15.548	17.272	17.19	16.514	0.00063309
Advances / Loans Funds(%)	72.918	65.238	67.728	64.13	67.9	67.5776		79.146	82.95	77.256	75.5	86.408	80.252	0.0059497
Debt Coverage Ratios														
Credit Deposit Ratio	79.11	68.746	71.65	70.12	70.1	71.9436		91.426	84.318	90.972	98.39	87.73	90.5672	0.00225302
Investment Deposit Ratio	34.34	22.874	30.154	24.35	31.7	28.6832		42.032	32.61	35.198	40.118	35.26	37.0436	0.01731446
Cash Deposit Ratio	6.538	3.756	6.596	5.52	5.06	5.4936		5.378	7.348	6.776	6.412	4.896	6.162	0.45155626
Total Debt to Owners Fund	15.174	15.526	17.068	17.52	17.1	16.4848		10.374	7.946	9.382	7.026	6.234	8.1924	0.00172781
Financial Charges Coverage Ratio	1.424	1.392	1.398	1.278	1.3	1.3584		1.508	1.75	1.642	1.754	1.624	1.6556	0.01027831
Financial Charges Coverage Ratio Post Tax	1.076	1.004	0.886	0.884	0.91	0.9528		1.27	1.43	1.216	1.28	1.37	1.3132	0.00149826
Leverage Ratio														
Current Ratio	0.074	0.042	0.036	0.048	0.05	0.0496		0.076	0.052	0.08	0.11	0.048	0.0732	0.13086508
Quick Ratio	13.148	.20.31	27.958	32.02	32	26.2875		15.116	14.496	20.268	16.838	17.625	16.8686	0.11279668
Cash Flow Indicator Ratios														
Dividend Payout Ratio Net Profit	20.2	45.48	20.51	19.43	17.2	24.555		21.115	19.547	144.313	26.503	3.04	42.9036	0.53388445
Dividend Payout Ratio Cash Profit	17.48	37.03	18.29	16.65	11	20.096		19.2325	18.38	56.97	23.743	2.83	24.2311	0.69162396
Earning Retention Ratio	87.88	454.52	95.898	96.11	94.6	165.7972		83.108	88.326	-15.45	78.798	97.028	66.362	0.22729403
Cash Earning Retention Ratio	86.89	262.97	90.855	83.35	94.1	123.6357		84.614	88.972	54.424	81.006	97.3	81.2632	0.27642384
AdjustedCash Flow Times	283.503	958.01	250.7	266.7	526	457.054		56.844	41.952	164.242	69.862	44.856	75.5512	0.06200858

****

विकेन्द्रीकृत योजनाओं के क्रियान्वयन में स्थानीय प्रशासन की भूमिका

दशरथ मण्डलोई * डॉ. सुनील मोरे**

प्रस्तावना - उदारीकरण और वैश्विकरण के परिणाम स्वरुप जहाँ एक ओर दुनिया विश्व ग्राम में परिणत होती गई, वहीं मध्यप्रदेश में ऊपर से नीचे की ओर सत्ता के विकेन्द्रीकरण के प्रयत्न किए जाते रहे हैं। महात्मा गांधी के ग्राम स्वराज्य की अवधारणा को साकार रुप प्रदान करने के उद्देश्य से सन् 1993 में पंचायत राज अपनाने वाला देश का प्रथम राज्य मध्यप्रदेश था, जिसमें त्रिस्तरीय पंचायत संस्थाओं के माध्यम से सभी वर्ग के लोगों को सत्ता में भागीदारी का अवसर दिया गया। इसके अंतर्गत ग्राम, जनपद और जिला स्तर पर एक ऐसी विकेन्द्रित प्रशासनिक व्यवस्था को क्रियान्वित किया गया है, जिसमें फैसले राजधानी में न होकर ग्राम सभा की बैठक में होने लगे हैं। त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था में जनसंख्या के अनुपात में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़ा वर्ग और महिलाओं के पद आरक्षित करके सत्ता में उनकी सहभागिता सुनिश्चित की गई। जिससे गण और तंत्र के मजबूत होते रिश्तों ने मध्यप्रदेश में विकास के नये रंग भरे हैं, जिससे विकास सामाजिक न्याय के रास्ते से एक ऐसे सामाजिक परिवर्तन को जन्म दे रहा है, जो ऊपर से नीचे की ओर है। राज्य के समुचित सामाजिक आर्थिक विकास हेतु पंचायती राज संस्थाओं को अधिकार सम्पन्न तथा आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ बनाया गया है, वहीं विकास नियमन तथा सामान्य प्रशासन के लिए जवाबदेही भी सुनिचित की गई हैं, जिससे यह विकेन्द्रीकृत व्यवस्था का एक मजबूत तंत्र बन गया और हितग्राही योजनाऐं जन-जन तक पहुँच रही हैं।

मध्यप्रदेश के समग्र एवं समावेशी विकास के लिए योजना बनाकर जन-सामान्य की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु विकेन्द्रीकृत नियोजन प्रणाली वर्तमान की आवश्यकता हैं। संविधान के 73वें एवं 74वें संशोधन द्वारा स्थानीय स्व-शासन की इकाईयों को संवैधानिक मान्यता देते हुये विकेन्द्रीकृत नियोजन की जिम्मेदारी दी गई हैं। विकेन्द्रीकृत नियोजन प्रणाली का उद्देश्य नियोजन प्रणाली में समाज के सभी वर्गो के विशेष रुप से अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, महिलाओं दिव्यागों की भागीदारी सुनिश्चित कर उनकी आवश्यकताओं का आंकलन कर योजना का निर्माण करना है। प्रक्रिया सन् 2010-11 से पूरे प्रदेश में सफलतापूर्वक अपनाई जा रही हैं।

जिला विकेन्द्रीकृत नियोजन प्रक्रिया का जिले में सुचारु रुप से संचालित करने में महत्वपूर्ण भूमिका है। अत: निर्धारित मानक प्रक्रिया अनुसार अपने मार्गदर्शन में ग्राम सभा, ग्राम पंचायत स्तर व नगरीय वार्ड आदि नियोजन इकाईयों से योजनाऐं तैयार कराकर विभिन्न स्तरों पर एकीकृत करते हुए समेकित जिला योजना प्रारूप तैयार कर और निर्धारित अवधि में प्रक्रिया पूर्ण कर तथा सॉफ्टवेयर में प्रविष्टि कर राज्य योजना आयोग का प्रेशित किया जाता है। जिलों की एकीकृत जिला योजना को राज्य योजना आयोग में चर्चा उपरांत अंतिम रुप दिया जाता है।

ग्रामीण क्षेत्र के त्वरित एवं समावेशी विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये विकेन्द्रीकृत नियोजन प्रक्रिया द्वारा विभिन्न योजनाओं का निर्माण अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वर्ष 2010-11 से इस प्रणाली में ग्रामीण क्षेत्र में ग्रामसभा स्तर पर योजनाऐं तैयार की जाती हैं। इन योजनाओं में कार्यो का चयन स्थानीय नागरिकों की भागीदारी से किया जाता हैं एवं ग्राम पंचायत, जिला पंचायत स्तर पर योजना निर्माण एवं ग्राम पंचायत, जनपद पंचायत, जिला पंचायत स्तर पर योजना निमार्ण एवं समेकन किया जाता हैं। जिला योजना समिति, ग्रामीण निकायों द्वारा प्रस्तुत योजनाओं को समेकित कर जिला योजना को अंतिम रुप प्रदान करती हैं।

जिला स्तर - मध्यप्रदेश के सभी जिलो में एक जिला नियोजन समूह गठित किया गया है। जिला नियोजन समूह में ग्रामीण नियोजन हेतु आवश्यक मार्गदर्शन, मूल्यांकन एवं विभिन्न विभागों तथा विकेन्द्रीकृत नियोजन प्रक्रिया के विभिन्न स्तरों पर समन्वय आदि कार्य सम्पादित किये जाते हैं। नियोजन की प्रक्रिया के बारे में जागरुकता पैदा करने के लिये स्थानीय मीडिया को विज्ञापन या जनसामान्य को सूचना आदि की कार्यवाही की जाती हैं।

जिला योजना निर्माण की प्रक्रिया संस्थागत संरचना एवं भूमिका - मध्यप्रदेश में विकेन्द्रीकृत जिला योजना निर्माण की प्रक्रिया को संचालित करने के लिये इस प्रकार की व्यवस्था का निर्धारण किया गया है।

जिला योजना समिति - ग्रामीण निकायों से प्राप्त योजना प्रस्तावों का समेकन करके जिला योजना समिति जिले की योजना को अंतिम रुप देती हैं। जिला योजना समिति का अनुमोदन करवाकर राज्य योजना को स्वीकृति हेतु प्रेशित करती हैं। इसमें पिछले वर्षो के अनुभवों को शामिल करते हुये पूर्व की शंति जिला स्तर पर ग्रामीण निकायों हेतु क्षेत्रवार उप समितियाँ बनायी जाती हैं। जिले में विकेन्द्रीकृत नियोजन की प्रक्रिया को जिला योजना समिति संचालित करती हैं। नियोजन की प्रक्रिया के दौरान जिले या जनपद स्तरीय अधिकारियों के माध्यम से पर्यवेक्षण कराया जाता है। ग्रामीण निकायों से प्राप्त योजना प्रस्तावों का समेकन करके जिला योजना समिति, जिले की योजना को अंतिम रुप देती हैं। जिला योजना समिति के अनुमोदन उपरांत जिला योजना, राज्य योजना आयोग को स्वीकृत हेतु प्रेशित करते हैं।

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म. प्र.) भारत
** प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, अंजड़, जिला बड़वानी (म. प्र.) भारत

जिला पंचायत की भूमिका – ग्रामीण क्षेत्रों में ग्राम योजनाओं का निर्माण विकेन्द्रीकृत नियोजना प्रक्रिया द्वारा किया जाता है। जिसे संचालित करने के लिये 'जिला स्तरीय नियोजन दल' का गठन मुख्य कार्यपालन अधिकारी, जिला पंचायत के नेतृत्व में किया जाता है। मुख्य कार्यपालन अधिकारी, जिला पंचायत जिले के ग्रामीण क्षेत्र की योजना बनाने के कार्य तथा विभिन्न विभागों तथा योजनांतर्गत उपलब्ध संसाधनों के मध्य समन्वय कर योजना निमार्ण में सहयोग प्रदान करते हैं। जिला स्तरीय नियोजन दल, जनपद स्तरीय नियोजन दल को आवश्यक तकनीकी मार्गदर्शन उपलब्ध करते हैं तथा जनपद स्तरीय योजनाओं को समेकन एवं एकीकृत करके जिला योजना समिति को प्रस्तुत करते हैं।

जनपद स्तर – तकनीकी सहायता दल की गतिविधियों के लिये एक नियोजन इकाईवार कैलेण्डर विकसित किया जाता है। तकनीकी सहायता दल को जो ग्राम इकाईयां सौपी गयी हैं उनमें कम–से–कम पांच बार प्रत्येक ग्राम सभा का भ्रमण किया जाता है। जिससे समुदाय का विकेन्द्रीकृत नियोजन के बारे में पूर्ण जानकारी हो सकें तथा समुदाय का विश्वास प्रक्रिया के प्रति उत्पन्न हो एवं वे इस प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी लेकर नियोजन में सहयोग कर सकें। प्रथम चार दिवस का भ्रमण लगातार चार दिवस तक एक ही गांव में ही किया जाता है। जिससे कि कम से कम चार दिन के भीतर एक नियोजन इकाई के प्लान को तैयार करवाया जा सकें एवं अंतिम भ्रमण जिले द्वारा योजना को अंतिम रुप से अनुमोदन पश्चात् प्राप्त मास्टर प्लान या योजना से अवगत कराने हेतु किया जाता है।

जनपद पंचायत की ूमिका – मुख्य कार्यपालन अधिकारी द्वारा जनपद पंचायत के नेतृत्व में 'जनपद स्तरीय नियोजन दल' का गठन किया जाता है। इस दल में प्रशिक्षण प्रदान में दक्ष 4–5 सदस्यों को मास्टर प्रशिक्षकों के रुप में प्रशिक्षण करने हेतु चिन्हित कर तथा उन्हें जिला स्तर पर आयोजित प्रशिक्षणों में भाग लेने हेतु नामांकित करते हैं। प्रशिक्षित मास्टर प्रशिक्षक जनपद स्तर पर समस्त 'तकनीकी सहायता दल' (टी एस जी) के सदस्यों को प्रशिक्षण प्रदान करते हैं। मुख्य कार्यपालन अधिकारी जनपद पंचायत ग्राम स्तरीय नियोजन प्रक्रिया के दौरान पर्यवेक्षण कर एवं समय सीमा के भीतर कार्यवाही पूरा कराना सुनिश्चित करते हैं। इसके साथ ही पंचायतों की योजनायें प्राप्त कर डाटा एन्ट्री की व्यवस्था एवं समेकन तथा एकीकृत कर जनपद पंचायत से अनुमोदन कराया जाता है।

ग्राम पंचायत की भूमिका – ग्राम पंचायत निर्धारित क्षेत्र में आने वाले दो या दो से अधिक ग्रामों से संबंधित प्रस्तावों को ग्राम पंचायत योजना में समाहित कर ग्राम पंचायत पर ग्राम सभाओं द्वारा अनुमोदित कार्य योजनाओं का समेकन एवं अनुमोदन करती हैं।

ग्राम पंचायतों का मुख्य कार्य ग्राम स्तरीय नियोजन के लिये आवश्यक वातावरण निमार्ण एवं ग्राम सभाओं से प्राप्त योजनाओं का समेकन करना है। ग्राम पंचायतों को नियोजन प्रक्रिया के दौरान तकनीकी सहायता मार्गदर्शन एवं पर्यविक्षण के लिये तकनीकी सहायता दल का गठन किया जाता है। इस कार्य हेतु पूर्व में गठित एवं प्रशिक्षित तकनीकी सहायता दल के सदस्य, जिन्होंने पूर्व में अच्छा कार्य किया हो, उनको प्राथमिकता प्रदान की जाती हैं। दल में प्रत्येक क्षेत्रक का यथासंभव एक प्रतिनिधि रखा जाता है। इस प्रकार प्रत्येक दल में चार से छ: सदस्य हो सकते हैं। एक दल दो से तीन ग्राम पंचायतों के समूह को तकनीकी सहायता उपलब्ध कराते हैं। स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार पंचायतों की संख्या कम से अधिक की जा सकती हैं।

तकनीकी सहायता दल में स्थानीय स्तर पर सक्रिय तेजस्वनी, जन अभियान परिषद, प्रस्फुटन समिति, नवांकुर समिति, योजना आर्थिक एवं सांख्यिकी विभाग द्वारा ग्राम स्तर पर चिन्हांकित सर्वेक्षण सहायक, स्वयंसेवी संस्थाओं, मुख्यमंत्री कम्यूनिटी लीडरशिप डेवलपमेंट प्रोग्राम के तहत् पंजीकृत विद्यार्थियों आदि को भी शामिल किया जाता है। तकनीकी सहायता दल ग्राम सभा स्तर पर पंचायत पदाधिकारियों के सहयोग से नियोजन की प्रक्रिया को संपादित कराते हैं। तकनीकी सहायता दल, ग्राम सभा को नियोजन की प्रक्रिया एवं विभिन्न क्षेत्रकों के कार्यक्रमों के बारे विस्तृत जानकारी उपलब्ध कराते हैं तथा नियोजन की प्रक्रिया को फेसिलिटेट करते हैं ताकि ग्राम पंचायत को उपलब्ध कराना सुनिश्चित करते हैं।[1]

ग्राम विकास समिति – ग्राम सभा स्तर पर नियोजन की कार्यवाही **'ग्राम विकास समिति'** द्वारा संचालित की जाती हैं। यदि किसी ग्राम सभा में ग्राम विकास समिति सक्रिय नहीं है तो व्यापक जनभागीदारी सुनिश्चित करने के लिए अस्थाई समिति के रुप में ग्राम स्तरीय नियोजन समिति का गठन कर नियोजन प्रक्रिया का संचालन किया जा सकता है।

विकेन्द्रीकृत नियोजन प्रणाली में समस्त वर्गो (महिलाऐं दिव्यांग, अतिगरीब आदि) की भागीदारी सुनिश्चित की जाती हैं। ग्राम स्तरीय समुदाय आधारित संस्थाओं जैसे स्वय सहायता समूह, वन समिति, वाटरशेड समिति, पालक शिक्षक संघ आदि को नियोजिन हेतु विचार–विमर्श में सम्मिलित किया जाता है।

जन अभियान परिषद की भूमिका – मध्यप्रदेश जन अभियान परिषद् का गठन, स्वयंसेवी संगठनों को सशक्त इकाई के रुप में विकसित कर प्रदेश के समग्र विकास में आम जन की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने एवं सामुदायिक नेतृत्व क्षमता में वृद्धि करने के लिए किया गया है। मध्यप्रदेश जन अभियान परिषद् के अन्तर्गत संभाग स्तर पर समन्वयक जिला स्तर पर जिला समन्वयक तथा विकासखण्ड स्तर पर विकासखंड समन्वयक पदस्थ है। इसके अतिरिक्त राज्य स्तर पर विषय विशेषज्ञों द्वारा प्रत्येक स्तर पर समन्वयकों को आवश्यक सुझाव एवं सहायता उपलब्ध कराई जाती हैं। मध्यप्रदेश जन अभियान परिषद् अन्तर्गत 21512 स्वैच्छिक संगठन प्रस्फुटन समितियों के रुप में तथा 2660 समितियां नवांकुर संस्थाओं के रुप में चिन्हांकित एवं कार्यरत् है। परिषद् द्वारा मुख्यमंत्री सामुदायिक नेतृत्व क्षमता विकास पाठयक्रम प्रारंभ किया गया है, जिसमें लगभग 12189 छात्र पंजीकृत है। इस प्रकार एक वृहद् समूह समुदाय स्तर पर विकेन्द्रीकृत नियोजन प्रक्रिया में सहयोग प्रदान करने हेतु उपलब्ध है, जिसका उपयोग कर जहां एक ओर नियोजन प्रक्रिया में समुदाय की भागीदारी को बढ़ाया जा रहा है वहीं दूसरी ओर तकनीक सहायता दल के रुप में फेसिलिटेषन के कार्य में सहयोग किया जा रहा है।

जन अभियान परिषद् के अन्तर्गत जिला समन्वयकों तथा विकासखंड समन्वयकों को विभिन्न स्तरों पर गठित किये जाने वाले नियोजन दलों तथा अनुश्रवण दलों में सदस्यों को रुप में सम्मिलित किया जाता है तथा उक्तानुसार क्षेत्रों में जन अभियान परिषद् के सदस्यों का उपयोग करते हुए नियोजन प्रक्रिया को ओर अधिक गुणवत्ता पूर्ण तथा सुगम बनाने हेतु प्रयास किये जाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. योजना, आर्थिक एवं सांख्यिकी विभाग, मध्यप्रदेश शासन, भोपाल
2. वार्षिक प्रतिवेदन, जिला जनपद पंचायत कार्यालय की पुस्तिका, धार
3. शुक्ल, के. के. : ग्रामीण विकास की प्रमुख योजनाएं एवं कार्यक्रम, योजना संचालक।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

ग्रामीण विकेन्द्रीकृत नियोजन संरचनात्मक रेखाचित्र :

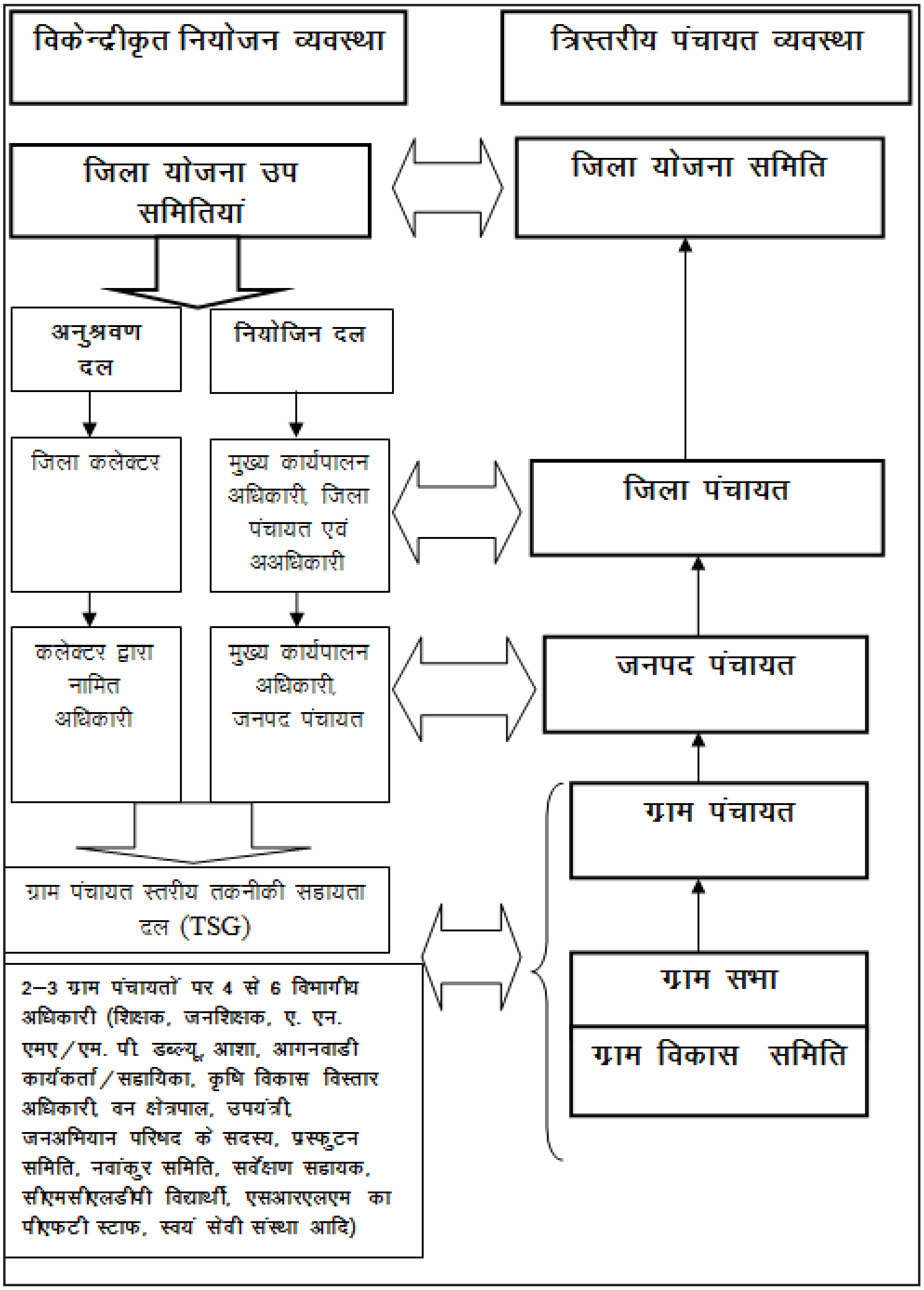

स्त्रोत : योजना, आर्थिक एवं सांख्यिकी विभाग, मध्यप्रदेश शासन, भोपाल

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

भारत की मुद्रास्फीति से प्रवृत्ति

डॉ. स्वाति शर्मा *

शोध सारांश – किसी देश में जब वस्तुओं के मूल्य में सतत् वृद्धि हो और मुद्रा की क्रय शक्ति घटने लगे तो उसे मुद्रा स्फीति कहतें है। यह स्थिति तब उत्पन्न होती है जब अर्थव्यवस्था में मुद्रा का प्रवाह बढ़ जाए परंतु उसके वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन व पूर्ति में वृद्धि या हो पाए। इस स्थिति का कुछ प्रभाव देश ही अर्थव्यवस्था पर आर्थिक विषमता, कम बचत, राजनैतिक अराजकता और अनैतिकता आदि के रूप में परिलक्षित होता है। परंतु किसी भी देश के आर्थिक विकास में इसकी में इसकी सिमित मात्रा में उपस्थिति आवश्यक है क्योंकि यह अर्थव्यवस्था पर अनुकुल प्रभाव डालती है और देश आर्थिक विकास के पथ पर अग्रसित होता है।

शब्द कुंजी – मुद्रास्फीति।

प्रस्तावना – हर विकसित देश व आर्थिक विकास की प्रक्रिया में संलग्न होता है तो उसे मुद्रा स्फीति से अक्षूता रहा है यहाँ भी लगातार मुद्रा स्फीति अर्थात् कीमतों में वृद्धि की प्रवृत्तियाँ देखी जा रही है। जिसका कारण मांग पक्ष की ओर से जन संख्या वृद्धि, मुद्रा आपूर्ति में वृद्धि, सरकार की उदारवादी साखनीति, घाटे की वित्त व्यवस्था आदि तथा पूर्ति पक्ष की ओर से उत्पत्ति के साधनों जैसं मजदूरी, कच्चे पदार्थो के मूल्य अनुचित वितरण प्रणाली आदि है। कभी-कभी देश के क्षण व ब्याज का भार भी मुद्रा स्फीतिका कारण बनता है।

मुद्रास्फीति की माप – भारत में मुख्यत:, दो प्रकार से मुद्रा स्फीति की माप की जाती है - (CPI)

1. उपभोक्ता मूल्य सूचंकांक – यह मुख्यत: उपभोक्ताओं के लिए मुद्रास्फीति की माप करता है जिसका मापन शहरी क्षेत्र के लिए NSSO द्वारा तथा ग्रामीण क्षेत्र के लिए 448 वस्तुओं और सेंवाओं की गणना की जाती है।

2. थोक मूल्य सूचकांक (WPI) – भारत में WPI का प्रयोग मुद्रा स्फीति को मापने के लिए केन्द्रीय बैंक द्वारा किया जाता है यह उत्पादन के स्तर पर मुद्रा स्फीति की माप करता है इसमें 3 श्रेणी की वस्तुएँ प्राथमिक वस्तु, ईंधन और विनिर्मित कुल 697 वस्तु शामिल है।

भारत में CPI & WPI

वर्ष	CPI	WPI
2014-15	5.9	1.2
2015-16	4.9	(3.7)
2016-17	4.5	1.7
2017-18	3.6	2.9
2018-19	3.4	4.6

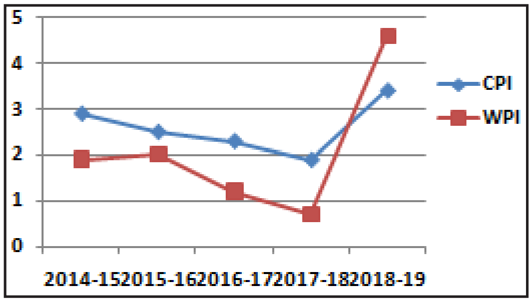

विश्लेषण – उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि भारत में विगत 5 वर्षो में **CPI** के घटने तथा **WPI** बढ़ने की प्रवृत्ति है। **CPI** किसी अर्थव्यवस्था के उपयोग व्यय को भी दर्शाता है। **CPI** बताता है कि उपयोग व्यय में निंरतर कमी आ रही है जिसका कारण लगातार होने वाली कीमत वृद्धि है। **WPI** में वर्ष 2015-16 के अलावा लगातार वृद्धि हुई 2015-16 में कमी का कारण खाद्यान्न पदार्थो की कीमत में कमी, मुल्य मुद्रा स्फीति तथा कच्चे तेल की कीमतों में गिरावट थी परंतु अन्य वर्षो में **WPI** बढ़ने का कारण अनाज मासालें व सब्जी में होने वाली तीव्र वृद्धि है।

निष्कर्ष – मूल्य नियंत्रित करने सरकार ने जो प्रयास किए है जो अत्यधिक प्रभाव नहीं है मुद्रापूर्ति व उत्पाद के बीच सामान्य बनाकर ही मुद्रास्फीति से निपटा जा सकता है अन्यथा आर्थिक वृद्धि व विकास के लिए किए गए सभी प्रवास धीरे-धीरे निष्फल हो जाएगें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दत्तसुंदरम् , भारतीय अर्थव्यवस्था
2. मिश्र एवं पूरी , भारतीय अर्थव्यवस्था
3. डॉ.वी.सी. सिन्हा, व्यावसायिक पर्यावरण, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स
4. प्रतियोगिता दर्पण वार्षिकांक अर्थशास्त्र
5. रमेश सिंह , भारतीय अर्थव्यवस्था , मेक ग्रीव हील एजुकेशन
6. आर्थिक सर्वेक्षण 2018-19
7. अतिराम, भारतीय अर्थव्यवस्था प्रतियोगिता दर्पण

* सहा. प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. राधाबाई शासकीय नवीन कन्या महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

वर्तमान परिपक्ष्य में योग शिक्षा के संदर्भ में स्वामी रामदेव जी के विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. प्रतिमा बनर्जी *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध 'वर्तमान परिपेक्ष्य में योग शिक्षा के संदर्भ में स्वामी रामदेव जी के विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन' में विद्यार्थियों में योग की जागरूकता का अध्ययन किया गया है। शोध हेतु 4 विद्यालयों से 200 विद्यार्थियों को याद्दच्छिक न्यायदर्श विधि द्धारा चयन कियागया। प्रस्तुत शोध हेतु स्वनिर्मित, प्रश्नावली, अनुसूची व साक्षात्कार का प्रयोग किया गया है। सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु प्रतिशत विधि का प्रयोग कर निष्कर्ष निकाला गया कि विद्यार्थियों में योग शिक्षा के प्रति जागरूकता है, और ये योग शिक्षा प्राप्त करना चाहते है।

प्रस्तावना – 'योग' मानव के सर्वागीण विकास एव अंतिम लक्ष्य (मोक्ष) की प्राप्ति की अद्भुत विद्या है। 'योग' का आश्रय लेकर मानव जहॉ शारीरिक एवं मानसिक स्वस्थता प्राप्त करता है, वहीं उच्च आध्यामिक अनुभूतियों व आनंद की अनुभूति की ओर अग्रसर होता है।

योग मनुष्य को सकारात्मक चिंतन के प्रशस्त पथ पर लाने की एक अद्भुत विद्या है जिसे करोड़ो वर्षो पूर्व भारत देश के प्रज्ञावान ऋषि मुनियों ने अविष्कृत किया था। महर्षि पतंजलि ने अष्टांग योग के रूप में इसे अनुशासन वृद्ध, सम्पादित एवं निष्पादित किया। इसी अष्टांग योग का उपदेश और अभ्यास, पूज्य स्वामी रामदेव जी महाराज अपने प्रवचन एवं योग प्रशिक्षण में कराते है। योगाचार्य स्वामी रामदेव जी ने गहन गुफाओं में छिपी योग शिक्षा को जनमानस में प्रचार कर महान कार्य किया है। अत: वे देश के ही नही अपितु विश्व के करोड़ो लोगों की श्रद्धा एवं आस्था के केन्द्र है।

उल्लेखनीय है कि वर्तमान समय में आधुनिकता की अंधी दौड़ में भौतिकवादी व भोगवादी वृत्ति के परिणाम स्वरूप स्वार्थपरता पढ़ रही है तथा विभिन्न समस्याएं व्यक्ति व समाज में उत्पन्न हो रही है जैसे तनाव , कुठा, हिंसा व द्धेश की भावना, शारीरिक व मानसिक रोग व अशांति आदि। इन समस्याओं का पूर्ण निदान 'योग शिक्षा' के द्धारा ही संभव है।

आने वाली पीढ़ी शांति तथा सौहार्द्रपूर्ण जीवन यापन करे इसलिये योग शिक्षा की आवश्यकता है। योग शिक्षा के व्यापक प्रचार-प्रसार में स्वामी रामदेव जी का योगदान सर्वविदित है।

'योग शिक्षा' से तात्पर्य विद्यालयी शिक्षा के अंतर्गत औपचारिक अथवा अनौपचारिक रूप से शिक्षा के सैद्धान्तिक अथवा व्यवहारिक ज्ञान से है। स्वामी रामदेव जी का अभिमत है कि सच्ची शिक्षा योग की शिक्षा है। इससे मानसिक एवं शारीरिक थकान दूर होती है और तनमन व आत्मा प्रसन्न रहती है। स्वामी जी योगतंत्र के हिमायती है। वे धर्म और दर्शन, दोनों को शिक्षा से संदर्भित करना चाहते है। उनका मानना है कि आत्म साक्षात्कार तभी पूर्ण हो सकता है जबकि शिक्षार्थी का सर्वान्मुखी विकास हो गया हो। स्वामी रामदेव जी के शिक्षा-दर्शन में नैतिक, धार्मिक, सामाजिक एवं बहुजनहिताय के विचारों का सामजस्य मिलता है। उनका शिक्षा दर्शन भारतीय संस्कृति के प्रति उदार दृष्टिकोण एवं विश्व बन्धुत्व की भावना से ओतप्रोत है।

व्यक्ति के विचारों को श्रेष्ठ बनाने में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। शिक्षा के द्धारा ही शिष्ट, चरित्रवान तथा स्वावलम्बी नागरिक तैयार किये जा सकते है। उनके शिक्षा दर्शन में भारतीय योग दर्शन की विचारधारा की पूर्ण अभिव्यक्ति मिलती है। शिक्षा का मूल्य उद्देश्य बालक का सर्वागीण विकास करना है किन्तु आज की शिक्षा प्रणाली में व्यक्ति का सर्वागीण विकास नही हो पाता हे। वर्तमान समय की तेज रफ्तार जिन्दगी से तनाव, कुंठा, असंतोष ही पनप रहा है। सर्वेक्षण बताते है कि बच्चें व किशोर इनके शिकार अधिक होते है।

इस समस्या के निदान हेतु स्वामी रामदेव जी द्धारा प्रचारित योग शिक्षा अवश्यंभावी है। अत: मैने इस समस्या का चयन किया-

'वर्तमान परिपेक्ष्य में योग शिक्षा के संदर्भ में स्वामी रामदेव जी के विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन'

उद्देश्य – उद्देश्य का निर्धारण किये बगैर कोई भी कार्य नही हो सकता है। वास्तव में प्रत्येक क्रिया और कार्य में कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। प्रस्तुत शोधपत्र में अध्ययन एवं आंकड़ों के संग्रहण के समय जिन उद्देश्यों को ध्यान में रखा गया, वे निम्नलिखित है:-

1. स्वामी रामदेव जी जैसे महान दार्शनिक व शिक्षाशास्त्री के जीवन से परिचित होना
2. स्वामी रामदेव जी के शैक्षणिक विचारों का अध्ययन करना।
3. स्वामी रामदेव जी द्धारा संचालित विविध सेवा प्रकल्पों से परिचित होना।
4. वर्तमान भारतीय शिक्षा व समाज के लिए स्वामी रामदेव जी के शैक्षणिक विचारा की प्रासंगिकता व उपयोगिता पर तार्किक विचार करना।
5. विद्यार्थियो में योग शिक्षा एवं स्वामी रामदेव जी के विचारों के महत्व व प्रभाव का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिसीमा – परिसीमा के अंतर्गत मैने सतना शहर के 4 विद्यालयों का चयन किया, जिसके अंतर्गत प्रत्येक विद्यालय से 50 विद्यार्थियों का चयन देव निदर्शन (याद्दच्छिक) के आधार पर किया। इस तरह कुल 200 विद्यार्थियों का चयन किया गया। साक्षात्कार, अनुसूची के

*प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

माध्यम से जानकारी प्राप्त की गई।

शोध प्रश्न :

1. क्या योग शिक्षा के विकास में स्वामी रामदेव जी का महत्वपूर्ण योगदान है?
2. क्या योग शिक्षा के संदर्भ में स्वामी रामदेव के विचार छात्रों को उत्तम स्वास्थ्य के प्रति जागरूक बनाते हैं?
3. क्या योग शिक्षा (आसन एवं प्राणायाम) के द्वारा छात्र मानसिक रूप से स्वस्थ्य होकर आत्मविश्वास से परिपूर्ण होते है?
4. क्या योग शिक्षा से स्व अनुशासन की भावना उत्पन्न होती है?
5. क्या योग शिक्षा के माधम से छात्रों में उत्तम चरित्र का विकास होता है?
6. क्या योग शिक्षा के माध्यम से छात्र अपनी संस्कृति से परिचित होते है?
7. क्या योग शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों मं राष्ट्रप्रेम की भावना विकसित होती है?
8. क्या योग शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों में दया, प्रेम भाईचारे की भावना का विकास होता है?
9. क्या योग शिक्षा के माध्यम से छात्रों में आध्यात्मिक अभिरूचि विकसित होती है?

उपकरण – अपने शोध प्रश्नों के समाधान हेतु शोधकर्ता जिन अधारभूत साधनों का उपयोग करता है वे ही शोध के उपकरण कहलाते है।

प्रस्तुत शोध कार्य में मैने स्वनिर्मित साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया।

इस उपकरण को 9 खण्डों में विभाजित कर कुल 42 प्रश्नों का प्रयोग किया गया। इसमें दो खाने बने है। सही उत्तर ही केलिए (V) का चिन्ह लगाना है। यदि उत्तर नही में है तो नही के आगे (X) का निशान लगाना है।

निष्कर्ष :

1. कुल 200 विद्यार्थियों में 93 प्रतिशत छात्रों को योग शिक्षा की जानकारी है।
2. 90 प्रतिशत विद्यार्थी इस मत को स्वीकार करते है कि योग शिक्षा के संदर्भ में स्वामी रामदेव के विचार छात्रों को उत्तम स्वास्थ्य के प्रति जागरूक बनाते है।
3. 80 प्रतिशत छात्रों के अनुसार योग शिक्षा (आसन एवं प्राणायाम) के द्वारा छात्र मानसिक रूप से स्वस्थ होकर आत्मविश्वास से परिपूर्ण होते है।
4. 77 प्रतिशत छात्रों के अनुसार योग शिक्षा से स्वअनुशासन की भावना उत्पन्न होती है।
5. 78 प्रतिशत छात्रों के अनुार योग शिक्षा के माधम से छात्रों में उत्तम चरित्र का विकास होता है।
6. 69 प्रतिशत छात्रों के अनुसार योग शिक्षा के माध्यम से छात्र अपनी संस्कृति से परिचित होते है।
7. 76 प्रतिशत विद्यार्थियों के मतानुसार में योग शिक्षा के माध्यम से छात्रों में राष्ट्रप्रेम की भावना विकसित होती है।
8. 67 प्रतिशत विद्यार्थियों के अनुसार योग शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों में दया, प्रेम व भाईचारे की भावना का विकास होता है।
9. 73 प्रतिशत छात्रों के अनुसार योग शिक्षा के माध्यम से आध्यामिक अभिरूचि विकसित होती है।

अत: स्पष्ट है कि 'योग शिक्षा' के माध्यम से भारतीय शिक्षा व्यवस्था में आमूल परिवर्तन हो सकता है। सामाजिक स्तर की समस्या में सुधार किया जा सकता है। योगासन एवं प्राणायाम तथा आयुर्वेदिक औषधियों के प्रयोग से 'स्वस्थ्य नागरिक, स्वस्थ्य भारत व स्वथ्य विश्व' का निर्माण संभव है।

आगामी अध्ययन के लिए सुझाव – प्रस्तुत लघु शोध के निष्कर्षो के परिप्रेक्ष्य में कतिपय ऐसे क्षेत्र और पहलू उभरते है, जिन पर सम्पर्क अध्ययन की आवश्यकता प्रतीत होती है। इस दृष्टि से भावी अध्ययन निमित्त कतिपय सुझाव निम्नांकित है:–

1. स्वामी रामदेव जी की यौगिक विचारधारा तथा शिक्षा और समाज पर उसका प्रभाव।
2. योग, आयुर्वेद व दर्शन के क्षेत्र में स्वामी जी का योगदान।
3. स्वामी रामदेव जी का लेखन और साहित्य तथा भारतीय शिक्षा और समाज के लिए उसकी उपयोगिता।
4. स्वामी रामदेव जी के राश्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय अववोध।
5. योग शिक्षा के अध्ययन की आवश्यकता।
6. विशिष्ट आवासीय योग विज्ञान शिविर का प्रभाव।
7. विद्यार्थियों के लिये योग शिक्षा का स्वरूप।

भावी अनुसंधानकर्ताओं को उपरोक्त विषयों पर समुचित अध्ययन करना चाहिए तथा मूल्यांकन करना चाहिए कि स्वामी रामदेव जी के योग शिक्षा सम्बन्धी विचार किस हद तक लोगों के लिए कारगर सिद्ध हो रहे है। उनके द्वारा विभिन्न विषयों पर किये गये विचारों को गहराई से जानने का प्रयास करना चाहिए। वर्तमान सामान्य शिक्षा संस्थाओं में स्वामी रामदेव जी के विचारों को प्रयोग करके देखना चाहिए तथा उनके परिणामों का तुलनात्मक अध्ययन करना चाहिए। इस प्रकार का शोध कार्य एक विशिष्ट विचार उदाहरणार्थ नैतिक शिक्षा को लेकर शिक्षकों द्वारा क्रियात्मक अनुसंधान भी किया जासकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. स्वामी रामदेव (2007)– योग साधना एवं योग चिकित्सा रहस्य य दिव्य प्रकाशन, दिव्य योग मंदिर ट्रस्ट, हरिद्वार।
2. आचार्य बालकृष्ण (1992–93) – 'योग संदेश', दिव्य प्रकाशन, दिव्य योग मंदिर ट्रस्ट, हरिद्वार
3. हरिभूमि न्यूज (सोनीपथ)– 26.10.2018
4. शुक्ल, एस0एम0 व सहाय, एस0पी0 2018 सांख्यकी के सिद्धान्त साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा
5. सक्सेना , सरोज (2014)– शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, साहित्य प्रकाशन, हास्पिटल रोड, आगरा
6. अग्रवाल, जे0सी0 (2003)– शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबंध, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा

****

भारतीय कर प्रणाली का आलोचनात्मक अध्ययन

डॉ. प्रतिमा बनर्जी *

प्रस्तावना – भारत एक विकासशील देश है। विकासशील देशों में कर प्रणाली के लक्षणों एवं ढांचे पर विचार करते समय, विनियोग को प्रोत्साहन करना तथा आर्थिक असमानताओं को दूर करना प्रमुख उद्देश्य होता है। कर प्रणाली पर किसी भी देश की लोक वित्त व्यवस्था निर्भर करती है। आदर्श कर प्रणाली वह है जो निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक हो। कर नीति का उद्देश्य अर्थव्यवस्था में स्थिरिता बनाए रखना और आर्थिक उतार चढ़ाव को रोकना होना चाहिए।

सरकार की आय के साधनों में करो का महत्वपूर्ण स्थान है। सरकार के कर्तव्यों में वृद्धि होने से सार्वजनिक व्यय की मात्रा निरन्तर बढ़ती जा रही है जिसको पूरा करने के लिए सरकार द्धारा जनता पर विभिन्न प्रकार के कर लगाए जाते है। कर के सम्बन्ध में कहा जाता है –'कर लगाने की कला एक बड़ी शक्ति है जिस पर समूचे राष्ट्र का तानाबाना आधारित होता है। किसी राष्ट्र के अस्तित्व और समृद्धि के लिए यह उतना ही आवश्यक है जितना कि एक व्यक्ति के श्वास लेने के लिए वायु की आवश्यकता होती है।' प्रो0लर्नर ने कहा है कि 'करारोपण का एक मात्र उद्देश्य देशों में आर्थिक यानी उत्पादन वितरण एवं उपयोग सम्बन्धी क्रियाओं के आकार को नियमित करना ही होना चाहिए।' विकसित देशों द्धारा विकसित कर प्रणाली और ढॉचा , विकासशील देशों के लिए उपयुक्त नही होता है। राजस्व मे कर की भूमिका महत्वपूर्ण है।

कर राजस्व – म0प्र0के वर्ष 2019–2020 की कुल 179353.75करोड़ रूपये की राजस्व प्राप्तियों में से 129029.55 करोड़ रूपये कर राजस्व द्धारा प्राप्त होना अनुमानित है। निम्न तालिका में कर राजस्व के प्रमुख शीर्षो का योगदान दर्शाया गया है:

करोड़ रूपये में

कर राजस्व केप्रमुख शीर्ष	2017–2018 (लेखा)	2018–2019 (पुनरीक्षित अनुमान)	2019–2020 (आय–व्यय का अनुमान)
आय एवं व्यय पर करनिगम कर, होटल प्राप्ति कर, आय तथा व्यय पर अन्य कर	29058.64	33243.92	38345.16
सम्पत्ति और पूॅजी गत लेनदेनों पर कर भूराजस्व, स्टैम्प तथा पंजीकरण शुल्क , धनकर, किसी भूमि से भिन्न अचल सम्पत्ति पर कर	5922.75	6449.44	8249.44
वस्तुओ और सेवाओं पर कर केन्द्रीय जीएसटी,राज्य जीएसटी, समेकित जीएसओ,सीमा तथा संघ उत्पाद शुल्क, राज्य उत्पाद शुल्क,बिक्री व्यापार आदि पर कर, सेवा कर विद्युतकर आदि	60682.53	70564.53	82429.95
कुल योग	95663.92	110257.89	29024.55

भारतीय कर प्रणाली की प्रमुख विशेषताएं निम्न लिखित है:

1. भारतीय कर ढॉचा एक बहु कर प्रणाली का रूप है जिसमे प्रत्यक्ष व परोक्ष करों को समायोजित किया गया है।
2. भारतीय कर व्यवस्था निरंतर अधिकतम सामाजिक लाभ प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर है। यहॉ सरकार नया कर लगाने या पुराने करों में परिवर्तन करते समय इस बात को सदा ही ध्यान में रखती है कि इन करों से कोई विपरीत प्रभाव देश के उत्पादन, वितरण व आर्थिक साधनों पर न पड़े।
3. भारत मे कर प्रगतिशील है जिसका सर्वोत्तम उदाहरण आयकर है। इसके अन्तर्गत धनिक वर्ग को अधिक कर व निर्धनवर्ग को कम कर देने पड़ते है।
4. करों की वसूली में मितव्ययिता का गुण विद्यमान है।
5. निजी बचत और पूजी को प्रात्साहित करने के लिए कर नियमों को उदार बनाया गया है, इसमें कर प्रेरक सुविधायें उपलब्ध है, उदाहरणार्थ– जीवन बीमा प्रीमियम (किस्त) , सामान्य भविश्यनिधि व पब्लिक प्राविडेन्ट फण्ड (पीपीएफ) मे जमा किये गये धन पर कर में छूट का लाभ मिलता है।
6. कर प्रणाली में उत्पादकता का गुण है।
7. कर प्रणाली में निश्चितता है। कर की मात्रा, समय व स्थान निश्चित है जिसके लिए करदाता की सुविधा का भी ध्यान रखा गया है। आयकर, कर्मचारी के वेतन मेसे ही प्रतिमाह ले लिया जाता है।
8. भारतीय कर्ज प्रणाली लोचपूर्ण है ताकि संकट के समय यथा संभव आय की पूर्ति की जा सके।
9. भारत में प्रत्यक्षकर अमीर व गरीब की खाई को पाटने की दिशा में अग्रसर है जबकि अप्रत्यक्षकर अनुपातिक है। इस प्रकार प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्षकरों का उचित समन्वयन है।
10. भारत में गैर किसी क्षेत्र में अत्यधिक कर भार है।
11. भारतीय कर प्रणाली में अप्रत्यक्षकरों पर अधिक निर्भरता है। यह मूल्य वृद्धि का प्रमुख कारण है।

*प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

भारतीय कर प्रणाली के दोष :

1. भारतीय कर व्यवस्था में न्यायशीलता का अभाव है । यहॉ पर अप्रत्यक्षकरों की अधिकता है तथा प्रतिवर्ष इनमें लगातार वृद्धि हो रही है इससे निर्धन व्यक्तियों पर करों का भार बढ रहा है जबकि धनियों पर भार अपेक्षाकृत कम ही पड़ रहा है।
2. भारतीय कर प्रणाली का दूसरा दोष यह है कि करों को लगाने में व उनको एकत्रित करने की सरकारी व्यवस्था अकुशल है जिससे अरबों रूपयों के करों की चोरी होती है।
3. देश की राष्ट्रीय आय मे करों का योगदान लगभग 17 प्रतिशत है जो बहुत ही कम है जबकि फ्रान्स में 39 प्रतिशत, जर्मनी में 35 प्रतिशत, स्वीडन में 41 प्रतिशत , ब्रिटेन में 35 प्रतिशत है।
4. भारतीय कर व्यवस्था में वैज्ञानिक स्वरूप का अभाव है। एक ही वस्तु या सम्पत्ति पर केन्द्र व राज्य दोनों ही कर लगाते है। कर लगाते समय उनके प्रभाव का पूर्ण अध्ययन नही किया जाता है।
5. केन्द्र व राज्यों की वित्तीय प्रणाली में समन्वय का अभाव पाया जाता है। वित्त आयोग की सिफारिशों के आधार पर केन्द्र व राज्यों के मध्य वित्तीय साधनों का बटवारा किया जाता है। राज्यों के आय के साधन बेलोचदार है तथा उन्हें अधिकाधिक मात्रा में केन्द्र पर निर्भर रहना पड़ता है।
6. भारत मे करों की चोरी वृहद् मात्रा में होती है इसका प्रमुख कारण, सरकारी कर्मचारियों मे कर्तव्यनिष्ठा का अभाव जनसाधारण में नैतिकता की कमी, ईमानदार करदाताओं में प्रोत्साहन का अभाव व कर प्रशासन की अकुशलता है।
7. हमारी कर प्रणाली का एक दोष यह है कि इसमें उत्पादकता का अभाव है क्योकि करों से प्राप्त आय का एक बहुत बड़ा अंश नागरिक सुरक्षा व प्रशासन पर व्यय हो जाता है जबकि उत्पादक कार्यो के लिए धन कम मात्रा में ही बच पाता है।
8. भारत मे करों को एकत्रित करने में भारी व्यय किया जाता है। यही नही, इस व्यय में लगातार वृद्धि हो रही है। प्रत्यक्षकरों का वसूली व्यय लगभग 15 प्रतिशत है जो अन्य विकसित देशों की तुलना में काफी अधिक है।
9. भारत में करों की दरे काफी अधिक है जिससे विनियोग की प्रेरणा पर बुरा प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए यहॉ पर व्यक्तिगत आयकर की अधिकतम दर 30 प्रतिशत है जो अन्य विकसित देशों की तुलना में काफी अधिक है।
10. यहॉ पर सीमित व्यक्तियों द्वारा ही कर का भुगतान किया जाता है जोकि अर्थव्यवस्था के विकास में बाधक है।

भारतीय कर प्रणाली के सुधार हेतु सुझाव – भारतीय कर प्रणाली के दोषों को दूर करने के लिए निम्न सुझाव प्रस्तुत किये जाते है:–

1. कर संरचना और कर नियमों को सरल करना चाहिए।
2. सार्वजनिक व्यय का अधिकतम लाभ निर्धनों को मिलना चाहिए।
3. करों के ढॉचे में इस प्रकार परिवर्तन किया जाय कि राष्ट्रीय आय बढ़ने के साथ–साथ करों से प्राप्त आय में वृद्धि हो सके।
4. प्रेरणादायक कर प्रणाली होनी चाहिए ताकि उत्पादन व बचत दोनों को प्रेरणा मिल सके और आर्थिक योजनाए सफलतापूर्वक संचालित की जा सके।
5. कर प्रशासन की कुशलता में वृद्धि होनी चाहिए जिससे कि न केवल करों की चोरी ही रूके, बल्कि कर दाता सही मात्रा में कर देना प्रारम्भ कर दे एवं करो के एकत्रण में होने वाले व्ययों में कमी की जा सके।
6. परोक्षकरों के स्थान पर प्रत्यक्ष करों को महत्व दिया जाना चाहिए जिससे कि धनिक वर्ग पर करों का अधिक भार पड़ सके।
7. कर प्रणाली में इस प्रकार फेर बदल किया जाना चाहिए कि व्ययों पर रोक लग सके, उपभोग में कमी हो सके, मुद्रास्फीति की प्रवृत्तियॉ अंकुश में रहें तथा बचत व विनियोग को प्रोत्साहन मिल सके।
8. भारत मे प्रतिगामी कर प्रणाली को समाप्त कर देना चाहिए एवं आवश्यक वस्तुओं पर कम से कम तथा विलासिता की वस्तु पर अधिक से अधिक कर लगाये जाने चाहिए। सिंचाई कर को कम से कम लगाया जाना चाहिए।
9. भारत सरकार को समय समय पर विभिन्न करों का उपभोग एवं उत्पादन पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना चाहिए जिससे कि यदि उन करों का प्रभाव प्रतिकूल पड़ रहा हो तो उनमें आवश्यक संशोधन किया जा सके और भारी हानि से बचा जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. लोक वित्त, डॉ.डी.एन.गुर्टू, कालेज बुक डिपो, जयपुर
2. लोक वित्त, एच.एल.भाटिया
3. भारतीय अर्थशास्त्र, वी.सी.सिन्हा, एस.बी.पी.डी. पब्लिशिंग हाउस,आगरा, उ.प्र.
4. लोक वित्त, डॉ.पवन मिश्रा व डॉ.प्रभा मिश्रा म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
5. राजस्व, आर.के.महेश्वरी

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

मध्यप्रदेश सरकार के लोक ऋणों की अनुकूलता का अध्ययन

डॉ. सी. पी. पँवार *

प्रस्तावना – सामान्यत: ऋण की प्रकृति दीर्घकालीन होती है, फलस्वरुप भविष्य में बोझ बनती है और आर्थिक संकट का कारण भी बनती हैं किंतु जब लोक–ऋणों के संदर्भ में अध्ययन किया जाये तो यह आवष्यक नही की वै सदैव बुरे हो। योजनाबद्ध व्यय और पूंजी निवेश के रुप में ऋण दीर्घकाल में फायदेमंद साबित होते है। अर्थव्यवस्था की स्थिरता के लिये विकासशील देश आर्थिक प्रक्रिया को तीव्र करने के लिये जहाँ ऋण का सहारा लेते है, वही विकसित देशों में सार्वजनिक ऋण आर्थिक स्थिरता लाने वाला महत्वपूर्ण साधन है। निवेशक लोक–ऋण इसलिये अधिक पसंद करते है क्योंकि इनमें विश्वसनीयता अधिक तथा जोखिम न्यूनतम होती है, भले ही ब्याज दर कम हो। सरकार जरुरत न होने पर भी लोक–ऋण प्राप्त कर सकती है, अर्थात मुद्रा स्फीति एवं मंदी के दौरान आर्थिक नीति के क्रियान्वयन में उधार ले सकती है। आमतौर पर राज्य सरकारें अपनी आय और व्यय के बीच अंतर को पूरा करने के लिये ऋण लेती है। प्राय: सरकारें योजना व्ययों को पूरा करने के लिये ऋण लेती है। योजनागत व्यय – पूँजीगत व्यय के रुप में होते है, उत्पादक होते है, राज्य के राजस्व को बढ़ाने में मदद करते है और आर्थिक विकास को गति प्रदान करते है। म.प्र. जैसे राज्य में जहाँ प्राकृतिक संसाधन, खनिज संसाधन आदि प्रचुर मात्रा में है परंतु पूंजी की कमी आर्थिक विकास में बाधक बनती है, बचतों के अभाव पूंजी निर्माण नहीं हो पाता। अत: लोक–ऋण नागरिकों में बचत की क्षमता बढ़ातें है व पूंजी निर्माण में भूमिका निभाते है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में म.प्र. सरकार के लोक ऋणों की अनुकूलता का अध्ययन कुछ विशिष्ट मापों यथा राज्य सकल घरेलु उत्पाद, पूंजीगत व्यय, लोक ऋणो की ब्याज दर व राज्य की आर्थिक विकास दर के आधार पर किया।

अध्ययन के उद्देश्य – अध्ययन के निम्नलिखित तीन उद्देश्य रहे–

1. लोक ऋणों की राज्य सकल घरेलु उत्पाद से तुलनात्मक प्रवृत्ति ज्ञात करना।
2. लोक ऋणों की पूंजीगत व्यय से तुलना करना।
3. लोक ऋणो की ब्याज दर व राज्य की आर्थिक विकास दर का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन अवधि – अध्ययन अवधि वर्ष 2006–07 से 2015–16 तक कुल 10 वर्ष की रही।

लोक ऋणों की अनुकूलता का अध्ययन व विश्लेषण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में लोक ऋणों की स्थिति इनकी उपादेयता तथा इनके आर्थिक प्रभावों का अध्ययन निम्नलिखित तीन विशिष्ट मापों के आधार पर किया गया है –

1. कुल ऋण – राज्य सकल घरेलु उत्पाद अनुपात – राज्य की कुल देनदारियाँ/कुल ऋण की प्रवृत्ति को राज्य के सकल घरेलु उत्पाद अनुपात से तुलना करके ऋण साधनो की कार्यकुशलता को मापा गया है। समावेशी आर्थिक विकास की अवधारणा को पूर्ण करने हेतु सकल घरेलु उत्पाद में तीव्र वृद्धि आवश्यक है तथा यह राजकोषीय नीति का प्रमुख लक्ष्य भी होता है। सकल घरेलु उत्पाद की वृद्धि में आधारभूत संरचनात्मक पूंजीगत व्ययों के रुप में लोक–ऋणों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। कुल ऋणों से सकल घरेलु अनुपात की घटती हुई प्रवृत्ति अच्छी मानी जाती है। राज्य की कुल देनदारियाँ भी राजकोषीय नीति द्वारा निर्धारित सीमाओं के भीतर होनी चाहिये। तालिका 1 तथा ग्राफ 1 व 2 लोक–ऋण–सकल घरेलु उत्पाद अनुपात की प्रवृत्ति को प्रदर्शित करते है। तालिका 1 के अनुसार कुल ऋणों में अध्ययन अवधि में 234 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि सकल घरेलु उत्पाद में यह वृद्धि की प्रवृत्ति 473 प्रतिशत रही। इसका परिणाम यह रहा कि इस अनुपात में वर्ष 2006–07 से निरन्तर गिरावट की ओर प्रवृत्त हुई। अंतिम तीन वर्षो में गिरावट की यह प्रवृत्ति स्थिर रही। इस प्रकार इस अवधि में आधारभूत संरचनात्मक विकास में कुल ऋणों के रुप में वर्ष 2015 तक 1,13,160 करोड़ रुपये का निवेश किया गया तथा इस अवधि में राज्य सकल घरेलु उत्पाद बढ़कर 6,07,269 करोड़ रुपये हो गया। यह स्थिति लोक ऋणों की आर्थिक विकास में भूमिका को प्रदर्शित करती है। यह स्थिति प्रदर्शित करती है कि अध्ययन अवधि के दौरान राज्य की अर्थव्यवस्था पर ऋणों का भार 37.62 प्रतिशत से घटकर 18.63 प्रतिशत हो गया अर्थात सकल घरेलु उत्पाद के मुकाबले ऋण भार में 50 प्रतिशत कमी हुई। यह प्रवृत्ति ऋण साधनों के अनुकुलतम उपयोग को प्रदर्शित करती है। इस अनुपात को ग्राफ 1 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है। जिसमें सकल घरेलु उत्पाद की ग्राफ रेखा कुल ऋणों की ग्राफ रेखा की तुलना में ऊंची दिशा की ओर प्रवृत्त हो रही है। इस अनुपात को ग्राफ 2 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है जिसमें सकल घरेलु उत्पाद अनुपात से देनदारियों का अनुपात निरन्तर कम होता हुआ प्रदर्शित हो रहा है।

तालिका 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

ग्राफ 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

ग्राफ 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

2. लोक ऋण –पूंजीगत व्यय अनुपात – राज्य की राजकोषीय नीति का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य राज्य में पूंजीगत व्ययों को बढ़ाना है ताकि सामाजिक विकास एवं भौतिक अधोसंरचना में विकास किया जा सके। पूंजीगत व्ययों के निवेश से राज्य की अर्थव्यवस्था की उत्पादकता को आधार तथा बढ़ावा मिलता है एवं निजी पूंजी निवेश को आकर्षित करने में भी सहायता मिलती है। विकासशील अर्थव्यवस्था में सरकारों की राजस्व

*सह-प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

प्राप्तियां इतनी नही होती है कि वे अपने चालू खर्चो को पूरा करने के बाद शेष राषि अर्थात राजस्व आधिक्य से विकास कार्य कर सके। इसलिये सरकारें विकास की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर वित्तीय संस्थाओं एवं बाजार से ऋण प्राप्त करती है। इस ऋण का उपयोग अर्थव्यवस्था की उत्पादन क्षमता विकसित करने के लिये किया जाये तो विकास की गति के साथ साथ प्राप्त होने वाले अतिरिक्त राजस्व से ऋणों की अदायगी तथा उस पर देय ब्याज का भुगतान भी आसानी से किया जा सकता है। तालिका 2 एवं ग्राफ 3 द्वारा लोक ऋण- पूंजीगत व्यय अनुपात की प्रवृत्ति को प्रदर्शित किया गया है। तालिका के अनुसार वर्ष 2006-07 में लोक-ऋण पूंजीगत परिव्ययों के 55.54 प्रतिशत थे जिसमें अध्ययनकाल में उच्चावचन की प्रवृत्ति रही व वर्ष 2015-16 में इनका औसत अनुपात 80.27 प्रतिशत था। सर्वाधिक न्यूनतम अनुपात वर्ष 2011-12 में 14.55 प्रतिशत था। इसका अध्ययन करने पर पाया कि सर्वाधिक पूंजी व्यय ों की मात्रा रुपये 24919.41 करोड़ रुपये इसी अध्ययन वर्ष में दर्शाई गई थी जिसके कारण यह अनुपात सर्वाधिक न्यून रहा। इस वर्ष में सर्वाधिक पूंजीगत प्राप्तियों का कारण विद्युत वितरण कम्पनियों को दिये गये ऋण रुपये 6693 करोड़ रुपये का समायोजन होना भी रहा। निष्कर्ष रुप में लोक ऋणों की तुलना में पूंजीगत व्ययों पर यह वृद्धि राजस्व आधिक्य में परिणामस्वरुप रही जिसमें पूंजी निवेश हेतु ऋणों पर निर्भरता कम होकर पूंजीगत व्ययों में पर्याप्त वृद्धि परिलक्षित हुई है। पूंजीगत प्राप्तियों में ऋणों का कम अथवा संतुलित होना ऋण एवं पूंजी साधनों के अनुकुलतम उपयोग को प्रदर्शित करता है। इस अनुपात को ग्राफ 3 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है जिसमें अध्ययन अवधि में इस अनुपात में उच्चावचन की स्थिति रही। वर्ष 2011-12 के पष्चात निरन्तर पूंजीगत व्यय ों से लोक ऋणों का अनुपात बढ़ता हुआ प्रदर्शित हो रहा है।

तालिका 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

ग्राफ 3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

3. लोक-ऋणों की ब्याज दर व राज्य विकास दर की तुलना - राज्य की राजकोषीय नीति का मूल उद्देश्य राज्य का आर्थिक विकास करना तथा राज्य के समस्त नागरिकों को विकास की प्रक्रिया से जोड़ना है। सक्रिय उद्योग नीति, निवेश नीति तथा कृषि हेतु प्रगतिशील योजना बनाकर कार्य करने से राज्य की अर्थव्यवस्था में वृद्धि होती है। केंद्रीय करों में राज्यों के हिस्से से संभावित कमी की पूर्ति ऋण साधनों के उचित संयोजन द्वारा पूरी की जा सकती है। विकास दर को निरन्तर कायम रखने में वित्ता के कर एवं करेत्तार राजस्वों के अलावा ऋण साधनों का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। अत: ऋण साधनों के योगदान को आर्थिक विकास दर से भी मापा जा सकता है। इस दृष्टि से यदि राज्य की आर्थिक विकास दर ऋण साधनों की लागत से अधिक है तो यह स्थिति ऋण साधनों के अनुकुलतम प्रयोग का प्रदर्शन होगा।

सरकार की ऋण प्रबंधन नीति का मुख्य उद्देश्य ऋणों के पुनर्भुगतान के साथ साथ ऋणों की लागत को भी न्यूनतम करना होता है। इस दृष्टि से वह प्रतिवर्ष अनुकुलतम ऋण पोर्टफोलियों का चयन करती है व ऋण लागत को नियंत्रित करने का प्रयास करती है। इस संबंध में सरकार की ऋण नीति राजकोषीय नीति तथा वित्त आयोग की अनुशंसाओं का भी ध्यान रखा जाता है। वर्ष 2003 में लागू ऋणों के अंतरण की योजना ब्याज लागत नियत्रंण का ही एक भाग थी। लोक-ऋणों की ब्याज दर व राज्य विकास दर की तुलनात्मक प्रवृत्ति की स्थिति तालिका 3 एवं ग्राफ 4 द्वारा प्रदर्शित की गई है। तालिका 3 दर्शाती है कि सरकार के लोक-ऋणों की ब्याज दर अध्ययन के विभिन्न वर्षो में न्यूनतम 7.64 प्रतिशत व अधिकतम 8.69 प्रतिशत रही। अध्ययन के अंतिम वर्ष में यह कम होकर 8.20 प्रतिशत प्रतिवर्ष रही। औसत ब्याज दर 8.40 प्रतिशत रही। अध्ययन के वर्षो में ब्याज दर की दीर्घकालीन प्रवृत्ति गिरावट की रही। राज्य विकास दर वर्ष 2007-08 व 2010-11 को छोड़कर शेष वर्षो में 8-10 प्रतिशत के बीच रही। वर्ष 2010-11 में व वर्ष 2011 से इसमेें निरन्तर वृद्धि दर्ज हुई। औसत विकास दर 9 प्रतिशत रही। ग्राफ 4 के अनुसार राज्य की विकास दर में दीर्घकालीन वृद्धि की प्रवृत्ति प्रदर्शित हो रही है। जबकि लोक-ऋणों पर ब्याज दर की प्रवृत्ति अंशत: गिरावट की ओर दर्ज होकर एक निश्चित दायरे में स्थित हुई है। कुल मिलाकर लोक-ऋणों की ब्याज दरें विकास दर से कम है जो यह प्रदर्शित करती है कि सरकार द्वारा लिये गये ऋण संसाधनों की उपयोगिता आर्थिक विकास दर की संवृद्धि को बनाये रखने में महत्वपूर्ण साबित हुई है।

तालिका 3 : लोक-ऋणों की ब्याज दर एवं राज्य विकास दर की तुलनात्मक स्थिति

वर्ष	ऋण ब्याज दर	राज्य विकास दर
2006-07	8.35	9.23
2007-08	7.64	4.69
2008-09	8.47	12.47
2009-10	8.56	9.56
2010-11	8.58	6.31
2011-12	8.62	8.54
2012-13	8.59	8.70
2013-14	8.43	9.48
2014-15	8.69	10.19
2015-16	8.20	10.16
Average	8.40	9.00

ग्राफ 4 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

निष्कर्ष - शोध अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार रहे।

1. सकल घरेलु उत्पाद की वृद्धि में आधारभूत संचरनात्मक पूंजीगत व्ययों के रुप में लोक ऋणों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यह अनुपात ऋण संसाधनों की कार्यकुषलता को मानता है। यह अनुपात घटता हुआ अच्छा माना जाता है। वर्ष 2006-07 में कुल ऋण राज्य सकल घरेलु उत्पाद के अनुपात में 37.62 प्रतिशत थे जो वर्ष 2015-16 में कम होकर 18.63 प्रतिशत रह गये अर्थात सकल घरेलु उत्पाद के मुकाबले ऋण भार मे 50 प्रतिशत की कमी हुई। इस दृष्टि से राज्य का यह अनुपात ऋण संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग को प्रदर्शित करता है।
2. लोक ऋण- पूंजीगत व्यय - यह अनुपात कुल पूंजी व्ययों में शुद्ध लोक ऋणों के अंशदान को प्रदर्शित करता है। इस दृष्टि से म.प्र. के पूंजीगत व्ययों की मात्रा लोक ऋणों से पर्याप्त अधिक रही। अध्ययन के प्रथम वर्ष में लोक ऋण पूंजीगत व्ययों के 55.54 प्रतिशत थे जिनमें अध्ययन अवधि में उच्चावचन की प्रवृत्ति रही तथा वर्ष 2015-16 की स्थिति में बढ़कर 80.27 प्रतिशत रहे। पूंजीगत व्ययों में संसाधनों का अनुपात कम होना अथवा संतुलित होना ऋण एवं पूंजी साधनों के अनुकूलतम तथा मितव्यय ता पूर्ण उपयोग को प्रदर्शित करता है।
3. राज्य की विकास दर लोक ऋणों की ब्याज दर से अधिक होने पर ऋण साधनों का प्रयोग लाभदायक माना जाता है। इस दृष्टि से लोक

ऋणों की ब्याज दर में दीर्घकालीन ब्याज दर की प्रवृत्ति रही जबकि विकास दर में उच्चावचन के साथ वृद्धि की प्रवृत्ति रही। वर्ष 2011-12 से ब्याज दरों में निरन्तर कम होना तथा विकास दर में निरन्तर वृद्धि होना यह प्रदर्शित करता है कि विकास दर बढ़ाने में ऋण साधनों की भूमिका उपयोगी रही।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. म.प्र. सरकार के बजट प्रतिवदेन वर्ष 2008-09 से 2015-16
2. आर्थिक समीक्षा 2012-13 से 2015-16
3. Statistical Year of Book of India, 2015
4. बारहवें वित्ता आयोग की रिपोर्ट
5. तेरहवें वित्ता आयोग की रिपोर्ट
6. चौदहवें वित्ता आयोग की रिपोर्ट
7. वित्तीय क्षेत्र विधायी सुधार आयोग की रिपोर्ट, 2013, वित्त मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली

तालिका 1 : म.प्र. सरकार का कुल ऋण - राज्य सकल घरेलु उत्पाद अनुपात

वर्ष	कुल ऋण (करोड़ रूपये)	प्रवृत्ति प्रतिशत	राज्य सकल घरेलु उत्पाद (करोड़ रूपये)	प्रवृत्ति प्रतिशत	कुल ऋण (प्रतिशत)
2006-07	48226	100	128202	100	37.62
2007-08	50118	104	142500	111	35.17
2008-09	54912	114	162525	127	33.79
2009-10	61532	128	216958	169	28.36
2010-11	67198	139	271681	212	24.73
2011-12	71478	148	315387	246	22.66
2012-13	77414	161	361874	282	21.39
2013-14	83898	174	450900	352	18.61
2014-15	94979	197	508006	396	18.70
2015-16	113160	235	607269	474	18.63

ग्राफ 1 : कुल ऋण - राज्य सकल घरेलु उत्पाद की तुलनात्मक स्थिति

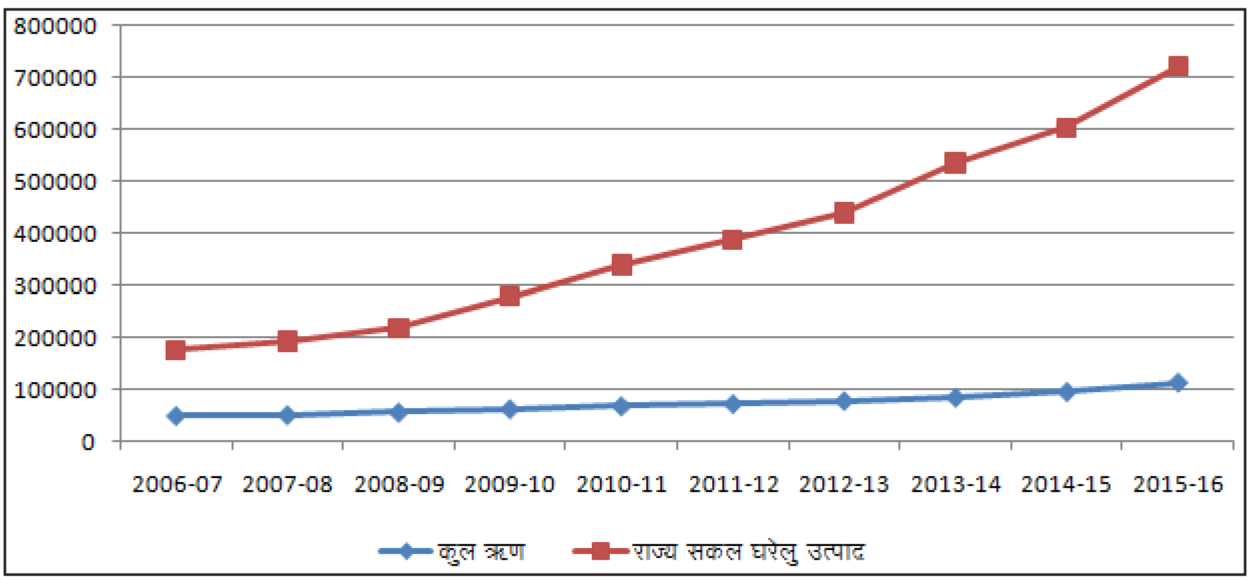

ग्राफ 2 : कुल ऋण- राज्य सकल घरेलु उत्पाद अनुपात की तुलनात्मक स्थिति (प्रतिशत में)

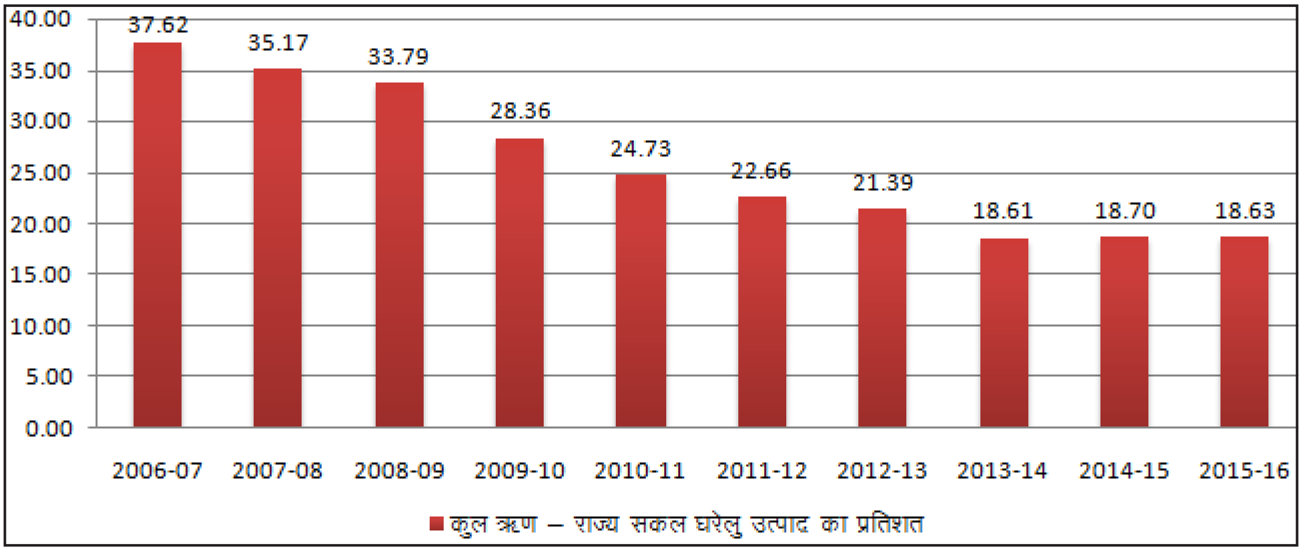

तालिका 2 : लोक-ऋणों का कुल पूंजीगत व्ययों से प्रतिशत

वर्ष	शुद्ध लोक-ऋण	प्रवृत्ति प्रतिशत	पूंजीगत परिव्यय	प्रवृत्ति प्रतिशत	प्रतिशत
2006-07	2871.44	100	5169.94	100	55.54
2007-08	1693.95	59	7989.64	155	21.20
2008-09	4591.96	160	8575.34	166	53.55
2009-10	6208.46	216	11744.54	227	52.86
2010-11	4928.71	172	12516.46	242	39.38
2011-12	3600.46	125	24919.41	482	14.45
2012-13	5207.22	181	16952.16	328	30.72
2013-14	5536.18	193	15892.4	307	34.84
2014-15	10148.19	353	24713.26	478	41.06
2015-16	17622.54	614	21954.06	425	80.27

ग्राफ 3 : लोक-ऋणों के पूंजीगत व्ययों से प्रतिशत की स्थिति

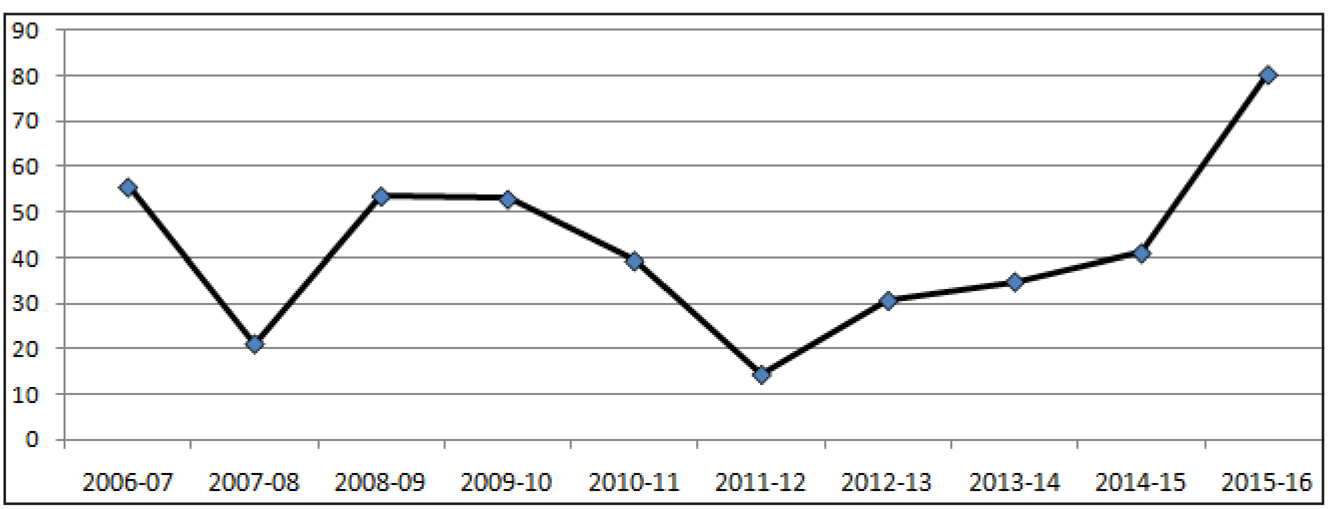

ग्राफ 4 : लोक–ऋणों की ब्याज दर एवं राज्य विकास दर की तुलनात्मक प्रवृत्ति

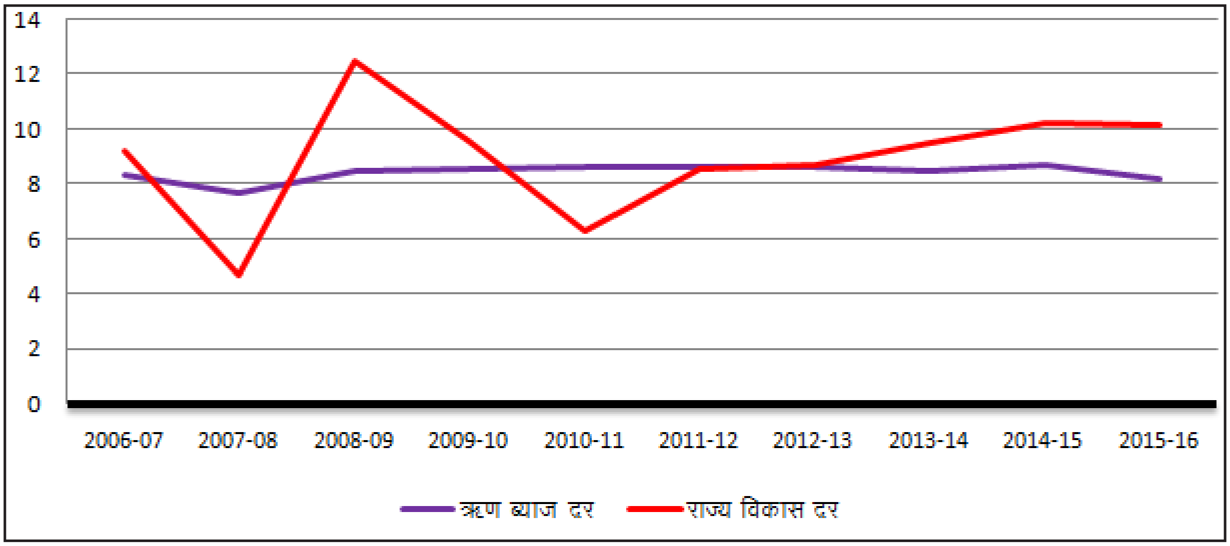

****

मध्यप्रदेश सरकार के लोक ऋणों की भुगतान प्रवृत्ति का अध्ययन

डॉ. सी. पी. पँवार *

प्रस्तावना – लोक ऋण अथवा सार्वजनिक ऋण विश्व में जनतंत्रीय सरकारों के साथ व्यवहार में आया है। वर्तमान समय में लोक ऋण बढ़ते हुये सार्वजनिक व्ययों के वित्त पोषण का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत बन गया है। सरकारें निरन्तर बढ़ रहे लोक व्ययों को पूरा करने के लिये केवल करारोपण पर ही आश्रित नही हो सकती है। कई परियोजनाएं ऐसी होती है जिनका वित्त पोषण कर राजस्व की तुलना में लोक-ऋणों द्वारा किया जाना अधिक औचित्यपूर्ण होता है। अत: राज्य सरकारें अपने राजकोषीय लक्ष्यों व नियामक व्यवस्थाओं के अनुसार अपने राजकोषीय व राजस्व घाटे को नियंत्रित रखते हुए बढ़े हुए लोक व्ययों की पूर्ति के लिए आवश्यकतानुसार लोक ऋण की प्राप्ति तथा उसके भुगतान का प्रबंधन करती है। सरकार को अपने द्वारा लिये गये सार्वजनिक ऋणों का निर्धारित समय में न केवल भुगतान करना पड़ता है वरन् ब्याज भी चुकाना होता है। समय पर भुगतान न होने पर बढ़ता हुआ सार्वजनिक ऋण व उसका ब्याज वित्तीय संकट का कारण बनता है। अत: ऋण उत्पादकीय कार्यो के लिये ही लिया जाना चाहिये तथा प्रतिवर्ष इसका एक निर्धारित हिस्सा नियमित भुगतान करते रहना चाहिये। प्रस्तुत शोध पत्र में म.प्र. सरकार के लोक ऋणों की भुगतान प्रवृत्ति का अध्ययन कुछ विशिष्ट मापदंडों के आधार पर किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य – शोध अध्ययन के निम्नलिखित तीन उद्देश्य रहे –

1. लोक ऋणों तथा ब्याज की अदायगी की प्रवृत्ति का अध्ययन करना।
2. सरकार की राजकोषीय संवहनीयता का अध्ययन करना।
3. लोक ऋणो की प्राप्तियां एवं भुगतान की तुलनात्मक स्थिति का अध्ययन करना।

अध्ययन अवधि – अध्ययन अवधि वर्ष 2006-07 से 2015-16 तक कुल 10 वर्ष की रही।

लोक ऋणों की भुगतान प्रवृत्ति का अध्ययन व विश्लेषण – म.प्र. सरकार के लोक ऋणों के भुगतान प्रवृत्ति का अध्ययन निम्न तीन मापों के आधार पर किया गया है।

1. ऋण सेवा अनुपात – ऋण सेवा अनुपात के अंतर्गत कुल प्राप्तियों (राजस्व एवं पूंजी प्राप्तियाँ) का ऋण सेवा (ब्याज + ऋण पुर्नभुगतान) के प्रतिशत को प्रदर्शित किया गया है। राज्य के द्वारा राजकोषीय घाटे को सीमित रखने तथा ऋण के पोर्टफालियों के समुचित चयन से ब्याज भुगतान व्ययो में वृद्धि नियंत्रित रहती है। इसी प्रकार ऋणों की समय पर अदायगी ऋणो को बोझ बनने से वंचित रखती है। ऋण सेवा अनुपात तालिका 1 व ग्राफ 1 व 2 द्वारा प्रदर्शित किया गया है। तालिका 1 के अनुसार वर्ष 2006-07 में ऋण सेवा अनुपात कुल प्राप्तियों का 20.5 प्रतिशत था जिसमें निरन्तर गिरावट की प्रवृत्ति दर्ज होकर वर्ष 2015-16 में यह अनुपात कुल प्राप्तियो का 10.55 प्रतिशत रहा। उक्त अनुपात में अध्ययनकाल में लगभग 50 प्रतिशत की गिरावट दर्ज हुई। इस गिरावट का कारण कुल प्राप्तियों में ऋण सेवा की अपेक्षा अधिक वृद्धि होना रहा। कुल प्राप्तियों में अध्ययनकाल के दौरान 471 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई जबकि ऋण सेवा भुगतान में यह वृद्धि 247 प्रतिशत तक थी इसका व्युत्क्रम प्रभाव यह हुआ कि ऋण सेवा अनुपात में लगभग 50 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई। बेहतर ऋण प्रबंधन के परिणामस्वरुप ऋण सेवा अनुपात में निरन्तर कमी हुई। यह अनुपात जितना कम हो उतना बेहतर माना जाता है। इस अनुपात की स्थिति को ग्राफ 1 एवं 2 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है।

ग्राफ 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

ग्राफ 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

2. राजस्व प्राप्तियाँ – ब्याज भुगतान अनुपात – राजकोषीय संवहनीयता की दृष्टि से यह अनुपात राजकोषीय नीति में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। राजकोषीय नीति तथा राजकोषीय उत्तारदायित्व एवं प्रबंधन अधिनियम में इस अनुपात की संवहनीयता सीमा तय की जाती है। वर्ष 2015-16 के लिये इस अनुपात की लक्षित सीमा 10 प्रतिशत थी। तालिका 7.6 के अनुसार वर्ष 2006-07 में ब्याज भुगतान राजस्व प्राप्तियों का 15.68 प्रतिशत था। अध्ययनकाल में इस प्रतिशत में निरन्तर गिरावट की प्रवृत्ति दर्ज होकर वर्ष 2015-16 में 7.73 प्रतिशत तक सीमित रही। अर्थात ब्याज भुगतान में 50 प्रतिशत की स्पष्ट कमी परिलक्षित हुई। ब्याज भुगतान में इस गिरावट का कारण राजस्व प्राप्तियों की उच्च वृद्धि दर रही जो अध्ययन काल में 433 प्रतिशत तक थी। इसके मुकाबले ब्याज भुगतान की वृद्धि दर 263 प्रतिशत ही रही। परिणामस्वरुप सरकार के ब्याज दायित्व भार में 50 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई। यह स्थिति सरकार के बेहतर ऋण प्रबन्धन का परिणाम रही। राज्य के द्वारा ब्याज भुगतान व्ययों को नियंत्रित रखने का एक प्रमुख कारण ऋण पोर्टफालियों का समुचित चयन भी रहा। बारहवें वित्त आयोग की अनुषंसानुसार अध्ययन के वर्षो में ऊंची लागत वाले ऋणों का कम लागत वाले ऋणें में अंतरण भी ब्याज भुगतान की वृद्धि नियंत्रित करने में एक महत्वपूर्ण कारण रहा। सरकार की ऋण नीति का मूल उद्देश्य ऋणों की लागत व्यय को कम करना होता है। इस दृष्टि से यह अनुपात संतोषजनक स्थिति को प्रकट करता है। उक्त अनुपात की स्थिति को ग्राफ 3 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है।

तालिका 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

ग्राफ 3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

3. लोक-ऋणों की प्राप्तियां एवं भुगतान अनुपात – सरकार की बजट नीति अथवा राजकोषीय नीति का मूलभूत कार्य राजकोषीय

*सह-प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

सम्पोषणीयता (Fiscal sustainability) का संरक्षण करना होता है, जिसके अनुसार सरकार उसके द्वारा लिये गये ऋणों के भुगतान के प्रति सुदृढ़ होनी चाहिये। प्रतिवर्ष इसका एक निर्धारित हिस्सा नियमित भुगतान करते रहना चाहिये।

तालिका 2 ग्राफ 4 एवं 5 लोक-ऋणों की प्राप्तियों एवं भुगतान की स्थिति को प्रदर्शित करते है। तालिका 2 के अनुसार वर्ष 2006-07 में लोक-ऋणों की प्राप्तियां - भुगतान का अनुपात 37.62 प्रतिशत था जिसमें उतार-चढ़ाव के साथ अंतिम तीन वर्षो में गिरावट की प्रवृत्ति रही। ऋणों के भुगतान का सर्वाधिक 49.35 प्रतिशत अनुपात वर्ष 2007-08 में रहा, जहां लोक-ऋणों की मात्रा न्यून रही। सबसे कम अनुपात 23.40 प्रतिशत वर्ष 2015-16 में रहा जिसका प्रमुख कारण वर्ष 2015-16 में लोक-ऋणों की प्राप्तियों में पिछले वर्ष की तुलना में 50 प्रतिशत की वृद्धि रही। जबकि भुगतान प्रवृत्ति में 9.4 प्रतिशत की गिरावट रही। ऋणों की अदायगी की दृष्टि से अंतिम दो वर्ष की स्थिति को छोड़कर शेष वर्षो में भुगतान की स्थिति संतोषजनक रही जैसा कि ग्राफ 4 में भुगतान की सीधी रेखा प्रदर्शित करती है कि सरकार द्वारा ऋणों का नियमित भुगतान किया जा रहा है। किंतु अंतिम वर्षो में ऋणों की प्राप्तियों के अनुपात में भुगतान की प्रवृत्ति में अपेक्षाकृत वृद्धि परिलक्षित नहीं होना सरकार के कमजोर रोकड़ प्रबंधन का संकेत है। इसी प्रकार ग्राफ 5 लोक ऋणों के भुगतान अनुपात में गिरावट की प्रवृत्ति को प्रदर्शित करता है।

तालिका 2 : म.प्र सरकार के लोक-ऋणों की प्राप्तियाँ एवं भुगतान की तुलनात्मक स्थिति

वर्ष	लोक-ऋण		
	प्राप्तियां	संवितरण	प्रतिशत
2006-07	4602.97	1731.53	37.62
2007-08	3370.95	1677	49.75
2008-09	6552.97	1961.02	29.93
2009-10	8602.5	2394.03	27.83
2010-11	7457.92	2529.22	33.91
2011-12	6750.25	3149.79	46.66
2012-13	8791.16	3583.94	40.77
2013-14	9540.81	4004.63	41.97
2014-15	15068.7	4920.5	32.65
2015-16	23005.71	5383.17	23.40

ग्राफ 4, 5 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

निष्कर्ष - शोध अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार रहे।

1) ऋण - सेवा अनुपात : राज्यों के राजकोषीय घाटे को सीमित रखने तथा ऋण पोर्टफालियों के समुचित चयन से ब्याज भुगतान में वृद्धि नियंत्रित रहती है तथा ऋणों की समय पर अदायगी ऋणों को बोझ बनने से रोकती है। इस अनुपात के अंतर्गत कुल प्राप्तियों से ऋण सेवा (ब्याज+ऋणों का पुर्नभुगतान) को प्रतिशत में प्रदर्शित किया गया है। वर्ष 2006-07 में यह अनुपात 20.5 प्रतिशत था जिसमें निरन्तर गिरावट दर्ज होकर 10.55 प्रतिशत रहा। इस प्रकार इस अनुपात में 50 प्रतिशत की गिरावट दर्ज हुई। इस गिरावट का कारण प्रदेश की कुल प्राप्तियों में ऊँची दर से वृद्धि हुई। कुल प्राप्तियों में 471 प्रतिशत वृद्धि दर्ज हूई जबकि ऋण सेवा भुगतान में यह वृद्धि 247 प्रतिशत रही। इस स्थिति का व्युत्क्रम प्रभाव यह हुआ कि 50 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई। यह स्थिति म.प्र. सरकार के बेहतर ऋण भुगतान प्रबंधन को दर्शाती है।
2) राजस्व प्राप्तियाँ-ब्याज भुगतान अनुपात राजकोषीय संवहनीयता की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। वर्ष 2006-07 में ब्याज भुगतान कुल राजस्व प्राप्तियों का 15.68 प्रतिशत था जिसमें निरन्तर गिरावट दर्ज होकर 7.73 प्रतिशत तक सीमित रहा अर्थात ब्याज भुगतान में लगभग 50 प्रतिशत की स्पष्ट कमी परिलक्षित हुई जो कि राज्य की बेहतर ऋण भुगतान प्रवृत्ति को दर्शाता है।
3) लोक ऋणों की प्राप्तियाँ भुगतान अनुपात : यह अनुपात सरकार की राजकोषीय सम्पोषणनियता का संरक्षण करता है, जिसके अनुसार सरकार उसके द्वारा लिये गये ऋणों के भुगतान में सुदृढ़ होनी चाहिये। म.प्र. सरकार के लोक ऋणों के भुगतान की एक समान प्रवृत्ति ऋणो के नियमित भुगतान को दर्शाती हैं। अंतिम दो वर्षो में लोक ऋणों की असमान वृद्धि को छोड़ते हुए यह अनुपात संतोषजनक रहा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. म.प्र. सरकार के बजट प्रतिवदेन वर्ष 2008-09 से 2015-16
2. आर्थिक समीक्षा 2012-13 से 2015-16
3. Statistical Year of Book of India, 2015
4. बारहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट
5. तेरहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट
6. चौदहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

ग्राफ 1 : ऋण सेवा अनुपात की तुलनात्मक स्थिति

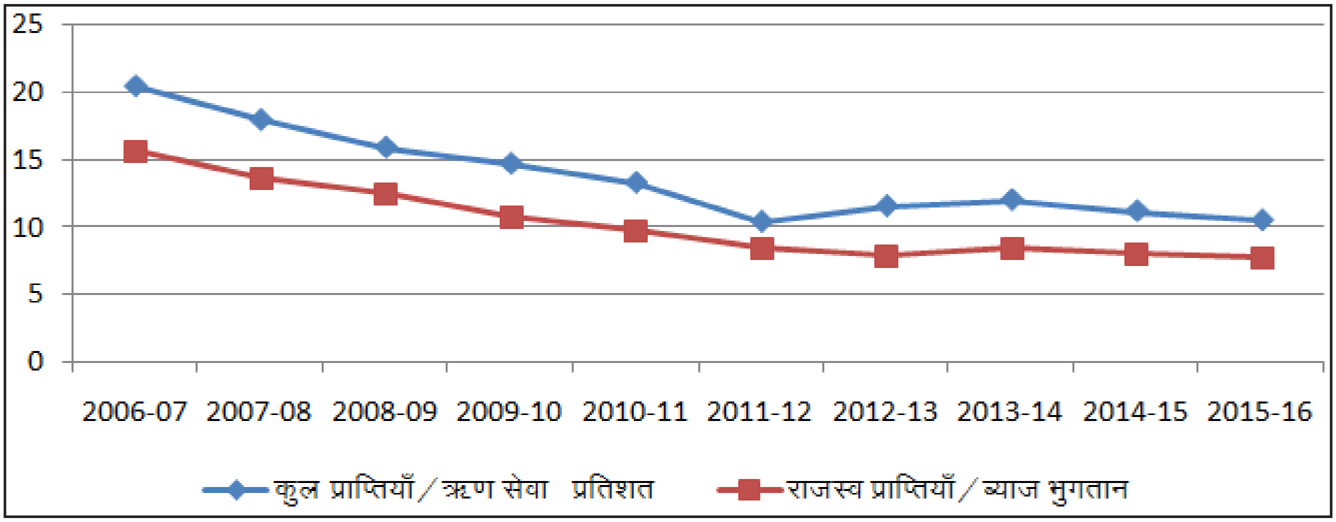

ग्राफ 2 : कुल व्यय /ऋण सेवा भुगतान की स्थिति (प्रतिशत में)

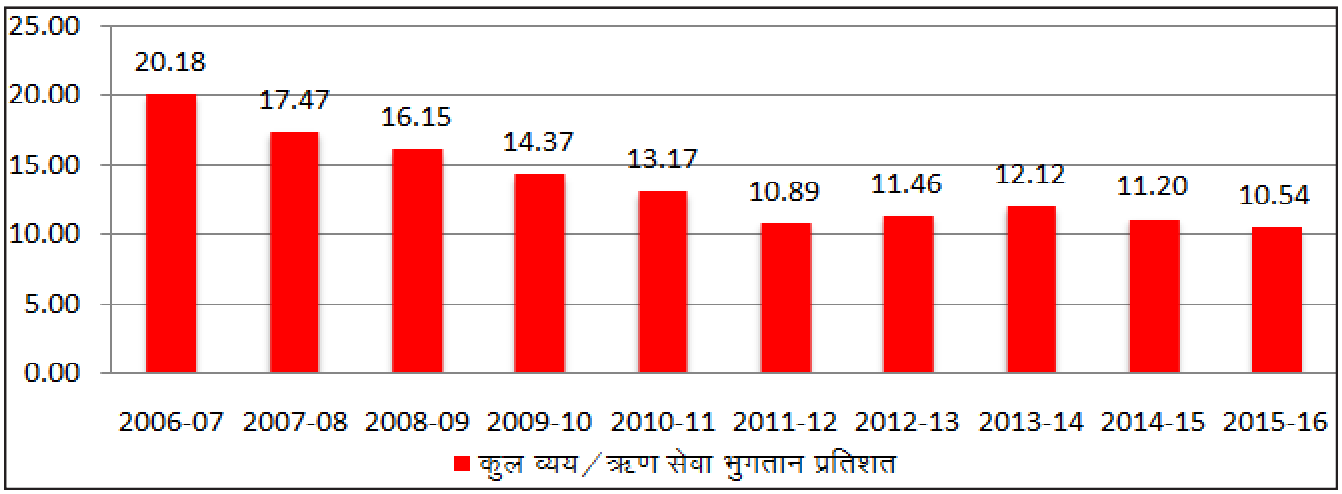

तालिका 1 : ऋण सेवा अनुपात की स्थिति (करोड़ रु.)

प्रवर्ग/वर्ष	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16
कुल प्राप्तियाँ	28102.94	32621.37	38552.1	46438.58	56863.84	80913.6	78962.72	86198.05	106813.2	132413.4
राजस्व प्राप्तियाँ	25694.28	30688.73	33577.21	41394.7	51854.19	62604.08	70427.28	75749.24	88640.79	111130.7
ऋण सेवा भुगतान (A+B)	5760.48	5867.77	6153	6848.35	7578.18	8449.56	9157.68	10395.96	11991.77	13975.12
A. ब्याज भुगतान	4028.95	4190.77	4191.99	4454.3	5048.95	5299.77	5573.74	6391.32	7071.25	8591.95
B. ऋणों का भुगतान	1731.53	1677	1961.01	2394.05	2529.23	3149.79	3583.94	4004.64	4920.52	5383.17
1. कुल प्राप्तियाँ/ ऋण सेवा भुगतान (प्रतिशत में)	20.50	17.99	15.96	14.75	13.33	10.44	11.60	12.06	11.23	10.55
2. राजस्व प्राप्तियाँ / ब्याज भुगतान (प्रतिशत में)	15.68	13.66	12.48	10.76	9.74	8.47	7.91	8.44	7.98	7.73

ग्राफ 3 : राजस्व प्राप्तियां– ब्याज भुगतान की तुलनात्मक प्रवृत्ति

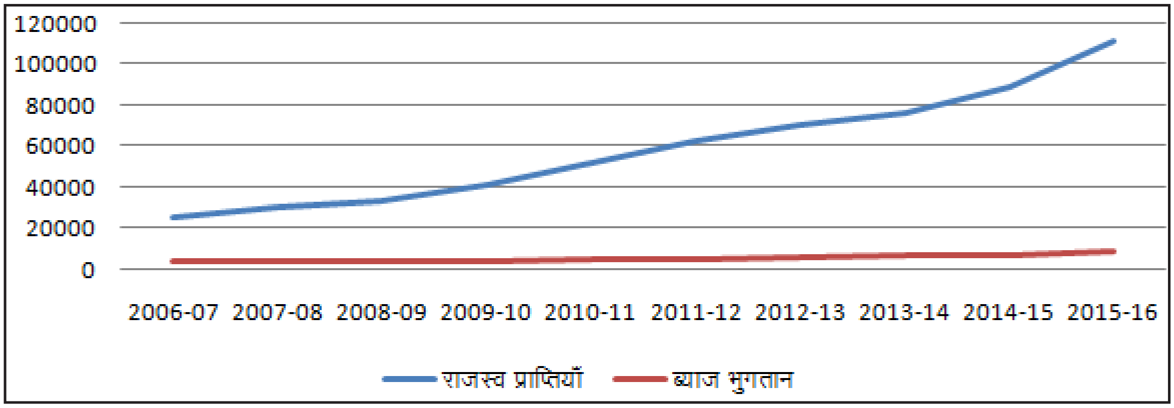

ग्राफ 4 : म.प्र. सरकार के लोक–ऋणों के प्राप्तियों एवं भुगतान की तुलनात्मक प्रवृति

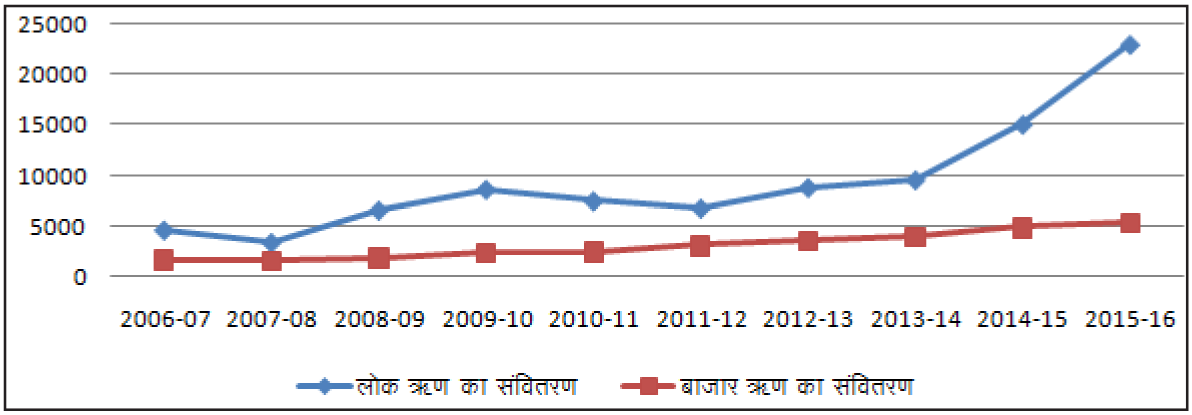

ग्राफ 5 : म.प्र. सरकार के लोक–ऋणों के भुगतान की प्रवृति

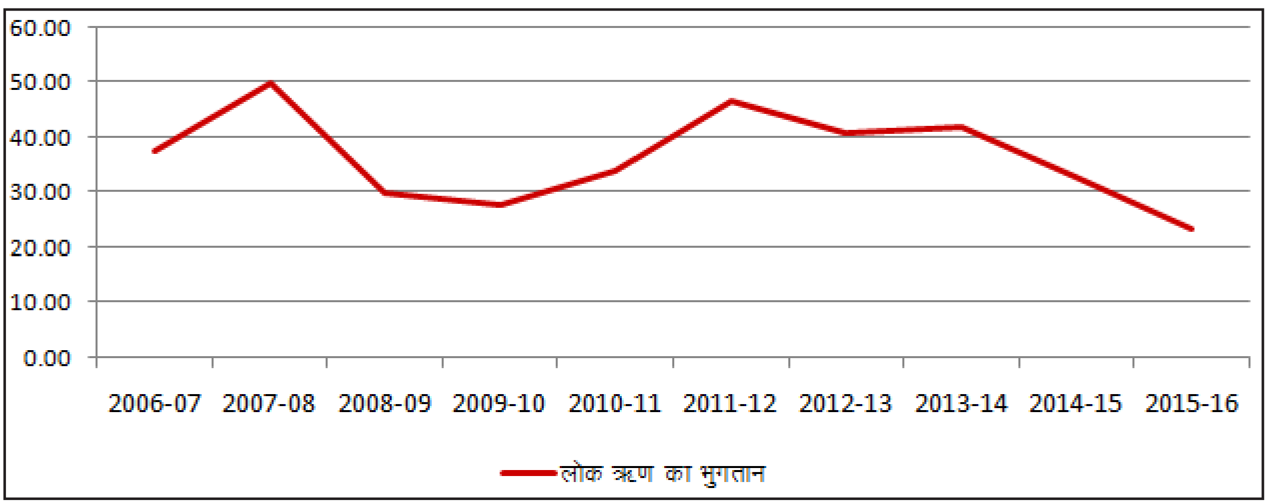

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

जनजाति महिलाओं में स्वच्छता एवं स्वास्थ्य सम्बन्धित जागरुकता : एक अध्ययन (म.प्र.के झाबुआ जिले के विशेष संर्दभ में)

डॉ. मनीषा सक्सेना* सपना मोरे**

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधपत्र जनजाति महिलाओं में स्वच्छता एवं स्वास्थ्य सम्बन्धित जागरुकता पर आधारित है। यह सर्वविदित है कि स्त्री–पुरुष की शारीरिक बनावट के कारण भी कुछ रोग महिलाओं को जल्द ग्रसित करते है तो कुछ पुरुष को इसलिए महिलाओं से जुडी स्वास्थ्य व स्वच्छता विषय पर शोध अध्ययन आवश्यक है। स्वच्छता हमारे सम्पूर्ण जीवन की वह मुख्य स्थिती है जो हमें शारीरिक एवं मानसिक रुप से स्वस्थ्य रखती है। जनजाति क्षेत्र में अस्वच्छता के कारण होने वाली बीमारियां गम्भीर समस्या के रुप में विद्यमान है। जिसमे विशेषत: हैजा, मलेरिया, टाइफाईड, डेंगू, एवं त्वचा संक्रमण है। अत: महिला स्वास्थ्य पर गम्भीर चिंतन की आवश्यकता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले की झाबुआ विकासखण्ड की जनजाति महिलाओ में स्वच्छता एवं स्वास्थ्य सम्बन्धित जागरुकता का अध्ययन ज्ञात करने की दिशा में एक प्रयास है।
शब्द कुंजी – जनजाति, महिलाएँ, स्वच्छता, स्वास्थ्य।

प्रस्तावना – किसी भी देश के विकास में महिलाओं की मुख्य भूमिका रही है। इसलिए महिलाओं का सामाजिक, आर्थिक व शैक्षणिक स्तर पर विकास अतिआवश्यक है। स्वच्छता एवं स्वास्थ्य एक दुसरे के पूरक है स्वच्छता के अभाव में स्वास्थ्य की कल्पना नही की जा सकती है। स्वच्छता को ध्यान में रखते हुए देश के वर्तमान प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी जी ने 2 अक्टुबर 2014 को स्वच्छ भारत अभियान आरम्भ किया। इस अभियान का मुख्य उद्देश्य खुले में शौच मुक्त भारत है। इस अभियान से विशेषत: ग्रामीण महिलायें लाभान्वित हुई है। स्वच्छ सुविधाओं तथा साफ –सुथरे पर्यावरण का , अच्छे पोषण एवं स्वास्थ्य की देखभाल पर प्रत्येक महिला का अधिकार है। सेम्पल रजिस्ट्रेशन हेल्थ सर्वे की रिपोर्ट (2015–17) के अनुसार मध्यप्रदेश मे प्रति एक लाख गर्भवती महिलाओ व प्रसूताओ में से 188 की मौत हो जाती है। वैश्विक पोषण रिपोर्ट 2017 के अनुसार प्रजनन उम्र (15 – 49 वर्ष) की महिलाओं में करीब आधी महिलाएँ (51फीसदी) एनीमिया से पीड़ित है। मध्यप्रदेश सरकार द्वारा जनजाति महिलाओं की शिक्षा व स्वास्थ्य पर प्रत्येक वर्ष हजारो करोड़ रुपये खर्च किये जाते है परन्तु फिर भी जनजाति वर्ग महिलाओं में स्वास्थ्य की स्थिती चिंताजनक पाई जाती है क्योंकी गुणवत्तापुर्ण शिक्षा, स्वच्छता व स्वास्थ्य से जुडे मुख्य बिन्दु व सामाजिक व्यवहार्थ क्षेत्रो को नजर अन्दाज कर दिया जाता है। नेशनल सेम्पल सर्वे ऑर्गनाइजेशन एवं राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे की रिर्पोट 2011 के अनुसार आदिवासी क्षेत्र के प्रति एक लाख लोगो में टीबी के मामले 703 है जबकि पूरे देश में प्रति एक लाख पर यह संख्या 256 है। जब तक जनजाति वर्ग की महिलाओं में स्वच्छता व स्वास्थ्य के प्रति जागरुकता नही होगी तब तक स्वास्थ्य के गम्भीर परिणाम सामने आते रहेंगे। महिलाओं को शारीरिक व मानसिक रुप से स्वस्थ्य रहने हेतु स्वच्छता का होना अति आवश्यक है। ग्रामीण जनजाति महिलाओ में स्वास्थ्य समस्याओं का मुख्य कारण उनकी निरक्षरता, आर्थिक स्थिती, अन्धविश्वास, रुढिवादिता है। स्वच्छता से ही महिलाओं की रोग प्रतिरोध क्षमता में वृद्धि होती है। जिसमें महिलाओ की औसत आयु में वृद्धि होती है। अत:महिला विकास से जुड़े सामाजिक, आर्थिक, व शैक्षणिक आदि विषयों पर गम्भीर चिंतन की आवश्यकता है।

शोध विधि –

अध्ययन का क्षेत्र – मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के झाबुआ विकासखण्ड को अध्ययन क्षेत्र चुना गया।

अध्ययन का समग्र – झाबुआ विकासखण्ड से छ: गॉव – तलावली, बिसोली, नल्दी छोटी, नवापाड़ा, झुलवानिया,फुटिया गावो को चुना गया।

अध्ययन की इकाई – अनुसूचित जनजाति की महिलाएँ अध्ययन की इकाई है।

निर्देशन का आकार – झाबुआ विकासखण्ड से छ: गॉवो को चुना गया तथा प्रत्येक गॉव से 10 जनजाति महिलाओ को चुना गया इस प्रकार कुल 60 महिलाओ को निदर्शन के रुप मे चुना गया।

शोध विधि – शोध अध्ययन में दैवनिदर्शन विधि द्धारा तथ्यों का संकलन किया गया। जिसके अन्तर्गत अनुसूचित जनजाति महिलाओ का अध्ययन वर्णात्मक शोध विधि द्धारा उद्देश्यो के अनुसार तथा प्रासंगिकता के आधार पर शोध अध्ययन किया गया।

ऑकड़ों का संकलन :

प्राथमिक ऑकड़े – साक्षात्कार अनुसूची,अवलोकन व परिचर्चा, कैमरा, इन्टरनेट माध्यम।

द्धितीयक ऑकड़े – समाचार पत्र , पत्रिकाएँ , पुस्तके , जिला गजेटियर , जर्नल्स।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. अनुसूचित जनजाति महिलाओं की आर्थिक एवं शैक्षणिक स्थिति का

*अधिष्ठाता एवं विभागाध्यक्ष (शिक्षा एवं कौशल विकास अध्ययन शाला) डॉ. बी. आर अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, महू , इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, मानव विकास (गृहविज्ञान) डॉ. बी. आर अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, महू , इन्दौर (म.प्र.) भारत

अध्ययन करना।

2. अनुसूचित जनजाति महिलाओं में स्वास्थ्य एवं स्वच्छता की स्थिती का अध्ययन करना।

परिणाम एवं परिचर्चा – शोध विषय के उद्देश्यो एवं प्राथमिक ऑकड़ो के आधार पर परिणाम एवं परिचर्चा निम्न है –

तालिका क्र 1 : जनजाति महिला का व्यवसाय

विवरण	आवृति	प्रतिशत
गृह कार्य	5	8.33
नौकरी	9	15
खेती व मजदुरी	46	76.67
योग	60	100

उपरोक्त तालिका से जनजाति महिलाओ का व्यवसाय स्पष्ट होता है जिसमें 8.33 प्रतिशत महिलाऍं गृह कार्य करती है, 15 प्रतिशत महिलाऍं नौकरी करती है, 76.67 प्रतिशत महिलाओं का व्यवसाय खेती व मजदुरी है। अर्थात नौकरी करने वाली महिलाओं की संख्या बहुत कम है एवं खेती व मजदूरी करने वाली महिलाओं की संख्या ज्यादा है।

तालिका क्र 2 : परिवार की मासिक आय

विवरण	आवृति	प्रतिशत
6000 –12000	8	13.33
13000 –18000	12	20
19000–24000	17	28..33
25000–30000	23	38.33
योग	60	100

उपरोक्त तालिका से जनजाति महिलाओं के परिवार की मासिक आय व आर्थिक स्थिति स्पष्ट होती है। 13.33 प्रतिशत महिला के परिवार की आय केवल 6000 – 12000 रुपये है , 20 प्रतिशत महिला के परिवार की आय 13000 – 18000 रुपये है, 28.33 प्रतिशत महिला के परिवार की आय 19000–24000 रुपये है एवं 38.33 प्रतिशत महिला के परिवार की आय 25000 30000 रुपये है , इससे यह स्पष्ट होता है की अधिकांश लोग गरीबी व बेरोजगारी से जुंझ रहे है।

तालिका क्र 3 : महिला का शिक्षा स्तर

विवरण	आवृति	प्रतिशत
अशिक्षित	21	35
प्राथमिक	16	26.67
माध्यमिक	19	31.67
उच्चतर	4	6.67
योग	60	100

उपरोक्त तालिका से जनजाति महिलाओं की शैक्षणिक स्थिती स्पष्ट होती है की 35 प्रतिशत महिलाऍं अशिक्षित है तथा 26.67 प्रतिशत महिलाऍं प्राथमिक शिक्षा , 31.67 प्रतिशत महिलाऍं माध्यमिक शिक्षा एवं 6.67 प्रतिशत महिलाओ ने उच्चतर शिक्षा गृहण की है। शिक्षा का निम्न स्तर महिला विकास का बाधक तत्व है जिससे महिला स्वच्छता व स्वास्थ्य की शासकीय योजनाओ का पूर्ण लाभ नही ले पाती।

तालिका क्र. 4 :जनजाति महिलाओं में स्वास्थ्य सम्बन्धित समस्याऍं (बीमारी)

विवरण	आवृति	प्रतिशत
बुखार	17	28.33
सर्दी व खॉसी	9	15
त्वचा संक्रमण	34	56.67
योग	60	100

उपरोक्त तालिका से जनजाति महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिती स्पष्ट होती है 28.33 प्रतिशत महिलाओं को बुखार 15 प्रतिशत महिलाओं को सर्दी व खॉसी , 56.67 प्रतिशत महिलाओ को त्वचा संक्रमण है अर्थात अधिकांश महिलाओ को त्वचा से सम्बन्धित समस्याऍं है जिसका मुख्य कारण अस्वच्छता है परन्तु महिलाऍं इन स्वास्थ्य समस्याओ को तब तक गम्भीरता से नही लेती जब तक वह स्वास्थ्य समस्या कोई बडी बीमारी का रुप ले नही लेती।

तालिका क्र. 5 : कूडे – कचरे का निपटान

विवरण	आवृति	प्रतिशत
कूड़ादान में	31	51.67
खुले में	12	20
खाद गड्ढे में	17	28.33
योग	60	100

तालिका से यह स्पष्ट होता है की 51.67 प्रतिशत महिलाऍं कचरे को कूडेदान में डालती है , 20 प्रतिशत महिलाऍं कचरे को खुले स्थान में डाल देती है जैसे – नाले के आस – पास , ऑगन में , खेत में। 28.33 प्रतिशत महिलाऍं कचरे को खाद गड्ढे मे डालती है। अत: महिलाओ में स्वच्छता के प्रति जागरुकता का अभाव पाया गया है।

तालिका क्र.6 : घरेलू कार्यो में उपयोग के पश्चात् बचा पानी (गन्दे पानी) की निकासी

विवरण	आवृति	प्रतिशत
कच्ची नालियॉ	24	40
पक्की नालियॉ	27	45
खुले में	9	15
योग	60	100

निष्कर्षत: कहा जा सकता है की आज भी ग्रामीण जनजाति महिलाओं में स्वच्छता व स्वास्थ्य की स्थिती चिंताजनक है। अध्ययन से ज्ञात हुआ है की महिलाओं में शिक्षा, स्वच्छता व स्वास्थ्य के प्रति जागरुकता का अभाव है। शिक्षा के अभाव में महिलाऍं जागरुक नही हो पाती एवं अपने अधिकारो तथा शासकीय योजनाओ का लाभ लेने से वंचित रह जाती है। अध्ययन क्षेत्र मे पाया गया की अधिकांश महिलाऍं त्वचा संक्रमण से ग्रसित है जैसे – खाज – खुजली, फोड़े – फुन्सी त्वचा पर लाल चक्कते आदि। महिलाऍं घरेलू कार्यो के साथ–साथ खेती व मजदूरी भी करती है इसलिए महिलाओ को पर्याप्त पौष्टिक आहार ग्रहण करने की आवश्यकता है परन्तु महिलाऍं स्वयं के स्वास्थ्य पर ध्यान नही दे पाती जिससे उनमे शारीरिक कमजोरी जैसे – थकान, चक्कर आना, खून की कमी आदी स्वास्थ्य समस्याऍं है। भारत सरकार द्धारा अधिकांश शासकीय योजनायें महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य व स्वच्छता स्तर में सुधार हेतु चलायी जा रही है, परन्तु शासकीय योजनाओं का सही रुप से क्रियान्वयन न होने के कारण महिलायें योजनाओं का लाभ लेने से वंचित रह जाती हैं। यदि महिलाऍं स्वास्थ्य व स्वच्छता के प्रति जागरुक होगी तो इसका सकारात्मक प्रभाव उनके स्वास्थ्य पर देखने को मिलेंगे। अत: महिलाओं को स्वच्छता व स्वास्थ्य के प्रति जागरुक किया जाना चाहिए। अस्वच्छता के कारण होने वाली शारीरिक समस्यायें तथा दूषित बाह्य वातावरण के दूष्प्रभावों के प्रति उन्हें जागरुक करने की आवश्यकता है।

सुझाव :

1. स्वच्छता एवं स्वास्थ्य को बेहतर रखने हेतु जनजाति महिलाओं का शिक्षित होना आवश्यक है। इसलिए प्रत्येक गावॅ में माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक विद्यालय की व्यवस्था होनी चाहिए।
2. स्वच्छता व स्वास्थ्य हेतु ऐसे संचार माध्यमों का प्रयोग किया जाना चाहिये जो साक्षर व निरक्षर दोनों के लिये उपयोगी हो जैसे- टेलिविजन, रेडियो, नुक्कड़ नाटक, जागरुकता शिविर आदि।
3. प्रत्येक गांव में सामुदायिक शौचालय तथा पानी की उपलब्धता होनी चाहिये।
4. कूड़े-कचरे का सही ढंग से निपटान तथा कचरे से खाद बनाने की प्रणाली को विकसित किया जाना चाहिये।
5. धूम्ररहित चूल्हे का प्रयोग किया जाना चाहिये।
6. किसी भी प्रकार के नशीले पदार्थ के सेवन से बचना चाहिये।
7. घर के भीतर तथा आस-पास गन्दे पानी का जमाव नहीं होने देना चाहिये। गन्दे पानी की निकासी हेतु पक्की नालियो की व्यवस्था की जानी चाहिए।
8. सभी खाद्य पदार्थो को ढककर रखना चाहिये तथा शुध्द व ताजा फल एवं सब्जियों का सेवन करना चाहिये।
9. किसी भी प्रकार की स्वास्थ्य समस्या होने पर इस सम्बन्ध में घर वालों से खुलकर बात करना चाहिये।
10. अन्धविश्वास तथा रुढ़िवादिता पर ध्यान न देते हुये हमेशा प्रशिक्षित डॉक्टर से ही ईलाज कराना चाहिये।
11. महीने में एक बार स्वास्थ्य की जॉच अवश्य कराना चाहिये।
12. गॉव में चल रही योजनाओं के क्रियान्वयन की जानकारी हेतु अधिकारी अथवा कर्मचारी द्वारा महिने में एक बार निरीक्षण करना चाहिएं।
13. महिलाओ को शारीरिक व मानसिक रुप से स्वस्थ्य रहने हेतु प्रतिदिन योग एवं व्यायाम करना चाहिए। अत: प्रत्येक गावॅ में व्यायाम शाला होनी चाहिए।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश जनगणना रिपोर्ट 2011
2. जिला गजेटियर झाबुआ 2011
3. शर्मा डॉ. नीता (2014) 'महिला एवं बाल कानून' ,अर्जुन पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।
4. मिश्रा विभान्शु (2015) 'प्राथमिक शिक्षा एवं महिला साक्षरता' पृष्ठ क्रमांक 135-186, अमेजिंग पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
5. वंदना वोहरा (2015) 'शोध प्रविधि' ओमेगा पब्लिकेशन्स दिल्ली।
6. वर्मा दीपक कुमार (2016) 'नवयुवतियॉ स्वास्थ्य, समस्या एवं समाधान' निशा साइंटीफिक प्रकाशन दिल्ली।
7. सक्सेना डॉ. प्रीती एवं देवी अनीता (जनवरी - जून 2017) 'स्वच्छ भारत अभियान : एक परिदृश्य' ,ISSN 0974-0074,वर्ष 19 अंक 1, पृष्ठ क्रमांक 86 - 89 समाज विज्ञान विकास संस्थान बरेली (उ.प्र.)
8. महेश्वरी मुकेश (2018) 'मध्य प्रदेश सामान्य ज्ञान' वैष्णवी प्रकाशन इन्दौर।
9. www.indiaspendhindi.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

पुलिस प्रशासन और मानवाधिकार

डॉ. भंवरलाल चौधरी*

प्रस्तावना – कानून व्यवस्था को कायम रखने और राज्य में शांति बनाये रखने वाली पुलिस व्यवस्था सदैव ही सम्मान कम और आलोचना के घेरे में ज्यादा दिखाई देती हैं यूँ कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि समाज में पुलिस की छवि सकारात्मक से ज्यादा नकारात्मक रूप में दिखाई जाती हैं। पुलिस का सम्पूर्ण विभाग अक्सर भ्रष्टाचार, आमजनता के साथ अमानवीय व्यवहार, अत्याचार, फिरौती, अपराधियों से सांठ-गांठ तथा फर्जी मुठभेड़ जैसे अमानवीय कृत्यों के लिए जानी जाती हैं। इस कारण समूचे पुलिस प्रशासन की कार्य प्रणाली, कार्यशैली अपने रूखे व्यवहार के कारण पुलिस की छवि खराब है।

स्वतंत्रता के सात दशक से अधिक बीत जाने एवं लोकतांत्रिक परिवेश में काम करने के बावजूद पुलिस को लोकसेवक के रूप में जिस संवेदना, जवाबदेयिता एवं उत्तरदायित्व के साथ अपने कार्यो, दायित्वों तथा भूमिका का निर्वाह करना होता हैं, उन सबका निर्वाह करने में पुलिस वस्तुत: सक्षम एवं सफल नहीं हो पा रही है। लोकतांत्रिक सिद्धान्तों एवं जनअपेक्षाओं की वजह से वर्तमान पुलिस के स्वरूप, कार्यों एवं भूमिका में बदलाव लाकर एक आदर्श तथा जनता के सेवक के रूप में उसकी छवि बनाना नितांत आवश्यक है। मानवाधिकारों के संदर्भ में पुलिस की भूमिका और महत्वपूर्ण हो जाती हैं क्योंकि मानवाधिकार का विषय नागरिकों के अधिकारों से जुड़ा अत्यन्त संवेदनशील मुद्दा है। मानवाधिकार संरक्षण में पुलिस संगठन की भूमिका समझने से पूर्व हमें पुलिस संस्था की संकल्पना को समझना होगा।

पुलिस जैसी महत्वपूर्ण संस्था का अस्तित्व समाज में नया नहीं हैं अपितु पहले से चला आ रहा है। किसी न किसी रूप में जनता की सुरक्षा का दायित्व पुलिस प्रशासन पर ही रहा है। अत: पुलिस विहिन समाज की कल्पना करना ही समाज में अराजकता की व्यवस्था उत्पन्न करना है।

पुलिस का अर्थ – शब्द **'पुलिस'** अति महत्वपूर्ण होते हुए भी परिभाषा विहीन है। इस शब्द को किसी भी पुलिस नियम अथवा अधिनियम में परिभाषित नहीं किया गया है। पुलिस शब्द ग्रीक भाषा के **'पोलिस'** से बना है, जिसका अभिप्राय: **'ऐसी व्यवस्था से है जो कानून के क्रियान्वयन तथा शान्ति व्यवस्था को बनाए रखने से है।'**

वही पुलिस अधिनियम, 1861 की धारा (1) में पुलिस शब्द की परिभाषा अवश्य दी गई हैं लेकिन वस्तुत: इसे परिभाषा नहीं कहा जा सकता हैं, क्योंकि यह पुलिस के शाब्दिक अर्थ को प्रकट नहीं करती है। इसके अनुसार – **'पुलिस शब्द के अन्तर्गत वे सब व्यक्ति आते है जो इस अधिनियम के अन्तर्गत भर्ती किए गए है।'**

प्रत्येक समाज अपने स्थायित्व एवं संगठन को बनाए रखने तथा अपने सदस्यों के मध्य सहभाव स्थापित करने के लिए किसी न किसी मशीनरी का विकास अवश्य करता हैं। पुलिस लोकनियंत्रण का ऐसी ही संस्थागत संगठन है।

'पुलिस' शब्द में ही सुरक्षा और भय दोनों का ही भाव निहित होता है। सुरक्षा का भाव आमजन के हृदय में और भय का भाव अपराधियों के मन में होता हैं। पुलिस प्रशासन समाज में शांति और कानून व्यवस्था बनाए रखने हेतु साम, दाम, दण्ड और भेद के माध्यम से अपने दायित्व निर्वहन करते हुए तात्कालिक परिस्थितियों को नियंत्रित करता है। यही कारण है कि **'पुलिस'** शब्द का अर्थान्वयन भी इस प्रकार किया गया है –

P – Polite (विनम्र)
O – Obedient (आज्ञाकारी)
L – Loyal (विश्वासपात्र)
I – Intelligent (बुद्धिमान)
C – Courageous (साहसी)
E – Efficient (दक्ष)

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 24 से 27 तक में पुलिस शब्द का प्रयोग किया गया है, लेकिन उसे परिभाषित नहीं किया गया है। अत: स्वाभाविक है कि हमें इसका स्वाभाविक अर्थ को ही अंगीकृत करना होगा। जनसाधारण की सुरक्षा, कानूनों की क्रियान्विति तथा शान्ति व्यवस्था बनाए रखने के साथ-साथ पुलिस मानवाधिकारों के संरक्षककर्ता के रूप में भी अपने दायित्व का निर्वहन करती हैं।

पुलिस प्रशासन की विशेषताएं है –

1. पुलिस प्रशासन उतना ही पुराना है, जितनी राज्य की उत्पत्ति।
2. पुलिस प्रशासन का मुख्य कार्य राज्य के कानूनों का क्रियान्वयन सुनिश्चित करना है।
3. शान्ति, सुरक्षा, कानून व्यवस्था, एकता तथा न्याय के लिए पुलिस संगठन आवश्यक है।
4. पुलिस प्रशासन की कुशलता न्याय व्यवस्था की सफलता को प्रभावित करती हैं।
5. भारत में पुलिस व्यवस्था आमजन के मन में भय उत्पन्न करती हैं।
6. पुलिस प्रत्येक युग में कल्याणकारी तथा अत्याचारी दोनों प्रकार की रही हैं।
7. सामाजिक न्याय, समानता तथा स्वतंत्रता के मूल संवैधानिक लक्ष्यों की प्राप्ति में पुलिस मशीनरी पूर्णत: सफल नहीं रही है।
8. मानवाधिकारों की बढ़ती मांग ने पुलिस प्रशासन को प्रभावित किया है।

उपरोक्त विशेषताओं से स्पष्ट है कि पुलिस प्रशासन और समाज में

* PDF (राजनीति विज्ञान) राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

कानून और व्यवस्था बनाए रखने के अतिरिक्त और महत्वपूर्ण दायित्वों और जिम्मेदारी को निभाना पड़ता हैं।

मानवाधिकार – वर्तमान समय में प्रचलित संवेदनशील प्रवृत्तियों में **'मानवाधिकार'** विषय शीर्ष पर आता है। व्यक्ति का व्यक्ति द्वारा शोषण होना ही स्वयं मानव तथा मानवता के लिए प्रश्न खड़ा करता हैं। भारत जैसे विशाल राष्ट्र में मानवाधिकारों के सन्दर्भ सैद्धान्तिक परिदृश्य एवं यथार्थ दोनों ही दृष्टि में व्यापक है।

मानवाधिकार क्या है? मानवाधिकार वह प्राकृतिक अधिकार है जो व्यक्ति को जन्म लेते ही प्राप्त होते है, उसे मानवाधिकार कहते हैं। यहाँ **'मानव'** तथा **'अधिकार'** शब्द की सन्धि है। हम कह सकते है कि मनुष्य को समानता, न्याय, सम्मान तथा स्वतंत्रता के साथ जीने हेतु जो आवश्यक परिस्थितियां चाहिए वे उसके अधिकार है। प्रकृति ने मनुष्यों में कोई भेद नहीं किया है बल्कि यह भेदभाव तो समाज की देन है। अत: कहा जा सकता है कि लिंग, वशं, धर्म, जाति, कुल, स्थान तथा रंग इत्यादि के आधार पर भेद किये बिना सभी मनुष्यों को समान रूप से अधिकार या अवसर प्रदान करना मानवाधिकार है। मानवाधिकार का मुख्य लक्ष्य **'समाज में समानता, स्वतंत्रता, न्याय, भाईचारा, तथा शोषण से मुक्ति का है।'**

भारत के राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के अनुसार 'मानवाधिकारों का अर्थ **जीवन, स्वतंत्रता, समानता और व्यक्ति की गरिमा जैसे अधिकारों से है।'** इन अधिकारों की गारंटी संविधान में दी गई होती है जिन्हें देश के न्यायालयों में मान्यता प्राप्त होती है। **दिसंबर, 1948 को घोषित** मानवाधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय घोषणा का लक्ष्य है, जिसे प्राप्त किया जाना प्रत्येक राष्ट्र का कर्तव्य है।

अत: मानवाधिकार, वे मूलभूत अधिकार है जो कम से कम प्रत्येक देश के नागरिकों को मिलने चाहिए। मानवता और स्वतंत्रता के रक्षक हेतु मानवाधिकारों संकल्पना मजबूत है और इसी परिप्रेक्ष्य मे पुलिस मानवाअधिकार संरक्षणकर्त्ता के रूप में उभरी है। मानवाधिकारों संबंधी समस्याओं, जटिलताओं को हल करने में पुलिस प्रमुख केन्द्र बिन्दु है।

मानवाधिकार के रक्षक के रूप में पुलिस को क्या-क्या नहीं करना चाहिए; जिससे नागरिकों के अधिकारों का हनन ना हो –

गिरफ्तारी के समय –

1. अनावश्यक बल का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
2. गिरफ्तारी के दौरान अभियुक्त तथा परिवारजनों के साथ अभद्र व्यवहार और गाली –गलौच नहीं करना चाहिए।
3. मारपीट एवं अन्य अमानवीय व्यवहार नहीं करना चाहिए।
4. अनावश्क रोक कर नहीं रखना चाहिए।
5. गिरफ्तार व्यक्ति की प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचानें का प्रयास नहीं करना चाहिए।
6. व्यक्तिगत लाभ के लिए गिरफ्तार व्यक्ति के विरूद्ध अनावश्क कारवाही नहीं करनी चाहिए।

तलाशी के समय –

1. तलाशी के समय स्थान के मालिक या व्यक्ति के साथ दुर्व्यवहार नहीं करना चाहिए।
2. सामान्य स्थितियों में रात्रि में तलाशी नहीं लेनी चाहिए।
3. किसी जगह अनाधिकृत प्रवेश नहीं करना चाहिए।
4. महिला एवं बच्चों के साथ दुर्व्यहार नहीं करना चाहिए।
5. किसी भी संदिग्ध या वांछित वस्तु के अलावा उस जगह की अन्य वस्तुओं के साथ छेड़छाड़ नहीं करनी चाहिए।

गिरफ्तारी एवं तलाशी के दौरान पुलिस को क्या-क्या करना चाहिए

गिरफ्तारी के दौरान –

1. गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को गिरफ्तारी का कारण बताना चाहिए।
2. गिरफ्तार व्यक्ति को जमानत संबंधी सूचना देनी चाहिए।
3. गिरफ्तारी के बाद अपराधी की डॉक्टरी जाँच (मेड़िकल) करवानी चाहिए।
4. 24 घण्टे के अन्दर गिरफ्तार व्यक्ति को न्यायालय में पेश किया जाना चाहिए।
5. महिला, बच्चों, बीमार तथा वृद्ध व्यक्तियों का ध्यान रखना चाहिए।
6. गिरफ्तारी एवं विरोध के सम्बन्ध में अन्य कानूननी प्रावधानों का पालन करना चाहिए।
7. न्यायालयों द्वारा जारी दिशा-निर्देशों का पालन करना चाहिए।

तलाशी के दौरान –

1. कानूनी प्रावधानों का पालन करना चाहिए।
2. तलाशी के समय मकान मालिक को तलाशी का कारण बताना चाहिए।
3. जब्त किये गए सामानों की सही-सही सूची बनाकर उसकी एक प्रति मकान मालिक को देनी चाहिए।
4. घर या बन्द स्थान की तलाशी के क्रम में किसी महिला की तलाशी महिला पुलिस द्वारा ही होनी चाहिए।
5. अन्य स्थिति में महिला की शालीनता का पूर्ण ख्याल रखना चाहिए।

अत: हम कह सकते हैं कि मानवाधिकार सभी मनुष्यों को प्राप्त वे अधिकार है जो प्रत्येक व्यक्ति को समानता, स्वतंत्रता, न्याय और गरिमा के साथ जीवनयापन करने का अधिकार प्रदान करता हैं और इन अधिकारों की रक्षार्थ पुलिस प्रशासन महत्ती भूमिका निभा रहा है। कभी-कभी स्वयं पुलिस द्वारा भी नागरिकों के अधिकारों का हनन किया जाता हैं अत: पुलिस को अपनी कार्यप्रणाली और कार्यशैली के दौरान ऊपर वर्णित सभी नियमों का पालन करते हुए नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना अपना परम् कर्तव्य समझ ईमानदारी से इसका निर्वहन करना चाहिए। जिससे देश, समाज में पुलिस की छवि आदर्श और सकारात्मक रूप में परिलक्षित हो जिससे आमजन पुलिस से भय खाने के स्थान पर सुरक्षा का भाव स्थापित कर पाए और पुलिस प्रशासन भी जनता की रक्षक बने भक्षक नही।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. सुरेन्द्र कटारिया,'भारतीय पुलिस : व्यवस्था और विवशता', 2007
2. डॉ. बसन्तीलाल बाबेल,'पुलिस प्रशासन अन्वेषण एवं मानवाधिकार', 2003

****

Impact of Islam on Indian Culture

Sunil Sharma*

Abstract - The religious, social, cultural and other influences of Islam on Indian culture have been discussed in the research paper.
Key words - Toleration, Orthodox, culture, Prohibitions, Downfall.

Introduction - In the beginning when the Muslims came to India, the Hindus offered resistance to them and the Muslims too adopted inimical attitude towards them. Islam and Hinduism both appeared to be rivals. As time advanced, the chasm of enmity was bridged over and both the religions came together. There was a big difference among the followers of the two religions with regard to their life style and culture. Still they adopted the culture of one another and began to live like good neighbors. Islam left a deep impact upon the religious, social and cultural aspects.

Religious Impact of Islam on Indian Culture-Due to constant living together for centuries, the religious orthodoxy began to disappear and mutual forbearance and generosity began to develop. Many Muslim rulers like Mohammad-bin-Tughlaq, Shershah Suri and Akbar treated the Hindus with toleration and friendship and attempted to crate the feeling of a national and united India. The religious men of both the communities taught their followers to wipe out the differences and worship the all powerful God. The movement of Hindus was called Bhakti movement and of Muslims was known as Sufi movement. Both of them emphasized that Hindus and Muslims both are children of one God. Hence they must ignore the differences and live like good neighbors. As Islam did not permit the caste System and differences of Varna. Many Hindus were attracted towards Islam and adopted it. Many Hindus accepted Islam under terror of Muslim rulers and to be exempted from taxes. When the Hindus came in contact with Muslims, they compared their religion with Islam and found that many socio-religious evils had crept in their religion. The roots of superstitions lied deep and the useless and money consuming Yajnas were the outcome of Brahmins selfish feelings. As a result the respectable place of Brahmins was lost. The Hindus understood that the Brahmins befooled them and they began insulting them. Muslims were against Buddhism and its policy of non-violence. Buddhism had to suffer at the hands of Muslims. Thousands of Buddhists were killed by the Muslims. Buddhism gradually met its downfall. Muslims also adopted many Hindu traditions due to constant company of more than three hundred years. The converted Hindus did not leave their social customs and the Hindu traditions were practiced by them. The Purdah system of the Muslims became the mark of aristocracy and was adopted by the Hindus.

Social impact of Islam resulted in rigidness of caste system. The orthodox among the Hindus in order to protect themselves and their religion from the Muslims on slaught, began to follow the caste system and rules very rigidly. Hinduism became all the harder and it became more powerful. The Indian Society adopted affluence and pleasure due to Muslim rule. In the beginning the Muslim aggressors led a hard life of self- restraint. But as they acquired enormous property and riches, they began to lead a life, dedicated to pleasure and many evils crept in them. Drinking, gambling and spending time with women became their routine. As they were at the top of Hindu society, other classes of society began to copy them. In Indian life, the pleasure-seeking life style developed. Before the advent of Muslims, there had been no Purda System in Hindu society. The Muslim Families observed Purda System and hence this tradition compulsorily influenced the Hindu society. The Hindus adopted it due to the changed situation though it damaged their social fabric. They adopted it to save their women from Muslims and evil people. Prevalence of child marriage was also an impact of Muslims on Hindu society. Majority of the Muslim rulers and the Nawabs were keen to marry the Hindu women. They forced the Hindu virgins to marry them or they possessed them as their keep. But they generally spared the married women. So the Hindus began to marry their daughters at an early age. Thus the child marriages were performed on a large scale. It was mostly prevalent among the Rajputs. The Muslims did not give enough freedom to their women and they were put under various social prohibitions. The Muslim Ulemas and the Maulwis assigned them a low place. Feroz Shah Tughlaq banned the going of women to the tombs of religious saints. It affected the Hindus also and they also

*Teacher, R/o Pahariwala P/o Pallanwala, The. Khour, Distt. Jammu (J&K) INDIA

laid down prohibition on their women. After the Muslims conquered India, the Indian people had to bear tremendous sorrows. The Muslims looted the Indians and gave them lot of troubles. They considered the Hindus as the enemies of the Muslim government. They did not give them any opportunity to grow and develop so that their existence could be independent and separate.

Cultural and other influences –When the Muslims came to India, their languages were Arabic and Persian. The main language of the Hindus was Sanskrit and other languages were Pali and Prakrit. The two communities did not understand the languages of one another. They realized the need of a common language. The birth of Urdu was an important outcome of the interaction between Persian and Arabic and the indigenous Indian languages and dialects in the medieval period. When written in Persian Script with the preponderant use of Persian and Arabic phraseology and syntax, it came to be known as Urdu. The Muslims constructed the buildings in their own style. But they employed the Indian soldiers to build them. It clearly reflected the influence of Hindu style in their buildings. A new style of architecture developed which included the styles of Hindus and the Muslims. The art of painting, dancing and music etc. were also mutually influenced. Along with the political downfall, the Hindu art also met its degradation. The royal patronage to Hindu art came to an end. The Muslim aggressors and rulers broke and destroyed the Hindu artifacts, palaces, forts and temples. They also prohibited the construction of new Hindu temples and repair of old temples. It led to tremendous loss of ancient Hindu art. The Muslims destroyed the Hindu education centres of Nalanda, Vikramsila, Taxila, Ujjain and Kashi. The education centres suffered a heavy loss and the Hindu system of education was ruined. The Muslim system of education based on Islamic studies did not meet the religious, socio-cultural and literary traditions of the indigenous population. But in the 13^{th} and 14^{th} century the Hindus were constrained to take up the study of Persian language purely out of political and economic considerations. It opened for them the avenues for employment under the Sultans. The credit for effecting willing participation of the Hindus in this system of education goes largely to Sikander Lodhi. All these shows that the Muslims badly influenced the Hindus. Yet due to contact with them some good and some bad qualities developed among the Hindus.

References : -

1. Indian history by Krishna Reddy
2. NCERT Textbook of Medieval India
3. Pratiyogita darpan
4. Indian History by Agnihotri

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

भारत में सामाजिक धार्मिक सुधार आंदोलन

डॉ. अंजू श्रीवास्तव*

प्रस्तावना – भारत में सामाजिक एवं धार्मिक सुधार व परिवर्तन लाने में सामाजिक धार्मिक आंदोलनों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। यहाँ जितने भी आंदोलन हुए हैं। उनका उद्देश्य सामाजिक और धार्मिक कुरीतियों अंधविश्वासों, रूढ़ियों, अस्प्रश्यता, बाल विवाह, विधवा-विवाह निषेध दहेज, जाति-प्रथा, सती-प्रथा, आदि बुराइयों को समाप्त कर एक स्वस्थ एवं सुदृढ़ समाज की स्थापना करना था। भारत में सुधार आंदोलन का इतिहास बहुत प्राचीन है। जैन धर्म बौद्ध धर्म एवं सिख धर्म का उदय जाति-प्रथा की बुराइयों के कारण गुरुनानक, दादू दयाल रैदास, आदि ने भारतीय समाज में व्याप्त बुराइंयों पर कठोर प्रहार किया और समाज को नयी दिशा दी। मुस्लिम काल में भक्त कवियों ने सामाजिक बुराईयों की ओर लोगों का धयान आकर्षित किया। अंग्रेजों के समय में विवेकानंद स्वामी दमानंद सरस्वती, राजाराम मोहन राय, ईश्वर चन्द्र विद्या सागर, एनीबिसेन्ट, रामकृष्ण परमहंस, डॉ. आत्माराय केशव चन्द्र सेन, रानोड, महत्मा गाँधी, विनोबा भावें तथा जय प्रकाश नारायण, आदि न समाज सुधार के अनेक प्रयन्त किये और कई संस्थाओं की स्थापना की। हम यहाँ भारत में हुए प्रमुख सामाजिक, धार्मिक सुधार आंदोलनों का उल्लेख निम्न प्रकार से करेंगे।

गाँधीजी का सुधार आंदोलन-गाँधीजी ने भारतीय समाज में व्याप्त अंत करने के लिए आंदोलन किया। जिन्होंने 'हरिजन सेवक संघ' की स्थापना की जिसका उद्देश्य दलित वर्ग एवं हरिजनों की सेवा करना तथा उन्हें सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं राजनीतिक अधिकार दिलाना था। गाँधी जी बाल-विवाह, वेश्यावृत्ति, नशाखोरी, दहेज प्रथा, देवदासी प्रथा, परदा प्रथा तथा विधवा विवाह निषेध के विरोधी थे। जिन्होंने हरिजनों की दशा को सुधारने के लिए कुटीर व्यवसायों को बढ़ावा देने, व्यवसायिक प्रशिक्षण देने, स्कूल, छात्रावास, चिकित्सालय आदि खोलने और हरिजनों की बस्तियों की सफाई पर जोर दिया।

सर्वोदय आंदोलन-यह आंदोलन भी-गाँधी के आदर्शो पर आधारित था। यह गरीब एवं अमीर की समानता पर जोर देता है तथा सभी के कल्याण की कामना करता है। यह आंदोलन परदा-प्रथा का विरोधी है। तथा स्त्रियों को जीवन के सभी क्षेत्रों में पुरुषों के समकक्ष दर्जा दिलाने का पक्ष-पाती है। यह आंदोलन सेवा द्वारा सामाजिक कुप्रथाओं एवं बुराइयों को समाप्त करना चाहता है। सर्वोदय के कर्मठ कपिकर्ताओं में बाबू जय प्रकाश नारायण एवं विनोबा भावें प्रमुख हैं।

जन जातीय सुधार आंदोलन-भारतीय जन जातियों की दशा सुधारने के लिए भी कई सामाजिक, धार्मिक सुधार आंदोलन हुए हैं। जिसमें विरसा आंदोलन, ताना भगत आंदोलन, बीर सिंह आंदोलन इत्यादि प्रमुख हैं। मुंडा जाति के बिरसा तथा ओरख जनजाति के ताना भगत आंदोलन का उद्देश्य धार्मिक बुराइयों तथा जादू-टोने व भूत-प्रेत के विश्वासों को समाप्त करना था। ताना भगत के शराब व माँस के प्रयोग पर रोक लगायी व खादी पहनने पर जोर दिया। बीर सिंह आंदोलन गाँधी के आदर्शों पर आधारित था। भीलों में भी भगत आंदोलन चला मोती लाल तेजावत तथा मामा बालेश्वर दयाल ने भीलों में व्यास सामाजिक बुराइयों को समाप्त करने का प्रयास किया। इसी प्रकार के धार्मिक व सामाजिक सुधार आंदोलन मधय प्रदेश की जनजातियों के भी भाऊसिंग राजनेगी तथा राज मोहिनी देवी के नेतृत्व में चला।

राजाराम मोहन राय आधुनिक भारत में मानव समानता का आन्दोलन चलाने वाले प्रथम व्यक्ति राजाराम मोहनराय थे। उनका जन्म 1774 ई. में पश्चिमी बंगाल के हुगली जिले राधानगर गाँव में एक सम्पन्न ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके पिता रमाकान्त राय एक बड़े जमींदार थे। नौ वर्ष की आयु में उन्हें पढ़ने के लिये पटना भेजा गया जहाँ उन्होंने अरबी तथा फारसी भाषाओं का अध्ययन किया। इसके वाद बनारस जाकर उन्होंने संस्कृत का अध्ययन किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने कई यूरोपीय भाषायें भी सीख लीं तथा साथ ही साथ हिन्दू, ईसाई, इस्लाम और सूफी धर्मों का भी पूरा अध्ययन किया। राजाराम मोहनराय एकेश्वरवाद से प्रभावित हुए तथा मूर्तिपूजा के विरोधी हो गये। 1805 ई. से लेकर 1814 ई. तक उन्होंने ईस्ट इण्डिया कम्पनी में कार्य किया। 1814 ई. में वे कलकत्ता में बस गये। हिन्दू धर्म तथा समाज कुरीतियों को दूर करने के उद्देश्य से 1828 ई. में उन्होंने 'ब्रह्म समाज' नामक संस्था की स्थापना की। इस संस्था के माध्यम से उन्होंने अपने विचारों का प्रचार-प्रसार किया।

राजाराम मोहनराय के व्यक्तित्व में प्राच्य एवं पाश्चात्य संस्कृतियों का सुन्दर समन्वय दिखाई देता है। जहाँ एक ओर वे परम्परागत रूढ़ियों एवं पाखण्डों के विरोधी थे वहीं दूसरी ओर पश्चिम के अन्धानुकरण को भी उन्होंने मान्यता नहीं दी। वे हिन्दू धर्म को उसकी कुरीतियों से मुक्त करना चाहते थे ताकि वह राष्ट्र निर्माण के लिये उपयोगी हो सके। हिन्दू धर्म की पतित अवस्था का मुख्य कारण उन्होंने मूर्तिपूजा को बताया। वे प्रारम्भ से ही मूर्तिपूजा के विरुद्ध थे। उनकी मान्यता थी कि मूर्तिपूजा ही समस्त धार्मिक अन्धविश्वासों एवं कर्मकाण्डों की जड़ है। इसके अतिरिक्त राजाराम मोहनराय ने इस धर्म में प्रचलित बहुदेववाद, पुरोहितवाद आदि का खण्डन करते हुए एकेश्वरवाद पर बल दिया। उनका ईश्वर निराकार, निर्विकार तथा सर्वशक्तिमान था। वेदों तथा उपनिषदों से उदाहरण देकर उन्होंने इसे सिद्ध किया तथा इसके समर्थन में उन्होंने कई ग्रन्थ लिखे। 1815 ई. मतें उन्होंने वेदान्तसूत्र का बंगला भाषा में अनुवाद प्रकाशित करवाया। इसके वाद उन्होंने ईश, केन, कंठ तथा मुण्डक आदि उपनिषदों का बंगला और अंग्रेजी अनुवाद किया।

* ऐसोसिएट प्रोफेसर (समाजशास्त्र) आर्य कन्या डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

सभी के माध्यम से उन्होंने यह सिद्ध किया कि निराकार ईश्वर का सिद्धान्त ही हिन्दू धर्म का मुख्य आधार है। उनका कहना था कि किसी भी मत को तर्क की कसौटी पर कसने के बाद ही ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार तर्क के आधार पर धर्म की व्याख्या करने का सिद्धान्त सर्वप्रथम उन्होंने ही भारतीयों के समक्ष प्रस्तुत किया।

राजाराम मोहनराय ने धर्म सुधार से कहीं अधिक समाज सुधार पर बल दिया। वे हिन्दू समाज को उसकी कुरीतियों से मुक्त करना चाहते थे और अपनी संस्था के माध्यम से उन्होंने इसके लिये बहुत कुछ किया। वे अपने सामाजिक विचारों में अत्यन्त उदार थे। उन्होंने जाति-प्रथा, सती-प्रथा, बाल-विवाह, बहुविवाह आदि का विरोध किया। सती प्रथा पर जोरदार प्रहार करते हुए उन्होंने इसे शास्त्रों के विरुद्ध घोषित किया। स्थान-स्थान पर जाकर उन्होंने सभायें की तथा इसके समर्थकों को समझाने का प्रयास किया। यह उनके प्रयासों का ही फल था कि दिसम्बर, 1829 ई. में लार्ड विलियम बेंटिक ने कानून बनाकर सती-प्रथा को अवैद्य घोषित कर दिया। स्त्री स्वतंत्रता के वे पक्षधार थे तथा उन्होंने विधवा-विवाह एवं स्त्रियों को सम्पत्ति का अधिकार दिये जाने की जोरदार वकालत की। वे भारत में अंग्रेजी शिक्षा दिये जाने के भी पक्ष में थे। उनका विचार था कि अंग्रेजी भाषा को पअनाकर ही हम अन्तर्राष्ट्रीय विारों से परिचित हो सकते हैं तथा देश में राष्ट्रीय जागृति उत्पन्न की जा सकती है। इस उद्देश्य से उन्होंने कलकत्ता में 1827 ई. में 'हिन्दू कालेज' की स्थापना करवायी। इसके बाद 'एंग्लो-हिन्दू स्कूल' तथा 'वेदान्त कालेज' की स्थापना हुई।

1821 ई. में उन्होंने 'संवाद कौमुदी' तथा एक वर्ष पश्चात् फारसी मे 'मिरन्तुल अखबार' का प्रकाश करवाया। इन पत्रों के माध्यम से राजाराम मोहनराय ने देश में राजनीतिक एवं सामाजिक चेतना जागृत करने का कार्य किया। पाश्चात्य विचारों को निकट से देखने तथा समझने के उद्देश्य से 1830 ई. में उन्होंने यूरोपीय देशों की यात्रा प्रारम्भ की। समुद्री मार्ग में उनकी मृत्यु हुई।

राजाराम मोहनराय को सच्चे अर्थों में आधुनिक भारत का पिता कहा जा सकता है। उनकी संस्था ने जाति-पति समाप्त करने तथा स्त्रियों की दशा सुधारने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। सती जैसी अमानवीय प्रथा का अन्त भी उन्हीं के प्रयासों का फल था।

प्रार्थना समाज समाज सुधार की दिशा में ब्रह्म समाज पहला आन्दोलन था। शीघ्र ही देश में विभिन्न भागों में सुधारवादी आन्दोलनों का जन्म हुआ। 1867 ई. में बम्बई में 'प्रार्थना समाज' की स्थापना की गयी जिसके प्रमुख नेता महादेव गोविन्द रानाडे (1842-1901) तथा एन.जी. चन्द्रावर्कर (1855-1923) हुए। मद्रास में भी इस संस्था की शाखा स्थापित हुई। प्रार्थना समाज ने पश्चिमी भारत में धर्म तथा समाज सुधार के क्षेत्र में कही कार्य किया जो बगाल में ब्रह्म समाज ने किया था। इसके अनुयायी भी एकेश्वरवाद में विश्वास रखते, मूर्तिपूजा का विरोधा करते, सामाजिक असमानताओं को अस्वीकार करते तथा नारी-स्वतंत्रता के महान् पक्षधार थे। रानाडे ने 1887 में 'भारतीय सामाजिक सभा' नामक संस्था की स्थापना की तथा चौदह वर्षों तक वे इससे सम्बन्धा रहे। उन्होंने कई समाज सुधार आन्दोलनों का नेतृत्व किया। रानाडे भारत को चहुमुखी उन्नति के पथ पर ले जाने के उत्सुक थे तथा उन्होंने सामाजिक सुधार के साथ-साथ राजनीतिक एवं आर्थिक सुधार किये जाने पर भी बल दिया। उनके एक समकालीन नेता दादा भाइ नौराजी ने ब्रिटिश शासन के भारतीय आर्थिक जीवन पर पड़ने वाले घातक परिणामों के प्रति लोगों में जागृति उत्पन्न किया तथा अंग्रेजों द्वारा इस देश के आर्थिक शोषण के विरुद्ध आवाज उठाई। इसी उद्देश्य से उन्होंने 'Poverty and Un-British Rule in India' नामक पुस्तक लिखी। उनके विचारों का भारतीय जन-जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ा।

आर्य समाज भारत पर पाश्चात्य सभ्यता के प्रभावों की प्रतिक्रिया स्वरूप 'आर्य समाज' नामक संस्था का जन्म हुआ जिसके संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती (1824-1883) एक गुजराती ब्राह्मण थे। उनके वचपन का नाम मूलशंकर था। मूलशंकरे पिता शिव के अनन्य भक्त थे। किंवदन्ती है कि एक शिवरात्रि को शिव पूजा की सार्थकता को लेकर उनका अपने पिता से मतभेद हो गया तथा इक्कीस वर्ष की आयु में उन्होंने गृह त्याग कर सन्यास ग्रहण कर लिया। पन्द्रह वर्षों तक एक साधारण सन्यासी के समान ज्ञान की खोज में वे एक स्थान के दूसरे स्थान में घूमते रहे। अन्ततः वे मथुरा पहुँचे तथा वहाँ स्वामी विरजानन्द (ब्रजानन्द) को उन्होंने अपना गुरु बनाया। स्वामीजी से उन्हें वेदों की पूर्ण शिक्षा प्राप्त हुई। अपने गुरु की प्रेरणा से उन्होंन हिन्दू धर्म तथा समाज के सुधार का व्रत लिया। 1875 ई. में उन्होंने आर्य समाज की स्थापना की जिसका मुख्य उद्देश्य वैदिक धर्म एवं संस्कृति का पुनरुद्धार करना था। वेदों का आश्रय लेते हुये उन्होंने यह घोषित किया कि सच्चा ज्ञान वेदों एवं उपनिषदों में ही निहित है, वाकी सब मिथ्या है। वैदिक मन्त्रों की सही व्याख्या प्रस्तुत करने के लिये उन्होंने 1879 ई. में 'सत्यार्थ प्रकाश' नामक ग्रन्थ का प्रकाशन किया। कुछ समय तक के अपनी सस्था के माधयम से विभिन्न स्थानों में जाकर धर्म प्रचार करते रहे। 59 वर्ष की आयु में उनका निधान हो गया।

स्वामी जी तथा उनकी संस्था मुख्य लक्ष्य हिन्दू समाज तथा धर्म की कुरीतियों को दूर करना था। वे मूर्तिपूजा के बचपन से ही विरुद्ध थे। उन्होंने ब्राह्मणों के प्रभुत्व को स्वीकार नहीं किया तथा बहुदेववाद, अवतारवाद, पुरोहिती, पशुबलि, श्राद्ध, मिथ्या कर्मकाण्डों, अन्धाविश्वासों एवं पाखण्डों का जमकर विरोधा किया। मन्दिरों में पूजा करने, तीर्थयात्रा पर जान, व्रत-उपवास रखने आदि की भी उन्होंने आलोचना की। उन्होंने निर्गुण एवं निराकर ब्रह्म की उपासना धयान पद्धति से करने पर बल दिया।

आर्य समाज ने शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया। बालक-बालिकाओं की शिक्षा के निमित्ता अनेक विद्यालयों की स्थापना हुई जिनका नाम 'दयानन्द एंग्लो-वेदिक' रखा गया।

अआर्य समाज ने राष्ट्रीय पुर्नजागरण में भी महान् योगदान दिया। यह दयानन्द ही थे जिन्होंने सर्वप्रथम 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया था। उन्होंने ही विदेशी वस्तुओं को बहिष्कार कर स्वदेशी अपनाने का उपदेश दिया तथा हिन्दाी को राष्ट्र भाषा के रूप में स्वीकार किया। उनके प्रयत्नों से भारतीयो में आत्मविश्वास जागृत हुआ तथा हीनता की भावना समाप्त हो गयी। उनकी शिक्षाओं का प्रभाव कालान्तर में तिलक, लाला लाजपत राय, गोपाल कृष्ण गोखले जैसे राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रमुख नेताओं पर पड़ा तथा उग्रवादी आन्दोलनकारियों ने भी उनसे प्रेरणा की। इस प्रकार स्वामी दयानन्द एक महान् सामाजिक-धार्मिक सुधारक एवं सच्चे राष्ट्रवादी थे।

रामकृष्ण मिशन पाश्चात्य तथा प्राच्य संस्कृतियों का सुन्दर समन्वय हमें रामकृष्ण तथा उनके मिशन में देखने को मिलता है। रामकृष्यण परमहंस (1834-1886) उन्नसवीं शती की एक महान् विभूति थे। उनका जन्म पश्चिमी बंगाल के हुगली जिले में कमारमुकुर नामक गाँव के एक गरीब ब्राह्मण कुल में हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव में ही हुई। बचपन से ही उनमें भक्ति भावना विद्यमान थी। इक्कीस वर्ष की आयु में उन्होंने कलकत्ता में काली देवी के मन्दिर में एक पुजारी के रूप में अपना जीवन प्रारम्भ किया।

उन्होंने स्वयं किसी संस्था की स्थापना नहीं की। अपनी सूक्ष्म दृष्टि से उन्होंने यह अनुभव किया कि सभी धर्मों में सत्यता है तथा एक ईश्वर के ही विविधि नामरूप है-कृष्ण, राम, हरि, ईसा, अल्लाह आदि। मूर्ति पूजा ईश्वर प्राप्ति के मार्ग में एक साधान है। उनका कहना था कि मानव जीवन का मुख्य लक्ष्य ईश्वर की प्राप्ति है और यह अध्यात्मवाद द्वारा संभव है। इसके लिये न तो संसार त्याग की आवश्यकता है और न ही इच्छाओं के दमन की। वे कहा करते थे कि संसार में रहकर कार्य करो तथा इच्छाओं का दमन न करके उन्हें ईश्वर की प्राप्ति में लाग दो।

स्वामी विवेकानन्द उच्चकोटि के वेदान्ती तथा महान् कर्मयोगी थे। उन्होंने हिन्दू धर्म की एक सिरे से व्याख्या की तथा उसकी समस्त उत्कृष्ट परम्पराओं को पुनरुज्जीवित करने का प्रयास किया। उन्होंने सम्पूर्ण देश का भ्रमण किया तथा लोगों में अपने मत का प्रचार किया। अपने सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार करने के उद्देश्य से वे 1893 ई. में अमेरिका के शिकागो नगर में आयोजित 'धर्म-सभा' में भाग लेने के लिये गये जहाँ उन्होंने अत्यन्त ओजस्वी शैली में अपने विचार प्रस्तुत किये। उन्होंने यह घोषित किया कि वेदान्त न केवल हिन्दू जाति का अपितु समस्त मानवता का धर्म है।

थियोसोफिकल समाज प्राचीन भारतीय सभ्यता से प्रभावित विद्धानों ने इस संस्था की स्थापना की थी। इसका प्रारम्भ 1875 ई. में न्यूयार्क में मेडम ब्लावेट्स्की तथा कर्नल ओकाल्ट के द्वारा किया गया था। 1882 ई. में इस संस्था का कार्यालय मद्रास के समीप अड्यार में स्थापित किया गया। इसका उद्देश्य आध्यात्मिकता का प्रचार करना, विश्वबन्धुत्व का प्रचार करना तथा धर्म की मूलभूत एकता पर बल देना था।

भारत में थियोसोफिकल समाज के सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार श्रीमती बेसेन्ट (1847-1933 ई.) के कार्य काल में हुआ। वे 1893 ई. में भारत आई तथा उन्होंने इस संस्था के अध्यक्ष का कार्यभार सम्हाला। वे हिन्दू धर्म तथा दर्शन से पूर्णतया इस संस्था के अधयक्ष का कार्यभार सम्हाला। वे हिन्दू धर्म तथा दर्शन से पूर्णतया प्रभावित थीं और उन्होंने हिन्दू धर्म ग्रहण कर लिया। उन्नीसवीं शर्ती के धर्म सुधार आन्दोलन में उन्होंने महत्वपूर्ण भाग लिया। भारत के प्राचीन धर्म में उनकी गहरी आस्था थी तथा उन्होंने अपना प्रारम्भिक समय हिन्दू धर्म तथा दर्शन, धार्मिक कर्मकाण्ड, पूजा-विधि आदि के पुनरुत्थान में लगाया। उसके प्रयासों के फलस्वरूप प्राचीन हिन्दू धर्म के लोगों की आस्था उत्पन्न हुई। 1898 ई. में उन्होंने वाराणसी में सेन्ट्रल हिन्दू कॉलेज की स्थापना की जहाँ हिन्दू धर्म एवं पाश्चात्य विज्ञान की शिक्षा का प्रबन्धा किया गया। इससे शिक्षा का प्रचार-प्रसार हुआ। कालान्तर में सही संस्था हिन्दू विश्वविद्यालय के रूप में परिणत हो गयी। अड्यार में भी एक प्रसिद्ध शिक्षा केन्द्र स्थापित हुआ जहाँ दुर्लभ संस्कृत ग्रन्थों को संग्रहीत करने के लिये एक पुस्तकालय की स्थापना की गयी।

एनी बेसेन्ट ने भारतीयों का मन में राष्ट्रीय भावना जागृ करने के उद्देश्य से यहाँ होमरूल लीग की स्थापना की तथा प्रथम विश्वयुद्ध के बाद भारतीयों को स्वशासन दिलाने के लिये एक आन्दोलन छेड़ दिया। ब्रिटिश सरकार ने उन्हें कुछ समय के लिये बन्दी बना लिया। बाद में वे कांग्रेस की अधयक्ष भी बनी। कुछ समय के लिय पं. बाल गंगाधार तिलक जैसे लोग भी उनकी संस्था के सदस्य बने रहे। यद्यपि एनी बेसेन्ट की संस्था को जनाधार नहीं मिला तथापि भारत में राष्ट्रीय भावना जागृत करने की दिशा में उन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किये।

उउन्नीसवीं शती के आन्दोलनों का मुख्य उद्देश्य समाज एवं धर्म में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना था। इसका प्रभाव देशव्यापी रहा। इनके फलस्वरूप परम्परागत रूढ़ियों एवं पाखण्डों से लोगों का विश्वास उठ गया। जाति-पाति के बन्धान शिथिल पड़ गये। अस्पृश्यता एवं छुआ-छूत की भावनायें कम हुई तथा कई अन्धविश्वासों का अन्त हुआ। कुछ बुराइयों को समाप्त करने के लिये सरकार की ओर से कानून बनाये गये। लार्ड विलियम बेंटिंग ने सती प्रथा के विरूद्ध कानून बनाया। शिशु-बध की प्रथा भी समाप्त कर दी गयी। 1856 के एक अधिनियम के तहत स्त्रियों को पुनर्विवाह करने का अधिकार प्रदान कर दिया गया। विदेश यात्रा को भी प्रोत्साहन अनेक सुधारकों ने अंग्रेजी भाषा की शिक्षा पर बल दिया था। इसके फलस्वरूप देश में आधुनिक शिक्षा का व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ। शिक्षा के माध्यम से देशवासी पश्चिमी ज्ञान-विज्ञान से परिचित हो गये। उनके मन से दीनता एवं हीनता की भावनायें जाती रही तथा आत्मविश्वास एवं स्वदेश प्रेम की भावनायें जागृत हो गयीं। चूँकि समाज-सुधार केवल किसी जाति या वर्ग विशेष तक सीमित नहीं थे, अत: इनके माध्यम से समस्त देशवासी एकता के सू. में संगठित हो गये।

सुधार आन्दोलनों का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव यह रहा कि लोगों में राष्ट्रीयता की भावना जागृत हुई जिसका प्रस्पु टन कालान्तर से स्वतंत्रता-आन्दोलन के रूप में हुआ।

उन्नीसवीं शती के सुधारकों ने अपने प्रचार-प्रसार शहरी मध्य तथा उच्च वर्गों तक ही सीमित रखा और उन्होंने कृषकों तथा अन्य गरीब जनता के विषय में कुछ भी नहीं कहा। उनकी दूसरी कमी यह भी कि उन्होंने देश के अतीत पर अत्यधिक बल दिया तथा मध्यकाल को मुख्यत: पतन का काल निरूपित किया। प्राचीन भारत के धर्म तथा दर्शन पर अत्यधिक बल दिये जाने के कारण अन्य पक्षों की उपेक्षा हो गयी। सुधार आन्दोलनों के कारण संयुक्त संस्कृति विकसित करने की प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न हो गयी तथा साम्प्रदायिकता की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिला। अतीत की भौतिक तथा सांस्कृतिक उपलब्धियों को न सभी भारतीयों ने समान रूप से गर्व से देखा और न ही उनसे समान रूप से प्रेरणा ग्रहण की। प्राचीन काल तथा धर्मों की अंधप्रशंसा निम्न जाति के लोगों को स्वीकार नहीं हो सकती थी। अतीत कुछ लोगों की ही पैतृक धारोहर बन गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय सामाजिक आन्दोलन, वी.एन. सिंह
2. भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन, के.एल. खुराना
3. समाज शास्त्र, शर्मा एण्ड गुप्ता
4. भारतीय सामाजिक आंदोलन, एम.एस. राव
5. भारती इतिहास में महिलायें, खुराना एवं चौहान

****

फैजाबाद मण्डल में स्वतन्त्रता पश्चात नगरीकरण की प्रवृत्ति : एक भौगोलिक अध्ययन

डॉ. बृज विलास पांडे* राज कुमार यादव**

शोध सारांश – नगरीय जनसंख्या में वृद्धि को नगरीकरण कहा जाता है, इसके साथ-साथ नगरों का क्षैतिज विस्तार भी नगरीकरण का ही अन्य स्वरूप है। स्वतंत्रता पश्चात देश में नगरीकरण के स्तर में पर्याप्त वृद्धि दर्ज की गई। इसका मुख्य कारण नगरों में रोजगार के अवसरों में वृद्धि, नगरों में बेहतर जीवन स्तर की संभावनाएं, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं में वृद्धि आदि को माना जाता है। फैजाबाद मण्डल उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में अवस्थित है। इसका अक्षांशीय एवं देशांतरीय विस्तार 26° 01' 30'' उत्तरी अक्षांश से से 27°19' उत्तरी अक्षांश तथा 80° 58' पूर्वी देशांतर से 83° 05'पूर्वी देशांतर के मध्य है। अध्ययन क्षेत्र का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 17,185 वर्ग किमी है। अध्ययन क्षेत्र के नगरों में भी स्वतंत्रता पश्चात नगरीकरण में वृद्धि दर्ज की गई। जहां एक तरफ नगरीय जनसंख्या में वर्ष 1951 से 2011के मध्य 5 से लेकर 7 गुना तक वृद्धि हुई, वहीं दूसरी तरफ नगरों के क्षेत्रफल में भी लगभग दुगनी वृद्धि दर्ज की गई। अध्ययन क्षेत्र में वर्ष 1961 से 2011 के मध्य जनसंख्या वृद्धि और नगरों के क्षेत्रफल के मध्य ज्ञात किए गए कार्ल पियर्सन के सहसंबंध गुणांक से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में जनसंख्या वृद्धि और नगरों के क्षेत्रफल वृद्धि में सकारात्मक सह-संबंध पाया जाता है।

शब्द कुंजी – नगरीकरण, जनसंख्या वृद्धि, नगरीय जनसंख्या और नगरीय विस्तार।

प्रस्तावना – नगरीय जनसंख्या व उसके अनुपात में वृद्धि होना नगरीकरण कहलाता है। ग्रिफिथ टेलर के अनुसार 'लोगों का गांव से नगरों की ओर स्थानांतरण नगरीकरण कहलाता है।' जी. टी. ट्रिवार्था के अनुसार 'कुल जनसंख्या में नगरीय स्थानों में रहने वाली जनसंख्या के अनुपात को नगरीकरण का स्तर कहा जा सकता है।' किंग्सले डेविस के अनुसार 'कुल जनसंख्या में नगरीय बस्तियों में रहने वाली जनसंख्या के अनुपात या इस अनुपात में वृद्धि को नगरीकरण कहते हैं', उन्होंने बताया कि 'नगरीकरण सामाजिक जीवन के संपूर्ण प्रारूप में क्रांतिकारी परिवर्तन की ओर संकेत करता है, यह अवसर की उपलब्धता, आधारभूत अर्थव्यवस्था और तकनीकी विकास का परिणाम है।'

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर स्पष्ट होता है कि नगरीय जनसंख्या में वृद्धि को नगरीकरण के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है, किन्तु जब नगरों में जनसंख्या का जमाव बढ़ने लगता है, तब नगर अपनी सीमाओं को लांघ कर ग्रामीण क्षेत्रों को भी स्वयं में आत्मसात कर लेते हैं, यह भी नगरीकरण का ही एक अन्य स्वरूप है। इसमे नगरों का क्षैतिज विस्तार होता है। अध्ययन क्षेत्र में स्वतन्त्रता के पश्चात सरकार द्वारा सामाजिक-आर्थिक विकास को गति प्रदान करने से यहाँ नगरीकरण के स्तर में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। स्वतन्त्रता पश्चात यहाँ नगरीय जनसंख्या में वृद्धि के साथ-साथ नगरों के क्षेत्रफल में भी पर्याप्त वृद्धि हुई। इस शोधपत्र का उद्देश्य फैजाबाद मण्डल में स्वतन्त्रता पश्चात नगरीकरण की प्रवृत्ति का विश्लेषण करना है, साथ ही नगरों में जनसंख्या वृद्धि और नगरों के क्षेत्रफल में वृद्धि के मध्य सहसंबंधों को भी ज्ञात करना है।

मानचित्र : 1

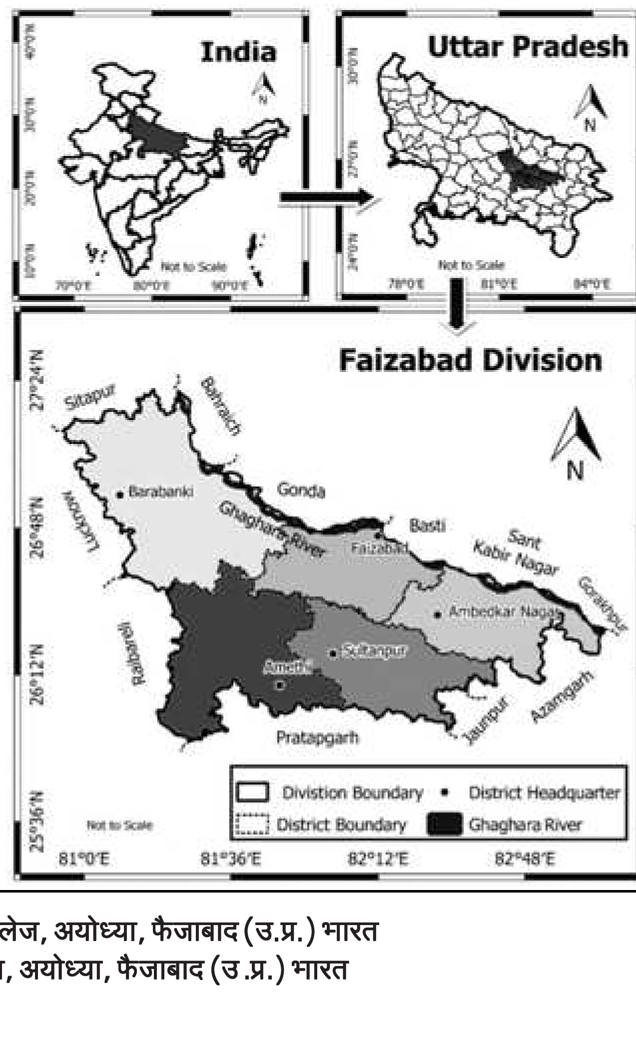

* एसोसिएट प्रोफेसर, के.एस. साकेत पी.जी. कॉलेज, अयोध्या, फैजाबाद (उ.प्र.) भारत
** शोधकर्ता, के.एस. साकेत पी.जी. कॉलेज, अयोध्या, फैजाबाद (उ.प्र.) भारत

फैजाबाद मण्डल उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में अवस्थित है, जिसे पूर्वांचल प्रदेश भी कहा जाता है। इसका अक्षांशीय एवं देशांतरीय विस्तार 26° 01' 30'' उत्तरी अक्षांश से से 27° 19' उत्तरी अक्षांश तथा 80° 58''पूर्वी देशांतर से 83° 05'' पूर्वी देशांतर के मध्य है। अध्ययन क्षेत्र का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 17,185 वर्ग किमी है। प्रशासनिक दृष्टि से फैजाबाद मंडल में बाराबंकी, फैजाबाद, सुलतानपुर, अंबेडकर नगर और अमेठी जनपद सम्मिलित हैं।

शोध परिणाम – वर्ष 1951 में फैजाबाद नगर की जनसंख्या 82,498 थी, जो बढ़कर वर्ष 1961 में 88,296 (7.03 %), वर्ष 1971 में 1,09,806(24.36%), वर्ष 1981 में 1,431,67(30.38%), वर्ष 1991 में 1,76,922(23.58%), वर्ष 2001 में 2,08,162(17.66%) और वर्ष 2011 में 2,56,624(23.28%) हो गई। वहीं फैजाबाद नगर का क्षेत्रफल 1961 में 51.18 वर्ग किलोमीटर था, जो बढ़कर वर्ष 1971 में 51.17,वर्ष 1981 में 63.39,वर्ष 1991 में 63.39,वर्ष 2001 में 63.39 और वर्ष 2011 में 65.94 वर्ग किलोमीटर हो गया।

तालिका-1: फैजाबाद नगर में नगरीकरण की प्रवृत्ति (वर्ष1951-2011)

जनगणना वर्ष	क्षेत्रफल वर्ग (किमी में)	जनसंख्या	जनसंख्या वृद्धि	जनसंख्या वृद्धि दर (% में)
1951		82,498	24,866	43.15
1961	51.18	88,296	5,798	7.03
1971	51.17	109,806	21,510	24.36
1981	63.39	143,167	33,361	30.38
1991	63.39	176,922	33,755	23.58
2001	63.39	208,162	31,240	17.66
2011	65.94	256,624	48,462	23.28

स्रोत: भारतीय जनगणना, 2011

बाराबंकी नगर की जनसंख्या वर्ष 1951 में 28,958 थी, जो बढ़कर वर्ष 1961 में 34,334(18.56%), वर्ष 1971 में 43,385(26.36%), वर्ष 1981 में 62,216(43.40%),वर्ष 1991 में 77,234(24.14%), वर्ष 2001में 92,687(20.01%) और वर्ष 2011में 14,7550 (59.19%) हो गई। इसी प्रकार फैजाबाद नगर का क्षेत्रफल वर्ष 1961 में 8.62 वर्ग किलोमीटर था, जो बढ़कर वर्ष1971 में 8.67,वर्ष 1981 में 8.6,वर्ष 1991 में 8.67,वर्ष 2001 में 9.38 और वर्ष 2011 में 17.97 वर्ग किलोमीटर हो गया।

तालिका-2: बाराबंकी नगर में नगरीकरण की प्रवृत्ति (वर्ष 1951-2011)

जनगणना वर्ष	क्षेत्रफल वर्ग (किमी में)	जनसंख्या	जनसंख्या वृद्धि	जनसंख्या वृद्धि दर
1951		28,958	6,118	26.79
1961	8.62	34,334	5,376	18.56
1971	8.67	43,385	9,051	26.36
1981	8.67	62,216	18,831	43.40
1991	8.67	77,234	15,018	24.14
2001	9.38	92,687	15,453	20.01
2011	17.97	1,47,550	54,863	59.19

स्रोत: भारतीय जनगणना, 2011

तालिका-3:सुलतानपुर नगर में नगरीकरण की प्रवृत्ति (वर्ष 1951-2011)

जनगणना वर्ष	क्षेत्रफल वर्ग (किमी में)	जनसंख्या	जनसंख्या वृद्धि	जनसंख्या वृद्धि दर
1951		17,496	4,370	33.29
1961	6.99	26,081	8,585	49.07
1971	6.99	32,330	6,249	23.96
1981	6.99	48,782	16,452	50.89
1991	12.00	76,533	27,751	56.89
2001	12.01	1,00,065	23,532	30.75
2011	14.95	1,15,944	15,879	15.87

स्रोत: भारतीय जनगणना, 2011

सुलतानपुर नगर की जनसंख्या वर्ष 1951 में 17,496 थी, जो बढ़कर वर्ष 1961 में 26081(49.07%), वर्ष 1971में 32,330(23.96%), वर्ष 1981 में 48,782(50.89%), वर्ष 1991 में 76,533(56.89%), वर्ष 2001 में 1,00,065(30.75%) और वर्ष 2011 में 1,15,944(15.87%) हो गई। वही सुलतानपुर नगर का क्षेत्रफल वर्ष 1961 में 6.99 वर्ग किलोमीटर था, जो बढ़कर वर्ष 1991 में 12, वर्ष 2001 में 12.1 और वर्ष 2011 में 14.95 वर्ग किलोमीटर हो गया।

तालिका-4: अकबरपुर नगर में नगरीकरण की प्रवृत्ति (वर्ष 1951-2011)

जनगणना वर्ष	क्षेत्रफल वर्ग (किमी में)	जनसंख्या	जनसंख्या वृद्धि	जनसंख्या वृद्धि दर
1951		8,206	830	11.25
1961	3.26	9,563	1,357	16.54
1971	3.26	12,516	2,953	30.88
1981	5	19,469	6,953	55.55
1991	5	26,878	7,409	38.06
2001	5	33,906	7,028	26.15
2011	7.47	1,11,447	77,541	228.69

स्रोत: भारतीय जनगणना, 2011

अकबरपुर नगर की जनसंख्या वर्ष 1951 में 8206 थी, जो बढ़कर वर्ष 1961 में 9563(16.54%), वर्ष 1971 में 12,516(30.88%), वर्ष 1981 में 19,469(55.55%), वर्ष 1991में 26,878(38.06%), वर्ष 2001 में 33,906(26.15%) और वर्ष 2011 में 1,14,047 (228.69%) हो गई। इसी प्रकार अकबरपुर नगर का क्षेत्रफल वर्ष 1961में 3.26 वर्ग किलोमीटर था, जो बढ़कर 1981 में 5 वर्ग किलोमीटर और वर्ष 2011 में 7.47 वर्ग किलोमीटर हो गया।

तालिका5: अमेठी नगर में नगरीकरण की प्रवृत्ति (वर्ष 1951-2011)

जनगणना वर्ष	क्षेत्रफल वर्ग (किमी में)	जनसंख्या	जनसंख्या वृद्धि	जनसंख्या वृद्धि दर
1981	0.72	7,132	- -	
1991	0.72	10,661	3,529	49.48
2001	2.00	12,836	2,175	20.40
2011	2.00	13,849	1,013	7.89

स्रोत: भारतीय जनगणना, 2011

अमेठी नगर की जनसंख्या 1981 में 7132थी, जो बढ़कर 1991 में 10661(49.48%), वर्ष2001 में 12,836(20.40%) और वर्ष 2011में 13849(7.89%) हो गई। इसी प्रकार अमेठी नगर का क्षेत्रफल जो कि वर्ष 1981में 0.072 वर्ग किलोमीटर था, वह बढ़कर वर्ष 2001 में 2 वर्ग किलोमीटर हो गया।

उपर्युक्त तालिकाओं के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि स्वतंत्रता पश्चात अध्ययन क्षेत्र के नगरों में अत्यंत तीव्र गति से जनसंख्या वृद्धि हुई है, किंतु वर्ष 1991 के पश्चात सुलतानपुर नगर को छोड़कर सभी नगरों में जनसंख्या वृद्धि दर में कमी दर्ज की गई है, वहीं सुलतानपुर नगर में जनसंख्या वृद्धि दर में कमी वर्ष 2001 के पश्चात देखने को मिलती है। इसके विपरीत जिस अनुपात में अध्ययन क्षेत्र में नगरीय जनसंख्या में वृद्धि हुई है, उस अनुपात में अध्ययन क्षेत्र के नगरों का क्षैतिज विस्तार नहीं हो सका है। जहां वर्ष 1951 से 2011 के बीच जनसंख्या में पांच से सात गुना तक वृद्धि हुई है, वहीं उसके सापेक्ष नगरों के क्षेत्रफल में लगभग दुगनी वृद्धि ही दर्ज हुई है। जिस कारण अध्ययन क्षेत्र के नगरों में जनसंख्या के वितरण और नगरों के क्षेत्रफल के मध्य असंतुलन निरंतर बढ़ रहा है, जिसका नकारात्मक प्रभाव नगरों में लोगों के जीवन स्तर और उनकी गुणवत्ता पर पड़ रहा है।

जनसंख्या वृद्धि एवं नगरों के क्षैतिज विकास के मध्य सह-संबंध - शोधकर्ता द्वारा इस शोधकार्य हेतु परिकल्पना निर्धारण किया गया है कि जनसंख्या वृद्धि एवं नगरों के क्षैतिज विकास के मध्य धनात्मक सह-संबंध पाया जाता है। इस परिकल्पना की पुष्टि हेतु शोधकर्ता द्वारा वर्ष 1961 से वर्ष 2011 के मध्य अध्ययन क्षेत्र के नगरों की जनसंख्या वृद्धि एवं नगरों के क्षेत्रफल के मध्य कार्ल पियर्सन का सह-संबंध गुणांक ज्ञात किया, जिसमें पाया गया कि अध्ययन क्षेत्र में जनसंख्या वृद्धि और नगरों के क्षैतिज विस्तार के मध्य धनात्मक सह-संबंध पाया जाता है। जहां सर्वाधिक सह-संबंध 0-958328 सुलतानपुर नगर में देखने को मिलता है, क्योंकि यहाँ परिवहन सुविधाओं का पर्याप्त विकास हुआ है, वहीं न्यूनतम सह-संबंध +0-861626 फैजाबाद नगर में देखने को मिलता हैं, इसका प्रमुख कारण फैजाबाद नगर के उत्तर में प्रवाहित होने वाली घाघरा नदी द्वारा फैजाबाद नगर के क्षैतिज विस्तार को बाधित करना माना जा सकता है।

तालिका-6:जनसंख्या वृद्धि एवं नगरों के क्षैतिज विकास के मध्य सहसंबंध,(वर्ष 1961-2011)

नगर	वर्ष 1951 से 2011 के मध्य जनसंख्या वृद्धि एवं नगरों के क्षैतिज विकास के मध्य कार्ल पियर्सन सह-संबंध गुणांक
फैजाबाद	+0-861626
बाराबंकी	+0-880572
सुलतानपुर	+0-958328
अकबरपुर	+0-922214
अमेठी	+0-863555

निष्कर्ष - स्वतंत्रता पश्चात जिस प्रकार सरकार द्वारा देश में नियोजित विकास हेतु प्रयास किए गए, उसका सकारात्मक प्रभाव अध्ययन क्षेत्र के नगरों पर भी पड़ा। नियोजित विकास के परिणामस्वरूप अध्ययन क्षेत्र के नगरों में रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई, जिस कारण व्यापक पैमाने पर ग्रामीण क्षेत्रों से लोग नगरों में बसने लगे, जिससे नगरों की जनसंख्या में अभूतपूर्व वृद्धि होने लगी। सरकार ने नगरों में आवासों की समस्या को देखते हुए बड़े पैमाने पर नगरों में नई आवासीय कॉलोनियों का निर्माण किया तथा वहां नागरिक सुविधाओं की उपलब्धता को सुनिश्चित किया, इसके लिए सरकारों द्वारा नगरों के सीमांत क्षेत्रों पर स्थित गांवों को भी नगरीय क्षेत्रों में सम्मिलित कर लिया गया, जिसके फलस्वरूप नगरों का क्षैतिज विस्तार होने लगा। अध्ययन क्षेत्र में जैसे-जैसे नगरीय जनसंख्या में वृद्धि हुई वैसे-वैसे नगरों का भी पर्याप्त क्षैतिज विस्तार हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Ashish Bose (1973),"Studies in India's Urbanization 1901–1971Bombay and New Delhi": Tata McGraw-Hill Publishing Co. Ltd.
2. Kamaldeo Narain Singh (1978),"Urban Development in India", Abhinav Publications.
3. Nandy, s. N. (1988), "Urbanization in India – Past, Present and Future Consequences" National Institute of Urban Affairs. The State of India's Urbanization. New Delhi.
4. Rao, N.M.S.A. (1970),"Urbanization Community on a Metropolitan Fringes", New Delhi, Orient Longman Ltd.
5. Singh, R.L. (1971),"India-A Regional Geography", National Geographical Society of India, Varanasi.
6. Wheeler, S. M., & Beatley, T. (2014),"Sustainable Urban Development Reader", Rout ledge.

****

पुरातात्विक व सांस्कृतिक नगरी मल्हार के प्रमुख शिलालेख एवं संग्रहालय का ऐतिहासिक अध्ययन

मंजू साहू* डॉ. रामरतन साहू**

शोध सारांश – दक्षिण कोसल की प्राचीन राजधानी का परिधान लिए ऐतिहासिक स्थल मल्हार पुरातन सामग्रियों, अभिलेखों एवं मुद्राओं से भरा हुआ है। इस भू-भाग की पाषाण कला पग-पग मुखरित है, यहां की कला, संस्कृति एवं धार्मिक सहिष्णुता दूर-दूर तक फैली हुई है। इस स्थल की धार्मिक एवं पौराणिक गाथाओं से संबंधित अनेक पाषाण प्रतिमाएं सैलानियों का मन मोह लेती है। यहां के प्राचीन मंदिर, मठ, विहार एवं गढ़ आदि की शिल्पकला हमारी प्राचीन संस्कृति की गौरवगाथा को सजीवता प्रदान कर रही है।
शब्द कुंजी– ब्राम्ही, भावाभिव्यक्ति, शिलापट्टी, कलाकृतियां, चतुर्भुजी।

प्रस्तावना – किसी भी स्थल में उत्कीर्ण लेख ही अभिलेख की श्रेणी में आता है। भाषा एवं लिपि इस लेख के प्रमुख माध्यम होते हैं। स्वाभाविक है, कि भाषा एवं लिपि में से सर्वप्रथम भाषा का ही जन्म हुआ होगा, कालांतर में लिपि का जन्म हुआ होगा। भाषा मानव के भावाभिव्यक्ति का सरल माध्यम है। इसका प्रारंभिक स्वरुप क्या था, इसका स्पष्टीकरण नहीं हो पाया है। समय के साथ-साथ भाषा का भी विकास हुआ, आगे चलकर इसे भिन्न-भिन्न नाम दिया गया, यथा – पाली, प्राकृत इत्यादि। इसी प्रकार अपने भाव-रूपी भाषा को अभिव्यक्त करने के लिए लिपि का विकास हुआ एवं उसे भिन्न-भिन्न नाम दिए यथा ब्राम्ही व खरोष्ठी इत्यादि। कालांतर में लेखन कला के साथ ही अभिलेखों का आविर्भाव हुआ। अभिलेख प्राय: पत्थरों को खोद कर एवं धातु पर उत्कीर्ण कर लिखे गये। प्राचीन भारतीय इतिहास के निर्माण में इन अभिलेखों का विषेष महत्व है। उत्कीर्ण लेख पत्थर पर उत्कीर्ण हो अथवा ताम्रपत्र, भोजपत्र आदि पर उत्कीर्ण हो, इसे संग्रह करके जिस स्थान पर रखा जाता है, उस स्थान को संग्रहालय कहा जाता है। मल्हार नगर के पुरावशेषों के महत्व को देखते हुए, केन्द्रीय शासन के पुरातत्व विभाग द्वारा इन्हें संरक्षण प्रदान करने के लिए इस नगर में एक संग्रहालय की स्थापना की है। यहां स्थित संग्रहालय के प्रागंण में बहुसंख्यक प्रतिमाएं, शिलापट्टी, द्वार स्तंभ एवं कलाकृतियां संग्रहित है। इन सभी प्रतिमाओं का उल्लेख करना संभव नहीं होगा बल्कि इसके कलात्मक एवं पुरातात्विक पहलुओं को उजागर करना युक्ति संगत होगा। इस संग्रहालय में प्राचीन काल में विभिन्न प्रतिमाएं प्रतिस्थापित है। इसी के साथ मंदिरों व महलों के भग्नावषेष भी इस स्थल में व्यापक रूप से प्राप्त हुआ है। यहां से प्राप्त प्रतिमाओं से स्पष्ट होता है कि प्राचीन समय में यहां बौद्ध एवं जैन धर्म का व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ था।

मल्हार के समीपस्थ भू-भाग से कुछ स्वर्ण मुद्राएं 1942 ई, में चकरबेड़ा से प्राप्त हुआ है। इसमें मात्र दो मुद्राओं का प्रकाशन वर्तमान समय तक हो पाया है।[1] इस स्थल से प्राप्त मुद्राओं का संबंध रोमन राजाओं से रहा है। वर्तमान समय में ये दोनों सिक्के रायपुर के मंहत घासीदास संग्रहालय में है।[2] पूर्व समय में चकरबेड़ा, बूढ़ीखार व जैतपुर का क्षेत्र मल्हार नगर के सीमा के अंतर्गत आता था। यहां से तांबे के बहुतायत सिक्के प्राप्त हुए हैं। स्कंदमाता की अलंकरण युक्त प्रतिमा विशेषतया महत्वपूर्ण है। यह प्रतिमा लगभग 150 सेंटीमीटर एक ऊंचे पाषाण पर अशोक वृक्ष के नीचे आकर्षक मुद्रा में खड़ी माता पार्वती, बाएं भाग में बच्चे को गोद लिए हुए प्रदर्षित किया गया है। माता का बायां हाथ बच्चे के पृष्ठ भाग से आकर उसके कटिभाग के मध्य में अवस्थित है। माता के दाएं हाथ में कमल विराजित है।जिसमें क्रमश: कमल पत्र, कली एवं पुष्प को त्रिशुलाकृति में दर्शाया गया है।[3] इनके मस्तक में केश बंध अलंकृत है। इसके साथ ही कलात्मक साड़ी का सुदंर चित्रांकन किया गया है। माता स्कंदमाता के मुख मुद्रा में मातृत्व का भाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो रहा है। इस प्रतिमा में मातृत्व भाव का सजीव चित्रण किया गया है।तदनुरूप बाल स्कंद की सहज शव का सुदंर अंकन है।[4] इस प्रतिमा का शारीरिक सौष्ठव, त्रिभंग मुद्रा,अलंकृत वस्त्र विन्यास एवं अन्य विविध अलंकरणों का कलात्मक समन्वय दर्शनीय है, जो सर्वथा आकर्षक के साथ ही स्वभाविक भी है। इस प्रतिमा में बालक की सौम्यता, कलाकार की विशेष कलात्मक रूचि को परिभाषित करती है।

विवेचनों के आधार पर यह प्रतिमा अद्वितीय मानी जाती है। प्रतिमा-विज्ञान की दृष्टिकोण से इस प्रतिमा का निर्माण काल छठवीं सदी के आरंभ को माना जा सकता है। उक्त प्रतिमा के विषय में विद्वानों ने अपना मत अलग-अलग प्रस्तुत किया है– बौद्ध धर्मावलंबियों द्वारा बालक को राहुल एवं यशोधरा को माता माना गया है। एक अन्य मत के अनुसार वृक्ष के नीचे माया देवी अपने पुत्र गौतम को लिए खड़ी हुई है। इसी प्रकार जैन मतावलंबियों द्वारा इसे यक्षी अंबिका माना गया है, जो आम्रवृक्ष के नीचे बालक को गोद में लिए खड़ी हुई है।

अभिलिखित चतुर्भुजी विष्णु प्रतिमा – मल्हार संग्रहालय में चतुर्भुजी विष्णु की अभिलिखित पाषाण निर्मित प्रतिमा लगभग 160 सेंटीमीटर में

* शोधार्थी, डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** सह प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग) भारत

संग्रहित है। इसे चारों दिशा से उकेर कर बनाया गया है। इस प्रतिमा के अभिज्ञान के विषय में विद्वानों का मत अलग-अलग है। प्रोफेसर कृष्णदत्त बाजपेयी ने उक्त प्रतिमा को चतुर्भुजी माना है। इसके दण्ड भाग में मौर्यकालीन ब्राह्मी लिपि में लेख उत्कीर्ण है। इस प्रतिमा लेख से पता चलता है कि इस प्रतिमा की स्थापना पर्णदत्त की भार्या शरद्धाजी ने करवाया था। भारतवर्ष में अब तक प्राप्त अभिलिखित विष्णु प्रतिमाओं में यह प्रतिमा सबसे प्राचीन है। इस प्रतिमा का निर्माण काल ईसा पूर्व 200 माना गया है।[5] पूर्व समय में प्रतिमा को चारों ओर से उकेर बनाने का प्रथा थी। यक्षों की भी अन्य कई इसी प्रकार की अन्यत्र प्राप्त हुई है। प्रतिमा के चारों हाथों में क्रमश: चक्र,शंख,गदा प्रमुख है।

शैव प्रतिमाएं – भारत वर्ष के प्रचीनतम कला में शिव जी का शिल्पांकन अत्यंत प्राचीन है। मोहन जोदड़ो की एक मुहर पर विविध पशुओं से युक्त एक योग पुरुष की प्रतिमा प्राप्त हुआ है जो अनुमानत: पशुपति वाक्य की सार्थकता को प्रदर्शित करता है। शरतीय प्राचीन सिक्कों पर शिव जी के प्रतीक चिन्ह का चित्रांकन मिलता है। मल्हार से प्राप्त शिव जी के प्रतिमाओं को चार भागों में वितरित किया गया है। प्रथम भाग में मंगलकारी शांत प्रतिमाएं, द्वितीय भाग में दक्षिणापथ की प्रतिमाएं, तृतीय भाग में नृत्यरत् प्रतिमाएं तथा चतुर्थ शग में संहारक प्रतिमाएं या अमंगलकारी प्रतिमाएं है।

मंगलकारी शांत मुद्रा वाली प्रतिमा के अंतर्गत सरल, शांत एवं सौम्य अनुग्रह मूर्तियां आती है। मंगलकारी मूर्तियों के अंतर्गत नीलकंठ, महेश्वर, महादेव, वृषभ वाहन शिव, उमा- महेवर, कल्याण-सुदंर, अर्द्धनारीश्वर, हरिहर आदि मंगलकारी रुप है। रावणानुग्रह, विघ्नेश्वर अनुग्रह के संबंध में भी उल्लेख मिलता है। शरतीय कला शिव के प्रमुख स्वरुप में नटराज शिव को माना गया है। नृत्यरत नटराज काल-भैरव एवं अंधकासुर वध आदि संहार व अमंगलकारी शिव के रौद्र रुप मल्हार से प्राप्त हुआ है।[6]

नटराज की प्रतिमा – मल्हार स्थित स्थानीय संग्रहालय में शिव जी का एक रौद्र रूप वाली नटराज की प्रतिमा स्थित है। इस प्रतिमा के दाएं हाथ में त्रिशुल के साथ ही बाण, अक्षमाला, परशु इत्यादि को प्रदर्शित किया गया है। बाएं हाथ में खट्वांग, सनालपुष्प, कपाल एवं बीजपूरक, कपाल आदि धारण किए हुए हैं। इस प्रतिमा में नटराज जी के चार हाथों का प्रदर्शन किया गया है। दायां निचले हाथ को उपदेश देने के मुद्रा में बनाया गया है। प्रतिमा में शिव जी को आभूषण धारण किए हुए दिखाया गया है, इनके गले में पुष्प के माला का सुदंर अंकन किया गया है, जिसकी लंबाई गले से लेकर घुटनों तक है। इनके मस्तक पर अनेक रत्नों से युक्त मुण्डमाल है, जो जटाजूट से अलंकृत है। प्रतिमा में नटराज जी बायां पांव स्थिर मुद्रा में एवं दायां पांव थोड़ा उठा हुआ है व नृत्यरत् मुद्रा में है।

उमा-महेश्वर की प्रतिमा – मल्हार के संग्रहालय में स्थित इस प्रतिमा को हमगौरी प्रतिमा के नाम से भी जाना जाता है। इस प्रतिमा में अनेक भेद भी पाया जाता है। यह प्रतिमा चतुर्भुजी है व नंदी के ऊपर सवार है। माता उमा इस प्रतिमा में शिव जी के बाएं जंघा पर ललितासन की मुद्रा में आसीन है व शिव जी माता उमा को अपने बाएं हाथ से आलिंगन कर रहे हैं।

शिव जी के दाएं हाथ में त्रिशुल धारण किए हुए हैं एवं बाएं हाथ से माता उमा को आलिंगन किए हुए हैं। माता पार्वती गले में माणिक्य माला धारण किए हुए व इनके कमर में मणि मेखला स्थित है। माता अपने हाथों एवं पैरों में अनेक अलंकृत आभूषण धारण किए हुए हैं। माता का दाहिना हाथ शिव जी के दाएं कंधे पर है। माता का दायां पांव घुटने से मुड़ कर बाएं पांव पर रखा है व दाएं हाथ में दर्पण लिए हुए हैं। शिव जी की एक हाथ नीचे की ओर आकर लटक रहा है। माता का बायां पैर व शिव जी का दायां पैर घुटनों तक मुड़ा हुआ है। इन दोनों के पैरों के मध्य नंदी एवं नृत्यरत मृद्रा में भृंगी की प्रतिमा है। दोनों के पैरों के नीचे पाद पीठ पर कटारधारी पुरूष एवं सिंह की प्रतिमा है, इसी के साथ नीचे हाथ जोड़े भक्तगण दिखाई दे रहे हैं।

इसी शंति संग्रहालय में एक अन्य प्रतिमा है, जिसमें भी माता पार्वती के साथ ही शिव जी की प्रतिमा भी शोभायमान है। यह प्रतिमा भी चतुर्भुजी आकार में है। शिव जी के दाहिने हाथ में त्रिशुल व बाएं हाथ में नाग धारण किए हैं। इस प्रतिमा में भी माता पार्वती के हाथ दर्पण है। माता ने कानों में गोल कुण्डल, कण्ठहार, चार लड़ियों वाली हार, बाजूबंध, पैरों में पायल धारण किए हुए हैं। शिव जी की प्रतिमा में भी समान अलंकरण है, इन दोनों का मात्र केश विन्यास भिन्न-भिन्न आकृति की है।[7] माता के केश विन्यास में मुक्त गुम्फित तीन ललाटिक आभूषण सुंदरता के चित्रित किया गया है। पाद पीठिका के नीचे दोनों किनारों पर नंदी एवं सिंह की आकृतियां अंकित है। दोनों के प्रतिमाओं के पैरों के मध्य भृंगी की छोटी सी प्रतिमा है। नीचे मध्य में दो मानव व नारी की आकृतियां अंकित है।

वैष्णव प्रतिमाएं – मल्हार नगर से प्राप्त ईसा पूर्व द्वितीय सदी की अभिलिखित चतुर्भुजी विष्णु प्रतिमा विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस प्रतिमा को भारत में सबसे प्राचीन अभिलिखित पूज्य प्रतिमा मानी गयी है। ईसा पूर्व छठवीं सदी से तेरहवीं सदी तक के मध्य के काल में अनेक राजवंशों यथा पाण्डु वंश एवं कल्चुरी वंश के राजाओं ने अनेक विष्णु मंदिरों व प्रतिमाओं का निर्माण कराया है। इसके साथ ही सूर्य, शिव आदि देवताओं का सम्मिलित रूप से प्रतिमाओं को मूर्त रूप प्रदान किया गया है। इसी कारण इस समय की प्रतिमाओं का नाम हरिहर, योगनारायण, त्रिविक्रम लक्ष्मीनारायण, सर्वतोभद्र एवं हरिहरहरिणागर्भ आदि की प्रतिमाएं मिलती है।

चतुर्भुजी विष्णु – भागवान विष्णु की यह प्रतिमा संग्रहालय में स्थानक मुद्रा में प्रदर्शित है। उनकी मुखाकृति में शांत, सरल एवं सहज भाव व्यक्त होता है। इस प्रतिमा में विष्णु जी मस्तक में मुकुट धारण किए हुए हैं, साथ ही कान में चक्राकार कुण्डल, चार लड़ियों वाली माला गले में वनमाला, कमरबंध, कंकण एवं पैर में नुपूर पहने हुए हैं। सिर के पीछे भाग में चक्राकार सुंदर प्रभामंडल है। इस प्रतिमा में विष्णु जी के चार हाथों का प्रदर्शन किया गया है। विष्णु जी के ऊपर के दोनों हाथों में क्रमश: गदा पद्म एवं नीचे के दोनों हाथों में चक्र व शंख धारण किए हुए हैं। इनके नीचे के हाथों में दायीं ओर वरण एवं बायीं ओर का हाथ खांड़ित है।

शेषशायी विष्णु – मल्हार स्थित संग्रहालय की सफाई के दौरान शेषशायी विष्णु जी की एक सुदंर प्रतिमा मिली है। यह प्रतिमा मुलायम पत्थर से बना है एवं हल्का लाल व पीला रंग से बना है। इस प्रतिमा में विष्णु जी पांच कणों से युक्त शेष शैया के ऊपर विराजित हैं। माता लक्ष्मी विष्णु जी के पांव दबा रहीं हैं।[8] इनके नाभि कमल के ठीक ऊपर ब्रह्म जी विराजमान हैं। विष्णु जी के एक हाथ में सनाल कमल एवं दूसरे हाथ में चक्र धारण किए हुए हैं।

इन प्रमुख मूर्तियों के अतिरिक्त संग्रहालय में सैकड़ों की संख्या में असंख्य मूर्तियां बिखरी हुई पड़ी हुई है। उपर्युक्त प्रतिमाओं के अलावा गरूड़ासीन विष्णु, लक्ष्मी नारायण, वेणुवादक गोपाल, नृसिंह, गरूड़, लक्ष्मी माता की प्रतिमाएं, माता पार्वती की प्रतिमाएं, दुर्गा प्रमिाएं, वैष्णवी प्रतिमाएं, सरस्वती माता की प्रतिमाएं, महिषासुर मर्दिनी, अष्टभुजी चामुण्डा काली, यक्षी प्रतिमाएं, गंगा-यमुना, अंधकासूर का वध, कल्याण सुदंर की प्रतिमा, सूर्य प्रतिमा, हरिहर हिरण्य गर्भ की प्रतिमा, सूर्य एवं शिव की सम्मिलित प्रतिमा, कुबेर की प्रतिमा,नवगृह, नाग-नागिन की प्रतिमा, हनुमान जी की प्रतिमा,

शाल भंजिका, गज की प्रतिमा, अश्व की प्रतिमा, हंस की प्रतिमा, बतख की प्रतिमा, बाली वध, भगवान शिव की दुर्लभ प्रतिमाएं संग्रहालय को शोभा को बढ़ा रहे हैं।

मल्हार से प्राप्त लेख एवं शिलालेख – दक्षिण कोसल की प्राचीन राजधानी का परिधान लिए यह ऐतिहासिक स्थल पुरातन सामग्रियों, अभिलेखों एवं मुद्राओं से भरा हुआ है। इस भू-भाग की पाषाण कला पग-पग मुखरित है, यहां की कला, संस्कृति एवं धार्मिक सहिष्णुता दूर-दूर तक फैली हुई है। इस स्थल की धार्मिक एवं पौराणिक गाथाओं से संबंधित अनेक पाषाण प्रतिमाएं सैलानियों का मन मोह लेती है। यहां के प्राचीन मंदिर, मठ, विहार एवं गढ़ आदि की शिलपकला हमारी प्राचीन संस्कृति की गौरवगाथा को सजीवता प्रदान कर रही है। यह प्राचीन नगरी अपने अतीत के धरोहर से परिपूर्ण लगभग 10 किलोमीटर की लंबाई में विस्तृत है। इस पवित्र नगरी मल्हार ने सातवाहन कालीन, कुषाण कालीन, शरभपुरीय कालीन एवं कल्चुरी कालीन राजाओं के शिलालेख, ताम्रपत्र लेख, सिक्के एवं मिट्टी से निर्मित पात्र इत्यादि के अवशेष अपने हृदय स्थल में समाएं हुए है।

मल्हार के निकटतम ग्राम जुनवानी के प्रतिष्ठित निवासी डॉ. अहमद खान को कुछ समय पूर्व ताम्रपत्र का पूरा सेट प्राप्त हुआ है। इसे दिनांक 18 जनवरी 1988 ई. को अध्ययन एवं प्रकाशन हेतु श्री रघुनंदन प्रसाद पाण्डेय जी डॉ. अहमद खान से प्राप्त किया गया। इसे श्री पाण्डेय जी ने बिलासपुर स्थित पुरातत्व विभाग के कार्यालय में संपर्क कर ताम्रपत्र के मूल विषय वस्तु की जानकारी प्राप्त हुई। इस ताम्रपत्र में तीन अलग-अलग पन्नों में उत्कीर्ण है एवं मुहर युक्त छल्ले से बंधा हुआ है। पन्नों का आकार लगभग 14.5 x 21 से. मी. है। प्रत्येक पत्र के बाएं भाग में मुद्रा का व्यास 9 से. मी. है। मुद्रा के ऊपरी भाग में त्रिशुल नंदी व कलश है। मध्य में दो पंक्तियों का लेख है व निचले हिस्से में पत्र सहित उत्फुल्ल कमल सुशोभित है।

ताम्रपत्र का कुल वजन लगभग दो किलो छ: सौ ग्राम है। कुल 41 पंक्तियों का लेख छ: बाजुओं पर उत्कीर्ण है, पांच पृष्ठों पर आठ-आठ पंक्तियां एवं प्रथम पत्र के पृष्ठ भाग पर एक पंक्ति का लेख उत्कीर्ण है। अक्षर गहरे व सफाई से खोदे गए हैं। लेख की विधि ब्राम्ही का पेटिका शीर्ष रुप है तथा इसकी भाषा संस्कृत है। यह ताम्रपत्र सिरपुर के पाण्डु वंशीय प्रसिद्ध नरेश महाशिवगुप्त बालार्जुन द्वारा निर्मित है, इसके अतिरिक्त महाशिवगुप्त बालार्जुन के अन्य शिलालेख बारदुला, लोधिया एवं मल्हार आदि स्थलों से प्राप्त हुए हैं, जो नौ सेट में मिले हैं। महाशिवगुप्त बालार्जुन का शासनकाल दक्षिण कोसल अर्थात् प्राचीन छत्तीसगढ़ का स्वर्ण काल माना जाता है। महाशिवगुप्त बालार्जुन गुप्त नरेश हर्ष गुप्त एवं रानी वासटा के पुत्र हैं। छोटी अवस्था में ही धनुर्विद्या में महाशिवगुप्त बालार्जुन पारंगत हो गए थे। इन्होनें परम माहेश्वर की उपाधि धारण की थी। इनके शासन काल में दक्षिण कोसल में अनेक धर्म फलते-फुलते रहे। महाशिवगुप्त का राजत्वकाल पूर्ण रूप से धर्म सहिष्णु रहा। इन्होनें शैव धर्म अपनायी थी।

मलहार जहां पाषाण मुखरित है। इस स्थल के विषय में यह कहावत चरितार्थ होती है, कि यहां पाषाण प्रतिमाओं के साथ ही शिलालेख, शिलापट्ट लेख मूर्तियों में लेख विशेष रूप से दिखाई पड़ते हैं। इसी श्रृंखला में विगत वर्षो में पुरातत्व पंजीकरण अधिकारी को मल्हार प्रवास के दौरान एक शिलालेख प्राप्त हुआ है, जो 140 x 30 x 12 से. मी. आकार के बलुए पत्थर पर चार पंक्तियों में उत्कीर्ण है। इस शिलालेख की भाषा प्राकृत है। जिसमें नकुश के कनिष्ठ पुत्र इसीनाम एवं रथिक अत्यादि द्वारा उपाध्याय को दान में देने का उल्लेख मिलता है। यह शिलालेख संभवत: स्मृति लेख है। यह शिलालेख पुरातत्व विभाग बिलासपुर के कार्यालय में सुरक्षित है।

निजी संग्रहालय – मल्हार नगर में मंदिरों के अतिरिक्त 2 निजी संग्रहालय दार्शनिकों के हर समय खुला रहता है, जो कि नि:शुल्क है। प्रथम निजी संग्रहालय स्व. रघुनंदन प्रसाद पाण्डेय के घर में स्थित है। इस निजी संग्रहालय में प्रवेश करने पर एक सामान्य घर जैसा ही दिखता है, इस संग्रहालय में लोहे से बनी ताम्रपत्र है, प्राचीन कालीन सिक्के हैं, शिलालेख, मूर्तियां एवं अन्य दुर्लभ वस्तुओं का संग्रह है। स्व. रघुनंदन प्रसाद पाण्डेय को राष्ट्रपति पुरस्कार प्राप्त हुआ था। इनके पुत्र संजीव पाण्डेय जी हैं, जो कि पत्रकार एवं समाजसेवी हैं। इन्होनें अपने मकान में अनेक दुर्लभ वस्तुओं का संग्रहण किया है। तीन ताम्रपत्र इनके घर में आज भी सुरक्षित है। इसके अतिरिक्त छोटी व बड़ी मूर्तियों का संग्रह इनके मकान में है।द्वितीय निजी संग्रहालय स्व. गुलाब सिंह ठाकुर के मकान में स्थित है। इनका मकान स्कूल चौक के निकट ही है, जहां पर एक अलग से कमरा बना हुआ है, जिसके भीतर अत्यंत दुर्लभ प्राचीन धरोहरों की अमूल्य वस्तुओं का संग्रह है। कोई पर्यटक यदि मल्हार भ्रमण करने आता है और निजी संग्रहालय का दर्शन नहीं करता है, तो उसका भ्रमण अधूरा ही कहलायेगा।स्व. गुलाब सिंह ठाकुर मल्हार निवासी थे, जो बचपन से ही पुरातत्व में रूचि रखते थे, ये सुबह से शाम तक मल्हार नगरी के सभी दिशाओं का विचरण करते थे, यह इनके दिनचर्या में शामिल था। मल्हार से प्राप्त पुरातात्विक वस्तुओं को अपने घर में सहेज कर रखते थे।

निष्कर्ष – मल्हार नगरी की प्राचीन संस्कृति अत्यंत गौरवशाली रहा है। सौंदर्यता यहां की धरती के कण-कण में छुपा हुआ है। इस स्थल का अमूल्य धरोहर विशिष्टता लिए हुए है। यहां की प्राकृतिक बनावट नदियों, सरोवरों, शिलाखण्डों के साथ ही प्राचीन गढ़ मंदिरों एवं प्राचीन गढ़ किला से परिपूर्ण है। दक्षिण कोसल की प्राचीन नगरी पुरातन सामग्रियों, अभिलेखों, सिक्कों एवं मुद्राओं से भरा हुआ था। मल्हार स्थित संग्रहालय एवं शिलालेख एक अमूल्य धरोहर है। इसका स्पष्टीकरण यहां के उत्खनन से प्राप्त प्राचीन प्रतिमाओं से होती है, जो न मात्र इस क्षेत्र की प्राचीन कला का प्रत्यक्ष उदाहरण है। इस भू-भाग में समृद्ध शिलालेख व संग्रहालय हैं, जो वर्तमान में हमारी परम्पराओं के आदर्श प्रस्तुत करते हैं। किन्तु इस अमूल्य धरोहर की दशा अत्यंत दयनीय है, साथ ही यहां स्थित शिलालेख एवं संग्रहालय की दशा भी शोचनीय है। मल्हार स्थित भवन में कुछ प्रतिमाएं सहेज कर रखी गयी है, परन्तु सैकड़ो प्रतिमाएं संग्रहालय प्रांगण में खुले आसमान के नीचे जमीन पर रखे गए हैं। जलवायु के प्रहार से यह प्राचीन स्मारक विनष्ट हो रहे हैं। जिन प्रतिमाओं ने सैकड़ों वर्ष धरती के भीतर सुरक्षित रहकर गुजार लिया, परन्तु अब संग्रहालय विभाग के संरक्षण में नष्टप्राय हो रहे हैं।

पुरातात्विक नगरी मल्हार में पर्यटन की अपार संभावनाएं हैं, यह स्थल हरीतिमा से आच्छादित एवं अमूल्य धरोहर संपन्न है, यह छत्तीसगढ़ का प्रमुख पर्यटन स्थल बन सकता है। इस स्थल के शिलालेख एवं संग्रहालय का पर्याप्त मात्रा में अभी तक प्रचार प्रसार नहीं हुआ है। इस स्थल में गाइड सेवा, सूचना पटलों व साइन बोर्डो इत्यादि की व्यवस्था नहीं है। यदि शासन द्वारा स्थानीय शिक्षित लोगों को साथ लेकर जिले में पर्यटन केन्द्रों के विकास के लिए प्रयत्न किया जाए तो निश्चित रूप से इस क्षेत्र के गौरवपूर्ण इतिहास से परिचित होगें साथ ही इस अंचल की छिपी विशिष्ट कलाओं से अवगत होगें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वर्मा, डॉ. भगवान सिंह, छत्तीसगढ़ का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक

इतिहास, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल पृष्ठ क्रमांक 22
2. शुक्ला, डॉ. शांता, छत्तीसगढ़ का सामाजिक, आर्थिक इतिहास, नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली 1988, पृष्ठ क्रमांक 5
3. मिराशी, विष्णु वासुदेव, कल्चुरी नरेश और उनका काल पृष्ठ क्रमांक 35-36
4. मिश्र, बलदेव प्रसाद, छत्तीसगढ़ का परिचय पृष्ठ क्रमांक 119-120
5. पाण्डेय, रघुनंदन प्रसाद, मल्हार दर्शन पृष्ठ क्रमांक 21,22
6. केशरवानी, कु. ऋतु, छत्तीसगढ़ की कला एवं संस्कृति पृष्ठ क्रमांक 2, 2004-05 शोध प्रबंध
7. शर्मा डॉ. टी. डी., छत्तीसगढ़ के पर्यटन स्थल पृष्ठ क्रमांक 44
8. गुप्त, मदनलाल, छत्तीसगढ दिग्दर्शन भाग- 2, भारतेन्दु हिन्दी साहित्य समिति बिलासपुर पृष्ठ क्रमांक 4

****

Some Traditional Ethnoveterinary Plants of Shekhawati Region of Rajasthan

Manju Chaudhary*

Abstract - Plants are an integral part of nature. The rich plant diversity of India is utilized by the native communities in various forms of medicine. The traditional healers of Shekhawati region of Rajasthan have a commendable knowledge of the medicinal values of plants those grow around there. The aim of the present study was to document the ethnoveterinary medicinal plants, their application methods used by traditional healers in treating different animal ailments in Shekhawati region of Rajasthan. 64 plant species of ethnoveterinary uses belonging to 36 families were recorded in the present study.
Keywords: Ethnoveterinary, Shekhawati region, Traditional knowledge,ailments.

Introduction - India is a country with strong traditions and diverse natural resources. It has vast ethnobotanical knowledge from ancient time. *Ayurveda*, *Rigveda*, *Charak Samhita*, *Sushrut Samhita* etc. are the old Indian literature having wonderful knowledge of plants as medicines. In India, animal treatment like *Hasty Ayurveda*, *Aswa Ayurveda*, *Ghora Nidana* and other *Nidanas* was mostly confined to Ayurveda (Paul and Paul, 2006). Plants containing medicinal and other beneficial properties have been known and used in some form or the other since time immemorial in the traditional system of medicines (Jain and Saklani, 1991). During the last few decades there has been an increasing interest in the study of medicinal plants and their traditional use in different parts of the world.

To keep animals healthy, traditional healing practices have been applied for centuries and have been passed down orally from generation o generation (Phondani et al., 2010). Issar (1981) reported few medicinal plants from Uttarakhand Himalayas for the treatment of animals. Sebastian and Bhandari (1984) gave an ethnobotanical profile of the Indian desert plants used in veterinary medicines by the Bhils. The status and prospectus of plants used in Indian ethno-veterinary medicine is very well documented by various workers (Jain (2000, 2003; Yadav et al. 2012; Yadav et al., 2014; Meena, 2014). 37 plant species belonging to 25 families used for the treatment of domestic animals about folk herbal veterinary medicines of southern Rajasthan has been discussed by Takhar and Chaudhary (2004). Various botanists studied animal healthcare practices by livestock owners at Pushkar animal fair of Rajasthan (Galav *et al*., 2010). Yadav *et al*. (2015) documented ethnoveterinary practices of tribals of Banswara district of Rajasthan. The use of traditional herbal medicines from Shekhawati region of Rajasthan has been studied by Katewa and Galav (2004). Though, ethnobotanical studies have been carried out by several workers in different parts of Rajasthan but little information is available regarding ethnoveterinary studies on Shekhawati region of Rajasthan. Therefore, the present study was planned with the aim to identify, collect and document the ethno-veterinary medicinal plants used by the people of this area and their utilization for primary health care of animals in treatments of different ailments.

Material and Methods - Rajasthan is one of the largest states situated in the north western part of India. It can be segregated in several specific regions. Shekhawati is one such significant region. It consists of mainly two districts Sikar and Jhunjhunu (Figure1). The total geographical area of Shekhawati is 13784 sq. km situated between 27° 21' to28° 12' north latitude and 74° 44' to 75° 25' east longitudes at north-east of Rajasthan. It covers Aravalli hilly region, semi-arid transitional plains and desert area.

Fig 1: Showing map of the study site

*Department of Botany, Govt. College, Jhunjhunu (Raj.) INDIA

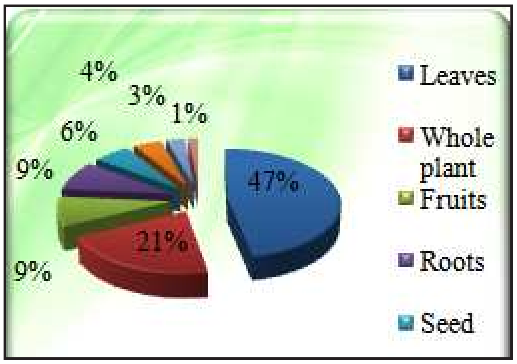

Fig. 2: Various Plant parts in ethnoveterinary uses

The climate of this area is generally dry except in the monsoon. Temperature is very high in summer and may reach up 48° C whereas in winter, it drops below freezing point. May and June are the hottest months. Average annual rainfall varies from 300-400 mm, mostly received from the south-west monsoon during the months of July to September.

In the present study, enumeration of ethnoveterinary uses of plant species was emphasized during 2018-2019. To achieve this purpose intensive survey was carried out. Plants were collected, documented and identified with the help of available literature (Bhandari, 1990; Shetty and Singh, 1987-93; Sharma, 2002). In order to document the utilization of indigenous plants, intensive surveys were carried out in the study area. Knowledgeable people of different tribes like Gurjar, Meena, Rebari, Nat, Sansi, Banwariya, Kalbeliya were taken to the field for the identification of medicinal plants used in ethnoveterinary practices. Interviews were also organized during these surveys in which local people of different age groups, shepherds, woodcutters, old man, healers and medicine men, forest officials etc. were included. The survey was spread across the seasons so as to get maximum information.

Table-1 (see in last page)

Results - During the present study 64 plant species belonging to 57 genera and 36 families were documented. These plants are being used by ethnic groups and rural people of Shekhawati region to treat ailments such as diarrhoea, injury, fever, digestive disorders and maternity complications etc. Detailed information pertaining to these medicinal plants used in ethnoveterinary medicine with their botanical name, vernacular names, family plant part used, mode of drug preparation and disease cured is given in Table 1.

Discussion - The role of ethnoveterinary medicine in livestock development is beyond dispute. In the present study a total of 64 plant species belonging to 36 families were used traditionally for the treatment of various ailments in animals. The folk herbal healers and rural people of the Shekhawati region used a number of ethnoveterinary plants for healthcare of livestock. The indigenous knowledge of the veterinary healthcare system acquired by traditional healers and elderly learned people is orally transformed from one generation to other. It has been observed that ethnomedicinal plants were safe, efficacious and affordable for the rural people of the study area.

Generally fresh plants or plant parts are used for the treatment of various diseases in animals. The leaves are the favored part of local users, but the whole plant, fruits, roots, seeds, twigs, bark powder were also used for treatment. Single plant is used to treat some diseases as well as combination of two or more plants is also used to treat many other diseases. Percentage of plant parts of ethno veterinary medicinal plants used in the study areas are given in Figure 2.

In this region, 12 plant species were reported for treating various problems of live stocks related with digestive system. Most commonly used plants for this purpose were *Aegle marmelos*, *Dalbergia sissoo*, *Crotalaria burhia*, *Citrullus colocynthis* and *Withania somnifera* etc. Rural people used *Boerhavia diffusa* and *Saccharum benghalense* for removal of retained placenta. They use many plants for increasing the milk quantity. *Cynodon dactylon*, *Cyamopsis tetragonoloba*, *Euphorbia hirta*, *Salvadora oleoides* and *Sorghum halepense* were reported for this purpose. Medicinal plants such as *Acacia catechu* (bark), *Cuscuta reflexa* (whole plant) and *Zizyphus nummularia* (roots) were used for foot and mouth diseases. The usage of many medicinal plants for killing intestinal worms, facilitating smooth delivery, skin diseases, urinary problems are also documented. Some of the plants mentioned in the study are also documented in the other studies conducting in adjoining regions (Ali, 1999; Takhar and Choudhary, 2004).

Ethnoveterinary medicine deals with traditional animal health care which encompasses the knowledge, skills, methods, practices and beliefs about health care. They provide cheaper options than comparable western drugs and the products are locally available and more easily accessible. Traditional knowledge of ethnoveterinary medicinal plants and their use by indigenous cultures are not only useful for the conservation of cultural traditions and biodiversity but also for community healthcare and drug development in the present and future (Sheng, 2001).

Conclusion - The observation and findings made under present investigation reveals that the traditional herbal healers and rural people of the study area have vast knowledge of ethnoveterinary practices. The documentation of this indigenous knowledge is valuable for the communities for wider use of traditional practices in treating livestock ailments. The findings presented in this paper are very preliminary and need further authentification. Commonly used ethnovetrinary plant species need to tested for their antimicrobial activity *in vitro* and validated their active ingredients in order to recommend effective preparations and treatments.

Acknowledgements - The author is highly grateful to the local healers in the study area for providing valuable

information and cooperation.

References :-

1. Ali, Z.A. (1999). Folk veterinary medicine in Moradabad District (Uttarpradesh), India. Phytotherapy, 70:340-347.
2. Bhandari,M.M.(1990). Flora of the Indian Desert, Scientific Publishers, Jodhpur,1-435.
3. Galav, P.;Jain, A.; Katewa, S.S. and Nag, A. (2010). A study of animal healthcare practises by livestock owners at Pushkar animal fair, Rajasthan. Indian J. Trad. Knowl., 9(3): 581-584.
4. Issar, R.K. (1981). Traditionally important medicinal plants and folklore of Uttaranchal, Himalaya for animal treatment. J. Sci. Ris. Pl. Med. 2: 61-66.
5. Jain, S.K. and Saklani, A. (1991). Observation on ethnobotany of the tons valley region of Uttarakashi district of North-West Himalayas. Mount. Res. Dev. 11(2): 177-183.
6. Jain, S.K. (2000.) Plants in Indian Ethnoveterinary medicine : Status and Prospects. Ind.J. Vet. Med. 20: 1-11.
7. Jain, S.K. (2003). Ethnoveterinary recipes of India - A botanical analysis. Ethnobotany, 15: 23-33.
8. Katewa, S.S. and Galav, P.K. (2004). Tradiional herbal medicines from Shekhawati region of Rajasthan. Indian Journal of Trad. Knowledge, 4 (3): 237-245.
9. Meena, K.L. (2014). Some Traditional Ethno-veterinary Plants of District of Pratapgarh, Rajasthan, India. American Journal of Ethnomedicine, 1(6):399-401.
10. Paul, C.R. and Paul, D.C. (2006). Traditional Knowledge System about veterinary healthcare in and around of Bankura district, West Bengal, India, In: Herbal Medicinal Traditional Practices, ed., Trivedi, P. C. Avishkar Publishers and Distributors, Jaipur.
11. Phondani P.C., Maikhuri R.K., Kala C.P. (2010). Ethnoveterinary uses of medicinal plants among traditional herbal healers in Alaknanda catchment of Uttarakhand, India, Afr J Tradit Compl Altern Med.; 7(3):195-206.
12. Sebastian, M.K. and Bhandari, M.M. (1984). Plants used as veterinary medicines by Bhils. Int. J. Trop. Agri. 2 (4): 753-766.
13. Sharma, N. (2002). The Flora of Rajasthan. Avishkar Publishers, Jaipur.
14. Sheng-Ji P. (2001). Ethnobotanical approaches of traditional medicine studies: some experiences from Asia. Pharma Biol. 39: 74-79.A81
15. Shetty, B.V. and Singh, V. (1987- 1993).Flora of Rajasthan, Vol. 1-3, Botanical Survey of India, Howrah. 1246 pp.
16. Takhar, H.K. and Chaudhary, B.L. (2004). Folk herbal veterinary medicines of southern Rajasthan. Indian J. Trad. Knowledge, 3(4): 407-418.
17. Yadav, M., Yadav, A., Gupta E. (2012). Ethnoveterinary practice in Rajasthan, India- A Review. Int Res J Bio Sci, 1(6): 80-82.
18. Yadav S.S., Bhukal R.K., Bhandoria M.S., Ganie S.A., Gulia S.K and Raghav, T.B.S. (2014).Ethnoveterinary Medicinal plants of Tosham block of district Bhiwani (Haryana) India. Journal of Applied Pharmaceutical Science. 4(6):40-48.

Table-1 Enumeration of Ethnoveterinary Medicinal Plants of Shekhawati region of Rajasthan

S.	Botanical Name/ Local Name / Family	Part Used	Diseases	Ethnoveterinary uses
1	*Abutilon indicum* (L.) Sweet Kanghi (Malvaceae)	LeavesSeeds	Constipation	Leaves and seeds are given in constipation.
2	*Acacia catechu* Willd. Khairi (Fabaceae)	Bark	Foot and mouth disease	Bark is boiled in water to make a solution is used in infection of foot and mouth.
3	*Acacia nilotica* Willd. Kikar (Fabaceae)	Fruits	Worm killing	Fruits are given to goats and sheep to kill the stomach worms.
4	*Achyranthes aspera* L. Undhokanto(Amaranthaceae)	Leaves	Ectoparasite	Leaves crushed with oil of *Brassica compestris* are applied as repellent of ectoparasite
5	*Aegle marmelos* (L.)Corr. Belpatra (Rutaceae)	Leaves Fruits	Pneumonia Diarrhoea	Leaf paste is applied on chest to cure pain and improve breathing in pneumonia. Fruit paste is given to animals to cure diarrhoea.
6	*Aerva persica* (Burm.f.) Merr.Bui (Amaranthaceae)	Whole plant	Eating soil	Whole plant extract is given to the calves to stop eating soil.
7	*Agave americana* L.Rambans (Asparagaceae)	Leaves	Fractured bone	Leaf fibres used to tie the fractured bones. Leaf paste is applied over broken horns for early healing.
8	*Ailanthus excelsa* Roxb. Ardu (Simaroubaceae)	Leaves	Wound healing	Leaf deccoction is applied on the wound to remove the maggots from the wounds.

9	*Albizia lebbeck* (L.) Willd. Siris (Fabaceae)	Leaves	Eye infection	Juice of crushed green leaves is dropped to the eyes to treat general eye problem in goats, cows and baffaloes.
10	*Argemone mexicana* L. Satyanashi (Papaveraceae)	Leaves	Foot disease	Leaf extract is applied over foot suffering from infections.
11	*Aristolochia bracteolata* Lamk. Batakhbel (Aristolochiaceae)	Root	Fever	Root powder is given to cattles to treat fever.
12	*Azadirachta indica* A. Juss.Neem (Meliaceae)	Leaves	Worm killing	Leaves are used as antihelmintic in goats, sheeps and calves.
13	*Boerhavia diffusa* L.Santa (Nyctaginaceae)	Whole plant	Retain placenta	Whole plant is fed twice a day for removal of retained placenta in cows and buffaloes.
14	*Calligonum polygonoides* L. Phog (Polygonaceae).	Whole plant	Colic	Plant extract is given to the animals to treat colic.
15	*Calotropis procera* R.Br. Aak (Asclepiadaceae)	LeavesLatex	Teats problem Snake-bite	Leaves with ghee (clarified butter) are heated and applied externally to swollen teat. Latex is applied on wounds of snake bite to neutralised poison.
16	*Cannabis sativa* L.Bhang (Cannabinaceae)	Leaves	Ectoparasite	The leaf extract is used as anti lice to kill actoparasites.
17	*Cassia occidentalis* L.Kesudo (Fabaceae)	Leaves	Constipation	Ground leaves are added to water and lemon, filtered and given orally in constipation.
18	*Cissampelos pareira* L.Patha (Menispermaceae)	Leaves	Digestive disorders	Leaf paste is given orally twice a day for three days to cure digestive disorders.
19	*Citrullus colocynthis* (L.) KuntzeTumba(Cucurbitaceae)	Fruits	Digestive disorders	Roasted fruits are given to animals to cure constipation, gastritis and digestive disorders.
20	*Clerodendrum phlomidis* L.Arni (Verbenaceae)	Leaves	Ringworm	After crushing the leaves juice is extracted and applied on wounds of animals.
21	*Cocculus pendulus* (Forsk.) DielsPilwani (Menispermaceae)	Stem	Mammary gland infection	Stem is cut into pieces and burnt. The ash is mixed with clarified butter and given to the animals.
22	*Cordia dichotoma* Forst.f. Prodr.Lasoda (Ehretiaceae)	Leaves	Cracked nipples	Warmed leaves are tied over cracked nipples in lactating animals.
23	*Crotalaria burhia* Buch Ham. ex Benth. Jhunda (Fabaceae)	Whole plant	Constipation	Plant extract is given to cure constipation.
24	*Cucumis callosus* (Rottl.) Cong.Kachra (Cucurbitaceae)	Fruit	Gastric problems	Fruit paste mixed with butter is given to animals to cure dysentry and gastric problems.
25	*Cuscuta reflexa* Roxb. Amar bel (Cuscutaceae)	Whole plant	Foot & mouth disease	A paste of whole plant is applied twice a day to treat foot & mouth disease.
26	*Cyamopsis tetragonoloba* L.Guwar (Fabaceae)	Seeds	Heat initiation	Boiled seeds are given to induce heat and to cure weakness in cattles.
27	*Cynodon dactylon* (L.) Pers.Doob ghas (Poaceae)	Whole plant	Eye infection Increasing lactation	Whole plant juice is applied on eyes for reducing redness. The aerial plant is given as fodder for increasing milk production.
28	*Datura metel* L.Kala Dhatura (Solanaceae)	Leaves, Fruits	Bleeding,wound	A paste is prepared from fresh leaves and roots and given to animals once daily for 7 days to stop bleeding and early healing.
29	*Datura stramonium* L.Dhatura (Solanaceae)	Fruits	Heat initiation	2-3 Fruits are given to young cow or buffalo to initiate its heat for sooner fertilization.
30	*Dalbergia sissoo* Roxb. Shisham (Fabaceae)	Leaves	Diarrhoea	Leaf juice mixed with churning curd and given to the animals for diarrhoea.
31	*Ephedra foliata* Boiss.& Kotschy ex Boiss. Unt phog (Gnetaceae)	Whole plant	Constipation	Decoction of whole plant is given to the animals to cure constipation.

32	*Euphorbia hirta* L.Dudhi (Euphorbiaceae)	Whole plant	Increasing lactation	Plants are feed as a fodder to cattles for increase lactation.
33	*Ficus benghalensis* L.Bargad (Moraceae)	Root	Stomachache	Root powder is given to cattles suffering from stomachache.
34	*Ficus religiosa* L.Peepal (Moraceae)	Leaves	Tonsilites	Leaf juice is used to cure tonsils.
35	*Lawsonia inermis* L.Mehndi (Lythraceae)	Leaves	Skin disease	Leaf paste is applied over skin to cure burns.
36	*Holoptelia integrifolia* (Rox.) (Ulmaceae) Planch. Churel	Leaves	Skin disease	Leaf paste is applied on wounds and on skin to remove lice.
37	*Leptadenia pyrotechnica* (Forsk.) Decne. Khimp (Asclepiadaceae)	Shoots		Young tender shoots are given for parturition induction.
38	*Maytenus emarginata* (Willd.) Ding Hou Kankeda (Celastraceae)	Leaves	Cracked nipples	Leaves are burnt and ash mixed with mustard oil is applied over cracked nipples in cattles.
39	*Melia azadirach* L.Bakain (Meliaceae)	Leaves	Swelling	Leaves are applied externally to treat swelling in cattles.
40	*Momordica dioica* Roxb.ex Willd.Kakoda (Cucurbitaceae)	Root	Wound healing	Powdered roots are used to stop bleeding and rapid healing to boils and wounds.
41	*Ocimum americanum* L.Bapchi (Lamiaceae)	Seed	Cooling effect	Seeds are soaked in water and given to animals for cooling effect.
42	*Ocimum sanctum* L.Tulsi (Lamiaceae)	Leaves	Fever	Leaves are fed to animals to cure fever.
43	*Oxalis corniculata* L.Khatari (Oxalidaceae)	Leaves	Diarrhoea Eye infection	Leaf juice is mixed with churning curd and given to the animal for diarrhoea. Leaf juice is used to cure eye infection.
44	*Pedalium murex* L.Dakhani Gokhru (Pedaliaceae)	Whole plant	Cooling effect	Whole plant is fed to the animals to give cooling effect during summer.
45	*Pergularia daemia* (Forsk) Chiov.Gadaria ki bel (Asclepiadaceae)	Whole plant	Increasing lactation	Whole plant extract is given orally to increase lactation.
46	*Portulaca oleracea* L.Luni (Portulacaceae)	Whole plant	Excessive bleeding	Whole plant is given to cows & buffaloes as feedstuffs to prevent excessive bleeding during and after delivery.
47	*Prosopis cineraria* (L.) DruceJanti, Khejri (Fabaceae)	Leaves	Hamstrung of muscles	Leaves (Loong) are very nutritious and used as fodder. They are crushed and tied on joints and hamstrung of cattles.
48	*Ricinus communis* L.Arandi (Euphorbiaceae)	Leaves	Wound healing	Leaf poder is rubbrd on the body of animals to cure the wounds.
49	*Saccharum munja* Roxb.Kuncha (Poaceae)	Leaves	Removal of plecenta	Young and green leaves are fed to animals for removal of retained plecenta.
50	*Saccharum spontaneum* L. Kans (Poaceae)	Leaves	Heat production	Leaves are fed to cattles for heat production in buffaloes.
51	*Salvadora oleoides* Decne.Jal (Salvadoraceae)	Leaves	Increasing lactation	Leaves are nutritious and fed to goats and cows for milk production.
52	*Sarcostemma viminale* (L.) R.Br. Khir-khimp (Asclepiadaceae)	Whole plant	Snake-bite	Whole plant infusion is applied by rural people on wound of snake bite.
53	*Sesamum indicum* L.Til (Pedaliaceae)	Seed	Eczema	Seed oil with adding a spoonful of sodium chloride is used to cure asthma.
54	*Solanum indicum* L.Tindra (Solanaceae)	Leaves	Ringworm	Leaf juice is given for treating ringworm in cattles.
55	*Solanum nigrum* L.Makoi (Solanaceae)	Whole plant	Digestive disorders	Whole plant paste with clarified butter is given orally in digestive disorders to cattles.

56	*Sorghum halepense* (L.) Pers.Jowar (Poaceae)	Leaves	Increasing lactation	Green leaves are cut into small pieces and fed to cattles for increasing lactation.
57	*Tamarix dioca* Roxb.Firans (Tamaricaceae)	Bark	Cracked nipples	Ash of bark mixed with wax is applied over cracked nipples.
58	*Tecomella undulata*(Sm.) Seem.Rohida (Bignoniaceae)	Bark	Skin disease	Bark oil is applied locally to cure rashes on skin.
59	*Tinospora cordifolia* (Willd.) Miers.Giloy (Menispermaceae)	Root	Debility	Grinded roots are given to cure debility.
60	*Trianthema portulacastrum* L. Safed santa (Aizoaceae)	Leaves	Diarrhoea	Leaf paste with *Piper nigrum* seeds is given orally to treat diarrhoea.
61	*Tribulus terrestris* L.Gokhru (Zygophyllaceae)	Whole plant	Diarrhoea	Whole plant extract is given orally to cure diarrhoea.
62	*Tridax procumbens* L.Sadabhar Runkdi(Asteraceae)	Leaves	Injury	Paste of leaves is applied on injuries to prevent bleeding.
63	*Withania somnifera* (L.) DunalAksan (Solanaceae)	Root	Digestive disorders	Root decoction is given to animals in digestive disorders.
64	*Zizyphus nummularia* Wight & Arn.Bordi (Rhamnaceae)	Root	Foot and mouth disease	Root decoction is applied for foot and mouth disease in cattles.

****

मिलावट से मानव जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है जो देश के विकास में बाधक है। 'इन्दौर (म.प्र.) के सदर्भ में'

डॉ. दीपक जैन *

शोध सारांश – कुछ असामाजिक व्यापारी अधिक लाभ कमाने के लिए विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थो में मिलावट करते है जिससे मनुष्य को अनेक प्रकार की गम्भीर बिमारी हो जाती है तथा मानव का जीवन खतरे में पड़ जाता है। हम जानते है कि वह देश जिसमें स्वस्थ व्यक्ति होते है, वह देश तेजी से विकास करता है और जिस देश में अस्वस्थ व्यक्ति होते है, उस देश के विकास में बाधा होती है।

प्रस्तावना – हम जानते है कि देश में तेजी से विकास हेतु वहॉ के नागरिकों का स्वस्थ होना आवश्यक है और मनुष्य को स्वस्थ रहने के लिए बिना मिलावट का पौष्टिक आहार मिलना जरूरी है, लेकिन अधिक मुनाफा कमाने हेतु मुनाफाखोर खाद्य पदार्थो में अनेक प्रकार की हानिकारक एवं रसायनिकयुक्त पदार्थो की मिलावट करते है। जिससे मनुष्य को अनेक प्रकार की गम्भीर बिमारी हो जाती है तथा मानव का जीवन खतरे में पड़ जाता है।

शोध अध्ययन का औचित्य एवं विषय का चयन – वर्तमान में दवाखानों में मरीजों की लंबी कतारे देखी जाती है, क्योंकि मनुष्य की प्रतिरोधक क्षमता कम हो रही है इसका मुख्य कारण लोगों को पौष्टिक आहार पर्याप्त मात्रा में नहीं मिल रहा है तथा मिलावटी खाद्य पदार्थ मिल रहा है। हम प्रतिदिन अनेक खाद्य पदार्थ खरीदते है जिसमें मिलावट की पहचान नहीं हो पाती। चूॅकि मैं एक प्रोफेसर होने के साथ-साथ जागरूक नागरिक भी हूॅ। अत: जिज्ञासावष मैने इस विषय का चयन किया है।

शोध का उद्देश्य – मिलावट जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है उसे रोकने हेतु सरकार एवं नागरिकों को जागरूक करने के प्रयासों का अध्ययन करना ही इस शोध का उद्देश्य है।

शोध परिकल्पनाएं – प्रस्तुत शोध में मिलावट रोकने के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित परिकल्पनाएं रही है जिनका अध्ययन एवं मूल्यांकन किया जावेगा।

1. प्रशासन द्धारा की जाने वाली खाद्य पदार्थो की जॉच एवं मिलावट पर रोकथाम हेतु किये प्रयासों का अध्ययन करना।
2. नागरिकों को जागरूककर मिलावट पर रोकथाम हेतु किये प्रयासों का अध्ययन करना।

शोध की विधि – इस शोधपत्र में द्वितीय समंकों का अध्ययन एवं विश्लेषण कर सुझाव प्रस्तुत किये गए है। शोधपत्र में इंटरनेट,समाचार पत्रों, पत्र-पत्रिकाओं एवं पुस्तकों में प्रकाशित समंकों का अध्ययन कर निष्कर्ष निकाला गया है।

इन्दौर शहर में खाद्य पदार्थों में हो रही मिलावट एवं उसके रोकथाम का अध्ययन करना।

इन्दौर शहर में खाद्य पदार्थों में मिलावट इस कदर हो रही है कि व्यापारी अधिक लाभ कमाने हेतु फलों, सब्जी, दुध, शीतल पेय, घी, सरसों का तेल, आटा, दाल, चावल, मिठाई एवं मसालों में और अन्य खाद्य पदार्थो में हानिकारक एवं रसायनिकयुक्त पदार्थो की मिलावट करते है। आम एवं अन्य फलों को शीघ्र पकाने हेतु कैल्शियम काबाईड का प्रयोग करते है इसमे एसिटीलीन गैस निकलती है, जिससे फल जल्दी पक जाते है। जो हमारे स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। दूध में पानी, यूरिया डिटरजेंट एवं खाद्य तेलों की मिलावट की जाती है। सब्जियों को कई दिनो तक हरा-भरा रखने हेतु रसायन एवं रंगों का प्रयोग किया जाता है। देशी घी में जानवरों की चर्बी एवं खाद्य तेल मिलाया जाता है। मसालों में अनेक हाकनकारक पदार्थ मिलाये जाते है। इस प्रकार मिलावटी खाद्य पदार्थो के सेवन से गैसटिक, सिरदर्द, उल्टी आदी रोग हो जाते है। सिंथेटिक दुध से शरीर के अंगों पर बुरा प्रभाव पड़ता है। यूरिया से किडनी एवं हृद्य संबंधित रोग एवं कैंसर हो जाता है। मुनाफाखोर व्यापारी चावल में, प्लास्टिक के चावल की मिलावट कर रहे है जो मानव स्वास्थ्य के लिए काफी हानिकारक है ऐसे चावल खाने से मनुष्य की मृत्यु भी हो सकती है ये मिलावटखोर इतनी चतुराई से मिलावट करते है कि कोइे भी व्यक्ति चावल के ढेर में से प्लास्टिक के चावल को पहचान नही सकता तथा इस चावल को खाते समय भी इस नकली चावल की पहचान नहीं हो पाती है प्लास्टिक में फैथालेट्स रसायन होता है जो मनुष्य के हार्मोन्स पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है जिससे प्रजनन प्रणाली बाधित होती है तथा इस प्लास्टिक युक्त चावल खाने से पेट की अनेक प्रकार की गम्भीर समस्या हो सकती है

इन प्लास्टिक के चावल को पहचानने का सरल तरीका

1. एक गिलास पानी में इन चावलों को ड़ालने पर चावल तैरने लग जाये तो यह प्लास्टिक के मिलावटी चावल है।
2. एक चम्मच गरम तेल में इन चावलों को ड़ालने पर यदि चावल पिघलना शुरू हो जाये तो यह प्लास्टिक के मिलावटी चावल है।

तेल माफिया अधिक मुनाफा कमाने हेतु लोगों की सेहत के साथ खिलवाड़ कर रहे है। वे सरसों के तेल में पॉम ऑयल, जो 55 रू लीटर है, राइस ब्रान, सोया ऑयल, जो 60 से 65 रू लीटर है। इसमें खुशबू हेतु अर्सेस एवं पीला रंग मिलाकर विभिन्न ब्रांड की पैंकिग कर इसे 100 रू लीटर के भाव में बेच देते है जबकि शुद्ध सरसों का तेल 130 रू लीटर मिलता है। इन्दौर शहर में इस हानिकारक मिलावटी तेल की खपत 1000 पीपों से

* विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) श्री जैन दिवाकर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अधिक है। इसमें मिले पीले रंग से किडनी के मुलायम टिश्यु खराब होने लगते है और किडनी में पथरी बनने की शिकायत रहती है। रसायन मिला होने से हार्ट और आंत को नुकसान होता है। मिलावटी तेल के प्रयोग करने से गर्भस्थ शिशु का जीवन संकट में पड़ जाता है, बच्चों का मानसिक विकास प्रभावित हो जाता है और अमाशय एवं किडनी के कैंसर का खतरा रहता है।

पहचानने का सरल तरीका

1. हाथ साफ कर तेल की मालिश करने पर यदि तेल त्वचा पर रंग छोड़े तो तेल मिलावटी है।
2. यदि तेल फ्रीज में रखने पर वह जमे तो तेल मिलावटी है।

पहले मिठाई, नमकीन, दुध आदि मे मिलावट की जॉच करने के लिए पहले सेम्पल भोपाल स्थित खाद्य सुरक्षा लैब में भेजे जाते थे हर साल यहॉ 10000 से अधिक सेम्पल जॉच के लिए आते थे जिसकी जॉच रिपोर्ट 14 दिनों में आती थी अधिक सेम्पल के दबाव में जॉच की गुणवत्ता प्रभावित होती थी या प्रभावित किये जाने की संम्भावना बनी रहती थी जिससे जनता को इस विभाग की कार्यशैली पर यकीन नहीं होता था और अनेक मिलावटखोंर सजा से बच जाते थे इस समस्या के निदान हेतु मुख्यमंत्री शिवराजसिंह चौहान ने इन्दौर में खाद्य सुरक्षा लैब खोलने का निर्णय लिया। मुख्यालय ने 1914 में इन्दौर कलेक्टर को लैब के लिए जमीन आबंटित करने का प्रस्ताव भेजा था इस पर प्रशासन ने 31 दिसम्बर 2015 को विभाग को मांगलिया में एक एकड़ जमीन आबंटित कर दी। शीघ्र ही इन्दौर शहर में खाद्य सुरक्षा लैब काम करना प्रारंभ कर देगी।

निष्कर्ष एवं सुझाव – मिलावटखोरी से मनुष्य को अनेक प्रकार की गम्भीर बिमारी हो जाती है जो देश के विकास में बाधक है इन्दौर म.प्र. के संदर्भ में विषय के अध्ययन एवं मूल्यांकन से ज्ञात हुआ है कि प्रशासन कि सख्ती से इस पर काफी हद तक रोक लगाने में सफलता मिली है इसे और अधिक सफल बनाने हेतु प्रमुख सुझाव निम्नानुसार है–

1. खाद्य सुरक्षा विभाग को चाहिए कि वह कठोर से कठोर कानून बनाकर मिलावटखोरी पर पूर्ण प्रतिबंध लगाए।
2. मिलावटखोरी से मनुष्य को अनेक प्रकार की गम्भीर बिमारी हो जाती है अत: मिलावट करने वाले को कठोर सजा देना चाहिए।
3. खाद्य सुरक्षा विभाग को नागरिकों को जागरूक कर मिलावटी वस्तु न खरीदने हेतु प्रेरित करना चाहिए।
4. शिक्षण संस्थानों द्वारा विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार की होने वाली मिलावटों एवं उनसे होने वाली हानि तथा मिलावट की जॉच करने की विधि सिखाना चाहिए।
5. प्रशासन को समय–समय पर नागरिकों को समाचारपत्रों, दुरदर्शन एवं अन्य माध्यमों से मिलावटों से बचने हेतु प्रेरित करना चाहिए।
6. नागरिकों को हमेशा खड़े मसाले ही खरीदना चाहिए।
7. नागरिकों को हमेशा आयोड़ीनयुक्त नमक ही खरीदना चाहिए और कटे आलू पर नमक लगाकर देखना चाहिए यदि वह नीला या काला नहीं होता तोनमक में आयोड़ीन नहीं है।
8. काली मिर्च को दबाकर चेक कर लेना चाहिए एवं पानी में थोड़े बीज डालकर देखना चाहिए यदि वह डुब जाये तो उसमें पपीते के बीज की मिलावट है।
9. एक गिलास पानी में इन चावलों को ड़ालने पर चावल तैरने लग जाये तो यह प्लास्टिक के मिलावटी चावल है।
10. हाथ साफ कर सरसों के तेल की मालिश करने पर यदि तेल त्वचा पर रंग छोड़े तो तेल मिलावटी है। यदि तेल फ्रीज में रखने पर वह जमे तो तेल मिलावटी है।
11. खाद्य सुरक्षा विभाग को दुकानों पर ही रेपिड टेस्ट कर मिलावट होने पर कठोर आर्थिक एवं कारावास की सजा देना चाहिए।
12. यदि कोई जागरूक नागरिक खाद्य सुरक्षा विभाग को मिलावट संबंधित सूचना देता है तो उसका नाम गुप्त रखकर तुरंत व्यापारी की जॉच करनी चाहिए और मिलावट होने पर कठोर आर्थिक एवं कारावास की सजा देना चाहिए तथा सूचना देने वाले नागरिक को उचित पुरस्कार देना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रतियोगिता दर्पण, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली
2. प्रतियोगिता निदेशिका, प्रकाशन विभाग, वैशाली नगर, इन्दौर
3. दैनिक भास्कर, प्रकाशन विभाग, प्रेस काम्पलेक्स, इन्दौर
4. नई दुनिया, प्रकाशन विभाग, बाबु छजलानी मार्ग, इन्दौर
5. दैनिक जागरण, नई दिल्ली
6. पत्रिका राजस्थान

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

A Study of Impact of Green Marketing on Consumers Buying Behaviour in FMCG Sector in Urban Areas

Dr. Alka Awasthi* Anita Vishwakarma**

Abstract - Environmental issue is a sizzling topic nowadays asalmost every country's government and society has started tobe more aware about these issues. This leads to a trend ofgreen marketing used by the firm as one of the strategies in order to gain profit and protect the environment. This paperwill be discussing the green marketing and its sustainability aswell as the tools and marketing mix of green marketing. Otherthan that, the green consumer and branding will be discussedin further in this paper as this will attract more consumers.Lastly, firm will be benefited once green marketing strategy isapplied.

The current rapid growth in the economy and the patterns of consumer's consumption and behaviour worldwide are the main cause of environmental deterioration. The shortage of natural resource, which seriously affects human beings' existence and development, environment protection has become the world-wide focus. The growing social and regulatory concerns for the environment lead an increasing number of customers to consider green issues as a major source of strategic change. Rising awareness of global environment and social problems has forced companies to recognize these demands in their activities. Now, industries are increasingly being required to meet social and environmental specifications in the market because of rising customer pressures. Even though it is increased eco-awareness of customers during past few decades, there are some barriers to the diffusions of more ecologically oriented consumption and production styles. Therefore, companies are increasingly recognizing the importance of green marketing concepts. Green marketing is the need of the hour when we are seeing environmental degradation every single day.

Keywords - marketing, sustainability, green marketing benefits, green marketing tools, organization benefits, green consumer, Environment protection, eco-friendly products.

Introduction - Companies are professionalizing their approach their approach to environmental management, in pursuit of quality management and cost effectiveproducts. A number of companies fear that unless they meet these necessary requirements, they will lose their competitive edge in the markets. It asksif the company that serves and satisfies individual wants is always doing what is the best for consumers and society in the long run.

Consumers are ever greener, and their support for sustainable products and practices is growing worldwide. Whole world is identifying the need of greenmarketing. Green marketing can be defined as the marketing of products that are regarded to be safe for the environment. It is also known as environmentalmarketing or ecological marketing. Green marketing can serve as an effective tool for encouraging sale of a product by using its ecological credentials. In thelong run, green marketing benefits one and all- the environment, business and human beings.

FMCG sector is a considerably large sector in the economy which has to open their eyes on eco – friendliness. The FMCG sector is one of the growing industriesthat concern about the green marketing issues. Green marketing incorporates a wide range of activities like product modification, changes in the productionprocess, packaging changes, alterations in advertising, etc. Most of the marketing professionals are using green elements as powerful marketing tools. In thiscontext, this study focuses on the consumer's attitude and attractiveness towards green products and FMCG sector.

Review Of Literature

Green Marketing - Green marketing came into prominence in the late 1980s and early 1990s; it was first discussed much earlier. The American Marketing Association (AMA) heldthe first workshop on "Ecological Marketing" in 1975. The proceedings of this workshop resulted in one of the first books on green marketing entitled "Ecological Marketing" (Henion and Kinnear 1976). Since that time a number of other books on the topic have been published (Coddington 1993, and Ottman 1993).

Green marketing incorporates a broad range of activities, including product modification, changes to the production process, packaging changes, as well

*Director, NIIST - MBA, Bhopal (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, Technocrats TIT Group (TIT, MBA), Bhopal (M.P.) INDIA

asmodifying advertising. (Polonsky, 1994) World-wide evidence indicates people are concerned about the environment and are changing their behaviouraccordingly. Soonthonsmai (2007) defined green marketing as the activities taken by firms that are concern about the environment or green problems bydelivering the environmentally sound goods or services to create consumers and society's satisfaction. Other definitions of green marketing as proposed bymarketing scholars include social marketing, ecological marketing or environmental marketing.

Harrison (1993) proposed green marketing strategy by firmsthrough positioning the environmental benefits of green products to consumers' mindset to influence their purchasing decision.

Peatitie (1995) and Welford (2000) defined green marketing as the management process responsible for identifying, anticipating and satisfying the requirements of customers and society ina profitable and sustainable way.

Hopes for green products also have been hurt by the perception that such products are of lower quality or don't really deliver on their environmental promises.

Green marketing has not lived up to the hopes and dreams of many managers and activists. Although public opinion polls consistently show thatconsumers would prefer to choose a green product over one that is less friendly to the environment when all other things are equal, those "other things" arerarely equal in the minds of consumers. (Hackett, 2000). It's even more important to realize, however, that there is no single green-marketing strategy that is right for every company. (Prothero, and McDonagh, 1992)

Owing to the conceptual and moral complexity of 'ecologically responsible consumer behaviour' and to the perplexity of ecological information, differentconsumers have different conceptions of ecologically oriented consumer behaviour and, thus, myriad ways of acting out their primary motivation for being green consumers (Antil, 1984). These innovations aren't being pursued simply to reduce package waste.

(Prothero, 1990) Food manufacturers also want to improvefood preservation to enhance the taste and freshness of their products. The cost of the foods would be lower; consumers could enjoy the convenience of preselected ingredients, and waste peelings (Prothero, 1990). It can be assumed that firms marketing goods with environmental characteristics will have a competitiveadvantage over firms marketing non-environmentally responsible alternatives. There are numerous examples of firms who have strived to become moreenvironmentally responsible, in an attempt to better satisfy their consumer needs.

(Schwepker, and Cornwell, 1991) While governmental regulation is designedto give consumers the opportunity to make better decisions or to motivate them to be more environmentally responsible, there is difficulty in establishingpolicies that will address all environmental issues. (Schwepker, and Cornwell, 1991). Hence, environment-friendly consumption may be characterized as highly acomplex form of consumer behaviour, both intellectually and morally as well as in practice.

In reality, companies that pursue green marketing encounter numerous challenges mainly from the variability of demand, un-favourable consumer perception and high cost (Gurau and Ranchhod, 2005). The key concern lies in an understanding of green consumers and their characteristics to enable firms to develop anew target and segmentation strategies (D'Souza et al., 2007).

Green Consumers And Green Products - In general, green product is known as an ecological product or environmentally friendly product. Shamdasami et al., (1993) defined green product as the productthat will not pollute the earth or deplore natural resources, and can be recycled or conserved. It is a product that has more environmentally sound content orpackaging in reducing the environmental impact (Elkington and Makower, 1988; Wasik, 1996). In other words, green product refers to product thatincorporates the strategies in recycling or with recycled content, reduced packaging or using fewer toxic materials to reduce the impact on the naturalenvironment. Krause (1993), in his research found that consumers were becoming more concerned about their everyday habits and the impact on theenvironment. The outcome of this is that some of the consumers translated their environmental concern into actively purchasing green products commitment(Martin and Simintiras, 1995).

Consumers who are aware of and interested in environmental issues are called green consumers (Soonthonsmai, 2007). These green consumers usuallyorganized petitions, boycotted manufacturers and retailers and actively promote the preservation of the planet (Fergus, 1991). Ottman (1992) reported thatconsumers accepted green products when their primary need for performance, quality, convenience, and affordability were met, and when they understoodhow a green product could help to solve environmental problems. The knowledge gap on the uses and values of green products prevents consumers incommitting themselves to any purchase decisions.

Environmental Attitudes - Allport (1935) defined attitude as: "A mental and neural state of readiness, which exerts a directing, influence upon the individual's response to all objects andsituations with which it is related". According to Schultz and Zelezny (2000), attitudes of environmental concern are rooted in a person's concept of self and thedegree to which an individual perceives him or herself to be an integral part of the natural environment". In conclusion, attitude represents what consumers likeand dislike (Blackwell et al., 2006) and consumers' product purchasing decisions are often based on their environmental attitudes (Irland, 1993; Schwepker andCornwell, 1991).

There is a general belief among researchers and

environmental activists that through purchasing environmentally friendly products or green products, productswith recyclable packaging or properly disposing of non-biodegradable garbage, consumers can contribute significantly to improve the quality of the environment(Abdul-Muhmim, 2007). The quality of the environment depends critically on the level of knowledge, attitudes, values and practices of consumers (Mansarayand Abijoye, 1998). Attitudes are the most consistent explanatory factor in predicting consumers' willingness to pay for green products (Chyong et al., 2006).

This means that price is not the main factor in preventing consumers from purchasing green products if they are pro-environment.

Consumers' perceived level of self-involvement towards the protection of the environment may prevent them from engaging in environmentally friendlyactivities such as recycling (Wiener and Sukhdial, 1990). According to Tanner and Kast (2003), green food purchases strongly facilitated by positive attitude ofconsumers towards environmental protection. Personal norm is the feeling of moral obligation of consumers. It is a powerful motivator of environmental behaviour (Hopper and Nielson, 1991; Stern and Dietz, 1994; Vining and Ebreo, 1992). The extent to which people feel obliged to recycle is related to conservation-related product attributes (Ebreo et al., 1999). These investigations suggested that environmentally friendly behaviour may be characterized asmorally demanding. Consumers feel morally obligated to protect the environment and to save the limited natural resources on the earth. However, Tanner andKast (2003) found that consumers' green food purchases were not significantly related to moral thinking.

Demographic Characteristics - Straughan and Roberts (1999) segmented college students based upon ecologically conscious consumer behaviour and stated that the younger individuals were likely to be more sensitive to environmental issues. The results of their study indicated that the demographic variables such as age and sex were significantlycorrelated with ecologically conscious consumer behaviour when considered individually; and that income lacks significance. Green purchase intention correlatespositively with every age and income except for education (Soonthonsmai, 2001). Many studies have shown significant differences between men and women inenvironmental attitudes (Brown and Harris, 1992; Tikka et al., 2000) with men having more negative attitudes towards the environment compared to women(Eagly, 1987; Tikka et al., 2000). Women were more likely to buy green product because they believe the product was better for the environment (Mainieri etal., 1997).

Research Problem and Objectives - Creating customer satisfaction and building long term customer relationship are some of the primary objectives' firms try to achieve to sustain their business inthe competitive business world. Environmental sustainability is a matter which cannot be ignored, so business organizations have to recognize the competitiveadvantages and business opportunities to be gained from green marketing. With an increase in the social and political pressures, many firms embraced greenmarketing strategies and exploited these environmental issues as a source of competitive advantage. Hence many companies started to be more socially responsive towards developing environmentally friendly activities and putting in numerous efforts to keep in-step with the environmental movement. As aresult, it is vital to explore their attitude towards green products.

The Main Objectives Of The Study Are:-

1. To study consumer attitude towards green marketing.
2. To investigate the consumers attractiveness towards green products in FMCG sector and their impact on purchasing decision in rural areas.
3. To evaluate consumer attitudes and perception regarding green products in FMCG sector under five value added areas such as product, price, place, promotion and package that lead towards the motivation of consumption.

Hypotheses

Based on the theoretical and empirical literatures, the following hypotheses were proposed.

H_1: There is relative importance of the items considered desirable while buying green products.

H_2: The correlation of each of the concepts namely product, price, place, promotion and package and these variables have significant impact on theconsumers buying decisions.

Methodology

Data Collection - The study is an experiential one. In order to obtain reliable information from the respondents, attempt has been made to obtain primary data. For that purpose, adetailed questionnaire was administered. Personal interviews and observations were also made. Convenience sampling was used. The questionnaire comprisesof 22 questions including both closed and open-ended questions. The respondents were asked to rate each item on a 5point Likert scale from 1 = stronglydisagree to 5 = strongly agree. The sample was employed 200 respondents from urban areas of Madhya Pradesh. Respondent's category comprised with students,academic staffs, office workers, housewives, business people and managers of several companies those who have much exposure to the FMCG category.

Sample Profile

District	Number of Respondents
Bhopal	50
Indore	50
Gwalior	50
Jabalpur	50

Analysis And Discussions

Analysis Procedure - Descriptive statistical techniques were utilized to analyse data with the help of SPSS package. The major statistical tools which were used in this study are centraltendency (mean), percentage analysis, and hypothesis testing and correlation analysis. Percentage

values were used to identify the contribution of various categoriesof each variable. The central tendency values used to identify the nature of attractiveness towards each variable of eco-friendliness.

Gender

		Frequ -ency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid	Male	112	56.0	56.0	56.0
	Female	88	44.0	44.0	100.0
	Total	200	100.0	100.0	

age_group

		Frequ -ency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid	Below 20Years	45	22.5	22.5	22.5
	21-30 Years	99	49.5	49.5	72.0
	31-40 Years	39	19.5	19.5	91.5
	Above 40 Years	17	8.5	8.5	100.0
	Total	200	100.0	100.0	

education

		Frequ -ency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid	Higher Secon -dary	26	13.0	13.0	13.0
	Grad -uate	56	28.0	28.0	41.0
	Post Grad -uate	94	47.0	47.0	88.0
	Profes -sional	24	12.0	12.0	100.0
	Total	200	100.0	100.0	

income

		Frequ -ency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid	Less than 20000	41	20.5	20.5	20.5
	20001 -30000	140	70.0	70.0	90.5
	30001 -40000	10	5.0	5.0	95.5
	Above 40000	9	4.5	4.5	100.0
	Total	200	100.0	100.0	

occupation

		Frequ -ency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid	Student	17	8.5	8.5	8.5
	Service	92	46.0	46.0	54.5
	Business	66	33.0	33.0	87.5
	Home maker	25	12.5	12.5	100.0
	Total	200	100.0	100.0	

Hypothesis 1: Weighted Average - At the initial stage, important factors are identified which are considered desirable while buying green products. Sometimes the items in a series may not haveequal importance. The weighted average mean is used whenever the relative importance of the items in a series differs. While calculating the weighted average,each item is given a weight judged by its relative importance.

Table: Weighted Average (see in lase page)

The table indicates that the health and safety, performance and brand and quality are the factors that the consumers consider while buying green products. Performance, efficiency and cost effectiveness are the next important items that are considered.

Hypothesis 2: Test Of Goodness Of Fit And Correlation Analysis

Test is used to know whether the observed values are consistent which may be obtained under some hypothesis. If the observed values are close to theexpected values under a hypothesis the fit is said to be good. This test is used to analyse the goodness of fit between the five values added P's (i.e. product, Price, Place, Promotion and Package).

Table: Test Of Goodness Of Fit

Variable	**Calculated X^2 value**	**Remark at 5% level**
5 P's (Product, Price, Place, Promotion and Package)	0.719	Fit

The results show that there is goodness of fit between the 5 P's.Relationship between key variables of green marketing (i.e., Product, Price, Place, Promotion and Package are independent variables and customer's purchasedecision (dependent variable). The relationship can be varied according to the demographic variables like age, gender, education; etc. Correlation analysis helpsin determining the degree of relationship between two or more variables. The analysis is used to measure the degree of relationship between the independentvariables and the dependant variable. Mean variances are taken between each of the independent variables and the purchase decision of the consumers.

Table: Degree Of Relationship Between Testable Variables

Independent Variable	Dependant Variable	Pearson's Correlation co-efficient
Product	Purchase decision	0.823
Price		0.491
Place		0.341
Promotion		0.609
Package		0.771

The above analysis clearly shows that environment friendly products and packages make significant impact on customers buying decision. The marketinginformation with the environment friendly product information will also have significant impact on customers buying decision. Customers will not consider muchabout the price and place/distribution of the environment friendly product.

Consumer Buying Intention - Consumer buying intention was measured on two broad dimensions i.e., price sensitivity and brand consciousness in a 3-point scale and the results obtainedfrom are as follows:

1. Purchase Of Costly Products - An overwhelming majority (81%) of the respondents agree to the statement that 'I would like to purchase those productswhich are costlier but causing less environmental pollution', with 9 % as undecided and 8 % disagreed.

2. Purchase Of Cheap Products - A great majority (71%) of the respondents agree that 'I would not like to purchase those products which are cheap butcausing environmental pollution' 15% undecided and 14 % disagreed.

3. Purchase Of Inferior Quality Products - A great majority (72%) of the respondents are agree that 'I would like to purchase those products which areinferior in quality but causing less environmental pollution', with 19% as undecided and 9% disagreed.

4. Purchase Of Quality Products - More than half (61%) of the respondents agree with the statement that 'I would not like to purchase those productswhich are good in quality but causing environmental pollution', 10% said its undecided and 29% disagreed.

Conclusion - Consumers select products and new innovations that offer benefits they desire. Green Marketing must satisfy two objectives: improved environmental qualityand customer satisfaction. The marketer needs to know what is the relevance of Social Marketing in order to protect the environment and to improve the qualityof life and are concerned with issues that include conservation of natural resources.

The result indicated that there is no difference between gender in their environmental attitudes and their attitudes on Green Products and also there is nosignificant difference between men and women in environmental attitudes. The study shows that consumers are ready to pay more prices for the productswhich are causing less environmental pollution. Green Marketing requires applying good marketing principles to make green products desirable for consumers.

Business organizations have to follow strategies in order to get benefits from the environmentally friendly approach. Therefore, in the product strategy,marketers can identify customers environmental needs and developed products this issue, produce more environmentally responsible packages.

As the current study is not based on any specific green product, further investigation is required to study consumer's attitude on the types of green products inthe market. The perceived behavioural barriers are additional significant predictors of environmental behaviour(Kalafatis et al., 1999).The future success of theproduct and services will depend on credibly communicating and delivering consumer's desired value in the market place, then only business will go onto a moresustainable path.

References :-

Text Books :

1. Dr.Chandrasekar K.S, Marketing Management, Tata McGraw Hill Education Private Limited, New Delhi, 2010.
2. Ber G C (2001), Marketing Research, Tata McGraw – Hill Publishing Company Ltd, New Delhi.
3. Harvard Business Review on Green Business Strategy, Harvard Business School Publishing Corporation, USA.
4. Kothari. C.R, Research Methodology and Techniques, New Delhi, New Age International Publishers (p) Ltd, 2004.
5. Kotler Philip. P, Marketing Management, New Delhi, Prentice – Hall of India, 1999.
6. Nakkiran .S, Selveraju R, Research Methodology Methods in Social Science, New Delhi, Himalaya Publishing House, 2001.

Journals & Thesis :

1. Abdul-Muhmin, A.G. (2007). Exploring consumers' willingness to be environmentally friendly.International Journal of Consumer Studies, 31, 237-247.
2. Allport, G.W. (1935). Attitudes. In a handbook of social psychology. Worcester, MA: Clark University Press.
3. Brown, G. and Haris, C. (1992). The US forest service: Toward the new resource management paradigm? Society and Natural Resources, 5, 231-245.
4. Coddington, W. (1993), Environmental Marketing: Positive Strategies for Reaching the Green Consumer, McGraw-Hill, New York, NY.
5. D'Souza, C., Taghian, M. Lamb, P. and Peretiatko. R. (2007). Green decisions: Demographics and consumer understanding of environmental labels International Journal of Consumer Studies, 31, 371-376.
6. Elkington, H. and Makower. (1988). The green consumers. New York: Penguin Books.
7. Gurau, C. and Ranchhod, A. (2005). International green marketing: A comparative study of British and Romanian firms. International Marketing Review,22(5), 547-561.
8. Haron, S.A., Paim, L. and Yahaya, N. (2005). Towards sustainable consumption: An examination of environmental knowledge among Malaysians.International Journal of Consumers Studies, 29(5), 426-436.
9. Kalafatis, S.P., Pollard, M., R.andTsogas, M.K.(1999). Green Marketing and Ajzen's Theory of Planned Behaviour: A cross- market examination. Journal ofConsumer Marketing, 16, 441-460.
10. Mainieri, T., Barnett, E., Valdero, T., Unipan, J., and Oskamp, S. (1997). Green buying: The influence of environmental concern on consumer behaviour.Journal of Social Psychology, 137, 189-204.
11. Ottman, J.A. (1993), Green Marketing: Challenges and Opportunities for the New Marketing Age, NTC Business Books, Lincolnwood, IL.
12. Peattie, K. (1995). Environmental marketing management, London: Pitman Publishing.

13. Schultz, P.W. and Zeleny, L.C. (2000). Promoting environmentalism. The Journal of Social Issues, 56, 443-457.
14. Tanner, C. and Kast, S.W. (2003). Promoting sustainable consumption: Determinants of green purchases by Swiss consumers. Psychology & Marketing,20(10), 883-902.
15. Vining, J. and Ebreo, A. (1992). Predicting recycling behaviour from global and specific environmental attitudes and changes in recycling opportunities. Journal of Applied Social Psychology, 22, 1580-1607.

Websites :

1. www.elsevier.com/locate/eswa
2. www.ccsenet.org/journal.html
3. www.icmrindia.org
4. www.greenmarketing.net/stratergic.html
5. www.epa.qld.gov.au/sustainable_ industries
6. http://www.bp.com/sectiongenericarticle.do? category Id=9010219&contentId=7019491.
7. http://www.greenbiz.com/news/news_third.cfm?NewsID=3028
8. http://www.green-e.org/getcert_ghg.shtml.

Table: Weighted Average

Particulars	Highly satisfied	Satisfied	Neutral	Dissatisfied	Highly dissatisfied
Efficiency and cost effectiveness	17	38	75	51	19
Health and safety	31	79	35	43	12
Performance	21	83	69	19	8
Promotion	24	35	74	45	22
Brand and quality	36	70	45	31	18
Convenience	22	40	85	47	6

****

A Study of Partition Literature the novel of Selected writer, Attia Hosain, Khushwant Singh, Chaman Nahal and Bapsi Sidhwa

Sumiyyah Arif * Dr. Shubra Rajput **

Abstract - The long freedom struggle ultimately led to India's Independence on August 15 1947. The Independence was achieved by paying a heavy price for it. The Indian subcontinent was divided into two parts India and Pakistan leading to widespread violence and massacre. One of the most momentous event in the Indian history is the Partition of India. It is different to trace such any such event with such magnitude and for- reaching consequence in the history of the world. Statically over million people were killed and over 10 million people were dislocated displaced. However these statistics also fail because it does not give to how women must have felt while drawing themselves in wells drowning in order to avoid being abducted by men of the other community. The Historical narrative also fails as it could not narrate the pages of separation from their near and dear ones. The division of the country which resulted in brutal violence and displacement has been a topic of discussion and debate among scholars and writers ever since result in the Production of a vast body of literature. Most of the writer who suffer from the particular black events. There are two categories of scholars and writers who write about Partition literature. Some scholar and writes concentrate on cause of violence. The other deal with the trauma and loss associated with the Partition of India. Among the various genres the Indian English Fiction deals with Partition and Politics of Partition at great length. Some of the most celebrated work of fiction dealing with theme of Partition are as fallows most of the work on Partition like that Khushwant Singh's Train to Pakistan (1955) , Attia Hosain's Sunlight On A Broken Column (1961), Pdmini Sengupta's Red Hibiscus (1962), Manohar Malgonkar's A Bend in The Ganges (1964),Chaman Nahal's Azadi and Bapsi Sidhwa's Ice-Candy-Man the purpose of my research paper study of Partition Literature and the novel of selected , Attia Hosain, Chaman Nahal,Khuswant Singh and Bapsi Sidhwa.

Keywords – Partition, Violence, trauma, India, Pakistan.

Introduction - The partition of British India in 1947 was one of the most cataclysmic events in world history, and the debate on it is endless. It was one of several partitions that were carried out in Europe, Asia Africa and the Middle East since the eighteenth century .Like most of them it was attended by, and exacerbated violence between, different religious communities. It resulted in more casualties than any other partition. The numbers killed, displaced and dispossessed in the Partition of India is unknown. Anything between 200,000and three million people may have lost their lives. Between 1946 and 1951, some nine million Hindus and Sikhs crossed over into India from Pakistan and about six million Muslims went to Pakistan from India. Of the three parties involved in the negotiations for the transfer of power in India in 1946-7, it was the Muslim League which emerged victorious. The Partition of India, resulting in the creating of a sovereign 'Muslim' state in the subcontinent, signalled the triumph of Muslim Communalism or 'Pakistan nationalism'. For different reasons partition was a failure for the Congress and the British. Partition was the antithesis of the congress ideal of secular Indian unity .And partition upset British plans to use an undivided, independent India as the military base of their world power. More than half a century after the event, how and why the subcontinent was divided remains the subject of continual debate. Much of the argument has revolved around the sharing of the "blame" for partition, especially by the British and 'Indians, who did not want it. Indians have blamed the divisive policies of the British; while both Indians and British have blamed Nehru's ideological rigidity for alienating the Muslim League in 1937 and 1946.And the British have of course claimed that they did everything to avoid partition and that Indian parities were "responsible" for it.

The partition of India was an important event not only in the history of the Indian subcontinent but in world history. Its chief reason was the communal thinking of both Hindus and Muslim; but the circumstances under which it occurred

*Research Scholar, Dayanand Girls Post Graduate College, Kanpur, C.S.J.M. University, Kanpur (U.P.) INDIA
** Associate Professor, Dayanand Girls Post Graduate College, Kanpur, C.S.J.M. University, Kanpur (U.P.) INDIA

made it one of the saddest events of the history of India. No doubt, the Hindus and the Muslims were living together since long but they failed to include the feelings of harmony and unity among themselves. The partition was exceptionally brutal and large in scale and unleashed misery and loss of lives and property as million of refugees fled either Pakistan or India.

The novels that affected from partition directly or indirectly are Khuswant Singh's Train To Pakistan (1955), Balachandera Rajan's The Dancer (1958), Attia Hosain's Sunlight On A Broken column (1961) Banophul's Between Dream And Reality (1961), Padmini Sengupta's Red Hibiscus (1962), Manohar Malgonker's Distant Drum 1961 and Bend in The Ganges (1964), Chaman Nahal 's Azadi depict the theme of partition entirely critically and these novels tell about the problem pain suffering and turbulence that defaced India because of Partition. In the view of the above points, the purpose of my topics a study of Partition literature the novel selected writer, Attia Hosain, Chaman Nahal, Khuswant Singh and Bapsi Sidhwa. Most of the writers who were suffer from the particular black events. Some scholar writers concentrate on the violence. The other deals with the trauma and loss associate with the Partition of India. The division of the Indian subcontinent in 1947 on the basis of the Two –nations- theory gave birth to two nations' – India and Pakistan. The emergence of these two nations at the end of colonial rule, celebrated as crowning achievement of the Freedom Movement, as the crowning achievement of the Freedom Movement, was nevertheless accompanied by horrendous tragic events because of the unplanned way the leaders proceeded to partition the country.

Alok Bhalla, in his 'Introduction' to Stories about the Partition of Indian writes, "The partition of Indian subcontinent was the single most traumatic experience in our recent history" (Gundur, 2008). In her The Other Side of Silence, a research work based on oral interviews, Urvashi Butalia remarks, "The political partition of India caused one of the great human convulsions of history." (Gundur, 2008), Ritu Menon and Kamla Bhasin think of it as "a metaphor for irreparable loss" (Gundur, 2008) . V.P Menon, an official eyewitness to the event, admits that the "situation was full of fear and foreboding. We had not expected to be so quickly and so thoroughly disillusioned" (Gundur, 2008) . M. K. Gandhi had said "if the Congress wishes to accept partition, it will be over my dead body" (Gundur, 2008). But he had to yield to the force of circumstances. M.A. Jinnah, the proponent of the Two-nation Theory and architect of Pakistan, himself then regretted, "The creation of Pakistan was the greatest mistake of my life" (Gundur, 2008) . All these opinions hold the mirror up to what the Partition was in the annals of Indian history. But it is now very difficult to imagine the impact of the tragedy on human life. Politically, the country was divided; socially, communal relationships were disturbed; domestically, families underwent traumas; psychologically, individuals were torn apart, and lost their identity. As S. Setter and Indira Baptista Gupta conclude, "One will never know exactly how many people died in the riots which accompanied it, but around seventeen million people had to relocate themselves across the newly drawn boundaries" (Gundur, 2008) .

Now the Partition is fait accompli; what was done cannot be undone. We cannot afford to be amnesiac about that bloody chapter of history. What is important is the two nations have to learn from the effects of the event. Survir Kaul thinks, "We seem to have learnt the wrong lessons from the horrors and real politick of partition (Gundur, 2008)" Bhisham Sahni, the witness turned writer also says, "The partition of the country should have put an end to the riots, but it hadn't (Gundur, 2008) . Now it seems that there is a felt need to understand the complexity of the Partition, as many of the contemporary problems have their roots in the rumblings of Partition. The communal politics, which guided the road to the division, has been only a present day problem before India but also a global worry. Hindu/ Sikh-Muslim conflict often came out in the open. Take for example the recent Godhra massacre. Communal riots have been disturbing the Indian social, political and economic stability time and again. The border dispute between India and Pakistan has given rise to cross border terrorism and has been a hindrance to the growth of both the countries. The very idea of partition has become an on-going process in India since the colonial rule. Still the echoes of further fragmentation are being heard.

Attia Hosain - Attia Hosain, one of the pioneering Indian women Fictionists it in English, has not been a prolific writer. But her Sunlight in a Broken Column (1961) and Phoenix Fled and Other Stories (1953) have established her supremacy as an outstanding writer in English of the post-Independence era. "In her novel Sunlight on a Broken Column," writes Mulk Raj Anand in the 'Profile' to the novel, however, she has revealed herself as one of the most talented pioneers of the novel in Indian English Literature." It is a rare tribute from a male writer to a female writer. Sunlight on a broken column is a bildungsroman. Like Bapsi Sidhwa'Ice –Candy-Man (1988), the novel traces the growth of its protagonist Laila-modelled on Attia herself in fictional form. Everything is seen through her eyes. It is also the story of a decaying Muslim feudal family of Lucknow.The socio-political condition from the 1930s to the post- Partition days provides a background to the story of Laila and her family. The novel is divided into four parts. The first part gives a realistic picture of the family. It is a typical orthodox Muslim family. The disintegration of the family starts in part two of the novel. In the third part of the novel politics begins to affect the family affairs. Hot discussions take place among the members of the members of the family and the fourth part is about the crippling effects of the Partition on the family. When it is decided that the country is going to be divided into two different nations- India and Pakistan. Sunlight on a Broken Column is an important novel about

Partition. This is the only novel which gives the Muslim point of view of Partition among Indian novel in English. The Muslim point of view of Partition is very objectively; depicted through Saleem and Kemal. Very importantly, the novel is successful in transforming the experience of the ordeal into a work of art. Another unique feature of the novel is that it traces the Muslim identity during the turmoil. The author herself belongs to the Muslim community. The protagonist Laila, who is the point of view of the novel, is modelled on the writer herself. And she is an eyewitness to whatever happens to the family during Partition.G.S. Amur rightly places Attia Hosain in the tradition of Muslim novelists who have depicted Muslim way of life in different phases. According to him, the novel "shares the distinction of being an out- standing novel of Muslim life and attitude in India with Ahmed Ali's Twilight in Delhi."

Finally, in the opinion of Mulk Raj Anand, Sunlight on a Broken Column "is one of the few deeply sensitivity novels in Indian English writing of the last generation, a poignant, tragic narrative full of the poetry of remembrance with an undercurrent of stoic calm .The novel occupies an important place in the history of Indian Literature in English. Because, it is the only novel on Partition where the first person narrative technique is used; it is the first women's response to Partition and the first Muslim novelist to record the crisis of Partition in the History of Indian novel in English.

Khushwant Singh - Khuswant Sigh's Train to Pakistan is set in Mano Majra, a small border village of seventy families. It consists of equal number of Sikhs and Muslims, a single Hindu family, the head of which, Ram Lal, is killed in the opening chapter of the novel, and a few pseudo- Christians, the sweepers. Though they belong to different religious, their village offers a perfect picture of communal harmony and peace. They all venerate a three-foot slab of sand-stone, the deo, and when in need visit it. The Sutlaj on whose eastern bank the village is situated and a railway station called Mano Majra Railway Station are two important landmarks of the village. The temporal backdrop of the novel is 1947, the year which saw the worst ever communal violence in the Indian subcontinent. Khushwant Singh writes "The riots had become a rout. By the summer of 1947- ten million people- Muslims Shikh and Hindus were in flight. By the time the monsoon broke, almost a million of them were dead" (Nag).

As the plot of Khushwant Singh's novel Train to Pakistan progresses towards its concluding part, one of the main character viz. Hukum Chand, the magistrate of Chundunnugger, is a disillusioned man as he feels the sting of his helplessness to do much to stop the communal violence that had erupted in the wake of the partition of country. Political freedom had been achieved apparently through 'non-violent' means but Hindu- Muslim riots had erupted in several parts of India and also in the newly-created Pakistan.

Chaman Nahal - Chaman Nahal has depicted the horrors of partition experience by concentrating on the life of Lala Kanshi Ram of Sialkot, thereby highlighting the positive as well as the negative side of the complex problem. Lala kanshi Ram, the protagonist of Azadi becomes a spokesman of the Hindus who are deeply disturbed by the unprecedented political event. Although the novel has been written from an omniscient point of view, it depicts life as seen through Lala Kanshi Ram's consciousness. Lala Kanshi Ram leads a contented life in Sialkot as a grain merchant. He has also bought a few acres of land in his native village. He has a pious and beautiful but illiterate wife, Prabha Rani whom he tries to educate. He has a daughter, Madhubala and a son, Arun. He has been living in a rented house belonging to Bibi Amravati. He is a spirited Hindu who has great respect for Vedic philosophy. He knows Sanskrit, Hindi and Punjabi sufficiently well. A member of the Arya Samaj, he has great admiration for Hindu culture in general.

Azadi is, thus an important novel which deals with various aspects of the traumatic experience of partition of the country into two. Chaman Nahal shows his remarkable powers of observation of the human nature in general and the political behaviour of Hindus and Muslims in particular. Though the novel is tragic in its tone, it is epical in its vast canvas. The greatness of Chaman Nahal lies in his balanced and impartial picture of the Hindu-Muslim hatred and love, their emotional and political relationships and the ambivalent relationship between Indians and British people in a very realistic and elaborate manner. The novel is a landmark in the Indian English political fiction providing solid material both to the literary critic and the political psychologist for aesthetic enjoyment and dispassionate research.

Bapsi Sidhwa - Bapsi Sidhwa's Ice-Candy-Man (1988) is the prism of Parsi sensitivity through which the cataclysmic event is depicted .Ice- Candy- Man is, so for, the only novel written by a Parsi on the theme of Partition. While the novel shows in the beginning the noncommittal attitude of the Parsi community towards the flux in which the various communities of India found themselves in the beginning of the twentieth century, it distills the love-hate relationship of the Hindus and Muslims through the consciousness and point of view of Lenny, an unusually precocious five-years-old Parsi girl.

Thus, the analysis of the changing pattern of communal relations shows a pattern of communal amity between the Hindus and Sikhs on the one hand and the Muslims on the other in the pre-Partition era, a growing impatience and mistrust between them on the eve of Partition culminating in the pattern of utter communal discord during Partition and pattern of reconciliation in the breaking of the dawn of understanding between them in the distant horizon during the post- Partition era. Related very closely to these changing patterns of communal relations is the sea- change in the attitude of the Parsi community from the bald egg-shell of passive neutrality to an active neutrality towards the pattern of communal discord swirling around them

during Partition.

Though Bapsi Sidhwa's novel does focus on the changing attitude of the Parsi community, it leaves out the exploration of the dilemma that the Parsi community had to resolve regarding its unnatural schismatic division between Indian and Pakistani Parsis. While the novel cannot be faulted for that, one does feel the need of yet another Parsi novel on Partition which would explore and express this vital aspect.

Conclusion - As the above discussion, shows all novel which I have selected in this paper with the theme of Partition. All novel is not less the any tragic. Chaman Nahal in his novel, Azadi did not try to criticize one religion against other (Muslim against Hindu) Nahal not only objectifies the personal experience but also presents a deliberate contamination of the historical with didactic and situational discursive elements. Almost at the end of the novel this fact had been cleared by him.Nahal through his protagonist gave his idea that he did not hate the Muslims because what they did in Pakistan with the Hindus, the Indians did the same with the Muslim in India. On the other hand Bapsi Sidhwa novel, Ice- Candy- Man is beautiful with strong image of affection, life, hope, trust and compassion. It is finally 'love' that succeed. Though Communal riots between Hindu and Muslim separate them, Ice- Candy- Man love for Ayah never ends reiterating that love is borderless. Therefore any man- made border cannot but only temporarily stall the ever flowering reservoir of love and humanity. Khushwant Singh novel' Train to Pakistan is also a valuable social and political document and a highly readable Fiction that keeps the reader engrossed. It is cleverly contrived and articulate technique helps the novelist dive into the mind of character and presents his candid view with precision and objectivity on the different shades of this tragedy. Finally, in the opinion of Mulk Raj Anand Sunlight on a Broken Column " is one of the few deeply sensitivity novel in India English writing of the last generation, a poignant, tragic narrative full of the poetry of remembrance with an undercurrent of stoic calm." It is the First women's response to Partition and the First Muslim novelist to record the crisis of Partition in the History of Indian novel in English.

References :-

1. Gundur, S.N. Partition and Indian English Fiction, Adhyayan Publishers & Distributer, New Delhi; 2008.
2. Singh, Inder Anita. The Partition of India; National Book Trust, India, Vasant Kunj, New Delhi, 2017.
3. Bhalla, Alok Introduction, Stories about the Partition of India, New Delhi, 1994.
4. Butalia, Urvashi The other side of Silence, Penguin, Delhi; 1998.
5. Menon, Ritu. and Bhasin, Kamla Preface, Borders and Boundaries: Women in India's Partition, Delhi, 1968.
6. Menon, V.P. The Transfer of Power in India, Delhi; 1968.
7. Gandhi, M. K. quoted in Maulana Abul Kalam Azad, India Wins Freedom: an Autobiographical Narrative, Calcutta, 1959.
8. Jinnah, M. A. quoted in Damodar Prabhu "On Knife's Edge," New Quest 148. Apr- June (2002):74.
9. Setter, S. and Gupta, Bapista Indira. Introduction, Pangs of Partition Vol. 1, New Delhi, 2007.
10. Kaul, Suvir. Introduction, The Partition of Memory, Delhi, 2001.
11. Sahni, Bhishm. "Objectifying Troubling Memories: An Interview with Bhisham Sahni," by Alok Bhalla, Inventing Boundaries: gender, Politics and the Partition of India, Mushiral Hasan, New Delhi, Oxford University Press, 2000.
12. Anand, Raj, Mulk. "A Profile, Sunlight on a Broken Column by Attia Hossain" by Attia Hosain", New Delhi, 1979.
13. Amin, Amina "Sunlight on a Broken Column: The Disintegration of a Family," Kamini Dinesh (New Delhi, 1994.
14. Hosain, Attia .Sunlight on a Broken Column, Arnold-Heinemann, New Delhi, 1979.
15. Sidhwa, Bapsi. Ice-Candy-Man, William Heinemann, London: Penguin, 1989.
16. Jain, Madhu. "Sensitive Servings: Despande and Sidhwa Fetch Notice," India today, September 15, 1989.
17. Singh, Khushwant. "Ice- Candy- Man: Partition Story," Saturday Plus, The Tribune, January 13, 1990.
18. Darling, M. L. The Punjab Peasant in Prosperity and Debt London, 1925.
19. Mujeeb, M. Indian Muslims London: 1976.
20. Chaman, Nahal, Azadi, Orient Paperbacks, Delhi: 1979.
21. Singh, Khushwant. Train to Pakistan, Time Books International, New Delhi: 1989.
22. Singh, Khuswant. "A Forgetful National" in With Malice towards One and All." The Hindustan Times, January 31, 1998, p. 13.
23. Bhatia, Dr Sheela Singh. Theme of Partition and Freedom in Khushwant Singh's Train to Pakistan. Express, on International Journal of Multidisciplinary Research, Departmant of English, Jazan University, Kingdom of Soudi Arabiya., Aug. 2014.
24. Sheoran, Bharatender. Tyranny of Partition: A Retrospective Analysis of Chaman Nahal's Azadi, Department of English & Foreign Languages, Feb. 2014.
25. Halyal, Pooja. Rejuvenating Cracking India: Sidhwa's Ice- Candy- Man, Rani Channamma University, Belagavi, Karnataka, Journal of Higher Education and Research Society: A Refereed International .Oct.2016.

****

Exploring Varanasi through a Westerner's Sojourn: A Reading of *Kaleidoscope City* by Piers Moore Ede

Ms. Savita Verdia*

Introduction - *Kaleidoscope City: A Year in Varanasi* is a fascinating travelogue by a Westerner that encapsulates the history and culture of the holy city of India that is Varanasi. Varanasi also known through names like Benares and Kashi has not only been an important city to the Hindu pilgrims but has equally been enticing for the Westerners. A year spent by the author in this age-old city has helped him to delve deep into the life being lived there. Ede's sensitive insight into the city is well transmitted to the readers through this intriguing travelogue. The travelogue which paints a vivid picture of the everyday life in Varanasi transports the readers into the luminous world of pilgrims and at the same time triggers their sensitivity and also allows them to relive the culture of a city deeply revered.

Piers Moore Ede born in 1975 is a British travel writer who has three travel books to his credit. His first travel book *Honey and Dust*, published in 2004 won the DH Lawrence prize in the nonfiction category. The book which records the author's travel across the world in search of honey and the fast-dying traditions of the honey-farmers was also nominated for the Jeremy Round first book award. His second book *All Kinds of Magic* published in 2010 is a modern spiritual travelogue which recounts the author's journey to India, Turkey and Spain in search of the magical and the mystical. Ede's third travel book *Kaleidoscope City: A Year in Varanasi* published in 2015 is an interesting account of a year spent by the author in the holy city of Varanasi. Besides these three travel books Ede has also contributed to several literary travel and environmental publications like the Telegraph, the Times Literary Supplement, Traveller, Earth Island Journal and Ecologist. Ede is also a photographer and blues guitarist. He even runs a popular website, the *Indiaphile* which is quite helpful and beneficial for the lovers of India and Indian travelers.

Piers Moore Ede, a resident of East Sussex, got allured by Varanasi and its people as he passed through it on his way to Nepal. After many short visits, Ede spent a year in Varanasi discovering and exploring the uniqueness of the city, which, writes Prof. P.N. Singh is "one of the oldest continually inhabited cities in the world". Mark Twain wrote about the city:

Benares is older than history, older than tradition, older even than legend and looks twice as old as all of them put together (Twain quoted in *The Hindu Business Line*).

This ancientness of the city was perhaps the thing that drew Ede towards it. He writes:

I had come to Varanasi to understand, if I could, this most ancient of cities- to breathe in the pungent smells of its labyrinthine streets…I wanted to know the city's secrets, press my ear to its heartbeat. What was it that made this unique amongst cities? What characteristics separated it from its peers? (www.globalonenessproject)

Burning with curiosity to know everything about the holy city which has 'five million tourists every year', Ede comes to Varanasi and rents a top floor portion of two rooms on the banks of the river Ganga, near AssiGhat. Forty years ago, Alice Boner, a renowned Swiss painter and sculptor had arrived in Varanasi and fascinated by the city had bought a house on AssiGhat of which she wrote in her diary: In it I feel I have returned to myself, to my home, my domicile. It is so familiar, so welcoming, so warm…I feel fulfilled, happy, settled and supported, like on a gentle stream (Boner quoted in HarshaVinay's article *Reliving a Legacy*).

Forty years after, Ede, a British had a similar experience as he lived on AssiGhat for a year. A yearlong stay in the city along with a keen perception, high sensitivity and a strong curiosity to learn helped Ede to discover and explore the city's heart. Getting in touch with the local inhabitants and visiting the places he tried to delve deep into the city's history and culture and what resulted was a portrait of a city much like a kaleidoscope. The multihued city is well brought forth in the book through the author's honest coverage of both the marvelous and the squalid, in detail. The sacredness of the Ganga, the theatre performance of *The Ramayan,* the savouring sweets, the finest silk weaving by the legendary masters, the rich musical heritage of the city is all as well accounted as the sad stories of the prostitutes, of the white-robed widows, of the textile workers under the threat of modernization and of the polluted water of the Ganges. Ede's delineation of Varanasi thus allows the readers to view the city beyond the spirituality it offers; beyond the funeral pyres, the temples and the ghats for

*Associate Professor, Govt. Meera Girls' College, Udaipur (Raj.) INDIA

which it is known. Richard Tarrant reviews:

It takes a resident's insight to balance the city's darker side with a celebration of its luminous creativity, renowned cuisine and masti, infectious joie de vivre peculiar to its inhabitants. Moore Ede strikes such a balance with elegance and style (www.ladyco.uk).

Ede as an insider rather than an outsider penetrates deep into the quintessence of the city, travelling to different areas, exploring, researching and interacting with the local inhabitants thus creating a lively portrait of Varanasi. For each of the chapter in the book which deals with an important theme of the city, the author finds local people who would acutely elucidate thereby enhancing the author's understanding of a particular subject which in turn leads to the simplification of the things for the readers. For instance, the author's meeting with a Dom Raja explicates the cremation of bodies by the Ganges; with a khoa maker explains the business of sweet making; with an Aghori Sadhu illuminates on the beliefs of asceticism; with the silk weavers brings in the traditional form of designing on manual looms; with the musicians throws light on the guru-shishya tradition; with an environmentalist takes up the issue of cleaning of the Ganga and so on. This travelogue which takes into account the author's interaction with the people of Varanasi all the more increases the readers' pleasure of riding through the city. The interest of the readers is maintained throughout the book as the hidden and important facts about the city are revealed gradually one by one. John Cheeran in his article writes:

What's remarkable about *Kaleidoscope City*…is Ede's sympathy and love for Varanasi's people and their ways. He takes in the good as well as the bad, retains his traveler's gaze and refrains from condemning that which is shocking and dissembling (www.blogs.timesofindia.indiatimes.com).
Ede through his travelogue on the colourful city of India provides an interesting insight to the readers, familiarizing them to important cultural facts and allowing them to experience and relive the Indian culture. Facts and information about Varanasi could be easily obtained from the different sources on the internet but what Ede's travelogue does is it lets you live the city. Himanshu Joshi, the editor of a travel magazine believes:

Piers Moore Ede's *Kaleidoscope City: A Year in Varanasi* is yet another attempt by an outsider to understand the many emotions the city evokes…Ede's book then…is a travelogue in its truest sense- an outsider looking at the city through the eyes of the locals and trying to make sense of what he sees. What lends weight to his thoughts is the fact that he, apart from two shorter trips earlier, spends one full year in Varanasi (www.pressreader.com).

Ede's in-depth research and captivating depiction of the city are thus sure to inspire the readers to take a trip to the city. The travelogue thus has the potential of expanding the touristic interest in the city.

Ede begins the book by echoing the beautiful lines about the city expressed by Diana Eck in her book *Benares: City of Light*. She writes:

Kashi is the whole world they say. Everything on earth that is powerful and auspicious is here, in this microcosm. All of the sacred places of India and all of her sacred waters are here (*KC* 1).

He himself introduces the city as the one representing the whole of India. In the introduction he defines the city as:

…a river city containing every facet of humanity, every creed, colour, caste, both astonishing beauty and the most harrowing ugliness and desolation. Here was the madness of India, as well as its wisdom, the sublime poetry of its spiritual traditions and the dirty imbalance of corruption. Here were Hindus, Muslims, Buddhists, Christians, Jains and Sikhs… (*KC* 2)

Ede through the travelogues attempts to delineate Varanasi which accumulates the Indian culture and hence is known as the 'microcosm of India'. Through the eight well defined chapters, the author captures the important things happening in the city which form an integral part of the city's existence.

Through his travelogue Ede makes an effort to paint a sincere portrait of an ancient city of India which is likely to be affected by modernization. Ede refers to it as a kaleidoscope city signifying the multihued character which is ever-changing and hence Ede rightly asserts that he has tried to 'freeze-frame' 'this shifting kaleidoscope' through this travelogue. The travelogue then is a paean from a Westerner who was deeply influenced by an Indian city very much 'allied with the older mode of being'. Fascinated by the city he provides a beautiful interpretation of Varanasi:
This is a conservative city, a city that draws its identity from the past, unlike, say, Bombay, whose lure for many Indians is its newness- a place like America, where one can reinvent oneself. Varanasi is a place where reinvention is something of a dirty word. If people flock to Bombay to embrace modernity and find material wealth, they flock here to seek salvation and to leave the material behind (*KC* 185).

The travelogue delineates Varanasi in all its hues and thus allows one to take a dip in and have the experience of all the rituals and traditions of Hindu culture. Ede, a Westerner through his keenness, deep insight and expressive style provides a vivid portrait of Varanasi through his travelogue, a reading of which make one relive the history and culture of India.

Kaleidoscope City by Ede shows that India continues to allure the writers from the West. It exhibits how the western writers are drawn towards India's culture and traditions and how they are tempted to carry out an intense research and write books which are an interesting read. The book provides a complete rundown of the spiritual capital of India. City travelogues which document the perceptions of the writers about all the significant things of that place not only enhance the understanding of the visitors but double the pleasure of visiting that place. Hence to understand the culture and history of a place it becomes

important to immerse one into books which describe those places. Ede in his unique style makes an attempt to highlight the history, culture and customs of one of the most important cities of India.

References:-

1. Buncombe, Andrew. “Varanasi: The Last Stop before Nirvana.” *Independent* 18Oct.2009.N.pag. Web.3 Jan.2018.
2. Cherran, John. “The Call of Varanasi.” *Times of India Blogs* 16July2015.N.pag.Web.16Mar.2018.
3. Ede, Piers Moore. *Kaleidoscope City: A Year in Varanasi*. Bloomsbury: London, 2015. Print.
4. “Crossing a Place: A Year in Varanasi.” *Global Oneness Project*n.d.Web.27Jan.2018.
5. Gupta, Ankit. “Tourists and Pilgrims flock to Varanasi, a sacred Hindu city on the banks of the Ganges River.” *Smithsonian.Com* 19Aug.2009.Web.11Sept.2017.
6. Gupta, Rinku. “Older than History.” *Hindu Business Line* 2Feb.2004.N.pag.Web.13June2017.
7. Joshi, Himanshu. “Looking for light in Varanasi’s twilight.” *Deccan Chronicle* 16Apr.2015.N.pag. Web.5May2016.
8. Tarrant, Richard. Rev. of *Kaleidoscope City: A Year in Varanasi*, by Piers Moore Ede. 27Feb.Web.5Mar.2018.
9. Vinay, Harsha. “Reliving a Legacy.” *Hindu* 26 Aug. 2016. N. pag. Web. 5Feb.2018.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

अहिंसा एवं गांधी दर्शन

डॉ. सुनीता गुप्ता*

शोध सारांश – राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी सत्य, अहिंसा, त्याग और तपस्या के महाप्रतिपादक थे। गाँधी जी ने अहिंसा के बल पर ही अंग्रेजी सरकार को हिलाकर रख दिया था और अहिंसा के मार्ग पर अडिग रहते हुए ही उन्होंने पूरे विश्व को शांति और सौहार्द का अविस्मरणीय पाठ पढ़ाया था। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान स्वतंत्रता सेनानी दो मुख्य दलों में बंटे हुए थे, जोकि क्रमश: नरम दल और गरम दल थे। इनमें से नरम दल का नेतृत्व राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी करते थे। उन्होंने हमेशा अहिंसा के मार्ग पर चलते हुए आजादी की राह का मार्ग प्रशस्त किया था। गांधीजी के अनुसार– अहिंसा का अर्थ है, मन–वचन–कर्म में अहिंसा। गांधी अहिंसा को जिस अर्थ में प्रयुक्त करते थे उस अर्थ में उसे सफलता तभी मिल सकती है जब, जिस परिस्थिति में उसका प्रयोग करना है, उस परिस्थिति को एक नैतिक परिस्थिति माना जाय। गांधी जी ने हमें सत्य और अहिंसा का महत्व बताया। हमारा कार्य अब यही है कि सत्य और अहिंसा को ऐसा व्यावहारिक रूप दें जिसका पालन किया जा सके।

प्रस्तावना – महात्मा गांधी के अहिंसा के विचार दुनियाभर को प्रेरित कर रहे हैं। यही वजह है कि 15 जून, 2007 को संयुक्त राष्ट्र संघ ने गांधी जी के जन्मदिन 2 अक्टूबर को अंतर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस के रूप में मनाने की घोषणा की है। गांधी जी अहिंसा के मर्म को जानते थे। वह अहिंसा को मांग मंगवाने का महत्वपूर्ण साधन मानते थे। वह अहिंसा रूपी भारत की आत्मा को पहचान कर ही आजादी के महत्वपूर्ण आंदोलन को संभव बना पाए थे। वह समझते थे कि निहत्थे का हथियार बंदूक नहीं है। बंदूक तो सत्ता का हथियार है। अहिंसा का जिस तरह वैश्विक राजनीति में गांधी जी ने हथियार स्वरूप इस्तेमाल किया, वह आज एक आम आदमी का महत्वपूर्ण हथियार दुनिया भर में बन गया है। उन्होंने तो एक जगह अहिंसा को एटम बम से भी ज्यादा प्रभावी बताया है। उन्होंने कहा था, 'यदि मैं बिलकुल अकेला भी होऊं तो भी सत्य और अहिंसा पर दृढ़ रहूंगा क्योंकि यही सबसे आला दर्जे का साहस है जिसके सामने एटम बम भी अप्रभावी हो जाता है।'[1]

'सर्वधर्म सम्भाव' की जीती जागती तस्वीर समझे जाने वाले गांधी जी मानते थे कि हिंसा की बात चाहे किसी भी स्तर पर क्यों न की जाए, परन्तु वास्तविकता यही है कि हिंसा किसी भी समस्या का सम्पूर्ण एवं स्थायी समाधान कतई नहीं है। जिस प्रकार आज के दौर में आतंकवाद व हिंसा विश्व स्तर पर अपने चरम पर दिखाई दे रही है तथा चारों ओर गांधी के आदर्शों की प्रासंगिकता की चर्चा छिड़ी हुई है, ठीक उसी प्रकार गांधीजी भी अहिंसा की बात उस समय करते थे जबकि हिंसा अपने चरम पर होती थी। अहिंसा से हिंसा को पराजित करने की सारी दुनिया को सीख देने वाले गांधीजी स्वयं गीता से प्रेरणा लेते थे।[2]

'दे दी हमें आजादी बिना खडग बिना ढाल, साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल' लोकप्रिय गीत की ये पंक्तियां बापू के करिश्माई व्यक्तित्व और कृतित्व का प्रशस्ति–गान हैं। गांधी–दर्शन के चार आधारभूत सिद्धांत हैं– सत्य, अहिंसा, प्रेम और सद्भाव। वह बचपन में 'सत्यवादी राजा हरिश्चंद्र' नाटक देखकर सत्यावलंबी बने। उनका विश्वास था कि सत्य ही परमेश्वर है। उन्होंने सत्य की आराधना को भक्ति माना और अपनी आत्मकथा का नाम 'सत्य के प्रयोग' रखा। 'मुंडकोपनिषद' से लिए गए राष्ट्रीय वाक्य 'सत्यमेव जयते' के प्रेरणा–श्रोत बापू हैं। अहिंसा का अर्थ है–मन, वाणी अथवा कर्म से किसी को आहत न करना। ईर्ष्या–द्वेष अथवा किसी का बुरा चाहना वैचारिक हिंसा है तथा परनिंदा, झूठ बोलना, अपशब्दों का प्रयोग एवं निष्प्रयोजन वाद–विवाद वाचिक हिंसा के अंतर्गत आते हैं। बापू सत्य और अहिंसा के पुजारी थे। उनका विचार था, 'अहिंसा के बिना सत्य की खोज असंभव है। अहिंसा साधन है और सत्य साध्य।' शांति प्रेमी रूस के टॉलस्टाय और अमेरिका के हेनरी डेविड थॉरो उनके आदर्श थे। चौरा–चौरी में तनिक हिंसा हो जाने पर बापू ने तमाम आलोचनाओं के बावजूद देशव्यापी सत्याग्रह आंदोलन को स्थगित कर दिया। सच्चा प्रेम नि:स्वार्थ एवं एकरस होता है। उसमें अपने सुख की कामना नहीं होती। काका कालेलकर की दृष्टि में–बापू सर्वधर्म समभाव के प्रणेता थे।

'वसुधैव कुटुंबकम्' का उदार सिद्धांत और वेदोक्त 'सर्व खल्विदं ब्रह्म' उनके जीवन का मूलमंत्र था। उनकी प्रार्थना सभाओं में गीता के श्लोक, रामायण की चौपाइयां, विनय–पत्रिका के पद के साथ ही नरसी मेहता व रवींद्रनाथ टैगोर के भजन आदि के प्रमुख अंशों का पाठ होता था। उनके हृदय में प्रेम व सभी धर्मो के प्रति आदरभाव था। इसीलिए वे प्यार में 'बापू' एवं 'राष्ट्रपिता' भी कहलाए। अल्बर्ट आइंस्टीन ने सच ही कहा था– 'आने वाली पीढ़ियां, संभव है कि शायद ही यह विश्वास करें कि महात्मा गांधी की तरह कोई व्यक्ति इस धरती पर कभी हुआ था।'[3]

अहिंसा एवं गांधी दर्शन – गाँधी जी के अनुसार 'अहिंसा' का अर्थ किसी जीव को केवल शारीरिक कष्ट पहुँचाना नहीं है। बल्कि, मन एवं वाणी द्वारा किसी को कष्ट पहुँचाना भी 'अहिंसा' की श्रेणी में आता है। इसका मतलब, किसी को मारना अथवा पीटना ही नहीं, अपितु यदि किसी को मानसिक अथवा जुबानी तौर पर भी आहत किया जाता है, वह भी 'हिंसा' ही कहलाएगी। गाँधी जी कहते थे कि अहिंसा का अर्थ बुराई के बदले, भलाई करना और नफरत के बदले प्रेम करना है। उनका स्पष्ट तौर पर कहना था कि 'अहिंसा' का मतलब 'कायरता' बिल्कुल भी नहीं है। उन्होंने इसी सन्दर्भ में 'यंग

* सह आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

इण्डिया' में लिखा कि 'अहिंसा का मेरा व्रत अत्यन्त सक्रिय है। इसमें कायरता एवं कमजोरी के लिए कोई स्थान नहीं है। यदि मुझे इन दोनों में से किसी एक को चुनना पड़े तो मैं अहिंसा का चुनाव करूंगा।'[4] राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी साफ तौर पर कहते थे कि सत्य और अहिंसा व्यक्तिगत आचार के नियम नहीं हैं। यह अनादि काल से चलते आये हैं। वे तो सिर्फ अपने दैनिक जीवन में इनका प्रयोग करते हैं।

महात्मा गाँधी ने जीवन भर आदर्श एवं अनुकरणीय सिद्धान्तों की पालना की। उन्होंने अपनी आत्मकथा 'सत्य के मेरे प्रयोग' में उन सभी पहलुओं पर बड़ी बारीकी से प्रकाश डाला है, जिनको उन्होंने अपनी निजी जिन्दगी में सत्य की कसौटी पर एकदम खरा पाया। कहना न होगा कि 'सत्य के मेरे प्रयोग' में महात्मा गाँधी के जीवन का असीम सार समाहित है। इसका अध्ययन करने मात्र से ही रोम-रोम पुलकित हो उठता है। ऐसे में यदि इन सिद्धान्तों और विचारों का अनुकरण किया जाये तो उसका प्रतिफल क्या होगा, इसका सहज अन्दाजा लगाया जा सकता है। गाँधी जी द्वारा सत्य की कसौटी पर परखे गये हर पहलू को सफलता, सम्मान और समृद्धि का अचूक सूत्र माना जा सकता है।

गाँधी जी के अनुसार, आमतौर पर हम किताबें पढ़ लेते हैं। लेकिन, किताब के अन्दर समाहित ज्ञान को भुला देना, सबसे बड़े दुर्भाग्य की बात होती है। गाँधी जी कहते थे कि हमें अपने निजी स्वार्थ की पूर्ति हेतू कभी भी अपने धर्म, सत्य एवं अहिंसा के मार्ग को नहीं छोड़ना चाहिए। गाँधी जी किसी के उपकार के प्रति कृतज्ञता बरतने की बड़ी नेक सलाह देते थे। उनका कहना था कि ''जो हमें पानी पिलावे, उसे हम भोजन करावें। जो हमारे सामने शीश झुकावे, उसे हम दण्डवत प्रणाम करें। जो हमारे लिये एक पैसा खर्चे, उसके लिए हम गिन्नियों का काम कर दें। जो हमारे प्राण बचावे, उसके दु:ख निवारण में हम अपने प्राण तक न्यौछावर कर दें। उपकार करने वाले के प्रति तो मन, वाणी और कर्म से दस गुणा उपकार करना ही चाहिए। इसके अलावा जग में सच्चा और सार्थक जीना उसी का है, जो अपकार करने वाले के प्रति भी उपकार करता है।'[5] निश्चित तौर पर गाँधी जी के ये सिद्धान्त एक आदर्श व्यक्तित्व के निर्माण में बेहद अहम भूमिका अदा कर सकते हैं।

महात्मा गाँधी जी सहनशीलता के गुण को आत्मसात करने पर बेहद जोर देते थे। उनका मानना था कि इस दुनिया में जितनी भी समस्यायें, द्वेष, संकीर्णता जैसी अनेक दुर्भावनायें भरी पड़ी हैं, उन सबका मूल कारण कहीं न कहीं असहनशीलता है। गाँधी जी तो यहां तक कहते थे कि यदि कोई तुम्हें एक गाल पर थप्पड़ मारे तो उसके सामने दूसरा गाल भी कर देना चाहिए। गाँधी जी कहते थे कि हमारा व्यवसाय चाहे कोई भी हो, हमें उसे सच्चे व समर्पित भाव से करना चाहिये। गाँधी जी ने हमेशा कुसंगति से बचने पर जोर दिया। वे अपनी आत्मकथा में लिखते हैं कि 'अगर तुम अपने अभिन्न मित्र में भी किसी बुराई का समावेश देखते हो तो तुम्हें न केवल उस बुराई से दूर रहने, बल्कि अपने मित्र को भी उस बुराई से दूर करने के लिए भी दृढ़ निश्चय करना चाहिए।'[6] राष्ट्रपिता ने ब्रह्मचर्य पर भी बेहद जोर दिया। इस बारे में उनका विचार था कि 'ब्रह्मचर्य शरीर-रक्षण, बुद्धि रक्षण और आत्मा-रक्षण तीनों है। जो व्यक्ति ब्रह्मचर्य का व्रत नहीं रखता, वह शरीर, बुद्धि और आत्मा तीनों को गंवाता है। ब्रह्मचर्य व्रत बड़ा जटिल है। इसके लिए सर्वप्रथम आनंद और उपभोग की प्रवृत्ति से बिल्कुल मुक्त होना पड़ता है। ब्रह्मचर्य जैसी कठोर तपस्या के फलस्वरूप साक्षात ब्रह्मा के दर्शन होते हैं।'

गाँधी जी क्रोध से बचने की हमेशा शिक्षा देते थे। वे कहते थे कि 'क्रोध एक प्रचण्ड अग्नि है। जो मनुष्य इस अग्नि को वश में कर सकता है, वह उसको बुझा देगा। जो मनुष्य इस अग्नि को वश में नहीं कर सकता, वह स्वयं अपने को जला लेगा।' गाँधी जी ने क्रोध पर काबू पाने का मंत्र भी दिया। उन्होंने बताया कि 'क्रोध को जीतने में मौन जितना सहायक होता है, उतनी और कोई भी वस्तु नहीं।' राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी शिक्षा पर बेहद जोर देते थे। वे कहते थे कि 'शिक्षा का उद्देश्य महज साक्षर होना नहीं, बलिक शिक्षा का उद्देश्य, आर्थिक आवश्यकता की पूर्ति का जरिया होना चाहिये। यह तभी संभव है, जब शिक्षा प्रयोजनवादी/बुनियादी विचारधारा पर आधारित होगी।' गांधी जी शिक्षा की गुणवता को बढ़ाने के लिए भी बराबर प्रेरित किया करते थे। उनका मानना था कि 'अध्यापक विद्यार्थी को योग्य बनाने के दायित्व को पूर्णत: निभाए। मानवीय चरित्र निर्माण के लिए शिक्षा में आवश्यक पाठ्यक्रम का विकास होना चाहिये। विद्यार्थी के मस्तिष्क से किताबों का बोझ कम होना चाहिये। विद्यार्थी और शिक्षक, दोनों को राजनीति से दूर रहना चाहिये। सुन्दर एवं स्वस्थ जीवन को बनाने के लिए शिक्षा में योग-शिक्षा का होना अति आवश्यक है।'

महात्मा गाँधी जी शुरूआती शिक्षा अंग्रेजी की बजाय हिन्दी में करने के लिए प्रेरित करते थे। उनका कहना था कि 'हमें दु:ख है कि हम हिन्दुस्तानी होकर भी हिन्दी बोलने से परहेज करते हैं। हमारे बच्चों की शुरूआती शिक्षा अंग्रेजी में हो, इस कोशिश में हम लोग लगे रहते हैं। अंग्रेजी सीखना बुरी बात नहीं है। पर, जब बालक पुख्ता उम्र का हो, तब अंग्रेजी सीखने में कोई हर्ज नहीं है। लेकिन, शुरूआती शिक्षा अंग्रेजी में हो, यह हम हिन्दुस्तानियों के लिए अपमान की बात है। हमें अंग्रेजी नहीं, अंग्रेजीयत से डरना चाहिए। लेकिन, पश्चिमी सभ्यता वाली शिक्षा, सभ्य समाज के लिए खतरनाक है।' गाँधी जी के तीन सांकेतिक बन्दर भी जीवन को सफल, सम्मानित और समृद्ध बनाने के लिए अचूक शिक्षा देते हैं कि 'कभी बुरा मत देखो', 'कभी बुरा मत सुनो' और 'कभी बुरा मत बोलो'। नि:सन्देह कामयाबी हासिल करने का इससे बढ़कर कोई अन्य अमोघ मंत्र हो भी नहीं सकता है।

गाँधी जी सच्चे 'स्वराज' की स्थापना करना चाहते थे। वे स्पष्ट तौर पर कहते थे कि ''सच्चा स्वराज मुट्ठी भर लोगों द्वारा सत्ता-प्राप्ति से नहीं आएगा, बल्कि सत्ता का दुरूपयोग किये जाने की सूरत में, उसका प्रतिरोध करने का जनता में सामर्थ्य विकसित होने से आयेगा।' गाँधी जी बार-बार कहते थे कि 'स्वराज' एक पवित्र शब्द है, जिसका अर्थ है 'स्वशासन' तथा 'आत्मनिग्रह'। सच्चे स्वराज का अनुभव स्त्री, पुरूष और बच्चों, सभी को होना चाहिए। इसके लिए प्रयास करना ही सच्ची क्रांति है। वे स्पष्टत: बतलाते थे कि 'मेरे सपनों का स्वराज किसी प्रजातिगत अथवा धार्मिक भेदभावों को नहीं मानता। स्वराज सभी का होगा, शिक्षितों और धनवानों का भी, पर इसमें खासतौर से अपंग, नेत्रहीन, भूखे और मेहनतकश करोड़ों भारतवासी शामिल होंगे। मेरे सपनों का स्वराज गरीबों का स्वराज है। जीवन की अनिवार्य वस्तुएं तुम्हें भी उसी प्रकार उपलब्ध होनी चाहिए, जिस प्रकार राजाओं और धनवानों को उपलब्ध हैं। लेकिन, इसका यह अर्थ नहीं है कि तुम्हारे पास उन जैसे महल भी होंगे। सुखी जीवन के लिए यह आवश्यक नहीं हैं। तुम या मैं तो उसमें खो जाएंगे। लेकिन, तुम्हें जीवन की वे सभी सामान्य सुख-सुविधाएं मिलनी चाहिएं, जो एक धनी व्यक्ति को उपलब्ध हैं। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि जब तक तुम्हें इन सुख-सुविधाओं की गारंटी नहीं मिलती है, तब तक पूर्ण स्वराज नहीं माना जा सकता।'[7]

आज पूरी दुनिया में मानव समाज के सामने बढ़ती हिंसा, युद्ध के खतरे, पर्यावरणीय विनाश, ग्लोबल वार्मिंग, ओजोन परत में छेद, बेरोजगारी, मूल्यों का क्षरण जैसी समस्याएं मुंह बाए खड़ी हैं। आज हमने विकास का जो

मॉडल अपनाया है, उनमें युवाओं के लिए रोजगार का पर्याप्त सृजन नहीं हो पा रहा है। पर्यावरण का इस तरह अंधाधुंध दोहन हो रहा हैं। दुनिया में अशांति व युद्ध का खतरा बढ़ रहा है। गांधी जी की जो आर्थिक नीति थी, वह बहुत स्पष्ट एवं अहिंसक थी। उनके बारे में यह भ्रम फैलाया गया कि वह मशीनों (यंत्रों) के खिलाफ हैं। उनकी विकासात्मक अर्थनीति की बुनियाद कृषि और उद्योगों पर आधारित थी। भारत की ज्यादातर आबादी गांवों में रहती है। इसलिए उन्होंने कहा था कि जहां पर कच्चा माल उपलब्ध है, वहीं पर उसके प्रसंस्करण की व्यवस्था होनी चाहिए। उनका कहना था कि अगर सरसों का उत्पादन गांवों में होता है, तो सरसों का तेल भी गांवों में ही बनना चाहिए। इसमें ऐसे यंत्र का व्यवहार होना चाहिए, जो हाथों को बेकार न बनाएं और लोगों के काम का आनंद बढ़ाएं। निरंतर लोगों के काम के अवसर को खत्म करने वाली यांत्रिकी गांधी जी को मंजूर नहीं थी, क्योंकि वह मानते थे कि इससे धीरे-धीरे जो केंद्रीकरण होगा, वह शोषण को बढ़ावा देगा और उससे हिंसा को बढ़ावा मिलेगा।[8]

गांधी की अहिंसा की बात केवल उपदेश तक सीमित नहीं हैं, बल्कि उन्होंने स्पष्ट किया है कि अगर हम अहिंसक समाज बनाना चाहते हैं, तो हमारी राजनीति, हमारी अर्थनीति, हमारी संस्कृति, जो हमारी समाज रचना के बुनियादी आधार हैं, वे भी अहिंसा की बुनियाद पर होने चाहिए। हमारी टेक्नोलॉजी, हमारी अर्थव्यवस्था, हमारी संस्कृति ऐसी बुनियाद पर आधारित हो, जो मानवीय हो, शोषण मुक्त हो, हिंसा मुक्त हो। उसी तरह से राजनीति में समाज को विभाजित करके आगे बढ़ने की जो प्रतिस्पर्धा चल रही है, वह भी हिंसा को बढ़ावा देने वाली है। इसलिए अहिंसक समाज की रचना के लिए राजनीतिक क्षेत्र में, आर्थिक क्षेत्र में, सांस्कृतिक क्षेत्र में-हर जगह अहिंसा के मूल्य दाखिल करने पड़ेंगे।[9]

हमें गांधीजी के विचारों की रोशनी की फिर से आवश्यकता है, जब हम आत्मनिर्भर भारत और आत्मनिर्भरता की खोज कर रहे हैं। गांधीजी के लिए स्वदेशी की जड़ अहिंसा, प्रेम और निस्वार्थ सेवा में थी। गांधी जी का सबसे प्रबल संदेश था कि हमारा प्रत्येक आचरण नैतिक रूप से शुद्ध होना चाहिए। साध्य की अपेक्षा साधन ज्यादा महत्वपूर्ण है। गांधी जी का मूल सीख सत्य और अहिंसा थी। सत्य और अहिंसा के उनके दर्शनों को समझे बिना कोई भी गांधी को नहीं समझ सकता है। देश की स्वाधीनता से लेकर राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक पहलू पर उनका प्रभाव परिलक्षित होता है। जन-जीवन में ऐसी कोई समस्या नहीं, ऐसा कोई प्रश्न नहीं, ऐसा कोई कृत्य नहीं, जिस पर उन्होंने चिंतन-मनन न किया हो। गांधी जी सत्य एवं सदाचरण के व्याख्याता एवं सच्चे प्रतिनिधि थे। उन्होंने मानव-जाति के परम हितैषी के रूप में पीढ़ियों पर अपना प्रभाव डाला। आज भी और भविष्य में भी उनके विचार जन-जन के मार्गदर्शक बने रहेंगे। उनका जीवन एक व्यक्ति का जीवन नहीं था उसमें जाति, वर्ण, संप्रदाय, प्रदेश, देश, देशांतर की सारी विचारधाराएँ समाहित हैं। उनके विचार, सिद्धांत तथा उनके कार्य किसी व्यक्ति या देश-विशेष के न होकर मानव-मात्र की हितैषी से ओत-प्रोत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चौधरी, राजा आलेख 'गांधी, 21वीं सदी का पर्यावरणविद : अहिंसा की प्रासंगिकता', डाउन टू अर्थ, 30 सितम्बर, 2019
2. वर्तमान दौर में गांधी दर्शन की प्रासंगिकता, नवभारत टाइम्स, 2 अक्टूबर, 2010
3. गांधी दर्शन, जागरण, 12 अक्टूबर, 2012
4. शर्मा, अशोक, गांधी का अहिंसा दर्शन, आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर, 2013, पृ. 28
5. गाँधी, एम.के., एन ऑटोबायोग्राफी ऑफ द स्टोरी ऑफ माई एक्सपेरीमेन्ट्स विद टुथ, नवजीवन, अहमदाबाद, 1976, पृ. 16
6. कुमार, रविन्द्र, महात्मा गाँधी और अहिंसा, कल्पाज पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 28
7. कश्यप, राजेश आलेख 'अहिंसा के बल पर अंग्रेज हुकूमत हिला दी थी गाँधीजी ने', प्रभा साक्षी, 1 अक्टूबर, 2016
8. शर्मा, अशोक, गांधी का अहिंसा दर्शन), आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर, 2013, पृ. 32
9. राही, रामचन्द्र आलेख 'गांधी जो राह दिखा गए हैं', अमर अजाला, 2 अक्टूबर, 2017

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

वर्तमान परिस्थितियों का आईना है व्यंग्य

डॉ. विनय शर्मा*

प्रस्तावना – समाचार पत्र वह दर्पण है जिसमें समाज अपना चेहरा देखता है और सामाजिक परिवर्तन को बखूबी महसूस करता है। कई साहित्यिक पत्रिकाएँ विभिन्न कारणों से दम तोड़ चुकी है या दम तोड़ती जा रही हैं। ऐसे में एकमात्र समाचार पत्र ही हैं जिनके सहारे साहित्य की कई विधाएँ आज भी गतिमान हैं। दरअसल बात ये है कि इलेक्ट्रानिक मीडिया और स्मार्ट फोन के आ जाने से पाठकों की संख्या लगातार कम होती जा रही है। ऐसे में समाचार पत्रों ने अभी भी पढ़ने के प्रति रुचि बनाए रखी है। इसी वजह से व्यंग्य जैसी विधा आज भी न सिर्फ जिंदा है बल्कि उसने समाचार पत्रों की बदौलत अच्छी–खासी प्रगति भी कर ली है। दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित व्यंग्य परिस्थितिजन्य होते हैं जिसे पढ़कर व्यक्ति समाज के उस कड़वे सच से रूबरू होता है जिसे सीधे–सीधे कह देना उचित नहीं जान पड़ता है और कह भी दिया तो उतना प्रभावोत्पादक नहीं रहेगा।

व्यंग्य का अर्थ – व्यंग्य को परिभाषित करते हुए डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी कहते हैं कि व्यंग्य वह है जहाँ कहने वाला अधरोष्ठों में हँस रहा हो और सुननेवाला तिलमिला उठा हो। वस्तुत: साहित्यिक धरातल पर व्यंग्य की अवधारणा विकृति के विरोध में उभरी अभिव्यक्ति के रूप में कही गई है। स्वतंत्रता के बाद हिन्दी साहित्य में व्यंग्य का बड़ी तेजी से प्रसार हुआ क्योंकि व्यंग्य एक ऐसी साहित्यिक अभिव्यक्ति है जिसमें समाज की कमजोरियों, दुर्बलताओं तथा कथनी और करनी के अंतर की समीक्षा की जाती है। व्यंग्य में भाषा के माध्यम से प्रहार किया जाता है। भाषा अगंभीर लगते हुए भी गंभीर लग सकती है। व्यंग्य ही वह अस्त्र है जिसके माध्यम से मिथ्याचारों और पाखंडों का पर्दाफाश किया जाता है।

व्यंग्य लेखन की परम्परा – व्यंग्य लेखन की परम्परा बहुत प्राचीन है। सिद्धों की साहित्यिक संपदा से पुरस्कृत संत साहित्य में अनेक व्यंग्य रचनाएँ मिलती हैं। तुलसी की कृष्ण गीतावली में कई व्यंग्य गीत हैं और सूरदास की गोपियों ने तो बेचारे उद्धव के ज्ञान गरिमा की खूब खिल्ली उड़ाई है। जहाँ तक हिन्दी व्यंग्य निबंध का प्रश्न है तो यह निर्विवाद रूप से कह सकते हैं कि भारतेंदु युग की पृष्ठभूमि ने ही उसे विकास का सुअवसर दिया है। इस युग के व्यंग्य निबंधों की पकड़ अपने सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवेश पर बड़ी मजबूत रही है। स्वतंत्र व्यंग्य लेखन की यह परम्परा जारी रही और कुछ बड़े व्यंग्यकार उभर कर सामने आए। शरद जोशी, हरिशंकर परसाई, श्रीलाल शुक्ल, रवीन्द्रनाथ त्यागी और नरेन्द्र कोहली जैसे रचनाकारों ने व्यंग्य को एक शक्ति के रूप में प्रयोग किया और समाज में व्याप्त अव्यवस्था तथा अराजकता का चेहरा प्रस्तुत किया है। यही कारण है कि राजनीतिक घटनाओं की एतिहासिक और वर्तमान मानसिक बनावट का दस्तावेज हमें इनके व्यंग्य निबंधों में देखने को मिलता है। इस देश में सर्वाधिक भ्रष्टाचार राजनीति के माध्यम से ही फैला और फला–फूला है। इसलिए हमारे व्यंग्यकारों की निगाहें भी राजनीति पर अधिक रहती हैं।

पत्र–पत्रिकाओं में व्यंग्य – स्वतन्त्रता के बाद साहित्यिक पत्रिकाओं का बोलबाला अधिक रहा है। ऐसा कहा जाने लगा कि पत्र–पत्रिकाएँ प्रजातंत्र पद्धति की सुव्यवस्था के लिए मुख्य आधार स्तम्भ है क्योंकि किसी भी विषय में जनमत तैयार करने में ये अमोघ अस्त्र है। स्वतंत्रता के पूर्व तथा पश्चात भी अन्याय, अत्याचार, शोषण, अमानवीय व्यवहार तथा अन्य किसी भी प्रकार की ज्यादती का डटकर प्रतिरोध करने के लिए समाचार पत्रों के साथ ही साहित्यिक पत्रिकाओं के माध्यम से आवाज बुलंद की जा सकी है। इन्हीं विशेषताओं के कारण व्यंग्य लेखकों और पाठकों का रूझान इनकी ओर हुआ, लेकिन अत्यधिक साहित्यिक गंभीरता और आर्थिक संकट से जूझने के कारण पत्रिकाओं ने तो दम तोड़ दिया पर समाचार पत्र आज भी किला लड़ा रहे हैं। हालाँकि साहित्यिक पत्रिकाओं को खत्म होने से बचाने के लिए उसमें व्यंग्य को शामिल किया गया क्योंकि व्यंग्य की तेज धार और उसका आक्रामक उद्देश्य दिमाग को झकझोरनेवाला होता है। यही कारण है कि कई वर्षो तक धर्मयुग, सारिका, साप्ताहिक हिन्दुस्तान और अनेक पत्रिकाओं ने हिन्दुस्तानी पाठकों के दिलों में जगह बनाकर रखी। इनमे प्रकाशित व्यंग्य निबंधों का कथ्य जन–जन के भीतर व्यथित और कसमसाती पीड़ा का कथ्य है। राजनीति, धर्म, साहित्य तथा संस्कृति के क्षेत्र में मनुष्य के बौनेपन का कटु यथार्थ इन व्यंग्य निबंधों की आत्मा है।

समाचार पत्रों की ताकत – वर्तमान में समाचार पत्र ताकत बनकर उभरे हैं। जिस कारण व्यंग्य विधा को काफी संबल मिला है क्योंकि व्यंग्य ही है जो एक परिस्थिति विशेष की माँग करता है जिसमें असंगति, विद्रूपता, विषमता, अंतर्विरोध, शोषण, अन्याय, अनीति तथा सामाजिक और व्यक्तिगत मूल्यों का ह्रास होता है। दुर्भाग्य से आजादी के बाद हमारे सामाजिक जीवन में ये सभी अस्वस्थ प्रवृत्तियाँ बड़ी तेजी से पली बढीं हैं। पत्रिकाओं में व्यंग्य विधा को शामिल करने के बावजूद अप्रत्याशित कारणों से प्रमुख पत्रिकाओं के परिदृश्य से हट जाने से हिन्दी का सजग पाठक साहित्यिक रिक्तता का अनुभव करने लगा। परिणामस्वरूप उसकी रुचि दैनिक समाचार पत्रों की ओर बढ़ने लगी और समाचार पत्र एक बड़ी ताकत के रूप में उभर कर हमारे सामने आए जिन्होंने व्यंग्य को विशिष्ठ स्थान दिया। दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित व्यंग्य घटना की तुरंत प्रतिक्रिया का परिणाम होते हैं। ये लोगों को सीधे–सीधे प्रभावित करते हैं जिससे उनमें जागृति आती है।

अखबारों में छपे व्यंग्य देश की वर्तमान परिस्थितियों का चेहरा प्रस्तुत

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) प.म.ब. गुजरती वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

करते हैं। ये पाठकों को गुदगुदाने के साथ ही अन्दर तक झकझोर भी देते हैं। हम कह सकते हैं कि समाचार पत्रों ने व्यंग्य विधा को न सिर्फ शक्ति प्रदान की है बल्कि नए व्यंग्यकारों को उभरने का अवसर भी दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, नगेन्द्र
2. प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद, हजारीप्रसाद द्विवेदी

****

The Impact of Knowledge Management on Organizational Performance

Dr. Nilesh Gangwal*

Abstract - Throughout history, knowledge has always been viewed from multiple perspectives - abstract, Philosophical, religious and practical. Knowledge management is the process of capturing, developing, sharing, and effectively using organizational knowledge. It refers to a multi-disciplined approach to achieving organizational objectives by making the best use of knowledge. Many large companies, public institutions and non-profit organizations have resources dedicated to internal Knowledge Management efforts, often as a part of their business strategy, information technology, or human resource management departments. Knowledge management is a process that transforms individual knowledge into organizational knowledge. The aim of this paper is to show that through creating, accumulating, organizing and utilizing knowledge, organizations can enhance organizational performance. The impact of knowledge management practices on performance was empirically tested through structural equation modeling. Successful managers focus their attention on factors that are critical in establishing and maintaining an organization's competitive edge. The knowledge and skill of employees is one of those factors and it requires proactive management attention. Conceptually, this is achieved through Knowledge Management, a term that has existed in the mainstream of business lexicon for quite some time. Despite this, there is the conspicuous absence of a common understanding of the term that frustrates many managers.

Introduction - Knowledge management efforts have a long history, to include on-the-job discussions, formal apprenticeship, discussion forums, corporate libraries, professionaltraining and mentoring programs. With increased use of computers in the second half of the 20th century, specific adaptations of technologies such as knowledge bases, expert systems, knowledge repositories, group decision support systems, intranets, and computer-supported cooperative work have been introduced to further enhance such efforts.

In 1999, the term personal knowledge management was introduced; it refers to the management of knowledge at the individual level. In the enterprise, early collections of case studies recognized the importance of knowledge management dimensions of strategy, process, and measurement. Key lessons learned include people and the cultural norms which influence their behaviors are the most critical resources for successful knowledge creation, dissemination, and application; cognitive, social, and organizational learning processes are essential to the success of a knowledge management strategy; and measurement, benchmarking, and incentives are essential to accelerate the learning process and to drive cultural change. In short, knowledge management programs can yield impressive benefits to individuals and organizations if they are purposeful, concrete, and action-oriented.

For many companies, the time of rapid technological change is also the time of incessant Struggle for maintaining a competitive advantage. It is obvious that knowledge is slowly becoming the most important factor of production, next to labour, land and capital. Even though some forms of intellectual capital are transferable, internal knowledge is not easily copied. This means that the knowledge anchored in employees' minds can get lost if they decide to leave the organization. Therefore, the key objective of management is to improve the processes of acquisition, integration and usage of knowledge, which is exactly what knowledge management, is all about. It is a process that through creating, accumulating, organizing and utilizing knowledge helps achieve objectives and enhance organizational performance. KM also consists of strategy, cultural values and workflow. In order to maximize its value a change in strategies, processes, organizational structures and technologies needs to be made.

Studies have clearly established that there are three interdependent and complementary pillars that support the concept of Knowledge Management. These are Organizational Learning Management (OLM), Organizational Knowledge Management (OKM) and Intellectual Capital Management (ICM). OLM, which has so far dominated both academic and practitioner debate, concerns itself with the problem of capturing, organizing and retrieving explicit knowledge, or information, and has led to the simplistic misconception that Knowledge

*PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

Management only involves the capture, or downloading, of the content of employees' minds. ICM is dominated by those particularly interested in defining key performance indicators that will measure the impact and the benefits of applying knowledge management practices. If management requires measurement this is an essential task but it can only be undertaken once an organization has clearly established the strategy-structure-process parameters to ensure it accesses, creates and embeds the knowledge that it needs...the OKM pillar of knowledge management.

Knowledge Management Strategies - The understanding of these knowledge management factors, acts as a basis in determining the type of knowledge management strategies and initiatives for an organization.

1. Information Technology - The value that knowledge management adds, lies in increasing individual, team and organizational efficiency through the use of knowledge management tools (information technology).

I. Capturing knowledge: the higher the level of capturing knowledge explicit or tacit with information technology tools, the better the KM result.

II. Usage of IT tools: the higher the quality of tools, quality of information, user satisfaction, usage and accessibility, the greater the KM effect on organizational performance.

2. Organization - Organizational culture has a great contribution to knowledge management due to the fact that culture determines the basic beliefs, values, and norms regarding the why and how of knowledge generation, sharing, and utilization in an organization. An organization can achieve a competitive edge by creating and using knowledge about its' processes and by integrating its' knowledge into business processes.

I. People & Organizational climate: the KM success relies heavily upon the trust, creativity, team work and collaboration among employees.

II. Processes: the integration of the KM activities into organizational processes has a positive effect on KM results.

3. Knowledge - Successful knowledge management applies a set of approaches to organizational knowledge including its accumulation, utilization, sharing and ownership.

I. Accumulation: the higher the effectiveness of knowledge accumulation internal, external; through internalization or externalization in an organization, the greater the KM effect.

II. Utilization: the higher the effectiveness of utilizing the (existing) knowledge in an organization, the better the KM result.

III. Sharing: the improvement of sharing of knowledge formal or informal effects the KM positively.

Elements of Organizational Performance - When assessing the relationship between knowledge management and organizational performance, it is important to know that the results depend on the used research methodology. Organizational performance alone could be gauged in many different ways, with financial or non-financial indicators.

There are several approaches to organizational performance measurement which include different stakeholders' perspectives. The Balanced Scorecard (BSC) is a performance management tool for measuring whether small-scale operational activities of a company are aligned with its large-scale objectives in terms of vision and strategy and includes four perspectives: financial, customer, internal process and innovation and learning perspective.

The financial perspective examines if company's implementation and execution of its strategy contributes to bottom-line improvement. Some of the commonly used financial measures are economic value added, revenue growth, costs, profit margins, cash flow, net operating income etc. The customer perspective defines the value proposition that an organization will apply to satisfy customers and generate more sales to the most desired customer groups. The measures should cover both the value that is delivered to the customer which may involve time, quality, performance and service, and the outcomes that arise as a result of this value proposition, such as customer satisfaction and market share. The internal process perspective focuses on all the activities and key processes required in order for the company to excel at providing the value expected by the customers. The clusters for the internal process perspective are operations management by improving asset utilization, supply chain management, customer management by expanding and deepening relations, innovation (by new products and services and regulatory & social by establishing good relations with external stakeholders. The innovation and learning perspective focuses on the intangible assets of an organization, mainly on the internal skills and capabilities that are required to support the value creating internal processes.

Interdependent and Complimentary Pillars of Knowledge Management - Studies have clearly established that there are three interdependent and complementary pillars that support the concept of Knowledge Management. These are Organizational Learning Management (OLM), Organizational Knowledge Management (OKM) and Intellectual Capital Management (ICM). OLM, which has so far dominated both academic and practitioner debate, concerns itself with the problem of capturing, organizing and retrieving explicit knowledge, or information, and has led to the simplistic misconception that Knowledge Management only involves the capture, or downloading, of the content of employees' minds. ICM is dominated by those particularly interested in defining key performance indicators that will measure the impact and the benefits of applying knowledge management practices. If management requires measurement this is an essential task but it can only be undertaken once an organization has clearly established the strategy-structure-process parameters to ensure it accesses, creates and embeds the knowledge that it needs...the OKM pillar of knowledge management. This paper looks more deeply at this pillar and in particular the

lack of a general *integrative* approach to enhancing organizational performance in this key strategic area. It considers to what extent such an approach may help an organization more effectively manage its most relevant source of competitive advantage. With a greater awareness of the various factors allied to the managing and leveraging of human oriented and system oriented knowledge assets, some proposals are put forward to assist in developing or redefining an organization's intellectual capital reporting models in search of a planning, control and performance measurement system that accounts for the management of an organization's intellectual assets.

Interrelationship between OLM, ICM, and OKM - The respective scholarly and practitioner contributions in the broadly related fields of KM offer various theoretical perspectives from which to regard the management of knowledge related assets as the central role. Raub and Rüling (2001, p. 114) maintain that, while research on business strategy has been occupied with outlining a comprehensive knowledge-based theory of the firm, each of the management disciplines has contributed their own, quite often different, views on how to analyze and manage knowledge as an organizational resource. Even though it may be described in many different ways, KM is generally concerned with how organizations create (learning processes), disseminate (knowledge sharing), and measure (intellectual capital measurement) knowledge related assets (Argote 1999, Edvinsson and Malone 1997, Huber 1991, Sveiby 1997, Sveiby and Risling 1986). In terms of creation, knowledge is considered endogenous (Romer 1986, 1990) driving increasing returns on investments in new knowledge. This perception encouraged extensive study of 'knowledge sharing', which emerged from the field of organizational learning. Successful knowledge sharing involves extended learning processes as new knowledge is integrated into products, services, or business processes both old and new (Nelson and Rosenberg 1993). Practically every writer on management argues that measurement is critical to the success of organizations (Fitz-Enz, 1995). Without measurement managers are unable to focus on the attainment of sustainable objectives because their attention is not focused on the appropriate facts.

Four forms of KM integration

1. Corporate Strategy
2. Contextual Knowledge management Targets
3. Knowledge management Challenges
4. Knowledge management Performance Measurement

processes in such a way as to positively influence the organizational performance in terms of quality, productivity, and innovation gains. Some common practices in this field are:

1. **Human oriented practices**, including such methods as communities of practice, job rotation, coaching, mentoring, after action review and storytelling.
2. **Technology oriented practices**, including the likes of collaboration platforms, document
3. management, yellow pages, skills inventories, expert systems, blogs and wikis.
4. **Procedural integration** aims to integrate KM into the business processes throughout the organizations value chain so that it becomes an integral part of the intra- and inter-organizational work-flows. The aim of such practices typically lies in the implementation of continuous business processes, in the reduction of processing time, and the avoidance of work redundancy.
5. **Organizational integration** endeavors to integrate KM into the organizational structure and facilitate dedicated management of the organizational knowledge base. Some common approaches applied in this field are the centralization, decentralization, and responsibility.

Practical Aspects of Knowledge Management

1. **Knowing what knowledge is -** Much of the energy and debate seems focused on defining Knowledge Management, on what ''knowing'' and ''knowledge'' are, and how to build a case with senior management for launching a KM initiative in a large company. Interesting topics, but most of the concerns seem awfully academic. Some participants are so consumed with the issue itself that they're missing the fact that many companies already accept that effective KM is crucial to their success - they just want to figure out what to do and how to do it, and fast. Here I offer not a general answer or one suitable for any particular organization.
2. **Conditions required for the success of KM -** For medium to large companies that have been in existence for years, changing the mindset and habits of hundreds or thousands of employees to create this environment may well be the toughest hurdle. Any company that can start fresh, writing new rules and building a culture that supports KM, has a distinct advantage in this area. Either way, for a KM initiative to be successful, employees must have the motivation to participate, access to adequate training when necessary, feel a sense of security in sharing their knowledge, and get some form of reward for doing so. When the goals of individuals are aligned with those of the company, people adopt behaviors that are consistent with those required for the success of KM.
3. **Where to begin? -** To launch a KM initiative in your organization, start by considering the four primary cultural factors: motivation, security, reward, and training. What can you do to promote these? Stating the explicit goals for your KM initiative and some success metrics to measure performance against those goals is important for management

buy-in. No matter what the goals might be, success will require that some individuals put something into the initiative to get it going, without receiving any direct immediate benefit. This calls for the dedication of ''true believers,'' or maybe someone willing to make that their job responsibility for a while - it takes time to define and put in place the processes. Once you figure out a plan to capture and categorize explicit knowledge, or facilitate the creation of communities to share tacit knowledge, you can pilot a program with a minimal amount of funding and technology infrastructure. You may even have spare capacity on some systems where you can embark on your efforts without much expense. To recap: when developing a KM program, consider cultural factors, define goals for success, lead with process, and let technology follow once you know what you really want.

4. Define goals and success metrics - Goals can take many forms. For some companies, the primary goal of a KM initiative might be to make more of the tacit, or ''unspoken,'' knowledge in the organization explicit, and then create mechanisms to share it. Others may choose to ignore recording and categorizing explicit knowledge, preferring to create opportunities for direct collaboration where knowledge seekers locate experts to interact directly, even if those interactions go unrecorded and not made explicit.

5. Put processes in place - Once goals and metrics to gauge them are defined, carefully consider the processes that will work in your organization. You'll want to help create and advance a culture that supports KM (or a sub-culture if you're starting at the departmental level). Not all KM practices require a lot of technology to support them, and many begin with little more than file sharing, list servers, and email capabilities. After all, the goal is get people to record and share knowledge, or to find each other and interact directly.

6. Add supporting technology - Finally, it's time to think about the technology you will need to support the goals you've specified, the stakeholders you've chosen to support, and the way your organization works (or is willing to work). For example, if your goal is to capture and categorize explicit knowledge, you'll need a document store, a database, an index & search engine, and a web server. Workflow support for document authoring and publishing may also be important. You'll require a process to define a categorization hierarchy or nomenclature for documents, identify the best ones to capture, clean them up or convert their formats for publication if necessary, and categorize them. Ongoing processes will also be required to identify new documents that belong in the document store and categorize those. Note that this is somewhat process heavy, and may be seen as intrusive in some organizations.

Measurement of Activity Associated with KM System :

1. Total number of Core Knowledge and Community Workspaces, and the number of newly created ones.
2. Number of accesses to KM Directory Assets.
3. Total number of documents classified as Core Knowledge, and the number of newly created ones.
4. Number of unique user accesses of Core Knowledge documents.
5. Total number of established, active communities (leader/moderator + collaboration space + activity).
6. Total number of collaborative Community Workspace sessions/threads conducted.
7. Total number of viant experts accessed from other project teams via KM channels.
8. Total number of Project Catalyst interactions with project teams and communities.

KM Problems - The problems identified cover the four KM processes of creation, storage/retrieval, transfer and application. As junior knowledge workers, most respondents expressed the importance of KM and KM problems in their organizations from a knowledge receiver perspective. As knowledge receivers, they desire standardized procedures and specific guidance from supervisors or the organization. In general, explicit knowledge is helpful but usually missing in their work, so the KM problems identified through this viewpoint are more related to explicit knowledge creation, storage, transfer and application.

1. Knowledge creation: "Work procedures of work are not standardized"; "Staff seldom share knowledge"; "The information in the system is not enough"; "The skill of selling various products can only be learned by new employees when they face the clients".

2. Knowledge transfer: "Mentees can't get enough information from mentors in coaching"; "There is a wide communication gap between the senior and junior staff. They (senior staff) do not provide us (junior staff) sufficient knowledge"; "There is no training provided in the work, which leads a long time for new employees to catch up the job"; "Employees in different divisions have different work practices, so there is a lack of inter-division communication"; "Most of our colleagues are very dependent on me. I always spend a lot of time to communicate with them or answer their questions several times.. They feel convenient and have developed the habit of asking me questions by phone again and again"; "The company lacks a well organized computer system for checking or updating information".

3. Knowledge application: "There are different departments in my law firm. Staff cannot identify the major activities performed by each lawyer. For example, in a commercial department, there are different cases like trademark & patent, mortgage, listing, etc. Different lawyers are responsible for different practices although all these practices are classified into commercial cases. It is difficult for us (legal secretaries) to locate experts and apply different kinds of expertise in different contexts". "Each officer possesses unique and specialist knowledge, but it is difficult for junior employees to understand and apply them to their work".

Causes of KM Problems - Though most organizations have recognized the existence of KM problems, the causes of problems need careful analysis if organizations are to

conduct corrective actions. Our findings indicate that the causes attributed to the KM problems identified can be classified into three dimensions as below.

Structural (organizational) related causes - Many respondents mentioned that "lack of training", "limited resources" and "lack of dedicated time for discussion" contribute to knowledge creation, storage and transfer problems. The lack of organizational incentive to create and transfer knowledge appears to be the major explanation for KM problems. One respondent pointed out that "The management does not apply the encouragement/punishment system properly"

Human related causes - The respondents recognize that, in KM systems (KMS), the facilitator plays an important role. When this role is missing, the KMS is doomed to fail: "no specific person is responsible for the knowledge updating work. The information in the system is outdated and no longer applicable to current work practice". According to the survey findings, individuals may not be willing to contribute documents to the KMS because they are "afraid to share their knowledge given the possibility of losing their power and position". Similarly, "each staff would like to keep their knowledge in their own place", which leads to a lack of standardized practice in knowledge storage and transfer.

Technical related causes - The respondents agree that IT is useful in managing knowledge and consider it as an enabler for KM. However, it appears that from the junior knowledge workers' perspective, IT-based KMS have not yet been adopted in Hong Kong organizations, at least for low-level or operational-level work, as illustrated by the following quotations.

Potential Solutions of the KM Problems Identified - According to the various corrective actions that can be taken to resolve the identified KM problems, encompassing both IT and non-IT solutions. We discuss these solutions below. With regard to IT solutions, for instance "organizational fragmentation", which is related to the problem of knowledge storage/retrieval and transfer, respondents suggest "systems to allow coordination/cooperation". The establishment of a knowledge expert list and corporate libraries is a starting point to solve the KM problems: "set up the expert system or knowledge database as so the junior employees can find a way to look for knowledge". Regarding the difficulties in knowledge creation and codification, they recommended "the use of multimedia to briefly describe what is the basic background knowledge". With respect to the lack of standardized work procedures, most junior knowledge workers suggested "uploading the memo in the e-portal systems, so everyone can retrieve and follow the guidelines", as well as "set up an electronic library to store the training materials or such training manuals". A customized KMS would also be appreciated: "the IT department can provide a user manual and appropriate systems fit for departmental requirements so that the company can better manage their knowledge". The identification shown in the KMS is also a critical concern in the IT solution as several respondents pointed out that "the company should provide a platform for staff to submit knowledge anonymously" and "the knowledge contributors should have the right to choose a real name or a pseudonym". With regard to non-IT solutions, the encouragement of communication and involvement from the organization is most frequently mentioned by respondents. For example, they suggest "reward staff who are willing to share knowledge", "set up a compensation scheme for the time involved in contributing knowledge", "arrange more seminars and upload all these seminar materials online", and "schedule a time to share/contribute/read knowledge in the KMS". Some respondents also suggest ways to standardize work practices such as "all staff need to write a guideline of their work on paper and then file it", "the company should tell staff to put their knowledge and information in the same place before they start work", "managers can assign suitable staff to write down knowledge such as good working examples and store it properly".

Conclusion - This paper, in particular, investigated the lack of a general integrative approach for measuring the effects of KM practices as a foundation for effective management decision making. We discussed the extent to which such an approach helps an organisation more effectively manage its knowledge assets. Despite an emphasis on one particular form of integration by many of the study's respondents, we recommend that each of the four forms of integration are considered in parallel if organizations want to implement KM practices in an integrative way. However, the challenge is to comprehend the optimum proportion of each that is best suited to the particular organization.

Motivation, expertise and systems form the tripod of successful KM. These three components will vary in their relative importance from organization to organization, but our preliminary analysis indicates that they are equally important for KM, since as soon as one leg of the tripod is shorter than the others, it will become unbalanced. From the technical perspective, a knowledge-driven organization should ensure that a KMS is designed with junior knowledge workers in mind, so that they can learn about the basic business processes. Such a KMS must be easy to use and its knowledge must be explicit and easily locatable. From the non-IT perspective, junior knowledge workers' communication and involvement in the KM processes deserves more organizational investment.

Finally, "Best practices" are a good starting point, but organizations should be conscious of the pitfalls of using them. These practices should not be used in isolation. They should be integrated with other endeavors such as CoPs. Award winning state organizations such as the CTG, which act as enablers and catalysts for innovative application of technology in government agencies should be transformed into Government Knowledge Centers. This will give them the opportunity to be more involved in KM while still performing their current activities. This means they would

not be confined to producing “Best Practices” that might soon become outdated or not used at all as they are doing now, but they would effectively help government agencies to implement KM, which is an imperative for governments in the 21st century and the new economy.

References :-

1. Alavi, M., and Leidner, D.E. “Review: Knowledge Management and Knowledge Management Systems: Conceptual Foundations and Research Issues,” MIS Quarterly (25:1) 2001, pp. 107-136.
2. Bock, G.W., Zmud, R.W., Kim, Y., and Lee, J.N. “Behavioral Intention Formation in Knowledge Sharing: Examining The Roles of Extrinsic Motivators, Social-Psychological Forces, and Organizational Climate,” MIS Quarterly (29:1) 2005, pp. 87-111.
3. Fu, P.P., Tsui, A.S., and Dess, G.G. “The Dynamics of Guanxi in Chinese High-tech Firms: Implications for Knowledge Management and Decision Making,” Management International Review (46:3) 2006, pp. 277-305.
4. Gold, A.H., Malhotra, A., and Segars, A.H. “Knowledge Management: An Organizational Capabilities Perspective,” Journal of Management Information Systems (18:1) 2001, pp. 185-214
5. Drucker, P.F., “The Age of Social Transformation”, The Atlantic Monthly, November, 1994.
6. Macintosh, A, “Adaptive Workflow to Support Knowledge Intensive Tasks” 1998,http://www.aiai.ed.ac.uk/
7. Skyrme, D.J., Knowledge Networking: Creating the Collaborative Enterprise, Oxford, 2000

****

Human Rights Jurisprudence in India

Dr. Manoj Jain*

Abstract - Human rights may be regarded as those fundamentals and inalienable rights which are essential for life as human being and which are possessed by every human being, irrespective of his or her nationality race, religion, etc. simply because he or she is a human being. Thus, Human rights are those rights which are inherent in our nature and without which one can't live as human being.

Keywords - Natural Right, Egalitarian, National Human Rights Commission, Human Right Education, Socio-Economic and Political Rights.

Introduction - Human rights are sometimes called fundamental rights or basic rights or natural rights as fundamental or basic rights. They are the rights which cannot, rather must not be taken away by any legislature or by any Act of the Government and which are often set out in a constitution as Human Rights are not created by any legislation, they resemble very much to the natural rights. They cannot be subjected to the process of amendment even. Human rights allow us to develop our personality in physical, mental or spiritual sense up to the widest extent and to use our intelligence and inlets fully. It has been universally accepted that human rights are more than a mere collection of Socio-Economic and Political rights.

Definition of Human Rights Jurisprudence: Human rights are "commonly understood as inalienable fundamental rights to which a person is inherently entitled simply because she o he is a human being." Human rights are thus conceived as universal (applicable everywhere) and egalitarian (the same for everyone). These rights may exist as natural rights or as legal rights in local, regional, national and international law.

Historical Aspects of Human Rights Jurisprudence: The declaration of the rights of Man and the Citizen was born from the tumult of the French Revolution in August 1798 which took the first step towards enshrining in law the concept that the individual and collective rights of man were universal and subject to protection. It was a product of the philosophical developments of the eighteenth century enlightenment. In the two centuries since the French Revolution, the attempt to expand the conception of human rights to encompass a universal standard and to protect those rights from abuse is ongoing. We have witnessed moments of advance, but also of regression in the protection of personal freedoms and civil liberties throughout the world.

During the first decades of the twentieth-century, increasing industrialization marked the century with its progress. Whilst Marx and Engels had already highlighted the worker's struggle in their 1848 Communist Manifesto, it was not until 1917, when Lenin stood up to declare, 'Peace, Bread and Land', that the worker's struggle was given both a revolutionary and a political voice. It was one would that reverberate throughout the rest of the twentieth-century, focusing attention not only upon the exploited of Europe, but also upon those other victims of the industrial age, the populations of Africa & Asia.

In India, the desire of colonized peoples to rule themselves without imperial exploitation was peacefully expressed in 1930 that led a march to Dandi to protest the salt tax imposed by the Foreign British Government. Throughout the twentieth-century, some advances have been made towards the universal protection of Human Rights and Civil Liberties.

The devastation caused by the First and Second World Wars and the genocides and regional conflicts that have marred the twentieth and twenty-first centuries have prompted the establishment of international organizations for the mitigation of violent conflict and the protection of Human Rights. The United Nations was founded in 1945 with the aim of promoting global peace and protection of Human Rights Worldwide.

Human Rights Jurisprudence in Indian Constitution: Part III and IV of Indian Constitution along with preamble to the constitution already embody the concept of human rights. Further, India is now a party to sixteen International treaties relating to Human Rights including the International Covenant on Economic and Social and Cultural Rights and Civil and Political Rights. It includes International Convention on Racial Discrimination, Covenants of right of child and the Political rights of women; Slaves Convention etc. Basic Human Rights are guaranteed in Constitutional Law with the emerging concept of welfare state in democracy in India. It presupposes that everyone has a right of life, liberty and security of person, freedom from slavery or servitude, etc.

*Assistant Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

and ensuring equality before law and equal protection of law. It is therefore, evident that the Indian system from the very inception of the constitution has responded well to the Human Rights activism. To maintain just and honorable relations between nation etc. pursuant to the direction enshrined in Article 51 of constitution and International Commitments, Parliament has passed the protection of Human Rights Act 1993 and then set up a National Human Rights Commission from 1993.

Enforcement of Human Rights: While not strictly international in scope the Jurisprudence of the Indian Supreme Court in the realm of human rights is impressive. India boasts the longest constitution of any nation running to almost 400 articles with 10appendixes known as schedules. Part III of their constitution enumerates fundamental rights and the powers of the Supreme Court to provide remedies. The Supreme Court has also ruled that every court in India must construe these fundamental rights in the light of international conventions that are not inconsistent with the constitution. The full extent of this rule is not clear. Does this mean that courts must give effect only the text of conventions such as the International covenant on civil and political rights or the International covenant on the Elimination of all forms of discrimination against Women? Or does this rule import International Jurisprudence from the European Court of Human Rights, the UN Human Rights Council and even the International Court of Justice? As the International Human Rights law continues to evolve this ruling may prove to be a powerful vehicle for rights in India, which still suffers from regional and local abuses of minorities and women on a massive scale.

In Landmark Judgment in National Human Rights Commission v. State of Arunachal Pradesh (popularly called Chakmas Migrant Case). In this case 'PIL' filed by NHRC for enforcing the rights under Article 21 of the Constitution of about 65000 Chakmas. The all Arunachal Pradesh Student Union had threatened to forcibly expel them from the state; the Supreme Court held that the state is bound to protect the life and liberty of every human being whether he is a citizen or non-citizen. S.C. also ordered to protect all 'Chakmas' from any attempt to forcibly evict or drive them out of state by All Arunachal Pradesh Student Union and Court also directed the state to pay to the petitioner (NHRC) Rs. 10000 as a cost of the petition for bringing the matter before the court. This shows up the valuable work of NHRC in India.

Conclusion - The preamble to the constitution which is wedded to the idea of socialistic pattern of society has ensured social economic and political justice. Liberty of thought, expression and belief, faith and worship, equality of status and opportunity to all without any discrimination as to race, caste, sex, religion, place of birth etc. There is need to spread all over the human rights education especially for brutal, deviant, police officers who misuse their position and exploit people so there is need to teach police and jail personnel about human right education.

References :-

1. Wikipedia: A free encyclopedia.
2. Essay on Human Right Jurisprudence in India , By Pragati Ghosh
3. (1999) I SCC 759
4. Human Rights Jurisprudence in India: By Emersonlenom Published: 4 June, 2011.
5. 1996 I SCC 742.

****

Technical Development of Banking Sector In 21st Century

Dr. Sanjay Bhavsar*

Abstract - Now a day's banking sector plays a very important role in human life, banks motivates human to make saving money for their future. It provides number of facilities to the people, banking service has become a need of the society. As we know that in this 21st century every sector have a great challenges i.e customer satisfaction , and being a part of the society banks also facing this challenges, and banks are accepting challenges very nicely for the betterment of service banks are providing innovative services to the customer so that they can get proper benefit in this sector. Banks have influenced the economics and politics for centuries. The objective of this paper is to analyze the services provided by banks, and to observe that how innovative, and new services they are giving to the society, and to know that how much these facilities or services are beneficial for the society and as well as banks. This paper is descriptive in nature, and data has been collected through various secondary sources. The paper explains the objective with the help of case study of Union Bank of India. The paper concluded that banking sector has been changes rapidly. Now technology has made tremendous impact in banking, in 21st century dreams becomes reality. No one can get banking services anytime and anywhere, wherever and whenever anyone want, priority banking is a symphony of banking benefits, unique investment products, personalized services and exclusive life style, benefits that brings complete harmony to all your financial needs.
Keywords - Banking sector, customer satisfaction, Innovative services financially needs.

Introduction - Banking sector has became a emerging sector in India, their services are affecting to the human life and their life style, no one can deny that now the banks are becoming the necessity of everyone, in this era the need and satisfaction level of human has moved beyond the previous benchmark, and banking sector is providing lot of services to the customer, traditionally banks were providing only saving facility to the public and there were less number of banks are available, now scenario has been changed, there are171 banks which are working in India, in which some are public sector banks and some are private sector banks are working. Earlier the banks worked only for urban side of the country, but now they are focusing on the rural side, they are providing much facility for upliftment of their life style and their economic conditions, and it's happening, see how the villagers are producing the crops and they have no fear of money lender, who were made fool them, but a part of these we cannot ignore the technological challenges for every sector, and banking sector are also facing the great challenges, that's why they are more serious about the innovation policy and strategy. This paper deals with all the innovative strategy and the policy which are made by banks to retention of the existing and valuable customer and the backward side society.

Objective of study - The objectives of study are:

1. To identify and analyse the innovation initiative of selected bank, in special reference to SBI.
2. To analyse that how the innovation are profitable for the society as well as banks.
3. To ananlyse the affect of these innovation on the rural area of the country.

Methodology - This is the conceptual one with detailed review of literature for the purpose of study. The official website of banks were consider along with the additional literature, the period of the study is for Annual Report of 2013-14, some good journals and research paper were also considered during the study, there were a personal query from the bank's employee regarding their services.

Review of literature

Innovation is has always been a sought after area of organization. Innovation service is identifies as the main driver for companies to prosper grow and sustain at a high profitability.

Many researchers have given their views on the innovation in the services. in the perception of Chanakya Jayawardhana and Paul Foley.2000;

Innovation are discontinue innovation difficult "only accessible to people with certain qualities". Scott M Davis and Kristan Moe (1997) have framed eight steps that effectively take a company from customer driven needs and work assessment to final commercialization. (Schumpeter. 1934,p.228). Schumpeter recognized and felt

*Assistant Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

that Entrepreneur seek profit thought innovation transform the strategies, equilibrium into a dynamic process of economics development. Innovation in Banks in terms of services.

Innovation has been buzz words in banking right from beginning. The attempt toward innovation in India has been more, so in India due to the countries emergence and growth, more or less in the entire sector. The banking industry has been on an unprecedented growth trend during the past decade in the country. Banking sector today is fast and paced an disconsistency in the throes of changes, with new regulation, new process and new policies. Technology has played a very important role in the past in shaping the way things are today and will continue to do more than even before from beginning just a support function. Banking sector got success because of their innovation, now a day's banks are providing very innovative services; even they are seeking the technologies which can help more to the customer.

Application of innovation in SBI – SBI is the public sector bank. Being a public sector bank it has a good reputation in the market, but instead of it, it could not provide better service to the customer, but now the situation has been changed. SBI is providing very innovative and unique services to the customer. Despite being the country's largest bank, State Bank of India is trying hard to attract customers towards its various products and services. Or maybe we should say that it is because of SBI's innovative offerings that it has become the country's largest and most popular bank. Take a look at some of its new facilities:

1. Most recently, SBI has introduced a service which enables customers to file their income tax returns online. This service is extended to all customers of the bank. The Bank charges a nominal amount of Rs. 150 for rendering this service.
2. It has launched a Multi City cheque facility. Multi City cheques are those which can be drawn at any bank branch, in any city, even if it is drawn at base bank. No extra charges are levied on them they are treated as local cheques subject to a limit of Rs.5 lakh.
3. Recently, the bank scraped the minimum savings requirements of its savings accounts. Now, customers are not charged any penalty for not maintaining a minimum balance of Rs. 1000 in their savings accounts.

CSR Philosophy - The Bank is a corporate citizen, with resources at its command and benefits which it derives from operating in society in general. It therefore owes a solemn duty to the less fortunate and under-privileged members of the same society. Staff members are encouraged to make their contribution by understanding the aspirations of the public around them and by endeavoring to evolve measures to remove indisputable social and developmental lacunae. There are very unique and innovative CSR policies of the bank

Which is Incredible – CSR activity touches the lives of millions of poor and needy across the length and breadth of the country. The Bank has a comprehensive Corporate Social Responsibility (CSR) Policy, approved by the Executive Committee of the Central Board in August 2011 and earmarks 1% of the previous year's net profit as CSR spend budget for the year.

Focus areas of our CSR activities are:

1. Supporting education.
2. Supporting healthcare.
3. Assistance to poor & underprivileged.
4. Environment protection.
5. Entrepreneur development programme.
6. Assistance during natural calamities like floods/ droughts etc.

Supporting Education :

1. To support school education and provide relief from heat to millions of school children specially the under privileged children, Bank has provided 1,40,000 electric fans to 14,000 schools across the country during 2013-14.
2. Infrastructure support by way of furniture, computers and other educational accessories and donation of large number of school buses/vans to the physically/ visually challenged children and children belonging to economically weaker section of society.

Supporting Healthcare:

1. Bank donated 210 medical vans/ambulances with an expenditure of '18.38 crores during the year.
2. Medical equipment have been provided at 90 centres worth '8.87 crores.
3. Bank installed more than 30,000 water purifiers in schools ensuring clean & safe drinking water for millions of school going children. Assistance during natural calamities
4. During the current fiscal the Bank has donated '6.00 crores to the Chief Minister's Relief Fund of three states

Green Banking :

1. Bank has adopted energy efficient measures.
2. SBI is the largest deplorer of solar ATMs.
3. Bank has installed windmills in three states for its own energy needs.
4. Paperless Banking is promoted and implemented across the country.
5. Gives project loans at concessionary rate of interest to encourage reduction of green house gases by adopting efficient manufacturing practices.

Conclusion — After detail study of policies and strategies of State Bank of India, I would like to say that this bank is providing very innovative services. This bank has focused on the backward side of the society. The CSR policy of the bank is really very innovative. This is the only bank that is providing this type of facility to the rural area. It is observed that banks in India moving towards sustainability through innovative service operations and offerings. The sample considered here for analysis has proved this point very clearly. The rate at which innovation are adopted by firm

constitute an important part of the process of technological change. State Bank of India is more aggressive in innovation and it is position ahead it terms of services. So the banks must create and sustain an environment that promotes creativity.

At last I would like to say that innovation can give the better success to the banking sector. It is one of the best policy and the key of success of any bank.

References :–

1. Bessant, J., Tidd, J., "InnovationAnd Entrepreneur - ship", John Wiley &Sons. 2007
2. Chanaka Jayawardhena, Paul Foley, "Changes I the banking sector- the Case of Internet banking inthe UK",
3. Internet Research; Electronic Networking Application and Policy, Vol. 10, No. 1, 2000,pp. 19- 30
4. Scott M. Davis, Kristin Moe," Bringing Innovation to Life", Journal of Consumer Marketing, Vol. 14, No.5,1997, pp. 340-341.
5. Salmana Jafri, "Emergence In Banking In India:, The Journal of Business & Economics Studies, vol. V-II , pp, 81-85
6. www.unionbankofindia.co.in

****

Contribution of Internal Audit

Dr. Pratiksha Vyas*

Abstract - Due to tremendous growth in business and expanding markets throughout the world there is need of internal audit. It is only because of contribution of internal audit, the owners, investors, consumers and at large society is benefited. The main purpose of this paper is to show that it is due to internal audit the companies and business, may be small or large, the company has made growth and profit positively because there is continuous internal audit system maintained which helps the management to go on correct path. Auditing is the independent appraisal activity within an organization for the review of the accounting, financial and other operations as a ban's for protective and constructive service to the management. It is a type of control which functions by measuring and evaluating the effectiveness of other types of control. It deals primarily with accounting and financial matters but it may also properly deal with matters of an operating nature. Some business institutions appoint auditors who are made responsible to have a constant and regular review of their accounts. Such a cadre of auditors is of permanent nature and helps a lot in the detection and prevention of errors and fraud. The scope and objective of internal audit are likely to vary from business to business depending upon the different nature of organization. Thus internal audit is an integral part of internal control.
Key words - audit, auditor, contribution, internal check, internal control, techniques.

Introduction - The business world is quietly undergoing through the fundamental changes which have very serious long-term consequences. The impact of privatization, speed of communication, globalization, impact of e-commerce, influence of intellectual property has placed the internal audit to fore front in the business management. The scope of internal auditing within an organization is broad and may involve topics such as the efficacy of operations, the reliability of financial reporting, deterring and investing fraud, safeguarding assets and compliance with laws and regulations, policies and procedures. It should be noted that the audit of accounts by internal auditors is not compulsory and it is not essential. It is a matter of organizational behavior to appoint internal auditor for management to ensure smooth running of the business. Such auditors are known as internal auditors who besides checking the accounts, are required to report also as to how the system of accounting can be improved and the system of internal check be made economical and efficient. Internal audit is an independent appraisal of activity within an organization for reviewing the accounting, financial and other operation. It renders a productivity and constructive service to management. The main object of an audit is to verify the accounts and reports whether the balance sheet and profit or loss account have been drawn properly according to the companies act and whether they exhibit a true and fair view of the state affairs of the concern. Such verification of accounts and reporting to management are vital factors for promoting efficiency and a literacy in the maintenance of accounts so that the owners of a business may get accurate information about the financial condition of their business.

Objective of Auditing

Primary - To examine the reliability and validity of the financial statements so as to render an Opinion on the truth and fairness of the presentation in those statements.

Secondary - Study and evaluation of the adequacy and effectiveness of an accounting, financial and operating control, ascertaining the degree of compliance with predetermined policies, plans and procedures, correctness of accounting for business assets and measures their safety, and evaluation of quality of performance in performance of the duties as signed to individuals and departments.

Data collection and research methodology - To have a detail study of the subject, a survey of industry was done with the help of primary data, which was collected by preparing questionnaire.

Contribution of internal audit - Internal audit contributes greatly in managing the affairs of the company. Wherever right internal audit system/controls are available, you will observe that such companies are more disciplined and always have an edge over other companies in every respect. Major contributions of internal audit are: -

- **It leads to streamlining the internal working, methodology and procedures -** When internal auditor adopts adequate methodology and procedures, he is able to express more appropriate opinion on the financial

***Assistant Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA**

statement by spending optimum amount of time and resources. An internal auditor is successful when various techniques are used in conjunction with one another, which are interrelated in carrying out audit. In any auditing situation, certain areas are more prone to risk than others, at such time the auditor should identify such areas and plan the methodology, timing and extent of his audit procedures on the basis of his assessment of the degree of risk invaded.

- **It helps in identifying and rectifying the mistakes in shortest time, so as to not to let its impact continues for long time -** Internal audit /control is a system of controls having two important constituents. i.e. internal check and internal control. Internal checks take place concurrently with the execution of the transactions, whereas internal audit function is carried out after the transactions have taken place. Thus when both i.e. internal check and internal control of any firm or companies, it is very easy to identify any mistake and immediately rectifying them in shortest time .Naturally when the error is located at the earlier stage and is rectified its impact will not continue for long time.
- **Internal audit help in guiding the management whether all prescribed auditing norms and accounting standards are being followed or not -** Auditing standards are expected to be observed by the auditor when he has to express an opinion on financial statements. Compliance with auditing standards is necessary in normal circumstances. The auditor has to state in his report whether the audit was carried out in accordance with generally accepted auditing standards or not.
- **The internal auditor's reports help the statutory auditor to make up his mind and decide his time duration of audit and also the areas and the extent of concentration required -** For conducting the internal audit effectively, an internal auditor should modify his audit techniques and methods of reporting appropriately. Since the internal audit function is a part of the overall internal control system, the statutory auditor should evaluate its effectiveness. The evaluation of the internal audit function assists the statutory auditor in determine the nature, timing and extent of his audit. Thus if a statutory auditor finds that internal audit is adequate and effective in certain areas, he may limit the related substantive procedures.
- **Internal auditing is also a threat to the incompetent employees -** In order to achieve the objectives of internal controls relating to accounting system, it is necessary to establish adequate control and policies and procedure by internal auditor. The work involved in a transaction is allocated to different persons in such a manner by internal auditor that the work of one person is complementary to the work of another person. When the employees know that the work performed by them is continuously monitored, they will be more alert and would be more sincere to their work and thus due to internal auditor the management would be free from the employee's part.
- **Internal audit takes care of and keeps a watch on the safety of assets of the company -** Here the internal auditor inquires into the value, ownership and title, existence and possession and presence of any charge on the assets. While auditing the internal auditor not only examines the arithmetical accuracy of assets but also inquire into that the assets have been fairly and truthfully valued, the ownership and title of assets are with the organization and are the assets in existence and are in the possession of the organization and if they are not, there has to be no charge over them other than what has been shown in the balance sheet. Internal auditor physically verifies the assets and in case of grave discrepancies, proper treatment has been done in the books of accounts accordingly, and thus internal auditor is like a watch dog to the management and takes care and keeps a watch on the safety of assets of the company.

Areas of Contribution In Relation To Internal Audit Identification of Potential Problem Areas:

- An objective of the preliminary review is the identification of potential problem areas. One of the first steps in determining problem areas is to identify those programs, activities, and functions, which are significant. These can be identified as those programs or activities:

1. Which are susceptible to fraud, abuse, or mismanagement?
2. In which there is a large volume of transactions or large investments in assets
3. Which are subject to loss if not carefully controlled?
4. About which concerns have been expressed by management.
5. In which prior audits have disclosed major weaknesses or deficiencies.

This phase of the preliminary review should identify the significant activities of the area and what inherent risks exist. Once these activities and risks have been identified, the next step is to evaluate controls.

- The auditor is responsible for determining how much reliance can be placed on the entity's controls to protect its assets, assure accurate information, assure compliance with applicable laws and regulations, promote efficiency and economy, and produce effective results.
- The auditor's evaluation should include identification of areas in which essential controls appear to be weak, nonfunctioning, or missing.

Questionnaire

T Enterprise :

1. Along with internal audit, is organization inspection system effective?
2. Does internal auditing process continue throughout the year?
3. Are all the activities of internal audit satisfied in regard to show true and fair views regarding books of accounts?
4. Has the auditor audited all suitable areas?
5. Does the internal auditor give suggestion to management from time to time?

6. Does statutory auditor have faith on internal auditor?
7. Are the internal auditor's techniques, methods and process helpful to Organization?
8. Has internal audit helped management to increase its efficiency?
9. Is the possibility of frauds and illegal acts reduced due to internal audit?
10. Does the internal audit keep a continuous watch on business policies?

Answers related to above questionnaire were YES answered by top officials, employees and management

Conclusion - To examine the reliability and validity of financial statements so as to render an opinion on the truth and fairness of the presentation, study and evaluation of the adequacy and effectiveness of an accounting, financial and operating controls, asserting the degree of compliance with predetermined policies, plans and procedures, correctness of the accounting for business assets and measures their safety, evaluation of quality of performance of the duties as assigned to individuals and departments. It was observed that due to internal audit there is transparency in financial reporting which is a part of good governance and is a requirement of the day. The study has very clearly revealed about how effective and useful an internal audit is. It serves as a guidance note to the management and supportive document. It is also an effective tool and has a utility for management at all levels. Conducting of internal audit itself gives a confidence to the employees and creates a sense of responsiveness among them so as to not let internal auditor find a fault in their work and performance.

A survey was done of a manufacturing company with the help of questionnaire and the result was as follows:

This is a proprietary firm involved majorly into manufacturing of electrical control bands (specialized) and trading of related items. The company has improved on account of inputs by internal audit. Internal audit was done, issues were discussed and accordingly suggestions were also made. It was found that, there is a positive growth of rise and substantial growth in sales. In the initial stage the company was having almost 86% as its cost of manufacturing which came down to 80%and later 76% and so on. This was on account of better stock planning and material consumption for which input suggestions were made by internal auditors. This was also on account of increasing turnover leading to economy in pricing .The current ratio of the company has been brought down from 1.8:1.1.This shows that the strength of the company has gone up. Bringing down and maintaining the current ratio to a desired result needs a very strong management skill. This has been on account of proper stock management and debtor, creditors control and effective rotation of the liquidity available to the company. As is normally seen, direct expenses are lesser then indirect expenses and so is the case here also. With the increase in sales the net consumption has also increased but the profitability has definitely improved. The company has been on a positive trend towards saving in expenses directly/indirectly, when costing is considered, yielding better turnover and better profitability. The internal audit has played a vital role in this regard and also been motivational instrument for increasing sales. The internal audit has brought in a discipline in consumption yielding better profitability. It was found that there was a growth in gross profit mainly because of the input by internal audit to improve on their pricing and control in the cost. The fluctuation in net profit was mainly found due to effective tax planning, measures by the management for legitimate saving of tax. To summarize audit has an important role in the development of the world economy by enhancing the degree of confidence of the users in the financial information. Audit will remain an instrument of growth and cherish the trust of society.

References :-

List of Books :
1. Principles and Practice of Auditing : By Dinkar Pagare
2. Contemporary Auditing: By Kamal Gupta.
3. Auditing Information Systems : By Jack .J. Champlain
4. Auditing: By Dr.T.R.Sharma.
5. Fundamental of Auditing : By Gupta

Publications :
1. Manual on internal audit.
2. Auditing and assurance standards and guidance notes.

Websites :
1. w.w.w.icai.org : The institute of charted Accountants of India
2. w.ww.ifac.org : International Federation of Accountants

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

गाँधी चिन्तन में भारतीय स्त्रियों के सामाजिक पुनरूत्थान की संकलपना

डॉ. गोपाल सिंह *

प्रस्तावना – महात्मा गाँधी का मानना था कि जिस रूढि और कानून के बनाने में स्त्री का कोई हाथ नहीं था और जिसके लिए सिर्फ पुरूष ही जिम्मेदार है, उस कानून और रूढि के जुल्मों ने स्त्री को लगातार कुचला है। अहिंसा की नींव पर रचे गये जीवन की योजना में जितना और जैसा अधिकार पुरूष को अपने भविष्य की रचना का है, उतना और वैसा ही अधिकार स्त्री को भी अपना भविष्य तय करने का है। लेकिन अहिंसक समाज की व्यवस्था में जो अधिकार मिलते है, वे किसी न किसी कर्त्तव्य या धर्म के पालन से प्राप्त होते है। इसलिए सामाजिक आचार-व्यवहार के नियम स्त्री और पुरूष दोनों को आपस में मिलकर और राजी-खुशी से तय करने चाहिए। इन नियमों का पालन करने के लिए बाहर की किसी सता या हुकूमत की जबरदस्ती काम न देगी। स्त्रियों के साथ अपने व्यवहार और बर्ताव में पुरूषों ने इस सत्य को पूरी तरह पहचाना नहीं है। स्त्री को अपना मित्र या साथी मानने के बदले पुरूष ने अपने को स्वामी माना है। इसलिए हमारा यह कर्त्तव्य है कि स्त्रियों को उनकी मौलिक स्थिति का पूरा बोध करावें और उन्हें इस तरह की तालीम दें, जिससे वे जीवन में पुरूषों के साथ बराबरी के दरजे से हाथ बंटाने लायक बनें। [1]

गाँधी जी ने स्त्रियों के सामाजिक पुर्ननिर्माण पर बल देते हुए निम्नलिखित सुधारों की आवश्यकता पर जोर दिया:-

(अ) स्त्रीयों की समानता- गाँधी जी का विचार है कि स्त्रियों के अधिकारों के सवाल पर किसी तरह का समझौता स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। स्त्रियों पर ऐसा कोई कानूनी प्रतिबंध नहीं लगाया जाना चाहिए, जो पुरूषों पर न लगाया गया हो। पुत्रों और कन्याओं में किसी तरह का भेद नहीं होना चाहिये। उनके साथ पूरी समानता का व्यवहार होना चाहिये। [2]

गाँधी जी ने कहा है कि पुरूष और स्त्री की समानता का अर्थ यह न हो कि वे समान धन्धे भी करें। स्त्री के शस्त्र धारण करने का शिकार करने के खिलाफ कोई कानूनी बाधा न होनी चाहिए। लेकिन जो काम पुरूष के करने के है, उनसे वह स्वभावत: विरत होगी। प्रकृति ने स्त्री और पुरूश को एक - दूसरे के पूरक के रूप मं सिरजा है। जिस तरह उनके आकार में भेद है, उसी तरह उनके कार्य भी मर्यादित है। [3]

(ब) विवाह-संस्कार – गाँधी जी के अनुसार विवाह जीवन की एक स्वाभाविक घटना है और उसे किसी भी तरह दूषित या कुत्सित मानना गलत है......आदर्श यह है कि विवाह को एक पवित्र संस्कार समझा जाय और तद्नुसार विवाहित अवस्था में संयम का पालन किया जाय। [4]

(स) परदा-प्रथा का विरोध – गाँधी जी का मत है कि पवित्रता स्त्रियों को बाहरी मर्यादाओं में जकड़कर रखने से उत्पन्न होने वाली चीज नहीं है। उसकी रक्षा उन्हें परदे की दीवार से घेरकर नहीं की जा सकती। उसकी उत्पति और उसका विकास भीतर से होना चाहिये और उसकी कसौटी यह है कि वह पवित्रता किसी भी प्रलोभन से डिगे नहीं। इस कसौटी पर वह खरी सिद्ध हो तभी उसका कोई मूल्य माना जा सकता है। [5]

उनका कहना है कि पुरूषों के शील की पवित्रता के विषय में हम स्त्रियों को तो कोई चिन्ता करते हुए नहीं सुनते। फिर स्त्रियों के शील की पवित्रता के नियमन का अधिकार अपने हाथों में लेने की इच्छा पुरूष को क्यों करनी चाहिये? पवित्रता कोई ऐसी चीज नहीं है, जो ऊपर से लादी जा सकें। वह तो भीतर से विकसित होने वाली और इसलिए वैयक्तिक प्रयत्न से सिद्ध होने वाली चीज है। [6]

(द) दहेज प्रथा का विरोध – गाँधी जी का विचार है कि दहेज प्रथा नष्ट होनी चाहिये। विवाह लड़के-लड़की के माता-पिताओं द्वारा पैसे ले-देकर किया हुआ सौदा नहीं होना चाहिये। इस प्रथा का जाति प्रथा से गहरा संबंध है। जब तक चुनाव का क्षेत्र अमुक जाति के इने-गिने लड़कों या लड़कियों तक ही मर्यादित रहेगा तब तक यह प्रथा भी रहेगी भले ही इसके खिलाफ जो भी कहा जाय। यदि इस बुराई का उच्छेद करना हो तो लड़कियों को या लड़कों को या उनके माता-पिताओं को जाति के बंधन तोड़ने पड़ेगे। इस सबका मतलब है चरित्र की ऐसी शिक्षा, जो देश के युवकों और युवतियों के मानस में आमूल परिवर्तन कर दें। [7]

उनका कहना है कि कोई भी ऐसा युवक, जो दहेज को विवाह की शर्त बनाता है, अपनी शिक्षा को कलंकित करता है, अपने देश को कलंकित करता है और नारी-जाति का अपमान करता है। उन्होंने कहा है, दहेज की इस नीचे गिराने वाली प्रथा के खिलाफ बलवान लोकमत पैदा करना चाहिये, और जो युवक इस पाप से सोने से अपने हाथ गंदे करते है, उनका समाज से बहिष्कार किया जाना चाहिये। लड़कियों के माता-पिताओं को अंग्रेजी डिग्रीयों का मोह छोड़ देना चाहिये और अपनी कन्याओं के लिए सच्चे और स्त्री-जाति के प्रति सम्मान की भावना रखने वाले सुयोग्य वरों की खोज में अपनी जाति या प्रान्त के भी तंग दायरे के बारह जाने में संकोच नहीं करना चाहिये। [8]

(य) विधवा विवाह का समर्थन – गाँधी जी बाल विवाह के तीव्र विरोध में थे। उन्होंने विधवा विवाह का समर्थन किया-विशेषकर बाल विधवाओं के लिए। उनका कहना था कि जिस स्त्री ने अपने पति के प्रेम का अनुभव किया हो, उसके द्वारा स्वेच्छा से और समझ-बुझकर स्वीकार किया गया वैधव्य जीवन को सौन्दर्य और गौरव प्रदान करता है, घर को पवित्र बनाता है और धर्म को ऊपर उठाता है। लेकिन धर्म या रिवाज के द्वारा लादा हुआ वैधव्य एक असह्य बोझा है, वह गुप्त पापाचार के द्वारा घर को अपवित्र करता है और धर्म को गिराता है।

* सह-आचार्य (राजनीति विज्ञान) शहीद कैप्टन रिपुदमनसिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

अत: गाँधी जी का कहना था कि यदि हम पावित्र्य की और हिन्दु धर्म की रक्षा करना चाहते है, तो इस जबरदस्ती लादे जाने वाले वैधव्य के विषय से हमें मुक्त होना ही होगा। इस सुधार की शुरूआत उन लोगों को करनी चाहिए, जिनके यहां बाल-विधवायें हो। उन्हें साहसपूर्वक इन बाल विधवाओं का योग्य लड़कों से विवाह करा देना चाहिये।[9]

(र) तलाक - गाँधी जी का मत था कि अगर पुरूश को विवाह-विच्छेद का अधिकार हो तो, स्त्री को भी होना चाहिए। लेकिन वे सामान्यत: इस प्रथा के विरोधी थे। उनका मत था कि प्रेम की गांठ अविभाज्य होनी चाहिये। [10]

(ल) वेश्यावृत्ति का विरोध - गाँधी जी ने वेश्यावृत्ति को मानव-जाति का अभिशाप मानते हुए इसका विरोध किया। उन्होंने कहा 'मुझे यह मंजूर है कि पुरूष जाति का नाश हो जाय, मगर यह मंजूर नहीं कि भगवान् की पवित्रतम् सृष्टि को अपनी वासना का शिकार बनाकर हम पशुओं से भी गये-बीते बन जाय।' [11]

गाँधी जी का मानना था कि एक समय ऐसा जरूर आयेगा, जबकि मानव-जाति इस अभिशाप के खिलाफ उठ खड़ी होगी, और जिस तरह उसने दूसरे अनेक बुरे रिवाजों को, भले ही वे कितने भी पुराने रहे हो मिटा दिया है, उसी तरह वेश्यावृत्ति को भी वह भूतकाल की चीज बना देगी। [12]

(व) स्त्रियों के शील की रक्षा - स्त्रियों के शील की रक्षा के संबंध में उनका मानना था कि किसी स्त्री की इच्छा के खिलाफ उसका शील भंग नही किया जा सकता। इस अत्याचार की शिकार वह तब होती है जब उसके मन पर डर छा जाता है या जब उसे अपने नैतिक बल की प्रतीति नही होती। अगर वह आक्रमणकारी के शारीरिक बल का मुकाबला नही कर सकती, तो उसकी पवित्रता उसे, आक्रमणकारी उसके शील का भंग कर सकें उसके पहले ही मरने की इच्छा बल अवश्त दे सकती है। सीता का उदाहरण देते हुए गाँधी जी ने कहा कि शारीरिक दृष्टि से रावण की तुलना में सीता कुछ भी नहीं थी, किन्तु उनकी पवित्रता रावण के अपार राक्षसी बल से भी ज्यादा शक्तिशाली सिद्ध हुई। रावण ने उन्हें अनेक तरह के प्रलोभन देकर जीतना चाहा, लेकिन उन्हें वासना-पूर्ति के लिए छूने की हिम्मत वह नहीं कर सका। दूसरी और यदि स्त्री अपने शारीरिक बल पर या हथियार पर भरोसा करें, तो अपनी शक्ति के चुक जाने पर वह निश्चत ही हार जायेगी।[13]

गाँधी जी ने कहा है, किसी स्त्री पर जब आक्रमण हो उस उसमय उसे हिंसा और अंहिसा का विचार करने की जरूरत नहीं। उसका पहला कर्त्तव्य आत्मरक्षा करना है। अपने शील की रक्षा के लिए उसे जो भी उपाय सूझे उसका उपयोग करने की उसे पूरी आजादी है। भगवान ने उसे दांत और नाखून तो दिये ही है, उसे अपनी पूरी ताकत के साथ उसका उपयोग करना चाहिये और यदि जरूरत पड़ जो तो प्रयत्न करते हुए मर जाना चाहिये। उनका मत है कि जिस स्त्री ने मरने का सारा डर छोड़ दिया है वह न केवल अपनी ही रक्षा कर सकेगी, बल्कि अपने प्राणों का बलिदान करके दूसरों की रक्षा भी कर सकेगी। [14]

गाँधी जी नारी जाति के उन महान उन्नाायकों में गिने जा सकते है, जिन्होंने पुरूष होकर भी स्त्रियों की दु:ख-दुविधाओं के दारूण अनुभवों को अपने जीवन का अनुभव मानकर उनकी दशा सुधारने का कार्य किया। गाँधी जी का प्रत्येक विचार कस्तूरबा के जीवन में झलकता था। गाँधी जी ने स्त्रियों को भारत की स्वतंत्रता के लिए प्रेरित कर एक मूक सामाजिक क्रांति का सूत्रपात किया। उनके मार्गदर्शन में सरोजिनी नायडू, कमला नेहरू, अमृत कौर, प्रभावती, अनुसूया बहन, मीरा बहन आदि ने स्त्री जाति को गौरवान्वित कर भारत की आजादी की मशाल को पुरूषों के समान प्रज्वलित रखा। न केवल भारत अपितु दक्षिण अफ्रीका तथा दक्षिण एशिया में भी जहाँ-जहाँ गाँधी जी का प्रभाव फैला, स्त्रियों ने गाँधी जी से प्रेरणा प्राप्त कर अपने आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक अस्तित्त्व को बनाये रखने का संघर्ष किया। गाँधी जी के प्रयत्नों के फलस्वरूप: भारत में ऐसा सामाजिक परिवर्तन आया कि बिना किसी कानूनी सुधार के भारतीय समाज ने स्त्रियों को समानता तथा स्वतंत्रता का पुरूषों के समान अधिकार प्रदान किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गाँधी, एम.के 'रचनात्मक कार्यक्रम' नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदबाद पृष्ठ सं. 32-33
2. यंग इण्डिया दिनांक 17.10.1929
3. हरिजन, दिनांक 02.02.1939
4. हरिजन, दिनांक 22.03.1942
5. यंग इण्डिया दिनांक 03.02.1927
6. यंग इण्डिया दिनांक 25.11.1926
7. हरिजन दिनांक 21.06.1928
8. यंग इण्डिया दिनांक 21.06.1928
9. यंग इण्डिया दिनांक 05.08.1926
10. बापू के पत्र मीरा बहन के नाम पृष्ठ सं. 37
11. गाँधी, एम.के. 'स्त्रियों की समस्याऐं' पृष्ठ सं. 106
12. यंग इण्डिया दिनांक 28.05.1925
13. हरिजन दिनांक 14.01.1940
14. हरिजन दिनांक 01.03.1942

****

आधुनिक हिन्दी कहानी: स्त्री और भूमंडलीकरण

डॉ. प्रभा शर्मा *

प्रस्तावना – भूमंडलीकरण अभियान का समस्त नेतृत्व अमेरिका के हाथों में है क्योंकि यह सारा अभियान अमरीकी जीनव-मूल्यों, मानसिकताओं एवं विचारधाराओं के आधार पर ही चल रहा है। अगर भूमंडलीकरण के समर्थकों के दावे के अनुसार यह समाज बहुजन हिताय, बहुजन हिताय की जगह सर्वजन हिताय बदल रहा है तो वह सारा हित या कल्याण अमरीकी जीवन पद्धति एवं मानदंड के अनुसार ही हो रहा है और होता रहेगा क्योंकि अमेरिका ही पूर्णरूपेण मुक्त बाजार एवं हाई तकनीक का नेता रहा है। फ्रिडमैन ने लिखा भी है **'हम चाहते हैं कि दुनिया हमारे नेतृत्व का अनुसरण करे और जनतांत्रिक एवं पूंजीवादी बन जाए।'**[1]

भूमंडलीकरण के समर्थक कहते हैं कि यह पूँजीवादी बाजार का अन्तिम चरण है जो एक तरह से स्थायी रूप में सदैव रहेगा। अब वर्ग संघर्ष के लिए कोई स्थान नहीं है। इतिहास अपने अन्तिम पड़ाव पर है, अब दुनिया एक मानव जाति एकता के सूत्र में बँध जायेगी।

दूसरी ओर विश्व के अधिकांश देशों में सामाजिक, आर्थिक विषमता बढ़ती जा रही है। पुरानी तथा छोटी-छोटी औद्योगिक इकाइयाँ बन्द होती जा रही हैं। बड़े देशी उद्योग भी बंद होने या मर्ज होने के कगार पर ही हैं। रोजगार के रास्ते बन्द होते जा रहे हैं। किसान वर्ग मन्दी से त्रस्त है। भूमंडलीकरण के पूर्व आर्थिक समृद्धि के लाभ का प्रभाव सभी वर्गों एवं समुदायों पर पड़ता था किन्तु अब इस फर्क को स्पष्टतया महसूस किया जा सकता है, भूमंडलीकरण की प्रतिक्रिया स्वरूप आर्थिक लाभ सीमित वर्ग अर्थात् थोड़े से देशों और वह भी धनाढ्य वर्ग को ही मिल पाता है। किसी विद्वान के कथनानुसार- **'दुनिया के धनाढ्य लोग जड़विहीन हैं। अपनी पूँजी की तरह जहाँ चाहते हैं वहाँ बसते हैं। उनका किसी देश या स्थान विशेष से लगाव नहीं है।'**

भूमंडलीकरण के तमाम विरोधों के बावजूद कोई विकल्प नहीं है क्योंकि पूंजीवाद ने समाज में इतना चमत्कारिक परिवर्तन ला दिया है। लोगों को गरीब बनाने के बदले उपभोक्ता बनाया है। समृद्धिशील बाजारों के माध्यम से आर्थिक समृद्धि का डंका बजाया है। बहुराष्ट्रीय निगमों के अपने धरती पर झंडा लहराने के पीछे उनका स्वार्थ था, सस्ते दर पर श्रम का उपलब्ध होना। ये निगम एक देश समूह से कच्चा माल लेकर दूसरे देश समूह के श्रम तथा कारखानों (भूमि) से लाभ उठाते हुए माल तैयार कर किसी तीसरे देश समूह को विक्रय करते हैं। जार्ज बाल के अनुसार **'त्वरित संचार साधनों, तेल परिवहन सेवाओं, कम्प्यूटर तथा आधुनिक प्रबन्धकीय तकनीक से लैस होकर श्रम व कच्चे माल की उपलब्धता तथा कीमतों के उतार-चढ़ाव के अनुसार हर महीने उत्पादन तथा वितरण के तरीकों में फेरबदल करते हुये वे अपने संसाधनों को नित नये तरीके से संयोजित करते रहते हैं।'**

भूमंडलीकरण के इस दौर में जनहित व जनकल्याण की भावना पूँजीवाद की उग्रता में बदल चुकी है। कात्यायनी ने अपनी पुस्तक **'दुर्गद्वार पर दस्तक'** में लिखा है **'निजीकरण और डिरेग्यूलेशन और ढाँचागत समायोजन का एकमात्र उद्देश्य पूंजीवाद को उसके क्लासिकी रूप में एक बार फिर बहाल करना है जिसमें पूँजीवाद की जो बुनियादी प्रवृत्तियाँ शुरू से उसके भीतर मौजूद रही हैं, वे एकदम सतह पर उभर आई हैं। ये प्रवृत्तियाँ हैं- हर चीज को माल में तब्दील कर देना और अतिलाभ अर्जित करने और उग्र होती जा रही बाजार की प्रतिस्पर्धा में टिके रहने के लिए पूँजीपतियों के द्वारा सस्ते से सस्ते श्रम के स्रोतों की तलाश और आज दुनिया में सबसे सस्ता श्रम है तीसरी दुनिया के देशों की निम्न मध्यमवर्गीय मेहनतकश स्त्रियों का जिस पर तमाम बहुराष्ट्रीय निगम गिद्धों की तरह टूट पड़े हैं।'**[2]

इन निगमों का तीसरी दुनिया की ओर आकृष्ट होने कारण यहाँ का सस्ता श्रम एवं श्रमिक की सहज उपलब्धता ही है। अमेरिका में पुर्जे जोड़ने वाली मजदूर औरत औसतन 3.10 डॉलर से 5 डॉलर प्रति घंटा कमाती है जबकि तीसरी दुनिया में वही काम करने वाली औरत पूरे दिन की मेहनत के बाद 5 डालर कमाती है। औरतों की श्रमदर पुरूषों से 40-60 प्रतिशत कम है तो भला पुरूष मजदूर क्यों रखे जायें। इस तरह स्त्रियाँ किस तरह तथाकथित त्वरित उन्नति एवं प्रगति के इस युग में निकृष्टतम गुलामों की कोटि में नारकीय जीवन जीने को विवश हैं। आर्थिक उदारीकरण के लागू होने के बाद भारत में भी यही दिशा व दशा हो गई है।

'बीसवीं सदी के अन्त में भारत जैसे गरीब देशों की मेहनतकश स्त्रियाँ रोजमर्रा के आम जीवन से अनुपस्थित होती जा रही हैं। उन्हें देखना है तो वहाँ चलना होगा जहाँ के छोटे-छोटे कमरों में माइक्रोस्कोप पर निगाहें गड़ाये सोने के सूक्ष्म तारों को सिलिकोन चिप्स से जोड़ रही हैं, निर्यात के लिए सिले सिलाये वस्त्र तैयार करने वाली फैक्ट्रियों में कटाई सिलाई कर रही हैं। खिलौने तैयार कर रही हैं या फूड प्रोसेसिंग के काम में लगी हुई हैं। इसके अलावा वे बहुत कम पैसों पर स्कूलों में पढ़ा रही हैं। टाइपिंग कर रही हैं, करघे पर काम कर रही हैं, सूत कात रही हैं और पहले की तरह बदस्तूर खेतों में खट रही हैं। महानगरों में वे दाई-नौकरानी का भी काम कर रही हैं और बारमेड का भी। अनुपस्थित और मौन होकर भी वे हमारे आसपास ही हैं। भूमंडलीकरण की संजीवनी पी रहे वृद्ध पूँजीवाद के लिए शव परिधान बुन रही हो शायद।'[3]

बाजार का सर्वेक्षण करने वाले अर्थशास्त्रियों की मान्यता है कि भूमंडलीकरण ने नारी की स्थिति, नर-नारी संबंधों एवं महिला सशक्तीकरण

* सह आचार्य (हिन्दी) राजकीय कला कन्या महाविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

के अनायास ही द्वार खोले हैं और जब घर की चारदीवारी से निकली तो अर्थोपार्जन से उसकी शक्ति को नये आयाम जुड़े हैं जिससे परिवार और समाज में उसकी प्रतिष्ठा बढ़ी है यद्यपि भूमंडलीकरण के तहत आज बाजार में प्रभुत्व एवं महिला रोजगारों की संख्या अपने चरम पर है फिर भी तीसरी दुनिया के अधिकांश देशों में श्रमशक्ति के रूप में महिलाओं की संख्या में बढ़ोत्तारी हुई है। प्रभा खेतान मानती हैं कि **'भूमंडलीकरण ने स्त्री को जितना लाभ पहुँचाया है उससे अधिक हानि पहुँचाई है। उसने स्त्री को सब कहीं एक आकर्षक उत्पाद में बदला है। भ्रूण-हत्या और बालिका-शिशु की उपेक्षा का अनुपात तेजी से बढ़ा है। भारत जैसे समाज में स्त्री की आर्थिक स्वतंत्रता ही काफी नहीं है आर्थिक परिवर्तन के सन्दर्भ में उसे राजनीतिक और सामाजिक आन्दोलन की जरूरत है। वे स्पष्ट लिखती हैं अमानवीयता विकास के प्रतिमानों को खारिज करना और जनोन्मुखी नज़रिए को विकसित करना नारीवाद का पहला उद्देश्य होना चाहिए।'**[4]

भूमंडलीकरण की व्याख्या दो स्तरों पर की गई, एक ओर तो यह माना गया कि वैश्वीकरण व उदारीकरण से महिला को रोजगार के अवसर एवं आर्थिक स्वावलम्बन से सशक्तिकरण को बल मिलेगा, दूसरी तरफ इसी प्रक्रिया की पर्यावरणवादियों ने यह व्याख्या की कि विज्ञान व प्रौद्योगिकी विकास के जरिए लाभ कमाने के चक्कर में यह वैश्वीकरण स्त्री श्रम को हासिल करके प्रकृति का विरोध कर रहा है। अर्थात् स्त्री को प्रजनन, लालन पालन करने की प्राकृतिक स्वाभाविक नारी सुलभ क्षमताओं को नष्ट कर रहा है। पर्यावरणवादी चूँकि पारम्परिक नारी व उसके दायित्व को ही प्रकृतिजन्य मानते हैं। इसलिए स्त्री स्वातन्त्रय एवं नारीवादी अभियान चलाने वालों ने इसे स्वीकृति नहीं दी क्योंकि इससे नर-नारी के प्रचलित संबन्धों में बदलाव की गुंजाइश नगण्य थी। भूमंडलीकरण ने महिलाओं को दो खेमों में बाँट दिया। एक ओर स्त्री अपनी पारम्परिक छवि के समर्थन में संघर्षरत रही, वहीं दूसरी ओर वे अधिकांश स्त्रियाँ जिन्हें प्रौद्योगिकी परिवर्तन व बाजार की प्रक्रिया ने अपने अधीन कर रखा था।

ध्यातव्य है कि नारी मुक्ति अभियानों ने एक ही तरफ ध्यान दिया और कारखानों में काम करने के बावजूद घर के कामों से छुटकारा न मिलने जैसे आवश्यक पहलुओं पर ध्यान नहीं दिया गया जो स्त्रियों पर शोषण की दोहरी मार जैसे थे। इसलिए भूमंडलीकरण औरतों के श्रम व देह पर निजी नियन्त्रण को सार्वजनिक नियन्त्रण में बदल रहा था। **'बाजार ने औरत को प्राइवेट से निकालकर पब्लिक में लाकर उसका वस्तुकरण का अभियान शुरू कर दिया है।'**[5]

व्यक्ति को वस्तु बनाकर उसके मनुष्यत्व को भुला दिया जाता है। वह सिर्फ बिकाऊ माल रह जाता है। **'स्त्रीत्व और सतीत्व के बीच कहीं बिला गए स्त्री के मनुष्यत्व को ढूँढने और प्रतिष्ठित करने के प्रयास में क्रमश: एक-एक पग धरते हुये पहले वे उस समाज की शिनाख्त कर लेना चाहती है, जो औरत को माल बनाकर बाजार में परोसता है।'**[6]

जया जादवानी ने अपनी कहानी **'बाजार'** में इसी भाव को चित्रित किया है- **'उस बाजार में जहाँ देह सिर्फ जानवरों की बिकती है और स्त्री की। खाने के अंदाज अलग हैं।'**[7] भूमंडलीकरण और उदारीकरण ने भी स्त्रियों को रेवड़ की भाँति बाहर-भीतर खदेड़े जाने को बाध्य कर दिया है। बाजार, पैसा, देह, कैरियर पर आधारित रघुनन्दन त्रिवेदी की एक कहानी है-**'कैरियर'** जिसमें स्त्री ने लिजलिजी भावुकता छोड़, बाजार की भाषा सीख ली है जिसका पहला और आखिरी सबक है- पैसा। जहाँ का मतलब है चिड़िया को उतना चालाक होना चाहिए जितना जिन्दा रहने के लिए जरूरी है। जिससे यह भी पता चल जाता है कि **'जिन्दगी एक बार मिलती है, उसकी कद्र करनी चाहिए, रोना-धोना, सोचना और भावुक होना एकदम बकवास, शील और पवित्रता, परम्परा और संस्कृति फिजूल। पुरानी चीजें हैं सब, जीने का एक सूत्र कि सिर्फ अपने बाबत सोचो............... दुनिया उसकी है जिसके पास पैसा है। पहले पहल पैसा कमाना हो तो अक्ल से काम लो। अक्ल के साथ खूबसूरती हो तो रास्ता और आसान। जरुरत है आदमी एक बढ़िया सेल्समैन हो जाए फिर वह चाहे तो अपना रेत भी सोने के भाव बेच सकता है।'**[8]

और सचमुच ही नायिका कैरियर बनाती है, धीरे-धीरे शो बिजनेस का अन्तरंग हिस्सा बनती है। दन्तमंजन, शैम्पू, तेल और तौलिये का विज्ञापन फिल्मों से क्रमश: दाँत, बाल, पीठ व पिंडलियों का पर्दाफाश करती जाती है, यानि बदले में फ्लैट, लिफ्ट, वीसीआर, कूलर, वाशिंग मशीन, कपड़े, जेवर, और सबसे बड़ी बात अब किसी की मजाल नहीं जो उसे बिना मर्जी छू ले यानि देह पर बाजार की विजय या बाजार पर देह की विजय।

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को ऐसे श्रमिकों की जरुरत होती है, जिन्हें रोजगार की सुरक्षा या गारन्टी न देनी पड़े जिन्हें स्थायी न करना पड़े। जिन्हें ठेके पर भी उपलब्ध किया जा सके वे श्रमिक असंगठित मजदूर के रूप में काम करें। इस रूप में महिला श्रम सबसे बेहतर है। ज्यादातर महिलायें इस तरह के काम को आजीवन या आजीविका का कार्य नहीं मानती। उन्हें काम की हर शर्त मंजूर होती है। वे कार्य न कर घरेलू महिला के रूप में रहने को भी तैयार होती हैं। चाहे जीवनस्तर कितना भी गिए जाए। कई बार पुरुष के शक करने पर बच्चों के लालन-पालन या घर के किसी सदस्य के बीमार होने पर वे अपना कार्य छोड़ भी देती हैं।

जो भी हो, भूमंडलीकरण से भारतीय परिवार के नज़रिये में एक परिवर्तन यह हुआ है कि कम से कम कस्बा या शहरी इलाकों से मध्यवर्ग लड़कियों की रोजगारपरक शिक्षा पर ध्यान केन्द्रित करने लगा है। शिक्षा एवं उसका उद्देश्य जीविकोपार्जन होने के कारण विवाह एवं प्रजनन की आयु में बढ़ोत्तारी हुई है फिर भी इन सामान्य परिवर्तनों के अलावा भूमंडलीकरण से महिलाओं को कोई विशेष उल्लेखनीय लाभ नहीं हुआ है। विदेश में रह रही प्रवासी स्त्री ने अपने देश की अर्थव्यवस्था को सुचारु बनाये रखने के लिए विदेशी मुद्रा कमाई किन्तु अब विश्व और ये निगम श्रमप्रधान दौर से निकल कर उच्च प्रौद्योगिकी के दौर में पहुँच गया जहाँ अब उसे महिला श्रम की आवश्यकता नहीं अतएव सभी अर्थतन्त्रों में आज के बेरोजगारों में महिलाओं की संख्या बढ़ती जा रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. न्यूयार्क टाइम्स मैगनीज, 29 मार्च 1999 (ए मेनिफेस्टो फॉर द फास्ट वर्ल्ड)
2. दुर्गद्वार पर दस्तक - कात्यायनी, पृष्ठ 16
3. वही
4. उपनिवेश में स्त्री, प्रभा खेतान, पृष्ठ 35
5. 'हंस' मार्च 2001, (अभय दुबे के आलेख से), पृष्ठ 33
6. अन्दर के उजाले और सिर्फ सवाल (रोहिणी अग्रवाल), हंस दिसम्बर 2002
7. बाजार - जया जादवानी, पृष्ठ 92
8. कैरियर - रघुनन्दन त्रिवेदी, हंस अगस्त-सितम्बर 1997, पृष्ठ 79

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

साठोत्तरी कहानियों में व्यक्त हिन्दी भाषा का सामासिक, सांस्कृतिक सरोकार

डॉ. विजयलक्ष्मी पोद्दार *

प्रस्तावना – संस्कृति के चार अध्याय में दिनकर जी ने भारत की जिस सामासिक संस्कृति की चर्चा की है उसका निखरा हुआ रूप हिंदी में परिलक्षित होता है। भारत जैसे विशाल और विविधता पूर्ण देश में विभिन्न संस्कृतियों को एक रूप में पिरोने का कार्य हिन्दी भाषा ने किया है। प्राचीन भारतीय आर्य भाषा की परम्परा से लेकर मध्य भारतीय आर्य भाषाओं तक की भाषिक संपदा को समेटने का कार्य हिन्दी ने किया है। वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत, प्राकृत, पालि, अपभ्रंश एवं विभिन्न लोक भाषाओं की उपलब्धियों और परम्परा का आदर्श समन्वय हिन्दी प्रस्तुत करती है। यह भाषा पूरे देश का प्रतिनिधित्व और नेतृत्व करने वाली है। नवीन समन्वयात्मक प्रयोग करने हेतु इसकी प्राणभूमि सदा अनुकूल ही दिखाई देती है। यही कारण रहा है कि भारत इतनी विभिन्न के बाद भी संपूर्ण मौलिकता के साथ गूंथा हुआ है। यही सामासिक संस्कृति हिन्दी की दुर्लभ संपत्ति है। अन्य भाषाओं की तरह इसका क्षेत्र सीमित नहीं बल्कि एक विशाल पटल पर समूचे आर्यवर्त की भाषा हिन्दी है। इसका संबंध किसी धर्म, जाति, संप्रदाय विशेष से नहीं। उसने देश के सभी धर्मों को वाणी दी है। उसने भारत की सुदीर्घ चिंतन पद्धतियों का सुन्दर समन्वय किया है। समन्वय की इस सरिता में देशी और विदेशी भाषाओं की शब्द संपदा का समाहार भी हिन्दी में दिखाई देता है। भाषा की सजीवता एवम् उदारता के कारण आज अनेक बोलियों और भाषाओं के शब्द हिन्दी में समा गए है। राष्ट्रीय एकता के संगठन में देश की अन्य भाषाओं का योगदान भी ईट के समान है और हिन्दी इन ईंटों को जोड़ने के लिए सीमेंट का काम करती है।

वर्तमान परिपेक्ष्य में देखा जाए तो हमारे नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और सृजनात्मक शक्ति को पुष्ट हिन्दी भाषा ही कर रही है। हिन्दी ने भारती में ही नहीं विश्व के बड़े मंचों से भी अपनी गरीमा को उद्घाटित किया है। राष्ट्रीय मंच पर हिन्दी की स्थिति सुदृढ़ हो ये हमारे प्रयोग पर निर्भर करती है। एक ओर हिन्दी का विस्तार देश प्रेम, राष्ट्रप्रेम है तो वहीं दूसरी ओर वैश्विक परिदृश्य में हिन्दी की प्रयोजनीयता को लेकर कार्य किया जा रहा है। हिन्दी की वर्तमान स्थिति हमें निराश करती है। परन्तु देश की समसामयिक स्थिति और सांस्कृतिक स्वरूप को ध्यान में रखते हुए उन तमाम प्रयासों को करना होगा जो हिन्दी की गरिमा को बढ़ते है।

उच्च शिक्षा में हिन्दी के स्वरूप को सुधारने की आवश्यकता पर बल दिया जाना चाहिए। जब हम युवा पीढ़ी को नैतिकता व सामाजिक सांस्कृतिक मूल्यों से जोड़ने की बात स्वीकार करते है तब हमारी पहल हिन्दी के स्वरूप में होते बदलाव की चिंता को व्यक्त करते है या तो हिन्दी का प्रचार-प्रसार फिल्म मीडिया के माध्यम से हो रहा है पर चिंता उस पीढ़ी को लेकर है जो तकनीकी तौर पर हिन्दी के साथ खिलवाड़ कर रही है।

यदि देश की सामासिक सांस्कृति परम्पराओं को सहेजना है, यदि हमें नैतिक मूल्यों से जुड़कर रहना है। हमारी प्राचीन व प्रभावशाली ज्ञान राशि को संचित रखनपा है। उसका लाभ आने वाली पीढ़ी को देना हे तो हमें उच्च शिक्षा में हिन्दी की गुणवत्ता और भारतीय भाषाओं की चुनौतियों को स्वीकार करते हुए उनके उत्थान हेतु प्रयास करते होंगो जनमानस के सहयोग के बिना हिन्दी का उसका अमिष्ट प्राप्त नहीं हो रहा है।

युगों से प्राप्त संचित ज्ञान का प्रयोग भी हम विभिन्न भाषाओं में होने से एकमत नहीं हो पा रहे। यह कार्य केवल और केवल हिन्दी भाषा ही कर सकती है जो प्रमाणिकता के संबंध में एकमत कर सके। हिन्दी महान अर्जनशील भाषा है। नई तकनीकी, नया स्वरूप, नए विषयवस्तु में नए प्रयोग करने की अद्‌भुत क्षमता है।

साठोत्तरी कहानियों ने हिन्दी में शिल्प और कला की दृष्टि से नये आयाम उपस्थित किए है। शब्दों की बाजीगरी के स्थान पर संवेदनशील भाषा का प्रयोग, सूक्ष्मतर संवेदनाओं को कहानी के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास इस दशक में किया गया है। साठोत्तरी कहानीकार भाषा के मूड और मूल्य को पहचानकर अपनी रचना को समाज के समक्ष लाया। कहानियों को सामाजिक एवं सांस्कृतिक धरातल पर रखते हुए संबंधों की यथार्थ बोध को व्यक्त किया है। आम आदमी की कुंठा, निराशा और अजनबीपन को भाषा में पिरोकर समाज के सामने प्रस्तुत किया है। इसलिए कहानी आम आदमी की तकलीफों का दस्तावेज दिखाई दी है और वह आम जनता के पठन का केन्द्र भी बनी इसलिए हिन्दी भाषा 60 के दशक के बाद जनता में अधिक प्रचलन में आने लगी।

किसी देश की पहचान उसकी भाषा से, और देश का स्वतंत्र व्यक्तित्व सिर्फ उसकी भाषा से प्रक्षेपित हो सकता है। उच्च शिक्षा में हिन्दी के प्रसार से युवाओं में हिन्दी के प्रति सम्माननीय दृष्टि का उदय होगा। उनकी वैचारिक स्थिति पुष्ट होगी। आत्मबल और आत्मविश्वास बढ़ेगा तभी देश का युवा अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल होगा। हिन्दी की संस्कृति से जुड़ने हेतु हम सभी को संकल्पबद्ध होकर छोटे-छोटे प्रयास करने होंगे। पुस्तकों व साहित्य को स्थान देना होगा, समाचार पत्र-पत्रिकाओं की संख्या बढ़ानी होगी। इश्तेहार और शहर गांवों में नामपट्टियां हिन्दी में लिखना होगा। सरकारी व शासकीय कार्यालयों में हिन्दी को सम्मान देना होगा। देश की प्रबुद्ध जनता व प्रभावशाली लोगों को हिन्दी को मन से स्वीकार करना होगा। महाविद्यालय, विश्वविद्यालय स्तर पर हिन्दी को अनिवार्य करना होगा। सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि देश में उच्च शिक्षा विज्ञान और तकनीकी विषयों में

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) एम.के.एच.एस. गुजराती गर्ल्स कॉलेज, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अंग्रेजी में ही दी जाती है। मेरी धारणा यह है कि स्नातक एवम् स्नातकोत्तर कक्षाओं तक छात्र परिपक्व मानसिकता वाला चिंतनशील हो जाता है वह लगभग 200 से 250 पुस्तकों का सहयोग प्राप्त कर अपने ज्ञान को विस्तार देता है तो फिर उन्हें अपनी भाषा को सिखाने पढ़ाने से परहेज क्यों ? ज्ञान की सभी सीमाओं को राष्ट्रीय विस्तार देने के लिए एक भाषाधार की आवश्कयता आज भी बनी हुई है। शिक्षा की एकरूपता देश में केवल हिन्दी ही ला सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

दक्षिणी राजस्थान कृषि गहनता का वितरण (2010-11 से 2012-13) - एक भौगोलिक अध्ययन

रोहित लौहार*

प्रस्तावना – कृषि भूमि मानव का आधारभूत संसाधन है। भारत प्राचीनकाल से ही कृषि प्रधान देश रहा है। कृषि ग्रामीण जीवन की आधार शिला है तथा अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। कृषि राष्ट्रीय आय का मुख्य स्त्रोत रही है। वर्ष 1960-61 में 51.3 प्रतिशत 1665-66 में 54.5, 1989-90 में 39.9 प्रतिशत तथा 2007-08 में 19.8 प्रतिशत राष्ट्रीय आय कृषि से प्राप्त हुई है।

भारत के सकल घेरलू उत्पाद में कृषि का योगदान 17.8 प्रतिशत था है वहीं भारत के विदेशी व्यापार में कुल निर्यात में 76006 करोड़ रुपये था, जो कुल निर्यात का 12.2 प्रतिशत था। भारत में कृषि भूमि क्षेत्रफल अन्य देशों के मुकाबले उच्चतम स्तर पर है। जहां भारत में कुल भूमि के 47.8 प्रतिशत भूभाग पर कृषि कार्य होता है। वहीं विश्व के अन्य देशों जैस- रूस में 10.8, संयुक्त राज्य अमेरिका में 16.3 प्रतिशत, कनाडा 4.3, जापान 14.9, चीन 11.8 व म्यांमार में 24 प्रतिशत भूमि कृषि के अन्तर्गत है।

भारत की तरह राजस्थान राज्य में भी कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। राज्य में 222.1 लाख सकल कृषि क्षेत्रफल है जो कि रिपोंटिंग क्षेत्र का 54.8 प्रतिशत भाग कृषि व सहायक क्रियाओं का है। वहीं कुल कृषि क्षेत्रफल में राज्य का प्रथम उत्तर प्रदेश व द्वितीय महाराष्ट्र के बाद तृतीय स्थान आता है। दक्षिणी राजस्थान के सन्दर्भ में अध्ययन किया जाये तो इस भाग में 2001 के अनुसार उदयपुर, चित्तौड़गढ़, राजसमंद, डुंगरपुर, बाँसवाड़ा में कुल क्षेत्रफल 36942 वर्ग किमी है, जो राज्य के कुल क्षेत्रफल का 10.71 प्रतिशत भाग है। इस क्षेत्र की जनसंख्या 8957324 है। यह राज्य की जनसंख्या का 7.6 प्रतिशत है।

दक्षिणी राजस्थान में प्रति काश्तकार भूमि 1971 में 0.85 हेक्टर थी. जो 1991 में 0.71 हैक्टर व 2001 में घटकर 0.65 हेक्टर तक पंहुच गयी है। यह आंकड़े स्पष्ट कर रहे हैं कि निरन्तर उपलब्ध कृषि भूमि कम होती जा रही है। जनसंख्या का आकार व खाद्यान्न आवश्यकता बढ़ती जा रही है।

यदि अध्ययन क्षेत्र में कुल सिंचित क्षेत्र का विश्लेषण किया जाये तो राज्य में 1966 में कुल सिंचित क्षेत्र 20 लाख 80 हजार हैक्टर था, जबकि अध्ययन क्षेत्र में 2 लाख 30 हजार हैक्टर भाग सिंचित था जो कुल राज्य के सिंचित क्षेत्र का 11 प्रतिशत था। वर्ष 2008 में राज्य में जहां कुल सिंचित क्षेत्र 62 लाख 45 हजार हैक्टर पंहुच गया जबकि अध्ययन क्षेत्र में यह बढ़कर मात्र 3 लाख 76 हजार हैक्टर था जो राज्य के कुल सिंचित क्षेत्र का मात्र 6 प्रतिशत था।

राज्य का दक्षिणी भाग अपना विशिष्ठ स्थान है। क्योंकि यह क्षेत्र प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है व रोजगार व उद्योग धन्धे कृषि से जुड़े हुए हैं। कृषि विकास की नई नीति बनाने व वर्तमान कृषि उत्पादकता का मूल्यांकन करने की आवश्यकता है। यदि समय रहते इन स्थितियों का समाधान नहीं किया गया तो राजस्थान राज्य में भी पंजाब, छत्तीसगढ़ व छत्तीसगढ़ व पश्चिमी बंगाल की भांति कृषि के आर्थिक रूप से फायदेमंद न होने व कर्ज के भार में कृषक आत्महत्या का रास्ता अपनाने लगेंगे। देश के कृषि राज्यमंत्री ने संसद में बयान दिया है कि 1995 से 2011 के बीच 290470 किसानों ने आत्महत्या की है। यह संख्या औसतन 1700 प्रतिवर्ष है। देश में हर 3 घण्टे में कहीं न कहीं कोई किसान आत्महत्या कर रहा है।

प्रस्तुत शोध कार्य दक्षिणी राजस्थान के फसल प्रतिरूप को स्पष्ट करेगा वहीं क्षेत्र विशेष का कृषि भूमि उपयोग व फसल प्रारूप किस प्रकार का है? व अध्ययन क्षेत्र में कौन-कौन से कारक प्रतिरूप को प्रभावित कर रहे हैं, उनका विश्लेषण किया जायगा। प्रमुख फसलों की उत्पादकता व संयुक्तत फसल उत्पादन के स्तर के स्तर के साथ गैर जनजाति तहसीलों व जनजाति तहसीलों के मध्य तुलनात्मक अध्ययन किया जायेगा। जिसमें कृषि उत्पादन में वृद्धि कर कृषि का विकास किया जा सके। फसल उत्पादकता स्तर पर अध्ययन के फलस्वरूप दक्षिणी राजस्थान के उन क्षेत्रों का ज्ञान होगा जो आसपास के क्षेत्रों की तुलना में कम उत्पादन कर रहे हैं। इससे कम मध्यम व उच्च उत्पादकता की कोटिया निर्धारित की जायेगी है। जिससे प्रादेशिक असमानताओं को दूर करने एवं योजनाओं के निर्माण में सहायता मिलेगी।

उद्देश्य :

1. दक्षिणी राजस्थान की कृषि गहनता का तहसील स्तर पर निर्धारण करना।
2. दक्षिणी राजस्थान के कृषि गहनता के पिछड़ी तहसीलों की पहचान कर निवारण के उपाय खोजना।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत शोध में अध्ययन क्षेत्र राजस्थान का दक्षिणी भाग है। जिसमें उदयपुर, चित्तौड़गढ़ राजसमंद, डुंगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़ जिले शामिल किये गये हैं। यह क्षेत्र 230 1‘ 11 से 260 1‘ 15 उत्तरी अक्षांश व 730 1‘ 10 से 750 43‘30 पूर्वी देशान्तर तक विस्तृत है। इस क्षेत्र में 47397 वर्ग किमी. क्षेत्र तथा 38 नगर व 10038108 व्यक्ति निवास करते हैं। अध्ययन क्षेत्र की पूर्वी सीमा पर मध्यप्रदेश राज्य स्थित है। वहीं पश्चिमी सीमा पर गुजरात राज्य स्थित है तो उत्तरी भाग में पाली, अजमेर, भीलवाड़ा सीमा बनाते हैं। क्षेत्र के दक्षिणी भाग में गुजरात व मध्यप्रदेश संयुक्त रूप से सीमा निर्धारित करते हैं। अध्ययन क्षेत्र में जहां अरावली पर्वतमाला का दक्षिणी भाग स्थित है जहां उच्चतम शिखर 'गुरुशिखर' स्थित है वहीं बासवाड़ा व डुंगरपुर में छप्पन का मैदान का विस्तार मिलता है। भोराठ का पठार व लसाड़िया का पठार भी इस क्षेत्र के उत्तरी भाग में अवस्थित है। तो बनास, साबरमती, माही जैसी प्रमुख नदियां इस भाग में बहती है। कृषि

* सहायक आचार्य, शिवनारायण चौबीसा महाविद्यालय, सीमलवाड़ा, डूंगरपुर (राज.) भारत

उपजों के रूप में मझा, मुगफली, अफीम चावल, गेहू का उत्पादन होता है।

स्पष्ट है कि शोध का अध्ययन क्षेत्र विविधताओं से युक्त है। व राजस्थान का दक्षिणी भाग में विस्तृत एवं महत्वपूर्ण भौगोलिक क्षेत्र है। दक्षिणी राजस्थान में मुख्यत: छ: जिलों को सम्मिलित किया गया है। उदयपुर, डुंगरपुर, चित्तौडगढ़, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़, राजसमंद भोराठ का पठार उदयपुर के उत्तर पश्चिम में कुंभलगढ़ व गोगुन्दा में फैला हुआ है तो दक्षिण में माही नदी के अपवाह तंत्र से बांसवाड़ा, डुंगरपुर, प्रतापगढ़ जिला लाभान्वित हो रहे हैं। अध्ययन क्षेत्र में 6 जिलों की 46 तहसीलें शामिल हैं।

जिला	तहसीलें
उदयपुर	मावली, गोगुन्दा, झाडोल, गिर्वा, वल्लभनगर, लसाडिया, सलुम्बर, सराड़ा, खेरवाडा, कोटड़ा, ऋषभदेव
राजसमंद	भीम, आमेट, कुम्भलगढ़, राजसमंद, रेलमगरा, नाथद्वारा, देवगढ
बांसवाड़ा	घाटोल, बांसवाड़ा, बागीदौरा, कुशलगढ़, गढ़ी।
डूंगरपुर	डुंगरपुर, आसपुर, सागवाड़ा, सीमलवाड़ा।
चित्तौड़गढ़	निम्बाहेड़ा, चित्तौड़गढ़, भदेसर, गंगरार, बड़ीसादड़ी, डूंगला, बेगू, कपासन, राशमी, रावतभाता।
प्रतापगढ़	प्रतापगढ़ छोटी सादड़ी, धरियावद, अरनोद, पीपलखूंट, प्रतापगढ़

विधि तंत्र आँकड़े – प्रस्तुत शोध में 3 वर्ष 2010-13 के आँकड़ों के औसत को आधार मानकर कृषि गहनता ज्ञात की गई है जिसमें निम्न सूत्र का प्रयोग किया गया है।

कृषि गहनता = कुल फसल क्षेत्र/शुद्ध बोया गया क्षेत्र x 100

प्रस्तुत शोध में द्वितीयक आँकड़ों का प्रयोग किया गया है जो निम्नलिखित स्रोतों से प्राप्त हुए है

1. जिला सांख्यिकी रूपरेखा।
2. भू-अभिलेख कार्यालय।
3. कृषि विभाग की सारणियों से।

कृषि गहनता – कृषि गहनता से आशय उस फसल क्षेत्र से है, जिस पर वर्ष में एक फसल के अतिरिक्त अन्य कई फसलें उगायी जाती है। शुद्ध कृषि क्षेत्र (Net Area Shown) तथा दुहरी या अनेक फसल क्षेत्र को मिलाकर कुल फसल क्षेत्र (Total Cropped Area) का सम्बोधन होता है। किसी भी क्षेत्र में शुद्ध बोया गया क्षेत्र की अपेक्षा कुल फसल क्षेत्र का अधिक होना, कृषि गहनता की मात्रा को प्रदर्शित करता है। कृषि गहनता वह सामयिक बिन्दु है, जहाँ भूमि, श्रम, पूंजी तथा प्रबन्ध का सम्मिश्रण सर्वाधिक लाभप्रद सिद्ध होता है। क्योंकि भूमि एक स्थायी कारक है, मानवीय श्रम की अधिकता है। तथा बेरोजगारी भी अधिक है। कृषि जीवन निर्वाह का एक माध्यम मात्र है फार्म आकार छोटा है और कृषि उद्यम का रूप धारण नहीं कर पायी है। वास्तव में यहाँ कृषि गहनता सिंचाई साधन, बीज, खाद तथा मशीनों की उपलब्धि पर आधारित रहती है। यही कारण है कि भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में बड़े फार्मों की अपेक्षा छोटे आकार के फार्मों में कृषि गहनता अधिक होती है क्योंकि कृषक, पारिवारिक श्रम तथा अन्य लागतों का भरपूर प्रयोग करता है। इस प्रकार, कृषि गहनता संकल्पना का प्रादुर्भाव एक ही खेत में एक ही वर्ष में एक से अनेक फसलों की उत्पादन मात्रा से होता है। कृषि गहनता की गणना निम्न सूत्र के आधार पर की जाती है।

कृषि गहनता = कुल फसल क्षेत्र/शुद्ध बोया गया क्षेत्र x 100

दक्षिणी राजस्थान में कृषि गहनता का वितरण (2010-11 से 2012-13)

कृषि गहनता (प्रतिशत में)	श्रेणी	तहसीलों की संख्या
180.9-166.61	उच्चतम	7
152.32-166.61	उच्च	12
138.3-152.32	मध्यम	14
123.74-138.03	न्यूनतम	10
123.74-109.45	अतिन्यूनतम	3
	कुल	46 कुल तहसीलें

दक्षिणी राजस्थान में कुल 46 तहसीलें है, जिनमें सर्वाधिक कृषि गहनता छोटी सादड़ी 180.66 प्रतिशत रही है, जबकि न्यूनतम कृषि गहनता छोटी. सरवन तहसील 109.45 रही है। सारणी 1 द्वारा स्पष्ट है कि दक्षिणी राजस्थान में उच्चतम स्तर 180.9166.61 वर्ग के अन्तर्गत 7 तहसीलें क्रमश: छोटी सरवन निम्बाहेडा, चित्तौडगढ़, बेगू, बड़ी सादड़ी, भदेसर, आसपूर शामिल है। तो उच्च कृषि गहनता वर्ग में जो 152.32 से 166.61 तक है उसमें दक्षिणी राजस्थान की 12 तहसीले क्रमश: घाटोल, गढ़ी, देवगढ़, पीपलखूट रावतभाटा, सागवाड़ा, प्रतापगढ़, राजसमंद, गंगरार, अरनोद, कपासन, सलूम्बर, धरियावद है ।

दक्षिणी राजस्थान में फसल गहनता के अन्तर्गत मध्यम श्रेणी में 138.31 से 152.32 के वर्ग में 14 तहसीलें शामिल होती है। जिसमें प्रमुख है- मावली, गोगुन्दा, रेलमगरा, नाथद्वारा, वल्लभनगर, भीम बाँसवाड़ा, डूंगला कुम्भलगढ़, बागीदौरा सराड़ा, सज्जनगढ़ एवं बड़गाँव है। वहीं निम्न गहनता वर्ग के अन्तर्गत 10 तहसीले झाडोल, लसाडिया, सीमलवाड़ा, डूंगरपुर, राशमी, गिर्वा, कुशलगढ़, आमेट, ऋषभदेव शामिल की जाती है।

अन्तिम अतिनिम्नवर्ग में मात्र 3 तहसीलें खेरवाड़ा, कोटड़ा, व छोटी सरवण है।

यदि हम मोटे रूप में कृषि गहनता के वितरण को जिला स्तर पर अध्ययन करें तो पाते है कि चित्तौड़गढ़, बाँसवाड़ा व प्रतापगढ़ की तहसीलें सर्वाधिक उच्चतम व उच्च गहनता वर्ग में स्थान बना रही है जबकि उदयपुर, डूंगरपुर जिले की तहसीले निम्न से अति निम्न वर्ग में आ रही है।

भौगोलिक दृष्टि से कृषिगहनता वितरण का अध्ययन करने पर स्पष्ट हो जाता है कि दक्षिणी राजस्थान का उत्तरीपूर्वी भाग में गहनता अधिक है क्योंकि वहाँ सिंचाई के साधन, बीज, उर्वरक तथा मशीनों की उपलब्धता तथा यदि दक्षिणी राजस्थान की औसत गहनता देखें तो हम पाते है कि यह 153.55 प्रतिशत है। सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में केवल 21 तहसीलें ही अध्ययन क्षेत्र के औसत से अधिक गहनता रखती है, जबकि शेष 25 तहसीलें औसत गहनता से भी कम प्रतिशत रखती है जो एक शोचनीय प्रश्न है।

उपाय :

1. सिंचाई की उपलब्धता में वृद्धि की जाये।
2. उत्ताम बीज, मशीनीकरण, यन्त्रों का उपयोग, ऊवरकों को उपयोग बढ़ाया जाये।
3. वित्तीय सहायता व अनुदानों में वृद्धि।
4. शोध को बढ़ावा।
5. कृषकों को शिक्षित किया जाये।
6. कृषि योग्य भूमि में वृद्धि करने हेतु अन्य भूमि को भी कृषि योग्य बनाने के प्रयास किये जाये।

निष्कर्ष – उपरोक्त निष्कर्ष से स्पष्ट है कि दक्षिणी राजस्थान में कृषि गहनता का वितरण बिखरा हुआ है उस पर सिंचाई, उर्वरक, कृषकों की शिक्षा का

स्तर, वर्षा की अनिश्चिता सहित, आर्थिक, सामाजिक कारक प्रभावित कर रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'कृषि भूगोल' – माजिद हुसैन।
2. 'कृषि भूगोल' – अलका गौतम।
3. 'कृषि भूगोल' – बी.एल. शर्मा व पलक भारद्धाज।
4. 'कृषि भूगोल' – आर.सी. तिवारी।
5. 'कृषि भूगोल' – बृज भूषण सिंह।

****

प्राथमिक विद्यालय में कार्यरत् प्रशिक्षित अध्यापकों की शिक्षा अभिक्षमता (अमरोहा जनपद के विशेष संदर्भ में)

डॉ. अनुराग यादव* भावना वर्मा **

प्रस्तावना – शिक्षा मानव जीवन का आधार है। मानव का विकास और उन्ययन शिक्षा पर निर्भर है। शिक्षा व्यक्तित्व का निर्माण भी करती है और श्रृंगार भी करती है। जन्म के समय बालक पशुवत आचरण करता है, उस समय वह अपनी मूल प्रवृत्तियों से प्रेरित होकर कार्य करता है, शिक्षा उसकी इन प्रवृत्तियों का उचित मार्गदर्शन करके उसे परिपक्वता प्रदान करती है, उसके व्यवहार को, उसके आचरण को, उसके क्रियाकलापों को उचित और समाज उपयोगी बनाती है। शिक्षा उसमें रचनात्मक शक्ति का विकास करती है। शिक्षा के द्वारा मानव केवल अपने वातावरण से अनुकूलन करने में ही समर्थ नहीं होता, वरन् वातावरण और प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का भी प्रयत्न करता है।

शिक्षा मनुष्य का मौलिक अधिकार है, किसी भी राष्ट्र की सम्पन्नता एवं प्रगति उसकी प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता व प्रसार पर निर्भर करती है। योग्य एवं प्रभावशाली अध्यापकों के द्वारा ही प्राथमिक शिक्षा अपने उद्देश्यों में सफल हो सकती है तथा राष्ट्र को विकास के पथ पर अग्रसर कर सकती है। शिक्षा एक सतत् चलने वाली प्रक्रिया है जो प्राचीन काल से निर्मल धारा की तरह समाज एवं व्यक्ति के विकास हेतु प्रवाहमान है। शिक्षा व्यक्ति के जीवन को अवलोकित करती हुई उसे स्वस्थ आचरण के लिए तैयार करते हुए परिस्थितियों से समायोजन का अवसर प्रदान करती है।

प्राथमिक शिक्षा – प्रत्येक राष्ट्र के जीवन में प्राथमिक शिक्षा-प्रथम प्राथमिकता की वस्तु है। यह प्रथम सीढ़ी है जिसे पार करके ही राष्ट्र अपने अभिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति कर सकता है। यह शिक्षा जीवन का अभिन्न अंग है। प्राथमिक शिक्षा राष्ट्रीय विचारधारा एवं चारित्रिक निर्माण की कुंजी है। यह मानव मात्र के विकास का मार्ग प्रशस्त करती है। वैसे भी यह निर्विवाद तथ्य है कि सभी व्यक्तियों की शिक्षा में ही राष्ट्रीय प्रगति निहित है। प्राथमिक शिक्षा का पतन राष्ट्रीय पतन का संकेतक है। अत: प्रत्येक राष्ट्र के उत्थान के लिए इस पर ध्यान देना अनिवार्य है। स्वामी विवेकानन्द का उद्बोधन इस सन्दर्भ में अत्याधिक प्रासंगिक प्रतीत होता है- 'मेरे विचार से जनसाधारण की अवहेलना महान राष्ट्रीय पाप है और हमारे पतन के कारणों में से एक है। एक राजनीकि उस समय तक विफल रहेगी, जब तक कि भारत में जनसाधारण को एक बार फिर भली प्रकार शिक्षित नहीं कर लिया जायेगा।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति, समाज, और राष्ट्र के निर्माण में प्राथमिक शिक्षा का आधारभूत स्थान है। प्राथमिक शिक्षा की नींव पर व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की प्रगति का भवन तथा बहुमंजिली इमारतों एवं अट्टालिकाओं के रूप में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं वैज्ञानिक प्रगति निर्भर करती है। इस सन्दर्भ में स्वामी विवेकानन्द के विचार है- 'राजनीति उस समय तक विफल रहेगी जब तक सभी भारतीयों को शिक्षित नहीं कर लिया जाता है।'

अध्यापक और शिक्षा – अध्यापक शिक्षा प्रक्रिया एक महत्वपूर्ण अंग है। संकुचित अर्थ में एक निश्चित् स्थान पर पूर्व निर्धारित शिक्षण विधियों द्वारा, पूर्व निर्धारित पाठ्यक्रम का ज्ञान देने वाले व्यक्ति विशेष को अध्यापक कहा जाता है। लेकिन व्यापक अर्थ में माता-पिता, भाई-बहन, मित्र और सम्बन्धी, विद्यालय में पढ़ाने वाले अध्यापक, समाज के अन्य व्यक्ति और वे समस्त जीव और वस्तुएं जिनसे बालक ज्ञान प्राप्त करता है अध्यापक कहलाते हैं।

प्राचीन काल में अध्यापक शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण अंग था। वह समस्त शिक्षा का केन्द्र बिन्दु था। उस समय लोगों का विचार था कि अध्यापक के बिना शिक्षण प्रक्रिया नहीं चल सकती। उस समय माना जाता था कि योग्य और विद्वान अध्यापक के संरक्षण में ही बालक योग्य और ज्ञानी बन सकता है। प्राचीन भारत में अध्यापक को ईश्वर का रूप समझा जाता था।

शोध अध्ययन का शीर्षक – प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् प्रशिक्षित अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता (अमरोहा जनपद के विशेष सन्दर्भ में)

अध्ययन के उद्देश्य :

1. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत बी.टी.सी./डी.एल.एड., विशिष्ट बी.टी.सी., उर्दू बी.टी.सी., बी.एल.एड. एवं डिप्लोमा इन एलीमेन्ट्री एजुकेशन प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता का अध्ययन करना।
2. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् अल्प एवं दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की शिक्षा अभिक्षमता का अध्ययन।
3. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण अभिक्षमता का लैंगिक परिपेक्ष्य में अध्ययन करना।
4. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत, ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता का अध्ययन करना।

परिकल्पनायें :

1. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत बी.टी.सी./डी.एल.एड, विशिष्ट बी.टी.सी एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् अल्प एवं दीर्घ अनुभवी अध्यापकों

* असि. प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, श्री वैंक्टेश्वर विश्वविद्यालय, रजबपुर, गजरौला, जनपद अमरोहा (उ.प्र.) भारत
** शोध छात्रा, शिक्षाशास्त्र, श्री वैंक्टेश्वर विश्वविद्यालय, रजबपुर, गजरौला, जनपद अमरोहा (उ.प्र.) भारत

की शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

3. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण अभिक्षमता में लैंगिक दृष्टि से सार्थक अन्तर नहीं है।
4. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण – सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण अत्यन्त आवश्यक है और यह महत्वपूर्ण कार्य है सम्बन्धित साहित्य का ज्ञान प्राप्त किये बिना कोई अध्ययन उपयुक्त और महत्वपूर्ण नहीं बन सकता। साहित्य से सम्बन्धित श्रेष्ठ परिकल्पनाओं का निर्माण भी तभी सम्भव है जब सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन कर लिया जाये। समस्या से सम्बन्धित समस्त प्रकाशित तथा अप्रकाशित सामग्री का अध्ययन करने के पश्चात् ऐसी आधारशिला मिल जाती है, जो दूसरे अध्ययन की पुनरावृत्ति को रोकने में सहायता करती है। सम्बन्धित साहित्य का मुख्य उद्देश्य परिकल्पना का निर्माण करने में अन्त:दृष्टि प्राप्त करना, और प्रविधियों के चुनाव में सहायता करना। सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन इसलिये भी आवश्यक है ताकि यह जाना जा सके कि ऐसा अध्ययन पहले नहीं किया गया है तथा यह जाना जा सके कि यह अध्ययन ऐसे अन्य अध्ययनों से किस प्रकार भिन्न या फिर उनमें क्या कमी रह गयी है जिसकी यह अध्ययन पूर्ति कर सके। शोध अध्ययनों का संक्षित विवरण निम्न प्रकार है–

सरिता (1987) ने 'शिक्षकों की अध्यापन प्रभावशीलता का उनकी अभिक्षमताओं के विभिन्न आयामों के संदर्भ में अध्ययन' में निम्न निष्कर्ष निकाले।

1. प्रभावी और अप्रभावी शिक्षकों की अभिक्षमताओं की सहयोगी, अभिरूचि, दयालुता, विस्तृत ज्ञान, उचित व्यवहार, ज्ञान की गहनता, उत्साह में सार्थक अन्तर पाया गया।
2. शहरी क्षेत्र के प्रभावी शिक्षकों और प्रभावी शिक्षकों की अभिमताओं में दयालुता, विस्तृत ज्ञान, उचित व्यववहार, नैतिक चरित्र उत्साह में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।
3. ग्रामीण क्षेत्र के प्रभावी शिक्षकों और अप्रभावी शिक्षकों की अभिक्षमताओं में सहयोग, अभिरूचि, विस्तृत ज्ञान, उचित व्यवहार, ज्ञान की गहनता, उत्साह में सार्थक अन्तर पाया गया।
4. प्रभावी स्त्री शिक्षकों और अप्रभावी शिक्षकों की अक्षमताओं में धैर्य, नैतिक चरित्र, अनुशासन, उन्मत्त में सार्थक अन्तर पाया गया।

साहू, पी.के. एवं गुप्ता, रमा (2010) भारतीय आधुनिक शिक्षा ने 'शिक्षामित्रों की शिक्षा प्रभावशीलता और प्रशिक्षण आवश्यकताओं का अध्ययन' किया। इस अध्ययन के उद्देश्य निम्न थे–

1. प्राथमिक स्तर पर परिषदीय विद्यालयों में नियुक्त बी.टी.सी./ डी.एल.एड. प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता व शिक्षामित्रों की शिक्षण प्रभावशीलता से अधिक है।
2. प्राथमिक स्तर पर परिषदीय विद्यालयों में नियुक्त महिला शिक्षामित्रों की शिक्षण प्रभावशीलता पुरूष शिक्षामित्रों की प्रभावशीलता से अधिक है।

यादव, भानु प्रताप (2010–11) प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् प्रशिक्षित मूल जनपदीय एवं गैर जनपदीय अध्यापकों के समायोजन का अध्ययन में निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए–

1. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत प्रशिक्षित मूल जनपदीय अध्यापकों एवं गैरजनपदीय अध्यापकों में समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् मूल जनपदीय प्रशिक्षित अध्यापकों एवं गैर जनपदीय प्रशिक्षित महिला अध्यापकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं है।

अनुसंधान की विधि – प्रस्तुत शोध प्रकृति एवं उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए वर्णानात्मक अनुसंधान विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या – उत्तर प्रदेश के जनपद अमरोहा में सभी विकासखण्डों के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् कुल प्रशिक्षित अध्यापकों की संख्या इस शोध की जनसंख्या है।

न्यादर्श – जनसंख्या का आकार बड़ा होने पर उसे सम्पूर्ण रूप में अध्ययन कर पाना कठिन होता है, इसलिए शोध की प्रकृति के अनुरूप न्यादर्श के चयन हेतु स्त्रीकृत सम्सम्भावित प्रतिचयन विधि का प्रयोग कर एक छोटे समूह को लिया गया है। जो सम्पूर्ण जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करेगा। न्यादर्श के रूप में 300 प्रशिक्षित अध्यापकों को लिया गया है। इनमें 100 बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापक, 100 विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापक तथा 100 उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापक व अध्यापिकाएं हैं।

आंकड़ों का विश्लेषण, व्याख्या एवं निष्कर्ष – आंकड़ों के व्यवस्थापन का महत्वपूर्ण अंग उनका विश्लेषण व्याख्या करना हैं शोधार्थिनी की एक प्रमुख जिम्मेदारी संसाधित आंकड़ों से शोध संबंधी परिकल्पनाओं की तर्कसंगति के बारे में सम्भावनाओं को पता लगाना या तर्क संगत निष्कर्ष निकालना है। अत: यहां पर प्रदत्तों का विश्लेषण एवं अर्थापन किया गया है तथा परिणामों को क्रमबद्ध रूप में संक्षेपीकरण किया गया है।

प्रत्येक सामाजिक सर्वेक्षण अथवा शोध का आधार वैज्ञानिक पद्धति व प्रविधियों द्वारा संकलित तथ्य है। परन्तु तथ्यों का संकलन स्वयं कुछ नहीं कह सकता जब तक कि उनका वर्गीकरण व सारणीयन न किया जाये एवं आधार पर तथ्यों का विश्लेषण व व्याख्या करके कुछ वैज्ञानिक उनके निष्कर्षों को न निकाला जाये।

इसके लिए आवश्यक है कि सम्पूर्ण सर्वेक्षण व शोध कार्य के निष्कर्षो तथा सुझावों को एक लिखित रूप दिया जाये जिससे कि वह विज्ञान की धरोहर बन सके। दूसरे वैज्ञानिक उसी विषय के सम्बन्ध में फिर से अनुसंधान कर उसके निष्कर्षों की पुन: परीक्षा कर सके तथा निष्कर्षों व सुझावों के आधार पर भावी योजनाओं की रूप रेखा तैयार कर सके। इन सब उद्देश्यों की पूर्ति हेतु शोधकर्ता ने अध्ययन सम्बन्धी निष्कर्षों को क्रमबद्ध तरीके से अंग्राक्रित बिन्दुओं में प्रस्तुत किया है।

प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत बी.टी.सी./डी.एल.एड., विशिष्ट बी.टी.सी. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता के **मध्य सार्थकता के संदर्भ में निष्कर्ष**

1– प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत बी.टी.सी/डी.एल.एड., विशिष्ट बी.टी.सी. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है। परिकल्पना अस्वीकृत होती है एवं निष्कर्ष निकलता है कि प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत बी.टी.सी./ डी.एल.एड., विशिष्ट बी.टी.सी. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है।

(A) प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

i. बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त

अध्यापकों की मानसिक (उपयुक्त शब्द , संख्या क्रम , ताकिक हल) सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

ii. बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की छात्रों के प्रति रवैया सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है ।

iii. बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की अनुकूलनशीलता सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

iv. बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की व्यवसायिक सूचना सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

v. बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की व्यवसाय में रूचि सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

(B) प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

i. बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की मानसिक (उपयुक्त शब्द, संख्या क्रम तार्किक हल) सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है। बी.टी.सी./डी.एल.एड. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की मानसिक (उपयुक्त शब्द, संख्या क्रम, तार्किक हल) सम्बन्धी अभिक्षमता उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों से अधिक पायी गयी ।

ii. बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की छात्रों के प्रति रवैया सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

iii. बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की अनुकूलनशीलता सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

iv. बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त व्यवसायिक सूचना सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

v. बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की व्यवसाय में रूचि सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

(C) प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत विशिष्ट बी.टी.सी./डी.एल.एड. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है।

विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता उर्दू बी.टी.सी. अध्यापकों से अधिक पायी गयी।

i. विशिष्ट बी.टी.सी. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की मानसिक (उपयुक्त शब्द, संख्या कम, तार्किक हल) सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है। विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की मानसिक उपयुक्त शब्द संख्या क्रम, तार्किक हल) सम्बन्धी अभिक्षमता उर्दू बी.टी.सी. अध्यापकों से अधिक पायी गयी।

ii. विशिष्ट बी.टी.सी. एवं उर्दू बी.टी.सी, प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की छात्रों के प्रति रवैया सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

iii. विशिष्ट बी.टी.सी. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की अनुकूलनशीलता सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है।

विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की अनुकूलनशीलता सम्बन्धी अभिक्षमता उर्दू बी.टी.सी. अध्यापकों से अधिक है।

iv. विशिष्ट बी.टी.सी. एवं उर्दू बी.टी.सी, प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की व्यवसायिक सूचना सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है।

विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की व्यवसायिक सूचना सम्बन्धी अभिक्षमता उर्दू बी.टी.सी. अध्यापकों से अधिक है।

v. विशिष्ट बी.टी.सी. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की व्यवसाय में रूचि सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है ।

विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की व्यवसाय में रूचि सम्बन्धी अभिक्षमता उर्दू बी.टी.सी. अध्यापकों से अधिक है ।

प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत अल्प एवं दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता के मध्य सार्थकता के संदर्भ में निष्कर्ष

2. प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत अल्प एवं दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है। यह परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है , एवं निष्कर्ष निकलता है कि

प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत अल्प एवं दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है । दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता अल्प अनुभवी अध्यापकों से अधिक है।

i. अल्प एवं दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की मानसिक (उपयुक्त शब्द , संख्या क्रम , तार्किक हल) सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है।

दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की मानसिक (उपयुक्त शब्द , संख्या क्रम , तार्किक हल) सम्बन्धी अभिक्षमता अल्प अनुभवी अध्यापकों से अधिक है।

ii. अल्प अनुभवी एवं दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की छात्रों के प्रति रवैया सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है।

दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की छात्रों के प्रति रवैया सम्बन्धी अभिक्षमता अल्प अनुभवी अध्यापकों से अधिक है।

iii. अल्प अनुभवी एवं दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की अनुकूलनशीलता सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है।

दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की अनुकूलनशीलता सम्बन्धी अभिक्षमता अल्प अनुभवी अध्यापकों से अधिक है। अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है ।

iv. अल्प अनुभवी एवं दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की व्यवसायिक सूचना सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है।

दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की व्यवसायिक सूचना सम्बन्धी अभिक्षमता अल्प अनुभवी अध्यापकों से अधिक है।

v. अल्प अनुभवी एवं दीर्घ अनुभवी अध्यपकों की व्यवसाय में रूचि सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है।

दीर्घ अनुभवी अध्यापकों की व्यवसाय में रूचि सम्बन्धी अभिक्षमता अल्प अनुभवी अध्यापकों से अधिक है।

(3) प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण अभिक्षमता के मध्य लैंगिक दृष्टि से सार्थकता के संदर्भ में निष्कर्ष निकलता है कि

प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण अभिक्षमता में लैंगिक दृष्टि से सार्थक अन्तर नहीं है। यह परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है और निष्कर्ष निकलता है कि

प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण अभिक्षमता में लैंगिक दृष्टि से सार्थक अन्तर है।

महिला अध्यापिकाओं की शिक्षण अभिक्षमता पुरुष अध्यापकों से अधिक है।

i. अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की मानसिक (उपयुक्त शब्द , संख्या

क्रम , तार्किक हल) सम्बन्धी अभिक्षमता में लैंगिक दृष्टि से सार्थक अन्तर है। महिला अध्यापिकाओं की मानसिक (उपयुक्त शब्द , संख्या क्रम , तार्किक हल) सम्बन्धी अभिक्षमता पुरुष अध्यापकों से अधिक है।

ii. अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की छात्रों के प्रति रवैया सम्बन्धी अभिक्षमता में लैंगिक दृष्टि से सार्थक अन्तर नहीं है।

iii. अध्यापक एवं अध्यापिकाओं को अनुकूलनशीलता सम्बन्धी शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

iv. अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की व्यवसायिक सूचना सम्बन्धी अभिक्षमता में लैंगिक दृष्टि से सार्थक अन्तर है।

महिला अध्यापिकाओं की व्यवसायिक सूचना सम्बन्धी अभिक्षमता पुरुष अध्यापकों से अधिक है।

v. अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की व्यवसाय में रूचि सम्बन्धी अभिक्षमता में लैंगिक दृष्टि से सार्थक अन्तर है ।

महिला अध्यापिकाओं की व्यवसाय में रूचि सम्बन्धी अभिक्षमता पुरुष अध्यापकों से अधिक है।

प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता के मध्य सार्थकता के सम्बन्ध में निष्कर्ष।

(4) प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है यह परिकल्पना स्वीकार की जाती है।

i. ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की मानसिक (उपयुक्त शब्द, संख्या क्रम तार्किक हल) सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

ii. ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की छात्रों के प्रति रवैया सम्बन्ध अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

iii. ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की अनुकूलनशीलता सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

iv. ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की व्यवसायिक सूचना सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है ।

v. ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की व्यवसाय में रूचि सम्बन्धी अभिक्षमता में सार्थक अन्तर ह ।

शहरी अध्यापकों की व्यवसाय में रूचि सम्बन्धी अभिक्षमता ग्रामीण अध्यापकों से अधिक है।

निष्कर्षो का समर्थन – बी.टी.सी.,/डी.एल.एड. विशिष्ट बी.टी.सी. एवं उर्दू बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता में अन्तर के कारण इनके प्रशिक्षणों के लिए आवश्यक न्यूनतम योग्यता व बी.टी.सी./डी.एल.एड. दोनों होने की सम्भावना है, विशिष्ट बी.टी.सी. के लिए न्यूनतम योग्यता बी.एड. है जो अन्य से उच्च है। अतः विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता अन्य से अधिक होना स्वभाविक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. शर्मा, आर.ए. चतुर्वेदी, शिखा : अध्यापक प्रशिक्षण तकनीकि सूर्या पब्लिकेशन (2002) मेरठ।
2. शर्मा, शशिप्रभा ;2006 : अध्यापक शिक्षा के सि(ान्त एवं अभ्याय, कृष्णा पब्लिकेशन नई दिल्ली।
3. शर्मा, आर.ए. ;2007 : अध्यापक शिक्षा इंटरनेशनल पब्लिकेशन मेरठ
4. कुमार धर्मेन्द्र ;2009 : भारत में शिक्षा प्रणाली का विकास आर.लाल बुक डिपो मेरठ।
5. शर्मा, आर.ए. ;2011: अध्यापक शिक्षा एवं प्रशिक्षण तकनीकि आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
6. पाण्डेय, रामशक्ल ;2012: उदयीमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल पब्लिकेशन्स आगरा।
7. पचौरी, गिरीश एवं पचौरी, रितुः उभरते भारतीय समाज में शिक्षक की भूमिका ;2013 प्रकाशन विनय रखेजा, आर.लाल बुक डिपो, मेरठ
8. खरे, राजीव एवं मंसूरी, इम्तेयाज :भारत में शिक्षा–स्थिति समस्याएं एवं मुद्दे ;2014 राखी प्रकाशन प्रा.लि. आगरा
9. सक्सैना, पी.के. : प्रारम्भिक शिक्षा के उभरते आयाम एवं शैक्षिक मूल्यांकन, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
9. सरीता (1987)'शिक्षकों की अध्यापन प्रभावशीलता का उनकी अभिक्षमताओं के विभिन्न आयामों के संदर्भ में अध्ययन'
10. यादव, भानू प्रताप 2010–11, प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् प्रशिक्षित मूल जनपदीय एवं गैर जनपदीय अध्यापकों के समायोजन का अध्ययन लघु शोध एम.जे.पी. रूहेलखंड विश्वविद्यालय बरेली।

****

जीवन कौशल विकसित करने में शिक्षक की भूमिका

डॉ. योगेश चन्द्र जोशी*

शोध सारांश – वर्तमान समय में एक अच्छा शिक्षक वही है, जो अपने विषय–वस्तु की बेड़ियों में बंधा न होकर विषय ज्ञान एवं विषय वस्तु को विद्यार्थी के सहज उपयोग का साधन बनाता है। जब समाचार पत्रों, न्यूज चैनलों पर ऐसी खबरें आती हैं कि किसी विद्यार्थी ने तनाव में आकर आत्महत्या कर ली तब कहीं ना कहीं इसका जिम्मेदार समाज के साथ–साथ वह शिक्षक भी होता हैं, जो बाल्यकाल में उस विद्यार्थी की नींव मजबूत नहीं कर पाता हैं। नींव मजबूत करने से अभिप्राय शैक्षिक उपलब्धि से नहीं बल्कि सह–पाठ्यक्रम गतिविधियों से है।

शिक्षक को बचपन से ही विद्यार्थियों के जीवन कौशलों को विकसित कर एक अच्छा जीवन जीने की विधाएं सिखानी चाहिए। बाल्यकाल से ही विद्यार्थी को आत्मज्ञान का बोध एवं उचित सामाजिक कौशल सिखाने चाहिए। प्रत्येक बच्चें को चाहे वह पढ़ाई में कमजोर हो या प्रतिभाशाली, गरीब हो या अमीर सभी को समान भाव से खास समझकर प्रभावशाली वार्तालाप तथा निर्णय क्षमता जैसे मूल तत्त्वों को विद्यार्थी जीवन में ढालना चाहिए। यदि प्रत्येक शिक्षक उपयुक्त जीवन कौशलों को विद्यार्थी में समावेश करवा दे तो सिर्फ विद्यार्थी ही देश एवं समाज का चरित्र निर्माता होगा तथा ख़ुशी सूचकांक में भारत का स्थान प्रमुख होगा।

शब्द कुंजी –विद्यार्थी, शिक्षक, शैक्षिक जीवन, सामाजिक, कौशल।

प्रस्तावना – शिक्षा, सस्ंकृति के हस्तांतरण, संरक्षण एवं संवर्धन का प्रमुख साधन है। आज शिक्षा मानव जीवन को आधार स्तम्भ प्रदान कर उसे सार्थक बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रही है। शिक्षा ही समाज एवं राष्ट्र की उत्कृष्टता, उच्चता तथा विकास को सुनिश्चित करने का एक अत्यंत आवश्यक एवं शक्तिशाली साधन है।

किसी भी प्रकार के विकास एवं उन्नति के लिए शिक्षा का स्थान प्रमुख है। शिक्षा के अभाव में कुछ भी अर्थपूर्ण प्राप्त नहीं किया जा सकता। यह विद्यार्थियों के जीवन स्तर में सुधार तथा उनके जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने हेतु क्षमताओं का निर्माण कर बेहतर रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। साक्षरता के स्तर में वृद्धि से उच्च उत्पादकता बढ़ती है तथा अवसरों के सृजन से स्वास्थ्य में सुधार, सामाजिक विकास और उचित निष्पक्षता को प्रोत्साहन मिलता है। शिक्षा, विद्यार्थियों को अपने बलबूते पर किसी भी प्रकार का निर्णय लेने तथा विचार करने हेतु सामर्थ्य प्रदान करता है।

महात्मा गांधी शिक्षा के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए कहते है कि– **'शिक्षा से मेरा तात्पर्य बालक और मनुष्य के शरीर, मन तथा आत्मा के सर्वांगीण एवं सर्वोत्कृष्ट विकास से है।'**

जीवन कौशल – अनुकूली तथा सकारात्मक व्यवहार की वे योग्यताएँ हैं, जो व्यक्तियों को दैनिक जीवन की माँगों और चुनौतियों से प्रभावी तरीके से निपटने के लिए सक्षम बनाती है। ये जीवन कौशल सीखे जा सकते हैं तथा उनमें सुधार भी किया जा सकता है,जिनसे जीवन की चुनौतियों का सामना करने में मदद मिलती है। कुछ जीवन कौशल इस प्रकार है – आग्रहिता, समय प्रबंधन, सविवेक चिंतन, संबंधों में सुधार, स्वयं की देखभाल, पूर्णतावादी होना, विलंबन या टालना, आत्मज्ञान, तनाव संघर्ष, निर्णय क्षमता, चिंतन कौशल, समस्या निदान, रचनात्मक चिंतन, भाव प्रधान चिंतन, सृजनशील चिंतन, सामाजिक कौशल, प्रभावशाली वार्तालाप आदि।

शिक्षा में जीवन कौशल का महत्त्व – जन्म के समय बालक पूर्णरूप से असहाय होता हैं लेकिन जैसे–जैसे वह बड़ा होता है और परिवार समाज तथा विद्यालय में शिक्षक के अधिकाधिक सम्पर्क में आता है, जिससे उसका शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक विकास होता है। वस्तुत: इनके विकास में जीवन कौशल के विभिन्न आयाम उसे एक नवीन व अविरल व्यक्तित्व प्रदान करते हैं, अन्यथा जीवन कौशलों के विकास के अभाव में वह सम्पूर्ण जीवन एक पशु ही बना रहता है।

शिक्षाविद् जगदीप सिंह मोर का कहना है कि समय के बदलते परिवेश में रूढ़ीवादी शिक्षा पद्धति ने अपना स्थान खो दिया है वरन शिक्षा के क्षेत्र में तकनीक का समावेश हो गया है। आज जहाँ एक ओर विद्यार्थी कहीं ज्यादा कुशल एवं बुद्धिमान है वहीं दूसरी ओर निरंतर ऐसी खबरें भी सामने आती हैं, जहाँ हम देखते है कि छोटे–छोटे बच्चें तनाव ग्रस्त हो जाते हैं। वे बताते है कि संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के मार्गदर्शन पर शिक्षा के क्षेत्र में जीवन कौशल को अपनाया गया है। उनके अनुसार कुछ महत्त्वपूर्ण जीवन कौशल इस प्रकार है – आत्मज्ञान, तनाव संघर्ष, निर्णय क्षमता चिंतन कौशल, समस्या निदान, रचनात्मक चिंतन, भाव प्रधान चिंतन, सृजनशील चिंतन, सामाजिक कौशल, प्रभावशाली वार्तालाप आदि।

शिक्षक की भूमिका – सीखने की प्रक्रिया में शिक्षक केन्द्रिय भूमिका में होता हैं। शिक्षक के सुविधा प्रदाता की भूमिका में बदलाव होने से शिक्षक द्वारा कक्षा में नेता के रूप में सेवा करने की जरूरत समाप्त नहीं हो जाती, शिक्षक के पारम्परिक नेतृत्व कौशल और उसका प्रयोग आज भी महत्त्वपूर्ण है।

शिक्षक हमारे समाज के लिए उतना ही महत्त्वपूर्ण होता है, जितना एक वृक्ष के लिए उसकी जड़ें। विद्यार्थियों में जीवन कौशल विकसित करने की

* सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग) माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा, सिरोही (राज.) भारत

प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष दोनों रूप से शिक्षक की जिममेदारी बनती है। जब विद्यार्थी जानकारी से अनभिज्ञ होते है तब परिवार तथा समुदाय में भी अपेक्षित परिवर्तन स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होते है।

जीनव कौशल विकसित करने में एक शिक्षक की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। शिक्षक से अपेक्षा की जाती हे कि हमारे विद्यार्थी अपनी शिक्षा से यथासम्भव सर्वश्रेष्ठ परिणामों को प्राप्त करें। जिससे उन्हें अपने जीवन में अवसरों और अनुभवों को प्राप्त करने के लिए अंतर्दृष्टि और अवसर प्राप्त हो सके। कई बार परिवार के बच्चे जब पहली बार स्कूल जाते हैं, जो कि उनके लिए रोमांचक और चुनौतिपूर्ण दोनों होता है। अत: कक्षा का वातावरण रूचिपूर्ण और रचनात्मक होने से बच्चे स्कूल जाने के लिए और उद्देश्यपूर्ण शिक्षा को हासिल करने के लिए प्रोत्साहित होते है इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में पूर्ण जिम्मेदारी एक शिक्षक की होती है। इस प्रकार वह विद्यार्थियों में जीवन कौशलों को विकसित करने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

एच.जी.वेल्स ने शिक्षक के महत्त्व को बताते हुए लिखा है कि– **'शिक्षक इतिहास का निर्माता है और राष्ट्र का इतिहास विद्यालयों में लिखा जाता है और विद्यालय अपने शिक्षकों की गुणवत्ता से बहुत भिन्न नहीं हो सकतें।'**

एक शिक्षक अपने जीवन काल में हजारों विद्यार्थियों को शिक्षित कर उनमें आग्रहिता, समय प्रबंधन, सविवेक चिंतन, संबंधों में सुंधार, स्वयं की देखभाल, पूर्णतावादी होना, विलंबन, आत्मज्ञान, तनाव संघर्ष, निर्णय क्षमता, चिंतन कौशल, समस्या निदान, रचनात्मक चिंतन, भाव प्रधान चिंतन, सृजनशील चिंतन, सामाजिक कौशल, प्रभावशाली वार्तालाप आदि जीवन कौशलों का विकास कर महत्त्वपूर्ण भमिका निभाता है। अत: शिक्षक ही विद्यार्थियों के भविष्य का संरक्षक, निर्माता है। इसलिए शिक्षक पर ध्यान देना अर्थात् अपने भविष्य, अपनी संतति के भविष्य और समाज के भविष्य की ओर ध्यान देना है।

जीवन कौशलों के अंतर्गत अच्छा स्वास्थ्य और बेहतर जीवन बड़ी–बड़ी बातों पर नहीं बल्कि छोटी–छोटी बातों पर निर्भर करता है। ये बातें आधारित होती है हमारे जीवन कौशल और अपने परिवेश को देखने के नजरिए पर। इन्हीं छोटी बातों के महत्त्व को समझाने के लिए शिक्षकों द्वारा काफी बड़े और महत्त्वपूर्ण प्रयास किये जा रहे हैं। स्कूल स्वच्छता एवं शिक्षा कार्यक्रम को सम्पूर्ण राजस्थान राज्य में क्रियान्वित करने की योजना है, जिसमें शिक्षकों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

'मानव मुक्ति की सारी आशाएं शिक्षा में निहित है' शिक्षा एक जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में शिक्षक सबसे महत्त्वपूर्ण कड़ी की भूमिका निभाता है। जिसके अभाव में शिक्षा प्रक्रिया का आरंभ भी सम्भव नहीं। भारतीय शिक्षा व्यवस्था में इस तथ्य को सर्वप्रथम पहचानते हुए वैदिक कालीन गुरू अर्थात शिक्षक को ब्रह्मा, विष्णु और महेश के समान स्थान दिया गया है। वर्तमान में भी शिक्षक की भूमिका शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी ही रही है और भविष्य में भी इसे नकारा नहीं जा सकेगा। शिक्षक ही देश के भावी नागरिकों के वास्तविक सम्पर्क में आता है। अत: राष्ट्र के भावी नागरिकों के निर्माण का उत्तारदायित्तव शिक्षक पर ही है।

शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों में उपयुक्त जीवन कौशलों का विकास एक प्रक्रिया के माध्यम सेकिया जाता है। इस रूप में विद्यार्थी–शिक्षा एक प्रक्रिया के रूप में कार्य करती है, इस सम्पूर्ण प्रक्रिया के परिणामस्वरूप उत्पाद के रूप में एक कुशल एवं प्रभावी विद्यार्थी को तैयार करने का प्रयास किया जाता है, जो समाज में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सके। इस दृष्टि से यह माना जा सकता है कि विद्यार्थी–शिक्षा एवं विद्यार्थी एक सिक्के के दो पहलू है जिसमें शिक्षक, शिक्षा कार्यक्रम को एक प्रक्रिया के रूप में तथा विद्यार्थी को उसके उत्पाद के रूप में देखा जा सकता है।

विद्यार्थियों में कौशल निर्माण हेतु शिक्षक को निम्न रूपों में देखा जाता है–

1. शिक्षक एक व्यक्ति के रूप में।
2. शिक्षक एक व्यवसायी के रूप में।
3. शिक्षक एक सामाजिक प्रणेता केरूप में।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में शिक्षकों से अन्य आकांक्षाओं की अपेक्षा की गई है जैसा कि निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट किया गया है –

शिक्षककी अपेक्षित भूमिका :

1. निर्देशक के रूप में।
2. अनुदेशक के रूप में।
3. कक्षा प्रबंधक के रूप में।
4. विस्तार सेवा के रूप में।
5. नवाचारकर्ता के रूप में।
6. अनुसंधानकर्ता के रूप में।
7. सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में।
8. नेता एवं संगठनकर्ता के रूप में।
9. विद्यार्थी चरित्र निर्माण कर्ता के रूप में।

विद्यार्थी–शिक्षा प्रत्येक शिक्षा व्यवस्था का अविछिन्न अंग होती है। यह समाज एवं राष्ट्र के चरित्र, उसकी संस्कृति एवं लोकाचार से घनिष्ठ रूप से जुड़ी होती है। शिक्षक, शिक्षण प्रक्रिया का सूत्रधार होता है। आज के प्रगतिशील, तकनीकी, कम्प्यूटर एवं सूचना क्रांति के दौर में शिक्षा–विद्यार्थी एवं शैक्षिक प्रक्रिया को सही और उन्नतिशील शिखर पर पहुँचाने हेतु जरूरी है जिससे विद्यार्थी में उचित संचरणीय एवं प्रभावोत्पादक जीवन कौशलों का विकास हो।

वर्तमान समय में एक अच्छा शिक्षक वही है, जो अपने विषय–वस्तु की बेड़ियों में बंधा न होकर विषय ज्ञान एवं विषय वस्तु को विद्यार्थी के सहज उपयोग का साधन बनाता है। जब समाचार पत्रों, न्यूज चैनलों पर ऐसी खबरें आती हैं कि किसी विद्यार्थी ने तनाव में आकर आत्महत्या कर ली तब कहीं ना कहीं इसके जिम्मेदार समाज के साथ–साथ वह शिक्षक भी होते हैं, जो बाल्यकाल में उस विद्यार्थी की नींव मजबूत नहीं कर पाते हैं। नींव मजबूत करने से अभिप्राय शैक्षिक उपलब्धि से नहीं बल्कि सह–पाठ्यक्रम गतिविधियों से है।

शिक्षक के महत्त्व पर ध्यान आकर्षित करते हुए डॉ. राधाकृष्णन ने कहा है कि–**'समाज में शिक्षक का महत्त्वपूर्ण स्थान है वह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को बौद्धिक परम्पराएं और तकनीकी कौशल पहुँचाने का केन्द्र है और सभ्यता के प्रकाश को प्रज्वलित करने में सहायता देता है।'**

एक शिक्षक के पास अपने विद्यार्थियों में जीवन कौशलों को ज्यादा रचनात्मक ढंग से उपयोग में लाने के लिए बहुत से अवसर होते हैं, जिससे उनकी रूचि को प्रेरित कर उनके अनुभवों को बढ़ावा दिया जा सकता है। इन विचारों को शिक्षा के किसी विषय पर भी लागू कर सकते है। यह इकाई उदाहरण के रूप में अंकुरण के विषय का उपयोग करती है। पढ़ाई के परिवेश में वृद्धि करने के लिए कुछ संभावनाओं को उभारती है। अत: शिक्षक किसी भी विषय पर इन विचारों को लागू कर विद्यार्थियों में जीवन कौशलों को

विकसित करने में अपनी सहभागिता निभाता हैं।

महान शिक्षाशास्त्री एवं दार्शनिक अरविन्द के अनुसार– **'शिक्षक राष्ट्र की संस्कृति बनाता है शिक्षक को देश का भावी कर्णधार एवं समाज का मागदर्शक माना गया है। वह राष्ट्र का शिरोमणि निर्माता एवं कर्णधार है।'**

शिक्षक उस माली के समान है, जो विद्यार्थी रूपी पौधों को सींचता है उनकी कांट–छांट करता है तथा देखभाल करता है अनेक व्यक्तियों का निर्माण करने वाला शिक्षक एक व्यक्ति ही न होकर अपने आप में एक संस्था होता है। अत: प्राचीन काल से आज तक शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षकों की भूमिका अग्रणी रही है और भविष्य में भी शैक्षिक तकनीकी का विकास होने के बावजूद भी शिक्षा प्रणाली में शिक्षक के स्थान को अंशमात्र भी कम नहीं आंका जा सकेगा। किसी भी राष्ट्र की शिक्षा प्रणाली में शिक्षक का स्थान सबसे महत्त्वपूर्ण होता है। शिक्षा प्रणाली में उन्नति एवं विकास के लिए उपयुक्त विद्यालय एवं महाविद्यालय उत्तम शिक्षा के साधन, श्रेष्ठ पुस्तकें तथा उचित पाठ्यक्रम की आवश्यकता तो है मगर, उससे कही ज्यादा आवश्यकता है एक अच्छे शिक्षक की। क्योकि अच्छे शिक्षकों के अभाव में किसी भी देश की शिक्षा पद्धति निर्जीव एवं निस्तेज हो जाती है।

शिक्षण की गतिविधियाँ उस समय सर्वाधिक प्रेरणादायक होती हैं, जब विद्यार्थियों को या तो समस्या की व्यवहारिक रूप से खोज करने के लिए जोड़ते है या फिर समस्या के समाधान के द्वारा चिंतन के कौशलों को विकसित करने के लिए सक्रिय रूप से जोड़ते हैं। एक शिक्षक को इस रास्तें पर अपने विद्यार्थियों को अग्रसर करने के लिए पहल करनी होगी उसके बाद ही वह अपने विद्यार्थियों को घनिष्ठ रूप से संबंध कर सकता है। इसके अतिरिक्त इस बात पर सावधानीपूर्वक विचार करने की जरूरत होगी कि शिक्षक कक्षा में किस प्रकार का भौतिक परिवेश चाहता हैं। अगर शिक्षक कुछ सामग्रियों के साथ विद्यालय में काम करता हैं, तो हो सकता है कि यह आसान न हो, परन्तु उपाय कुशल बनकर शिक्षक रंगारंग और प्रेरणादायक कक्षा का निर्माण कर सकता है। इससे विद्यार्थियों के सुख, प्रेरणा और उपलब्धि जैसे जीवन कौशलों पर उल्लेखनीय बदलाव अवश्य आयेगा।

शिक्षक को बचपन से ही विद्यार्थियों के जीवन कौशलों को विकसित कर एक अच्छा जीवन जीने की विधाएं सिखानी चाहिए। बाल्यकाल से ही विद्यार्थी को आत्मज्ञान का बोध एवं उचित सामाजिक कौशल सिखाने चाहिए। प्रत्येक बच्चें को चाहे वह पढ़ाई में कमजोर हो या प्रतिभाशाली, गरीब हो या अमीर सभी को समान भाव से खास समझकर प्रभावशाली वार्तालाप तथा निर्णय क्षमता जैसे मूल तत्त्वों को विद्यार्थी जीवन में ढालना चाहिए। यदि प्रत्येक शिक्षक उपयुक्त जीवन कौशलों को विद्यार्थी में समावेश करवा दे तो सिर्फ विद्यार्थी ही देश एवं समाज का चरित्र निर्माण होगा तथा खुशी सूचकांक में भारत का स्थान प्रमुख होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. https://hi.wikipedia.org/wik/जीवन कौशल
2. https://kumar1088.wordpress.com/शिक्षा संस्थान
3. http://www.mp.gov.in/school-education2
4. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक –एम.एम. मित्तल, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, 2004
5. शिक्षक की भूमिका (https://hi.vikaspedia.in/education/teacher-corner/teacher-teaching-and-icts)
6. आलेख–शिक्षा में जीवन कौशल का महत्त्व, योगेश गौतम, बुधवार, 21 सितम्बर, 2016 (https://www.dainikkhabar.com)
7. आलेख–कैसे बढ़े शिक्षा की गुणवत्ता : एक शिक्षक का दृष्टिकोण, दामोदर जैन, 27 जुलाई, 2012 (http://www.teachersofindia.org/hi/article)

****

कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी

डॉ. हर्षा क्षीरसागर*

प्रस्तावना – मानवीय चेतना एवं ज्ञान की परिधि में समाहित विश्व की विशालता के विभिन्न आयामों को विषय विशेषज्ञों के द्धारा अध्ययन एवं शोध के लिये आधार वस्तु के रुप में चयन किया गया। शैक्षिक सन्दर्भ में बालक की क्षमताओं का समग्र विकास प्रकिया उसके प्रदत्त ज्ञान एवं उसकी ग्राह्यता की आन्तरिक शक्ति पर ही निर्भर करती है। औपचारिक शिक्षा के अन्तर्गत यह पर्यावरणीय परिस्थिती बालक के कक्षा-कक्ष परिस्थिती के रूप में निर्मित होती है।

पारिस्थितिकी की अवधारणा – पारिस्थितिकी पर्यावरण अध्ययन का विज्ञान है, पारिस्थितिकी जीव अर्थात् पशु-पक्षी व अन्य जीव व मानव पर पर्यावरण के समग्र प्रभाव का अध्ययन व विश्लेषण करता है। इनसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटेनिका में पारिस्थितिकी की अवधारणा इस प्रकार दी है-

जिस प्रकार पौधे और अनेक दूसरे जीव अपने चारों और की भौतिक दशाओं से प्रभवित होते है उसी तरह एक विशेष मानव समूह के चारो ओर की भौतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक दशाएँ भी एक विशेष प्रकार के सामाजिक संगठन का निर्माण करती है जिससे सामाजिक पारिस्थितिकी निर्मित होती है। सामाजिक संदर्भ में जहाँ एक ओर अनेक भौगोलिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक दशाएँ समुदाय में व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करती है वही दूसरी ओर शैक्षिक सन्दर्भ में वही व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करके भीअपनी बुद्धि और कुशलता के द्धारा इन दशाओं में परिर्वतन करने की कोशिश करता है जिससे वह इन्हें अपने अनुकूल बना सकें। इसी कारण सामाजिक पारिस्थितिकी को पर्यावरण तथा समुदाय की अंतर्क्रिया को स्पष्ट करने वाली दशा कहा जाता हैं। चूंकि शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है और समाज का लघु रूप विद्यालय पारिस्थितिकी तथा उसके अंतर्गत कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी का अध्ययन किया गया है पर्यावरण पारिस्थितिकी एवं कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी पर्यावरणीय संदर्भ के अंतर्गत प्रकृति में पौधो को अपने सम्पूर्ण वृद्धि एवं विकास हेतु पर्याप्त जल उचित प्रकाश एवं पोशक तत्वों की आवश्यकता मुख्य रूपसे होती है। यह समस्त तत्व पौधे को जितने बाह्य वातावरण (भूमि के उपरी सतह) द्धारा उपलब्ध होते है उतना ही आंतरिक वातावरण (भूमि के अन्दर का) भी इन प्रमुख पोशक तत्व एवं पदार्थो(मृदा,कोशिका जल,सतस्त आयन,गुरूत्वीय जल) को पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराने एवं पौधे के उचित वृद्धि एवं विकास हेतु उत्तरदायी है जिससे पौधे का प्रकृति में अस्तित्व बना रहता है। आंतरिक एवं बाह्य वातावरण के प्रभावित होने से पौधे का स्वस्थ विकास प्रभावित होता है और पर्यावरणीय पारिस्थितिकी प्रभावित होगी। नैसर्गिक पर्यावरण में किसी सावयव के अस्तित्व के लिए जल एक आवश्यक पारिस्थितिकीय घटक है। प्रकृति में यह जल तीन प्रमुख अवस्थाओ में विद्यमान होता है एक पौधे के जीवन में जल का महत्व मृदा, पौधे तथा वातावरण में जल स्तर के पारस्परिक प्रगाढ़ सम्बन्ध के द्धारा स्पष्ट होता है। जिस प्रकार एक पौधे के विकास में भूमि पौधे तथा बाह्य वातावरण एक सतत् प्रणाली का निर्माण करते है। ठीक उसी प्रकार शैक्षिक तंत्र बालक के जिवन में आनुवांशिक प्रभाव कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी में पर्यावरणीय प्रभाव तथा सामाजिक अंतर्क्रियाओं के प्रभाव एक सतत् प्रणाली का निर्माण करते है। बालक के व्यक्तित्व विकास के लिए 'शिक्षा' एक अत्यावश्यक बौद्धिक पारिस्थितिकय घटक के समतुल्य है। बालक के जिवन में यह शिक्षा उसके ज्ञानात्मक,क्रियात्मक एवं भावात्मक विकास के रूप में प्रभावित करती है। पारिस्थितिकी में पर्यावरणीय प्रभाव तथा सामाजिक अन्तरक्रियाओं के प्रभाव सतत् प्रणाली का निर्माण करते है। लिजेन्ड्रा(1999) ने शिक्षा पारिस्थितिकी को 'कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी' के रूप में जाना। कक्षा के वातावरण में दो ऐसी जीवंत शक्तियाँ है जो परस्पर क्रियारत रहती है वे है 'विद्यार्थी और शिक्षक इनमें निरन्तर परस्पर क्रिया चलती रहती है। इस प्रणाली प्रत्येक पक्ष अन्य सभी पक्षों को प्रभावित करता रहता है। कक्षा-कक्ष की विशेषताएँ, शिक्षण कार्यो, विद्यार्थीयों की आवश्यकतायें यें सभी कक्षा -कक्ष के वातावरण को प्रभावित करता है।

'कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी से अभिप्राय उस मनोसामाजिक वातावरण से है जिसके अंतर्गत बालक अपने समुह में अन्त: क्रिया करता है। मनोसामाजिक वातावरण के दो पक्ष है- आंतरिक पक्ष- जो बालक के स्व से संबंधित हैं,तथा बाह्य पक्ष जो बालक के वातावरण से संबंधित है।'

औचित्य – शैक्षिक संदर्भ में बालक की क्षमताओं के सम्पूर्ण विकास हेतु उसे दिया जाने वाला ज्ञान व उसकी ग्रहण शक्ति ही पर्याप्त नहीं होती,बल्कि अपने आस-पास की पर्यावरण पारिस्थितिकी में स्थापित अन्त: क्रिया का प्रभाव भी उसके समग्र विकास पर पड़ता है।

एक विद्यालय बालक के ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक विकास के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। सह तभी सम्भव है जबकि कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी प्रभावी हो। एक प्रभावी कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी में ही बालक सर्वागीण विकास संभव है।

साहित्य का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी के रूप कोई शोधकार्य उपलब्ध नहीं हुआ है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर शोधकर्ता ने कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी और उसके संज्ञानात्मक एवं भावात्मक चरों पर प्रभाव को लेकर शोधकार्य की योजना बनायी तथा समस्या कथन इस प्रकार है –

समस्या कथन- उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थीयों की कक्षा-कक्ष

* प्राचार्य, बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.) भारत

पारिस्थितिकी का उनके संज्ञानात्मक एवं भावात्मक चरों पर प्रभाव का अध्ययन।

पारिभाषिक शब्द – उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में कक्षा 9 एवं 12 की कक्षाएँ आती है। प्रस्तुत अध्ययन हेतु कक्षा 10 को सम्मिलित किया जाएगा।

कक्षा–कक्ष पारिस्थितिकी – कक्षा–कक्ष पारिस्थितिकी से अभिप्राय उस मनोसामाजिक वातावरण से है जिसके अंतर्गत बालक अपने समुह से अन्त:क्रिया करता है।

संज्ञानात्मक चर – संज्ञानात्मक चरो से अभिप्राय संज्ञान या मानव के संज्ञानात्मक विकास से लिया जाता है।

भावात्मक चर – According to Dictionary of farler-The area of learning involved in appreciation, interest and attitudes.

Affective-

I. Influenced by or resulting from the emotions.

II. Concerned with or arousing feeling or emotions emotional.

प्रस्तुत अध्ययन में भावात्मक चरों के अंतर्गत संवेगात्मक बुद्धि, अभिवृत्ति,मूल्य,समायोजन को सम्मिलित किया गया।

उद्देश्य:

1. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न विद्यालयों की कक्षा –कक्ष पारिस्थितिकी की तुलना करना।
2. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थीयों की बौद्धिक क्षमता को सहप्रसरक लेते हुए कक्षा–कक्ष पारिस्थितिकी, लिंग एवं इनकी अन्त:क्रिया का उनके संज्ञानात्मक चरों पर प्रभाव का अध्ययन करना।
3. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थीयों की बौद्धिक क्षमता को सहप्रसरक लेते हुए कक्षा–कक्ष पारिस्थितिकी, लिंग एवं इनकी अन्त:क्रिया का उनके भावानात्मक चरों पर प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पना – प्रस्तुत अध्ययन हेतु शून्य परिकल्पना ली गई है जो इस प्रकार है–

1. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थीयों की कक्षा–कक्ष पारिस्थितिकी में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थीयों की बुद्धि को सहप्रसरक लेते हुए कक्षा–कक्ष पारिस्थितिकी, लिंग एवं इनकी अन्त:क्रिया का उनके संज्ञानात्मक चरों पर सार्थक प्रभाव नहीं है।
3. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थीयों की बुद्धि को सहप्रसरक लेते हुए कक्षा–कक्ष पारिस्थितिकी, लिंग एवं इनकी अन्त:क्रिया का इनके भावानात्मक चरों पर सार्थक प्रभाव नहीं है।

सीमांकन:

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन में संज्ञानात्मक चरों के अन्तर्गत बुद्धि, उपलब्धि, सृजनात्मकता को सम्मिलित किया गया है।
2. भावात्मक चरों के अन्तर्गत संवेगाात्मक बुद्धि, अभिवृत्ति, मूल्य और समायोजन को सम्मिलित किया गया।
3. प्रत्येक प्रकार के विद्यालय जो म.प्र. में संचालित है की एक–एक कक्षा को शोध अध्ययन हेतु सम्मिलित किया गया है।

शोध विधि– प्रस्तुत शोध कार्य साहित्य, सर्वेक्षण एवं विद्यालयी सर्वेक्षण पर आधारित है।पर्यावरण की पारिस्थितिकी की संकल्पना को कक्षा–कक्ष पारिस्थितिकी से संबंधित करने के लिए साहित्यिक सर्वेक्षण किया गया।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोधकार्य उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थीयों पर किया गया। इसमें न्यादर्श हेतु म.प्र.माध्यमिक शिक्षा मण्डल व केन्द्रीय शिक्षा मण्डल द्वारा संचालित विद्यालयों की सुची देखी गयी। तत्पश्चात् याद्दच्छिक चयन विधि द्वारा शासकीय एवं अशासकीय तथा अशासकीय विद्यालयों को शोधकार्य हेतु चयनित किया गया जिसे तालिका क्र.1 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका क्रमांक 1
विद्यालय के प्रकार

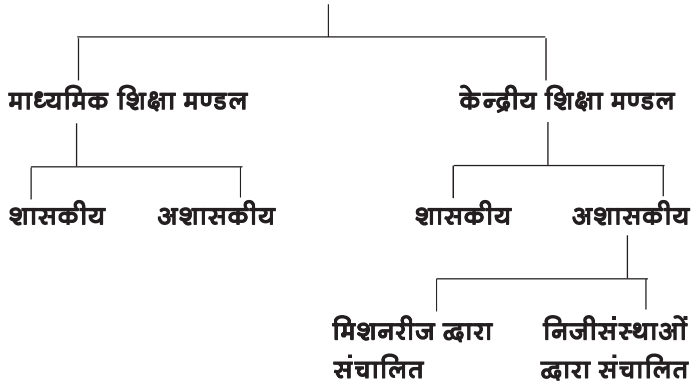

प्रस्तुत शोधकार्य न्यादर्श हेतु इन विद्यालयो की एक–एक कक्षा को सम्मिलित किया गया। इन विद्यालयों के कक्षा 10 वीं के 30–30 विद्यार्थीयों पर परीक्षण प्रशासित किये गये। इन विद्यार्थीयों में बालक–बालिकाएँ सम्मिलित है। विद्यालय अनुसार बालक–बालिकाओं का विवरण तालिका क्र.3.2 में दिया गया है

तालिका क्र. 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

उपकरण – प्रस्तुत शोधकार्य हेतु शोधकर्ता द्वारा कक्षा–कक्ष पारिस्थितिकी का निर्माण किया गया।

कक्षा–कक्ष पारिस्थितिकी – कक्षा–कक्ष पारिस्थितिकी का मापन करने के लिए शोधकर्ता द्वारा उपकरण तैयार किया गया। इस उपकर के दो भाग है –(1)मनोवैज्ञानिक वातावरणर (2)भौतिक वातावरण।

तालिका क्रमांक 3 प्रश्नावली का खण्ड अनुसार विवरण

खण्ड	स्वरूप	पद संख्या
खण्ड –I	विद्यार्थी–विद्यार्थी अन्त:क्रिया	22 पद
खण्ड – II	शिक्षक–विद्यार्थी अन्त:क्रिया	37 पद
	कुल पद	59 पद

तालिका क्रमांक 4 अनुसूची का खण्ड अनुसार विवरण

खण्ड	स्वरूप	पद संख्या
खण्ड – I	संस्थागत सर्वेक्षण अनुसूची	93 पद
खण्ड – II	साक्षात्कार अनुसूची	09 पद
	कुल पद	102 पद

मध्यस्थ चर

लिंग – प्रस्तुत शोधकार्य में मध्यस्थ चर के रूप में लिंग को लिया गया। जिसकी जानकारी विद्यालय पत्रक से प्राप्त की गई।

प्रदत्त संकलन प्रक्रिया – सर्वप्रथम शोधकर्ताद्वारा निर्मित उपकरण कक्षाकक्ष पारिस्थिति का प्रमापीकरण किया गया। प्रमापीकरण के पश्चात् कक्षा–कक्ष पारिस्थितिकी बुद्धि परीक्षण एवं अन्य उपकरणों का प्रशासन

किया गया। इस हेतचयनित विद्यालयों के प्राचार्य से अनुमति ली गई। अनुमति के पश्चात् प्रति विद्यालय में निम्नानुसार प्रदत्तों का संकलन किया गया।

प्रदत्त संकलन प्रक्रिया :

क्र.	उपकरण का नाम	अनुमति समय सीमा
1	कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी	सभी उपकरणों का प्रशासन के प्रतिकार्य दिवस में निर्देशानुसार किया गया (कुल कार्य दिवस 08)
2	बुद्धि परीक्षण	
3	सृजनात्मक परीक्षण	
4	अभिवृत्ति परीक्षण	
5	मूल्य परीक्षण	
6	समायोजन परीक्षण	
7	आत्मविश्वास परीक्षण	
8	संवेगात्मक बुद्धि परीक्षण	
9	उपलब्धि	वार्षिक परीक्षण के परिणाम

प्रदत्तों का विश्लेषण – उद्देश्य आधारित प्रदत्तों का विश्लेषण इस प्रकार किया गया है:

1. विभिन्न विद्यालयों की कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी की तुलना के लिए उंकन परीक्षण का उपयोग किया गया है।
2. विभिन्न उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थीयों की बौद्धि को सहप्रसरक लेते हुएकक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी, लिंग एवं इनकी अंत:क्रिया का उनके संज्ञानात्मक एवं भावात्मक चरों पर प्रभाव के अध्ययन के लिए 2×2Factorial design ancova का उपयोग किया गया है।

निष्कर्ष:

1. विभिन्न विद्यालयों की कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी एवं उसके पक्षों में सार्थक अन्तर पाया गया।
2. सेंट मेरीज कॉन्वेन्ट स्कूल की कुल कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी विद्यार्थी-विद्यार्थी अंत:क्रिया, शिक्षक- शिक्षक अंत:क्रिया, तथा भौतिक वातावरण अन्य की तुलना में सार्थक उच्च स्तरीय पायी गईं।
3. उत्कृष्ट विद्यालय की कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी के पक्ष शिक्षक विद्यार्थी अंत:क्रिया, अन्य विद्यालयों की तुलना में सार्थक उच्च स्तरीय पायी गईं।
4. विभिन्न विद्यालयों की कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी का संज्ञानात्मक चर सृजनात्मक एवं उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पाया गया।
5. सरस्वती विद्या मंदिर के विद्यार्थीयों के संज्ञानात्मक चर सृजनात्मकता एवं उसके आयाम प्रवाहिता एवं मौलिकताअन्य विद्यालयों की तुलना में सार्थक उच्च स्तरीय पायी गईं।
6. बी.सी.जी. पब्लिक स्कूल के विद्यार्थीयों के सृजनात्मकता के आयाम मौलिकताअन्य विद्यालयों के विद्यार्थीयों की तुलना में सार्थक उच्च स्तरीय पायी गईं।
7. उत्कृष्ट विद्यालय की बालिकाओं में सामाजिक कौषल बालकों की मुलना में सार्थक उच्च स्तरीय पायी गईं।

शैक्षिक उपयोगिता:

विद्यालयीन स्तर पर – प्रस्तुत शोधकार्य अन्तर्विषयी शोधकार्य है। प्रकृति में पारिस्थितिकी की संकल्पना को कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी के साथ सम्बधित किया है। जिस प्रकार पौधा अपने वातावरण के साथ अन्तर्क्रिया कर विकसित होकर वृक्ष बनता है उसी प्रकार बालक का स्व अपने कक्षा-कक्ष वातावरण के साथ अन्तर्क्रिया कर विकसित होता है।

सामाजिक स्तर पर – उस तरह के शोधकार्यो के परिणाम से विभिन्न कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी का प्रभावबालक की क्षमताओं एवं योग्यताओं पर पहचाना जा सकता है। उसी के अनुरूप सामाजिक पारिस्थितिकी का निर्माण किया जा सकता है।

आगामी अध्ययन हेतु सुझाव :

1. प्रस्तुत शोधकार्य सर्वेक्षण विधि पर आधारित है। इसे प्रयोगात्मक विधि से भी किया जा सकता है।
2. प्रस्तुत शोधकार्य में उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थीयों न्यादर्श के रूप में लिया गया। इसे प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थीयों पर भीकिया जा सकता है।
3. प्रस्तुत शोधकार्य में संज्ञानात्मक चरों के अन्तर्गत सृजनात्मकता एवं उपलब्धि कोही लिया गया। इसे अन्य संज्ञानात्मक चर जैसे प्रत्यक्षीकरण, चिन्तन, तर्क, समस्यासमाधान को लेकर भी किया जा सकता है।
4. प्रस्तुत शोधकार्य में भावात्मक चरों के अन्तर्गत अभिवृत्ति, मूल्य, समायोजन, आत्मविश्वास एवं संवेगात्मक बुद्धि को ही लिया गया। इसे अन्य भावात्मक चर जैसे जोखिम स्वीकारने की योग्यता, व्यक्तित्वशील गुण के संदर्भ में किया जा सकता है।
5. प्रस्तुत शोधकार्य में कक्षा-कक्ष पारिस्थितिकी का प्रभाव विद्यार्थीयों के संज्ञानात्मक एवं भवात्मक चरों पर देखा गया। इसे शिक्षकों के संदर्भ में भी किया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. गेरेट,एच.ई (1972), शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी,हरियाणा : कल्याणी पब्लिशर्स।
2. जैन, गरिमा (2007), पर्यावरण अध्ययन सामाजिक एवं भौतिक एवं जैविक शिक्षण , जयपुर : यूनिवर्सिटी बुक हाउस (प्रा.) लि।
3. लिन्ग्रेन, हैनरी क्ले, अनुवाद दवसरे हरिकृष्ण (1972-73), कक्षा अध्यापन में शिक्षा मनोविज्ञान, भोपाल: मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
4. Amarnath (1980) – Comparative study of the organizational climate of govt. and privately managed H.S. School in jullunder district.
5. Bhattacharya, G.C. (1983) - A study of environmental awareness among primary girls student and their parents in Varanasi independent study Allahabad state instituteof educational management and training unpublished doctoral research.
6. Buch, M.B. Third survey of research in education (1978-833) New Delhi, National Council of educational research and Training.
7. Buch, M.B. Fourth survey of research in education Vol.II (1983-88) New Delhi, National Council of educational research and Training.
8. Balsuramaian, N. (1989). A study of classroom climate in relation to pupil achievement in English language teaching. Vol.XXXVIII (5) 128-1137.
9. Chikara Sudha and Kumari Lata (1996). Cognitive development of rural infants and hoe environment. A correlation study. Unpublished doctoral research.

तालिका क्र. 2 : विद्यालय अनुसार न्यादर्श का विवरण

क्र	विद्यालय का नाम	माध्यम	श्रेणी	विद्यार्थी संख्या		
				बालक	बालिकाओं	कुल विद्यार्थी
1.	नारायण विद्या मंदिर क्र.2(उत्कृष्ट विद्यालय)	हिन्दी	शासकीय	25	05	30
2.	बी.सी.जी. पब्लिक हायरसेकेण्डरी विद्यालय	अंग्रेजी	अशासकीय	11	19	30
3..	राधाबाई उच्चतर माध्यमिक विद्यालय देवास	हिन्दी	अशासकीय	01	29	30
4.	सरस्वती शिशु मन्दिर, केन्द्रीय विद्यालय,मुखर्जी नगर	अंग्रेजी	अशासकीय	21	09	30
5.	सेंट मेरीज कॉन्वेन्ट सीनियर सेकेण्डरी विद्यालय	अंग्रेजी	अशासकीय	14	16	30
			योग	72	78	150

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

Significance of the 'Python Episode' in Arrow of God

Dr. Surendra Kumar Sao*

Abstract - Albert Chinua Achebe is one of the most successful of the Nigerian novelists. Arrow of God (1964) written by him, is an important political and cultural work' of fiction produced during past half a century It is a characteristically African tale, told against a specific locale in a Nigerian village. Arrow of God relates to the conditions prevailing in the first two decades of our j century when the European colonialism had subdued nearly the whole of tribal Africa. Achebe acutely portrays the disrupting, effect which an externally imposed power system has on an internally imposed power system. Colonization by the British government official and the Christian missionaries was well underway and the native tribes had reconciled themselves to the bitter fact of white domination. Paniker echoes the fact that Achebe not just only projects the inadequacies of African civilization during an encounter with the encroaching European civilization, but also searches for a reassertion of national dignity. The burning issue being holding the traditional religious belief versus convening to Christinanity (112). This gives rise to the religious conflict which happens to be the central thematic concern in Arrow of God. Achebe. while dealing religious conflict acquaints us with various aspects of religion as well as culture.

Keywords - Colonialism, subdued, juncture, intricate, starvation, Pythen.

Introduction - The fact is that when two cultures come in contact with each other, the dominant culture influences the minor culture in a variety of ways. At this juncture few from the native culture adopt the ways of foreign culture while others become conscious of their cultural identity and try to resist the foreign culture. Religion being a part of culture undergoes the same pattern of attraction and repulsion towards another religion. Such a religious conflict which is foregrounded against the backdrop of political and cultural conflict is highlighted in Arrow of God.

Arrow of God, Achebe's third novel, is an intricate and complex narrative. The tribes of Africa used to fight among themselves over trivial issue. They were attacked by the people of distant villages which resulted in disunity. Compelled by the contingent crisis, the people of six villages of Umuaro united themselves and created a supreme god called Ulu, who could protect the people from all attacks. Ezeulu, the protagonist is appointed the chief priest of Ulu, thus assuming a position of religious power as well as responibility to safeguard the traditions and rituals of the people. Hence Ezeulu is very particular about his duties. " This was the third nightfall since he began to look for signs of the new moon. Me knew it would come today but he always began his watch three days early because he must not take a risk" (AG1). In this manner Ezeulu watches each month for the new moon. He eats a sacred yam and beats the ogene to mark the beginning of each new month. Being the chief priest, it is Ezeulu, who can name the day for the Feast of the Pumpkin Leaves or for the New Yam feast, which ushers in the yam harvest. The authority that Ezeulu enjoys in the novel is to be exercised for the welfare of the community alone. Ezeulu's prayer to Ulu indicates.

Ezeulu, is a married man having three wives : Okuata, who is dead, Matefi and Ugoye; four sons Edogo from Okuata, Obika from Matefi, Oduche and Nwafo from Ugoye; and four daughters Adeze and Akueke from Okuata, Ojiugo from Matefi and Obiageli from Ugoye. He, thus plays the role of a regulator and monitor, as a religious head and a householder. But being the religious head has also earned him some enemies. Nwaka. being the prominent of them, all, is a prosperous man who is a supporter of Ezidemili, the chief priest of the god, Idemili, and acts as an antagonist throughout the novel. Their conflict began five years before, when there was a dispute between Umuaro and the nearby village of Okperi over a piece of land. Nwaka led a group of villagers who wanted to go to war against Okperi. All the six villages of Umuaro sided with Nwaka and overrode Ezeulu's oppositions. After the war was brought to an end by the Britishers, Ezeulu testified on Government Hill that the people of Umuaro had no claim to Okperi land. The speaking of truth before Captain Winterbottom resulted in creating a good impression on the white man but simultaneously embittered Ezeulu's very own natives.

Christianity too, had come uninvited lo their nation just as the Britishers and this very fact threatened their institutional religion. Ezeulu. the spokesman of the African religion, does not oppose Christianity, but on the contrary, tries to understand it because he thinks that the white man is.verv wise. This initial curiosity tor the knowledge of the new religion, respect for the white man's wisdom and

*Asst. Professor (English) Late Shri Jaidev Satpathi Govt. College, Basna, Distt. Mahasamund (C.G.) INDIA

friendship towards Winterbottom makes him send his son Oduche to the church and gather information about Christianity.

At first he had thought that since the white man had come with - " great power and conquest it was necessary that some people should learn the ways of his deity. That was why he had agreed to send his son, Oduche, to learn the new ritual. He also wanted him to learn the white man's wisdom, for Ezeulu knew from what he saw of Wintabota and the stories he heard about his people that the white man was very wise. (AG 42).

With the passage of time, Ezeulu begins to have new doubts about the new religion and the ulterior motives of the people of that religion. He " was becoming afraid that the new religion was like a leper. Allow him a handshake and he wants to embrace" (42). Oduche on the other hand.is highly influenced by the church and their ways. He interprets the message of the church bell as " Leave your yam, leave your cocoyam and come to church" (42). Ezeulu feels a sense of doom in such a message and his reconciliatory attitude towards Christianity is deeply upset. Oduche, instead of using the knowledge of Christianity to strengthen the knowledge of his own religion, feels more and more attracted to Christianity and English language. He was very good at learning and desires to speak good English. He makes very good progress and grows very popular with his teachers and members of the church.

Mr. Goodcountry addresses the converts insisting them to perform the Christian act of killing the python :

if we are Christians, we must be ready to die for the faith he said.

You must be ready to kill the python as the people of he rivers killed ihe iguana. You address the python as lather. It i nothing but a snake, the snake that deceived our first mother. Eve. If you are afraid to kill it do not count yourself a Christian' (47).

In African religion 'Python' is a sacred animal which is a symbol of the divine spirit, but in Christianity the snake symbolises Satan, evil and temptation. These totally opposite religious faiths give rise to a semiotic war between the two communities.

Oduche being a new convert to Christianity is over enthusiastic about the Christian values and ideals. Entrenched in the perspective of Christian mythology. he considers the python to be an incarnation of Satan and evil, tempting Eve and likewise causing the fall of man. Ignoring the native symbolic significance of the sacred python he decides to kill it in order to prove himself a true Christian. At first he thought of smashing its head with a stick, but could not gather courage to do so. Later he found a better alternative by locking it in his box, which Moses had built for him." The python would die for lack of air, and he would be responsible for its death without being guilty of killing it, which seemed to be a very happy compromise" (50). Incidentally, his expectation is proved wrong when Nwafo discovers the box moving, which seemed as if something is struggling inside it to get free. The box is brought out and Ezeulu labours hard to open the lock. " It was not easy and the old priest was covered with sweat by the time he succeeded in forcing the box. What they saw was enough to blind a man... In the broken box lay an exhausted royal python" (44). It was certainly an abomination for the the entire native clan. Ezeulu, his family members and neighbours are dumbfounded. Causing harm to the sacred python is considered a great sin according to the native religion, and such a sin happening in the chief priest's hut. that too, by his own son. was enough for Ezeulu to go fierce with rage. "Today. 1 shall kill the boy with my own hands... 1 have said it" (45).

On the contrary, quite naturally. Oduche fails to understand this confusing and distorting interpretation of the native religion. He is unable to understand the symbolic meaning of the python in his own native religion due to his ignorance, innocence and indifference. His knowledge of the Bible makes him feel, the other way round. He tells once, "It is not true that the Bible does not ask us to kill the serpent. Did not God tell Adam to crush its head after it had deceived his wife?" (49). But this python epjsode created a lot of disturbances among the natives of Umuaro and also the neighbouring villages. The entire community is unhappy with Ezeulu because he has allowed his son to get converted into a Christian and to commit the unpardonable act. This sin done by Oduche made Ezeulu's enemies raise their voice against him thus making the natives too, suspect him and his priorities. They too gradually turn against him and lose faith in Ezeulu.

Ezeulu declares the Feast of the Pumpkin Leaves for purifying the six villages before they put their crops into the ground. This festival has great purificatory value. The feast of the Pumpkin Leaves has the religious significance of binding the people of the six villages psychologically, socially and spirituality. Hence people from all the six villages gather for the market day and share a courteous relationship. Ugoye, Oduche's mother prays for the purification of the hut which her son has defiled.

'Great Ulu.who kills and .saves. I implore you to cleanse my household of all defilement. If I hare spoken it with my mouth or seen it with my eyes, or if J have heard it with my ears or stepped on it with my fool or if it has come through my children or my friends or kinsfolk let it follow these leaves' (72).

She waves the pumpkin leaves round her head and fling them at Ezeulu.

Meanwhile, the colonial situation in Africa creates certain peculiar problems for the British rulers. They are unable to understand the native language. behaviour, rituals, religion, susperstitions etc. They, therefore, plan to appoint local chiefs as their liasion officers between British administrators and the natives. They appoint Ezeulu, the fetish priest, as one of the Paramount Chiefs on account of his truthful nature. But Ezeulu declines to be "a white man's chief" (175) and angers the British administration, who

imprisons him and detains him for two months. Ezeulu's experience of imprisonment has not only humiliated him but also awakened the feejjng of revenge against his own people. During imprisonment, Ezeulu cannot eat the scared yam or announce the new moons. Angry with his people for letting the British detain him, Ezeulu refuses to eat the yams. When he is released he stubbornly moves the New Yam Festival forward two months. By refusing to announce the feast, the yams cannot be harvested and they rot in the fields causing a famine. When questioned by others for this delay. Ezeulu retorts, " You all know what our custom is. I only call a new festival when there is only one yam left from the last. Today I have three yams and so I know-that the time has not come" (207).

Ezeulu's unwillingness to solve the problem of six villages on the pretext of religious formality make? him lose the public sympathy. He fails to understand the basic truth that it is the clan, which has created its god and not the vice versa. He even fails to realise the fact that gods are meant for protecting and preserving the mankind and not ruining them. He could have easily broken the rigid rules and eaten the remaining yams to prevent his clan from hunger and starvation. But he gives priority to his personal emotions and ignores his duty of the welfare of his community. Though a religious priest and leader, he did not understand the fundamental truth of religion and not surrender his private self to the public self. So, very obviously, as he displeased the community, he has to face the wrath of the community. "Almost overnight Ezeulu had become something of a public enemy in the eyes of all and, as was to be expected, his entire family shared in his guilt" (211). Nwaka; Ezeulu's rival had earlier said about him,': ...I have been watching this Ezeulu for many years. He is a man of ambition, to wants to be king, priest, diviner, all" (27). At this present moment, his assessment of Ezeulu's nature has come true. Ezeulu's egoism has culminated into his uncompromising behaviour. It has also adversely affected the economic life of the natives for they had to buy yams from neighbouring village at high cost.

The problem of starvation and financial scarcity is only due to the non- availability of yams. At the same time the yams in the fields start rotting. The Christian missionaries take advantage of this situation to attract the natives to their religion. They start inviting the people of Umuaro to harvest their yams with donations to the church. The natives are convinced that Ulu, their god, has. turned powerless and cannot save them from the adverse situation. So they turn their back to him and head towards the church with their yams.

The Christian harvest... saw more people than even Goodcountry could have dreamed. In his extremity many a man sent his son with a yam or two to offer to the new religion and to bring back the promised immunity. Thereafter any yam harvested in his fields was harvested in the name of the son (230).

This novel thus shows the final triumph of Christianity over the native African religion as part of the colonial situation. Ezeulu's doubt about this new religion, when he embraced it and sent his son Oduche to adopt it, had finally turned out to be true. The liberal approach of the Christian missionaries is made easy by the disunity among the natives themeselves and this disunity was even more aggravated by the python episode. So to kill or harm a beast, without any grave reason, and that too when it is considered sacred is obviously a sin. But Ezeulu takes no steps to punish his son. Ezeulu, being the chief already has few enemies, but this incident makes more people go against him and suspect him. Consequently they quit him as well as his religion, to adopt the better one. Finally the prophey of Moses comes out to be true "As daylight chases aways darkness so will the white man drive away all our customs" (84).

Conclusion - The python also finds its significance on the cover page of the book. Arrow of God, where the python is shown intermingled with an arrow. The arrow-has a symbolic meaning. Ezeulu is likened to the arrow in the bow of god i.e. Ulu. He acts as a mediator and Ulu directs him in the way he wants. The merging of the python with the arrow highlights its significance and proves that it is also a protagonist along with Ezeulu and certainly also the major part of the most dominating theme of religious conflict.

References :-

1. Achebe, Chinua. Arrow of God. New york : Anchor Books Pub. 1969.
2. Achebe, Chinua. Things Fall Apart. Londen : Heinemann Publication, 1959.
3. Achebe, Chinua. The Trouble with Nigeria. Londen : Henemann, 1983.
4. Anayadike, C. One Against the others : Conflict of Histories God : Colloquium Series. Cornell University, Ithala, 2004.
5. Houston, J. The Hero and the Goddess : New yourk : Ballantyne Books, 1992.

****

Feminist Voices in the Novels of Kamala Markandaya

Minakshi Kumar*

Introduction - Indian women novelists in English have been presenting woman as the centre of concern in their novels. A woman's search for identity is a recurrent theme in their fiction. Kamala Markandaya is one of the finest and most distinguished Indian novelists in English of the post - colonial era who is internationally recognized for her masterpiece "Nectar in a Sieve published in 1954. She has achieved a worldwide distinction by winning Asian Prize for her literary achievement in 1974. Endowed with strong Indian sensibility, she depicts women's issues and problems very deeply in her novels. A woman's quest for identity and redefining her own self finds reflection in her novels and constitutes a significant picture of the female characters in her fiction. Her deep instinctive insight into women's problems and dilemmas helps her in drawing a realistic portrait of a contemporary woman. She explores and interprets the emotional reactions and spiritual responses of women and their predicament with sympathetic understanding.

The chief protagonists in most of her novels are female characters who are in constant search for meaning and value of life. In some of her novels, she presents an existential struggle of a woman who denies to flow along the current and refuses to submit her individual self. In her novels Kamala Markandaya traces a woman's journey from self-sacrifice to self-realization, from self-denial to self-assertion and from self- negation to self-affirmation. The erosion of human values continues and so the voice of Kamala Markandaya which is heard in the novel, is still relevant for we have to protect the eternal human values from decay. In her second novel, "Some Inner Fury" (1955), Kamala Markandaya gives a very vivid and graphic account of the East-West clash in the backdrop of national struggle for freedom, by projecting three wonderful female figures- Mirabai, Roshan and Premala who exhibit rare and unique virtues of love and loyalty, friendship and understanding. We notice a great difference among the female characters of Nectar in a Sieve and Some Inner Fury. While in the first novel, her women are mostly uneducated and unprogressive in their outlook to life, accepting without protest, the kind or cruel treatment of their husbands or society. In the second novel, being educated, they assert their selves and individualities. For example, Mira loves Richard, an Englishman against Govind and her parents' wishes and Premala adopts a child against Kit's wishes. In Some Inner Fury Markandaya projects a national image and patriotic consciousness in myriad forms by presenting the peculiar sensibility of the modern, educated and progressive Indian woman. In fact, like the author, her woman character Roshan has a cosmopolitan outlook and seems to be the truly liberated woman of modern India. In her third novel "A Silence of Desire" (1960) Kamala Markandaya portrays the assault of the views of western scepticism on the oriental faith of Sarojini, the female protagonist.

The novel unfolds a family drama by studying the husband-wife relationship. It reveals how men and women torment themselves and each other by silence on many occasions when they actually require to unburden their hearts by giving vent to their feelings. In her sixth novel, The Coffer Dams (1969), Kamala Markandaya delineates the theme of East-west encounter in the form of a clash between the human values of India and the technological views of the west. Kamala Markandaya portrays the encroachment by the modern Western values on the traditional beliefs and old established relationships within the family and the village. Markandaya has presented the story of two virgins or girls, Lalitha and Saroja, in this novel. The need for individual freedom is the central concern of this novel.

The female characters so deeply rooted in the Indian culture, struggle to be free and pure human beings. whatever she had in her village. She had some identity, a home, a name and fame for her beauty which was appreciated by all as long as she belonged to the village. However, to her utter disgust and shock, all that is lost now, devoured by city monsters or devils in the disguise of the author seems to suggest in the novel that a woman can experience safety and security in her home where she is deeply rooted. Once she becomes a victim to the lust of a male like Mr. Gupta, she is uprooted from her home and village and becomes a nowhere woman, losing her identity A.K. Bhatnagar aptly observes: Lalitha's life is a living example of the tragedy of the modern woman particularly in India (Bhatnagar: 89). The modern western values of urban life destroy Lalitha's self and annihilate her personality

* Ph.D. Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

completely. In this novel Markandaya has presented the existential struggle of a girl who refuses to flow along the wave and denies to surrender herself. However, her effort to find a new self and identity, she gets completely lost. She undergoes much pain and agony and displays a kind of insecurity on account of her traumatic experience and due to the collapse of one value system and the dearth of any sustaining values. However, all these traumatic experiences teach a lesson to Saroja, the younger sister who returns to her village to be secure there and not to be led astray like her sister. Rukmani, Val, Ravi and Srinivas are uprooted by natural and worldly forces which are beyond their control. But Lalitha is uprooted by her own weakness, her ambition to become a film star and thereby get a new name, fame and identity. Her ambition displays the uprooting of human values and culture in Indian society. Kamala Markandaya's ninth novel, The Golden Honeycomb, (1977) a saga of princely life in India, portrays the life of a Maharajah who is merely a puppet in the hands of the British. The novel is written in a political background and is fully charged with the feelings of patriotism and nationalism.

However, Rabi the illegitimate son of Maharajah, becomes a revolutionary since his education is supervised by his mother Mohini and by his grandmother who instil in him the patriotic feelings. Under their influence from head to toe, Rabi can't tolerate his father bowing to the English Viceroy. In this novel also, as in some earlier novels, Kamala Markandaya has glorified the life of a woman Mohini who is presented in a light better than that of other female figures in the novel. Mohini is very clever and wise, full of love and romance and has all the feminine charms and qualities of Shakespeare's Cleopatra. A paramour of the Maharajah she exercises a greater control on him and her son Rabi. She is a kind of liberated woman who is not confined to the four walls of Maharajah's palace. Unbound by the familial or homely ties, she enjoys complete freedom of movement, and though living in colonial days, she appears to be a liberated woman of modern India. In her last novel Pleasure City (1982) Kamala Markandaya strives to bridge the gulf between two cultures of the East and the West, by developing love and intimacy between Rikki, a poor and rustic Indian boy and Tully, an English officer.

As Dr. Kenny, the missionary in Nectar in a Sieve establishes a hospital where the poor Indians may get the treatment for their ailments, Mrs. Bridie in the Pleasure City is running a school for educating the fisherman's children. She is a kind of female missionary ever extending her helping hand to the people of the fishing colony and always sharing their joys and sorrows. Like some great persons, this English lady is a person of simple living and high thinking. Her noble and sublime thoughts associate her not to a particular community, but to the entire humanity. Her character reminds us of Helen in the Coffer Dams for her respect of human beings. She lives and dies for the sake of mankind. Kamala Markandava has enhanced the dignity of human life by creating such elevated female figures in her fiction. By the study of Kamala Markandaya's fiction we can sum up that the feminine voice is heard in nearly all her novels. The one persistent theme that underlies all the novels of Kamala Markandaya is a constant search for identity] mainly by the female protagonists. We witness an internal and external conflict in them] in their process of discerning and affirming their self identity. A. V. Krishna Rao observes that in her novels Kamala Markandaya has shown "the creative release of the feminine sensibility in India." Her female characters such as Rukmani, Mira, Premala, Roshan, Sarojini, Caroline, Anasuya, Nalini, Helen, Vasantha, Lalitha and Mohini all have asserted their identity in their own way. They have been in quest to locate their acceptable place and identity. Nearly all of Markandaya's women characters exhibit a positive and optimistic outlook on life and emerge much more stronger than their male counterparts.

Each one of them responds in her unique way to her dreams for a better and meaningful life. By exercising their own free will, exhibiting their own self, they get fulfilment and recognition in life. In this way they are able to establish their true identity. In her novels Kamala Markandaya has shown that women are not lesser human beings, rather they are sometimes more dignified than men because of their greater human virtues and qualities. It is they who enhance the beauty and charm of life and provide grace and dignity to it. They provide the solid foundation to the edifice of family which is impossible without their active participation. They need to be given their rightful place and dignity in the family and society for their wellbeing. Markandaya has made us hear the pronounced voice of women in her fiction, as it may lead to the welfare of entire mankind. The suppression of the feminist voice may cause havoc in our life. In her fiction Kamala Markandaya has shown a woman's gradual journey from selfeffacement to selfrealization, from self-denial to selfassertion and from self-sacrifice to self-fulfilment. Read with keen interest her novels have elicited wide critical acclaim from both the Indian and foreign critics of repute. She is really the glory of India and pride of the world. By creating such female figures in her fiction, who leave an indelible imprint on our hearts, Kamala Markandaya has immortalized herself in English literature.

References :-

Primary Sources:

1. Kamala Markandaya Markandaya, Kamala. A Silence of Desire. London : John Day Company, 1960.
2. Two Virgins. Delhi: Penguin Books, 2010.
3. Nectar in a Sieve. University of Michigan: John Day Company, 1954.
4. A Handful of Rice. University of Michigan: John Day Company, 1966.
5. Krishna Sobti Listen Girl! Trans. Shivanath. New Delhi: Katha, 2002.
6. To Hell With You Mitro. Trans. Gita Rajan and Raji

Narasimhan. New Delhi: Katha, 2007.

Secondary Sources:

1. Arora, Sudhir K. "Kamala Markandaya in the Postcolonial Space." Indian Women's Writing in English. Ed. Jaydeep Sarangi, T.Sai Chandra Mouli. Delhi: Gnosis, 2008. 161-171. Biwas, Anuradha, A Study of Kamala Markandaya, New Delhi: Murari Lal & Sons, 2011.
2. Dhawan, B.K. Indian Women Novelists and Psycholanalysis, New Delhi: Arise Publishers & Distributors, 2011.
3. Garg, Neerja. Kamala Markandaya's Vision of Life. New Delhi : Prestige Books, 2003. Jain, Jasbir. Women's Writing: Text and Context. New Delhi: Rawat Publication, 1996.
4. Khan, S.K. Studies in Indian Women's Writing in English. New Delhi: Arise Publishers & Distributors. 2011. Print.
5. Mehrotra, Arvind Krishna. A Concise History of Indian Literature in English. Ranikhet: Permanent Black, 2008.
6. Patel, M.F. Indian Women Novelists: Critical Discourses. Jaipur: Aavishkar Publishers, 2010. Roy, Vijay Kumar. Women's Voice in Indian Fiction in English. Ghaziabad: Adhyayan publishers, 2011.
7. Sarangi, Jaydeep, et al. Indian Women's Writing in English. Delhi: Gnosis, 2008. Tambe, Anangha, Social Empowerment of Women. Pune: Kranti Joyti Savitribal Phule
8. Women's Studies Centre, University of Pune, 2009.
9. Verma, Ashok. "Protest as a Replacement Model: A Study of Krishna Sobti's Sunflowers of the Dark." Language in India 12 (2012): 116-125. Web. 19 Jan. 2013.

****

सूफीवाद – साझा संस्कृति के प्रतिबिंब

डॉ. अलीमा शहनाज सिद्दीकी *

प्रस्तावना – भारतवर्ष एक विशाल देश होने के कारण यहाँ विभिन्न संस्कृतियों, धर्मों व सम्प्रदायों ने 'अनेकता में निहित एकता' का अस्तित्व बनाए रखा। जिस प्रकार विभिन्न नदियाँ समुद्र में जाकर विलीन हो जाती हैं, और समुद्र में कोई परिवर्तन नहीं होता, यही वास्तविकता इस भारतीय संस्कृति की भी है। भारत की यही विचित्रता इसे विश्व में अतिविशिष्ट स्थान दिलाती है।

भारतीय संस्कृति की अपनी विशिष्टता के कारण ही इकबाल ने लिखा कि– 'कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी' आगे उन्होंने यह बड़े ही गौरवान्वित होकर लिखा कि– 'यूनान–ओ–मिस्त्र–ओ–रोमा सब मिट गए जहाँ से, अब तक मगर है बाकी नाम–ओ–निशाँ हमारा।' यह संस्कृति अपनी एकता व बुद्धिमता का परिचायक है।

इतिहासकार असद अली का इस विषय पर विचार है कि – 'संस्कृति की सीमा में खान–पान, वेशभूषा, रहन–सहन, साहित्यकला, आचार–विचार, व्यवहार–राजनीति, दर्शन–नीति–रीति, रूचि, धर्म, अर्थ आदि सामाजिक तथा जीवन से संबंधित सभी तत्व आते हैं। और इन सभी के संस्कार, सुधार और विकास से इनका संबंध होता है।'[1] लोक कल्याण व लोक मंगल की भावना को आदर्श सिद्धांत मानते हुए भारतीय संस्कृति गौरव यश गान करती प्रतीत होती है।

हिन्दू धर्म को अपौरुषेय–धर्म कहा जा सकता है। प्राचीनकाल से ही भारत का धर्म एक ऐसा धर्म है, जिसमें विभिन्न देवी–देवताओं की उपासना की जाती है और जाति–व्यवस्था का आधार वैदिक परम्पराएं थी। आरम्भिक वैदिक साहित्यों में जिस अर्थ में वर्ण का प्रयोग हुआ वह मौजूदा जाति व्यवस्था से बिल्कुल भिन्न था। विद्वानों ने यह स्वीकार किया कि– 'भारत में इस आरम्भिक वर्ण–व्यवस्था का कभी कड़ाई के साथ पालन नहीं किया गया यह तो सिर्फ कहने भर के लिए ही है। .... यह विभाजन वास्तव में भारत की जाति–व्यवस्था के ढाँचें को पेश नहीं करता। विद्वानों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि वर्ण–व्यवस्था का आधार श्रम–विभाजन था और यह ब्राह्मणों का षणयंत्र है।'[2] प्रसिद्ध विद्वान मुहम्मद उमर का ये विचार अति महत्वपूर्ण है।

वैदिक काल के आरम्भ में एक वर्ण के लोग दूसरे वर्ण में शामिल हो सकते थे। इसके बावजूद भी न वे अपनी विशिष्टता को खोए और न ही पूर्णतया एक–दूसरे में बिल्कुल विलीन हुए। इस अनोखी व अपने ढंग की दुर्लभ व्यवस्था ने धीरे–धीरे पाँव पसारा। विकास की प्रक्रिया में जाति–बंधन कड़े हो गए और इसी परिस्थिति में मुसलमानों का भारत आगमन हुआ। बी.एन. लुनिया लिखते हैं कि – 'दशमी शताब्दी में अरब लोग भारत के समुद्रतट पर प्रकट हुए और शीघ्र ही समस्त तट पर फैल गये। तुलनात्मक दृष्टि से थोड़े समय में ही राजनीति और समाज में बड़ा प्रभाव प्राप्त कर लिया। यदि एक ओर उनके नेता, मंत्री, जलसेना अध्यक्ष, राजदूत और भूमिकर देने वाले कृषक हो गये तो दूसरी ओर उन्होंने कितनों ही को अपने धर्म की दीक्षा दी, अपने धार्मिक विचारों का प्रचार किया, मस्जिदें निर्मित की और समाधियां तथा कब्रे बनवाई जो उन संतों तथा धर्म प्रचारकों के कार्यो का केंद्र बन गयीं।'[3]

इस विषय में विद्वान रामधारी सिंह दिनकर ने अपनी पुस्तक में समन्वयकारी संस्कृति का उल्लेख करते हुए लिखा कि– 'जब दो देश, दो जातियाँ या दो संस्कृतियाँ आपस में मिलती हैं तब वे भी आपस में एक–दूसरे को प्रभावित करने लगती है। और सैकड़ो–हजारों सालों के बाद मिलकर एक ऐसा रूप पकड़ लेती है, जिसमें उनके बिलगाव का लक्षण शेष नहीं रहता। यही संस्कृति समन्वय का सर्वोत्ताम उदाहरण है।'[4] यही अनूठी विशेषता भारतवर्ष की है।

समन्वय और आत्मसात् करने की जो मूल भारत की सांस्कृतिक विशेषता है उसके आधार पर इस तथ्य का विश्लेषण अवश्य होना चाहिए कि इस्लाम धर्म द्वारा प्रस्तुत 'सूफीमत' और भारतीय मुख्य धारा से उपजी 'संत परम्परा' के बीच वे कौन से तत्व हैं जो एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं व साथ ही एक–दूसरे से संबंध स्थापित करते हैं, और वे अंतर्विरोध भी कौन से हैं जो समन्वित धारा को प्रभावित करते हैं। उनका रेखांकन करना अति–आवश्यक है।

इस प्रक्रिया के तहत इस्लाम धर्म के मूल स्वरूप उसकी विशेषता उसके भीतर विश्व संस्कृति को प्रभावित करने की क्षमता को सामने लाना आवश्यक है। और निश्चित रूप से ऐसे विशेषताओं के प्रवर्तको में सूफी–संतों का नाम अग्रणी रूप से लिया जाना आवश्यक है।

इतिहासकार मलिक मुहम्मद लिखते हैं कि – 'कालान्तर में समय, स्थान व परिस्थितिनुसार इस्लाम के भीतर भी कई प्रश्नों को लेकर कई शाखाएं उपजी। उनमें से एक प्रमुख मुख्य धारा सूफियों की रही है जो न केवल इस्लाम जगत को बल्कि अन्य सांस्कृतिक समाज को काफी गहराई तक प्रभावित किया है।'[5]

भारतवर्ष के जिन परिस्थितियों में सूफी–सन्तों का आगमन हुआ उन परिस्थितियों में उनका प्रभाव निश्चित रूप से भारत के आम जनमानस पर भी पड़ा। अब प्रश्न यह है कि सूफी मत क्या है? इनकी विचारधारा क्या है? इसका स्वरूप ऐतिहासिक विकास पर दृष्टिपात करना आवश्यक है।

'विद्वानों ने सूफी शब्द को सफा (पवित्रता) शब्द की उत्पत्ति बताया है। शेख दातागंज हुज्वेरी का भी मानना है कि 'सफा' से ही 'सूफी' शब्द बना है।'[6] सूफी मत के विषय में विमल कुमार जैन ने अपने मत व्यक्त इस

* अतिथि विद्वान (इतिहास) रानी दुर्गावती शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जिला मण्डला (म.प्र.) भारत

प्रकार व्यक्त किया है– 'सूफी शब्द का प्रचलन चाहे जब हुआ हो, परन्तु इसमें अन्तर्निहित भावना उतनी ही प्राचीन है, जितना विकसित मानव हृदय, क्योंकि सूफी भावना भी मानव में सदैव से तरंगित रहस्य की जिज्ञासा का ही परिणाम है। मानव मन निसर्गत : एक सा है जो सदा आत्मा के मूल की खोज में प्रकट या अप्रकट रूप से विकल रहता है। मुस्लिम साधकों के मन में भी यही भावना देश काल के साधन पाकर उद्बुद्ध हुई है और अंत में सूफीमत के रूप में संसार के समक्ष अर्विभूत हुई।'[7]

कुछ अन्य प्रबुद्ध विद्धानों का कथन है कि सूफीमत का आदम में बीजवपन हुआ, ... और मुहम्म्द (स0अ0व0) में फलागम हुआ।

'सूफी' शब्द के विषय में विद्धानों ने माना है कि सूफीवाद एक ideology (विचारधारा) है, जिनके अपने सिद्धांत, आकांक्षाए एवं आदर्श हैं। वैसे तो सूफी इस्लाम धर्म के ही मुख्य धारा से जुड़े हुए हैं, ऐसा भाषा वैज्ञानिकों और आध्यात्मविदों ने अपने मत प्रकट किए, किन्तु ऐसा कहा जाता है कि कुरआन में 'सूफी' शब्द नहीं आया। स्त्रोतों द्धारा यह प्रमाणित है कि 'पैगम्बर हजरत मोहम्मद (स0अ0प0) ही प्रथम महानतम सूफी थे।' कुछ मुस्लिम विद्धवानों का मत है कि – 'सूफियों के आचार विचार, सिद्धांत तथा साधना पद्धति का आधार कुरान शरीफ और हदीस है। सूफी साधकों ने अपने आचार विचार, सिद्धांत तथा साधना को कुरान एवं सुन्नत, सम्मत बताया है।'[8] सूफियों ने इन्हीं के अनुसार आचरण व्यवहार किया।

कालांतर में सूफियों ने इन्ही के अनुसार आचरण एवं व्यवहार किया। इस संदर्भ में इतिहासकार ताराचंद लिखते हैं कि 'सूफीवाद वस्तुतः एक गहन भक्ति का धर्म था, प्रेम उसका आवेग था, कविता, गीत व नृत्य उसकी आराधना थे, और ईश्वर में विलीन हो जाना उसका आदर्श।'[9] प्रायः सभी सूफी आलिम, फाजिल, कामिल, फकीर, कारी, मोहद्दिस, आरिफ तथा कुरऑन व शरीयत के पक्के पाबंद थे।

आगे उन्होंने लिखा है कि –'अन्य दूसरे धार्मिक संतों के समान, धार्मिक जोश और गहरी व्यवहारिकता का मिश्रण था और वे न सिर्फ एक नए धर्म के पैगम्बर बन गए बल्कि एक नए राष्ट्र के नेता और सर्जक भी बन गए।'[10] वे आगे लिखते हैं कि – 'जिस धर्म का उन्होने उपदेश दिया वह अत्यंत सादा था। उसमें न्यूनतम सिद्धांत और कर्मकाण्ड थे, क्योंकि कुरऑन के अनुसार .... उसका केन्द्रीय सिद्धांत था– ईश्वर एक है और उसका सबसे महत्वपूर्ण कर्मकाण्ड था– दैनिक प्रार्थना। .... सामाजिक पक्ष में उसका सबसे महत्वपूर्ण विशेषता थी– समानता पर और मुस्लिम भाईचारे पर जोर और इसलिए पुरोहित वर्ग की अनुपस्थिति। एक ही ईश्वर के सिद्धांत का मतलब था देवी–देवताओं की पूजा या मूर्तिपूजा का निषेध।'[11] धर्म कोई भी हो प्रत्येक धर्म की गहराई में सदाचारी पवित्र, निश्छल, ज्ञानी व निर्मल हृदय वाले आस्तिक व्यक्ति होते हैं।

सूफियों का अटूट विश्वास था कि – "All is in God" and not that "All is God" '(सब अल्लाह (ईश्वर) में है' और यह नहीं कि 'सब ईश्वर है।') सूफियों का मानना है कि 'अल्लाहो बाकी मिन कुल्ले फानी।' (अर्थ– केवल अल्लाह रहेगा शेष सभी नाशवान है।)

सूफी तत्कालीन परिस्थितियों को पूर्णतः बदलने व जीवन के प्रति नये नजरिये के साथ जनता के बीच प्रवेशित किये और उनके व्यवहार, आत्मज्ञान, आत्म संयम, अनुशासन, दयालुता, मानव प्रेम, सदाचरण व साधना पद्धति जैसे गुणों ने उन्हें मानवप्रेमी बना दिया।

इस प्रकार सूफियों के आचार विचार, सिद्धांत तथा साधना पद्धति दोनों संस्कृतियों के एकता व आपसी समन्वय के दूरगामी परिणाम कहे जा सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अली असद : भक्तिकालीन हिंदी साहित्य पर मुस्लिम संस्कृति का प्रभाव, दिल्ली 1970, पृ. 14
2. उमर मुहम्मद (अनु. जानकी प्रसाद शर्मा) : भारतीय संस्कृति का मुसलमानों पर प्रभाव,प्रकाशन विभाग,सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, 1996, पृ.39
3. लुनिया बी.एन.: इवोल्यशन आफ इण्डियन कल्चर,आगरा, 1969, पृ. 178
4. दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय,लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद,1997, पृ. 122
5. मलिक मुहम्मद : दि फाउण्डेशन ऑफ दि कम्पोजिट कल्चर इन इण्डिया, आकार बुक्स पब्लिकेशनस, 2007, पृ. 39
6. हुज्वेरी शेख : अनु. रेनाल्ड ए. निकोल्सन, कश्फुल महजूब, पृ. 34
7. जैन विमल कुमार : सूफीमत और हिंदी साहित्य, 1955, पृ. 23
8. निजामी, के.ए. : सम एस्पेक्टस आफ रिलीजन एण्ड पालिटिक्स इन इण्डिया ड्यूरिंग दि थरटीन्थ सेंचुरी, दिल्ली 1978, पृ. 25
9. ताराचंद : अनु. सुरेश मिश्र, भारतीय संस्कृति पर इस्लाम का प्रभाव, ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन द्वितीय संस्करण दिल्ली, पृ. 83
10. वहीं, पृ. 58
11. वहीं, पृ. 84

****

Research in Teacher Education

Dr. Kuldeep Singh Tomar *

Abstract - Research and development are mutually supporting concepts.It apples to teacher education also. Large number of researches has been undertaken in this field during the last few decades. More coordinated and intensive research efforts are needed in teacher education. Whereas NCERT and UGC provide funds for all areas in education research, there should be the provision to fund research projects especially on teacher education. If this function is to be discharged seriously, it needs to be allocated separate funds for teacher education research support.

Teacher education at the same time both at elementary and secondary levels should ensure that in pre-service programmes newer research methodologies are taught appropriately. In other words contents of research methodologies should respond to requirement of pre-primary, primary, elementary secondary senior secondary level. in M.Ed. andM.Phil levels exposure to more sophisticated research methodologies could be provided. The knowledge base and skills could be upgraded through in-service programmes.

The word "research" methodology should be interpreted liberally. It should embody action research, survey research, empirical research, phenomenological research, heuristic research, field visits and lab area projects etc. One of the objectives of research in teacher education could be to make critical analysis of policy initiative, and to offer suggestions that could be used in making new policy formulations.

Introduction - Research and development are mutually supporting concepts. It applies to teacher education also. Large number of researches has been undertaken in this field during the last few decades. More coordinated and intensive research efforts are needed in teacher education. Whereas NCERT and UGC provide funds for all areas in educational research, there should be the provision to fund research projects especially on teacher education. If this function is to be discharged seriously, it needs to be allocated separate funds for teacher education research support.

Teacher education at the same time both at elementary and secondary levels should ensure that in pre-service programmes newer research methodologies are taught appropriately. In other words contents of research methodologies should respond to requirement of pre-primary, primary, Elementary Secondary Senior Secondary level. In M.Ed. and M.Phil levels exposure to more sophisticated research methodologies could be provided. The knowledge are base and skills could be upgraded through in-service programmes.

The word "research" methodologies should be interpreted liberally. It should embody action research, survey research, empirical research, phenomenological research, heuristic research, field visits and lab area projects etc. One the objectives of research in teacher education could be to make critical analysis of policy initiative, and to offer suggestions that could be used in making new policy formulations.

The status of Research in Teacher Education - During the last five decades a large number of researches, surveys, etc. have been conducted in teacher education. Characteristics of effective teachers, graphic and numerical rating scales in the assessment of efficiency of teachers through self-rating, peer rating and supervisory ratings, the presage-process-product model are thoroughly employed in the identification of the effective teachers. Classroom interactions and transactions, and improvement in achievement and evaluation have also been on the focus. Curriculum evaluation, organizational climate and its impact on teachers performance, the criterion for admission of prospective teachers and administration of education/ teacher education have also caught the attention of researchers. But planned and purposive approach has been neglected.

The courses of research methodology are weak. They over emphasize certain areas and neglect others. The subjects are taught with the exception of psychology and sociology of education their methods of study do not attract the attention of teachers. Anthropology, History, Philosophy, Management, Finance, Planning and Comparative Education etc. are completely neglected. There are the need for recasting the whole programme/curriculum of research methodology and use of statistics in it. Statistical jargons are used without understanding their meaning, significance and relevance. The Socio-Economic level of Development and Cultural Difference between India and Anglo Saxon countries form where the tools and techniques are imported

*Assistant Professor (Education) Tridev College of Education, Muzaffarnagar (U.P.) INDIA

are not given due consideration. Research in teacher education demands special ability, aptitude and interest. However, it has been reduced to a condition for upward mobility of teachers;Many of the researches serve neither the utilitarian purpose nor do they cater the need of excellence or create additional knowledge or revise the existing one. Along with dissertation, action research and field studies should also be made a compulsory component of M.Ed./M.A. programme.

There are important theme based topics of research, which need attention of researchers in teacher Education/ Education. There are new trends and emerging concepts that need to be researched thoroughly. For illustration, it may be mentioned that "conceptualized multiple intelligence" "Emotional Intelligence", spiritual intelligence have come recently in educational literature and need to be researched. Further, School culture, organizational culture and leadership style need to be re-researched in the context of trends like student autonomy, student unrest, cultural plurality and inclusive education.

It needs to be stated again that researches in teacher education need to be more rigorous in treatment and more focused on objectives. Woolliness of though and diffused coordination have been reported in almost all surveys of Educational Researches in India. Further, there is a marked dearth of researches in the area of perspective planning. Researches in perspective planning need to focus more closely on how teacher education plans are formulated, what is the mechanism of their implementation and monitoring. Perspective plans have their specific significance, as they are not merely crystal-ball gazing exercise. they need professional vision and empirical base-line data. Research in teacher education should also study closely and critically the relevance-excellence-equity syndrome.

As research and development go hand in hand, it is necessary that a mechanism be thought of to disseminate research findings to classroom practitioners and educational planners Mechanical dissemination as is presently done does not serve the purpose. It needs a specialized skill. Teacher educators need to be trained in this skill as a part of research methodology whereby terse, technical and esoteric research language gets transformed into language understood by teachers.

Suggested Themes/Topics of Research - Some of the important themes, for illustrative purposes are given below-

1. Manpower Planning in Teacher Education.
2. Regional Imbalances in Teacher Education.
3. NGO's Role in SarvaShikshya Abhiyan.
4. Grading System in Education and Teacher Education.
5. Preformance of Different Institutions of Teacher Education.
6. Commercialization in Teacher Education.
7. Improving preformance of Teachers/Teacher Educators.
8. Internship programmes.
9. Integrated disciplinary approach in teaching.
10. Role of teacher association and teacher education association.
11. Peace Education.
12. Evaluation of reading materials including textbooks.
13. Human rights education.
14. Language development and tribal and first generation learners.
15. Absenteeism among teachers: causes and remedies.
16. Rural-Urban disparity in performance of student/ teachers.
17. Social distance among teachers, teaching different subject.
18. Social Harmony :Role of Teacher Education.
19. Caused of alienation of educated youth/teachers.
20. Regional variations in teacher education.
21. Duration of teacher education.
22. Models of teacher education and their effectiveness.
23. Learning difficulties in school subjects (identification of hard sports)
24. Styles/models of teaching.
25. Indigenous methods of teaching.
26. Academic versus non-academic expenditure on Teacher Education/Education.
27. Economics of education.
28. Educational Planning.
29. Educational Finance
30. ICT and is impact on teaching and learning,
31. Center-state relationship in teacher education.
32. Teacher Education for the disadvantaged, neglected, oppressed and stigmatized children.

References :-

1. Bernbaum, G., Noble, G. and Whiteside, J.: Intra-Occupational Prestige Differentiation in Teaching, *Pedagogy Europe*, 5:1-59
2. D' Souza Austin A. and Chatterjee, J.N. (1956) *Training for Teaching in India and England,* Orient Longmans.
3. House, Basu, A.N. (ed) (1952) *Indian Education in Parliamentary* Papers, Part I (1832), Asia
4. *Meeting the Challenge of Instructional Improvement (2001)*, Washington: The George Washington University.
5. Mukerji, S. N. (ed) (1968) *Education of Teachers in India,* New Delhi: S. Chand & Co.
6. Parulekar, R.V. (ed) (1945) *Survey of Indigenous Education in the Province of Bombay* (1820-30), Bombay: Indian Institute of Education.
7. Paulsen, Michael B, and Feldman, Kenneth A. (1995): Taking Teaching Seriously.

****

Food Supplement (Protein) for Boosting the Strength of Sportsperson

Dr. Deepak Chandra Maurya*

Abstract - We cannot have good health if do not consume nutritional food. The problem with nutrition is not the quantity of food, but the quality of food we eat. People needed about 40 different kinds of nutrients to be healthy. Organic nutrients include carbohydrates, proteins or amino acids lipids, and vitamins. Inorganic food includes minerals. The primary purpose of the study was to compare the physical variables muscular strength of 30 sportsmen with and without taking Protein as a food supplement with their daily nutritional diet. For the study only 30 male sportsmen were selected, their ages ranged between18-23 years. We observed the effect of extra protein powder on 30 sportsmen taking extra protein powder with their daily nutritional diet. That shows a positive effect on the muscular strength of selected subjects is chosen for the study.

Keywords- Nutritional value, sports nutrient, Protein Powder, Strength, Sportsmen.

Introduction - Physical education seems to have taken a new turn in the form of sports sciences. As a matter of fact that the research now a day's embraces knowledge from various disciplines of human sciences. In India too in recent years, some research work had been going on in the basic discipline, pertaining to sport. The primary purpose of the study was to compare the physical variables [muscular strength] of 30 athletes with and without taking Protein as a food supplement with their nutritional diet. We cannot have good health if do not consume nutritional food according to the type of work or activity. The problem with nutrition is not the quantity of food, but the quality of food we eat. People needed about 40 different kinds of nutrients to be healthy. Organic nutrients include carbohydrates, proteins or amino acids lipids, and vitamins. Inorganic food includes minerals. Water is sometimes included in a listing of nutrients. We observed that 30 sportsmen include protein powder extra as a food supplement in their regular diet results are amazing, muscular strength of sportsmen is increased.

Nutrition: Nutrition is a process of providing or obtaining the food necessary for health and growth.

Material and Methodology - The primary purpose of the study was to compare the physical variables of sportsmen having extra protein powder as a food supplement in their regular diet. We were collected the data of 30 sportsmen before starting taking Protein powder as a food supplement and then after 3 months continuously giving Protein powder as a food supplement. Only male players were selected for this study and their ages ranged from 18-23 years. Selection of variables and criterion measurement: Different kinds of activities and bodily movements required different kinds of physical variables to perform different movements, in strength dominating sports involves Muscular strength. Hence in the present is a study we selected the muscular strength as variables:

Test for Measuring Muscular Strength: It was measured by several sit-ups performed in one minute The data was collected for strength administering their respective tests. The tests were administered at the indoor gymnasium hall of Mahamaya Stadium, Ghaziabad.

Result and Discussion - To observe the difference between muscular strength of the subjects selected for the study 30 sportsmen before start taking Protein powder as a food supplement and then after 3 months continuously giving protein powder as a food supplement, the data collected was analyzed using t-Test. The level of significance was set at 0.05 levels.

Table 1 indicates the mean and-Ratio of sportsmen taking protein powder as a food supplement include in their daily diet. The result of this study showed that there was a significant difference between the Muscular Strength of sportsmen having protein powder as a food supplement.

Protein as food supplement	Mean	F	Σdf^2	S.D.	't' Ratio
Yes	20.7 21	21	287	2.87	1.902
No	19.4	18	278	2.45	

References:-

1. Chattergee C L (1980) Human Physiology, 19th ed. Calcutta; Medical allied agency p-297
2. Fuglie, L. (2005) The Moringa Tree: A local solution

*Department of Physical Education and Sports, Digamber Jain (P.G) College, Baraut (Baghpat) (U.P.) INDIA

to malnutrition. Church World u Service, Dakar. www.moringanews.org/documents/Nu trition .pdf. (accessed April 2013).

3. Gopalan C, Sastri R B VandBalasubramanian SC (1981) Nutritive values of Indian foods. National Institute of Nutrition, Indian Council of Medical Research, Hyderabad, India.
4. Mins. Gee. (1975) Ed. The Sport book. New York brehait and Winston p-5.
5. Phillips A and Harnonk J (1974) Measurement and Evaluation in Physical Education,New York Harper and Bros. Publication.

****

मृच्छकटिके लोककलासामाजिकदशाश्च

डॉ. नरेन्द्रकुमारः*

प्रस्तावना – ''मृच्छकटिकम्'' संस्कृतसाहित्ये प्रसिद्धमहाकविना शूद्रकेण विरचितं एकं विशिष्टं प्रकरणमस्ति। मृच्छकटिकनाटकं सफलं सामाजिकं नाटकं सिद्धम्। संस्कृतसाहित्ये सर्वप्रथममस्मिन्नेव नाटके राजवंशातिरिक्तः तथा निम्नवर्गस्य सामाजिको जनः नायकः दृश्यते। अस्य कथानकं राजभवनस्य संकुचितवृत्तात् बहिः सामान्यजनैः संकुलः राजमार्गेण सम्बद्धं अस्ति। प्राचीनपरिपाटीं त्यज्याभिनवां नाट्यकलां गृह्णाति शूद्रकः। मृच्छकटिकनाटके तत्कालीनसमाजस्य प्रतिबिम्बं विद्यते। ''साहित्यं समाजस्यादर्शः'' इत्याभणकमस्मिन्नेव नाटके चरितार्थं दृश्यते।

अनेन रुपकेन ज्ञायते यत् तत्र समाजे वर्णव्यवस्था प्रचलिता। यथा द्वितीयेऽङ्के गणिकावसन्तसेना कथयति– ''पूजनीयो में ब्राह्मणः।''[1]

एवमेव नवमेऽङ्के आयाति– ''अयहि पातकी विप्रो न वध्यो मनुरब्रवीत्।''[2]

ब्राह्मणानां कर्म पठनं पाठनं, यजनं, दानं आसीत्। विदूषकः ब्राह्मणः भवति। न्यायालयेषु कायस्थः लेखकार्यं करोति स्म। यथा नवमेऽङ्के ''कायस्थ–सर्पास्पदम्''[3]कथ्यते। मृत्युदण्डविधाने चाण्डालः[4]कर्मबद्धः भवति स्म।

तस्मिन् काले बहुपत्नीप्रथा आसीत्। ब्राह्मणोऽपि असवर्णस्त्र्या सह विवाहं निषिद्धं नासीत्। पत्युः मरणानन्तरे सहमरणं प्रथा प्रचलिता।[5]विवाहेतरप्रणयसम्बन्धः मान्यः आसीत्। यथा शकारः ''काणेलीमातः''[6]इत्यमिधानेन प्रसिद्धः आसीत्। समाजे स्त्रीणां दशा सम्मानिता आसीत्। गणिका कुलवधू च इति द्वे वर्गे आसन्। गणिकाः धनसम्पन्नाः आसन्। वसन्तसेनायाः सदनं सुखसमृद्धिपूर्णं आसीत्।[7]परन्तु गणिकया सह मैत्री सम्मानजनकः नासीत्। यदा न्यायालये न्यायधीशः चारुदत्तां पृच्छति– आर्य, गणिका तव मित्रम्? तदा चारुदत्ताः लज्जां अनुभवति।[8]दासप्रथाऽपि प्रचलिता। तेषां क्रयविक्रयणमपि भवति स्म। धनं दत्तवा तेषां मोचनमपि भवतिस्म। यथा– आर्यकस्य आज्ञया स्थावरकचेटस्य दासत्वात् दासवात् मोचनं दर्शितः।[9]

मृच्छकटिके चारुदत्ताः **''श्रेष्ठिचत्वरे''**[11]निवसति स्म। अनेन ज्ञायते यत् तस्मिन् काले जात्यानुसारेणं नगरेषु स्थानस्य वर्गीकरणं भवति स्म। रात्रौ नगरस्य मुख्यद्वारं पिहितं भवित स्म। द्वारपालः तत्रैव तिष्ठति स्म। आवागमनस्य साधनानि आसन्– रथाश्वः, गजः, वृषभयुक्ता शकटिका इत्यादीनि। नाना वृत्तिहेतवः आसन्।

तस्मिन् काले कलाः उन्नताः आसन्। संगीतकला[12]चित्रकला [10]मूर्तिकला संवाहनकला[13]चौर्यकला[14]चापि वर्णितः सन्ति। मृच्छकटिके तृतीये अङ्के रेभिलस्य गृहे सङ्गीतगोष्ठ्यां चारुदत्ताः उपस्थितः आसीत्। रात्रौ मार्गे सः वीणायाः प्रशंसायां अवोचत्–

''वीणा हि नाम असमुद्रोत्थितं रत्नम्।''[15]

[16]चतुर्थे अङ्के वसन्तसेना चारुदत्तस्य चित्रं दर्शयति। [17]द्वितीये अङ्के दारुप्रतिमायाः पाक्षाणप्रतिमाया च उल्लेखं प्राप्यते।

तृतीयेऽङ्के शर्विलकस्य चौर्यकलायाः चित्रणं प्राप्यते। तत्र वर्णनं लभते यत्– स्त्रिषु प्रहारं, भयभीते जीवे प्रहारं वर्जितं ब्राह्मणस्य गेहे चौरकर्म न पूजास्थले चौरकर्म वर्जितं शिशो अपहरणं वर्जितं इत्यादयः। चौराणामपि केचन् नैतिकनियमाः आसन् येषां पालनं समुचितरूपेण भवतिम।

मृच्छकटिके वर्णनैः चित्रणैः प्रतीयते यत् तस्मिन् काले शासने आर्थिकसमृद्धि उन्नताः आसीत्। उज्ज्यनीनगरी अट्टालिकाभिः संवृता आसीत्। तत्र गणिकाः धनवैभवैः युक्ताः समृद्धिशालिन्यः दरीदृश्यन्ति। जनानां पार्श्वे स्वर्णनिर्मितानि क्रीडकानि आसन्। तैः तेषां शिशवः क्रीडन्ति स्म।[18]वसन्तसेना रोहसेनं स्वर्णशकटिका अदद्यात्। वहुमूल्या रत्नमालायाः वर्णनमपि प्राप्यते।

द्यूतक्रीडाऽपि प्रचलिता। तस्यां क्रीडायां चापि धनानां प्रचुरमात्रेण आदानं प्रदानं वा भवति स्म। द्यूते पराजिते सन् जनः ऋणं धार्यते स्मः। तस्य ऋणस्य प्रतिकारोऽपि भवितव्यं स्म। वसन्तसेनयाऽपि संवाहकस्य ऋणात् मोचनं अभवम्। द्यूतक्रीडा जनानां वृत्तिरपि आसीत्। यथा द्वितीयेऽङ्के संवाहकस्योक्तिः दर्शनीया–

''कलेति शिक्षिङ्गता आजीविकेदानीं संवृता।''[19]

यज्ञाः पूजनाः बलिः तर्पणं। इत्यादयः कर्म प्रचलन्ति स्म।

जनाः उपवासमपि धार्यते स्म। दानकर्मणि जनाः अनुरक्ताः आसन्। ईष्टदेवानां कृते श्रद्धा आसीत्। बौद्धधर्मस्य प्रचारः प्रसारश्चासीत्। बौद्धभिक्षुकानां दर्शनं अशुभं आसीत्।[20]नाना बौद्धमठाः आसन्। यथा दशमे अङ्के चारूदत्तास्योक्तिः–

''तत्पृथिव्यां सर्वविहारेषु कुलपतिरयं क्रियताम्।''[21]

मृच्छकटिके राजनीतिदशा सुष्ठुरूपा नासीत्।

देशः लघुलघुराज्येषु विभक्तः। नृपाः स्वच्छन्दाः आसन्। न्यायधीशः तस्य सेवकः भवति स्म। तत्तात्कालिकाः समस्ताः व्यवहाराः न्यायालये वादप्रक्षेपाः नीतयश्च वर्णनं स्थले स्थले समायाताः। नगराध्यक्षाणां नागरिकाणां च जीवनस्य प्रदर्शनं गौरवं भजते। सामाजिकानां यथार्थचित्रणं जीवनस्य वास्तविकतायाः चित्रणञ्च विद्यते। नृपः पालकस्य आर्यकस्य च राजनैतिकी कथा कौशलेन वर्णिता। व्यवहारिक ज्ञानं तु पदे पदे मिलति। तत्र समसामयिकस्य समाजस्य यथार्थचित्रणमुपलभ्यते। मृच्छकटिके अवांछितनृपान् प्रति प्रजायाः रोषः द्रोहः स्पष्टरुपेण परिदृश्यते। तत्र जनमतप्रभुत्वं स्थापितः। सप्तमे अङ्के आर्यकापहरणे इदं स्पष्टं जायते।[22]

शकारः न्यायधीशं विभेति यत् सः न्यायधीशः मम अभियोगं न श्रूयते

* सहायकाचार्यः, संस्कृतप्राच्यभाषाविभागे, चौधरीचरणसिंहविश्वविद्यालये, मेरठनगरे (उ.प्र.) भारत

तर्हि अहं राज्ञः श्यालकः न्यायधीशस्य पदच्युतिः कर्तुं क्षमः।[23] न्यायधीशस्य पार्श्वे समुचितपूर्णरुपेण दण्डस्य आदेशपालनस्य शक्ति नासीत्। दण्डव्यवस्थायां नृपाणां हस्तक्षेपः भवति स्मः। यदा चारुदत्तस्य विरुद्धः अभियोगः सिद्धयति तदा न्यायाधिकरणिकः स्वनिर्णयं राज्ञः पार्श्वे प्रेषयति। नृपतिश्च मृत्युदण्डस्याज्ञांदाति।[24]

राज्ञः सम्बन्धिनः प्रशासने एवं हस्तक्षेपः कुर्वन्ति स्मः। राजकर्मकारवर्गः परस्परं कहलहयति। यथा– षष्ठे अङ्के वीरकचन्दनयोः मध्ययो कलह मृच्छकटिके प्रदर्शिता।[25]

तस्मिन् काले शान्तिव्यवस्था निम्ना आसीत् दुर्व्यवस्थया सिंहासनस्य पालकः क्षणे एव परिवर्तितः जातः। मृच्छकटिके राजपरिवर्तनस्य रहस्यं अस्य द्योतकः अस्ति।[26]

एवं नाटकस्य सर्वाणि पात्राणि सामाजिकानि तत्प्रतिनिधयश्च सन्ति। न्यायालयस्य वर्णने प्राप्यते तत्कालिक न्यायव्यवस्था–

चिन्तासक्तनिमग्नमन्त्रिसलिलं, दूतोर्मिशङ्काकुलम्।
पर्यन्तस्थितचारनक्रमकरं नागाश्वसिंहाश्रयात्।
नानावासक– कङ्क– पक्षिरुचिरं कायस्थसर्वास्पदं
नीतिक्षुण्णतटं च राजकरणं हिंस्रैः समुद्रायते।।[27]

संहाराख्ये दशमेऽङ्के[28]राजानं पालकं

–निहत्य आर्यकः उज्जयिनी राज्याधिपः जायते। एवं पालकस्यार्यकस्य च राजनैतिकी कथायाः अत्र दर्शनम्।

अनेनप्रकारेण शूद्रकः मृच्छकटिके नाटके यत्र तत्र समाजस्य, राज्ञः, राजकर्मकस्य वेश्यायाः चौरस्य च एतादृशं चित्र प्रस्तौति यत् नाटकपठनेन तत्कालीनसमाजस्य चित्रम् अस्माकं पुरतः आलिखितचित्रमिव प्रतीयते। किमधिकं मृच्छकटिकनाटकं सफलं सामाजिकनाटकमिति न केषाचित् विमतिः।।

सन्दर्भाः

1. मृच्छकटिके, द्वितीये अङ्के।
2. मृच्छकटिके, नवमे अङ्के
3. तत्रैव, नवमे अङ्के
4. तत्रैव, दशमे अङ्के
5. तत्रैव, दशमे अङ्के
6. तत्रैव, प्रथमे अङ्के
7. तत्रैव, चतुर्थे अङ्के
8. तत्रैव, नवमे अङ्के
9. तत्रैव, द्वितीये अङ्के
10. तत्रैव, तृतीये अङ्के
11. तत्रैव, प्रथमे अङ्के
12. तत्रैव, तृतीये अङ्के
13. तत्रैव, तृतीये अङ्के
14. तत्रैव, तृतीये अङ्के
15. तत्रैव, तृतीये अङ्के
16. तत्रैव, चतुर्थे अङ्के
17. तत्रैव, द्वितीये अङ्के
18. तत्रैव, षष्ठे अङ्के
19. तत्रैव, द्वितीये अङ्के
20. तत्रैव, अष्टमे अङ्के
21. तत्रैव, दशमे अङ्के
22. तत्रैव, सप्तमे अङ्के
23. तत्रैव, नवमे अङ्के
24. तत्रैव, नवमे अङ्के
25. तत्रैव, षष्ठे अङ्के
26. तत्रैव, दशमे अङ्के
27. तत्रैव, दशमे अङ्के
28. तत्रैव, दशमे अङ्के

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

मीडिया में वंचित समाज के पत्रकार एवं डाईवर्सिटी

महेश कुमार वर्मा* डॉ. कुंजन आचार्य **

प्रस्तावना – मुख्यधारा के मीडिया में दलित आदिवासी व पिछड़ों के प्रतिनिधित्व पर हमेशा सवाल खड़ा होते रहे हैं। 2006 में 'सीएसडीएस' के सर्वे को भले 15 साल हो गए लेकिन मीडिया में दलित आदिवासी व पिछड़ो के प्रतिनिधित्व की स्थिति अभी भी यथा बनी हुई हैं। मुख्यधारा की मीडिया में दिखाई और प्रकाशित खबरों से ही पता लग जाता है कि खबरों के माध्यम से मीडिया के संस्थानों में किन जातियों का वर्चस्व है। पूरी दुनिया में मीडिया के माध्यम से बदलाव हो रहे है, जबकि भारत का मुख्यधारा मीडिया अभी जातिवादी दृष्टिकोण को अपना रहा है। क्या ऐसे में मीडिया के स्तंभ पर भारत की बहुल्य आबादी वाला वर्ग जिससे हम आसान शब्दों में बहुजन कहते है वो यकीन कर रहा है?

गैर-सरकारी संगठन 'ऑक्सफैम व न्यूजलॉन्ड्री' नामक मीडिया संस्थान ने एक सर्वे जारी किया हैं। इसके मुताबिक मीडिया के सभी स्वरूपों फिर चाहे वे अखबार हों या न्यूज चैनल या फिर ऑनलाइन न्यूज पोर्टल सभी में वंचितों की हिस्सेदारी नगण्य हैं। मीडिया में पिछड़े और वंचित समूहों की आवाज़ क्यों नहीं सुनाई देती? क्यों वंचितों के सवाल मुख्यधारा के मीडिया में सिरे से ग़ायब हैं? कमज़ोर तबक़ों के सवालों की अनदेखी क्यों की जाती हैं? ये ऐसे सवाल हैं जो अक्सर हमारे मन में कौंधते हैं। लेकिन इनका जवाब नहीं मिलता। लेकिन हाल ही में एक ग़ैर-सरकारी संगठन ऑक्सफैम इंडिया और मीडिया संस्थान न्यूज़लॉन्ड्री ने एक रिपोर्ट जारी की हैं। इस रिपोर्ट का विश्लेषण करने पर ऊपर लिखे सवालों का जवाब कुछ हद तक मिल जाता हैं।

'हू टेल्स अवर स्टोरीज़ मैटर्स : रिप्रेजेंटेशन ऑफ मार्जिनलाइज़्ड कास्ट ग्रुप्स इन इंडियन न्यूज़रूम्स' नाम की यह रिपोर्ट बताती हैं कि भारतीय मीडिया के तमाम न्यूज़रुम वंचितों की आवाज़ से वंचित हैं। यानि यहां काम करने वाले अधिकतर लोग सवर्ण हैं जिनके अपने सरोकार हैं। अपने अधययन में ऑक्सफैम-न्यूजलॉन्ड्री ने पाया हैं कि भारतीय मीडिया में अनुसूचित जाति व जनजाति के लोग नज़र ही नहीं आते जबकि अनुसूचित जातियों के लोगों का प्रतिनिधित्व भी बतौर पत्रकार न के बराबर हैं।'[1]

सारणी संख्या – 1: अमर उजाला में पत्रकारों व स्तंभकारों की जाति

हिंदी अखबार	पत्रकार	स्तंभकार
अमर उजाला		
सवर्ण	62.6	53.4
आदिवासी	0.5	0.8
दलित	5.7	6.7
ओबीसी	10.5	8.7
जाति उपलब्ध नहीं	6.1	5.9
जाति बताने से इंकार	14.6	24.5

स्रोत : ऑक्सफैम-न्यूजलॉन्ड्री सर्वे

सारणी संख्या – 2 : दैनिक भास्कर में पत्रकारों व स्तंभकारों की जाति

हिंदी अखबार	पत्रकार	स्तंभकार
दैनिक भास्कर		
सवर्ण	68.2	56.2
आदिवासी	0.3	0.4
दलित	4.4	9.9
ओबीसी	10.6	11.6
जाति उपलब्ध नहीं	3.1	4.5
जाति बताने से इंकार	10.4	14.8

स्रोत : ऑक्सफैम-न्यूजलॉन्ड्री सर्वे

सारणी संख्या – 3 : हिन्दुस्तान के पत्रकारों व स्तंभकारों की जाति

हिंदी अखबार	पत्रकार	स्तंभकार
हिन्दुस्तान		
सवर्ण	61.1	54.6
आदिवासी	1.4	1.1
दलित	6.7	6.5
ओबीसी	4.4	8.5
जाति उपलब्ध नहीं	3.9	8.1
जाति बताने से इंकार	19.6	18.2

स्रोत : ऑक्सफैम-न्यूजलॉन्ड्री सर्वे

सारणी संख्या –4 : द इकोनॉमिक टाइम्स में पत्रकारों व स्तंभकारों की जाति

अंग्रेजी अखबार	पत्रकार	स्तंभकार
द इकोनॉमिक टाइम्स		
सवर्ण	70.1	54.8
आदिवासी	1.1	1.2
दलित	4.5	5.1
ओबीसी	5.6	4.7
जाति उपलब्ध नहीं	4.5	5.6
जाति बताने से इंकार	14.3	22.6

स्रोत : ऑक्सफैम-न्यूजलॉन्ड्री सर्वे

* शोधार्थी (पत्रकारिता विभाग) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** विभागाध्यक्ष (पत्रकारिता विभाग) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

सारणी संख्या – 5 : द हिन्दू में पत्रकारों व स्तंभकारों की जाति

अंग्रेजी अखबार	**पत्रकार**	**स्तंभकार**
द हिन्दू		
सवर्ण	52.1	46.3
आदिवासी	0.5	0.4
दलित	5.3	7
ओबीसी	4.4	10
जाति उपलब्ध नहीं	8.8	10
जाति बताने से इंकार	26.1	26.2

स्रोत : ऑक्सफैम–न्यूजलॉन्ड्री सर्वे

सारणी संख्या – 6 : दी इंडियन एक्सप्रेस में पत्रकारों व स्तंभकारों की जाति

अंग्रेजी अखबार	पत्रकार	स्तंभकार
दी इंडियन एक्सप्रेस		
सवर्ण	58.1	51.4
आदिवासी	0.5	0.7
दलित	5.5	6.7
ओबीसी	5.4	6.4
जाति उपलब्ध नहीं	13.4	11.5
जाति बताने से इंकार	14.1	19.4

स्रोत : ऑक्सफैम–न्यूजलॉन्ड्री सर्वे

सारणी संख्या – 7 : दी टाइम्स ऑफ इंडिया में पत्रकारों व स्तंभकारों की जाति

अंग्रेजी अखबार	पत्रकार	स्तंभकार
दी टाइम्स ऑफ इंडिया		
सवर्ण	65.6	53.8
आदिवासी	0.3	0.9
दलित	2.9	5.1
ओबीसी	3.8	4.4
जाति उपलब्ध नहीं	9.9	9.4
जाति बताने से इंकार	14.6	23.6

स्रोत : ऑक्सफैम–न्यूजलॉन्ड्री सर्वे

मीडिया सर्वे रिपोर्ट – अक्टूबर 2018 से मार्च 2019 के बीच 7 टीवी चौनलों पर प्रसारित हुए बहस के कार्यक्रमों को जिन 47 एंकरों ने संचालित किया उनमें 33 सवर्ण थे। इनमें एक भी एंकर आदिवासी या दलित नहीं था। इन चौनलों में राज्यसभा टीवी, आज तक, न्यूज 18, इंडिया टीवी, एनडीटीवी इंडिया, रिपब्लिक भारत, और ज़ी न्यूज शामिल हैं।[2]

मीडिया में वंचितों की हिस्सेदारी को लेकर पहले भी सर्वेक्षण रिपोर्ट सामने आए हैं। मसलन 2006 में मीडिया स्टोडीज़ ग्रुप, दिल्ली के अनिल चमड़िया और सीएसडीएस के योगेंद्र यादव ने 37 मीडिया संस्था नों का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि मीडिया में 315 प्रमुख पदों में से फैसला लेने के स्तर पर महज़ एक फीसदी लोग ही ऐसे हैं जिनका ताल्लुक़ अन्य पिछड़ा वर्ग से था। हालांकि प्रमुख पदों पर ओबीसी की हिस्सेदारी 4 फीसदी थी। इसके उलट फैसला लेने वाले पदों पर 71 फीसदी सवर्ण क़ाबिज़ थे।[3]

इसी तरह शिक्षाविद् रॉबिन जेफ्री ने दस साल तक, अलग–अलग शहरों में, कई समाचार समूहों पर शोध किया। इसके बाद उन्होंने 'इंडियाज़ न्यूज़पेपर रेवोल्यूशन' नाम से किताब लिखी। इसमें उन्होंने दावा किया कि दलित या आदिवासी मालिक और संपादक तो दूर उन्हें कोई दलित पत्रकार भी नहीं मिला। बहरहाल, जब वंचितों को मीडिया में जगह ही नहीं मिलेगी और वे ख़बर ही नहीं लिखेंगे तो मीडिया में उनके सरोकार दिखेंगे कैसे? जनसरोकार और वंचितों की आवाज़ उठाने के लिए उन लोगों का होना ज़रूरी हैं जो स्वयं भुक्तभोगी हैं। मीडिया में जब तक वंचित तबक़ों का प्रतिनिधित्व नहीं बढ़ेगा और निर्णायक पदों तक उनकी पहुंच नहीं होगी तब तक उनसे जुड़ी ख़बरों में ईमानदारी खोजना अपने आप में बेमानी हैं।

जयपुर के मीडिया संस्थानों में दलित पत्रकार – जयपुर में लगभग 100 के लगभग दैनिक समाचार पत्र,इलेक्ट्रॉनिक मीडिया चौनल्स एवं समाचार एजेंसियां काम कर रही हैं।

सारणी संख्या – 8 : राज्य के बाहर से प्रकाशित समाचार पत्र एवं प्रतिनिधि

क्र.	समाचार पत्र	प्रतिनिधि
1.	हिंदुस्तान टाइम्स	राकेश गोस्वामी
2.	इंडियन एक्सप्रेस	हमजा खान
3	जनसत्ता	राजीव जैन
4	टाइम्स ऑफ इंडिया	कुणाल मजूमदार
5	पंजाब केसरी	आकाश चोपड़ा

स्रोत : सूचना एवं जनसंपर्क विभाग: प्रेस प्रतिनिधियों की सूची

सारणी संख्या – 9 : राज्य में प्रकाशित समाचार पत्र एवं प्रतिनिधि

क्र.	समाचार पत्र	प्रतिनिधि
1	राजस्थान पत्रिका	भुवनेश जैन
2	दैनिक भास्कर	लक्ष्मी प्रसाद पंत
3	दैनिक नवज्योति	दीनबंधु चौधारी
4	राष्ट्रदूत	राकेश शर्मा
5	समाचार जगत	शैलेंद्र गोधा

स्रोत : सूचना एवं जनसंपर्क विभाग: प्रेस प्रतिनिधियों की सूची

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया

सारणी संख्या – 10 : राज्य में प्रसारित न्यूज़ चौनल्स एवं प्रतिनिधि

क्र.	समाचार पत्र	प्रतिनिधि
1	दूरदर्शन समाचार (जयपुर)	पवन सिंह फौजदार
2	आकाशवाणी(जयपुर)	जितेंद्र के द्विवेदी
3	पीआईबी, भारत सरकार	प्रेम भारती
4	आज तक	शरद कुमार
5	एनडीटीवी	हर्षा कुमारी सिंह

स्रोत : सूचना एवं जनसंपर्क विभाग: प्रेस प्रतिनिधियों की सूची

समाचार एजेंसी

सारणी संख्या – 11 : राज्य मेंसमाचार न्यूज़ एजेंसीएवं प्रतिनिधि

क्र.	समाचार पत्र	प्रतिनिधि
1	ए एन आई	राकेश जोशी
2	एच एन एन न्यूज	मनोज शर्मा
3	यू एन आई/वार्ता	सुरेश पारीक
4	भाषा/पीटीआई	संदीप दहिया
5	हिंदुस्तान समाचार	ईश्वर बैरागी

1. उपरोक्त सूचना एवं जनसंपर्क विभाग, स्रोत : सूचना एवं जनसंपर्क विभाग: प्रेस प्रतिनिधियों की सूची

राजस्थान सरकार द्वारा प्राप्त जानकारी के मुताबिक इन मीडिया

संस्थानों के प्रतिनिधियों की सामाजिक स्थिति को देखें तो साफ तौर पर जाहिर होता हैं कि लगभग 95 फीसदी सवर्ण वर्ग से आते हैं, जिसमें एक मुस्लिम तथा एक दलित समाज के हैं।[4]

निष्कर्ष – मीडिया में दलित – बहुजन समाज के प्रतिनिधित्व को लेकर कई गैर सरकारी संस्थाओं ने सामाजिक सर्वे किया जिसमें लगभग ऐसी ही स्थिति बनी हुई हैं। सामाजिक सर्वे के मुताबिक मीडिया एवं सामाजिक विज्ञान शास्त्रियों का मानना हैं कि सवर्ण समाज से संबंध रखने वाले पत्रकार अधिकतर घोर हिंदुवादी एवं दलित – बहुजन विरोधी होते हैं। जब उनके सामने हिंदू और गैर हिंदू विषय को लेकर कवरेज का विश्लेषण करना होता हैं। तो वो स्वाभाविक तौर पर हिंदू मानसिकता को दर्शाते हैं, और वहीं सवर्ण एवं दलित समाज के संवैधानिक अधिकार को लेकर खबर का कवरेज एवं विश्लेषण करना होता हैं, सवर्णवादी अक्सर पत्रकार दलित विरोधी मानसिकता रखकर अपनी पत्रकारिता करते हैं। तो ऐसे में हम देख सकते हैं, कि तमाम समाचार पत्र एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के प्रतिनिधि सवर्ण समाज के हैं। उनका सामाजिक एवं सांस्कृतिक विचार स्वाभाविक तौर पर सवर्ण समाज के हक की तरफ जाता हैं, और दलित – बहुजन समाज मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ समझकर मुगालते में रहता हैं। और यही नकारात्मक धारणा के मीडिया संस्थान जो सवर्णवादी मानसिकता से परिपूर्ण हैं। वह दलित – बहुजन समाज को मीडिया के मार्फत गुमराह करता हैं।

अत:अभी तक जयपुर शहर एवं जयपुर संभाग के स्तर पर मीडिया एवं दलित मामलों पर कवरेज के विषय पर मौलिक एवं प्रमाणिक शोध भी नहीं हुआ हैं, एवं राजस्थान के सातों संभागों में से जयपुर संभाग में सबसे अधिक दलित आबादी हैं। यहां अब तक की मीडिया और दलित विषय के अंतर्विरोध को समझने के लिए सामाजिक विश्लेषण आधारित शोध नहीं किया गया हैं। अत: इन सभी कारणों के मुताबिक जयपुर संभाग का चयन किया गया था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सैयद ज़ैग़म मुर्तज़: न्यूज चैनलों में 90 फीसदी महत्वपूर्ण पदों पर सवर्ण काबिज
2. सूचना एवं जनसंपर्क विभाग: प्रेस प्रतिनिधियों की सूची
3. वही.
4. वही.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

A Study of Work-Life Balance in the Pharmaceutical Sector in India

Manoj Gaur* Dr. Shalini Sinha**

Abstract - The present clear concern in the pharmaceutical sector is Work-Life Balance (WLB). Representatives always are expected to succeed and progress at work, while also leaving time for family and recreation for some. Adjusting these two limitations causes representatives to become exhausted, and as a result, businesses have identified this as a pressing requirement and have begun to implement Work-Life Balance processes, strategies, and policies in order to improve worker resolve, inventiveness, and efficiency. Work-Life Balance does not imply working fewer hours to meet personal demands at the sacrifice of hierarchical utility. Honestly speaking, it is to work for a living while also continuing to build one's personal life.The Work-Life Balance exercises help to keep employees on track and reduce truancy. This paper explains the choices available to managers and representatives when it comes to connecting Work-Life Balance procedure for both organizational and personal accomplishment.
Keywords- Work-life balance, Pharmaceutical Industries, strategies for employees, strategies for employers.

Introduction - Progress and happiness in professional and private relationships are the front and back of a coin of vital significance in everyday life. We can't have one without the other, and a coin with only one side doesn't exist either. As a result, the effective folks are frequently uncomfortable or not as happy as they expected to be. In this way, life's entire value cannot be achieved without accomplishments and enjoyment. Burnout can be avoided by placing a high value on both achievement and satisfaction in everyday life. The basic ideas are used as major elements of the day, with the purpose of making them straightforward to implement.

Work-life motivations can be incorporated into business processes and human resource frameworks to increase representative performance in an organization. The traditional mindset of only providing work-life projects to address the issue of consistent loss should be changed, and institutions should constantly strive to improve their business process by changing the authoritative culture, resulting in optimal integrated solutions for work, family, and community. Representatives were urged to join companies where the Employment Balance is cultivated as a way of life and in day-to-day operations.

Unbalanced Work-Life as a Result of the Job:

1. A rise in competitiveness caused the boss to make excessive job expectations and constraints in order to improve efficiency and price.
2. An increase in the expense and needs of family things that demand more time hours, or more low-maintenance professions and working for all adults in the family, including caretakers from the representative end.
3. The shift in time from the husband obtaining and the wife remaining at home to the husband acquiring and the wife acquiring as well. Nevertheless, both are necessary to keep the house running. The awkward of work and home life was therefore fostered and reinforced, especially for women.

Limitations of improving work-life balance

1. Long-term contact to observe if there is a noticeable effect.
2. If not given evenly, it causes friction between workers.
3. Adaptable and teleworking conditions make it difficult to maintain a strategy involves setting and culture.
4. It's difficult to extract embedded strategies if the institution is experiencing difficulties.

Benefits of improving work-life balance - Work-Life Balance techniques presented at work and at home result in:

1. Improved employee performance and usefulness
2. Enhanced confidence
3. Reduced whittling down
4. Decreased non-appearance and affliction rates
5. Lowering of burnout and stress
6. Staff retention

Strategies For Employers

1. Identifying employee requirements: The first step is to identify the many work/home conflicts that representatives face. This can be assessed by focusing on the home situation, which includes the number of employees with

*Research Scholar, Faculty of Management, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Director, Technocrats Institute of Technology – MBA, Bhopal (M.P.) INDIA

children or elder dependents, as well as the consequences of home obligations, such as the amount of extra time worked or the frequency of long periods of time missing from work. The post-employment surveys are extremely useful in identifying the work-life asymmetry concerns that have been added to representatives' takeoffs. The study published in adjacent domains such as management, brain research, and family sciences can also be used to investigate and examine the link between human resource development and the work-life space.

2. **Organizational culture:** Because the pharmaceutical industry is rapidly evolving, the association should be supportive of creative work rehearsals and should enlist representatives to convey or carry out imaginative ideas. This increases adaptability in the workplace and trust in the organization, and as a result, representatives have a sense of security, which improves worker retention. The traditional style of command-and-control results in one-way communication, which is not conducive to creativity. As a result, the hierarchical design is thought to support Work-Life Balance by carrying out key steps. The focus should be shifted on worker execution rather than looking at the activities to check if the representative is actually there at work.

3. **Enhancing personal and organizational efficiency:** To make workers feel less fatigued and distressed, hierarchical procedures will be improved. The primary perspective to examine here is to make the work a hub, but the resources required to do so are about as smooth as one could imagine. The most important aspect of it is to promote the abilities to properly use time, prioritization, and a designation that can reduce pressure with increased usefulness. This work would reduce the need to carry work home and avoid unnecessary overload, hence improving individual and organizational effectiveness.

4. **Setting up of policies:** Explicit methods, policies, projects, or major intercessions that impact the presentation are the focus of today's HR research. The ready-to-use, widely used strategies are not suited or even available for a certain business configuration. Every company is responsible for developing Work-Life Balance strategies. A few approaches are discussed below, but they are not exhaustive. Adaptability in work hours allows employees to plan their working hours around their personal life by making suitable changes within the group. This can be accomplished by combining individuals to the point where they can work for each other, allowing both to put away time when they need it by determining how to complete work by the other.

5. **Communication of the policies and benefits:** The representatives should be informed about the options available to them. Consider putting the information into an easy-to-understand staff handbook. Ensure that all employees have access to the handbook, whether it is in paper or electronic format. The best methodology is to create an online framework for locating available administrations, requesting necessary administrations, and providing feedback.

6. **Implementation of strategies:** The success of the chosen proper arrangements is determined by their execution. The uniformity across the institution should be maintained during the execution of strategies; nonetheless, this causes representational uniqueness, grinding, and dreadful competitions, which threaten collaboration and association building. The implementation of a balance between serious and entertaining activities methods should be viewed as authoritative objectives. The supervisors should be prepared to inform their employees about the benefits and aid them in selecting the best combination of techniques. This can also be linked to the yearly execution evaluation system. The most important aspect of the execution is that the strategy should not be forced but rather freely adopted by workers in order to get quick results.

7. **Evaluation of the success of work-life balance strategies:** Stay on top of the benefits of a good work-life balance by staying current. The feasibility of the approaches can be measured by estimating worker satisfaction, execution, and assessing the components, such as a standard for dependability and criticism. The initiatives should have a significant impact on the organization's major concerns, such as employee and customer loyalty, as well as maintenance and the environment. Consistent checking, criticism, and change will ensure that the strategies and their implementation are successful. Use internal bulletins and the local press to publicize achievements, and encourage employees to take up what's on offer and spread the word.

Strategies For Employees

1. **Drop exercises that sit around idly:** Avoid wasting time in a way that benefits your job or your personal life. For example, instead of wasting time at work tattling, invest the time in the online and web-based media destinations.

2. **Chop down the works that have options:** This can be accomplished by ordering basic groceries over the internet, having cleaning services delivered and dropped off at home, paying bills online, and so on, as well as rethinking the monotonous family activities.

3. **Set aside a few minutes for work out:** According to experts, while it may be tough to set aside a few minutes for practice, it eventually helps to take care of the task effectively by boosting energy and focusing ability.

4. **Assign family responsibilities to everyone:** Teach relatives to undertake progression exercises/sports/music despite family commitments by holding conferences. The objecting will be restricted if the assumptions are established in the first place.

5. **Consider the needs before assigning duties for additional exercises:** It is necessary to determine whether or not a specific movement is right. Consider your options before joining a reasonable club or institute. To avoid tension, only communicate information for a suitable amount of time.

6. Work choice: In a corporate organization, choose the requesting jobs that allow for flexibility in individual vocations and individual lives of representatives.

7. Organizing family gatherings in a relaxed setting: While this may be difficult, try to get together at a neighbourhood restaurant or pay a visit to a relative's home. The entire family will rebound loose, new with thoughts, and a strong family link as a result of this action, which will aid the exhibition at work.

8. Making a list of ideal opportunities for personal life: This proclivity to be proactive when it comes to booking. Keep an eye out for signs of being overextended and adjust your plans accordingly. Plan a relaxed and unstructured time with your family. This is a simple action that accomplishes something extraordinary. The vacation could be on a Sunday or even a spur-of-the-moment occurrence, and it could take place at home or in a nearby park. Many people look forward to having fun and socializing during their free time.

Conclusion: Working couples who must handle running a home, doing schedules such as cooking/cleaning, bringing children, and up likewise dealing with the tight cutoff times at work face many tensions in the fast-paced world of the twenty-first century. Many working couples and their families keep in touch via mobile phones, email, and long-distance informal communication sites, as well as using devices at home such as organization-enabled government agent camera gadgets. Not only does technology make life easier, but it also creates work-life imbalance by allowing people to work uninterrupted at home. The true balance between serious and pleasant activities is dynamic, and it necessitates thoughtful activities after determining the requirements. A single recipe does not always work for everyone.

To achieve a better Work-Life Balance, the first step is to clarify demands in everyday life and establish strong and convincing boundaries. Individuals who are successful are those who are adaptable enough to meet the demands of their professional lives while also achieving personal goals outside of work.

References:-

1. Parasuraman S Greenhaus J H; The changing world ofwork and family. In Parasuraman S, Greenhaus J H Eds.Integrating work and family: Challenges and choices for a changing world. West portCT: Praeger. 1997;3-14.
2. Clark, S.C. (2000), “Work/family border theory: A new theory of work/family balance”, Human Relations, Vol. 53 No. 6, pp. 747-770.
3. Rapoport R, Bailyn L, Fletcher J K, Pruitt B H; beyond work–family balance: Advancing gender equity and workplace performance. San Francisco: Jossey Bass. 2002; 1-10.
4. Marks, S.R. and MacDermid, S.M. (1996), “Multiple roles and the self: A theory of role balance”, Journal of Marriage and Family, Vol. 58 No. 2, 417–432.
5. Madsen S R; The effects of home-based teleworking on work–family conflict. Human Resource Development Quarterly. 2003; 14:35-58.
6. Cascio W F Young C E; Work–family balance: Does the market reward firms that respect it? In Halpern DF, Murphy S E eds. From work–family balance to work–family interaction. Mahwah N J. Lawrence Erlbaum Associates. 2005; 49-63.
7. Grzywacz, J.G. (2000), “Work–family spillover and health during midlife: Is managing conflict everything?” American Journal of Health Promotion, Vol. 14 No. 4, pp. 236-243.

****

समकालीन कविता में मानव शोषण की अभिव्यक्ति

डॉ. संजय सक्सेना*

प्रस्तावना – मनुष्य की यात्रा उसके श्रम की ही कहानी है। इस यात्रा का प्रारम्भ मनुष्य ने चार पांवो से किया था किन्तु अपनी बुद्धि से उसने अपने अगले दो पांवो गुरुत्वाकर्षण बल से मुक्त किये और वह रीढ़ की हड्डी के बल पर सीधा खड़ा हुआ। अब उसके अगले दो पांव उसके दो हाथ थे। जिनसे उसने श्रम करके अपने लायक दुनिया बनायी। सभ्यता के इस पड़ाव पर जो कुछ भी सुन्दर है श्रम से ही सम्भव हुआ है। श्रम ही विकास का प्रमुख उपादान है। बढ़ती आवश्यकताओं ने परस्पर निर्भर समाज की निर्मिति की और इसी प्रक्रिया में श्रम भी वर्गीकृत होता चला गया। किसी ने विशिष्ट श्रम अर्जित करने का कौशल अर्जित किया तो किसी ने सामान्य श्रम करने का। पूंजीवादी लोकतंत्र तक आते-आते व्यवस्थाओं ने आर्थिक असमानता के चलते शारीरिक श्रम की बहुत कम कीमत निर्धारित की और गरीबी के चलते मानवीय गरिमा को ठेस पहुँचाने वाले शोषण को व्यवस्थाओं का संरक्षण मिलता चला गया।

पृथ्वी की अद्यतन स्थिति मानवीय श्रम की ही परिणति है। जीवन की बढ़ती आवश्यकताओं के बीच, मनुष्यों में श्रम की परस्पर निर्भरता भी बढ़ती गयी। स्वतन्त्रता, समानता, न्याय और बंधुता की सहजाकांक्षा ने एक परस्पर निर्भर समाज के निर्माण को सम्भव बनाया। प्रारंभ में तो आदिम साम्यवाद कायम रहा किन्तु धीरे-धीरे उत्पादन की प्रक्रिया से अर्जित सुविधा, लाभ और निजी सम्पत्ति की अवधारणाओं के चलते कुछ लोगों ने श्रेष्ठता, वर्चस्व और विरोध के अभाव में, व्यवस्था को अपने पक्ष में लेकर, दूसरों के श्रम का अनुचित लाभ उठाया। यही से शोषण प्रारम्भ हुआ। सामाजिक-आर्थिक-धार्मिक-बौद्धिक शारीरिक सन्दर्भ, शोषण के आधार बने सैद्धान्तिक रूप से समानता जैसे मूल्य को सर्वोपरि रखने पर भी व्यावहारिक रूप 'असमानता' शोषण का प्रमुख कारक रही। मनुष्य के पैदा होते ही उसका शोषण शुरू हो जाता है।

मनुष्य जीवन का सबसे अबोध रूप बाल्य अवस्था में होता है। बच्चे शारीरिक-मानसिक रूप से अपरिपक्व होते हैं, तो आर्थिक दृष्टि से माता-पिता पर निर्भर। किन्तु, भारत में करोड़ों बच्चे आर्थिक रूप से आत्म निर्भर हैं। पढ़ाई करने की उम्र में वे खेतों में, हलवाइयों की दुकानों पर कारखानों में, और जूते पालिश करने जैसे काम करते हैं। यह विडम्बना है कि बच्चा उठकर जमीन पर चलना शुरू करते ही काम पर जाने लगता है। कवि राजेश जोशी बचपन में काम कर रहे इन बच्चों की ओर से सारे समाज से प्रश्न करते हैं। यहाँ उनकी बेचैनी, स्तब्धता और द्रवित कर देनेवाली संवेदना को अभिव्यक्ति मिली है –

'' काम पर जा रहे है बच्चे ?
क्या अंतरिक्ष में गिर गई है सारी गेंदे
क्या दीमकों ने खा लिया है
सारी रंग-बिरंगी किताबों को
क्या काले पहाड़ के नीचे दब गए हैं सारे खिलौने
क्या किसी भूकम्प में ढह गई है
सारे मदरसों की इमारतें
क्या सारे मैदान सारे बगीचे और घरों के ऑगन
खत्म हो गए हैं एकाएक
तो बचा ही क्या इस दुनिया में ?''[1]

अगर बच्चे, गेंद, खिलौने और किताबो से नहीं खेल रहे हैं, और काम पर जा रहे हैं तो निश्चित रूप से विकास के हर पैमाने पर वो राष्ट्र असफल है और राजेश जोशी का यह कहना सही है कि बचा ही क्या है इस दुनिया में ? क्यों काम पर जा रहा बच्चा शोषण की कहानी आप कह रहा है। ''हिंदी कविता में जब भी बच्चों पर लिखी जाने वाली कविताओं की बात होगी, राजेश जोशी की इस कविता का जिक्र जरूर होगा।''[2] अत्यन्त विषम परिस्थितियों में बच्चे अपनी उम्र से कहीं ज्यादा काम कर रहे हैं। ''पूरी गुलामी और चाकरी वाली स्थितियों में बिना किसी सहारे के, गाली और दुर्व्यवहार के डर के बीच जीते हुए, अपमान और तिरस्कार झेलते हुए अपने स्वास्थ्य को खतरे में डाले वे हमारी देखभाल करने के लिये देर-देर तक काम करते हैं। उनके काम के घंटे कभी खत्म नहीं होते। वास्तव में रोटी, कपड़ा और मकान जुटाने के हमारे प्रयासों में किसी न किसी स्तर पर बालश्रम का योगदान भी रहता है। उत्पादन के क्रम में भी, चाहे वह स्थानीय हो या दुनिया में अन्य कहीं, बालश्रम को नकारना मुश्किल ही है।'' [3] कवि बोधिसत्व ने भदोही में कालीन बुनने वाले मजदूर बच्चे शफीक की स्थिति पर एक अत्यन्त मार्मिक कविता 'पलामू' लिखी है-

'' तुम्हारी ॲंगुलियों से निकलता है ऊन
तुम्हारी हड्डियॉ बुजबुन की है
हरदम सूत काटती है तुम्हारी सॉस
तुम धीरे-धीरे गलीचे में
गायब हो रहे हो शफीक
X X X X X X X
एक दिन जब
कारखाने से बाहर निकलोगे तुम
एक दिन तुम्हारी आँखे
बेकार हो जायेगी जब
तुम्हे पता चलेगा उस दिन कि
अब तक छूड़ा तुम ऊन पर नहीं

* एसोसिएट प्रोफेसर (हिंदी) बुन्देलखण्ड महाविद्यालय, झाँसी (उ.प्र.) भारत

अपनी पुतलियों पर
अपनी अंगुलियों और कलाई की
सबसे जरूरी नस पर चला रहे थे।'' [4]

बालश्रम करवाना भविष्य की युवा-शक्ति की शारीरिक-मानसिक सक्रियता को कुंठित कर देना है। अनेकायामी स्वप्नों का गला घोंट देना है। ''अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आइ एल ओ) के आंकडे बताते है कि भारत में तकरीबन पौने दो करोड़ बाल मजदूर कारखानों में सड़ रहे हैं। ऐसे ऑकड़ो से द्रवित हो कर जर्मनी और फ्रांस जैसे राष्ट्र भी भारतीय कालीनों के बहिष्कार का अभियान चला रहे हैं।'' [5] बाल मजदूरों की इतनी बड़ी संख्या भारतीय बच्चों की दुर्दशा की कहानी आप कह रही है। फिर भी उत्पीड़नकारी शक्तियाँ अपने उत्पादन और कार्यस्थल की गुणवत्ताा से कोई समझौता नहीं कर रही है। कम उम्र में ही बच्चे अशिक्षा और गरीबी के चलते अत्याधिक श्रम करते रोगी, अपरिपक्व और भविष्य की तमाम सुविधाओं से वंचित रह जा रहे है। श्रम की गुणवत्ता में सुधार न कर पाने के कारण बहुत थोड़े से पैसों में वे जीवन गुजारते है। शोषण की प्रक्रिया विविध आयामी है।

धर्म भी अप्रत्यक्ष रूप से शोषण का कारण बन जाता है। कभी-कभी उसमें निहित आस्थाएँ भी व्यक्ति के विकास में बाधक बन जाती हैं। और वह धार्मिक शोषण का शिकार होता है। भारत में अनेक धर्म अपनी-अपनी आस्थाओं और विश्वासों के साथ है। इनकी मान्यताओं और संस्कारों पर करोड़ों लोग चल रहे हैं। यहीं कवि धार्मिक शोषण पर भी व्यंग्य करता है। उसे पता है कि कहॉ जर्जरित आस्तिक संस्कार प्रतिरोध के स्वर को दबा देते हैं -

'' तुम समझते हो 'दीन' की भाषा
तुम्हें हिसाब-किताब नहीं आता
खटाया जाता है तुम्हें मनमानी
तमाम घड़ियाँ तुम्हारे वास्ते बेकार है
x x x x x x x
वे चाहते है शफीक,
तुम्हे 'दीन' के अलावा न आये कुछ भी।
x x x x x x x
तुम्हे मालूम है
मजदूरी करने की सरकारी उमर'' [6]

कुमार अंबुज भी व्यवस्था द्वारा अनियोजित श्रम विभाजन को आर्थिक असमानता का कारण मानते हैं किन्तु साथ-साथ पूंजीपतियों की कलई भी खोलते हैं। ये बताते हुए कि कैसे इस अनियोजित श्रम विभाजन के बड़े हिस्से को धर्म की आड़ में अपने पक्ष में ले लेते है, और अमीरी-गरीबी को अव्यवस्था के बजाय पाप-पुण्य की दृष्टि से देखते हैं -

''एक दिन कहेंगे धर्म-सभा में-
यह ईश्वर की इच्छा है कि एक गरीब आदमी बना रहे गरीब
और धनी आदमी को धनी बनाए रखने में श्रमदान करें
यही ईश्वर की इच्छा है
यही है ईश्वर की इच्छा''[7]

धार्मिक शोषण के अलावा, देश के कई करोड़ नागरिकों का सामाजिक और आर्थिक शोषण भी हो रहा है। आज नक्सलीबहुल आदिवासी इलाके के नागरिकों का उत्पीड़न गहरा गया है। नक्सली प्रभावित इलाके बेहद पिछड़े और विकासहीन हैं, यहॉ गरीबी सर्वव्यापी है। सरकारी तंत्र, अव्यवस्था एवं उद्योगपतियों का दोहन करने वाला नजरिया भी यहाँ के पिछड़ेपन का मुख्य कारण है। सरकार की कई योजनाएँ सिर्फ शोषित और कुपोषित आदिवासियों और गरीबों के लिए है, लेकिन इनका धन बिचौलिए हजम कर जाते हैं। तब विकास इन तक कैसे पहुँचे क्योंकि नक्सली भी इन इलाकों का विकास नहीं चाहते। ये गैरआदिवासियों और गैरनक्सलियों से फिरौती वसूलते हैं। विकास विरोधी होने के कारण वे बिजली विरोधी हैं। नक्सलवाद आज करीब 180 जिलों में फैल चुका है ''नक्सलवाद 16 राज्यों की कानून व्यवस्था के लिये चुनौती बना हुआ है। ......लगभग 40000 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में इन नक्सलियों की अपनी अदालतें हैं।''[8] नक्सलवादी आंदोलन माओं की विचारधारा के अनुसार शुरू हुआ था गॉवों को अगर शोषण से और जमींदारों के जुल्मों से बचाना है तो ग्रामीण नागरिक को ग्रामीण स्तर पर संगठित होकर सशस्त्र क्रान्ति करनी होगी। इसी से प्रभावित होकर धूमिल ने 'पटकथा' कविता में एक जगह कहा है -

''एक ही संविधान के नीचे
भूख से रियाती हुई फैली हथेली का नाम
'दया' है
और भूख में
तनी हुई मुट्ठी का नाम
नक्सलवादी है''[9]

तब धूमिल को उम्मीद थी कि एक शोषण मुक्त समाज इस क्रान्ति से सम्भव होगा क्योंकि भूखे ही सही पर अधिकारों के लिए वे प्रतिरोध के लिए तैयार थे। किन्तु आज नक्सल प्रभावित इलाकों की जनता का सामाजिक-आर्थिक और दोहरा शोषण हो रहा है। सरकार विफल है और विकास उपलब्ध नहीं करा पा रही है वहीं नक्सली इनसे वसूली कर आतंक के पर्याय बने हैं। कह सकते है कि यह शोषण की अजीब कहानी है। जहॉ शोषण दोहरा है, आदिवासियों के संरक्षण के नाम पर ये नक्सली आज आम नागरिकों का शोषण और हत्या कर रहे हैं। नक्सल बहुल क्षेत्रों का नागरिक जीवन आंतक से सहमा है।

आदिवासियों के अलावा स्त्री-पुरूष श्रमिकों का भी शोषण, आज सर्वव्याप्त है। विश्व प्रसिद्ध चंदेरी की साड़ियॉ बनाने वाले कारीगरों की दुर्दशा का एक चित्र देखिये -

''मै कई रातों से परेशान हूँ
चॅदेरी के सपने में दिखाई देते है मुझे
धागों पर लटके हुए कारीगरों के सिर'' [10]

शोषण का धागा महीन है सिर व्यक्ति की ज्ञानेन्द्रियों को धारण करता है। कारीगरों का समस्त ज्ञान कौशल बदले में बहुत कम मूल्य पाता है। कुमार अंबुज उत्पादन और वितरण के गणित को रूपायित करते हुए, इस तथ्य की ओर इशारा करते हैं कि पूंजीपति वर्ग लाभांश का सही अनुपात में वितरण नहीं करते हैं। कारीगरों का शोषण पूरे भारत में जारी है।

शोषण का एक अत्याधुनिक रूप वर्तमान भूमण्डलीकरण की उपज से जन्मा है। सस्ते श्रम की तलाश में उदारीकरण का लाभ लेती विदेशी कम्पनियाँ आज संचार क्राति के माध्यम से भारत में फैली हैं। ''हम देख सकते हैं कि कॉल सेंटर्स में, निजीकृत इंजीनियरिंग और कम्प्यूटर संबंधी इकाइयों में दस से बारह घंटों का काम लिया जा रहा है। इसके लिए कोई कानूनी क्रियान्वयन, श्रमिक आंदोलन या प्रभावी उपाय नहीं है, तो उसका बड़ा कारण यह है कि देश के विशाल मध्यवर्ग के बीच यह भ्रम फैला देने में कामयाबी मिल गयी है कि वे लोग श्रमिक नहीं हैं। वे तो 'सेवा क्षेत्र में' हैं और 'बौद्धिक' हैं या आधुनिक तकनीक के जानकार। जब यह दुष्प्रचार सफल हो

गया हो कि एक समझदार, पढ़ा-लिखा, युवक और विशाल वर्ग अपने आप को श्रमिक न मानें, तो यह होना ही है कि वे पूंजीवाद और पूंजीपतियों के सिर्फ शिकार होते चले जाये।''[11] ऐसे युवा आज की अंधी दौड में थोड़े से विश्राम और उपभोग के समय में सस्ते मनोरंजन के शिकार होते हैं। किन्तु निजीकरण और प्रतिस्पर्धा के इस दौर में शोषण के अमूर्त और महीन तारों को नहीं देख पा रहे है, जो विदेशों से संचालित हो रहे हैं।

सभी प्रकार के शोषणों से मुक्ति की कामना में ही कविता की प्रतिपक्ष की भूमिका है। बद्रीनारायण भी परिवर्तनकामी, शोषणमुक्त समाज की परिकल्पना करते हैं। और संविधानिक मूल्यों की वास्तविक प्रतिभूति को फलित होते देखना चाहते है -

'' न गिद्ध न गिद्ध की चोंच
न स्यार की धूर्तता, न चीते की ऑख
न जुलुमी, न जालिम, न हत्यार
सज्जनों का पूरा सम्मान होगा
X X X X X X X
लोमड़ी निपूती होगी
भेड़िया निर्वंश
सॉप के फन पर प्रहार होगा
X X X X X X X
मेरे जमाने का बिल्कुल नया संविधान होगा ''[12]

यह कवि का शोषणमुक्त, परिवर्तनकारी यूटोपिया है। वैसे यहाँ द्वन्द्वात्मकता का अभाव होने से यह सुखद मनोकामना भर रह जाती है। यद्यपि शोषणकारी भावनाओं की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति में यह कविता सफल रही है।

सर्वव्यापी शोषण से भारत का आम नागरिक चाहे वो किसी भी धर्म, जाति या लिंग का हो-प्रभावित है। व्यवस्था ने उनके श्रम का सही मूल्य नहीं आंका है। उन्हें उनके श्रम का सही अनुपात में फल नहीं मिला है, जिस रोटी-पानी, स्वास्थ्य के लिए उनका दैनंदिन जीवन खट रहा है, वह भी उन्हें किस दशा में प्राप्त है, इसकी तस्वीर पवन करण की फोटो, कविता में स्पष्ट है -

'' ट्रेन के सामान्य डिब्बे में चढ़ने को
मारामारी करता हुआ
मेरा फोटो कितना बदहवास
राशन की दुकान पर लाइन में
सिर झुकाए चुपचाप खड़ा
मेरा फोटो कितना विवश
सरकारी अस्पताल में चिकित्सक की
बेसब्र प्रतीक्षा करता
मेरा फोटो कितना बीमार
पानी के इन्तजार में आधी रात को
उठकर बैठ जाता
मेरा फोटो कितना उनींदा''[13]

वोट की लाइन में खड़े नागरिक का सूरते हाल, उसकी फोटो से स्पष्ट है किन्तु उसके दिखते चेहरे के पीछे तंत्र अस्पष्ट है। दैनंदिन जीवनोपयोगी वस्तुओं को पाने का सामान्य नागरिक का यह असामान्य संघर्ष उसकी यथास्थिति का बयान है। यहॉ अन्तत: फोटो नागरिक होने की पहचान है, किन्तु उसके जीवन का सत्ता से सरोकार एकदम औपचारिक और पॉचसालाना है। यही शोषण की अनवरतता है, और नागरिक जीवन की विडम्बना। मुक्तिबोध शोषणमुक्त समाज की कल्पना और आकांक्षा में प्रतीक्षारत थे -

''समस्या एक
मेरे सभ्य नगरों और ग्रामों में
सभी, मानव
सुखी सुन्दर व शोषणमुक्त
कब होंगे ?''[14]

वस्तुत: पूंजीवादी अर्थतंत्र की बुनियाद ही शोषण पर टिकी है। आज यह शोषण विविध रूपों में मूर्त-अमूर्त रूप से करोड़ो लोगों के जीवन को बर्बाद कर रहा है। किन्तु समकालीन कविता की भी प्रतिबद्धता है कि वह शोषण के हर रूप को रेखांकित करेगी, नागरिकों को सचेत और सतर्क रखेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजेश जोशी - नेपथ्य में हॅसी-पृ0-23-24
2. समकालीन हिन्दी कविता यात्रा- शतानन्द क्षोत्री-पृ0-76 पर उद्धृत।
3. शान्ता सिन्हा- योजना- नवम्बर-2006-पृ0-15।
4. बोधिसत्व- सिर्फ कवि नही- पृ0-94-95।
5. संजय अभिज्ञान- मानव अधिकारों का संघर्ष-सं0 राजकिशोर-पृ0-108।
6. बोधिसत्व- सिर्फ कवि नही- पृ0-29।
7. कुमार अंबुज-क्रूरता-पृ0-100।
8. डॉ0 लक्ष्मीशंकर यादव- नक्सलवाद का बढ़ता खतरा (लेख), प्रतियोगिता दर्पण जनवरी -2010, पृ-1056।
9. धूमिल- संसद से सड़क तक पृ0-127।
10. कुमार अंबुज- क्रूरता- पृ0-24।
11. कुमार अंबुज-कथन-अक्टूबर,दिसम्बर-2004।
12. बद्रीनारायण-सच सुने कई दिन हुये-पृ0-69।
13. पवन करण- दैनिक भास्कर-30 सितम्बर 2007 ।
14. गजानन माधव मुक्तिबोध -चांद का मुँह टेढ़ा है-पृ-14।

****

प्रधानमंत्री की संवैधानिक और वास्तविक शक्तियों का मूल्यांकन

डॉ. आदित्य कुमार सिंह*

प्रस्तावना - भारत में संसदीय शासन व्यवस्था को अपनाया गया है इसीलिए भारतीय संविधान में प्रधानमंत्री को शासन का प्रमुख माना गया है और राष्ट्रपति को राष्ट्र का प्रमुख माना गया है। इस प्रकार संविधान ने प्रधानमंत्री को वास्तविक शक्तियां प्रदान की हैं और राष्ट्रपति को नाम मात्र की शक्तियां प्रदान की है राष्ट्र प्रमुख होने के नाते राष्ट्रपति के द्वारा प्रधानमंत्री को पद और गोपनीयता की शपथ दिलाई जाती है। संविधान के अनुच्छेद 74(1) में यह कहा गया है कि राष्ट्रपति को अपने कार्यों का संपादन करने में सहायता तथा मंत्रणा देने के लिए एक मंत्रिमंडल होगा जिसका प्रधान प्रधानमंत्री होगा।[1] यहां पर दो बातें स्पष्ट हो जाती हैं। पहला यह कि एक मंत्रिपरिषद होगी जिसकी अध्यक्षता प्रधानमंत्री करेंगे और दूसरा यह कि यह राष्ट्रपति की ओर सलाह देने के लिए होंगे और प्रधानमंत्री की नियुक्ति कैसे होगी इसका कोई विशेष उल्लेख संविधान में नहीं किया गया है बस अनुच्छेद 75(1) में कहा गया है कि प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करेगा और अन्य मंत्रियों की नियुक्ति राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री की सलाह पर करेगा।[2]प्रश्न यहां पर यह है कि राष्ट्रपति किसे प्रधानमंत्री नियुक्त कर सकता है यदि चुनाव के पश्चात किसी एक दल को लोकसभा में पूर्ण बहुमत नहीं मिलता तो गठबंधन की व्यवस्था होती है जिससे मामला सुलझ जाता है मगर यदि किसी भी दल को लोकसभा में स्पष्ट बहुमत प्राप्त ना हो तो राष्ट्रपति को प्रधानमंत्री को नियुक्त करने में स्वविवेक का निर्णय लेना होता है।75(2)में कहा गया है कि मंत्रीगण राष्ट्रपति के प्रसाद पर्यंत अपने पद पर बने रह सकते हैं 75 (3) में कहा गया है कि मंत्रिपरिषद लोकसभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदाई होगी।इस प्रकार मंत्री नियुक्त करने हेतु अपने दल के सदस्यों के नाम राष्ट्रपति को प्रधानमंत्री के द्वारा सुझाए जाएंगे और राष्ट्रपति केवल उन्हीं लोगों को मंत्री बनाएगा जिसके नाम की सिफारिश प्रधानमंत्री के द्वारा की गई है इस तरह यह निश्चित होता है किस मंत्री को कौन सा विभाग दिया जाएगा यह तय करना प्रधानमंत्री के स्वविवेक का काम है और प्रधानमंत्री किसी भी समय मंत्रियों के विभाग में फेरबदल करने के लिए स्वतंत्र है भारतीय संविधान के प्रावधानों के अनुसार प्रधानमंत्री केंद्र सरकार की मंत्रिपरिषद का प्रमुख होने के साथ-साथ राष्ट्रपति का मुख्य सलाहकार होता है सिद्धांत रूप में संविधान भारत के राष्ट्रपति को देश का प्रमुख घोषित करता है और सैद्धांतिक रूप में शासन तंत्र की सारी शक्तियों को राष्ट्रपति में निहित करता है तथा संविधान यह भी निर्दिष्ट करता है कि राष्ट्रपति अपने इन अधिकारों का प्रयोग अपने अधीनस्थ अधिकारियों की सलाह पर करेगा संविधान द्वारा राष्ट्रपति के सारे कार्यकारी अधिकारियों का प्रयोग करने की शक्ति लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित प्रधानमंत्री को दे दी गई है।[3] संविधान के अनुसार मंत्रिमंडल के सदस्यों के लिए अपनी नियुक्ति के समय संसद का सदस्य होना आवश्यक नहीं है अनुच्छेद 75(5) के अनुसार कोई भी व्यक्ति 6 माह तक बिना संसद का सदस्य रहे हुए मंत्रिमंडल का सदस्य है सकता है संविधान के अनुसार यह भी आवश्यक नहीं है कि प्रधानमंत्री का चयन निम्न सदन में से ही किया जाए 1966 में इंदिरा गांधी को जो प्रधानमंत्री नियुक्त किया गया तब और राज्यसभा के मनोनीत सदस्य थी।[4] प्रधानमंत्री की स्थिति कुछ इस प्रकार की है कि वह सत्ताधारी दल का नेता तो होता है साथ ही वह केंद्र सरकार का प्रमुख प्रवक्ता भी होता है देश का प्रधान होने के नाते विभिन्न राज्यों के विभिन्न वर्गों के लोगों से मिलता है और उनकी समस्याओं के संबंध में जानकारी प्राप्त करता है। प्रशासन को आदेश देना हो या नीतिगत निर्णय लेना हो यह सभी कार्य प्रधानमंत्री के द्वारा किए जाते हैं मंत्रिपरिषद का प्रधान होने के नाते सत्ता पक्ष की ओर से संसद में की जाने वाली बहस का नेतृत्व प्रधानमंत्री के द्वारा किया जाता है संसद में मंत्रिपरिषद के पक्ष को रखने का काम प्रधानमंत्री करता है वह किसी भी मंत्रालय से आवश्यकतानुसार सूचना प्राप्त कर सकता है इस तरह से भारतीय संविधान में प्रधानमंत्री की संवैधानिक शक्तियां बहुत महत्वपूर्ण है।

भारत में इंग्लैंड की संसदीय परंपरा का अनुसरण किया गया है और व्यावहारिक रूप से प्रधानमंत्री के चयन में राष्ट्रपति ने अपने विवेक का प्रयोग न करके सदैव लोकसभा में बहुमत प्राप्त दल के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त किया है और उसकी इच्छानुसार अन्य मंत्रियों की नियुक्ति की है इसी प्रकार मंत्रियों के निष्कासन, उनके बीच विभागों के वितरण, तथा उन्हें पद मुक्त करने में भी राष्ट्रपति ने प्रधानमंत्री से परामर्श को ही सदैव मान्यता दी है 42वें एवं 44वें संशोधन के बाद संवैधानिक स्थिति के अनुसार अब राष्ट्रपति मंत्रिमंडल (प्रधानमंत्री) के परामर्श अनुसार कार्य करने के लिए बाध्य है।[5] मंत्रिपरिषद के प्रमुख के रूप में भारत के प्रधानमंत्री की शक्तियां बहुत ही महत्वपूर्ण है वह मंत्री नियुक्त करने हेतु अपने दल के किसी व्यक्ति की राष्ट्रपति से सिफारिश करता है और राष्ट्रपति द्वारा केवल उन्हीं लोगों को मंत्री नियुक्त किया जाता है जिनकी सिफारिश प्रधानमंत्री के द्वारा की जाती है। मंत्रालयों का आवंटन करना हो या फिर उन में फेरबदल करना हो या मंत्रालय संबंधी किसी भी तरह का कोई निर्णय लेना हो यह सारे कार्य प्रधानमंत्री अपने स्वविवेक से करता है इसके साथ ही किसी मंत्री को त्यागपत्र देने अथवा बर्खास्त करने के लिए वह राष्ट्रपति को सलाह दे सकता है। प्रधानमंत्री के द्वारा मंत्रिपरिषद की बैठकों की अध्यक्षता की जाती है और उसमें लिए गए निर्णय में प्रधानमंत्री की महत्वपूर्ण भूमिका होती है साथ ही

* एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (राजनीतिशास्त्र) स्वामी शुकदेवानंद महाविद्यालय, शाहजहांपुर (उ.प्र.) भारत

साथ वह सभी मंत्रियों की गतिविधियों को नियंत्रित करने, निर्देशित करने,विभागों में समन्वय और एकता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं।[6] संसदीय शासन व्यवस्था का प्रमुख गुण सामूहिक उत्तरदायित्व का होता है तुम तो प्रधानमंत्री मंत्री परिषद का अध्यक्ष होता है इसलिए जब भी प्रधानमंत्री त्यागपत्र दे देता है थोड़ा उसकी मृत्यु हो जाती है तो मंत्रिपरिषद के विघटन होने के साथ ही सरकार का पतन हो जाता है लेकिन यदि किसी अन्य मंत्री की मृत्यु होती है या वह त्यागपत्र देकर अपने पद को रिक्त करता है तो वह सीट खाली नहीं रहती प्रधानमंत्री उस पद पर अपने पार्टी के किसी भी सदस्य को राष्ट्रपति से सिफारिश करके नियुक्त करा सकता है। इस प्रकार प्रधानमंत्री का पद संवैधानिक रूप से एक गरिमामय पद है जिसमें अपार शक्तियां निहित हैं लेकिन यहां यह बात गौरतलब है यदि प्रधानमंत्री पदधारी अपना पद अपनी ही राजनैतिक शक्ति और जनता के सीधो समर्थन के बल पर प्राप्त करता है जैसे पं जवाहरलाल नेहरू ने अपने जीवन काल में तथा श्रीमती इंदिरा गांधी ने 1971 में तथा 1980 में पद प्राप्त किया था तो आत्मविश्वास के साथ शासन प्रमुख के रूप में कार्य करने में समर्थ होता है लेकिन यदि वह अपना पद अन्य तत्वों के समर्थन और सहयोग के बल पर प्राप्त करता है जैसे 1964, 1966, 1967, और 1977 में यही स्थिति थी तो प्रधानमंत्री की स्थिति स्वाभाविक रूप से निर्बल हो जाती है।[7]संविधान के अनुसार प्रधानमंत्री संसद के दोनों सदनों में से किसी का भी सदस्य हो सकता है उदाहरण के लिए इंदिरा गांधी 1966 में, एच डी देवगौड़ा 1996 तथा डॉ. मनमोहन सिंह 2004 और 2009 में राज्यसभा के सदस्य थे वहीं दूसरी ओर ब्रिटेन में प्रधानमंत्री को निम्न सदन यानी हाउस आफ कॉमनस का सदस्य होना हीचाहिए।[8]

शासन व्यवस्था में प्रधानमंत्री सारे काम राष्ट्रपति के नाम पर करते हैं क्योंकि प्रधानमंत्री राष्ट्रपति एवं मंत्रिपरिषद के बीच संवाद का प्रमुख स्रोत है अत: अनुच्छेद 78 के अनुसार उसकी यह जिम्मेदारी बनती है कि वह संघ के कार्यपालक के प्रशासन संबंधी सभी निर्णयों से मंत्रिपरिषद को सूचित करेंगें इसका तात्पर्य यह है कि मंत्रिपरिषद, प्रशासन और विधि से जुड़े हुए जितने भी निर्णय करेगी प्रधानमंत्री उन सब से राष्ट्रपति को अवगत कराएंगे और जिन विषयों की जानकारी राष्ट्रपति के द्वारा मांगी जाएगी प्रधानमंत्री वह जानकारी राष्ट्रपति को उपलब्ध कराएंगे और जिस किसी भी विषय पर किसी मंत्री ने अपना मत दिया है किंतु उस विषय पर मंत्रिमंडल में विचार नहीं किया गया है ऐसी स्थिति में राष्ट्रपति द्वारा अपेक्षा किए जाने पर प्रधानमंत्री मंत्रिपरिषद के समक्ष उस विचार को रखेंगे।राष्ट्रपति के निर्वाचन के समय और फिर राष्ट्रपति द्वारा संविधान के विरुद्ध किए गए कार्यो के लिए उस पर महाभियोग चलाने के समय प्रधानमंत्री का उत्तरदायित्व बढ़ जाता है क्योंकि प्रधानमंत्री संसद और जनता दोनों का प्रतिनिधित्व करता है और दोनों का नेता होता है[9] प्रधानमंत्री तथा राष्ट्रपति के बीच एवं प्रधानमंत्री और अन्य मंत्रियों के बीच कैसे संबंध हों इस बारे में संविधान के गठन काल से ही विवाद चला आ रहा है। गृहमंत्री के रूप में सरदार पटेल की तथा प्रधानमंत्री के रूप में पंजवाहरलाल नेहरू की अनुभूतियों में आकाश पाताल का अंतर रहा है इसी प्रकार प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद तथा प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के बीच बुनियादी मतभेद थे।[10] प्रधानमंत्री के कार्यों पर टिप्पणी करते हुए डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने कहा कि यदि हमारे संविधान के अंतर्गत किसी 'कार्यकारी' की यदि अमेरिका के राष्ट्रपति से तुलना की जाये तो वह 'भारत का प्रधानमंत्री' होगा न कि 'राष्ट्रपति'। प्रधानमंत्री ने केवल राज्य के अंदर बल्कि अंतरराष्ट्रीय जगत में भी राष्ट्रीय दायित्वों को पूरा करने के लिए संघ सरकार का प्रतिनिधित्व करते हैं अपनी नीतियों के सफल क्रियान्वयन के लिए प्रधानमंत्री राज्यों के मुख्यमंत्री और उनके मंत्रिमंडल अन्य मंत्रियों को साथ लेकर चलते हैं केंद्र राज्य संबंधों को बेहतर बनाना ताकि केंद्र सरकार और राज्य सरकार दोनों मिलकर बेहतर ढंग से काम कर सके भारत में राज्यों की शासन व्यवस्था भी राज्यपाल और मुख्यमंत्री में विभाजित है मुख्यमंत्री के पास वास्तविक शक्तियां होती हैं और राज्यपाल के पास नाममात्र की राष्ट्रपति के द्वारा राज्यपाल की नियुक्ति प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद की सलाह पर की जाती है क्योंकि राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू करने में मुख्य भूमिका राज्यपाल की होती है लेकिन संवैधानिक दृष्टि से प्रधानमंत्री को ना तो मुख्यमंत्रियों की नियुक्त करने का अधिकार प्राप्त है और ना ही मुख्यमंत्रियों को प्रधानमंत्री की नियुक्ति में भूमिका निभाने का कोई अधिकार है।

अंतरराष्ट्रीय संबंधों को मजबूत बनाने और विदेश नीति और सुरक्षा नीति को सुचारू रूप से क्रियान्वित करने और उसे लागू करने में प्रधानमंत्री की महती भूमिका होती है प्रधानमंत्री के मार्गदर्शन में विदेश नीति का निर्धारण किया जाता है और अंतरराष्ट्रीय संबंधों को स्थापित करने का प्रयास किया जाता है शांति, व्यापार, कला, संस्कृति, शिक्षा आदि से संबंधित विभिन्न प्रकार की संधियां और समझौते करना इसमें शामिल है ।प्रधानमंत्री विदेश मंत्रालय को चाहे अपने अधीन रखें या विदेश मंत्री के अधीन लेकिन ज्यादातर अंतरराष्ट्रीय मसलों पर प्रधानमंत्री को लगातार संपर्क करना होता है। अंतरराष्ट्रीय जगत में देश का वास्तविक प्रतिनिधित्व प्रधानमंत्री ही करता है उदाहरण के लिए जवाहरलाल नेहरू का पंचशील, इंद्र कुमार गुजराल का गुजराल डॉक्ट्रिन आदि विदेश नीति में मील का पत्थर कहे जाते हैं। सबसे मुश्किल घड़ी में ही असली नेता की सबसे अच्छी खूबियां सामने आती हैं वह अपने राजनीतिक कौशल और राष्ट्रहित के एहसास के साथ विपरीत परिस्थितियों में भी लाभ कमा लेता है[11]साधारणतया प्रधानमंत्री का चुनाव संसद का निम्न सदन में से होता है लेकिन उच्च सदन से प्रधानमंत्री निर्वाचित करने पर कोई वैधानिक प्रतिबंध नहीं है भारत में पहली बार 1966 में जब राज्यसभा की सदस्य श्रीमती इंदिरा गांधी को प्रधानमंत्री निर्वाचित किया गया तो निम्न सदन में बहुमत दल के नेता को प्रधानमंत्री होने के सिद्धांत को विराम लग गया12 प्रधानमंत्री को दल की आवश्यकताओं को तथा संपूर्ण राष्ट्र में सभी जाति, धर्म, भाषा, संप्रदाय और क्षेत्र के साथ संतुलित व्यवहार को ध्यान में रखना पड़ता है। संविधान में इस तरह का कोई उपबंध मौजूद नहीं है जो यह प्रदर्शित करता होकि प्रधानमंत्री के द्वारा मंत्रिमंडल में मंत्रियों के चयन में प्रधानमंत्री की छूट अमर्यादित हो लेकिन यह बात अवश्य है कि प्रधानमंत्री को देश के सभी जनप्रतिनिधियों के साथ सामंजस्य बनाकर कार्य करना होता है और सामंजस्यपूर्ण वातावरण निर्मित करना होता है भारत में जितने भी प्रधानमंत्री हुए हैं उन्होंने संतुलित ढंग से लोकतांत्रिक आदर्श और परंपराओं को स्वीकार किया और अपनी शक्तियों का प्रयोग संवैधानिक दायरे में रहकर किया अब धीरे धीरे मिली जुली सरकारों का दौर समाप्त होता नजर आ रहा है जहां प्रधानमंत्री कठपुतली बन कर रह जाते हैं प्रधानमंत्री का पद बहुमत दल के नेता की हैसियत से नहीं बल्कि जोड़-तोड़ की हैसियत से प्राप्त होने लगे थे भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के समय शक्ति दल से सरकार के हाथों में हस्तांतरित की गई थी किंतु उनके बाद व्यावहारिक रूप से दली अधयक्ष का चयन प्रधानमंत्री करता रहा किंतु अब समय परिवर्तित हो रहा है अब प्रधानमंत्री के चयन में दल के अध्यक्ष की आवश्यकता हुई है।

प्रमुख रूप से भारत के प्रधानमंत्री की शक्तियां कुछ इस प्रकार परिभाषित की जा सकती है-

1. मंत्रिपरिषद का गठन करना और उसके सदस्यों में विभागों का बंटवारा कर के समन्वय स्थापित करना।
2. संघ सूची के विषय पर कानून बनाने तथा संघीय विषयों पर कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार करने का कार्य संपादित करना।
3. राष्ट्रपति को प्रत्येक मामले से अवगत कराना सलाह देना सलाह लेकर उचित नीतियों को निर्धारित करना।
4. संविधान और कानून के संरक्षण का दायित्व प्रधानमंत्री का होता है।
5. केंद्र और राज्य के मधय संबंधों को बेहतर बनाने और समझने का कार्य करना।
6. राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारत का प्रतिनिधित्व करना और दुनिया को भारत के पक्ष से अवगत कराना।
7. राष्ट्रीय समस्याओं के निराकरण हेतु प्रयास करना।
8. विदेश नीति को निर्धारित करने और उसे क्रियान्वित करने की व्यवस्था करना।
9. राष्ट्रीय एकता और अखंडता को बनाए रखने हेतुउचित कदम उठाना।
10. महत्वपूर्ण प्रशासनिक और राजनयिक पदों पर नियुक्ति हेतु राष्ट्रपति को सलाह देना।

प्रधानमंत्री का व्यक्तित्व प्रभावशाली और चमत्कारिक होता है उचित समय पर उचित निर्णय लेने की क्षमता किसी भी प्रधानमंत्री का सबसे महत्वपूर्ण गुम है राजनीतिक सूझबूझ वाक् चातुर्य अपने सहयोगियों से संबंधा में और अपने विरोधियों से सहयोग प्राप्त करने की कला प्रधानमंत्री को आनी चाहिए इसीलिए लॉर्ड मार्लेने प्रधानमंत्री की तुलना समकक्षों में प्रथम कहकर दी है सर विलियम हर कोर्ट ने प्रधानमंत्री को नक्षत्रों के बीच चंद्रमा कहा है आईवर जेंनिंग्स ने प्रधानमंत्री को एक ऐसा सूर्य बताते हैं जिसके चारों और समस्त ग्रह घूमते रहते हैं।विलियम हरकोर्ट और आईवर जेनिंग्स का यह कथन भारत के प्रधानमंत्री के ऊपर अक्षरशः लागू होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सुभाष कश्यप, हमारा संविधान, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया नई दिल्ली, 2000,पृष्ठ-136
2. भारत का संविधान, सेंट्रल लॉ एजेंसी, इलाहाबाद,2018, पृष्ठ - 34
3. नेमाजीपी,एवं त्रिपाठी डीसी, प्रतियोगी राजनीति विज्ञान, कॉलेज बुक डिपार्टमेंट जयपुर, 2009 पृष्ठ- 321-322
4. डॉ. एस एम सईद, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था,सुलभ प्रकाशन लखनऊ, 2002, पृष्ठ - 118
5. सुभाष कश्यप, हमारा संविधान, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली 2000, पृष्ठद्द 136
6. एस के ओझा, भारतीय संविधान एवं राजव्यवस्था, बौद्धिक प्रकाशन इलाहाबाद, 2014, पृष्ठ 121
7. डॉ. पुखराज जैन, भारतीय प्रधानमंत्री, साहित्य भवन आगरा, 1981,पृष्ठ 39-40
8. एम. लक्ष्मीकांत, भारत की राजव्यवस्था, 2011, पृष्ठ 19.1
9. किरण झा एवं अवधोश झा, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, स्पेक्ट्रम इंडिया नई दिल्ली, 1998, पृष्ठ -111
10. सुभाष कश्यप, हमारा संविधान,नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, 2000, पृष्ठ- 139
11. एस. प्रसन्न राजन,अब कहां है दमदार नेता, इंडिया टुडे, 21 जुलाई 2010, पृष्ठ -11
12. डॉ. एस एम सईद, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, सुलभ प्रकाशन लखनऊ, 2002, पृष्ठ -136

****

भारत में वस्त्र उद्योग: एक स्वर्णिम इतिहास

डॉ. अरविन्द प्रकाश *

शोध सारांश – वस्त्र उद्योग भारत के प्राचीनतम उद्योगों में से एक है। सूती, रेश्मी, ऊनी, कृत्रिम देशों से निर्मित वस्त्रों का भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यद्यपि ब्रिटिश शासन के अधीन देश का वस्त्र उद्योग बुरी तरह नष्ट हो गया था, परन्तु यही उद्योग था जिसने ब्रिटिश शासन में सर्वप्रथम संगठित उद्योग के रूप में अपने आपको स्थापित किया। 19वीं सदी के मध्यान्तर के पश्चात इस उद्योग का निरन्तर विकास हुआ। यद्यपि आज यह उद्योग संकट के दौर से गुजर रहा है परन्तु फिर भी यह देश का सबसे बड़ा उद्योग है।

भारतीय वस्त्र उद्योग का इतिहास बहुत व्यापक है, एक तरफ हाथ से बुने जाने वाले हथकरघा क्षेत्र का विस्तार है और दूसरी तरफ भारी भरकम पूंजी से चलने वाला मिल क्षेत्र। विकेन्द्रित पावरलूम का वस्त्र क्षेत्र में सबसे बड़ी हि है। सदियों से भारत सूती और रेश्मी वस्तुओं का प्रमुख निर्माता और निर्यातक है। परन्तु औपनिवेश्कि दौर में ब्रिटिश नीतियों के कारण भारत के वस्त्र उद्योग को बुरे दिन देखने पड़े। आजादी के बाद वस्त्र उद्योग ग्रामीण पारिवारों के अतिरिक्त ऐसे लाखों लोगों का जीवनधार बना जो कारखानों में काम करने के लिए गावों से बड़े शहर पहुंचे। 90 के दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण के बाद सरकार ने वस्त्र उद्योग पर विशेष ध्यान दिया और इस क्षेत्र का विकास प्रारम्भ हुआ।

प्रस्तावना – टेक्सटाइल्स या 'वस्त्र' शब्द सुनते ही खूबसूरत कपड़ों – सूती, रेश्मी, शिफान, गोटे की छवि उभरती है। मोहनजोदड़ों से मिली मूर्ति में स्त्री पर लिपटा कपड़ा हो, क्लियोपेट्रा की भव्य ओढ़निया हो, विक्टोरिया काल के बाल डांस गाउन हो या हमारी रानियों और राजकुमारियों की खूबसूरत पोशाकें हो, कपड़े हमेशा ही लोगों के जीवन का अटूट हिस्सा रहे हैं। युगों से विभिन्न प्रकार के कपड़े पहने जाते रहे हैं। जैसे – कपास, जूट और रेशम एवं प्राकृतिक रेशों तथा रेयान शिफान और मलमल जेसे मानव निर्मित रेशे।

भारतीय कपड़े अपने खूबसूरत रंगों और डिजाइनों के लिए दुनिया भर में प्रसिद्ध हैं। दुनिया के किसी भी अन्य देश में विविध संस्कृति तथा विभिन्न प्रकार की वस्त्र परम्पराओं में ऐसा करीबी रिश्ता नहीं रहा है, जैसा भारत में है। राजस्थान का बाजनी हो, बंगाल का कांथा हो, गुजरात का तनहुई हो या तमिलनाडु का कांजीवरम, प्रत्येक कपड़े पर क्षेत्रीय संस्कृति एवं परम्परा की स्पष्ट छाप है। बनारसी सिल्क, ओडिशा सिल्क, तसर, मूंगा और चंदंरी ऐसे ब्रांड हैं, जो दुनिया भर में सराहे जाते हैं।

सूत्री कपड़ों के उत्पादन और प्रयोग के मामले में भारत सदैव आगे रहा है। धोती, कुर्ता और साड़ी हो या लहंगा हो, सूती कपड़ा ऐतिहासिक रूप से आम आदमी का ही कपड़ा रहा है। कपास का बड़ा उत्पादक होने के कारण सूती कपड़े का उद्योग एक समय इतना महत्वपूर्ण था कि ब्रिटेन के सूती उद्योग के लिए वह खतरा बन गया। इतना बड़ा खतरा बन गया कि अपने वस्त्र उत्पादन उद्योग को बचाने के लिए अंग्रेजों को कई नीतियां लानी पड़ी ताकि भारत के सूती कपड़े को दुनिया भर में पहुंचने से रोका जा सके और भारतीय ग्राहकों को उनका ही सूती कपड़ा खरीदने के लिए मजबूर किया जा सके। राष्ट्रीय आन्दोलन खड़ा होने के पीछे ब्रिटिश सरकार की ये हरकते भी बड़ा कारण सिद्ध हुयी। इसके कारण ही खादी आजादी के दीवानों का प्रतीक बन गयी।

समय गुजरता गया और खादी बड़ी आबादी विशेषकर ग्रामीण महिलाओं को आजीविका का सम्मानजनक साधन मुहैय्या कराने वाली अमूल्य विरासत बन गई है। लाखों लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने की खादी की क्षमता देखकर प्रधानमंत्री ने मन की बात कार्यक्रम की एक कड़ी में भारत के युवाओं से कम से कम एक खादी का परिधान अपनाने की अपील की थी। खादी साफ और सबसे अधिक टिकाऊ कपड़ा भी है, जो पर्यावरण के लिहाज से प्रतिकूल आधुनिक सिंथेटिक रेशें का मजबूत विकल्प मुहैय्या करा सकता है। हथकरघा एक अन्य विविधता भरा तथा पर्यावरण के अनुकूल क्षेत्र है, जिसमें समृद्ध प्राचीन परम्परा तथा आधुनिक नयी पद्धतियों का संगम होता है। प्रधानमंत्री के शब्दों में हमें पारम्परिक हथकरघा उत्पादों को उनका उचित स्थान प्रदान करने तथा उन्हें भारत और दुनियां भर में फैशन का केन्द्र बनने की आवश्यकता है।

भारतीय रेशम अनंत काल से दुनियां भर में प्रसिद्ध रहा है। मोती, और मसालों की ही तरह यह प्रमुख निर्यात वस्तु थी। भारतीय रेशम और मलमल की दुनियां भर में बहुत मांग थी। रेशम उत्पादन उद्योग देश के पूर्वोत्तर और दक्षिणी हिस्सों में रोजगार प्रदान करता है। रेशे के तौर पर जूट का इस्तेमाल प्रमुख रूप से मैकेजिंग सामग्री में होता है। किन्तु बाद में जूट फैशन डिजाइनरों को भी पसन्द आया है और जूट वस्त्र सामग्री की मार्केटिंग जमकर की जा रही है तथा उसे पहना भी जा रहा है। तकनीकी वस्त्र उभरते हुए वस्त्र हैं जिनका प्रयोग चिकित्सा, सिविल, इंजीनियरिंग और वाहन जैसे विभिन्न कार्यों में होता है।

दुनियां का दूसरा सबसे बड़ा कपड़ा उत्पादक और निर्यातक होने के साथ भारतीय वस्त्र उद्योग, कृषि के बाद दूसरा सबसे बड़ा भारतीयों के लिए प्रत्यक्ष और 6 करोड लोगों के लिए परोक्ष रोजगार सृजित कर रहा है। देश के सकल घरेलू उत्पाद में इसका 4 प्रतिशत योगदान है। शिल्पकारों के कल्याण के लिए और उन्हें इस क्षेत्र में नवीनतम तकनीकी प्रगति की जानकारी देने के लिए सरकार ने बुनकर सेवा केन्द्र शिल्प क्लस्टर कार्यक्रम, ई–कामर्स

* एसोशिएट प्रोफेसर, फीरोज गांधी कालेज, रायबरेली (उ.प्र.) भारत

प्लेटफार्म जैसी कई योजनाएं आरम्भ की है।

2017-18 में भारत के कुल निर्यात में वस्त्र क्षेत्र का योगदान 13 प्रतिशत था। किन्तु निर्यात के मामले में भारत चौराहे पर खड़ा है और चीन, बांग्लादेश, यूरोपीय संघ, हांगकांग, वियतननाम, इंडोनेशिया, अमेरिका तथा कंबोडिया से कड़ी टक्कर मिल रही है। किन्तु कपड़ा क्षेत्र में 100 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति, संशोधित प्रौद्योगिकी उन्नयन कोष योजना (एटीयूएफएस), तकनीकी वस्त्र प्रौद्योगिकी अभियान (टीएमटीटी), कोरस इनक्यूबेशन केन्द्रों की स्थापना, बाजार, विकास सहयोग, मेगा क्लस्टर विकास योजनाओं जैसी अनुकूल सरकारी नीतियों तथा योजनाओं की मदद से वस्त्र उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था में सबसे आगे ही नहीं खड़ा रहेगा, बल्कि विश्व निर्यात में भी निश्चित रूप से नई ऊँचाइयां छुपएगा। इसके साथ ही इसमें आम आदमी की रोटी कपड़ा मकान की जरूरत पूरी करने की क्षमता है।

सृष्टि के प्रारम्भ से ही मनुष्य ने अपनी प्राथमिक आवश्यकता भोजन की पूर्ति के तत्काल बाद अपने शरीर को ढकने के लिए वस्त्र का आविष्कार किया। इस प्रकार ऋग्वेद में अनेक प्रकार के वस्त्रों का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद का ऋषि न केवल वस्त्र से परिचित है बल्कि वह उसे बुनना और अन्य धातुओं को तारों से सजाना भी जानता है। इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है। ऋग्वेद में पेशस् शब्द का उल्लेख हुआ है; इसका अर्थ है जरी का काम किया हुआ वस्त्र, जिसे एक नर्तकी पहनेगी। इससे यह स्पष्ट होता है कि ऋग्वेद काल में न केवल साधारण कपड़े की बुनाई से ऋषि परिचित है बल्कि वह ज़री युक्त कपड़ों को बुनने की कला में भी निष्णात् है।

वर्तमान में प्रयोग होने वाला ताना-बाना ऋग्वेद में तन्तु और ओतु है। ताना में तन्तु का तन अब भी बना हुआ है और ओतु बा क्रिया से बना है जिसका अर्थ है बुनना। जिस उपकरण से बुनाई करते थे उसे तसर कहते थे। ऋग्वेद में बुनने की तुलना बार-बार सूर्य से उसकी किरणों से की जा रही है। जहाँ पर यज्ञ होता है ऋषि उसकी भी तुलना बुनने से करता है। ऋषि कहता है कि किरण बुनने के लिए साम रूपी ताने बाने को बनाती है। कवि यहाँ पर जहाँ एक ओर ताने-बाने के संयोग से श्रेष्ठ वस्त्र बुनने की बात करता है वहीं वह प्रकृति के संयोग को भी इसी परिप्रेक्ष्य में व्याख्यायित करता है।

वैश्विक व्यापार में भारतीय वस्त्र उद्योग - प्राचीन भारत में प्रारम्भ से ही कृषि के साथ-साथ कुटीर उद्योगों को भी प्रश्रय दिया गया था। तभी भारत शेष विश्व के साथ व्यापार करके सोने की चिड़िया बन सका था। कोई भी देश कभी भी मात्र कृषि के बल पर विश्व की आर्थिक शक्ति नहीं बन सकता है। भारत जैसे देश के बारे में ये सभी बातें कि भारत कृषि प्रधान देश है भूमकारी एवं उपनिवेशिक मानसिकता को बल प्रदान करने वाली है। ऋग्वेद से लेकर अंग्रेजों के आने के पूर्व तक भारत कृषि के साथ-साथ उद्योग प्रधान व्यवस्था भी था, भारत में अनेकानेक प्रकार की जातियों का अभ्युदय और उनका विकास उनके कौशल का प्रतीक है। इन्हीं के कौशल से भारत का विश्व व्यापार में 18वीं सदी तक 34 प्रतिशत सहभागी था जो कि उस समय सर्वाधिक था। अंग्रेजों ने अपनी विस्तावादी नीति के द्वारा इस व्यवस्था को समाप्त कर दिया और भारत पर कृषि प्रधान देश का तमगा लगा दिया, जो कि आज भी प्रचलित है। देश के बजट की समीक्षा के समय यह जुमला बहुतायत में प्रचलित रहता है कि भारत एक कृषि प्रधान देश है। ऐसा इसलिए रहता है, जिससे कि हम अंग्रेजों के प्रति कृतज्ञ बने रहे कि अपने आकर हमें उद्योग आधारित अर्थव्यवस्था का हिस्सा बना दिया, नहीं तो हम कृषि आधारित गंवार अर्थव्यवस्था का ही हिस्सा बने रहते। भारत के वस्त्र उद्योग को सबसे अधिक हानि अंग्रेजों ने पहुंचाई क्योंकि भारत के वस्त्र उद्योग को हानि पहुंचाये बिना उनका वस्त्र उद्योग पनप नहीं सकता था। मार्क्स ने इस विषय पर बहुत ही ध्यानाकर्षक बात 10 जून 1853 को लिखे लेख में लिखी है - यूरोप अपने वस्त्र आवश्यकता की पूर्ति को भारत से प्राप्त करता है, बदले में उसे अपना सोना चांदी भेजता है। भारत का वस्त्र इतना उच्च कोटि का होता था कि इसका व्यापार अपने पैसे से न होकर सोना चांदी से होता था। यही कारण था कि सम्पूर्ण यूरोप का सोना चांदी भारत खिंचकर चला आया था, और ऐसा सदियों से हो रहा था। यही बात यूरोप वासियों को भारत की ओर खींचकर लायी। मार्क्स 24 जून 1953 के लेख में पुन: लिखते हैं कि 17वीं सदी के अन्तिम चरण और 18वीं सदी के अधिकांश काल में इंग्लैण्ड के उद्योगपति कह रहे थे कि भारत के सूत्री और रेषमी वस्त्रों का आयात उन्हें तबाह कर रहा है। अत: पार्लियामेन्ट को इस मामले में हस्तक्षेप करना चाहिए।

भारतीय वस्त्र उद्योग व सामाजिक संरचना - भारत की समृद्धि में अन्य उद्योग के साथ कपड़ा उद्योग की महत्वपूर्ण भूमिका थी। यह भूमिका भारत के समाज की एक दिन में ही नहीं बन गयी थी। यह उसकी युग-युगीन साधना का परिणाम थी। यह विशेषता कृषि करने वाले किसान में हो तो सकता है किन्तु उन्नत नहीं हो सकता। जब तक कि इस प्रकार का कार्य करने वाला कोई अलग वर्ग न हो। इस प्रकार से भारत कौशल आधारित समाज का देश था जिसे अंग्रेजों ने अपने स्वार्थ के लिए नष्ट किया। यदि ऐसा नहीं होता तो यह समाज अंग्रेजों के उद्योगों को स्थापित नहीं होने देता। मार्क्स के अनुसार कातना-बुनना इन लाखों आदमियों का धंधा गौण रूप से नहीं था। वह उनका मुख्य धन्धा था। उनके उत्पादन का उद्देश्य बिकाऊ माल तैयार करना था। यह माल भारत में और भारत के बाहर बड़े-बड़े बाज़ारों में बेचा जाता था। इस माल को तैयार करने वाले कारीगर गांवों में नहीं ढाका जैसे शहरों में रहते थे। जब अंग्रेजों ने यहां के उद्योग व्यापार को नष्ट कर दिया, तब ढाका की आबादी डेढ़ लाख से घटकर बीस हजार रह गयी। इस प्रकार अंग्रेजों ने व्यवस्थित रूप से भारत के उद्योगों को तबाह किया और शहर तथा गांव के मध्य आबादी के संतुलन को बिगाड़ा। शहर बर्बाद होने के बाद शिल्पकार गांव के बाहर की ओर रोजगार की तलाश में पलायन किए, फलत: गांवों की दशा भी बिगड़ी और अंग्रेजों ने कृषि प्रधान देश का तमगा लगा दिया और उससे मुक्ति के लिए उद्योगीकरण को आधार बनाया।

भारत के ये बुनकर विश्व का सबसे महीन सूत का कपड़ा बनाते थे जो कि लगभग 2300 काउण्ट (धागे की मोटाई नापने की इकाई) का होता था। आज विश्व की आधुनिकतम मशीनों के बावजूद भी हम इतना महीन सूत बनाने में सफल नहीं हो सके हैं। भारत के इसी कारीगरी से यूरोप के उद्योगपति प्रभावित हो रहे थे। व्यापारी भारत के कपड़े को पसन्द करते थे क्योंकि यह महंगा बिकता था और मुनाफा अधिक होता था इसलिए व्यापारियों के लिए वे लाभकारी था किन्तु यह उद्योगपति को बर्बाद कर रहा था। इसलिए उद्योगपति पार्लियामेन्ट से इसके आयात पर प्रतिबन्ध की मांग करते थे। परिणामस्वरूप इंग्लैण्ड में यह कानून बनाया गया कि जो व्यक्ति भारत के कपड़े को अपने पास रखेगा या बेचेगा उसमें 200 पौंड जुर्माना भरना होगा। विलियम तृतीय, जार्ज पंचम्, जार्ज द्वितीय, जार्ज तृतीय सहित अनेक राजाओं के जमाने में ऐसे कानून बनाये गये जिससे भारत का माल इंग्लैण्ड में बिकना बंद हो गया।

भारत में वस्त्र उद्योग आधारित पूरा एक समाज था जिसने भारत की समृद्धि में बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान दिया था लेकिन अंग्रेजों ने इसे

व्यवस्थित रूप से नष्ट किया। अंग्रेजों की यह भूमिका विश्व में अपने आप में एक अलग ही उदाहरण है। धर्मपाल जी के अनुसार सन् 1810 ई0 के आस-पास के ब्रिटिश भारतीय आंकड़ों से पता चलता है कि दक्षिण भारत के मिलों में सूती, रेशमी आदि कपडा बनाने और निवाड़ आदि तैयार करने के काम आने वाल स्त्रियों की संख्या 15 से 20 हजार तक प्रत्येक जिले में थी।

वस्त्र उद्योग यों तो सम्पूर्ण भारत में स्थापित था किन्तु इसके कुछ प्रमुख स्थल भी थे जैसे – ढाका, सिकन्दराबाद, लखनऊ, बनारस, रायबरेली में जायस, मऊ, रामापुर, अम्बेडकर नगर, आज़मगढ़, मुरादाबाद, कानपुर, प्रतापगढ़, ललितपुर, मेरठ, आगरा, दिल्ली रोहतक, ग्वालियर, चंदेरी, इंदौर, दक्षिण भारत में आर्नी, हैदराबाद, रायपुर, तंजौर, मदुरै आदि। इनमें से कुछ अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत है, कुछ आज भी प्रतिष्ठित है।

हथकरघा उद्योग भारत की पहचान थी जिसे अंग्रेजों ने समाप्त किया और बाद में स्वतंत्र भारत की सरकारों ने मिश्रित अर्थव्यवस्था का माडल स्वीकार करने के कारण इसके उन्नयन के विशेष प्रयास नहीं किए। सामान्यत: यह उद्योग स्त्री और बच्चों के बल पर अधिक समृद्ध था किन्तु कालान्तर में अनेक प्रकार के अधिकारों के लिए संघर्ष करने वालों ने भी इस उद्योग को उजाड़ने में आधुनिक अंग्रेजों की ही भूमिका का निर्वहन किया। इस प्रकार से परतन्त्रता के काल में प्रत्यक्ष रूप से और स्वतंत्रता के बाद अप्रत्यक्ष रूप से यह उद्योग अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए संघर्षत ही रहा। जिस उद्योग के बल पर भारत सोने की चिड़िया बना और जिसके वैशिष्ट्य ने सम्पूर्ण यूरोप को भयभीत कर दिया था। वही उद्योग आज अपने स्वर्णिम दिनों की वापसी की प्रतीक्षा कर रहा है। यद्यपि भारत सरकार द्धारा कुछ प्रयास अवश्य किये जा रहे हैं किन्तु वैश्विक नीतियों के चलते ये सब कितने सार्थक हो पायेंगे यह तो आने वाला समय ही बतायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रतियोगिता दर्पण, अतिरिक्तांक 2015, पेज नं0 126
2. योजना अक्टूबर, 2016, पेज 17-20, पेज नं0 7
3. भारत 2016, पेज 547
4. योजना, अप्रैल 2015, पेज 7
5. Annual Report 2017-18, Ministry of Textiles, Government of India.
6. Economic Survey 2016-17, part 2
7. http:/texmin.nic.in,Texctile resulgeree 2010-2011
8. वार्षिक रिपोर्ट 2018, पेज नं0 1, वस्त्र मंत्रालय भारत सरकार
9. www.epw.in
10. भारतीय अर्थव्यवस्था, सर्वेक्षण एवं विश्लेषण – डॉ0 एस0एन0 लाल, शिव पब्लिकेशन, इलाहाबाद संस्करण 2015 (अप्रैल), पेज नं0 5:11
11. Sumaiya R. Shaikh and Satish R Dularge (2013), “Atudy of Factors Affecding productivity of Powerloom Industries.” International Journal of Engineerng Research & Technology. 2(12) : 3174 – 3180.
12. यूनिक पब्लिकेशन 2009 19वां संस्करण – शंकर घोष, भारतीय अर्थव्यवस्था भाग-1, पेज नं0 116
13. Dr. T.S. Devaraja (2011). “Indian Textile and Garment Industry – An Overview.”
14. Noopur Tondon and E Eswara Reddy (2013). “A Study on Emerging Trends in Extiles Industry in India.” International Journal of Advancements in Research and Technology. 2(7) : 267-275.

****

स्त्री चेतना और आधुनिक काव्य

डॉ. ओमवती देवी *

प्रस्तावना – सृष्टि का मूलाधार निर्माण है, निर्माण की इस प्रक्रिया को पूर्ण करने के लिए ईश्वर ने प्रत्येक प्राणी को सृजन शक्ति प्रदान की है जिसकी सफल और सार्थक परिणति का आधार परस्पर विपरीत लिंगों का सहज आकर्षण है। स्त्री और पुरूष दोनों ही अपने प्रेम और विश्वास के द्वारा परिवार का निर्माण करते हैं। आदिमकाल से ही यह सहज आकर्षण दोनों को अपनी ओर खींचता रहा है। सभ्यता की ओर अग्रसर मानव ने इस आकर्षण को विवाह के रूप में बांध दिया। मानव सदैव प्रगति व आधुनिकता की ओर अग्रसर हुआ है जिससे उसके विचारो में निरन्तर प्रगतिशीलता बनी रहती है और यह प्रगतिशीलता हमें स्त्री–पुरूष संबंधों में भी दिखलाई देती है। हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में स्त्री–पुरूष संबंधों का विषय आदिकाल से लेकर आज तक निरन्तर परिवर्तित होता रहा है।

हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल विविध विधाओं का काल है। इसमें आरम्भ का परिवेश ऐसा था जहॉ राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियॉ युग के बदलाव की प्रेरक थी। यह जागरण का काल था, बदलाव का काल था। इस जागृति के मूल में शिक्षा का पश्चिमीकरण बहुत उत्तरदायी सिद्ध हुआ।[1] बदलाव के इस युग में कविता के विकास के कई चरण देखने में आते हैं आधुनिक काल के आरम्भ काल की कविता भारतेन्दुयुगीन कविता है। इस युग की कविता में सामाजिकता और स्वदेश भक्ति तो थी, पर स्त्री–पुरूष संबंधों की परम्परावादी प्रवृत्ति ही देखने में आती है। यह दूसरी बात है कि बदलाव के इस युग में स्त्री की रीतिकालीन श्रृंगारमयी छवि भी दिख जाती है– ठाकुर जगमोहन सिंह के शब्दों में –

झुकी झांकती भौह चलावती हो, नकवेसर झूमि झुमावती हो।
कर में पिचकारी लिए किनको तुम रंग भिगावन आवती हो।[2]

आज के समाज में स्त्री–पुरूष संबंधों की बदलती व्याख्या नि:सन्देह चिन्तन का विषय रहा है। आज की स्त्री का कार्यक्षेत्र अत्यन्त व्यापक हो गया है, यंत्रवत् अपने इस जीवन में वह निरंतर एक 'रूटिन' में बंटती जा रही है। रसोईघर में बाबर्ची के रूप में, बच्चो मे माँ के रूप में, घर में गृहणी के रूप में, आफिस में कर्मचारी के रूप में, बस में यात्री के रूप में उसके पास पति के साथ बैठने का समय ही नहीं है। वह आज शाम को सजी–धजी पति का एक पैर पर खडी होकर इंतजार नहीं कर पाती, क्योंकि ऑफिस से आकर उसे बच्चों को होमवर्क कराना है। पति के साथ घटते समय के कारण पति भी अपनी पत्नी के प्रति वह विश्वास नहीं रख पाता जो रखना चाहिए। स्त्री ने एक ओर जहॉ समाज में अपना स्थाना बनाया है वहीं अपने घर, अपने परिवार के मध्य बहुत कुछ खोया भी है– पति का विश्वास, बच्चों का अपनापन, घर की सुख–शान्ति व चैन। उसके जीवन में बढ़ते तनाव, टूटते बंधन एवं अविश्वास दानव के समान निरंतर दांत गडा रहे है।

द्विवेदीयुगीन कविता में जो काव्य चेतना उभरी, वह अपने पूर्ववर्ती कवियों के आगे की कड़ी है, इस समय कवियों की दृष्टि कविता मे समाज सुधार, स्त्री–शिक्षा, उपदेशात्मकता को लेकर बढ़ी। द्विवेदी जी का स्वयं का कहना था – 'कविता का विषय मनोरंजक एवं उपदेशजनक होना चाहिए।'[3] उस समय की कविता में देशभक्ति, आध्यात्मिकता, हास्य व्यंग्यपूर्णता के साथ सामाजिक सरोकार बडी प्रमुखता से उभरा है।' समाज सुधार के अन्य अनेक पहलूओं के साथ स्त्री के ऊपर भी दृष्टि रखी गई है। उस समय के अनुसार चलने वाले कवियों ने अपना रास्ता बदला। मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध, नाथूराम शर्मा शंकर आदि की दृष्टि बडी नवीनता लेकर आई।[4] स्त्रियों के उत्थान और उनको शिक्षा दिलाने का सराहनीय प्रयास इस युग की कविता में देखने को मिलता है और यहीं से स्त्रियों को पढ़ाने–लिखाने का जो विरोध होता, उसका एक संकेत आचार्य चतुरसेन ने अपने प्रसिद्ध साहित्येतिहास 'हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास' में दिया गया है। उसका कुछ अंश द्दष्टव्य है – 'स्त्रियों को पढ़ाना पाप समझा जाता था। स्त्री शिक्षा होनी चाहिए या नहीं, इस विषय पर उन दिनों बडे जोर–शोर से शास्त्रार्थ हुआ करते थे। इन शास्त्रार्थ में स्त्री–शिक्षा के हिमातियों को बहुधा लाठियां खानी पडती थी। गाली गुफ्ता तो साधारण बात थीं।'[5]

इस काल के अनेक कवियों मे से नारी–विषयक विशेष दृष्टि रखने वाले दो कवि महत्वपूर्ण है– अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध और मैथिलीशरण गुप्त। हरिऔध ने अपने 'प्रियप्रवास' नामक ग्रन्थ मे स्त्री के गुणों को युगीन परिस्थितियों के अनुकूल प्रदर्शित किया है। कृष्ण के वियोग में व्यथित राधा को एक समाज–सेविका के रूप मे प्रस्तुत किया है, वह विरहविधुरा है परन्तु परिस्थिति से समझौता करती है।[6] वह आत्मोत्सर्ग की भावना रखती है और अपने द्वारा जनहित की प्रेरणा देती है।[7] उसका स्वयं का परिणय निश्कामी और शुचि–सात्विक है। राधा यशोदा और नन्द को, गोप और गोपी को, बच्चों को, ढाढस और सहयोग देती है। यह स्त्री का युगीन स्वरूप है। इसी में समाज सेवा के अनेक भावो को कवि ने भर दिया है –

'वे सेवा थीं सतत करती वृद्ध–रोगी जनो की।
दीनो हीनों, निबल विधवा आदि को मानती थी।[8]

द्विवेदीयुगीन कवियों में गुप्त जी का महत्वपूर्ण स्थान है। उनकी नारी भावना बहुत चर्चित और प्रशंसित रही। उनकी यह कला रही है कि उन्होने उपेक्षित नारियों के चरित्रो को उभारकर अपनी नारी विषयक स्वस्थ दृष्टि का परिचय दिया है। उर्मिला, यशोधरा और विष्णुप्रिया (चैतन्य महाप्रभु की पत्नी) ऐसी ही उपेक्षित नारियाँ हैं। यो तो गुप्त जी ने स्त्री–पुरूष संबंधों की

* एसोसिएट प्रोफेसर (हिन्दी) दिगम्बर जैन कॉलेज, बडौत (बागपत) (उ.प्र.) भारत

परम्परावादी दृष्टि अपनायी है, किन्तु नारी जागरण के फलस्वरूप उन्होने नारी जागरण के रूपो को भी अंकित किया है। 'यशोधरा' में यशोधरा का स्वाभिमानिनी रूप प्रदर्शित किया गया है।[9] वह रूपवती, मानवती, पुत्रवती, प्रेमिका और कुलवधु के रूप में होते हुए भी एक स्वाभिमानी पत्नी के रूप में अभिव्यक्त हुई है और स्वयं बुद्धदेव को भी यशोधरा से ये कहना पड़ा है –

'मानिनि मान तजो लो, रही तुम्हारी बान।
दानिनि, आया स्वयं द्वार पर यह तब–तत्रभवान।'[10]

साकेत में गुप्त जी ने उर्मिला को देश की चिंता से युक्त दिखला कर युगीन परिवेश के अनुकूल चित्रित किया है।[11] और साकेत मे सीता जी को परिश्रम करते हुए दिखलाया है। पौधों में पानी देते हुए दिखलाया है, भोली–भाली किरात भील बालाओं को कातने और बुनने का उपदेश देते हुए दिखाया है।[12] गुप्त जी ने युगीन स्त्री समर्थन को इतिहास में चित्रित करके नारी शक्ति की पहचान प्रस्तुत की है। 'सिद्धराज' में उन्होने स्त्रियों की सेना का वर्णन किया है –

'वामाएं अनेक, दीर्घ शूल लिये दाहिने
हाथ में, लगाम धरे बांये हाथ में, करे
क्षीण कटि जटित विचित्र कटि–बंधो से,
पीठ पर बाल छोडे ढाल के–से ढंग से।'[13]

इस तरह द्विवेदीयुगीन नारी दृष्टि आगामी नारी–स्वतंत्रता का एक चरण है।

छायावादी कविता मे नारी अच्छी दृढ भूमिका पर अवतरित होती है। कल्पना के रंग में रंगी इस कविता में अतीत के आलोक में नारी के नये रूपों का विकास देखने मे आता है। जयशंकर प्रसाद की कामायनी स्त्री–पुरूष के पुराने युगल 'श्रद्धा और मनु' को लेकर चली है। कवि ने श्रद्धा के माध्यम से नारी के युगीन परिवेश–सम्पृक्त रूप को प्रस्तुत किया है। इस संबंध में डा0 बच्चन सिंह ने ठीक ही कहा है –

'कामायनी की धुरी जिस श्रद्धा पर आधारित है, वह बदले हुए युग की देन है।'[14]

प्रसाद जी ने श्रद्धा को काम गोत्रजा होने का कथन किया है– 'श्रद्धा कामगोत्र की बालिका है।'[15] कवि ने श्रद्धा के प्रेम, दया, सहानुभूति आदि गुणों के विकास को अभिव्यक्त किया है। श्रद्धा महान नारी है जो मनु को आनन्द की ओर ले जाती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कामायनी की श्रद्धा के विषय में अपना अभिमत देते हुए कहा है – 'कवि ने श्रद्धा को मृदुता, प्रेम और करूणा का प्रवर्तन करने वाली और सच्चे आनन्द तक पहुँचाने वाली चित्रित किया है।'[16]

'मै बैठी गाती हूँ तकली के
  प्रतिवर्तन में स्वर विभोर
चल री तकली धीरे धीरे
  प्रिय गये खेलने अहेर।'[17]

'कामायनी' में इड़ा की भूमिका एक बुद्धिवादिनी स्त्री के रूप में की गई है। 'अमरकोश' में इड़ा शब्द पृथ्वी, बुद्धि और वाणी के लिए आया है।[18] 'प्रसाद' ने इड़ा को तर्क जन बुद्धि के रूप में प्रस्तुत किया है –

'बिखरी अलकें यो तर्क जाल' कहने में प्रतीकात्मक शैली में नारी को यानि इड़ा को बुद्धि गुणों से युक्त दिखलाया है। डॉ0 बच्चन सिंह ने मान कि इडा के वर्णन से सामाजिक सिलसिला टूट जाता है – ''इससे व्यक्ति की मनोवैज्ञानिकता का विकास तो चित्रित हो जाता है लेकिन सामाजिकता का सिलसिला टूट जाता है।''[19] संक्षेप में इड़ा का चित्रण कामायनी में साहित्य के स्त्री–पुरूष संबंधों की विविधता का एक अंग है।

छायावादी कवि निराला ने 'राम की शक्ति की पूजा' में स्त्री के शक्ति स्वरूपा रूप का चित्रण किया है।[20] महादेवी वर्मा छायावादी ऐसी कवयित्री है जिन्होने स्त्री–पुरूष के लौकिक प्रेम चित्रण को आध्यात्मिकता की आँखों से देखा है। इतना ही नहीं उन्होने नारी को पुरूष की सहायता के रूप में वर्णन करके नारी के महत्व को बढा कर नारी जागरण को एक कदम और बढा दिया है। दीपशिखा की भूमिका में अपना अभिमत देते हुए उन्होने कहा है–

''नारी केवल मांसपिण्ड की संज्ञा नहीं है। आदिमकाल से आज तक विकास–पथ पर पुरूष का साथ देकर, उसकी यात्रा को सरल बनाकर उसके अभिशापों को स्वयं झेलकर और अपने वरदानो से जीवन में अक्षय शक्ति भरकर, मानव ने जिस व्यक्तित्व, चेतना और हृदय का विकास किया है उसी का पर्याय नारी है।''[21]

छायावादोत्तर कविता प्रगति की कविता है और उसमें सामाजिक द्वंद्व को अधिक मुखरित किया गया है, फिर भी दिनकर की उर्वशी नामक रचना 'पुरूरवा' और 'उर्वशी' के प्रेम की कहानी प्राचीन स्त्री–पुरूष संबंधों को आधुनिक दृष्टि से देखने की कहानी है।

प्रयोगवादी कविता और नई कविता पश्चिम के प्रभाव से अनुरंजित कविता है उसमें स्त्री–पुरूष प्रेम में काम की अकुंठ अभिव्यक्ति देखने में आती है। यों 'भवानीप्रसाद मिश्र' की 'कालजयी' जैसी रचना पति–पत्नी प्रेम के परम्परावादी उदाहरण भी कहे जा सकते है।

इस संदर्भ में अज्ञेय का नाम अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनों ही उनके काव्य में नूतनता की चाह से सम्पृक्त है। स्त्री के रूप की परम्परावादी दृष्टि को उन्होने नकारा है। उनकी 'कलगी बाजरे की' नामक कविता इस संबंध में उदाहरण देने योग्य है। वे अपनी प्रेयसी को बिछली घास बाजरे की कलगी कहकर स्त्री सौन्दर्य बोध का नया रूप प्रस्तुत करते है। इस संबंध में वे कहते हैं –

''ये उपमान मेले हो गये है
देवता इन प्रतीकों के कर गये है कूच
कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है।
मगर क्या तुम नहीं पहचान पाओगी
अगर मैं यह कहूँ–
बिछली घास हो तुम''
लहलहाती हवा में कलगी छरहरे बाजरे की।''[22]

अज्ञेय के काव्य में प्रकृति के माध्यम से अभिव्यक्त की गई यौन –कुण्ठा और सैक्स वर्णन भी कम नहीं है। इस तरह का एक उदाहरण द्रष्टव्य है –

''स्नेह से आलिप्त
बीज के भवितव्य से उत्फुल्ल
बद्ध
वासना के पंक सी फैली हुई थी
धारयित्री सत्य–सी निर्लज्ज, नंगी
औ समर्पित।''[23]

स्त्री–पुरूष के प्रेम और सैक्स का उदाहरण गिरिजाकुमार माथुर की 'चूड़ी का टुकडा' नामक कविता में मिलता है।''[24] प्रयोगवादी कवियों की अनेक रचनाओं में स्त्री–पुरूष के प्रेम के, सैक्स के, विवाहेत्तर संबंधों के, पति–पत्नी के बनते बिगडते संबंधो के उदाहरण मिलते हैं। इन संबंधो में स्त्री–पुरूष के बहुत से मीठे–कड़वे चित्र भी मिल जाते हैं। जैसे–

''मोती के सौदागर नभ की,

स्वस्थ युवा अनब्याही बेटी,
उषा कुमारी
इक्के वाले सूरज के संग
हिरन हो गई।
हवा हो गई।
सुना आपने?''[25]

सारांश यह है कि कविता के साठोत्तरी युग में स्त्री-पुरूष संबंध बदलाव की ओर बढ़े। प्रेम की उदात्तता की जगह मांसलता, विवाहेत्तर संबंध काम और सैक्स, रूप-लिप्सा अपने व्यक्तित्व की रक्षा और पुरानी मान्यताओं के प्रति नाकारात्मक दृष्टि देखने में आती है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि - प्रेम एक ऐसा भाव है जो प्रत्येक हृदय में वास करता है इसके अनेक रूप हैं- ममता, मित्रता और दाम्पत्य। आज के मशीनीकरण युग में मनुष्य भी एक यंत्र के समान हो गया है, उसके हृदय के कोमल भाव भी बंजर भूमि के समान हो गये है, प्रेम के त्याग, समर्पण, विश्वास, आस्था, लगाव जैसे तत्वों का स्थान अब स्वार्थ, अविश्वास, धोखा, विस्मृति ने धारण कर लिया है। आज नारी घर की चारदिवारी से निकलकर बाहरी समाज से जुड़ी है और अन्य पुरूषों के सम्पर्क में भी आयी जिससे उसका पति ही उसे संदेह की दृष्टि से देखने लगा, तो मनुष्य का मनुष्य पर विश्वास कैसे हो सकता है। प्रेम का सीधा संबंध स्त्री और पुरूष के पवित्र दाम्पत्य से है। प्रेम व विश्वास की मजबूत डोर ही दोनों को एक दूसरे से जोड़ती है। किन्तु आज के अविश्वासी युग में इसकी जकड ढ़ीली होती जा रही है। एक-दूसरे के बीच अविश्वास, स्वार्थ-सिद्धि, अहं, बाहरी आकर्षण दोनों को एक-दूसरे से अलग कर रहे हैं। आज के बदलते युग और परिवेश में स्त्री-पुरूष के पांव की जूती बनने को तैयार नहीं है उसने अपनी युग-सापेक्ष पहचान बनाई है वह कहीं मारग्रेट अल्वा है, कहीं किरण बेदी, कहीं पी0टी0 उषा है, कहीं फूलन देवी, कहीं माधुरी दीक्षित, कहीं सुष्मिता सेन है, कहीं शोभा डे, कहीं अमृता प्रीतम है, कहीं लता मंगेश्कर, कहीं मदर टेरेसा। लेकिन आज नैना साहनी और निर्भया जैसी कुछ बदनसीब भी हैं जो पुरूष की हवस और पाशविक वृत्ति का शिकार हो जाती है। उसमें स्त्री का कार्यक्षेत्र अत्यन्त व्यापक हो गया है वह क्षेत्र चाहे कला का हो, सौन्दर्य, राजनीति, अथवा साहित्य का - किसी से भी वह अछूती नहीं रही है। अपनी पहचान बनाने के साथ पुरूष के प्रति दृष्टिकोण में भी अंतर आया है, वह पुरूष का स्वामी रूप नकार देना चाहती है। वह उसकी सहभागिनी, सहयोगिनी, बनना चाहती है। जिस घर में पुरूष स्त्री को समझ गया है, वहाँ पूर्ण संतोष है लेकिन जहॉ स्त्री पर आज भी वह अपना फैसला थोपना चाहता है, वहॉ आक्रोश और असंतोष पनपने लगते हैं।

निष्कर्षत: कह सकते है कि आज स्त्री बुद्धि और चेतना के आलोक में न केवल अनन्त ऊँचाइयों का स्पर्श कर रही है बल्कि पुरूष के कंधे से कंधा मिलाकर उसकी सहयोगिनी व सहगामिनी बनकर हाशिए नहीं बल्कि विकास की मुख्य धारा में अपना सहयोग दे रही हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ0 बच्चन सिंह, पृ0 38
2. वही, पृ0 121 '---'
3. वही पृ0 132 '---'
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास, सं0 नगेन्द्र, पृ0 488
5. हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास, आचार्य चतुरसेन, पृ0 503
6. छू के प्यारे कमलपग को पयार के साथ आ जा।
   जी जाऊँगी हृदयतल में मै तुझी को लगा के।।
   प्रियप्रवास 6/82, हरिऔध।
7. वही, 16/46 हरिऔध।
8. प्रियप्रवास, हरिऔध 16/63
9. वही पृ0 268
10. यशोधरा, मैथिलीशरण गुप्त, पृ0 143
11. 'पूछी थी सुकाल दशा मैने आज देवर से,
    कैसी हुयी उपज कपास, ईख, ध्यान की?'
    वही पृ0 306
12. साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, पृ0 227
13. सिद्धराज, मैथिलीशरण गुप्त, पृ0 7
14. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ0 बच्चन सिंह, पृ0 149
15. कामायनी (आमुख) प्रसाद, पृ0 5
16. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आ0 रामचन्द शुक्ल, पृ0 685
17. कामायनी, जयशंकर प्रसाद, पृ0 115
18. गो भू वाचस्त्विड़ा इला : (उमर) दे, कामायनी, आमुख, पृ0 7
19. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ0 बच्चन सिंह, पृ0 184
20. राग-विराग, निराला, पृ0 106
21. दीपशिखा (चिंतन के कुछ क्षण), महादेवी वर्मा, पृ0 49
22. दे, काव्य बिंब, डॉ0 नगेन्द्र, पृ0 68
23. डत्यलम्, सावनमेघ, अज्ञेय, पृ0 155
24. तार सप्तक, संपा0 अज्ञेय, पृ0 129
25. तार सप्तक, रामविलास शर्मा, पृ0 240

****

Mutual Funds Sector in India

Dr. Rajesh Shroff *

Abstract - A Mutual Fund is an investment vehicle which pools money from investor with common investment objectives. It then invests their money in various assets to gain certain financial goals. The mutual fund is trusts which pool the savings of large number of investors and then reinvests those funds for earning profits and then distribute the dividend among the investors. The investments are made by an assets management company or AMC. Each AMC investment plan managed by a fund manager with the help of his team of professionals. Mutual Fund in India have came a long way since 1964. In 1993 private and foreign investors entered the industry. The securities and exchange board of India (SEBI) formulated the mutual fund regulation in 1996. Since then several mutual funds have been set up by the private and joint sectors. SEBI regulations for mutual funds have made the industry very transparent.
Key Words- Investment, AMC, SEBI, Fund, Transparent.

Introduction - The mobilization of saving is most necessary for the development on any county. A mutual fund is a trust that pools the savings of a number of investors who share a common financial goal. The money thus collected in invested in capital market. Instruments such as shares, debentures, and other securities. The income earned through these investments is shared by its unit holders in proportion to the number of units owned by them. Thus a mutual fund is the most suitable investment for the common man as it offers an opportunity to invest in a diversified, professionally managed basket of securities at a relatively low cost. Invetors interests were safeguarded by SEBI and the government offered tax benefits to the investors in order to encourage them. SEBI (Mutual Funds) regulations, 1996 was introduced by SEBI that set uniform standareds for all mutual funds in India.

Objective of Study :-

1. To know about the history of mutual funds in India.
2. To know about the current scenario of mutual funds sector in India.
3. To know about the various of mutual funds.

Data and Research Methodology - These study based on secondary data which were collected from SEBI Reports, RBI Reports, Various Journals, Related Books, News Paper etc. The analysis above data and find out the conclusion.

History of Mutual Funds in India - The mutual fund industry in India started in 1963 with the formation of Unit Trust of India, at the initiative of the Government of India and Reserve Bank of India. The history of mutual funds in India can be broadly divided into five distinct phases -

1. First Phase - 1964-1987 - Unit Trust of India (UTI) was established in 1963 by an Act of Parliament. It was set up by the Reserve Bank of India and functioned under the Regulatory and administrative control of the Reserve Bank of India. In 1978 UTI was de-linked from the RBI and the Industrial Development Bank of India (IDBI) took over the regulatory and administrative control in place of RBI. The first scheme launched by UTI was Unit Scheme 1964. At the end of 1988 UTI had Rs. 6,700 crores of assets under management.

2. Second Phase - 1987-1993 (Entry of Public Sector Funds) - 1987 marked the entry of non-UTI, public sector mutual funds set up by public sector banks and Life Insurance Corporation of India (LIC) and General Insurance Corporation of India (GIC). SBI Mutual Fund was the first non-UTI Mutual Fund established in June 1987 followed by Can bank Mutual Fund (Dec 87), Punjab National Bank Mutual Fund (Aug 89), Indian Bank Mutual Fund (Nov 89), Bank of India (Jun 90), Bank of Baroda Mutual Fund (Oct 92). LIC established its mutual fund in June 1989 while GIC had set up its mutual fund in December 1990.At the end of 1993, the mutual fund industry had assets under management of Rs. 47,004 crores.

3. Third Phase - 1993-1996 (Entry of Private Funds) - A new era in the mutual fund industry began in 1993 with the permission granted for the entry of private sector funds. This gave the Indian investors a broader choice of 'fund families' and increasing competition to the existing public sector funds.

4. Fourth Phase - 1996-1999 (Growth and SEBI Regulation) - Since 1996, the mutual fund industry scaled newer heights in terms of mobilization of funds and number of players. Deregulation and liberalization of the Indian economy had introduced competition and provided impetus to the growth of the industry. A comprehensive set of regulations for all mutual funds operating in India was introduced with SEBI (Mutual Fund) Regulations, 1996.

5. Fifth Phase – Since 1999 (Growth and SEBI

***Principal, Indore Indira School of Career Studies, Indore (M.P.) INDIA**

Emergence of a Large Industry) - The year 1999 marked the beginning of a new phase in the history of the mutual fund industry in India, a phase of significant growth in terms of both amount mobilized from investors and assets under management. Between 1999 and industry has doubled in terms of AUM which have gone from above Rs. 1,50,000 Crore.

Types of Mutual Funds - Mutual Funds can be classified into various categories under the following heads:-

1. Base Of Type Investments : While launching a new scheme, every Mutual Fund is supposed to declare in the prospectus the kind of instruments in which it will make investments of the funds collected under that scheme. Thus, the various kinds of Mutual Fund schemes as categorized according to the type of investments are as equity funds / schemes, debt funds / schemes (also called income funds), diversified funds / schemes (also called balanced funds), gilt funds / schemes, money market funds / schemes, sector specific funds, index funds

2. Base Of The Time Of Closure Of The Scheme : While launching new schemes, Mutual Funds also declare whether this will be an open ended scheme (i.e. there is no specific date when the scheme will be closed) or there is a closing date when finally the scheme will be wind up. Thus, according to the time of closure schemes are classified as open ended schemes and close ended schemes. Open ended funds are allowed to issue and redeem units any time during the life of the scheme, but close ended funds cannot issue new units except in case of bonus or rights issue. Therefore, unit capital of open ended funds can fluctuate on daily basis (as new investors may purchase fresh units), but that is not the case for close ended schemes. In other words we can say that new investors can join the scheme by directly applying to the mutual fund at applicable net asset value related prices in case of open ended schemes but not in case of close ended schemes. In case of close ended schemes, new investors can buy the units only from secondary markets.

3. Base Of Tax Incentive Schemes : Mutual Funds are also allowed to float some tax saving schemes. Therefore, sometimes the schemes are classified according to this also, tax saving funds and not tax saving funds / other funds

4. Base Of The Time Of Payout : Sometimes Mutual Fund schemes are classified according to the periodicity of the pay outs (i.e. dividend etc.). The categories are as Dividend Paying Schemes, Reinvestment Schemes

Present Scenario of Mutual Funds in India - Today mutual funds in India have entered all the portfolio of capital markets be it equity, debts markets, money market etc. The present scenario of mutual fund in India shows in following tables – The assets under management (AUM) is important indicator the present scenario of mutual fund in India.

Table 1

Year	Amounts in Thousand Crores
2009-10	614
2010-11	592
2011-12	587
2012-13	701
2013-14	825

Assets Under Management Rs. Thousand Crores

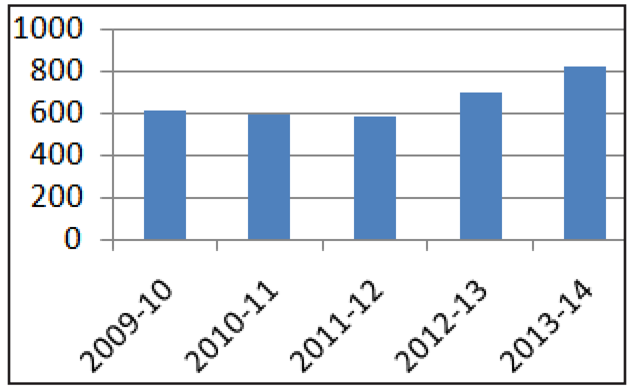

Source – AMFI

Investment in Mutual Funds :-

Table 2

Year	Amounts in Crores
2010-11	More than 700000
2011-12	685000
2012-13	803000
2013-14	900000
2014-15	1190000

Investment in Mutual Funds in India Rs. Crores

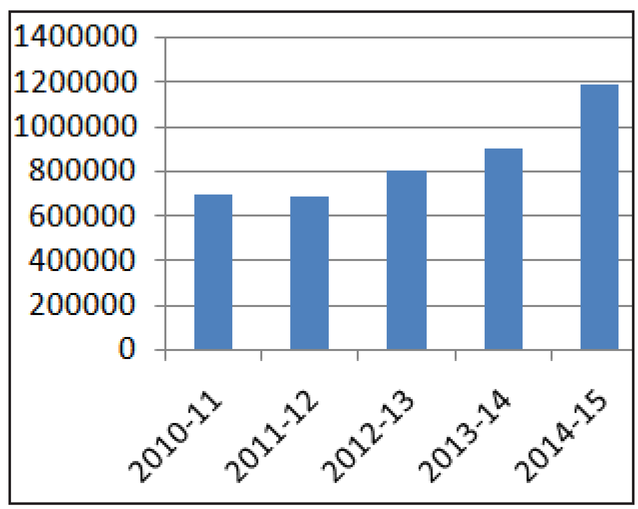

Source – SEBI

Investment in Mutual Fund increase by 70% from 2010-11 to 2014-15. Assets Under Management (AUM) increase by 34% from 2009-10 to 2013-14. The mutual fund industry in India run most successful phase in the last 5 year. Retail investors have put thousands of crores of money into funds and have reaped handsome rewards from the market. The

confidence of investors in the market has increased a large number of private investors.

Conclusion - There is a large scope in the future for the expansion of the mutual funds industry in India. A number of foreign based assets management companies are venturing into Indian markets. The securities exchange board of India (SEBI) has allowed the introduction of commodity mutual funds. Mutual funds invest in a broad range of securities. This limits investment risk by reducing the effect of a possible decline in the value of any one security. Mutual fund investors can benefit from diversification techniques usually available only to investors wealthy enough to buy significant position in a wide variety of securities. According to Mr. Sanskaran Naren "We are comfortable with sectors where we are sure of the quality of business"

References :-

1. Various Publication of SEBI.
2. Various Reports of AMFI.
3. 'Appraisal of Mutual Fund in India' - Jaspal and Singh.
4. Related Research Journal.
5. Newspapers.

****

माननीय सांसदों-विधायकों की गिरफ्तारी एवं कानून व्यवस्था एवं पुलिस की भूमिका

आशीष श्रीवास्तव *

प्रस्तावना –जब किसी माननीय सांसदों एवं विधायकों की गिरफ्तारी होती है तो जनता में आक्रोश उत्पन्न हो जाता है, एवं कानून व्यवस्था बिगड़ जाती है कानून व्यवस्था को बनाए रखने में पुलिस की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

भारतीय संविधान संघात्मक है एवं उसे लोकतांत्रिक स्वरूप प्रदान किया गया है। लोकतांत्रिक शासन में विधानमंडल अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। उसका निर्वाचन और प्रवर्तन न्यायपालिका का महत्वपूर्ण कृत्य हैं। इस प्रकार विधानमंडल महत्वपूर्ण निर्णायक भूमिका निष्पादित करते हैं। वे जनता की भावना की अभिव्यक्ति करते हैं और इस कारण होने 'जन इच्छा का भंडार' कहा जाता है। अत: विधानमंडल की एवं उसके सदस्यों की गरिमा और शालीनता की रक्षार्थ तथा निर्भीक रूप से कार्य संपादन करने हेतु कुछ विशिष्ट प्रकार के विशेष अधिकारों की आवश्यकता होती है। इसी कारण सांसदों को जो विशेष अधिकार प्रदान किए गए हैं, वे उनके संसदीय दायित्वों के संपादन एवं कर्तव्यों के निर्वाहन हेतु अनिवार्य प्रकार के हैं।

अत: विशेषाधिकार की उत्पत्ति एवं विकास का मूलाधार संसद की कार्यवाहियों को सामान्य विधि की परिधि से बाह्य करके सांसदों एवं विधायकों की संसदीय कार्यवाहियों में भयमुक्त होकर संसदीय दायित्वों एवं कर्तव्यो की ओर कार्यशील करना है। उसके संसदीय कार्य में किसी प्रकार का हस्तक्षेप या बाधा डालना विशेषाधिकार की सीमा के अंतर्गत होता है। इस प्रकार विशेषाधिकार के शस्त्र के द्वारा सदन अपने सदस्यों कर्मचारियों एवं अन्य व्यक्तियों को सुरक्षा प्रदान करता है परंतु यह तब जब वे संसद की कार्यवाहियों से संबंधित कर्तव्यों के निर्वहन का कार्य करते हैं। **बोदा वरिश मिश्र विरुद्ध नंद किशोर दास ए- आई- आर- 1953 उड़ीसा ।।। के प्रकरण में यह अभिव्यक्त किया गया है कि :** 'यह एक सुस्थापित संसदीय परिपाटी प्रतीत होती है सदन की कार्यवाही संसद के वास्तविक सत्र के दौरान की कार्यवाहियों तक ही सीमित नहीं है, अपितु इसमें प्रश्नों की सूचना देना या संकल्प की सूचना देना आदि जैसी कुछ प्रारंभिक कार्यवाहियाँ भी सम्मिलित है। संभवत: उक्त शब्दों का अर्थ इस धारणा पर आधारित है कि जब किसी प्रश्न की सूचना दी जाती है और अध्यक्ष महोदय उसके पूछे जाने की स्वीकृति और स्वीकृत कर देते हैं तो सिद्धांत यह मानना चाहिए कि प्रश्न वस्तुत: संसद के सत्र में पूछे गए थे और उनको यथास्थिति स्वीकृति दी गई थी।'

सदन की कार्यवाही शब्दावली को व्यापक अर्थ प्रदान करने का संभवत कारण यह है कि जब किसी प्रश्न की सूचना दी जाती है और अध्यक्ष उसे स्वीकार या अस्वीकार कर देता है तो यह समझना चाहिए कि वह प्रश्न संसद के सत्र में वास्तव में पूछे गए हैं और उन्हें स्वीकार या अस्वीकार कर दिया गया है।

इसी संबंध में भारतीय संविधान का अनुच्छेद 212 पठनीय है जो निम्नांकित है:न्यायालय द्वारा विधानमंडल की कार्यवाहियों की जांच ना किया जाना।

1. राज्य के विधानमंडल की किसी कार्यवाही की विधिमान्यता को प्रक्रिया की किसी अभिकथित अनियमितता के आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा।
2. राज्य के विधान-मंडल का कोई अधिकारी या सदस्य, जिसमें इस संविधान द्वारा या इसके अधीन उस विधान-मंडल में प्रक्रिया या कार्य-संचालन का विनियमन करने की अथवा व्यवस्था बनाए रखने की शक्तियां निहित हैं, उन शक्तियों के अपने द्वारा प्रयोग के विषय में किसी न्यायालय की अधिकारिता के अधीन नहीं होगा।

भारतीय संविधान में सांसद तथा विधायकों को पुलिस द्वारा गिरफ्तार करने के संबंध में कोई उपबंध नहीं दिए गए हैं इस संबंध में भारतीय संविधान के अनुच्छेद 105 सांसदों को और अनुच्छेद 194 विधान मंडलों के सदस्यों को विशेषाधिकार प्रदान करते है।

डॉ. बी. आर. अंबेडकर के मतानुसार संसदीय विशेषाधिकारों को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

विशेषाधिकार में सम्मिलित हैं:

1. प्रथमत: जो सदस्यों को व्यक्तिगत रुप से प्राप्त हैं जैसे वाक् स्वतंत्रता
2. द्वितीय अपने कर्तव्यों के पालन के समय गिरफ्तारी से उन्मुक्ति।

उक्त दोनों प्रकार के विशेषाधिकारो का संविधान में उल्लेख करना सरल था। अत: उन्हें संविधान के अनुच्छेद 105 और 194 के उपबंध प्रथम एवं द्वितीय मैं उल्लिखित किया गया है।

उक्त मूलभूत जटिलताओं को दृष्टिगत रखते हुए भारत के संविधान में अनुच्छेद 105 एवं अनुच्छेद 194 की रचना की गई है। उक्त दोनों अनुच्छेद भाषा एवं भाव की दृष्टि से एक रस है। अत: किसी एक अनुच्छेद के उल्लेख में दूसरा अनुच्छेद अंतर्निहित है।

अन्य विशेषाधिकार– मूल अनुच्छेद 105 में अन्य विशेषाधिकारो के विषय में यह उपबंध ही था कि वह ऐसे होंगे जो संविधान लागू होने के समय ब्रिटिश संसद के सदस्यों को प्राप्त थे। 44वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा अनुच्छेद 105 के खंड 3 में संशोधन कर दिया गया है जो अब यह उपबंधित करता है कि अन्य बातों में संसद के प्रत्येक सदन की और प्रत्येक सदन के सदस्यों और समितियों की शक्तियाँ, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियाँ ऐसी होंगी जो संसद, समय-समय पर, विधि द्वारा, परिनिश्चित करे और जब तक वे इस प्रकार परिनिश्चित नहीं की जाती हैं तब तक वही

* शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

होंगी जो 44वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1978 की धारा 15 के प्रवृत्त होने से ठीक पहले उस सदन की और उसके सदस्यों और समितियों की थीं।

44वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा अनुच्छेद 105 के खण्ड 3 को उसी रूप में कर दिया गया है जिस रूप में वह 44वें संशोधन के पूर्व था। किंतु प्रस्तुत संशोधन द्वारा अनुच्छेद में संशोधन करके यह स्पष्ट कर दिया गया है कि इस मामले में अब ब्रिटिश संसद का कोई हवाला नहीं दिया जाएगा संशोधित अनुच्छेद 105 का खंड 3 यह उपबंधित करता है कि अन्य बातों में संसद के सदन की और सदन के सदस्यों की और समितियों की शक्तियाँ, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियाँ वही होंगे जो संसद समय – समय पर विधि द्वारा निश्चित करें और जब तक यहां निश्चित नहीं हो जाता तब तक वही होंगी जो 44वें संविधान संशोधन अधिनियम 1978 के ना होने से ठीक पहले सदनो या सदस्यों को प्राप्त थी। इसके पश्चात अब स्थिति इस प्रकार है–

1. वर्तमान सभी विशेषाधिकार वही होंगे जो संविधान लागू होने पर या 44वें संविधान संशोधन के पूर्व तक प्राप्त थे यह सब वही विशेषाधिकार है जो ब्रिटिश संसद के सदस्यों को उक्त समय पर प्राप्त थे।
2. अन्य बातों में प्रत्येक सदन के विशेषाधिकार वे होंगे जो संसद विधि द्वारा विहित करें अनुच्छेद 194 के खंड 3 में भी जो राज्य विधान मंडलों से संबंधित है इसी प्रकार का संशोधन किया गया है।

44 वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1978 के लागू होने के पूर्व भारत में विधान मंडल तथा उसके सदस्य को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त थे।

अनुच्छेद 105 का मनन करने से प्रकट होता है कि –

क – उपबन्ध 1

1. संविधान के उपबंधों के और संसद की प्रक्रिया का विनियमन करने नियमों और स्थाई आदेशों के अधीन रहते हुए।
2. संसद में वाक् स्वतंत्रय होगा।

ख – उपबन्ध 2

1. संसद में उसकी किसी समिति में संसद के सदस्य द्वारा कही गई बात या किए गए किसी मत के संबंध में उसके विरुद्ध किसी न्यायालय में कोई कार्यवाही नहीं की जाएगी।
2. किसी व्यक्ति के विरूद्ध संसद के किसी सदन के प्राधिकार द्वारा या उसके अधीन किसी प्रतिवेदन, पत्र, मतों या कार्यवाहियों के प्रकाशन के संबंध में इस प्रकार दायी नहीं होगा।

ग – उपबन्ध 3– अन्य बातों में संसद के प्रत्येक सदन की और प्रत्येक सदन के सदस्यों और समितियों की शक्तियाँ, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियाँ ऐसी होंगी

1. जो संसद, समय–समय पर, विधि द्वारा,परिनिश्चित करे।
2. तब तक वही होंगी जो 44वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1978 की धारा 15 के प्रवृत्त होने से ठीक पहले उस सदन की और उसके सदस्यों और समितियों की थीं।

घ– उपबन्ध 4 – जिन व्यक्तियों को इस संविधान के आधार पर संसद के किसी सदन या उसकी किसी समिति में बोलने का और उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग लेने का अधिकार है, उनके संबंध में खंड 1, खंड 2 और खंड 3 के उपबंध उसी प्रकार लागू होंगे जिस प्रकार वे संसद के सदस्यों के संबंध में लागू होते हैं।

भारतीय संविधान में कुछ अनुच्छेद ऐसे हैं जो विशेषाधिकार के द्योतक हैं। जैसे अनुच्छेद 122 एवं 212।

अनुच्छेद 122 के अनुसार – न्यायालयों द्वारा संसद की कार्यवाहियों की जाँच न किया जाना।

अनुच्छेद 212 के अनुसार – न्यायालयों द्वारा विधानमंडल की कार्यवाहियों की जाँच न किया जाना।

प्रजातंत्रीय शासन का मूलभूत सिद्धांत यह है कि विधि की दृष्टि में सभी व्यक्ति समान होते हैं, परंतु प्रजातांत्रिक व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित करने हेतु एवं विधि द्वारा प्रदत्ता शक्तियों के विधिवत निष्पादन हेतु कुछ विशेष अधिकारों की आवश्यकता होती है और इन विशेषाधिकारों को विशेषाधिकार की संज्ञा दी गई है।

अत: जो कर्तव्य या दायित्व सामान्य नागरिको के लिए बंधानकारी है उनसे किसी विशेष कर्तव्यो या दायित्वों से मुक्ति को विशेषाधिकार कहा जाता है।

गिरफ्तारी से स्वतंत्रता – इंग्लैंड में एक सुस्थापित विशेषाधिकार है कि संसद का कोई भी सदस्य संसद के सत्र काल में और आरंभ होने के 40 दिन पूर्व और उसके समाप्त होने के 40 दिन पश्चात गिरफ्तार या कारावासित किया जा सकता है। यदि कोई सदस्य उक्त स्थितियों में गिरफ्तार किया गया हो तो उसे उन्मुक्त कर दिया जाए।

यह संरक्षण इसलिए प्राप्त है ताकि संसद का प्रत्येक सदस्य संसद की कार्यवाही में भाग ले सकें। यह विशेषाधिकार केवल सिविल मामलों में गिरफ्तारी और कारावास के विरुद्ध प्राप्त है। यह संरक्षण आपराधिक आरोप, न्यायालय अवमानना, निवारक निरोध विधियों के विरुद्ध प्राप्त नहीं है। इसका अर्थ यह है कि यदि कोई संसद का सदस्य अपराध करता है तो वह साधारण नागरिक की ही भांति बंदी बनाया जाएगा।

गिरफ्तारी प्रपत्र का प्रारूप भी जब तक विशेषाधिकार एवं उसकी प्रक्रिया संहिताबद्ध नहीं होती है तब दंड प्रक्रिया संहिता में उल्लिखित प्रारूपों के सदृश्य निश्चित नहीं है। इंग्लैंड में सभा के सदस्य के हस्ताक्षर से प्रसारित वारंट का निर्वाह उन्हीं सिद्धांतों के आधार पर होता है जैसा उच्च न्यायालय अथवा मैजिस्ट्रेट के द्वारा प्रसारित वारंट का होता है।

भारत में भी यही सिद्धांतों प्रभाव शील है।

बंबई उच्च न्यायालय ने इस संबंध में होमी डी– मिस्त्री विरुद्ध नफीसुल हसन एवं अन्य में यह अभिव्यक्त किया है कि सभा के अध्यक्ष के द्वारा जारी किए गए वारंट के अवलोकन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह सामान्य प्रकृति का वारंट है।

जिस में उल्लिखित है कि इस व्यक्ति की सदन में उपस्थिति अवमान संबंधी कार्यवाही में आवश्यक है और इसी कारण किसी न्यायालय को ऐसे किसी वारंट का परीक्षण करने और उस पर निर्णय देने का क्षेत्राधिकार नहीं है कि वह वारंट उचित तथा विधिवत है या नहीं।

यह सदन का विशेषाधिकार है कि वह उसे अपने आदेशों और निर्देशों का पालन करने हेतु बाध्य कर सके। वारंट के निर्वाह हेतु सदन की शक्ति उच्च न्यायालय की शक्ति से अल्प नहीं है। वारंट के निर्वाह में अधिकारियों को सहायता प्रदान करने हेतु निर्देशित भी किया जा सकता है और शासन के सभी कर्मचारियों और अधिकारियों का वारंट के पालन में उचित सहायता प्रदान करना अनिवार्य कर्तव्य है।

यह ध्यान देने योग्य है कि अध्यक्ष द्वारा जारी किए गए वारंट का पालन करने वाले अधिकारी को पूर्ण संरक्षण प्राप्त होता है। उन पर हमला करना या उनके साथ दुर्व्यवहार करना अथवा उनके कर्तव्य के पालन में

अवरोध उत्पन्न करना सदन की अवमानना है उन्हें अवैध गिरफ्तारी के आरोप से पूर्ण संरक्षण प्राप्त है।

उच्च न्यायालय द्वारा जिस प्रकार क्षेत्राधिकार के अंतर्गत जारी किए गए वारंट विधि सम्मत होते हैं और उन्हें क्रियान्वित करने वाले अधिकारियों को संपूर्ण संरक्षण प्राप्त होता है उसी प्रकार अध्यक्ष द्वारा जारी किए गए वारंट को भी मान्यता प्राप्त है। इसका कारण यह है कि अधिकारियों को सदन के निर्देशों के अंतर्गत कर्तव्यों का पालन करना पड़ता है और उन्हें यह परीक्षण करने का अधिकार नहीं है कि वारंट विधि की दृष्टि से वैध है या नहीं।

होमी डी– मिस्त्री मामले में बम्बई उच्च न्यायालय ने यह अधिमत किया है कि हित के निर्देशों का पालन करने वाले सभी अधिकारियों एवं सहायता प्रदान करने वाले सभी व्यक्तियों को संरक्षण प्राप्त होता है। असैनिक शासन के प्रत्येक विभाग का यह उत्तरदायित्व है कि जब भी आवश्यकता हो तब वह सदन के वारंटो अथवा पालन में सहायता दे।

लोकसभा एवं विधानसभा का अधिकांश कार्य शासन के माध्यम से ही निष्पादित होता है। उनके सम्मन, चिट्ठीयाँ आदि शासन के माध्यम से ही भेजी जाती है। जब कभी किसी साक्षी को आहूत किया जाता है तो उसके सम्मन की एक प्रति संबंधित व्यक्ति को डाक द्वारा और दूसरी प्रति शासन के माध्यम से भेजी जाती है। इसी प्रकार विशेषाधिकार भंग के दोषी व्यक्ति को विशेषाधिकार समिति अथवा सदन के समक्ष उपस्थित होने के लिए भेजे जाने वाले संबंध के निर्वाह हेतु उक्त प्रक्रिया का सामान्यत: अनुसरण किया जाता है।

सदस्यों की गिरफ्तारी, नजरबंदी आदि के बारे में सूचना –विधान सभा के सदस्यों की गिरफ्तारी नजरबंदी आदि के बारे में सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 135क के अंतर्गत नियम निम्नानुसार है–

सदन के सत्र के दौरान और सत्र के आरंभ होने के 40 दिन पहले और सत्र के समाप्त होने के 40 दिन पश्चात सिविल मामलों में गिरफ्तारी से छूट का विशेषाधिकार दिया गया है। किंतु आपराधिक मामलों में अथवा संविहित प्राधिकार के अंतर्गत कार्यपालक आदेश द्वारा निरोध पर गिरफ्तारी से छूट का विशेषाधिकार लागू नहीं होता है। अंशमलिम मजूमदार एवं अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य ए–आई–आर– 1952 संवत 1632, आनंद बनाम मद्रास राज्य ए–आई–आर– 1952 संवत 1217 एवं वेंकटेश्वर बनाम मद्रास राज्य ए–आई–आर– 1952 संवत 272 में भी यही निर्धारित किया गया एवं संसद के नियम 22 व 230 तथा मध्यप्रदेश विधानसभा के नियम 171 एवं 172 के अंतर्गत यह उपबंध है कि, जब कोई सदस्य किसी दंड दोषारोपण पर या किसी दंड अपराध के लिए बंदी बनाया जाता है या उसे किसी न्यायालय द्वारा कारावास का दंड आदेश दिया जाता है या किसी कार्यपालक आदेश के अधीन निरुद्ध किया जाता है तो यथास्थिति न्यायाधीश या दंडाधिकारी या कार्यपालिका प्राधिकारी तुरंत ऐसे किसी तथ्य की सूचना समुचित प्रपत्र में यथास्थिति बंदीकरण निरोध या दोषसिद्धि के कारण तथा सदस्य के निरोध या कारावास का स्थान भी दर्शाते हुए अध्यक्ष को किया जाना आवश्यक इस नियम की रचना का आधार रेमसे का मामला हा–आ–का 164 1939–40 पृष्ठ 8 है। जिसमें यह अभनिर्धारित किया गया कि ब्रिटेन के संसद ने इस बार पर जोर दिया है कि सदस्यों की गिरफ्तारी, नजरबंदी या जेल में भेजने की तत्काल सूचना प्राप्त करने का अधिकार है कि उन्हें किस कारण से सेवा से वंचित किया गया है निरोध या दोष सिद्धि के क्या कारण है उन्हें किस स्थान पर निरूद्ध किया गया है अथवा कारावास में रखा गया है।

जब कोई सदस्य बंदी बनाया जाता है और दोषसिद्धि के बाद अपील लंबित होने पर जमानत पर रिहा किया जाता है या अन्यथा रिहा किया जाता है, तो तथ्य की सूचना भी संबंधित प्राधिकारी द्वारा समुचित प्रपत्र में अध्यक्ष को दी जानी चाहिए।

उपरोक्त अनुसार निर्दिष्ट सूचना प्राप्त होने पर यथासंभव शीघ्र अध्यक्ष उसे सभा में पढ़कर सुनाता है यदि सभा सत्र में हो या यदि सभा सत्र में ना हो तो निर्देश देता है कि वह सदस्यों की जानकारी के लिए इसे पत्रक में प्रकाशित कर दिया जाए।

परंतु यदि सदस्य की जमानत पर रिहाई या अपील पर मुक्ति की सूचना सभा की मूल बंदीकरण की सूचना दी जाने से पहले प्राप्त हो जाता है तो उसके बंदी करण या उसके बाद में भी रिहाई या मुक्ति का तथ्य अध्यक्ष चाहे, तो सभी को सूचित ना करें।

सभा के परिसर में वैद्य आदेश के निर्वाहन और बंदी करण के बारे में प्रक्रिया –सभा के परिसर में अध्यक्ष की अनुज्ञा प्राप्त किए बिना किसी भी सदस्य का कोई बंदी कारण नहीं किया जाता है।

प्रक्रिया– सभा के परिसर में अध्यक्ष के अनुज्ञा प्राप्त किए बिना किसी सिविल वैद्य आदेश का निर्वहन नहीं किया जाएगा जहां तक आपराधिक अपराध है। उसका कोई विशेषाधिकार किसी सदस्य को नहीं है अध्यक्ष की अनुमति का प्रश्न तब आता है जब कि सभा भवन के अंतर्गत कोई सदस्य गिरफ्तार किया जाए। सड़क सभा भवन के अंतर्गत नहीं आती। अत: उक्त गिरफ्तारी के लिए माननीय अध्यक्ष की अनुमति की कोई आवश्यकता नहीं है। इस संबंध में श्री रामचंद्र अनंत सरवटे का प्रसिद्ध मामला है जब एक पुलिस उप अधीक्षक का सदस्य श्री रामचंद्र अनंत सरवटे को मध्य प्रदेश विधानसभा के समक्ष 29 सितंबर 1959 को जब वे शक्कर के अभाव के संबंध में एक स्थगन प्रस्ताव रखने आ रहे थे। इस प्रकरण में यह विकसित किया गया कि उप पुलिस अधीक्षक द्वारा प्रतिबंधित क्षेत्र में बिना अध्यक्ष की अनुमति के गिरफ्तार किया गया जो कि सदस्य के विशेषाधिकार का उल्लंघन है। माननीय अधयक्ष ने विशेषाधिकार भंग के प्रस्ताव को अनुमति प्रदान नहीं की।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पीवी नरसिम्हा राव बनाम राज्य सी–बी–आई एस–पी–आई ए–आई–आर 1998 एस–सी– 2120
2. अंशुमाली मजूमदार बनाम पश्चिम बंगाल राज्य ए–आई–आर– 1952 कोलकाता
3. बोदा वारिश मिश्र बनाम नंद किशोर दास ए–आई–आर– 1953 उड़ीसा
4. होमी डी– मिस्त्री विरुद्ध नफीसुल हसन एवं अन्य का मामला
5. के– आनंद नाम्बियार बनाम मुख्य सचिव मद्रास सरकार ए–आई–आर– 1996 एस– सी– 657
6. इंदिरा नेहरू गांधी बनाम राज नारायण ए–आई–आर– 1965 एस–सी– 2299
7. मध्यप्रदेश विधानसभा पत्रक भाग–2 क्रमांक 78 दिनांक 7 सितम्बर 1976 द्वारा प्रतिस्थापित
8. डॉ. जय नारायण पांडे भारत का संविधान सेंट्रल लॉ एजेंसी 2006
9. राजेंद्र प्रसाद शुक्ल पूर्व अध्यक्ष मध्यप्रदेश विधानसभा प्रश्न काल से शून्य काल तक राम प्रसाद एंड संस आगरा भोपाल 1991

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन

डॉ. सतीशपाल सिंह *

प्रस्तावना – मानसिक स्वास्थ्य की सबसे सरल परिभाषा यह है कि 'मन के अंदर शांति हो और दूसरों के प्रति सद्भाव हो।' विश्व स्वास्थ्य संगठन की विशेषज्ञ समिति (1956) ने मानसिक स्वास्थ्य के सन्दर्भ में कहा है 'मानसिक स्वस्थ व्यक्ति में ऐसी क्षमता होती है, जिससे वह दूसरों के साथ सम्यक् सद्भावपूर्ण सम्बन्ध स्थापित कर लेता है तथा अपनी सहभागिता देता है या सामाजिक पर्यावरण के परिवर्तन में सृजनात्मक योगदान प्रदान करता है' अर्थात मानव व्यक्तित्व के विभिन्न रूप या अवयव इस प्रकार सामंजस्य स्थापित करते हुए कार्य करें कि व्यक्ति जीवन की परिस्थितियों का बड़ी सूझबूझ एवं प्रसन्नता के साथ सामना कर सके। अत: स्पष्ट है कि अच्छे मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ – बौद्धिक तथा भावात्मक क्रियाओं का कुशलता से सम्पन्न होना है। आधुनिक युग में असंगत रूप से बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा, भोग विलास की ओर अधिक झुकाव, जीवन मूल्यों में अधिक तीव्र गति से परिवर्तन, जनसंख्या से दबाब का प्रभाव, अनावश्यक रूप से अधिक महत्वाकांक्षा तथा प्रदूषण आदि अनेक ऐसे विषय हैं जिन्होनें व्यक्ति के जीवन को दुश्चिंता तथा अवसाद से ग्रस्त कर दिया है और आज के व्यक्ति ने इसे जीवन का एक भाग मान लिया है, परंतु मानसिक स्वास्थ्य के प्रति चेतना अभी भी जाग्रत नहीं हुई है। सर्वप्रथम मानसिक स्वास्थ्य के इतिहास की नींव रखने वाले जन्मदाता फिलिप पाइनेल (1745-1826) एवं क्लिफर्ड बियर्स (1876-1943) ने सर्वप्रथम मानवीय दृष्टिकोण अपनाने के लिये कहा और उन्होंने पागल जैसे शब्द के स्थान पर मानसिक रोगी शब्द का प्रयोग किया। बियर्स ने सन् 1903 में स्टेट चिकित्सालय से मुक्त होकर अपनी पुस्तक ए माइंड देट फांउड इट सेल्फ के माध्यम से समाज और सरकार का ध्यान आकर्षित किया। बियर्स के द्वारा प्रारम्भ किये गये आन्दोलन को अडोल्फ मेयर ने सन् 1904 में मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान नाम दिये जाने का सुझाव दिया। बियर्स ने सन् 1908 में चौदह संभ्रान्त व्यक्तियों की मदद् से द क्नेक्टिकट सोसाइटी ऑफ मेंटल हाईजीन की स्थापना की, जिसका उददे्श्य मानसिक रोगियों की देखभाल पर जोर देने के अलावा मानसिक स्वास्थ्य की सुरक्षा करना था। अल्मा अटा घोषणा के अन्तर्गत, जिसमें सन् 2000 तक प्रत्येक के लिये स्वास्थ्य की बात कही गई है, भारतवर्ष में भी इस ओर अनेक प्रयास किये गये हैं।

भारत की कुल आबादी का लगभग तीन प्रतिशत 3.5 करोड़ लोग मानसिक रोगों के शिकार हैं। ऐसे लोगों की संख्या कम नहीं है जो प्राय: साधारण मानसिक व्याधियों जैसे– तनाव, उन्माद या पागलपन और मनो शारीरिक विकृतियों से बीमार रहते हैं तथा जिन्हें मानसिक चिकित्सा की आवश्यकता होती है। करेण्ट हेल्थ प्रोफाइल रिर्पोट (2012) के अनुसार देश में 36 प्रतिशत व्यक्ति गंभीर हताशा की स्थिति में हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अध्ययन में यह पाया गया कि नौ प्रतिशत भारतीय लम्बे समय से जीवन में निराशाजनक स्थिति से गुजर रहे हैं, यद्यपि उनका शारीरिक इलाज अन्य चिकित्सकों द्वारा किया जाता है, फिर भी उन्हें मनोचिकित्सक की आवश्यकता होती है। मानसिक रोगों की पहचान है कि व्यक्ति उदास, खिन्न तथा शोकाकुल रहने लगता है, वह सदैव धीमी आवाज में बात करता है, किसी काम में रूचि नहीं रहती है, भूख नहीं लगती है, सामाजिक कार्यो तथा मनोरंजन में निरूत्साहित पाता है, चित्त की एकाग्रता एवं निर्णय लेने की शक्ति भी कमजोर हो जाती है, उसका आत्मविश्वास समाप्त हो जाता है, वह अपनी समस्याओं में ही उलझा रहता है, उन्हीं की चिन्ता करता रहता है। ऐसा रोगी बात-बात में दूसरों के सामने अकेला होने पर भी रोने लगता है, उसे नींद नहीं आती, कभी कभी व्यक्ति निरर्थक जिन्दगी से ऊबकर आत्महत्या तक करने का निर्णय ले लेते हैं। मानसिक स्वास्थ्य तथा इससे सम्बन्धित समस्याओं के प्रति भारत में जागरूकता स्तर अत्यंत निम्न है। व्यक्ति प्रारंभिक स्तर पर कभी भी परामर्श नहीं लेते हैं। साथ ही चिकित्सक भी उनकी समस्याओं का कारण न जानकर इलाज प्रारंभ कर देते हैं, जो उनकी समस्याओं को गंभीर स्तर पर पहुँचा देता है। भारतीय संस्कृति में नारी घरेलू वातावरण में जन्म से जीवन के अंतिम पड़ाव तक विभिन्न रूपों में तनाव, चिंता, अवसाद, विषाद को सहती हैं।

अध्ययन का औचित्य – फरहाबक्श एस. (2004) ने माध्यमिक विद्यालय के प्रधानाध्यापकों के मानसिक स्वास्थ्य का विविध व्यावसायिक चरों के सम्बन्ध में अध्ययन किया। जेबाराज, आर., प्रभु शंकर, एस. (2006), ने सुनामी पीडित अनाथ किशोर छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया। कौर, कुलजीत (2006), ने लुधियाना जिले के उच्च माध्यमिक विद्यालयी शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य एवं व्यावसायिक तनाव के मध्य अध्ययन किया। सिंह एवं सिंह (2006), वाराणसी शहर के मध्य आयु वर्ग की महिला शिक्षिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य स्तर का अध्ययन किया। गुप्ता एवं सुजीत कुमार (2007), ने माध्यमिक विद्यालयों के प्रशासकों पर व्यावसायिक दबाव और उनका मानसिक स्वास्थ्य विषय पर शोध किया। दुधाता एवं जोशान (2012), कार्यरत तथा अकार्यरत महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य अध्ययन किया। अध्ययन का उद्देश्य कार्यरत तथा अकार्यरत महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य तथा अवसाद के मध्य पाये जाने वाले अंतर को ज्ञात करना था। ग्रोसी, चन्द्रकान्ता, पवार नीरज एवं कुमार संदीप (2015) ने शासकीय विद्यालय के शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया। अध्ययन में शासकीय विद्यालय के महिलाएं पुरूष शिक्षकों के लिंग में भिन्नता, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सम्बन्ध की जाँच की गयी। सारेस अमंदा जी.एस. (2014), ने पब्लिक स्कूल के

* एसोसिएट प्रोफेसर, अध्यापक प्रशिक्षण विभाग, दिगम्बर जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बडौत (बागपत) (उ.प्र.) भारत

शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया। राम बाबु डी. (2014) ने आंध्र प्रदेश के तेलंगाना क्षेत्र में शिक्षक प्रशिक्षुओं में मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया। बोस्टनी (2013), के शोध के मुख्य उददेश्य एथलेटिक एवं नॉन एथलेटिक की शैक्षिक निष्पत्ति एवं मानसिक स्वास्थ्य के बीच संबंध का अध्ययन करना था। नंदकिशोर (2013) ने विद्यालय जाने वाले किशोरों के लिंग एवं पारिवारिक वातावरण का उनके मानसिक स्वास्थ्य के संदर्भ में अध्ययन किया एवं निष्कर्ष स्वरूप पाया कि विद्यालय जा रहे किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य एवं पारिवारिक वातावरण में सार्थक संबंध था। नंदौलिया एच.के. (2013) ने उच्च माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों के लिंग आदतों एवं विद्यालय के प्रकार एवं कर्मचारियों के मध्य मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया। कौर, जगबीर एवं अरोड़ा (2014), ने पंजाब के लुधियाना एवं मोगा जिले के रहने वाले किशोरों को शैक्षिक उपलब्धि एवं मानसिक स्वास्थ्य के बीच संबंध पर अध्ययन किया। पच्चयापन पी. एवं उषाल्या डी. (2014), ने माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य का विश्लेषण किया। कावेरी (2015) ने माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया। अध्ययन के उददेश्य माध्यमिक विद्यालय शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य का लिंग, विद्यालय स्थान, विद्यालय के प्रकार, विद्यालय के माध्यम तथा शिक्षण के सन्दर्भ में अध्ययन किया गया।

प्रस्तुत अध्ययन माध्यमिक, उच्च माध्यमिक विद्यालय शिक्षक एवं प्रशिक्षण महाविद्यालय विद्याथियों, अध्यापकों एवं प्रशासकों मानसिक स्वास्थ्य पर अन्य चरो जैसे विविध व्यावसायिक चरों शैक्षिक उपलब्धि, लिंग, विद्यालय स्थान, विद्यालय के प्रकार, विद्यालय के माध्यम सामाजिक बुद्धि, लिंग, परिवेश एवं परिवार के प्रकार, एथलेटिक एवं नॉन एथलेटिक की शैक्षिक निष्पत्ति कार्यरत तथा अकार्यरत महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य, व्यावसायिक तनाव, शिक्षकों के लिंग आदतों, किशोरों के लिंग एवं पारिवारिक वातावरण, शिक्षक प्रशिक्षुओं, प्रशासकों पर व्यावसायिक दबाव के साथ हुए लेकिन अभी तक माध्यमिक स्तर के नगरीय एवं ग्रामीण के विद्यार्थियों मानसिक स्वास्थ्य पर अध्ययन नही किया गया है। ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य एवं और नगरीय क्षेत्र के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य पर क्षेत्र जहा विद्यार्थी निवास करते हैं। इस आधार पर निवास क्षेत्र एवं लिंग वार छात्र एवं छात्राओं पर मानसिक स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता। इसलिए प्रस्तुत अध्ययन की आवश्यकता प्रतिपादित होती हैं।

उद्देश्य :

1. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन करना।
2. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन करना।
3. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र की छात्राओं एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन करना।
4. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन करना।
5. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं नगरीय छात्राओं क्षेत्र की के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन करना।
6. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं नगरीय क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन करना।
7. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र की छात्रो एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन करना।

परिकल्पना :

1. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र की छात्राओं एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
5. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं नगरीय छात्राओं क्षेत्र की के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
6. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं नगरीय क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
7. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र की छात्रो एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध का सीमांकन – प्रस्तुत शोध अध्ययन बागपत जनपद के उच्चत्तर माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों तक सीमित है।

शोध विधि – प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या एवं न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन में बागपत जनपद के उच्चत्तर माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत समस्त विद्यार्थी शोध की जनसंख्या है। प्रस्तुत शोध में महात्मा गांधी इन्टर कालेज, बडौत एवं दिगम्बर जैन इन्टर कालेज, बडौत के विद्यार्थियों को लिया गया । न्यादर्श चयन हेतु यादृच्छिक प्रतिचयन की लाटरी विधि का प्रयोग किया गया ग्रामीण एवं नगरीय परिवेश से अध्ययनरत 80–80 छात्र एवं छात्राओं को न्यादर्श हेतु चयनित किया गया।

उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्ता द्वारा शोध उपकरण प्रस्तुत अध्ययन हेतु तथ्यो के एकत्रीकरण हेतु मैंटल हैल्थ बैटरी (2000) अरूण कुमार सिह एवं अल्पना सैन गुप्ता निर्मित उपकरण का प्रयोग किया किया गया है यह उपकरण प्रमाणिक है।

प्रदत्तों का संकलन एवं अंकन – न्यादर्श के रूप में लिये गये उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को निर्देशित करने के उपरान्त मैटल हैल्थ बैटरी को उपकरण में मानसिक स्वास्थ्य के छह घटकों जैसे भावात्मक स्थिरता, स्व–अनुशासन, स्वायतता, सुरक्षा–असुरक्षा, आत्मप्रत्यय,एवं बुद्धि पर 130 कथन भरवा कर आंकडों को एकत्रित किया गया। प्रत्येक सही कथन पर एक अंक और गलत पर कथन पर शून्य अंक प्रदान किया गया।

प्रयुक्त सांख्यिकी – प्रस्तुत शोध अध्ययन में मध्यमान, मानक–विचलन, तथा टी–परीक्षण सांख्यिकीय प्रविधियो का प्रयोग किया गया है।

तालिका-1: उच्चत्तर माध्यमिक विद्यालय के नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य मध्यमानों का टी-अनुपात दर्शाने वाली तालिका -1

समूह	N	M	SD	टी-अनुपात	सार्थकता स्तर
नगरीय	80	90.78	4.86	1.86	0.05सार्थकता स्तर पर असार्थक NS
ग्रामीण	80	92.35	5.74		

तालिका संख्या 1 में परिगणित टी-अनुपात का मान 1.86 है जो कि मुक्तांश 78 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.98 से कम है। 'अतः शून्य परिकल्पना कि उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है' को स्वीकृत किया जाता है। इससे स्पष्ट होता है कि नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य में कोई अन्तर नहीं होता है। ढोनो परिवेश मे निवास करने का विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य पर परिवेश का कोई प्रभाव नहीं पडता है।

विवेचना- इसका कारण यह हो सकता है कि माता-पिता चाहे वे ग्रामीण परिवेश के हों या नगरीय परिवेश के हो अपने बच्चों से प्रेम पूर्वक व्यवहार करते हैं तथा उनकी उचित परवरिश करते हैं, जिससे की बच्चो का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा रहता है। इसके साथ साथ ढोनो परिवेश के पालक (माता-पिता) यह प्रयास करते हैं कि उनके पाल्यों (बच्चो) को अच्छा पारिवारिक वातावरण मिले, जिनसे उनका मानसिक स्वास्थ्य ढोनो ही क्षेत्र के छात्रों का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा पाया गया।

तालिका-2: उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों का टी-अनुपात दर्शाने वाली तालिका

समूह	N	M	SD	टी-अनुपात	सार्थकता स्तर
नगरीय छात्रों	40	89.42	4.52	3.30	0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक
ग्रामीण छात्रों	40	92.65	4.21		

तालिका संख्या 2 में परिगणित टी-अनुपात का मान 3.30 है जो कि मुक्तांश 78 पर 0.01 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 2.61 से अधिक है। अतः उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। को अस्वीकृत किया जाता है। इससे स्पष्ट होता है कि उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में सार्थक अन्तर है।

विवेचना- इस आधार पर कहा जा सकता है कि नगरीय परिवेश की अपेक्षा ग्रामीण परिवेश के बच्चो का मानसिक स्वास्थ्य बेहतर पाया गया क्योकि आजकल ग्रामीण क्षेत्र मे स्वास्थ्य बेहतर सुविधाए उपलब्ध हैं। परम्परागत साधन खेल के लिए खेल का मैदान शारीरिक विकास के लिए आवश्यक है। लेकिन ये सुविधाए नगरीय परिवेश कम उपलब्ध हैं। इसके साथ साथ ग्रामीण क्षेत्र छोटे छोटे काम करने मे शारीरिक कार्य पर बल दिया जाता हैं। जबकि नगरीय परिवेश तकनीकी साधनो का प्रयोग पर बल दिया जाता हैं। साथ ही नगरीय परिवेश के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने मे मोबाइल एवं तकनीकी साधनो का प्रयोग भी एक कारण है।

तालिका-3: उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र की छात्राओं एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य टी-अनुपात दर्शाने वाली तालिका

समूह	N	M	SD	टी-अनुपात	सार्थकता स्तर
ग्रामीण छात्राओं	40	91.71	5.65	3.51	0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक
नगरीय छात्राओं	40	87.56	4.87		

तालिका संख्या 3 में परिगणित टी-अनुपात का मान 3.51 है जो कि मुक्तांश 78 पर 0.01 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 2.61 से अधिक है। अतः शून्य परिकल्पना कि उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र की छात्राओं एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। को अस्वीकृत किया जाता है। इससे स्पष्ट होता है कि उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र की छात्राओं एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में कोई सार्थक अन्तर है।

विवेचना- इस आधार पर कहा जा सकता है कि नगरीय परिवेश की छात्राओं अपेक्षा ग्रामीण परिवेश छात्राओं का मानसिक स्वास्थ्य बेहतर पाया गया क्योकि आजकल ग्रामीण क्षेत्र मे स्वास्थ्य बेहतर सुविधाए उपलब्ध हैं। परम्परागत साधन खेल के लिए खेल का मैदान जो शारीरिक विकास के लिए आवश्यक हैं। लेकिन ये सुविधाए नगरीय परिवेश कम उपलब्ध हैं। इसलिए नगरीय परिवेश की छात्राओं अपेक्षा ग्रामीण परिवेश छात्राओं का मानसिक स्वास्थ्य उच्च पाया गया साथ ही नगरीय परिवेश के छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने मे मोबाइल प्रयोग भी एक कारण है।

तालिका-4: उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य टी-अनुपात दर्शाने वाली तालिका

समूह	N	M	SD	टी-अनुपात	सार्थकता स्तर
ग्रामीण छात्रों	40	92.65	4.21	5.00	0.01सार्थकता स्तर पर सार्थक
ग्रामीण छात्राओं	40	87.56	4.87		

तालिका संख्या 4 में परिगणित टी-अनुपात का मान 5.00 है जो कि मुक्तांश 78 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 2.61 से अधिक है। अतः शून्य परिकल्पना कि उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। को अस्वीकृत किया जाता है इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों के मध्य में कोई सार्थक अन्तर है। ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य असमानता होती है।

विवेचना- इस आधार कहा जा सकता है कि ग्रामीण परिवेश के माता-पिता बालक बालिकाओ से समानता का व्यवहार करते है। वे अपने बच्चों से प्रेम पूर्वक व्यवहार करते हैं तथा उनकी उचित परवरिश करते हैं, जिससे की बच्चो का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा रहता है। इसके साथ साथ पालक (माता-पिता) यह प्रयास करते हैं कि उनके पाल्यों (बच्चो) को अच्छा पारिवारिक वातावरण मिले, जिनसे ग्रामीण छात्रों - छात्राओ के मानसिक स्वास्थ्य मे कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

तालिका-5: उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं नगरीय क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य मध्यमानों का टी-

अनुपात दर्शाने वाली तालिका

समूह	N	M	SD	टी–अनुपात	सार्थकता स्तर
नगरीय छात्रों	40	89.42	4.52	1.96	0.05सार्थकता NS स्तर पर असार्थक
नगरीय छात्राओं	40	91.71	5.65		

तालिका संख्या 5 में परिगणित टी–अनुपात का मान 1.96 है जो कि मुक्तांश 78 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 2.00 से कम है। अत: शून्य परिकल्पना कि उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं नगरीय क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य मध्यमानों के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है को स्वीकृत किया जाता है इससे स्पष्ट होता है कि नगरीय छात्रों एवं नगरीय छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर नहीं है। उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं नगरीय क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य समानता होती है।

विवेचना – इस आधार कहा जा सकता है कि नगरीय परिवेश के माता–पिता बालक बालिकाओं से समानता का व्यवहार करते है। वे अपने बच्चों से प्रेम पूर्वक व्यवहार करते हैं तथा उनकी उचित परवरिश करते हैं, जिससे की बच्चो का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा रहता है। इसके साथ साथ पालक (माता–पिता) यह प्रयास करते हैं कि उनके पाल्यों (बच्चों) को अच्छा पारिवारिक वातावरण मिले, जिनसे नगरीय छात्रों–छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य मे कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

तालिका–6: उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं नगरीय क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य का मध्यमानों का टी–अनुपात दर्शाने वाली तालिका

समूह	N	M	SD	टी–अनुपात	सार्थकता स्तर
ग्रामीण छात्र	40	92.65	4.21	0.84	0.05सार्थकता NS स्तर पर असार्थक
नगरीय छात्राओं	40	91.71	5.65		

तालिका संख्या 6 में परिगणित टी–अनुपात का मान 0.84 है जो कि मुक्तांश 78 पर 0.01 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.98 से अधिक है। अत: शून्य परिकल्पना कि उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं नगरीय क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य का मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नही होता है को स्वीकृत किया जाता है। इससे स्पष्ट होता है कि नगरीय क्षेत्र के छात्रो एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर नही पाया गया। अत: कहा जा सकता है कि उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं नगरीय क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य समानता होती है।

विवेचना– इस आधार पर कहा जा सकता है कि नगरीय परिवेश की छात्राओं अपेक्षा ग्रामीण परिवेश छात्रो का मानसिक स्वास्थ्य बेहतर पाया गया क्योकि आजकल ग्रामीण क्षेत्र मे स्वास्थ्य बेहतर सुविधाए उपलब्ध हैं। परम्परागत साधन खेल के लिए खेल का मैदान जो शारीरिक विकास के लिए आवश्यक है। लेकिन ये सुविधाएं नगरीय परिवेश कम उपलब्ध हैं। इसलिए नगरीय परिवेश की छात्राओं अपेक्षा ग्रामीण परिवेश छात्रो का मानसिक स्वास्थ्य उच्च पाया गया साथ ही नगरीय परिवेश की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने मे फेशन, आधुनिकता तकनीकी एवं मोबाइल साधनों का प्रयोग भी एक कारण हो सकता है।

तालिका–7: उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य मध्यमानों के मध्य टी–अनुपात दर्शाने वाली तालिका

समूह	N	M	SD	टी–अनुपात	सार्थकता स्तर
नगरीय छात्र	40	89.42	4.52	1.77	0.05सार्थकता स्तर पर असार्थक NS
ग्रामीण छात्राओं	40	87.56	4.87		

तालिका संख्या 7 में परिगणित टी–अनुपात का मान 1.77 है जो कि मुक्तांश 78 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.98 से कम है। अत: शून्य परिकल्पना कि उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है' को स्वीकृत किया जाता है। इससे स्पष्ट होता है कि नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य में अंतर पाया नहीं गया। अत: कहा जा सकता है कि उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य समानता होती है।

विवेचना– इस आधार कहा जा सकता है कि नगरीय एवं ग्रामीण परिवेश के माता–पिता बालक बालिकाओ से समानता का व्यवहार करते है। वे अपने बच्चों से प्रेम पूर्वक व्यवहार करते हैं तथा बालक बालिकाओ मे किसी तरह का भेदभाव कर उनकी उचित परवरिश करते हैं, जिससे की बच्चो का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा रहता है। इसके साथ साथ नगरीय एवं ग्रामीण परिवेश के पालक (माता–पिता) यह प्रयास करते हैं कि उनके बालक–बालिकाओ को अच्छा पारिवारिक वातावरण मिले इसलिए नगरीय एवं ग्रामीण परिवेश छात्रों – छात्राओ के मानसिक स्वास्थ्य मे कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

निष्कर्ष:

1. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।
2. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य के मध्य में सार्थक अन्तर पाया गया है।
3. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र की छात्राओं एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य के मध्य में सार्थक अन्तर पाया गया है।
4. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अन्तर पाया गया है।
5. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र के छात्रों एवं नगरीय क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य के में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।
6. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों एवं नगरीय क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य के मध्य में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।
7. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के नगरीय क्षेत्र की छात्रो एवं ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।

नगरीय परिवेश एवं ग्रामीण परिवेश के बच्चो का मानसिक स्वास्थ्य मे अन्तर नहीं पाया गया क्योकि आजकल ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्र मे स्वास्थ्य बेहतर सुविधाए उपलब्ध हैं। परम्परागत साधन खेल के लिए खेल

का मैदान शारीरिक विकास के लिए आवश्यक है। लेकिन ये सुविधाए ग्रामीण नगरीय परिवेश समान रूप से उपलब्ध हैं। इसके साथ साथ ग्रामीण क्षेत्र छोटे छोटे काम करने मे शारीरिक कार्य पर बल दिया जाता हैं। जबकि नगरीय परिवेश तकनीकी साधनो का प्रयोग पर बल दिया जाता हैं। साथ ही नगरीय परिवेश के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने मे मोबाइल एवं तकनीकी साधनो का प्रयोग भी एक कारण है। उपरोक्त परिणामों के साथ साथ यह भी ज्ञात होता है कि छात्रों की अपेक्षा छात्राओं का मानसिक स्वास्थ्य अधिक प्रभावी पाया गया क्योंकि भारतीय परिवेश में छात्रो को शिक्षा, सुविधायें आदि सभी प्राप्त होते हैं। किंतु आज भी कुछ पुरानी मानसिकता बदल रही है। पालक छात्र एवं छात्रा में भेद नही करते हैं, जिनसे की छात्र एवं छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य में अंतर पाया जाता है।

नगरीय परिवेश की छात्ऱाओं अपेक्षा ग्रामीण परिवेश छात्ऱो का मानसिक स्वास्थ्य बेहतर पाया गया क्योकि आजकल ग्रामीण क्षेत्र मे स्वास्थ्य बेहतर सुविधाए उपलब्ध हैं। परम्परागत साधन खेल के लिए खेल का मैदान जो शारीरिक विकास के लिए आवश्यक है। लेकिन ये सुविधाएं नगरीय परिवेश कम उपलब्ध हैं। इसलिए नगरीय परिवेश की छात्ऱाओं अपेक्षा ग्रामीण परिवेश छात्ऱो का मानसिक स्वास्थ्य उच्च पाया गया साथ ही नगरीय परिवेश की छात्ऱाओं के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने मे फेशन, आधुनिकता तकनीकी एवं मोबाइल साधनो का प्रयोग भी एक कारण हो सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः-

1. गुप्ता एवं कुमार सुजीत (2007). मानसिक विद्यालयों के प्रशासकों पर व्यावसायिक दबाव और मानसिक स्वास्थ्य, पीएच.डी. शोध स्तरीय शोध अध्ययन, जैन विश्वभारती संस्थान, मान्य विद्या विश्वविद्यालय, लाडनू राजस्थान, दिसम्बर 2007।
2. कुमारी, मुन्नी. (2018). ए स्टडी ऑफ एकेडिमिक एन्जाइटी इन रिलेशन टू मेन्टल हैल्थ इन एडालसेन्टस, इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ करेन्ट रिसर्च एण्ड रिव्यू, 10(6), 26-28।
3. कुमारी, एस., जाफरी, एस. (2014). उत्तर प्रदेश बोर्ड के उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों का मानसिक स्वास्थ्य एवं शैक्षिक उपलब्धि, जर्नल ऑफ कम्युनिटी गाईडेन्स एण्ड रिसर्च, 31(2), 187-199।
4. नंदौलिया, एच.के. (2013). ए स्टडी ऑफ मेंटल हैल्थ ऑफ हायर सैकण्डरी स्कूल टीचर्स इन रिलेशन टु सैक्स हैबिट, जर्नल ऑफ मल्टी डिसिप्लनरी रिसर्च, 1(4), 23-40।
5. पच्चयापन, पी.एवं उषाल्या, डी. (2014). टीचर्स एनालेसेस मेन्टल हैल्थ ऑफ सैकण्डरी एण्ड हायर सैकण्डरी स्कूल, इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ साइंटिफिक रिसर्च, 3(2), 117-119।
6. पाराशर, कावेरी. (2015).माध्यमिक विद्यालय शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन, एम.एड. लघु शोध प्रबन्ध, शिक्षा संकाय, वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान।
7. रामबाबू डी. (2014). तेलंगाना क्षेत्र मे शिक्षक प्रशिक्षुओं में मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन, जनरल ऑफ रिसर्च, 31(4), 52।
8. सारेस, अमंदा जी.एस.(2014). पब्लिक स्कूल टीचर्स परसेप्शन अबाउट मेन्टल हैल्थ, आर्टिकल रिव्यू, 84(6), 940-948।
9. सिंह एवं सिंह (2006). महिला शिक्षिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य स्तर का अध्ययन, रिसर्च इन एजूकेशन, 41(5), 36।
10. शर्मा, सुधा कुमारी (2013). उच्च माध्यमिक स्तर के कला वर्ग के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर परिवार के वातावरण, मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी आदतों व आत्म-विश्वास का अध्ययन, पी.एचडी. स्तर शोध, बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय, उत्तार प्रदेश।
11. कौर, कुलजीत (2006). आक्युपेशनल स्ट्रैस ऑफ हायर सैकण्डरी स्कूल टीचर्स इन रिलेशन टु मैन्टल हेल्थ, पी.एच.डी शोध अध्ययन, पंजाब विश्वविद्यालय, पंजाब।
12. ग्रोसी, चन्द्रकान्ता., पंवार, नीरज एवं कुमार, संदीप. (2015). मेन्टल हैल्थ अमंग गवरमेन्ट स्कूल टीचर्स, द इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ इण्डियन साइक्लोजी, 3(1), 117-124।
13. चौधरी, नंदकिशोर (2013). ए स्टडी ऑफ मेन्टल हैल्थ इन रिलेशन टू फैमिली इनवायमेंट एण्ड जेन्डर ऑफ स्कूल गोइंग एडोलोसेण्टस, पेरिपेक्ष्य, इंडियन जनरल ऑफ रिसर्च, 3(4), 61-62।
14. जेबाराज, आर., प्रभु शंकर, एस., (2006). मेंटल हैल्थ ऑफ सुनामी अफैक्टेड एडोलसेंटस ऑरकन चिल्ड्रन, एडुट्रैक्स, न्यू दिल्ली, VI(2) 38-40
15. बोस्टनी एवं अन्य (2013). ए स्टडी ऑफ द रिलेशन विटबिन मेन्टल हैल्थ एण्ड एकेडमिक परफोरमेन्स ऑफ स्टूडेन्टस ऑफ द इस्लामिक आजाद यूनिवर्सिटी अहवाज ब्रांच, प्रोसिडिया सोशल एंड बिहेवियर साइंस, 116, 163
16. वर्षा चौधरी (2018) उच्च माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन 2018 IJRAR December 2018, Volume 5, Issue 4 www.ijrar.org (E-ISSN 2348-1269, P- ISSN 2349-5138)

****

भारत की आंतरिक सुरक्षा के सामने नक्सलवाद की चुनौती: एक अध्ययन

डॉ. (लेफ्टिनेंट) कनिया मेड़ा* डॉ. सुशील कुमार**

शोध सारांश – भारत की आंतरिक सुरक्षा के सामने नक्सलवाद को एक गंभीर समस्या माना जाता है। नक्सली गतिविधियों ने भारतीय समाज के जीवन को प्रभावित किया है। भारत में, समस्या केवल कानून और व्यवस्था से नहीं है, बल्कि राजनीतिक विफलताओं के साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक पहलुओं से भी है। जहां नक्सलवाद एक गंभीर समस्या है, वहीं यह स्थापित व्यवस्था के खिलाफ मानसिकता का परिणाम है। आज नक्सलवाद का प्रभाव बहुत बढ़ गया है। भारत के 22 राज्यों में 220 जिलों को नक्सली हिंसाओं ने प्रभावित किया है। नक्सलवाद का प्रसार दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा है। भारत की 80 प्रतिशत भूमि, 19 प्रतिशत जंगल और 35 प्रतिशत जनसंख्या नक्सलवाद के प्रभाव में है। छत्तीसगढ़ में पिछले पांच सालों में सबसे ज्यादा नक्सली हमले हुए हैं और इसमें 614 लोग मारे गए हैं। इस शोध पत्र में पिछले 10 वर्षों के नक्सली हमलों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है और राज्यवार नक्सली हमलों में मरने वालों की संख्याओं का वर्णन किया गया है। 2009-2013 से 2014-2019 तक नक्सलियों का प्रभाव कम हुआ है। 2009 के दौरान-2013 में नक्सल प्रभावित राज्यों में कुल 9332 हमले हुए और 3069 लोग मारे गए। हालांकि, 2014-2019 के दौरान अनुपात में कमी आई है, इस अवधि के दौरान 4838 हमले हुए हैं। नक्सल प्रभावित राज्यों में 1354 लोगों की मौते हुई।

शब्द कुंजी – नक्सलवाद, आंतरिक सुरक्षा, सामाजिक असमानता।

प्रस्तावना – भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। लोकतंत्र में जनता को अपना प्रतिनिधि चुनने का अधिकार है। क्योंकि जनता ही संप्रभु है। स्वतंत्रता के बाद, भारत ने लोकतांत्रिक व्यवस्था को अपनाया। यहां लोगों के राज्य-निर्माण की एक प्रणाली बनाई गई थी। इसका मुख्य उद्देश्य साम्राज्यवाद के दौरान भारतीय समाज के सामने आने वाली समस्याओं का समाधान कर यहाँ सामाजिक न्याय की स्थापना करना था। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने चेतावनी दी थी कि वित्तीय स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय के बिना राजनीतिक स्वतंत्रता निरर्थक है। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के दौरान भारतीय समाज की संरचना असमानता पर आधारित थी। पिछड़ी जनजातियों और किसानों के विद्रोह की भूमिका कई बार आई। उत्पादन के साधनों को न्याय देकर समाज के स्वामित्व का निर्माण करने वाली समाजवादी व्यवस्था पिछड़े और हाशिए के लोगों का प्रतिनिधित्व करने के लिए आगे आई। भारत में, शोषित और वंचितों की आवाज कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा उठाई गई थी। साम्यवादी विचारधारा के लोगों ने जोर देकर कहा कि भारत को गरीबी, आर्थिक असमानता और उत्पादन के साधनों के असमान वितरण की व्यवस्था को समाप्त करके सामाजिक न्याय पर आधारित समाज का निर्माण करना चाहिए। जिन आंदोलनों ने इसे आगे बढ़ाया, उन्हें नक्सली आंदोलन कहा गया। भारत में नक्सलवाद का उदय सामाजिक पुनर्निर्माण के आधार पर हुआ। नक्सलवाद वंचितों और शोषितों के अधिकारों के लिए एक आंदोलन के रूप में उभरा। जब अधिकारियों ने वंचितों को न्याय नहीं दिया, तो नक्सलियों ने संघर्ष का रास्ता स्वीकार कर लिया। आज नक्सलवाद का प्रभाव बहुत बढ़ गया है।[1] नक्सल ने भारत के 22 राज्यों के 220 जिलों को प्रभावित किया है। इस क्षेत्र में मुख्य रूप से बुनियादी ढांचे की कमी है। नक्सलवाद का प्रभाव भारत की आंतरिक सुरक्षा के लिए एक बड़ा खतरा है। लेकिन वामपंथी लोग नक्सली आंदोलन को न्याय और अधिकारों का आंदोलन बताते हैं। भारतीय संविधान ने लोकतांत्रिक तरीके से समाजवाद के निर्माण की नीति अपनाई है। लेकिन 70 साल बाद भी आर्थिक विषमता कम नहीं हो पायी, इसलिए नक्सली आंदोलन ने हॉट लाइन ले ली है।

अध्ययन का उद्देश्य: भारतीय संविधान ने एक लोकतांत्रिक समाजवाद को अपनाया लेकिन हमारी व्यवस्था ने आर्थिक असमानता को कम नहीं किया। इसलिए, नक्सली आंदोलन स्थापित राजनीतिक व्यवस्था का विरोधा करने के लिए आगे आया। वामपंथी लोग इस आंदोलन को एक वैचारिक आंदोलन के रूप में देखते हैं। हालांकि, नक्सली हिंसा से देश की आंतरिक सुरक्षा को खतरा है। इसलिए, इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य नक्सली आंदोलन की वर्तमान वैचारिक पृष्ठभूमि को समझना और इस आंदोलन की हिंसा को रोकने के उपायों का प्रस्ताव करना है।

नक्सलवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि: भारत की आंतरिक सुरक्षा के सामने नक्सलवाद को एक गंभीर समस्या माना जाता है। नक्सली गतिविधायों ने भारतीय समाज के जीवन को प्रभावित किया है। जाने-माने राजनीतिक विश्लेशक प्रताप अस्बे कहते हैं, *'नक्सलवाद भारत की सुरक्षा को चुनौती देने वाली कई प्रवृत्तियों में से एक है। भारत में समस्या केवल कानून-व्यवस्था की नहीं है, बल्कि राजनीतिक विफलताओं के साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक पहलुओं से भी है।'* जबकि नक्सलवाद एक गंभीर समस्या है, यह स्थापित व्यवस्था के खिलाफ मानसिकता का परिणाम है। नक्सलवाद को

* सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, राजनीति विज्ञान, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

कार्ल मार्क्स के वर्ग संघर्ष के सिद्धांत पर आधारित एक समाजवादी आंदोलन माना जाता है।[2] इस आंदोलन को भारत में साम्यवादी विचारधारा की स्थापना प्राप्त हुई है। नक्सली आंदोलन माओ त्से तुंग के विचारों की पृष्ठभूमि है कि सत्ता का निर्माण गोलियों से किया गया था। 1964 में भारत में कम्युनिस्ट पार्टी के विभाजन के बाद, मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी ने चीन का समर्थन किया। इस पार्टी के नेताओं ने चीन जैसी क्रांति लाने के लिए सशस्त्र किसान संघर्ष शुरू किया। सशस्त्र क्रांति के माध्यम से लोकतंत्र की स्थापना करने का चारु मुजुमदार का दृष्टिकोण उनकी पार्टी से अलग था। उनके द्वारा शुरू किए गए सशस्त्र संघर्ष ने उन्हें पार्टी से हटा दिया। लेकिन फिर उन्होंने विवाद को तेज कर दिया। यह मानते हुए कि संसदीय तरीके से परिवर्तन संभव नहीं था, उन्होंने किसानों और श्रमिकों को उनके अधिकार देने के लिए जिस सशस्त्र संघर्ष का रास्ता चुना था, वह नक्सलवाद के रूप में जाना जाने लगा। 1967 से नक्सलवाद शब्द भारत में अधिक प्रचलित हो गया। नक्सलबाड़ी की उत्पत्ति पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले के नक्सलबाड़ी गाँव में हुई थी। 2 मार्च 1967 को नक्सलबाड़ी गांव में एक अमीर जमींदार ने एक गरीब किसान की पिटाई कर दी। नतीजतन, किसान आंदोलनकारियों द्वारा आंदोलन शुरू किया गया था। इसके विरोध में पुलिस ने किसानों पर अत्याचार करना शुरू कर दिया। इसके जवाब में 25 मई 1967 को चारु मुजुमदार और कानू सान्याल ने पुलिस पर सशस्त्र हमला किया।[3] आंदोलन में शामिल सभी किसानों ने सरकारी कार्यालय के कागजात जलाकर आंदोलन में भाग लिया। संघर्ष ने राज्य में कानून और व्यवस्था को समाप्त कर दिया। पुलिस स्थिति को नियंत्रित नहीं कर पाई। नक्सलियों ने अपना ध्यान सरकारी कार्यालयों, कर्मचारियों, धनी जमींदारों और पुलिस की ओर खींचा और सरकार का ध्यान आर्थिक असमानता, गरीबी और किसानों के शोषण पर केन्द्रित किया। चारु मुजुमदार, कानू सान्याल और जंगल संथाल ने बेरोजगार युवाओं और किसानों को पकड़कर कम समय में भारत के व्यापक क्षेत्र पर प्रभाव डाला।[4]

पश्चिम बंगाल में शुरू हुआ यह आंदोलन आज देश के 22 राज्यों के 220 जिलों में फैला है। केंद्रीय गृह मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, झारखंड, बिहार, मध्य प्रदेश, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़ और महाराष्ट्र जैसे भारतीय राज्य नक्सलवाद से अधिक प्रभावित हैं। इस आंदोलन के उदय की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए सकारात्मक और नकारात्मक दोनों स्तरों पर चर्चा की जाती है, लेकिन इससे होने वाली मानवीय हिंसा उचित नहीं है। यह आंदोलन गरीबों को भी बर्दाश्त नहीं कर पाएगा। जबकि उनका सामाजिक परिवर्तन का हिंसक तरीका सही नहीं है, उनके प्रति राज्य की उपेक्षा सामाजिक न्याय के लिए उचित नहीं है।

नक्सलवाद के उदय के कारण: नक्सली ऑपरेशन के जरिए हिंसा भारत की आंतरिक सुरक्षा के लिए चुनौती बनती जा रही है। भारत की 35 प्रतिशत आबादी नक्सलवाद के प्रभाव में है। उन्हें संविधान और सरकार पर भरोसा नहीं है। वे स्वयं अपने क्षेत्र में समानांतर सरकार चलाते हैं। यह उन लोगों को लक्षित करता है जिन्हें समस्या है। नक्सलवाद का आधार विषम आर्थिक व्यवस्था है।[5] देश में नक्सली हिंसा इस मानसिकता के साथ शुरू हुई कि इस व्यवस्था में संघर्ष के बिना न्याय नहीं होगा और मार्क्सवाद, माओवाद को प्रेरित किया। इसलिए जरूरत है कि बल के आधार पर देश में नक्सलवाद के प्रभाव को कम करने की बजाय यह पता लगाने की जरूरत है कि इनके प्रभाव का कारण क्या है और इस पर स्थायी उपाय करने की जरूरत है। यहां भूमि सुधार कानून को लागू न करने का कारण भारत में नक्सलवाद के प्रभाव को बढ़ाना है। भूमि कार्यकाल भारत में आर्थिक असमानता के मुख्य कारणों में से एक है। आदिवासी क्षेत्रों में जमींदारों के उच्च स्तर और उनके शोषण के कारण, नक्सलियों ने उनसे छुटकारा पाने के लिए आदिवासी क्षेत्रों में जमींदारों से हाथ मिलाना शुरू कर दिया। सरकार द्वारा भूमि को मिटाने का कोई ईमानदार प्रयास नहीं है और सरकार इसकी उचित देखभाल नहीं करती है, इसलिए भारत में नक्सलवाद का प्रभाव बढ़ गया है।

मार्क्सवादी विचार की धारा से नक्सली आंदोलन को बौद्धिक प्रतिष्ठान प्राप्त हुआ। कार्ल मार्क्स ने पूंजीवाद के खिलाफ क्रांति में श्रमिकों की मुक्ति के मार्ग का नेतृत्व किया। इसी आधार पर माओ ने चीन में क्रांति ला दी। इस धारा से नक्सलियों को विश्वास हो गया कि परिवर्तन शांति से नहीं बल्कि बंदूक की शक्ति से संभव है। इसके अलावा, सरकार की पूंजीवादी ध्रुवीकरण नीति नक्सलवाद के लिए एक गंभीर चुनौती है। भारत के पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने स्वीकार किया कि भारत की आंतरिक सुरक्षा के सामने नक्सलवाद एक गंभीर समस्या है। जिन राज्यों में जातिवाद बढ़ रहा है, वहां गरीबी अधिाक प्रचलित है।[6] नक्सल प्रभावित राज्यों की सरकार ने काफी हद तक अनदेखी की है। परिणाम गरीबी में वृद्धि है। नक्सल प्रभावित राज्य छत्तीसगढ़ खनिज संपदा से समृद्ध है। इसमें लोहे, बॉक्साइट, हीरे और सोने की खानों के साथ वनस्पति है। फिर भी, गरीबी अधिक है। यह स्थिति झारखंड, बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल राज्यों में भी मौजूद है। सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में ढिलाई के कारण नक्सलवाद बढ़ रहा है।

नक्सल क्षेत्रों के लोगों का उनकी आर्थिक स्थिति और शैक्षिक पृष्ठभूमि के कारण हर स्तर पर शोषण किया जाता है। कोई विकास कार्य नहीं है। जब विरोधा करने वाले अपनी हद तक पहुंच जाते हैं तो लोगों के प्रति असंतोष बढ़ जाता है। इस बढ़ते असंतोष ने जातिवाद को जन्म दिया है। जिन राज्यों में नक्सलवाद का प्रभाव बढ़ा, वहां भी हमारी बुनियादी जरूरतें पूरी नहीं हो रही थीं। लेकिन विकसित राज्यों में लोग समृद्धि का जीवन जीते हैं। क्षेत्रीय विवादों की इस भावना से अविकसित राज्यों के लोगों में असंतोष पैदा हुआ। वहां लोकतंत्र की जगह नक्सलवाद का विकास हुआ। नक्सलियों के बढ़ते प्रभाव ने भारत की आंतरिक सुरक्षा के लिए एक बड़ी चुनौती पेश की है।[7]

भारत में नक्सली हिंसा: स्थापित राजनीतिक व्यवस्थाएं गरीबों को वहन नहीं कर सकतीं और आदिवासी लोगों को उनके अधिकार, इसलिए नक्सली हिंसक तरीके से सरकार का ध्यान आकर्षित करने के लिए लोकतंत्र विरोधी रास्ता अपनाते हैं। भारत की 80 प्रतिशत भूमि, 19 प्रतिशत जंगल और 35 प्रतिशत जनसंख्या नक्सलवाद के प्रभाव में है। नक्सलवाद की पृष्ठभूमि के बौद्धिक और सकारात्मक पहलू भले ही जायज हैं, लेकिन इसके परिणामस्वरूप मानवीय हिंसा को जायज नहीं ठहराया जा सकता।

2001 से 2013 तक 13 वर्षों के दौरान, 6000 से अधिक आंध्र प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, झारखंड, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल और महाराष्ट्र में नक्सली हमलों में लोग मारे गए। निम्न तालिका 2014 से 2019 तक विभिन्न राज्यों में नक्सली हिंसा की व्यापकता को दर्शाती है।[8]

तालिका क्रमांक 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1 नक्सलवाद की गंभीरता को दर्शाती है। इन माओवादी हमलों में निर्दोश नागरिकों के साथ-साथ पुलिस, सुरक्षा गार्ड और अधिकारी मारे गए हैं। नक्सली अपने कैडरों को हथियार चलाने, विस्फोटक विस्फोट करने का प्रशिक्षण देते हैं। बिहार, झारखंड, मधय प्रदेश और छत्तीसगढ़ में प्रशिक्षण शिविर आयोजित किए जाते हैं। वे अपनी जरूरतों को पूरा करने के

लिए उद्योगपतियों, ठेकेदारों, व्यापारियों, अधिकारियों से फिरौती वसूलते हैं। हालांकि नक्सलियों के खिलाफ लड़ाई आंदोलन आर्थिक असमानता और शोषण के खिलाफ है, वे जिस तरह की हिंसा को अपनाते हैं, वह अस्वीकार्य है। पिछले पांच वर्षों में राज्यवार नक्सली हमलों और मौतों की संख्या को ऊपर तालिका संख्या 1 में दिखाया गया है। भारत में पिछले पांच वर्षों में छत्तीसगढ़ में सबसे अधिाक नक्सली हमले हुए हैं और 614 लोग मारे गए हैं। झारखंड दूसरा सबसे बड़ा राज्य है। पिछले पांच वर्षों में 348 नागरिक मारे गए। हालांकि इन दोनों राज्यों को नव निर्मित किया गया था, लेकिन अभी भी कोई विकास नहीं हुआ है।

तालिका क्रमांक 2

राज्य	2014-2019		2009-2013	
	घटना	मृत्यु	घटना	मृत्यु
आन्ध्र प्रदेश	112	28	299	68
बिहार	582	118	1094	295
छत्तीसगढ़	1722	614	2082	971
झारखण्ड	1515	348	2390	770
मध्य प्रदेश	22	3	28	1
महाराष्ट्र	357	106	1820	238
ओडिसा	452	126	875	250
तेलंगाना	50	11	निरंक	निरंक
उत्तर प्रदेश	0	0	16	3
पश्चिम बंगाल	0	0	703	461
अन्य	26	0	25	12
कुल	**4838**	**1354**	**9332**	**3069**

(स्त्रोत: रिपोर्ट 2018-19 व 2013-14 गृह मंत्रालय, भारत सरकार)

उपर्युक्त तालिका संख्या 2 से स्पष्ट किया गया है कि पिछले 10 वर्षो के नक्सल हमलों और राज्यवार नक्सल हमलों में मौतों की संख्या का तुलनात्मक अध्ययन दिखाता है कि वर्ष 2009-2013 से 2014-2019 तक नक्सली हमले व प्रभाव कम हुआ है। 2009-2013 के दौरान नक्सल प्रभावित राज्यों में कुल 9332 हमले हुए और 3069 लोग मारे गए। हालांकि, अनुपात में कमी आई है। 2014-2019 के दौरान, इस अवधि के दौरान नक्सल प्रभावित राज्यों में 4838 हमले हुए, जिसमें 1354 लोग मारे गए।

निष्कर्ष : उपरोक्त चर्चा से ऐसा लगता है कि नक्सलवाद भारत की आंतरिक सुरक्षा के लिए एक चुनौती बन गया है। नक्सलवाद कानून-व्यवस्था की समस्या नहीं है, यह एक सामाजिक और आर्थिक समस्या है। इसे वंचित और आदिवासी समुदायों के मुद्दों को संबोधित करने की जरूरत है। उन्हें लोकतंत्र में विश्वास पैदा करने की जरूरत है। जनजातीय क्षेत्रों के लोगों का विश्वास बनाने के लिए सड़क, बिजली, पानी के साथ-साथ संबंधित मुद्दों को हल करने की आवश्यकता है।[9] नक्सली क्षेत्रों के आदिवासियों को एकीकृत कर समाज की मुख्य धारा के साथ जोड़ने का प्रयास किया जाना चाहिए एवं उन्हें समान अवसर एवं रोजगार उपलब्ध कराया जाए। जिसके लिए भारत के संविधान में आदिवासी समुदाय के लिए विशेष प्रावधान भी हैं। इस समाज को शोषण से बचाना सरकार की जिम्मेदारी है। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार, लोकतंत्र शासन प्रणाली है कि लोगों के आर्थिक और सामाजिक जीवन में क्रांतिकारी बदलाव लाएगा। बहुसंख्यक लोकतंत्र के नाम पर हमें गारंटी देनी चाहिए कि अल्पसंख्यकों के साथ अन्याय नहीं होगा। जब उन्हें पता चलता है कि उनके जीवन की किसकी को कोई परवाह नहीं है या स्थापित व्यवस्था उनके अन्याय और शोषण के खिलाफ कुछ नहीं करती है, तब नक्सली स्थापित व्यवस्था से बदला लेने की भावना जागने लगती हैं। आजादी के 70 साल बाद भी एक वर्ग सामाजिक न्याय से वंचित है। यदि ऐसी हानियों को रोकना है, तो संतुलित आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय सुनिश्चित करना ही स्थापित व्यवस्था का एकमात्र उपाय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. इंडियन जर्नल ऑफ रिसर्च, वॉल्यूम 5 अंक.6, जून 2016, पृ. सं. 408.
2. रिसर्च हब-इंटरनेशनल मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च जर्नल, वॉल्यूम 1, अंक 4, नवंबर, 2014, पृ. सं. 2
3. www.pravakta.com
4. प्रियंका वोरा और सिद्धांत रॉय, *'हाशियाकरण और हिंसा: भारत में नक्सलवाद की कहानी'*, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ क्रिमिनल जस्टिस साइंस, वॉल्यूम 6 दिसंबर, 2011
5. रिसर्च रिव्यू-इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी वॉल्यूम 4, अंक 2, फरवरी, 2019, पृ.सं. 880
6. रिपोर्ट 2013-14, गृह मंत्रालय, भारत सरकार
7. रिपोर्ट 2018-19, गृह मंत्रालय, भारत सरकार
8. हर्ष कुमार सिन्हा और अश्विनी कुमार पांडे, *'नक्सलवाद: भारत की आंतरिक सुरक्षा के लिए एक खतरा'*, डिफेन्स स्टडीस रिसर्च एण्ड डेवलेपमेन्ट, वॉल्यूम 1, जनवरी, 2009
9. ज्ञानोबा धोबले, *'भारत की आंतरिक सुरक्षा से पहले नक्सलवाद की चुनौती: एक अध्ययन'*, जर्नल ऑफ इंफोर्मेशन एण्ड कम्प्यूटेशनल सांइस, फरवरी 2020, 10 (2), पृ. सं. 251-256

तालिका क्रमांक 1

राज्य	2014		2015		2016		2017		2018		2019(31 मार्च 2019)	
	घटना	मृत्यु	घटना	मृत्यु	घटना	मृत्यु	घटना	मृत्यु	घटना	मृत्यु	घटना	मृत्यु
आन्ध्र प्रदेश	18	04	35	08	17	06	26	07	12	03	04	00
बिहार	163	32	110	17	129	28	99	22	59	15	22	04
छत्तीसग़ढ़	328	112	166	101	395	107	373	130	392	153	68	11
झारखण्ड	384	103	310	56	323	85	251	56	205	43	42	05
मध्य प्रदेश	03	00	00	00	12	02	03	01	04	00	00	00
महाराष्ट्र	70	28	55	18	73	23	63	16	75	12	21	09
ओडिसा	103	26	92	28	86	27	81	29	75	12	15	04
तेलंगाना	14	05	11	02	07	00	05	02	11	02	02	00
उत्तर प्रदेश	00	00	00	00	00	00	00	00	00	00	00	00
पश्चिम बंगाल	00	00	00	00	00	00	00	00	00	00	00	00
अन्य	08	00	10	00	06	00	01	00	00	00	00	00
कुल योग	1091	310	1089	230	1048	278	908	263	833	240	175	33

(स्त्रोत: रिपोर्ट 2018-19 गृह मंत्रालय, भारत सरकार)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

Health Status of Women in India

Dr. Santosh Kumari*

Introduction - In an in-depth study of the human life expectancy across the world, studies have shown that women generally have a higher life expectancy at birth than their male counterparts. However, India is one of the few countries in the world where women and men have an almost equal life expectancy at birth. The lack of a regular benefit for women during life in India indicates that women's health is a systematic problem. Indian women have a high mortality rate, especially in their teens and middle years.

The lives of Indian women are inseparably linked to their social status. According to research on the status of women, the contributions that Indian women make to their families are often overlooked, and instead are considered economic debts. In India, sons are loved as they are expected to care for their parents as they grow up. This choice of sons, along with the high cost of female genital mutilation, could lead to the abuse of daughters. In addition, both formal education and employee participation are inferior to Indian women. They usually have a measure of independence, as they are ruled by their fathers first, then their husbands, and finally their sons. Therefore, there are many factors that contribute to the decline in the health status of women in India.

It has been said that the current culture and practices in India cause the health of Indian women and the state of healthy eating to deteriorate. Indian women are often at risk as their mothers are malnourished and sick. Breastfeeding women were found to have the highest rates of anemia, followed by pregnant women and adolescent girls. According to epidemiological studies, half of all pregnant women have anemia, and at least 120 million women in developing countries are underweight. In South Asia, 60 percent of women are considered underweight.

Unequal poverty of women, low levels of economic well-being, gender discrimination, and the role of reproduction expose women not only to many diseases, but also to access to health care and employment. Women's productivity, independence, quality of life, and physical and emotional well-being are all affected by sexual violence such as domestic violence, rape, and sexual abuse. According to shocking research, widowed women are often forced into prostitution to support themselves. Men spread the virus to women four times more often than women to men. When women receive blood transfusions to treat anemia or pregnancy-related bleeding, they can become infected with HIV. Sexual abuse in childhood increases the risk of depression and reproductive disorders later in life, which can lead to infertility in a woman. Daughters are often victimized because of sexual harassment (son-in-law) and the cost of lobola for their daughters. Educational bias and the formal participation of workers, as well as living the lives controlled by fathers, spouses, and their sons, may have a negative impact on the health concerns of Indian women.

Gender Discrimination in India Leading to a Declined Health Status of Women - Discrimination against women and girls is a widespread and long-standing phenomenon that pervades Indian society at all levels. Despite its relatively rapid economic growth, India's progress towards gender equality was disappointing given its position in rankings such as the Gender Development Index. India's GDP has increased by about 6% over the last decade, while female labor force participation has dropped dramatically from 34% to 27%. The wage gap between men and women is constant at 50%. (A recent survey found a 27% gender pay gap for white-collar jobs). Women's imbalanced poverty, low socio-economic levels, gender discrimination and the role of reproduction expose women to a variety of illnesses and limit access and access to health services. Women's productivity, autonomy, quality of life, and physical and mental well-being are adversely affected by domestic violence, rape, and sexual assault. According to shocking research, women who have lost their male spouse are often forced into prostitution to earn a living. Men are four times more likely to transmit the infectious virus to women than women to men. When a woman receives a blood transfusion to treat anemia or pregnancy-related bleeding, she can become infected with HIV. Childhood sexual abuse increases the risk of developing depression and genital infections in later years and can lead to infertility in women. The son is preferred over the daughter for a variety of reasons, including financial support, retirement safety, property inheritance, and dowry. Meanwhile, the Government of India has made the necessary efforts to address current gender inequality. Unwanted illegal pregnancies terminated by unsafe abortions can have

*Associate Professor & Head (Sociology) J.K.P.P.G.College, Muzaffarnagar (U.P.) INDIA

serious health consequences for women. Decreasing fertility in Indian women can usually improve overall health. Torture and violence inflicted on women by their husbands and mothers-in-law may be a contributing factor to Indian women's poor health and mental well-being. Nutritional issues affect children born to moms with a low level of education twice as much as children born to mothers with a higher level of education.

Income Disparity as a Determinant - Caste hierarchy is linked to income inequity, and it's crucial to understand how it affects women's health. Deshpande (2000) believes that, while caste inequality is lower in Kerala than in other areas of the country, inter-group disparity in terms of consumption expenditure on basic requirements such as food and clothing is higher between SCs/STs and other backward or poor groups. As a result, as their food intake decreases, they become more susceptible to disease. Women from scheduled castes, scheduled tribes, and Muslims, in particular, are malnourished at a higher rate than other groups of society in India. According to Borooah et al. (2012), malnourished women are more prone to illnesses than other groups, which is reflected in mortality rates. When compared to Sikhs, Christians, and non-Scheduled Caste and non-Scheduled Tribe Hindus, Dalits, Adivasis, and Muslims have a shorter mean age at death. If Adivasis and Scheduled Tribe Christians become ill before dying, they are less likely to receive medical attention than Dalits and Muslims. Because low-income rural women rely mostly on agricultural labour and small landholdings, they frequently suffer from hunger as a result of insufficient income and material deprivation such as shelter and sanitation.

Conclusion - A fundamental quality that leads to human well-being and economic growth is good health. Appropriate nutrition for women would enable them to contribute as productive members of society, resulting in healthier generations. The government should implement essential and mandatory regulations to boost literacy rates and education quality, as well as create enough employment possibilities for women, which could have a good impact on women's health problems. Women's health can also be improved by the government enhancing and expanding basic health services, as well as providing regular counselling on safe sex, educational and nutritional needs, and gender-based violence.

References :-

1. **Raju Kowsalya and Shanmugam Manoharan, 2017** :Health Status of the Indian Women - A Brief Report, Med Crave Advances in Plants & Agriculture Research, Volume 5, Issue 3, 2017
2. **Kushwah,Vandana, 2013 :**The Health Status of Women in India ,Research Journal of Chemical and Environmental Sciences, Volume 1 Issue 3 (August 2013);66-69.
3. **Kumar,Ashok,M.E. Khan, 2010 :**Health Status of Women in India: Evidences from National Family Health Survey-3 (2005-06) and future outlook, Research and Practice in Social Sciences , Vol. 6 No.2 (August 2010)1-21.
4. **Sarojini N.B. & others, 2006 :**Women's Right to Health, National Human Right Commission, New Delhi.

****

भारतीय राजनीति में स्त्रियों की स्थिति

डॉ. अवधेश कुमार *

प्रस्तावना – विश्व भर में स्त्रियों की स्थिति सुधारने के लिए किये गये आन्दोलनों में शिक्षा को समाज में स्त्रियों की दलित स्थिति को बदलने के लिए सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण साधन माना गया है। 19वीं शताब्दी के भारतीय समाज सुधारक भी ऐसा ही मानते थे। परन्तु उनका ध्येय शिक्षा का उपयोग स्त्रियों को उनके पत्नी और माता के परम्परागत कर्तव्यों का पालन करने में अपेक्षाकृत अधिक योग्य बनाना था, न कि उन्हें सामाजिक आर्थिक अथवा राजनीतिक विकास की प्रक्रिया में अधिक दक्ष और सक्रिय सदस्य बनाना। उपनिवेशी सत्ताधारियों ने स्त्रियों के लिए शिक्षा विषयक इस सीमित दृष्टिकोण का सामान्यत: समर्थन किया। 20वीं शताब्दी में स्वतन्त्रता प्राप्ति और संविधान द्वारा प्रदत्ता समानता के अधिकारों ने राजनीति अर्थव्यवस्था और समाज में बहुविध भूमिका निभाने के लिए महिलाओं का आह्वान करके उनकी स्थिति सुधारने के लिए नये–नये आयाम प्रस्तुत किया। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के वर्षों में अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने भी एक ऐसे उपकरण के रूप में शिक्षा की भूमिका पर बल दिया, जो नई समाज व्यवस्था का निर्माण करने के लिए स्त्रियों को सक्षम बना सके। इसके बावजूद भी भारत में स्त्रियों की शिक्षा के प्रति जो विचारधाराएँ अपनाई गईं, उनमें एक ओर पारम्परिक सीमित दृष्टि और दूसरी ओर इस उदार नवीन संकल्पना के बीच स्पष्ट रूप से वैध वृत्ति प्रकट होती है। जिसने समाज के मूल्यों के विकास को प्रभावित किया है।

यह सच है कि पूर्व स्वातन्त्र्य काल से स्त्री शिक्षा की प्रगति की तुलना में स्वातन्त्र्योत्तर काल में स्त्री शिक्षा का असाधारण विकास हुआ है। 1973–74 तक आते–आते विभिन्न स्तरों पर नामांकित लड़कियों की संख्या लड़कों की संख्या की तुलना में उनका अनुपात आश्चर्यजनक रूप से बढ़ गया।[1] लेकिन इसके साथ ही स्त्री शिक्षा विषयक राष्ट्रीय समिति द्वारा लिये गये सर्वेक्षण के आंकड़े विपरीत स्थिति का अर्थात् स्त्री शिक्षा की दिशा में ह्रास का संकेत भी करते हैं।[2] व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में स्वतन्त्रता से पूर्व की तुलना में स्त्रियों की सफलता उल्लेखनीय मानी जा सकती है। हालांकि आज भी इसका प्रतिनिधित्व बहुत कम है। इसी प्रकार अनुसंधान के क्षेत्र में स्त्रियों का प्रवेश मुख्य रूप से स्वतन्त्रता के बाद का विकास है। विभिन्न परीक्षाओं में लड़कों की तुलना में लड़कियों ने अपार सफलता प्राप्त कर इस पूर्व धारणा को ध्वस्त कर दिया है कि उनमें अभिरूचि और प्रतिभा कम होती है। स्त्री शिक्षा का मुद्दा नारी का सबसे प्रधान मुद्दा रहा। 1917–20 के बीच स्त्री–दर्पण में इस पर कई लेख निकले। बदलते हुए सामाजिक–सांस्कृतिक सन्दर्भ में शिक्षित पुरूष और अशिक्षित स्त्री के बीच की खाई ने सामाजिक और पारिवारिक ढाँचे में संकट पैदा कर दिया था। राष्ट्रीय आन्दोलन ने भी स्त्री शिक्षा का सवाल खड़ा कर दिया। स्त्रियों ने अपने ऊपर होने वाले अत्याचार और अपमान का एक बड़ा कारण स्त्री–शिक्षा की कमी को माना। स्त्री–शिक्षा के लिए उन्होंने बाल विवाह और पर्दे की प्रथा का विरोध किया क्योंकि ये दोनों प्रथाएँ स्त्री–शिक्षा की राह में रूकावट थीं। उस समय के स्त्री आन्दोलन ने इस तथ्य को समझा और उसने स्त्री–शिक्षा के सवाल को स्त्री–मुक्ति के सवाल के साथ जोड़ दिया। स्त्री–शिक्षा उस वक्त सिर्फ एक बहस ही नहीं एक सामाजिक आन्दोलन भी था। पिछली शताब्दी के अन्त में ही स्त्री–संगठनों ने लड़कियों के लिए स्कूल खोले थे। प्रथम विश्वयुद्ध के दौर में ऐनी बेसेन्ट ने बनारस में लड़कियों का प्रसिद्ध स्कूल खोला जो आज बसन्त कन्या महाविद्यालय है।

लड़कियों की शिक्षा के प्रति सामाजिक रवैया स्वीकृति से लेकर निपट उदासीनता तक तरह–तरह का है। शहरी क्षेत्रों के मध्य वर्ग में लड़कियों की शिक्षा के प्रति स्वीकृति सबसे अधिक है। समृद्ध परिवारों में एक छोटा वर्ग परम्परिक कारणों से आज भी इसका विरोध करता है, किन्तु अन्य वर्ग इसे एक उपलब्धि और आधुनिकीकरण का प्रतीत मानते हैं। निम्न–मध्यम वर्ग में अधिकाधिक लोग आर्थिक आवश्यकताओं के कारण लड़कियों की शिक्षा के लिए पर्याप्त त्याग करने के लिए तैयार हैं। किन्तु एक बहुत बड़ा वर्ग अब भी आर्थिक तथा सामाजिक कठिनाईयों के कारण ऐसा करने में अपने को असमर्थ पाता है। लड़कियों की शिक्षा के लिए सबसे प्रबल सामाजिक समर्थन विवाह के बाजार में इसकी बढ़ती माँग से मिला है। सर्वेक्षण के अनुसार 64.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि शिक्षा से लड़कियों के विवाह में बेहतर घर बर मिलने में सहायता मिली है। तथापि विवाह की सम्भावनाओं और शिक्षा के बीच यह सम्बन्ध विभिन्न दिशाओं में काम करता है और कई अन्तर्विरोधात्मक स्थितियाँ यहाँ भी हैं, जैसे लड़कियों की शिक्षा दहेज की माँग को और भी बढ़ाने में योग देती है।[3] स्त्री–पुरूष की समानता के लिये नये मूल्यों को स्थापित करने के लिए योजनाबद्ध सुविचारित शैक्षिक प्रणाली के लिए सतत् प्रयत्न करना ही होगा।

सामाजिक दृष्टि से नारी की मुक्ति का एक सबसे अधिक उल्लेखनीय परिवर्तन रहा है– गृहस्थी के संकुचित घरौंदे से बाहर निकलकर उसका बाहरी दुनियाँ की गतिविधियों के क्षेत्र में आना। भारत में स्त्री की आर्थिक सहभागिता पहले भी थी। परम्परागत ग्राम्य अर्थव्यवस्था में महिलाओं ने उत्पादन और विपणन दोनों में स्पष्ट और सर्वस्वीकृत भूमिकाओं का निर्वाह किया था, और आज भी जहाँ–जहाँ अर्थव्यवस्था के परम्परागत रूप प्रचलित हैं, वहाँ–वहाँ कर रही है। स्वतन्त्रता के बाद बदली हुई सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों से मध्यम वर्ग की स्त्रियों के लिए आवश्यक हो गया है कि वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनें। उच्च वर्ग की स्त्रियाँ स्वेच्छया काम करना चाहती हैं। परिणामस्वरूप मध्यम तथा उच्च वर्ग की स्त्रियों ने ऐसे कई

* सहा0 प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) आर्य कन्या डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

व्यवसायों में प्रवेश किया है, जिनपर अब तक पुरूषों का एकाधिकार था। स्वातन्त्र्योत्तर काल में परम्परागत सेवाओं और व्यवसायों में स्त्रियों के उभरने के लिए जो प्रत्यक्ष कारण उत्तरदायी हैं, वे निम्नलिखित हैं–

1. रोजगार के मामलों में भेदभाव न बरतने और अवसर की समानता का संवैधानिक आश्वासन।
2. स्त्री–शिक्षा का विकास और इसके फलस्वरूप शिक्षा तथा रोजगार के उन क्षेत्रों में उनका प्रवेश जिनमें अब तक पुरूषों का एकाधिकार था।
3. बढ़ते आर्थिक दबाव के कारण शहरी मध्यवर्ग के बीच स्त्रियों में सवेतन रोजगार से संबंधित सामाजिक मूल्यों में क्रमिक परिवर्तन।
4. स्वातन्त्र्योत्तर काल में विकास के प्रत्यक्ष परिणाम के रूप में तृतीयक क्षेत्र का विस्तार।[4]

इस दिशा में तस्वीर का दूसरा रूख चिंताजनक है जो इसी सरकारी समिति की सर्वेक्षण रिपोर्ट बताती है। ग्राम्य और कुटीर उद्योगों के ह्रास और तद्‌जनित वैकल्पिक रोजगारों और कौशल की समाप्ति के परिणामस्वरूप एक प्रकार की व्यवसायिक रोजगार गतिहीनता की स्थिति उत्पन्न हो गई है। यह स्त्रियों के लिए एक निर्योग्यता है। इसके परिणामस्वरूप खेती के कार्य से स्त्रियों का क्रमिक विस्थापन हो रहा है, और उनके क्रियाकलाप सीमित होते जा रहे हैं।[5] स्त्रियों की आर्थिक भूमिकाओं और आर्थिक क्रियाकलापों में उनकी सहभागिता के अवसरों का कोई भी मूल्यांकन समाज के विकास की अवस्था परिवार तथा उससे अपेक्षाकृत बड़ी इकाई समाज में स्त्रियों की भूमिका के प्रति सामाजिक–सांस्कृतिक दृष्टिकोणों और उनकी स्थिति के आधारभूत घटकों से सम्बद्ध सामाजिक विचारधारा को ध्यान में रखे बिना नहीं किया जा सकता।

मतदान और अन्य तमाम नागरिक अधिकारों के बावजूद आर्थिक स्वतन्त्रता के अभाव में स्त्री की स्वतन्त्रता सिर्फ अमूर्त और सैद्धान्तिक रह जाती है। पुरूष और अपनी आर्थिक निर्भरता की स्थिति में स्त्री अपनी किसी भी भूमिका में स्वावलम्बी नहीं हो पाती। अर्थ ही व्यक्ति को वह अधिकार देता है जिसके द्धारा वह अपनी परियोजनाएँ पूरी कर सके। अनेक स्त्रियाँ चाहे वे बहुत साधारण व्यवस्था में क्यों न हों, आर्थिक अधिकारों से मिलने वाली सुविधाओं का महत्व जानतीं हैं। यह बात पूरे विश्व की किसी भी स्त्री पर लागू होती है। भारतीय स्त्री ने इस दृष्टि से अपनी स्थिति को समझना शुरू कर दिया है। निम्नवर्ग की स्त्रियों का स्वयं कमाई करना तो कोई नई बात नहीं है लेकिन उच्च वर्ग की महिलाएँ भी धीरे–धीरे यह महसूस करने लगी हैं कि इंसान के रूप में उनका भी एक निजी व्यक्तित्व है तथा उनके जीवन का लक्ष्य एकमात्र अच्छी पत्नियाँ और समझदार माताएँ बन जाने से पूरा नहीं हो जाता, बल्कि वे यह भी मानने लगी हैं कि वे सब भी नागरिक समुदाय और संगठित समाज की सदस्याएँ हैं। इतनी संख्या में विवाहित मध्यवर्गीय हिन्दू महिलाओं का बिना विरोध के नौकरी कर सकने का मुख्य कारण है कि आज मध्य वर्ग की आर्थिक समस्या को सभी समझने लगे हैं और यह भी कि परिवार के रहन–सहन का स्तर बनाये रहने के लिए पत्नी की कमाई बहुधा अनिवार्य हो जाती है। परिवार को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण पहलू स्त्रियों का नौकरी करना है जो शिक्षा द्धारा तथा आज के आर्थिक दबावों के कारण संभव हो सका है। परिवार के पुरुष सदस्यों का स्त्रियों की नौकरी के के सम्बन्ध में दृष्टिकोण भी परिवर्तित हुआ है। अधिकांश परिवार स्त्री के व्यावसायिक जीवन में प्रवेश के समर्थक हैं। इसके द्धारा न केवल परिवार का स्तर उन्मतशील हुआ बल्कि स्त्रियों की परिवार में स्थिति भी परिवर्तित हुई है।

राजनीति में स्त्रियों की तीव्रता से घुसपैठ खासकर 1919 के बाद भारतीय इतिहास की अत्यन्त आश्चर्यजनक घटना है। महात्मा गांधी और कांग्रेस राष्ट्रीय हित के प्रयास के लिए उनका आह्वान कर रहे थे। जब 1936 में कांग्रेस की सरकार बनी तो कुछ औरतें ने मन्त्री, अवर सचिव और प्रान्तीय विधायिका सभाओं के उपाध्यक्ष के रूप में काम किया। भारतीय औरतें स्थानीय बोर्डों और म्युनिस्पाल्टी की सदस्या भी हुई। इस तरह भारतीय महिलाओं में जागरण की एक नयी लहर आयी। स्त्रियों की राजनीतिक स्थिति इस बात से जानी जा सकती है कि सत्ता के स्वरूप निर्धारण और इसमें भाग लेने के मामले में उन्हें कितनी समानता और आजादी प्राप्त है और इस सन्दर्भ में उनके योग को समाज कितना महत्व देता है। भारतीय संविधान में स्त्रियों की राजनीतिक समता को मान्यता दिया जाना न केवल परम्परागत भारतीय समाज से विरासत में प्राप्त प्रतिमानों की तुलना में एक बिल्कुल नया कदम था, अपितु उस समय के सर्वाधिक उन्नत देशों के राजनीतिक आदर्शों से भी बढ़कर था स्त्रियों की राजनीतिक समता की प्रगति में जिन दो प्रमुख शक्तियों ने उत्प्रेरकों का कार्य किया, वे थीं राष्ट्रीय आन्दोलन और महात्मा गाँधी का नेतृत्व।

विश्व के अनेक देशों में स्त्रियों को अपनी राजनीतिक अधिकारों के लिए संघर्ष करना पड़ा है। फ्रांसीसी महिलाओं को अन्त में 1945 में मतदान का अधिकार मिल गया। अंग्रेज स्त्रियों को काफी संघर्ष के बाद यह अधिकार 1928 में मिला क्योंकि उन्होंने प्रथम महायुद्ध में काफी सहयोग दिया था। अमेरिका में स्त्रियों को वोट का अधिकार 1933 में मिला, लेकिन इतालवी फासिस्ट सरकार ने चर्च की सहायता से औरत को हमेशा दमित रखा। औरत वहाँ दोहरे बंधन में थीं, सरकारी प्रतिबन्ध तथा पारिवारिक बन्धन। सोवियत रूस में नारी मुक्ति आन्दोलन काफी जोरों से बढ़ा–महान नेता लेनिन ने स्त्री और मजदूर वर्ग दोनों की मुक्ति का आसन किया, दोनों को एक बताया। 1936 के सोवियत संविधान की धारा 122 लिखती है। 'सोवियत रूस में स्त्री को आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक और सार्वजनिक सारे अधिकार पुरुष के बराबर प्रदत्ता किये जा रहें हैं। अन्त में संयुक्त राष्ट्रसंघ ने 1945 तक आते–आते दुनिया के सारे स्त्रियों और पुरुषों के समान अधिकार का एलान किया। और अधिकतर देशों ने स्त्रियों को वोट का अधिकार राजनीतिक जीवन में देकर राजनीति में प्रवेशाधिकार दिया।'[6]

स्वतन्त्रता के बाद के वर्षों में स्त्री के इन अधिकारों के प्रभाव की जाँच करते समय तथा स्त्रियों की राजनीतिक स्थिति का निर्धारण करने के लिए तीन प्रमुख कसौटियाँ हैं– चुनावों में मतदाताओं और उम्मीदवारों की हैसियत से सहभागिता–चुनाव आँकड़े महिला मतदाताओं की संख्या में वृद्धि की सामान्य प्रवत्ति सूचित करते हैं। उनकी प्रतिशतता 1962 में 46.6 थी जो 1967 में बढ़कर 55.4 हो गई और 1971 में जबकि सभी मतदाताओं की संख्या में आमतौर पर कमी हुई थी उनकी प्रतिशतता 49.1 रही। उम्मीदवारी के मामले में स्त्रियों की संख्या कभी भी 6 प्रतिशत से अधिक नहीं रही। हालांकि समय–समय पर सत्ता के राजनीतिक दल सहित अन्य दल भी राजनीति में स्त्रियों की सक्रिय भागीदारी के लिए उनका आसन करते रहते हैं।

1993 के आम चुनावों के पूर्व भी सभी राजनीतिक दलों को एकाएक महिलाओं को अपने चुनावी घोषणापत्र में प्राथमिकता की श्रेणी में दर्ज करने का स्मरण हो आया और सभी नेता अपनी चुनावी जनसभाओं में तरह–तरह से महिला मतदाताओं को अपनी ओर आकृष्ट करने के प्रयास में जुट गये।

देश के कर्णधारों को चुनाव के पूर्व ही सबसे तीव्र ढंग से यह आभास होने लगता है। कि समस्त जनसंख्या की आधी आबादी महिलाएँ हैं और इस आये चोट बैंक को अपने हिस्से में करने के लिए तमाम वायदे किये जाते हैं। स्त्रियों की राजनीतिक सजगता के स्तर अलग-अलग प्रदेशों, वर्गों और समुदायों में अलग-अलग होते हैं। शिक्षा तथा राजनीतिक सजगता भी शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत अधिक अंर्तसम्बन्ध एवं सहभागिता को प्रदर्शित नहीं करती। कुल मिलाकर कामकाजी महिलाओं में जिनमें व्यवसायिक महिलाएँ भी शामिल हैं, राजनीति के प्रति सजगता तो अपेक्षाकृत अधिक दिखाई देती है, किन्तु इसका परावर्तन हमेशा सहभागिता में नहीं होता, अर्थात् वे राजनीति के प्रति सजग होते हुए भी उसमें अधिक सक्रिय रूप से भाग नहीं लेतीं। न ही उच्चतर सामाजिक, आर्थिक स्थिति और राजनीतिक सजगता के बीच कोई निश्चयात्मक सम्बन्ध है। समकालीन भारतीय राजनीति में स्त्रियों की स्थिति यद्यपि निराशाजनक तो नहीं है, लेकिन बहुत उत्साहवर्द्धक भी नहीं है। राजनीति में भाग लेने से स्त्रियों को रोकने वाले अनेक कारण हैं। जैसे चुनावों का बढ़ता हुआ खर्च, हिंसा की धमकियों अथवा डर और चरित्र हनन। इनमें से अंतिम दो कारण हाल ही में बढ़े हैं और उन्होंने स्त्रियों को प्रभावित किया है।

पिछले कुछ समय से साहित्य समीक्षकों एवं विद्वानों में साहित्य को उसकी सामाजिक पृष्ठभूमि में देखने की अभिरूचि में बड़ी वृद्धि हुई है। साहित्यिक अध्ययन ने सदैव उस ओर प्रबल अभिरूचि व्यक्त की है, जिसे कभी-कभी 'ऐतिहासिक पृष्ठभूमि' अथवा 'बौद्धिक वातावरण' या अधिक सरलता पूर्वक 'संस्कृति' का नाम दिया जाता है। साहित्य संश्लिष्ट ढंग से समाज का अंग होता है। वह समाज का रूप निर्धारण आता है उससे स्वयं निर्धारित होता है। साहित्य जितना उत्कृष्ट होगा यह संश्लिष्टता उतनी ही अधिक होगी। मुक्तिबोध तो यहाँ तक कहते हैं कि जब तक हम समीक्ष्य साहित्य के मनोवैज्ञानिक सौन्दर्यान्वयन विवेचन का समाजशास्त्रीय विश्लेषण नहीं करते तब तक हम उसके अन्त:स्वरूप का, उसकी क्षमताओं तथा सीमाओं का पूरा विवेचन तथा मूल्य यापन भी नहीं कर सकते हैं।[7]

साहित्य फोटोग्राफ के अर्थ में जीवन की प्रतिष्ठवि नहीं होता और न ही रचनाकार अपने समाज का आइना मात्र होता है। वह अपनी समकालीन समाज व्यवस्था का विरोध भी कर सकता है, उसकी हिमायत या कटु आलोचना भी कर सकता है, पर उससे निर्लिप्त नहीं रह सकता। रचनाकार के साहित्य में सम्बन्धित सामाजिक एवं नैतिक संस्कृतियाँ अपनी संश्लिष्ट अर्न्तक्रियाओं में व्यक्त होती है। साहित्य में समाज जिस रूप को धारण करके भी आए लेकिन एक तथ्य निश्चित है। 'लेखक की भावदृष्टि से समन्वित जीवन अनुभव जो उसकी अनुभूति के माध्यम से कला के तत्व बन जाते हैं, अपनी प्रारम्भिक मूल अवस्था में जीवन तथ्य होने के कारण समाजशास्त्रीय तथा ऐतिहासिक विशेषताओं से युक्त होते हैं।'[8] इसलिए रिचर्ड हागर्ट बहस करते हैं। 'बिना श्रेष्ठ साहित्य के आस्वाद के वस्तुत: कोई भी समाज की प्रकृति को नहीं समझेगा। अमेरिकी समीक्षा एक चिर सम्मत उदाहरण बी. एल. पैरिंगटन की पुस्तक 'मैन करेन्ट्स इन अमेरिकन थाट' है, जिसमें साहित्य सम्बन्धी विचारों को, धार्मिक विचारों को और राजनीतिक विचारों के सम्बन्ध से देखने का प्रयत्न किया गया है। विचार और कला आर्थिक एवं सामाजिक तत्वों द्वारा निर्धारित होते हैं और उन निर्धारक तत्वों के विषय में लेखक की कुछ जागरूकता पैरिंगटन की दृष्टि में साहित्य की उत्कृष्टता के मापदण्डों में से एक है।'[9]

वैज्ञानिक दृष्टि से देखने पर हमारे सामने यह महत्वपूर्ण तथ्य उपस्थित होता है कि साहित्य की समाजशास्त्रीय ऐतिहासिक व्याख्या वस्तुत: उतनी बाहरी नहीं है जितनी समझी जाती है। वह बाहरी और भीतरी दोनों से युक्त और दोनों के परे है। कला के भीतरी रूप से पृथक (हम मात्र विश्लेषण की सुविधा के लिए यह पृथकता मान रहे हैं रूप और तथ्य कभी एक दूसरे से पृथक् नहीं रह सकते) तत्त्व की आलोचना समाजशास्त्रीय और ऐतिहासिक भी हो सकती है, भले ही हम समाजशास्त्र और ऐतिहासिक विकासशास्त्र की पारिभाषिक शब्दावली का उपयोग न करें (न यह हमेशा जरूरी होता है) किन्तु हमारी आलोचना को वास्तविकता पर आधारित होने के लिए समाज रचना के ऐतिहासिक विकास के स्तर आलोच्य वस्तु के समय प्रचलित भाव परम्परा लेखक वर्ग परिवार तथा व्यक्तिगत विकासावस्था, तत्कालीन सांस्कृतिक विकास आदि बातों के अध्ययन के साथ ही लेखक की उस समस्त स्थिति परिस्थिति से की गई प्रतिक्रिया का अध्ययन भी नितांत आवश्यक है। और इस अध्ययन के अंतिम गर्भितार्थ समाजशास्त्रीय और ऐतिहासिक ही हो सकते हैं।[10]

साहित्य सामाजिक अनुभवों को प्रकट करता है। आधुनिक कविता में यह रूप सांकेतिक संक्षिप्त और शब्दानुगत होता है। जैसे-जैसे समाज आगे बढ़ता है, उसकी समूची अवधारणाओं में विकास होता है, उसके सोचने के तरीके में भी विकास होता है और उसके निष्कर्षों के प्रभाव में भी। और इसी के साथ साहित्य भी उप प्रभावों को ग्रहण करता है। अनेक प्रमुख साहित्यकार अपने साहित्य के सन्दर्भ में इस तथ्य को स्वीकार करते हैं। गिरिजा कुमार माथुर अपनी कविताओं के लिए कहते है। उसके पीछे एक पूरा मनोसामाजिक भावात्मक संसार है जो जिस तेजी से बदला है उससे टकराने की प्रतिध्वनियाँ मेरी कविता में व्यक्त हुई है।[11] इसके अतिरिक्त कविता के सन्दर्भ में लिखते हैं 'कविता सामाजिक, वस्तुगत और बृहत्तर जीवन से जोड़ने की प्रक्रिया होती है अपने समय को बदलने में कवि का यह हस्तक्षेप ही उसे सार्थकता प्रदान करता है, लेकिन यह प्रचार के स्तर पर नहीं आदमी के गहरे मनोभावों और संवेदनाओं को परिवर्तन में साझेदारी की प्रेरणा देती है।'[12]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. टुवर्ड्स इक्विटी, रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन दि स्टेट्स ऑफ वीमेन इन इंडिया, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, 1974, पृ. 239
2. वही, पृ. 242-43
3. टुवर्ड्स इक्विटी, रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन दि स्टेट्स ऑफ वीमेन इन इंडिया, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, 1974, पृ. 263
4. वही, पृ. 201
5. टुवर्ड्स इक्विटी, रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन दि स्टेट्स ऑफ वीमेन इन इंडिया, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, 1974, पृ. 167
6. सीमोन द वोऊवार, स्त्री उपेक्षिता, पृ. 64
7. टुवर्ड्स इक्विटी, रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन दि स्टेट्स ऑफ वीमेन इन इंडिया, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, 1974, पृ. 79
8. सीमोन द बोऊवार, स्त्री उपेक्षिता, पृ. 177
9. प्रमिला कपूर, भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएँ, पृ. 11
10. वही, पृ. 411
11. टुवर्ड्स इक्विटी, रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन दि स्टेट्स ऑफ वीमेन इन इंडिया, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, 1974, पृ. 63
12. टुवर्ड्स इक्विटी, रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन दि स्टेट्स ऑफ वीमेन इन इंडिया, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, 1974, पृ. 76

आधुनिक जीवन-द्वन्द्व और मोहन राकेश के नाटकों की कथावस्तु

डॉ. जयराम त्रिपाठी *

प्रस्तावना - हिन्दी नाट्य साहित्य में भारतेन्दु और प्रसाद के बाद यदि लीक से हटकर कोई नाम उभरता है तो मोहन राकेश का। हालांकि बीच में और भी कई नाम आते हैं जिन्होंने आधुनिक हिन्दी नाटक की विकास-यात्रा में महत्तवपूर्ण पड़ाव तय किए है; किन्तु मोहन राकेश का लेखन एक दूसरे ध्रुवान्त पर नजर आता है। इसलिए ही नहीं कि उन्होंने अच्छे नाटक लिखे, बल्कि इसलिए भी कि उन्होंने हिन्दी नाटक को अंधेरे बन्द कमरों से बाहर निकाला और उसे युगों के रोमानी ऐन्द्रजालिक सम्मोहन से उबारकर एक नए दौर के साथ जोड़कर दिखाया। वस्तुत: मोहन राकेश के नाटक केवल हिन्दी के नाटक नहीं हैं। वे हिन्दी में लिखे अवश्य हैं, किन्तु वे समकालीन भारतीय नाट्य प्रवृत्तियों के द्योतक हैं। उन्होंने हिन्दी नाटक को पहली बार अखिल भारतीय स्तर ही नहीं प्रदान किया वरन् उसके सदियों के अलग-थलग प्रवाह को विश्व नाटक की एक सामान्य धारा की ओर भी अग्रसर किया।

'विश्व नाटक' शब्द का प्रयोग यहाँ जान-बूझकर किया गया है। दरअसल, जब हम आधुनिक नाटक की बात करते हैं तो नाटक न किसी भाषा का रह जाता है, न देश का। सारे आस्पदों और उपाधियों से मुक्त वह सिर्फ नाटक है-सार्वजनिक और सार्वदेशिक; अभिन्न और अविभाजित। इस अभेद के मूल में आज के युग की बढ़ती हुई अन्तर्राष्ट्रीयता है जो जब निरन्तर कलाओं का आधार बनती जा रही है। इसीलिए अनेक कलात्मक प्रवृत्तियाँ और चिन्तन धाराएँ निरन्तर आदान-प्रदान के माध्यम से एक विश्वजनीन रूप धारण करती जा रही हैं। आज का नाटक विश्व-भर में इसी आधार पर विकसित हो रहा है। हिन्दी नाटक भारतेन्दु युग में पहली बार अपनी लक्ष्मण-रेखा से बाहर निकला। उसके बाद पुनरूत्थानवादी प्रवृत्तियों और स्वच्छन्दतावादी आग्रह के कारण पौर्वात्य और पाश्चात्य नाट्य शिल्प में समन्वय की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। किन्तु कालान्तर में जिस विश्वजनीन साहित्य-दौर ने हिन्दी नाटक को विश्व नाटक की समकालीन परिस्थितियों से सबसे अधिक जुड़ा पाया, वह था-यथार्थवाद। और फिर उसके बाद यथार्थवाद की प्रतिक्रिया में विश्व-भर में नाटक के जो विविध रूप उभरे और जो-जो तेवर बदले, हिन्दी नाटक ने उन भंगिमाओं को ग्रहण करने में देर जरूर लगाई, किन्तु वह उससे सर्वथा अनजान नहीं रहा। इस दिशा में भी, कालक्रम से नई नाटककार आगे आए-उन आगे आनेवालों में अब तक सबसे आखिरी नाम मोहन राकेश का कहा जा सकता है जिन्हें नए नाटक की पहल करने का श्रेय प्राप्त है। राकेश ने हिन्दी नाटक को एक नई जमीन पर खड़ा किया। सोचने की बात इतनी है कि यह जमीन कहाँ तक उन्होंने स्वयं तोड़कर बनाई थी, और कहाँ तक उन्हें बनी-बनाई मिल गई थी? वैसे हर प्रयोगधर्मा लेखक को अपनी पूर्ववर्ती परम्परा और चिन्तन का एक दाय अपने-आप ही हाथ लग जाता है जिस पर वह अपने लेखन को टिकाता है; और फिर उस बिन्दु से वह आगे बढ़ता है। राकेश के लिए वह बिन्दु था-हिन्दी नाटक का एक विश्वजनीन चेतना की ओर अग्रसर होता विकास-क्रम। इसमें लक्ष्मीनारायण मिश्र, जगदीशचन्द्र माथुर, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', लक्ष्मीनारायण लाल, धर्मवीर भारती आदि पहले ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर चुके थे। राकेश ने इस धारा को एक नया मोड़ ही नहीं दिया, वरन् उन्होंने विश्व के समकालीन नाट्य लेखन के समानान्तर ऐसी नाट्य रचना भी की जो आधुनिक भाव-बोध के नए आयाम प्रस्तुत करती है।

आधुनिक भाव-बोध पश्चिम में उन्नीसवीं शती के मध्य से बड़ी तीव्रता से जागा और देखते-ही-देखते चारों ओर फैल गया जिससे अनेक कला-आन्दोलन और चिन्तन प्रस्फुटित हुए। फलत: यथार्थवाद, प्रकृतवाद, प्रतीकवाद, अभिव्यक्तिवाद, एपिक थिएटर, अतियथार्थवाद, असंगतवाद आदि अनेक मतवादों ने समय-समय पर नाट्य लेखन और मंचन की अन्याय प्रयोगधर्मिताओं और विविधताओं को जन्म दिया। इनके कारण नाटक की क्षेत्रीय और देशीय सीमाएँ टूटीं और विश्व-भर में वे समानान्तर प्रवृत्तियाँ उभरीं, जिनमें नाटक की समस्त जीवनानुभूतियों और मानवीय स्थितियों के बीच नाटक ने एक ऐसा सामान्य स्वरूप ग्रहण किया जिसने सारे पाश्चात्य जगत् को आकर्षित किया और कालान्तर में जिसका प्रभाव भारत पर भी पड़े बिना न रहा।

पारस्परिक निर्भरता और एकता का यह माहौल जिन साहित्यिक और कला-आन्दोलनों के माध्यम से बना था उसके पीछे सामाजिक परिवर्तन और वैज्ञानिक चिन्तन का विशेष हाथ रहा है। उन्नीसवीं शती ज्ञान-विज्ञान, सामाजिक परिवर्तन और वैचारिक क्रान्ति की शती रही है। डार्विन, फ्रायड और मार्क्स के सिद्धान्तों के प्रसार के साथ नए वैचारिक वातावरण का निर्माण हुआ; ईश्वर के सम्बन्ध में विचार बदले; आस्थाएँ समाप्त हुईं तथा मानव की नियति और सहज प्रवृत्तियों के घेरे में उसकी दुर्बलताओं-विशेषताओं की चर्चा आम हुई। यही नहीं, मध्यम वर्ग के उदय के साथ समानता का भाव जागा और औद्योगिक क्रान्ति के साथ पुरातन जीवन-पद्धति का खाका ही नहीं बदला, बल्कि नई समस्याएँ भी उभरीं। इस प्रकार, अस्तित्व की जागरूकता को लेकर आधुनिक नाटक की जो शुरूआत हुई उसमें इब्सेन (1828-1906) ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इब्सेन ने अपने नाटकों में नए प्रश्न उठाए और अपने सारे कृतित्व को प्राचीन नाटक की रूढ़ियों के अस्वीकार में प्रतिफलित किया। उसकी महानता इस बात में है कि उसने नाटक को स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों के बीच से उठाकर यथार्थ के धरातल पर खड़ा किया और अन्नत: उसे यथार्थ जीवन और जगत् से, उसके त्रासद अनुभवों तथा जीवन्त समस्याओं से संयुक्त किया। उसने अपने नाटकों को

* सहा0 प्रोफेसर, हेमवती नंदन बहु0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नैनी, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

कई अर्थमयी भंगिमाएँ दीं और पात्रों, नाट्य-स्थितियों और संवादों के बीच से बहु-आयामी संकेत उभारने के प्रयास किए। इसीलिए उसके नाटक कई स्तरों पर भावना, क्रिया-व्यापार और बौद्धिक ऊहापोह के सामंजस्य को ही नहीं वरन् पक्षधरता के आग्रह के साथ-साथ काव्यमयी दृष्टि के सौन्दर्य को भी उजागर करते हैं। उसकी नाट्य-प्रतिभा ने विश्व-भर के नाटककारों को प्रभावित किया जिससे वह नाटककारों का एक पूरा खेमा तैयार करने में सफल हुआ।

मोहन राकेश स्वातंत्र्योत्तर देश के उन रचनाकारों में से थे जिन्होंने समाज एवं समकालीन परिस्थिति को अपनी रचनाओं में बारीकी से अभिव्यक्त किया है। इस वैज्ञानिक युग ने जहाँ एक ओर मनुष्य की आधुनिकीकरण का वरदान दिया वहीं दूसरी ओर मानसिक जटिलताओं, तनाव एवं द्वन्द्व ने अभिशप्त भी किया। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटकों ने पश्चिमी नाटकों का अनुकरण करते हुए द्वन्द्व को मूल रूप से केन्द्रित किया है। द्वन्द्व मूलत: किन्हीं दो तत्त्वों के बीच चाहे वे मानव हों, मानवीय भावनाएँ हो या पशु-पक्षी या जड़-पदार्थ हो, उनके बीच झगड़े, कलह, विरोधाभास आदि को द्वन्द्व कहते हैं। नाटक में द्वन्द्व का एक महत्तवपूर्ण स्थान है। कथानक, चरित्र-चित्रण, संवाद, भाषा, अभिनेयता आदि नाटक के तत्तव हैं, द्वन्द्व का इन सभी तत्तवों के साथ घनिष्ठ संबंध है एवं उसकी एक अलग विशेषता भी है जिसे आज के सभी नाटककार स्वीकार भी करते हैं।

राकेश ने अपने तीनों नाटकों में वैयक्तिक अंतर्द्वन्द्व को युगीन यथार्थ से जोड़कर प्रस्तुत किया है। राकेश ने अपने सम्पूर्ण साहित्य में मूलत: जीवन में व्याप्त आक्रोश, असंतुलन और कुंठाओं का ही उद्घाटन किया है। उनकी रचनाओं में जिन्दगी की जो तस्वीर है उसमें एक तरह की ईमानदार तलाश अधिक है किसी अंतिम निष्कर्ष का मसीहाई अंदाज नहीं। मोहन राकेश का प्रथम नाटक **'अषाढ़ का एक दिन'** ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में आज के साहित्यकार के मानसिक द्वन्द्व का सशक्त उदाहरण है। यह अंतर्द्वन्द्व न केवल इस नाटक के पात्र कालिदास का है अपितु आधुनिकीकरण के इस दौर में सभी इंसान इस द्वन्द्व से संघर्ष करते हुए जूझ रहे हैं।

'आषाढ़ का एक दिन' नाटक मूलत: बदलते हुए स्त्री-पुरूष के संबंधों को प्रकाशित करता है। नवीन युग के इस संबंधों की विडम्बनाओं एवं अंतर्विरोधों से ऐसा लगता है कि आधुनिक युग की धरती पर प्रेम एवं सान्निध्य का सिंचन कभी संभव नहीं है। इसका सशक्त उदाहरण है राकेश के इस नाटक के दोनों पात्र-मल्लिका और कालिदास। 'कालिदास और मल्लिका दोनों ही तन और मन', 'भाव और अभाव' के संघर्ष के द्वन्द्व की चक्की में पिसते हुए सही रास्ते में भटककर सभी कुछ गंवा बैठे हैं। राकेश का दूसरा नाटक **'लहरों का राजहंस'** मनोवैज्ञानिक धरातल पर द्वन्द्वग्रस्त मानवीय संवेदनाओं का नाटक है। 'लहरों का राजहंस' ऐतिहासिक कथानक पर आधारित सांसारिक सुखों एवं आध्यात्मिक शांति के दो परस्पर विरोधी जीवन पद्धति के बीच विखण्डित मानव की मुक्ति की खोज है।

नाटक का प्रारंभ ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में होता है। राकेश ने यहाँ इतिहास का सहारा लेकर कथानक को आधुनिकता की ओर अग्रसर किया है। नाटक के प्रथम अंक में राजभवन के सभी कर्मचारी अपने काम में व्यस्त है। इसी बीच सुंदरी अपनी दासी अलका के साथ मंच पर प्रवेश करती है। सुंदरी को अपने रूप पर अधिक गर्व है और उसका आत्मविश्वास है कि उसका पति नंद कभी भी उसके रूप-जाल के मोह से बाहर निकलकर भिक्षु नहीं बन सकता। नाटककार ने नारी का कोई स्वस्थ सामाजिक स्वरूप न उभार कर, उसकी किन्हीं दुर्बल मनोग्रंथियों को कलात्मक ढंग से, बड़ी चतुराई से, दबाया है। आलोच्य नाटक प्रवृत्ति और निवृत्ति के बीच तथा भोग और वैराग्य के परम्परागत द्वन्द्व को रूपायित करता है। सुंदरी का उस परिवेश में कमोत्सव का आयोजन करना जब यशोधरा भिक्षुणी बनने जा रही है, सुंदरी के अंतर्द्वन्द्व को स्पष्ट रूप से उद्घाटित करता है।

'आधे-अधुरे' नाटक मोहन राकेश के आरंभिक दो नाटकों से बिल्कुल भिन्न धरातल पर आधारित है। यह नाटक आधुनिक समाज के एक ऐसे परिवार के क्रमश: विखण्डित होने की प्रक्रिया को प्रस्तुत करता है जिसका खाका आर्थिक विपन्नता के चलते डगमगा रहा है। राकेश के पहले दो नाटकों से कही अधिक मात्रा में आज के मानव का आंतरिक द्वन्द्व इस नाटक में उभरकर सामने आया है। **'आधे-अधूरे'** एक मध्यवर्गीय परिवार के अलग-अलग कोणों से लिए गए अनेक **'स्नेप्स'** का **'एलबम'** है जिसमें कोई रंगीन तस्वीरें नहीं है, सबके सब खाका जैसे या स्कैचेज जैसे।

नाटक का आरंभ एक अनामधारी व्यक्ति से होता है। काले सूट वाला आदमी (पुरूष एक) के रूप में एकालाप से ही नाटक के आरंभ में ही अपने अंतर्द्वन्द्व को उभारता है। राकेश ने इस नाटक में स्त्री को बंद कमरे से बाहर निकालकर उसके अपने अस्तित्व बोध को रूपांकित किया है। सावित्री, जो पुरूष एक अर्थात् महेन्द्रनाथ की पत्नी है, अपनी मानसिक असंतुष्टि और अंतर्द्वन्द्व के कारण ऐसे पुरूष से संबंध बनाना चाहती है जो 'डिपेन्डेन्ट' न हो। इस चाहत के कारण वह महेन्द्रनाथ और उसके परिवार से टूटती-बिखरती ही रहती है। सावित्री, एक स्वतंत्र जीवन की आकांक्षा से भिन्न-भिन्न पुरूष सिंघानियां, जुनेजा, जगमोहन आदि के प्रभाव में भी आती है। वह अपनी घुटन, अकेलेपन एवं मानसिक द्वन्द्व को खत्म करने के इरादे से अपनी घनिष्ठता अन्य पुरूषों से बढ़ाती है। ओम शिवपुरी के अनुसार 'यह आलेख एक स्तर पर स्त्री-पुरूष के बीच के अलगाव और तनाव का दस्तावेज है। सावित्री बची-खुची जिंदगी को ही संपूर्ण पुरूष के साथ बिताने की आकांक्षा रखती है पर यह आकांक्षा पूरी नहीं हो पाती क्योंकि संपूर्णता की तलाश ही शायद वाजिब नहीं। महेन्द्रनाथ निरंतर अपने जीवन में विपरीत परिस्थितियों का सामना करता हुआ बिखरता ही रहता है। 'मैं इस घर में एक रबड़-स्टैंप भी नहीं, सिर्फ एक रबड़ का टुकड़ा हूँ। बार-बार घिसा जाने वाला रबड़ का टुकड़ा। महेन्द्रनाथ की आत्मनिर्भरता के अभाव को सावित्री भी पसंद नहीं करती। वह महेन्द्रनाथ से एकदम संतुष्ट नहीं है। सावित्री की आशाएँ एवं आकांक्षाएँ भी असीम है। महेन्द्रनाथ इन आशाओं को पूरा करने में असमर्थ है। सावित्री के इस विचार के स्तर से तो साफ तौर से आधुनिक मध्यवर्ग के पारिवारिक द्वन्द्व की झलक मिलती है। पति-पत्नी का संबंध प्रेम, विश्वास और एक-दूसरे के प्रति सम्मान की मज़बूत दीवार पर टिकता है। राकेश के इस दाम्पत्य जोड़े में न तो प्रेम और विश्वास है और न एक दूसरे के प्रति सम्मान। इक्कीसवीं सदी के इस दौर में राकेश के आधे-अधूरे के परिवार के जैसे बहुत से ऐसे परिवार है जिनकी हवा की संत्रास, अकेलेपन और द्वन्द्व से दुर्गन्धमय हो चुकी है। चूँकि राकेश ने हमारा ध्यान आधे-अधूरे की तरफ केन्द्रित किया है। इसीलिए इस परिवार के कलह-संघर्ष को हम जान पा रहे हैं। राकेश ने अपने सभी नाटकों में समाज और साहित्य को आंदोलित कर देने वाले आधुनिक जीवन-द्वन्द्व को उभारा है। इन नाटकों की कथावस्तु में कोई विशद समस्या नहीं है किन्तु इनमें आधुनिक जीवन-द्वन्द्व को इतनी गहनता और प्रखरता से राकेश ने अभिव्यक्त किया है जो अपने-आप में एक चुनौती है।

मोहन राकेश ने पहली बार हिन्दी नाटक को आधुनिकता की नई दिशा दी है पर उनके कृतित्व पर समय के साथ फिर से मूल्यांकन की ज़रूरत है। पर इतना निश्चित है कि उन्होंने हिन्दी में पहली बार मानव अस्तित्व के मूल

में स्थित प्रश्न उठाए हैं–एक नहीं, अनेक प्रश्न : नियति और स्थिति के प्रश्न; सत्ता मोह और सृजन का प्रश्न' पार्थिव और अपार्थिव का प्रश्न; पुरूष मन की तृप्ति और नारी मन की आत्मरति का प्रश्न ! वह अपने नाटकों में निरन्तर प्रश्नों से उलझते रहे–कहीं उत्तरों के साथ, कहीं बिलकुल निरूत्तर। पर सब जगह एक जागरूक झेलनेवाले व्यक्ति की तरह, एक चिन्तक की मुद्रा में। एक ऐसे 'मसीहा' की तरह जिसने युग के प्रश्नों की चुनौती–भरी भंगिमा को महसूस किया और जो आधुनिक मानव की पीड़ा और उलझन का प्रवक्ता बना। राकेश और उनकी कृतियों में भावना का सम्बन्ध इतना सीधा और सच्चा है और अन्तर की आवाज़ इतनी तीखी और तल्ख़ है कि उनके तेवर मसीहाई–से लगने लगते हैं। राकेश की कृतियों में मुझे जो एक विशेष अकुलाहट दिखाई दी, उसमें हो सकता है गलत ही मैंने मसीहाईपन देखा हो। मेरी दृष्टि उनकी भंगिमा पर रही है। पर आलोचक के लिए कोई मसीहा नहीं होता। इसलिए आपको 'मसीहा' का कृतित्व सूली पर टँगा भी दिखाई देगा। सवाल असल में मेरे सामने फूल–मालाएँ चढ़ाने का नहीं रहा है। फूल–मालाएँ लोग चढ़ा चुके हैं। मैंने तो उनके नीचे दबे रचनाकार को उबारने की कोशिश मात्र की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी नाटक और नाटककार, मोहन राकेश : नाट्य सृजन और द्वन्द्व, डॉ0 उषा भागर्व
2. आषाढ़ का एक दिन, मोहन राकेश
3. मोहन राकेश की रंग–सृष्टि, जगदीश शर्मा
4. समकालीन संवेदन और हिन्दी नाटक, डॉ0 शेखर वर्मा
5. नाटककार मोहन राकेश, डॉ0 जीवन प्रकाश जोशी
6. समकालीन संवेदना और हिन्दी नाटक, डॉ0 शेखर शर्मा
7. मोहन राकेश का नाट्य–साहित्य, डॉ0 घनानंद एम0 शर्मा 'नवीन'
8. मोहन राकेश के सम्पूर्ण नाटक, संपा0 नेमिचंद्र जैन
9. आधे–अधूरे, मोहन राकेश

****

Forty Second (42nd) Amendment in the Constitution of India : In the Perspective of Biodiversity Conservation

Dr. Jolly Garg *

Keywords - Convention on Biological Diversity (CBD), United Nations Environment Programme (UNEP), 42nd in Constitution of India, Biodiversity Conservation.

Introduction - India, the second most populous country in the world, is the eleventh mega-biodiversity center in the world and the third in Asia with its share of ~11% of the total plant resources. The floral wealth of India comprises more than 47,000 species including 43% vascular plants. Nearly 147 genera are endemic to India.[2] The vast geographical expanse of the country has resulted in enormous ecological diversity, which is comparable to continental level diversity scales across the world. It has representation of twelve biogeography provinces, five biomes and three bioregions.[3] Natural forests and forest plantations together cover 21.02% of the geographical area in India. India, one of the twelve 'Vavilovian Centres of Origin' and diversification of cultivated plants, is known as the 'Hindustan Centre of Origin of Crop Plants'.[4] About 320 species belonging to 116 genera and 48 families of wild relatives of crop plants are known to have been originated in India.[5] The biosphere or ecosphere is the sum total of all the ecosystems of the world and self-regulating zone of life on Earth excluding the solar radiations and heat from the center of the Earth. The 'process of biopoiesis' i.e., the process in which life created naturally from non-living matter, such as simple organic compounds in the beginning of the evolution of biosphere. 'Biogenesis' is the process in which life was created from living matter, at least some 3.5 billion years ago.[6-7] Natural environment consists of biotic and a-biotic components i.e., living and non living constituents respectively. The complex interactions of these components with all the environmental factors viz. climate, geography and natural resources also affect human survival and economic activity.[8] Environment may also defined as the complex interactions of all a-biotic and biotic factors which finalizes and ultimately determine its form and survival. Biodiversity is the variety and variability of life on Earth. Biodiversity is typically a measure of variation at the genetic, species, and ecosystem level.[9] Biodiversity is not distributed evenly on Earth, and is richest in the tropics.[10] Biodiversity generally tends to cluster in hotspots.[11] Biodiversity interconnect the biosphere and ecological services provided by ecosystem viz. life support system of human race. Conservation of biodiversity includes the preservation of all species of flora and fauna, the enhancement of wildlife habitat, the control of wildlife problems and the sustainable use of forests and wildlife including many dimensions. Components of the Biodiversity are grouped into two categories namely fauna and flora. Fauna includes all the animals including human beings as genus *Homo sapiens*; flora includes all the living creatures belonging to category Plant kingdom including trees, herbs shrubs etc.There exit a balance and collateral evolution between the two essential constituents of biodiversity viz. flora and fauna of the Ecosystem.

Review of Literature: The 1972, Stockholm Declaration proclaimed that human's natural and man-made environment are essential to his/her well-being and to the enjoyment of basic human rights.[12] The Earth Summit held in Rio De Janerio, Brazil in 1992 resulted in the formulation of the Convention on Biological Diversity (CBD); the three primary aims of which were to (i) preserve biological diversity on earth in recognition of the goods and services it provides; (ii) promote sustainable utilization of its components; and (iii) facilitate the equitable sharing of the benefits derived from its resources.[13] Since its inception in 1992, as of 2016, the Convention has 196 parties, which includes 195 states including the India and the European Union; all UN member states; with the exception of the United States have ratified the treaty.

International conservation policy recognizes biodiversity at three levels, ecosystem, species and genetic, and that management should aim to retain all three.[14] This is clearly reflected in the Convention on Biological Diversity, Aichi Biodiversity Targets, agreed in 2010, where there is specific reference in goals and targets, not only to ecosystems and species, but also to genetic diversity.[15] Yet current approaches to biodiversity conservation are largely based on geographic areas, ecosystems, ecological communities, and species, with less attention on genetic diversity and the species-population continuum. Species in particular provide a common measure of biodiversity that underpins much scientific and management endeavor.[16-17] Genetic diversity is important because it helps maintain the health

*Associate Professor & Head (Botany) D.A.K. P.G. College, Moradabad (U.P.) INDIA

of a population, by including alleles i.e., different forms of genes; that may be valuable in resisting diseases, pests and other stresses and genetically very valuable . If the environment changes its normal patter, a population that has a higher variability of alleles will be better able to evolve to adapt to the new environment viz. 'Principle of survival of the fittest'. The importance of plant genetic diversity (PGD) is now being recognized as a specific area. Diversity in plant genetic resources (PGR) provides opportunity for plant breeders and biotechnologists to develop new and improved cultivars with desirable characteristics. The growing population pressure and urbanization of agricultural lands and rapid modernization in every field of our day-to-day activities that create biodiversity are getting too eroded in direct and indirect way. For instance, land degradation, land fragmentation, deforestation, urbanization, coastal changes and environmental stress etc. are collectively leading to large-scale extinction of plant species.

Findings : In the Constitution of India; some important Provisions articles and acts for the Protection of Environmental and biodiversity conservation are Article 14; Article 19 (1) (g); Article 21; Article 48 (A); Article 51; Article 51 (A); Article 253,Indian Penal Code, 1860: Section 268 defined what is public nuisance. Abatement of public nuisance is also a subject of Section 133 to 144 of I.P.C. only prohibitive provisions.

Provisions mentioned in Section 269 to 278 emphasizes prosecution and punishment if there is violation of these provision.

Forty Second Amendment) Act 1976: Stockholm Conference (1972) stimulated the Indian Government to enact 42nd Amendment to the Constitution in 1976.This 42nd Amendment added Article 48-A andArticle 51 (A) in order to support environmental protection and biodiversity conservation including the natural resources viz. forest, lake wild life etc.

Article 48 (A): inter alia, provides 'The State shall endeavor to protect and improve the environment and to safeguard the forests and wildlife of the country' i.e. protection and biodiversity conservation of the country. Thus Article 48-A emphasizes on the 'Protection and improvement of environment'.

Article 51 :comprehended 'The State shall endeavor to promote international peace and security; maintain just and honorable relations between nations; foster respect for international law and treaty obligations'.

Article 51 (A) : Article 51A (g) states 'It shall be the duty of every citizen of India to protect and improve the natural environment including forests, lakes, rivers and wildlife and to have compassion for living creatures'; to value and preserve the rich heritage of our composite culture; to protect and improve the natural environment including forests, lakes, rivers and wild life, and to have compassion for living creatures; to safeguard public property and to abjure violence; to strive towards excellence in all spheres of individual and collective activity so that the nation constantly rises to higher levels of endeavor and achievement.[18]While Article 48-A comprehend to 'environment'; Article 51-A (g) enjoins it as a fundamental duty of every citizen 'to have compassion for living creatures'. Thus, protection and improvement of natural environment including biodiversity is the duty of the State (Article 51 A g) and every citizen (Article 48-A) by the Constitution (Forty-second Amendment) Act, 1976.

In India at present there are strong provisions aimed at protecting the environment from pollution and maintaining the ecological balance viz. Forest (Conservation) Act, 1980, amended 1988; The Indian Forest Act, 1927 ; The Biological Diversity Act, 2002 are the mile stones in the protection and conservation of biodiversity. The Government of India monitoring variousprogrammers and to educate the people and arouse their consciousness for the protection of environment. Department of Science and Technology. Department of Environment was established in 1980; after five years Government of India recognized the gravity and intensity of the biodiversity and environment conservation and to halt the depletion damage, disruption of different elements of ecosystem established the Ministry of Environment and Forests (MoER) which serves as thenodal agency for the planning, promotion, making of environment laws and their enforcement in India. Some important agencies which help the MoEF in carrying out environment related activities are Central Pollution Control Board; State Pollution Control Boards; State Departments of Environment; Union Territories (UT) Environmental Committees; The Forest Survey of India;The Wildlife Institute of India; The National forestation and Eco-development Board and The Botanical and Zoological Survey of India, etc.[18]

Discussion: Reflections or actions of the human being are based on the inspiration from his /her cultural and religious heritage as well as the legal bindings.Genetic diversity serves as a way for populations to adapt to changing environments. With more variation, it is more likely that some individuals in a population will possess variations of alleles that are suited for the environment. Those individuals are more likely to survive to produce offspring bearing that allele. It is important and essential to have genetic diversity and to take care of the major factors affecting biodiversity today. In situ conservation, which aims to keep a species in their ecosystem or habitat, is a top priority. Germ-plasma contains the information for a species' genetic makeup, a valuable natural resource of plant diversity. Agriculture benefits from uniformity among crop plants within a variety, which ensures consistent yields and make management easier. In order to conserve biodiversity in plants, it is important to targets three independent levels that include ecosystems, species and genes.

It is also essential to identify and predict the actual or potential impact of development and to consider ways of minimizing negative impact while maximizing benefits. The

environmental protection and biodiversity conservation are integral parts of sustainable development. Conflict between eco-system and socio-economic system arises from the unidirectional and unlimited human wants to meet the genuine needs of all the people and as also greed of some people. In order to make each of us accountable for present growth of human beings and present status of biodiversity, forest and global ecosystem; There is a need of holistic understanding of the relationship between the environment and the development processes taking place in the world. It has become the need of the hour to expand and evolve approaches to twenty- first century to 'biodiversity and forest conservation' and to strictly follow the 'global-environmental ecosystem approach'. [19-22]

Environmental protection laws in many, if not most countries, provide for citizen lawsuits as a means of enforcing legislative and regulatory standards. Such suits have played a significant role in enforcing constitutional provisions. The concept of environmental protection; which included conservation of biodiversity and Human Rights are enshrined in the Constitution of India**.**Thus environment protection and biodiversity conservation along with the term human rights through provisions in constitution must go hand in hand. The essential need is an epistemological shift towards more expansive and intentional standpoints that see economic obligations in the service of societal responsibilities. Thus Public Interest Litigation (PIL) and other judicial technique have been instrumental in promotion of Sustainable development; by ensuring conservation of biodiversity. In addition, Public Interest Litigation (PIL) is a very important and effective tool against various ministries of central government, federal bodies, local authorities and public owned companies; for the conservation of biodiversity and environment. To link between environmental quality and the right to life was first addressed by a constitutional bench of the Supreme Court in the Charan Lal Sahu case in 1990 [23] is one example.[23] Review and updating as well as proper implementation of the legislations is necessary in view of the challenges and threats in reference to resolve the challenges mention in table 1.

References :-

1. Alcamo J, Fernandez N, Leonard SA, Peduzzi P, Singh A (2012) Harding Rohr Reis R. 21 issues for the 21st Century: results of the UNEP Foresight Process on Emerging Environmental issues.
2. Nayar MP (1996) Tropical Botanical Garden and Research Institute, Thiruvananthapuram.
3. Cox CB, Moore PD (1993) Biogeography: an ecological and evolutionary approach. Blackwell Publications, Oxford p: 326.
4. Vavilov NI (1951) Ronald Press, New York. Vavilov NI. LWW; 1951 Dec 1.
5. Arora RK, Nayar E R(1984) NBPGR Sci. National Bureau of Plant Genetic Resources, New Delhi.
6. Sweeney D, Williamson B (2006) Biology: Pearson Education, Incorporated.
7. Zimmer C (2013) Earth's Oxygen: A Mystery Easy to Take for Granted. New York Times. 2013, Oct.
8. D.L., Johnson, Ambrose SH, Bassett TJ, Bowen ML, Crummey DE, Isaacson JS, Johnson DN, Lamb P, Saul M, Winter Nelson AE. "Meanings of environmental terms". *Journal of environmental quality.* 1997 May;26(3):581-9.
9. Conway T. A. (1998) International Institute for Sustainable Development. Winnipeg, Canada, http:// www. iisdl. iisd. ca/pdf/tradelib_biodiv. pdf (accessed January 29th, 2002).
10. O.L., Petchey, Evans KL, Fishburn IS, Gaston KJ. "Low functional diversity and no redundancy in British avian assemblages". *Journal of Animal Ecology*. 2007 Sep 1:977-85.
11. Peek, M.C., MA, Brown JM. "Clade age and not diversification rate explains species richness among animal taxa". *The American Naturalist*. 2007 Apr;169(4):E97-106.
12. United Nations General Assembly Resolutions 2398 (xxii) 1986.
13. CBD (2000) Secretariat of the Convention on Biological Diversity, London, p 20.
14. Convention on Biological Diversity, 2007)Convention on Biological Diversity (2007). Available online at: https://www.cbd.int/doc/meetings/cop-bureau/cop-bur-2007/cop-bur-2007-10-14-en.pdf.
15. https://www.cbd.int/sp/targets/
16. Mace, G. M. (2004). The role of taxonomy in species conservation. *Philos. Trans. R. Soc. B: Biol. Sci*. 359, 711–719. doi: 10.1098/rstb.2003.1454
17. Wilson, E. O. (2017). Biodiversity research requires more boots on the ground. *Nat. Ecol. Evol*. 1, 1590–1591. doi: 10.1038/s41559-017-0360-y.
18. https://indiankanoon.org/
19. Garg, J., " Global Environmental Challenges:merging Issues for theE 21st "yCentur In: Rani S, editor. Our Environment –Yesterday, Today and Tomorrow. Mathura Laxmi Prakashan; 2015 , 157- 160.
20. Garg, J., "Ethics and Biodiversity Conservation" *Jour. Meerut University History Alumi*, Vol. 29 (15), 2017, 126- 131.
21. Garg, J "Traditional and Lnnovative Approaches: In Perspective of Biodiversity Conservation", *Jour. National Development* 31 (1), 2018, 1-10.
22. Garg, J., " es for biodiversity conservsSome traditional and innovative approach " *Int. Jour. Agriculture Sci,*10 (12), 2018, 6501-6503.23 .
23. Charan Lal Sahu vs. Union of India AIR 1990 SC 1480.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

युवा शक्ति का सशक्तिकरण

डॉ. आरती कनौजिया *

प्रस्तावना – वर्तमान काल में जहाँ निजीकरण, औद्योगीकरण व आधुनिकीकरण ने विकास हेतु शिक्षा, तकनीकी व ज्ञान के महत्व को बढ़ाया है, वही इसके उपयोग के लिए मनुष्य के महत्व को भी स्वीकार किया है। भूण्डलीकरण के इस दौर में मानव विकास सर्वप्रथम है। मानव का विकास मानव द्धारा ही सम्भव है। अब यह मानवजाति का उत्तरदायित्व है कि वह नई चुनौतियों का मूल्यांकन करके समय की मांग अनुसार उपर्युक्त जीवन-शैली का चुनाव करें तथा नई पीढ़ी को सम्पन्न संसाधन एव स्वस्थ परम्पराएं हस्तान्तरित करें। वर्तमान काल में मनुष्य को एक संसाधन के रूप स्वीकारते हैं। इस संसाधान का जितना उचित विकास व उपयोग होगा, देश उतनी गति से विकास-पथ पर अग्रसर होगा। विश्व बैंक के एक सर्वेक्षण के अनुस विकास प्रक्रिया में भौतिक पूंजी का 16%, प्राकृतिक पूँजी का 20% व मानव पूंजी 64% योगदान है। अत: आज मानव पूंजी का महत्व काफी बढ़ गया है। भारत जैसे प्रजातान्त्रिक देश के 55 करोड़ लोगों का 25 वर्ष से कम आयु का होना एक बहुत बड़ा जनसंख्यात्मक लाभांश है, क्योंकि यह एक विशाल मानव संसाधान है। ये मानव संसाधान देश का वो युवा है जिसको सशक्त कर भारत विश्व में एक महाशक्ति के रूप में उभर सकता है।

आधुनिक सभ्यता में व्यापक बदलाव के एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में युवा आन्दोलन, बीसवीं शताब्दी की महत्वपूर्ण राजनीतिक व सामाजिक मांग कहा जा सकता है। यह युवा वर्ग हमारे देश का भावी इस उत्तराधिकारी है। उनको इस उत्तरदायित्व को वहन के योग्य बनाना, आज की मांग है। ये वर्ग ऊर्जा, साहस नयापन व भावी सपने लिये होते हैं। बस आवश्यक है इनकी इस ऊर्जा व सपनो सही दिशा मिलने की। उत्साह से भरे युवा वर्ग को पथभ्रष्ट होने में अधिक समय नहीं लगता । इनकी ऊर्जा व साहस का सबसे गलत फायदा वे असामाजिक तत्व उठाते हैं जो कि नहीं चाहते कि विश्व में शान्ति कायम हो। अपने इस अमानवीय उद्देश्यों की पूर्ति हेतु वे युवाओं का सहारा लेते है और उनसे आतंकवाद, चोरी, डकैती, अपहरण, हत्या आदि कार्यो को अंजाम देते हैं। मुंशी प्रेमचन्द के शब्दों में 'युवाकाल की आशा पुआल की आग है जिसके जलने व बुझाने में देर नहीं लगती।'

अत: युवा शक्ति को सही दिशा में मोड़ने हेतु एक मात्र उपाय, उन्हें शिक्षित व व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करना है, जिससे देश व सभ्यता के विकास हेतु राजनीतिज्ञ, शिक्षक, सैनिक, वैज्ञानिक, चिकित्सक आदि निर्मित किये जा सके। आज युवा वर्ग के समक्ष बहुत सी समस्याएं है। इन समस्याओं को हमें दूर करके ही युवा शक्ति को सशक्त बनाया जा सकता है।

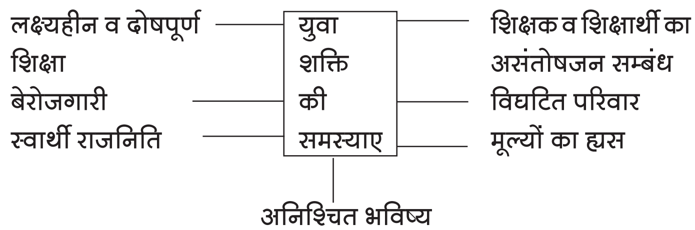

भारतीय युवा समुदाय का एक बड़ा भाग विद्यार्थी वर्ग है। युवा वर्ग की वास्तविक समस्या शिक्षण संस्थाओं से बाहर आने के बाद शुरू होती है, जब उन्हें अपनी योग्यता के अनुरूप रोजगार उपलब्ध नहीं होता। वे भविष्य के प्रति अनिश्चितता की स्थिति में होते हैं। यदि हम भारतीय शिक्षा व्यवस्था पर नजर डाले तो हमें ज्ञात होता है कि देश की शिक्षा व्यवस्था को सुधारने के प्रयास लगातार हो रहे है। कभी साहित्य, संगीत, कला और विज्ञान के क्षेत्र में अपनी अलग पहचान बना चुका भारत फिर उन्हीं पद चिन्हों पर चल पड़ा है। भारत में शिक्षा व प्रशिक्षण संस्थाओं की समस्या नहीं है जो कि निम्न आकडे दर्शाते है।

स्कूल (लाख में)

	प्राथमिक	उच्च प्राथमिक	माध्यमिक
2001-1	6.64	2.2	-
2005-06	7.7	2.9	1.6

उच्च शिक्षा	
विश्वविद्यालय	255
कॉलेज	18064
नमांकन	1.10 करोड़

साक्षरता (प्रतिशत में)	
2001	64.8
2004-05	67.3

विधि शिक्षा	
संस्थान	750
नामांकन	3.36 लाख

चिकित्सा शिक्षा	
संस्थान	2092
छात्र	348485

प्रबंध	
संस्थान	1100
दाखिला क्षमता	92000

इंजीनियरिंग शिक्षा	
संस्थान	1512
नामांकन	795120

उपरोक्त आंकड़ें दर्शाते है कि देश में शिक्षा की उपलब्धता में कमी नहीं है, कमी है, तो हमारे व्यवहार, नीतियों, योजनाओं को लागू करने में। आज विद्यालय से लेकर विश्वविद्यालयों तक परम्परागत पाठ्यक्रम चलाये जा रहे हैं, जिन्हें पढ़ने के बाद रोजगार की सम्भावना बहुत कम रहती है। समाज को

* एसोसिएट प्रोफसर (शिक्षा शास्त्र) शशि भूषण बालिक विद्यालय डिग्री कॉलेज, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

जिस प्रकार योग्य व्यक्तियों की आवश्यकता है, उन्हें रोजगारपरक शिक्षा उपलब्धा कराकर ही निर्मित किया जा सकता है। भारतीय श्रम रिपोर्ट 2007 में पाया गया कि रोजगार के अवसर तो है पर उनके लिए योग्य व्यक्तियों की कमी है। अगले चार वर्षों में विश्व की 25 प्रतिशत श्रम शक्ति भारत में होगी। सन् 2025 तक 30 करोड़ युवा श्रम शक्ति के रूप में उपलब्धा होंगे। यदि इस श्रम शक्ति को उपयुक्त व्यावसायिक प्रशिक्षण व निर्देशन प्रदान कर दिया जाए तो ये देश के निर्माण में अपना योगदान सुनहरे अक्षरों में लिख देंगे। यदि देखा जाए तो ज्ञात होता है कि भारतीय युवा प्रतिभाओं का दबदबा देश ही नहीं पूरी दुनिया में है। हमारे विद्यार्थी विद्यालयों से निकल कर दुनिया में झंडे गाड़ते हैं। वे उद्योग व्यापार, विज्ञान, प्रौद्योगिकी में विश्वस्तरीय कॉरपोरेट नौकरियों में उत्तम प्रदर्शन करते है। यूरोप-अमेरिका के विश्वविद्यालयों में बड़ी संख्या में भारतीय शिक्षक डाक्टर मिल जायेंगे। जिन आई. आई. टी. या आई. आई. एम. पर हम फूले नहीं समाते वे भी पश्चिमी मल्टीनेशनल के लिए सुपात्र विद्यार्थी तैयार करने के अतिरिक्त और क्या कर रहे है। अत: हमें देश में ही ऐसे अवसर ढूंढने होंगे कि यहाँ प्रशिक्षित युवा वर्ग स्वयं देश उघोग, व्यापार, शिक्षा की कमान सभालें तथा इसके पश्चात वे विश्व के अन्य देशों का रूख करें।

उच्च शिक्षा पर गठित यशपाल कमेटी की रिपोर्ट में भारत में 75वें वर्ष तक का एजेंडा तैयार किया गया, जिसमें स्वाधीनता के 75 वें वर्ष यानि 2022 तक 70 करोड़ ऐसे नौजवान तैयार करने का लक्ष्य रखा गया है, जिन्हें विश्व में कहीं भी रोजगा मिल सके। साथ ही देश में उच्च शिक्षा के विभिन्न आयामों को एक मंच पर लाकर समाज से सीधे संवाद स्थापित करने की सिफारिश की। स्थानीय मुद्दों दस्तकारों के कला-कौशल और सामाजिक पहलुओं को विश्वविद्यालय के अन्दर लाने की बात की। यदि इन सिफारिशों को लागू कर दिया जाए तो देश की उच्च शिक्षा मात्र डिग्री प्रदान करने वाली संस्था न रहेगी। शिक्षित बेरोजगारों की भीड़ कम होगी तथा देश का युवा एक शक्ति के रूप में सामने आयेगा।

युवा शक्ति का अर्थ ऐसी प्रक्रिया से है जिसमें युवाओं को अपने आपको संगठित करने की क्षमता बढ़ती है। वे लिंग, सामाजिक आर्थिक स्थिति, जाति, धर्मान्धता, भ्रष्टाचार को दूर करते हुए आत्म निर्भरता विकसित करते है व देश के निर्माण में अपनी सार्थकता सिद्ध करते हैं। अत: वर्तमान डिजिटल युवा वर्ग को सशक्त बनाने हेतु शिक्षा व्यवस्था के साथ-साथ नियमों, विचारों व व्यवहारों में भी परिवर्तन लाना होगा। इस हेतु निम्न सुझाव है।

1. शिक्षा को उद्देश्यपूर्ण व रोजगारपरक बनाना।
2. रोजगारपरक पाठ्यक्रमों को विद्यार्थियों को चयनित करने की छूट हो।
3. शिक्षा द्वारा युवाओं को नये मूल्यों के प्रति जागरूक बनाना। शारीरिक श्रम को महत्व प्रदान करना।
4. शैक्षिक व व्यावसायिक निर्देशन उपलब्ध कराना।
5. जनसंख्या नियंत्रित करना।
6. विद्यालयों में खेलकूद व शारीरिक शिक्षा की व्यवस्था करना।
7. युवाओं को व्यवसाय जगत की सम्पूर्ण सूचनायें उपलब्ध करायी जाए।
8. युवाओं शिक्षक व अभिभावकों को युवा वर्ग के प्रति अपने उत्तरदायित्व के लिए जागरूक रहना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. परीक्षा मंथन - निबन्ध संग्रह, भाग-2 इलाहाबाद
2. शिक्षा चिंतन - शैक्षिक त्रैमासिक, शोध पत्रिका जनवरी-मार्च 2009
3. शिक्षा चिंतन - शैक्षिक त्रैमासिक, शोध पत्रिका अप्रैल-जून 2007
4. भारतीय शिक्षा का विकास एवं सामयिक समस्याऐं- डॉ. मालती सारस्वत, प्रो0 एस0एल0 गौतम, आलोक प्रकाशन, लखनऊ इलाहाबाद
6. प्रतियोगिता दर्पण - हिन्दी मासिक, जनवरी 2010
7. योजना - शिक्षा का पुनर्गठन, विकास को समर्पित, मासिक पत्रिक (सितम्बर, 2009)
8. दैनिक जागरण - नई का सिरमौर बन जाएगा। अपना देश, 1जनवरी 2010

****

Efficacy of Henna or Mehendi that Transcends the Religions and Enriches the Cultures

Dr. Mani Bansal* Dr. Anuj Kumar Agarwal**

Introduction - Henna, LawsoniaInermis or Mehndi, is an herb(actually a powder) derived from crushing the leaves of the henna plant. The crushed leaves of the Henna plant form a creamy paste used to decorate the body in intricate designs with symbolic importance. You can also mix this powder with sugar, lemon juice and essential oils to create a paste for better result. The plant grows best in desert areas such as the Middle East, Africa and South Asia. It was first discovered in the tombs of Ancient Egypt (3400 B.C.E.). South Asia really popularized it with their extravagant wedding traditions. Now, the art is practiced all over the world — each region has unique styles and traditions.

It has many uses, as its paste turns into art that has evolved throughout history, it provides benefits for both the mind and the soul, and it carries significant symbolic importance.The earliest use of this plant dates back to the Pharaohs in Egypt, some 9,000 years ago. Cleopatra, the last reigning queen of the ancient Egyptian civilization is said to have used henna to adorn her body and beautify herself. Egyptians also used to paint nails of the mummies using henna before burying them.

The art of Henna—called Mehndi in Hindi and Urdu—has been practiced in Pakistan, India, Africa, and the Middle East for over 5000 years. It was originally used for its natural cooling properties for the people living in hot desert climates. A paste would be made, in which the palms of hands and soles of feet would be soaked. The designs vary from country to country and culture to culture. Henna designs from African countries like Morocco and Egypt tend to be more on the geometric side, even going back in history, while Indian designs consist of fine lines creating a floral pattern.

It was also used for medicinal purposes and applied to the skin to treat such ailments as stomach aches, burns, headaches, and open wounds. Henna leaf extracts have antimicrobial activity on the bacteria responsible for the common skin infections. Alcoholic and oily henna extracts have similar eûects to some of the antibiotics commonly used in clinical practice. Thus, henna leaves are presented as a preventive agent for treating certain diseases of the skin, eyes and intestines. More concretely, some studies showed that extracts from henna leaves have antimicrobial and antifungal actions.

It is also used as a Cooling agent – during summer; to relieve effects of the intense heat, e.g. sunstroke and headaches. Initially the use of henna was limited to soaking hands and feet in its paste to retain body temperatures in times of intense heat. Gradually, people started applying paste to the hands, feet and arms with fingers and the designs were made with the aid of tiny twigs or toothpicks.

Owing to its extensive history, henna as an art form has also got some superstitions attached to it. In some places, it is also said to signify the strength of love between the bride and groom. Many traditional henna designs are secret symbols of prosperity, love, loyalty, fertility and good luck. In India, it is believed that deeper the color of henna on a bride's hand, the better would be her relationship with the mother-in-law. "Traditionally, wedding henna always has the name of the significant other written in it. It is supposed to be meticulously hidden for it to be searched for on the wedding night. In the old days, arranged marriages were very common so this tradition was used as an ice breaker for the couple to get to know each other a little better."

Many people apply it on the palms, the back of hands, and feet, but Henna can also be applied on different body parts, with the intent of bringing good fortune and joy. Used during spiritual, social and religious occasions, e.g. weddings, Festivals, baby blessings, birthdays, graduations, and circumcisions, it remains an authentic ritual passed from rich and varied cultures. People love it so much that they apply it for casual events too.

Some may consider Henna art to be an exotic, aesthetic fading tattoo, but it also conveys a host of messages. There is the belief Henna on the hands benefits the person wearing it with good luck, and that it protects you from the evil eye. Others say it can encourage bountiful harvests, boost rains, help with fertility, make childbirth easier, ward off sickness, and promote amicable relationships.

Henna art is an essential element of the heritage,

*Associate Professor, D.A.K. (P.G.) College, Moradabad (U.P.) INDIA
** Associate Professor, T.M.U., Moradabad (U.P.) INDIA

cultures, and traditions of the places where people have used it throughout history, with various designs, such as dots, swirls, and flowers, and intriguing tribal symbols. Henna art evokes precious memories and cultural heritage in the eyes of both the Henna artist and the person receiving the tattoo. It is a spiritual and religious practice for many, where they can identify with their culture and discover various facets of their identities. Henna designs are often intricate and symbolic, originating from a single point, or bindu that represents "the Supreme Reality." Artists might paint a wide range of flowing designs emanating from that point, including geometric shapes, mandalas, animals, plants and much more. Today henna comes in cone-shaped tubes to make intricate designs. This ancient art of hand, feet and arm decoration now consists of thousands of designs including paisleys, geometrical or floral.

Henna is free from all sorts of chemicals and it is best to dye your hair with it if the colour suits you. It keeps the head cool, kills lice and gives a radiance no chemical dye can. Apart from its dyeing properties, the constant use of henna softens and strengthens hair and adds shine to it. It also acts as a natural remedy for hair loss. With its amazing ability to retain the pH balance of the scalp, henna naturally and effectively cures dryness, dandruff as well as premature graying of hair. Henna powder can be found in a variety of hair care products.While preparing mehndi for the hair dye, a spoon full of coffee and a cup of black tea could be added to kill the reddish color and deepen the maroon shade.Rashes, Wounds, and other Fungal infections are all treated with henna powder. It's also recognized for being a great way to keep cool. Henna powder has several health benefits for skin problems.

Henna powder's therapeutic benefits are expected to boost sales around the world. Henna powder is in high demand both domestically and internationally. The global henna powder market may be classified into four regions: North America, Asia Pacific, Europe, and the Middle East, and Africa. In the next six to seven years, the Asia Pacific region is expected to have the highest demand for henna powder, followed by the Middle East and Africa. The "Bridal Mehndi" trend is currently gaining in intricacy and elaboration in North India, Pakistan, and Bangladesh with new developments in glitter, fine-line work.

To become a henna artist, you will typically need to develop artistic skills of high enough caliber to create henna designs for pay. Taking a few art classes may help you build basic drawing skills, and then you can buy a henna kit and practice making designs on paper, cloth, and your loved ones' skin. There are two reasons to begin a business of your own in the arts, Love or Money. You may begin a business if you love art and want to do it a lot, and want to make money at it.

A Henna artist can start his/her own small business. Few tips are –

1. Use High Quality Henna Products. For you stand out from the rest you have to use high quality henna products.
2. Don't Under Charge. Don't be the artist in your community that charges the lowest price around.
3. Sell Products.
4. Put Yourself Out There.
5. Teach Henna Classes and Workshops.

Many fashion institutes in India offer Mehendi designing as a part of other diploma courses like Beauty Parlour course, Makeup Artists course, Bridal Makeover Course, etc.To support self-employment in the field of Henna now Government of India also started its certificate program under its Skill Development Training and Vocational Education. From such organization one can get a lifetime valid Government Authorized Assessment Agency Certification and Free Job Assistance as per your Interest Area.

Being a great mehndi artist is all about practice and experience. Use the provided instruction manuals and course books on mehndi designs to refine your skills and practice on yourself, your friends, or on any surface to master the strokes, finishes, motifs, and color. You can follow the standard mehndi design process and keep experimenting with your individual styles.

An award-winning artist, Halima Khan combines her artistic inspirations with storytelling in order to infuse beauty in the mehendi designs of each one of her brides. She has honed her skills over the last 12 years and comes highly recommended by clients across the globe. Be it designs that fuse contemporary aesthetics with regal charm, display an intricate web of patterns, incorporate Mughal inspired motifs or even the couple's own logo, her work ranges over a wide variety of styles.

Halima's understanding of the brides' taste and endeavor to match it to their persona ensures the best outcome on their big day. Furthermore, her customized packages ensure that her clients can have her services tailored to suit their tastes and requirements.Besides real brides, her clientele includes celebrities and socialites. She is based in Goa, works across the nation as well as in the Middle East and is open for global projects.

AfshanNaqvi, a hair stylist and beautician from Multan says, "Even though there are high quality hair dyes available in the markets, natural products are irreplaceable.

Painting with mehndi is fun, exciting, and offers endless opportunities to explore your artistic skills and showcase your talent. Keep practicing and evolve your style as you go! With the Indian festive season just round the corner, young girls and women of all ages will be all in for getting their hands designed with henna. This is the right time for you to learn and hone your mehndi skills.

References:-

1. Al-Rubiay, Kathem&Jaber, Nowres& Al-Rubaiy, Lath, Antimicrobial Efficacy of Henna Extracts. Oman medical Journal. 23(4), P.g. 253 – 256, 2008.
2. Babu PD, Subhasree RS, Antimicrobial Activities of

Lawsoniainermis, A Review. Acad J Plant Science, 2 (4), P.g. 231-232, 2009.

3. Kamal, Mehnaz&Jawaid, Talha: Pharmacological activities of Lawsoniainermis L., a review. International Journal of Biomedical Research; 1(2),P.g. 62 – 68, 2011.

4. Charoensup R, Duangyod T, Palanuvej C, Ruangrungsi N., Pharmacognosy Res. Pharmacognostic Specificat -ions and Lawsone Content of *Lawsoniainermis* Leaves, 9(1) ,P.g. 60-64; 2017.

****

Digital Transformation and Technological Advances in Fintech

Dr. Akhil Sitokey*

Abstract - Over the last decade, however, a new source of innovation in financial services has emerged from financial technology startups ('fintechs') and technology companies ("techos"). These new firms have been quicker than banks to take advantage of advances in digital technology, developing banking products that are more user-friendly, cost less to deliver and are optimised for digital channels. This relative success is unsurprising. These new players are less burdened by the demands of regulatory compliance which banks are subject to. They are unencumbered by complex and costly to maintain legacy systems. They can focus on creating single-purpose solutions, designed to offer an improved experience within just one product or service. They are more in tune with the peer-to-peer (P2P) culture engendered by the explosion of social media. And they are smaller organizations, designed for the purpose of innovation. Capital has flowed into the fintech sector: $23.5 bn of venture capital investment in 2013-14. Of this investment, 27% has been in consumer lending, 23% in payments and 16% in business lending. fintechs have two unique selling points: better use of data and frictionless customer experience. But to date these have been limited to relatively simple propositions such as e-wallets and P2P lending.

Keywords- Digitalization, Fintech Adoption Index, Adanced Financing Technologies, E-Commerce, Collaboration, Fintech Services Adoption.

Introduction - We've witnessed the arrival of new currencies, technologies, business models and forms of transactions; all within an environment of global economic upheavals and increasingly comprehensive regulation. The most significant change has been the arrival of new players; non-bank financial institutions (NBFIs) that bring a groundswell of innovation and are turning market models on their head. Digitalization has come in overwhelming waves, driven by the growth of e-commerce – first in the B2C and now the B2B space – and the proliferation of smart devices. With it has come continuous innovation to meet the demand for technologies that drive efficiency, lower transaction costs and boost convenience. Innovative and nimble new players – fintechs and digital ecosystems – have entered the payments game, creating increased competition for already-pressured banks. But without access to a client base, the expertise to navigate the regulations and licensing of the finance industry, client confidence, and robust global infrastructure, these new entrants can only go so far on their own. Collaboration between incumbents and new players will be essential to fully comprehend the effects (both positive and negative) of technological developments on the industry's risk profile. Disruption in payments will continue, with ongoing innovation shaping customer behaviors, business models and the structure of the industry. The time has come for one further change; a shift in mindset from one of competition to collaboration. By exploring strategic partnerships, traditional banking providers and new innovators can together create long-term success and revolutionise the payments market and wider financial sector for the benefit of all. The degree to which the payments industry has changed in just a decade is off the scale.

A common assumption is that FinTech firms struggle to translate innovation and great customer experience into meaningful numbers. In contrast, our findings reflect considerable consumer appetite for new and innovative financial service products that take advantage of new consumer technologies, such as mobile and cloud. Nowhere is that more apparent than in the historically underserved emerging markets, with China and India leading FinTech adoption across our study. In this report, we lay out our findings from the EY FinTech Adoption Index and also present some fascinating stories of FinTech entrepreneurs who have reached real consumer adoption. We encourage other FinTech firms and traditional financial services companies to consider how these examples, as well as other firms including their own, are driving change and innovation within financial services.

The rapid increase of FinTech firms operating in the financial services industry, and the corresponding VC and corporate investment in this sector, has attracted significant attention from both industry observers and the media. We

* Reserch Officer, Directorate Technical Education, Bhopal (M.P.) INDIA

launched the first EY FinTech Adoption Index in 2015 to cut through the hype and understand whether digitally active consumers were actually using FinTech services on a regular basis. The answer at the time was yes: 16% of our surveyed consumers had used two or more FinTech services in the prior six months, with adoption potentially doubling in the near future. The 2017 study reveals that this has happened in just 18 months. Findings from the 2017 study show that FinTech firms have reached a tipping point, and are poised for mainstream adoption across our 20 markets. Building upon the strength of their core characteristics of focusing on the customer proposition and leveraging technology in novel ways, FinTech firms are gaining traction in the market. In the process, they are blurring boundaries between financial products and lifestyle propositions, as well as defining new standards within financial services. FinTech firms share two core characteristics: a laser-like focus on the customer proposition and a willingness to apply technology in novel ways. These are powerful differentiators in a marketplace where many product-focused incumbent financial services companies struggle to deliver the seamless and personalized user experiences that consumers increasingly expect.

Methodology - We identify 17 distinct services offered by FinTech organizations and non-traditional providers, and refer to these as FinTech services. These services are considered within the five broad categories of money transfer and payments, financial planning, savings and investments, borrowing, and insurance. We define a regular FinTech user as an individual who has used two or more FinTech services in the last six months. Our 2017 research is based on more than 22,000 online interviews in 20 markets. Our surveyed population is drawn from a demographically representative sample of each market to the extent available, and all references to consumers relate to individuals who are active online, which we refer to as “digitally active” in this report. We have applied unweighted averaging of results, using a “one market, one vote” approach to report findings, to offer a global, cross-market perspective on themes and trends. The 20 markets are Australia, Belgium and Luxembourg (considered as one market for the purpose of our analysis), Brazil, Canada, China, France, Germany, Hong Kong, India, Ireland, Japan, Mexico, the Netherlands, Singapore, South Africa, South Korea, Spain, Switzerland, the UK, and the US.

Four key consumer themes emerged from the 2017 EY FinTech Adoption Index

1. FinTech has achieved initial mass adoption in most markets - The average percentage of digitally active consumers using FinTech services reached 33% across the 20 markets. Benchmarked to academic theory on innovation adoption, it suggests that FinTech services have reached a milestone in being adopted by the “early majority” of the population. There is evidence of increasing awareness: for the six markets where a comparison is available, 84% of customers are aware of FinTech services in 2017 compared with 62% in 2015. This is driven in part by the emerging markets in our study: FinTech adoption by digitally active consumers in Brazil, China, India, Mexico and South Africa average 46%, considerably higher than the global average. From an individual market perspective, China and India have the highest adoption rates at 69% and 52% respectively. This is because FinTech firms excel at tapping into the tech-literate, but financially underserved population, of which there are particularly high ratios in emerging countries.

2. New services and new players are driving higher adoption - Among our five categories, money transfer and payments are driving FinTech adoption. 50% of our digitally active consumers have used this type of service in the last six months, which suggests this category has reached “late majority” adoption. Insurance services have also seen significant increases, overtaking both savings and investments, and borrowing, with 24% adoption. One potential influence may be attributed to the greater activity from regulators and policymakers in some markets that support FinTech, such as in money transfer and payments, as well as insurance services. These groups are addressing new business models and technologies that were previously undefined by the current regulatory framework, setting up initiatives, such as steering groups and sandboxes, updating licensing regulations, and introducing infrastructure changes that facilitate open APIs.

3. FinTech users prefer using digital channels and technologies to manage their lives - Unsurprisingly, use of FinTech products and services is higher among younger consumers. Those with the highest use, 25- to 34-year-old consumers, are not only tech-savvy “digital natives,” but are also at the age where they have a greater need for financial services. In some markets, they have not developed many strong relationships with incumbent providers, and are willing to consider non-traditional options as alternatives. FinTech users (across all ages) share similar views toward personal risk, and are equally likely to read the terms and conditions of new products or worry about personal data security. However, 64% of FinTech users prefer managing their lives through digital channels, compared to 38% of non-FinTech users; FinTech users are also more likely to be users of nonFinTech platforms, such as on-demand services and the sharing economy.

4. FinTech adoption will continue to gain momentum- FinTech adoption is expected to increase in all 20 markets, with a segment of current non-FinTech users shifting to FinTech services in growing numbers. On the basis of anticipated future use, FinTech adoption could increase to an average of 52% globally, with the highest intended use among consumers in South Africa, Mexico and Singapore. Borrowing and financial planning are anticipated to more than double in usage. Money transfer and payments services remain the most widely used at 50%, with anticipated future use by 65% of consumers. FinTech users

are also becoming more diverse in their use of services, with 13% of those surveyed becoming super-users who regularly use five or more FinTech services.

5. FinTech users prefer using digital channels and technologies to manage their lives - What distinguishes a FinTech user from a non-FinTech user? Demographic and behavioral patterns suggest that financial services consumer relationships are changing.

Observation: Use of FinTech products is highest among young adults at an early stage of their career.The demographic mostly likely to use FinTech are 25 to 34 year-old consumers, followed by 35 to 44-year-olds. FinTech use declines with consumers aged 45 years and older. This pattern is not unexpected; not only are 25 to 44 year-old consumers comfortable with internet and mobile technologies, but they also require a wide range of financial services as they achieve life milestones, such as completing their education, starting full-time employment, becoming homeowners and having children.

Consumers in this age range have not developed as many strong relationships with incumbent providers. They are the least likely of all age groups to cite preference for existing providers as a barrier to using FinTech. Further, many consumers in western markets experienced a loss of trust in existing financial services following the most recent financial crisis, which encouraged greater interest in alternative providers, particularly the purpose-led businesses that many FinTech firms have adopted as a model.

Consumers aged 45 years and above had already established long-standing relationships with incumbent providers before the arrival of FinTech. Preference for traditional financial services is the highest barrier to FinTech use, while lack of need and not perceiving the advantage are also higher than in other age brackets. It is not that these users consider services provided by FinTech firms inferior, but rather that they prefer incumbent providers and lack a sufficiently compelling reason to switch.

The drivers of success - Low setup costs and plentiful funding make FinTech a fertile area for start-ups. That is the good news. But, in an increasingly crowded marketplace, start-ups must develop services and deploy them effectively in the market before their funding runs out. When it comes to gaining customer traction, we do not believe that there is any consistent recipe for success. Rather, we see a range of drivers that support rapid growth. As many new FinTech firms are building completely new businesses from the ground up, they have the opportunity to put customer adoption and traction at the heart of their strategy, linked to their singular focus on the customer proposition. In our experience, this means that the DNA of FinTech firms is different from that of incumbent financial services providers, which appeals to those apt to be FinTech users. As FinTech firms mature, their focus on the consumer becomes a key area of competitive strength, alongside their use of technology to reduce costs and accelerate customer traction. Gaining customer traction is fundamental to growth for any business, but is particularly relevant for FinTech start-ups who rely on it as a key metric for raising investment funds. FinTech firms measure traction initially by registered or active users, moving to customer acquisition cost and unit economics as they develop. It should also be supported by balanced growth across other areas of the business, including suitably robust support functions that develop alongside customer growth, and can manage and mitigate risks

Business models that drive mass adoption

1. Revolutionize the economics of a market - Offer a previously paid-for service free of charge Some successful businesses take an established product or service, rethink the economics of the underlying business with the help of digital technologies and offer it to customers free of charge. They are able to develop an alternative business model and revenue streams; for example, new credit-scoring services are often supported by data monetization or through earning commissions from referrals.

Offer a significantly cheaper service In markets where products are largely similar and customers are highly price sensitive, FinTech firms can achieve significant new customer acquisition if they are able to reduce their costs and leverage technology to maintain this competitive advantage sustainably as they grow. As we have seen in the extremely competitive P2P lending market, digital technologies and automation have been key factors in their success.

2. Create something new and compelling - Provide a new type of service FinTech firms can offer consumers new services or provide existing services to a new channel to address previously unmet customer needs. This sometimes moves the customer experience so far forward that a service can fulfill customers' other objectives. For example, a personal current account can become a tool to analyze and manage spending or offer customers the option to invest via equity crowdfunding. However, this strategy may also require significant investment in customer education initiatives.

3. Distribute across an existing customer base - Solve a problem for another business A FinTech firm could help a more established business to fulfill currently unmet customer needs, such as enabling the established business to offer their customers a better service. Through this route, the established business becomes the FinTech firm's distributor and the customers of the established business become customers of the FinTech firm. Mobile payment wallets are one example of how an established business may benefit from the FinTech firm's smoother customer journey.

Collaborate with businesses that have an existing customer base FinTech firms and other businesses can play to each other's strengths by offering a new product or expanding an existing product to a new segment. For example, FinTech firms may apply a different set of metrics

and risk appetites to writing new loans, enabling a retail bank and a FinTech firm to collaborate on providing mortgages to a previously underserved population. This collaboration can involve a partnership or joint venture, or the FinTech firm may obtain investment from, or be acquired by, the existing business. Regardless, alignment of incentives and effective hand-offs between parties are essential

Tools and technologies for accelerating market advantage

1. Build virality or "word of mouth" referrals - Make customers advocates for the business By offering novel and differentiated experiences, FinTech firms can generate momentum through market visibility. Relationships and trust play a critical role in influencing adoption; endorsements from opinion leaders and community champions are vital. Examples of differentiation that has previously worked include establishing referral programs or offering a free related tool that directs attention to the paid product. Add-ons could include targeted introductory offers or upfront free periods. Particularly effective FinTech firms are those able to reach both online and offline social networks.

2. Establish a strong brand identity - Ensure customers subscribe to and identify with the brand and mission A FinTech firm may aim to build a distinct identity and establish a group with clear boundaries, designations and behaviors, but not necessarily location. This enables them to capture the entirety of a targeted customer segment rather than aim for mass adoption. This is a popular strategy for FinTech firms focusing on the millennial market, who are attracted to businesses with "purpose" beyond profit, and is facilitated by mobile technology.

3. Focused marketing activity- Target marketing at customer segments and through tailored selection of channels The ability to understand the marketplace and identify key customer segments is key. Core to this strategy is market research, coupled with marketing approaches, such as traditional and digital advertising placements, search engine optimization, blogs and social media. FinTechs that offer highly personalized user experiences particularly benefit from being able to leverage data and analytics to target their intended audience accurately.

A fundamental shift in technology has lowered the barriers for new businesses to enter and compete in the financial services industry, enabling the arrival of many smaller players looking to partner or compete with existing businesses. Successful FinTech firms have built traction into their business models, which narrows the challenge of balancing product development and revenue generation; the use of technology helps them achieve lower run rates and greater efficiencies. Such businesses are better able to persevere through periods without revenue as they develop a product that fits the market, and unlock the right adoption channels, strategies and tools to obtain user growth and, ultimately, generate revenue.

Applications for the Internet of Things The "Internet of Things"

(IoT) describes the widespread embedding of sensory and wireless technology within objects, giving them the ability to transmit data about themselves: their identity, condition and environment.

Product design: Asset financing, for example, could be based on parameters such as kilometres driven or load carried rather than simply the period of time for which the asset is leased, as with traditional models.

Risk management and pricing: Collateral management is a key element of risk management. Better data on the quality and condition of collateral provides more accurate assessment and pricing of risk.

Understanding customer needs: Tracking a business's activity could indicate when it may have additional growth financing needs, for example, by revealing when leased machinery is working at full capacity.

Streamlining contractual processes: IoT devices will be able to capture data and feed it into digital platforms that govern and verify "smart contracts" (computer protocols that verify or enforce contracts). The collation of real-time data on these platforms can facilitate efficient covenant monitoring, automatic disbursement of assets and automatic release of liens or goods.

Being smarter with smart data Digital technology has greatly increased the volume of data available. However, the banks have found it difficult to use this new data to create value for their customers and themselves. In contrast, online retailers and social media firms have found ways to create value from data.

Some of the ways in which online retailers create value from data: Customer transaction behaviour is used to inform product suggestions, increasing sales and customer loyalty. Viewing and listening behaviour is monitored to give appropriate advice about new products and services, or to serve third-party advertisements. Real-time or contextual satisfaction surveying is used to flag when a customer is dissatisfied and to inform appropriate actions to retain them. Location data is used for security and fraud checks or to offer suggestions, advertisements and offers that depend on the customer's location. Despite substantial investment in data management, financial institutions lag behind firms in other industries. It is not unusual for large banksto spend upwards of $500 million on programmes to address the challenges related to data, yet it is widely acknowledged that these investments have not been translated to increased profits. Banks are not nearly creative or enterprising enough in their attempts to use data to offer better products or cut operating costs. The sheer variety of problems which data can address calls for specialised capabilitieswhich banks often lack. Banks could take advantage of the specialised expertise at fintech companies by engaging these firms to perform the required work or by acquiring them. Partnerships between banks and fintechswould create a powerful combination of information, supplied by the bank, and innovative analytical tools,

supplied by the fintech.

Conclusion- This paper analyzes how information technology is transforming individual banks and the entire banking industry. While IT developments may lure banks into transaction banking (due to IT-driven cost efficiencies), these should not give up on relationship banking. Instead, banks need to adjust themselves to consumers' new preferences for IT-driven products and use IT developments to reconfigure or even reinvent relationship banking. The entry of fintech startups and IT companies in traditional banking businesses is leading to drastic changes in banking. Government intervention and regulation will give banks additional time to adjust. A major consequence of the Internet era is the emergence of advanced digital platforms that combine technology and process in new ways that often disrupt existing industry structures. These platforms allow easy participation that often strengthens and extends network effects, while the vast amounts of data captured through such participation can increase the value of the platform to its participants, creating a virtuous cycle. While initially slow to penetrate the financial services sector, such platforms are now beginning to emerge.

This research paper provides a taxonomy of platforms in finance and identifies the feasible strategies that are available to incumbents in the industry, innovators, and the major Internet giants.

References:-

1. Acharya, V. V., L. H. Pedersen, T. Philippon, and M. Richardson (2016). Measuring systemic risk. The Review of Financial Studies.
2. Admati, A. R., P. M. DeMarzo, M. Hellwig, and P. Pfleiderer (2011). Fallacies, irrelevant facts, and myths in the discussion of capital regulation: Why bank equity is not expensive. Working Paper Stanford University.
3. Admati, A. R. and M. Hellwig (2013). The Bankers' New Clothes. Princeton University Press.
4. Baker, M. and J. Wurgler (2015). Do strict capital requirements raise the cost of capital? bank regulation, capital structure, and the low risk anomaly. American Economic Review Papers and Proceedings.
5. Bazot, G. (2013). Financial consumption and the cost of finance: Measuring financial efficiency in europe (1950- 2007). Working Paper Paris School of Economics.
6. Beck, T., A. Demirguc-Kunt, and R. Levine (2011). Financial Structure and Economic Growth: A Cross-Country Comparison of Banks Markets, and Development, Chapter The Financial Structure Database, pp. 17–80. Cambridge: MIT Press.
7. Berger, A., R. Demsetz, and P. E. Strahan (1999). The consolidation of the financial services industry: Causes, consequences, and implications for the future. Journal of Banking and Finance 23, 135–194. Bergstresser, D., J. Chalmers, and P. Tufano (2009). Assessing the costs and benefits of brokers in the mutual fund industry. The Review of Financial Studies 22(10), 4129–4156.
8. Bickenbach, F., E. Bode, D. Dohse, A. Hanley, and R. Schweickert (2009, October). Adjustment after the crisis: Will the financial sector shrink? Kiel Policy Brief. Bodenhorn, H. (2000). A History of Banking in Antebellum America: Financial Markets and Economic Development in an Era of Nation Building. New York: Cambridge University Press.
9. Bolton, P., T. Santos, and J. Scheinkman (2011). Cream skimming in financial markets. Working Paper, Columbia University.
10. Brei, M. and L. Gambacorta (2016). Are bank capital ratios pro-cyclical? new evidence and perspectives. Economic Policy 31 (86), 357–403.
11. Cecchetti, S. (2014, November). The jury is in. Cecchetti, S. and E. Kharroubi (2012). Reassessing the impact of finance on growth. BIS WP 381.
12. Cecchetti, S. and K. Schoenholtz (2014, December). Higher capital requirements didn't slow the economy. http://www.moneyandbanking.com.
13. Cecchetti, S. and K. Schoenholtz (2016, May). Leverage and risk. http://www.moneyandbanking.com.
14. Cetorelli, N., J. McAndrews, and J. Traina (2014, December). Evolution in bank complexity. FRBNY Economic Policy Review.
15. Chalmers, J. and J. Reuter (2012). Is conflicted investment advice better than no advice?
16. Chamley, C., L. J. Kotlikoff, and H. Polemarchakis (2012, May). Limited-purpose banking–moving from "trust me" to "show me" banking. American Economic Review 102(3), 113–19.
17. Cochrane, J. H. (2014). Toward a run-free financial system. In M. N. Baily and J. B. Taylor (Eds.), Across the Great Divide: New Perspectives on the Financial Crisis. Hoover Press.
18. Darolles, S. (2016, April). The rise of fintechs and their regulation. Financial Stability Review (20).
19. Dell'Ariccia, G., D. Igan, L. Laeven, and H. Tong (2016). Credit booms and macrofinancial stability. Economic Policy 31 (86), 299–355.
20. DeYoung, R., D. Evanoff, and P. Molyneux (2009). Mergers and acquisitions of financial institutions: A review of the post-2000 literature. Journal of Financial Services Research 36, 87–110.
21. Dhar, V. (2016). When to trust robots with decisions, and when not to. Harvard Business Review. Diamond, D. W. and P. H. Dybvig (1983). Bank runs, deposit insurance, and liquidity. Journal of Political Economy 91, 401–419.
22. Diamond, D. W. and R. G. Rajan (2001). Liquidity risk, liquidity creation and financial fragility: A theory of banking. Journal of Political Economy 109, 287–327. 22
23. Drechsler, I., P. Schnabl, and A. Savov (2014). The deposits channel of monetary policy the deposits channel of monetary policy. NYU.

24. EBA (2015, November). 2015 eu-wide transparency exercise. Technical report, European Banking Authority.
25. Egan, M., G. Matvos, and A. Seru (2016). The market for financial adviser misconduct. NBER WP.
26. Favara, G. (2009). An empirical reassessment of the relationship between finance and growth.
27. Foà, G., L. Gambacorta, L. Guiso, and P. E. Mistrulli (2015). The supply side of household finance. BIS Working Papers 531.
28. Gennaioli, N., A. Shleifer, and R. W. Vishny (2014). Money doctors. Journal of Finance.
29. Glode, V., R. C. Green, and R. Lowery (2012). Financial expertise as an arms race. Journal of Finance.
30. Greenwood, R. and D. Scharfstein (2013). The growth of modern finance. Journal of Economic Perspectives 27(2), 3–28.
31. Hirshleifer, J. (1971). The private and social value of information and the reward to inventive activity. The American Economic Review 61(4), pp. 561–574.
32. Ingves, S. (2015, October). Update on the work of the basel committee. Speech at the IIF Annual Meeting.
33. Kashyap, A., R. Rajan, and J. Stein (2002). Banks as liquidity providers: An explanation for the coexistence of lending and deposit-taking. Journal of Finance 57, 33–73.
34. Kelly, B., H. Lustig, and S. V. Nieuwerburgh (2016). Too-systemic-to-fail: What option markets imply about sector-wide government guarantees. American Economic Review.
35. Kovner, A., J. Vickery, and L. Zhou (2014, December). Do big banks have lower operating costs? FRBNY Economic Policy Review.
36. Kumar, S. (2016). Relaunching innovation: Lessons from silion valley. Banking Perspective 4(1), 19–23.
37. Levine, R. (2005). Finance and growth: Theory and evidence. In P. Aghion and S. N. Durlauf (Eds.), Handbook of Economic Growth, Volume 1A, pp. 865–934. Amsterdam: Elsevier.
38. Levine, R. (2015). In defense of wall street: The social productivity of the financial system. WP Berkeley.
39. Lucas, R. E. J. (2000, March). Inflation and welfare. Econometrica 68(2), 247–274.
40. Mayer, C. and K. Pence (2008). Subprime mortgages: What, where, and to whom? Staff Paper Federal Reserve Board.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

वैदिक साहित्य में कला का उद्भव और विकास

डॉ. सुनिता मीना*

प्रस्तावना – वेद भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण आधार स्तम्भ कहे जा सकते हैं। बिना वेदाध्ययन किये कोई भी व्यक्ति भारतीय आत्मा को नहीं समझ सकता। भारतीय धर्म, भाषा, संस्कृति, साहित्य तथा कला के अध्ययन के लिये वेदों का ज्ञान अति-आवश्यक है। वैदिक ऋषियों के सद्विचारों को अपने जीवन में आत्मसात करने के लिये यह अपरिहार्य है कि हम वेद तथा वैदिक ज्ञान का अधिक से अधिक अनुशीलन करें। वैदिक ऋषि न केवल महान विचारक, दार्शनिक और विद्धान थे उन्होने अपने जीवन में आध्यत्मवाद के साथ साथ व्यवहारिकता को भी जीवन में प्रश्रय देते हुए मानव जीवन को सुखमय बनाने के लिये विभिन्न कलाओं का आविष्कार किया। ऋग्वेद में वास्तुनिर्माण संगीत, नृत्य इत्यादि का पर्याप्त विकास हो चुका था।

वैदिक-साहित्य के अनुशीलन से पता चलता है कि कला का उद्भव सृष्टि के साथ ही हुआ था क्योंकि अनादिकाल से सृष्टि का प्रत्येक प्राणी सुख और सौन्दर्य का प्रेमी रहा है। इस प्रकार सौन्दर्यानुभूति के साथ ही 'कला' का उद्भव होता है फिर वह मनुष्य की चिरजीवनसंगिनी बन जाती है। वस्तुत: प्राणीमात्र के ह्रदय की अव्यक्त भावनाएं जिस व्यक्त रूप में प्रकट हो वही कला है।

कला शब्द का अर्थ – कला शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम ऋग्वेद में प्राप्त होता है। मानव जीवन में कला का महत्वपूर्ण स्थान है। जहाँ कला मानव जीवन में एक ओर उपयोगी है वही दूसरी ओर यह जीवन निर्माण करती है। कला स्फूर्ति प्रदान करती है, प्रोत्साहन देती है, शिक्षित करती है। वेदों में कला की तीन विशेषताए बताई गई है।

(क) आध्यात्मिकता
(ख) धर्म प्रधानता
(ग) सात्विकता

कलाओं के प्रकार– वात्स्यायन के कामसूत्र और शुक्रकृत नीतिसार में 64-64 कलाओं का नामोल्लेख मिलता है। इसी तरह ललितविस्तर में 76, प्रबंधकोश में 72 कलाओं का उल्लेख है परन्तु कला की परिगणना के विषय में विद्धान एकमत नहीं है।

कलाओं का वर्गीकरण – वेदों में कला को दो भागों में विभक्त किया गया है।

(क)उपयोगी कला– जिनसे व्यक्ति अथवा समाज की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकें वहीं उपयोगी कला है।

(ख)ललित कला– मनोरंजन के काम में आने वाली कला, ललित कला के अंतर्गत आती है इसमें नाना प्रकार की क्रीड़ाएं, मनोविनोद की बाते और हास्य-व्यंग आदि आते हैं।

वदों में वर्णन के आधार पर कला के पाँच भेद है-

(क) वास्तुकला
(ख) चित्रकला
(ग) संगीतकला
(घ) नाट्यकला
(ड) युद्धकला

(क)वास्तुकला – भवन आदि के निर्माण की दक्षता को वास्तुकला कहते है। वास्तु कला का उद्भव और विकास वैदिककाल में ही हो चुका था। ऋग्वेद में कितने ही स्थलों पर आयसपुर लौह निर्मित, शतगणदुर्ग, शतद्धारापुरी, सहस्रद्धारगृह, सहस्रस्तम्भ वाले प्रसाद, हर्म्य और अट्टालिकाये, तीन-तीन तल्ले के मकान तथा ईंट पत्थर और लकड़ी का बना शीतताप सुरक्षित गृह आदि का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद में उल्लेख आता है कि इन्द्र ने असुरों को पराजित कर उनके पुरों एवं दुर्गो को नष्ट कर दिया था। एक मन्त्र[1] में स्तोता ने इन्द्र से प्रार्थना की है कि वह लकड़ी, ईंट और पत्थर के बने हुऐ भवन प्रदान करें। काष्ठ निर्मित भवन भी होते थे जो कभी-कभी शत्रुओं द्धारा जला दिए जाते थे।[2] इन भवनों में बडे-बड़े स्तम्भ होते थे जिन पर उनकी छत टिकी रहती थी। वैदिक काल के वास्तुकारों में त्व्ष्टा तथा ऋभु का नाम प्रमुखता से आता है। वास्तु विद्या से संबन्धित अर्थववेद में कई सुक्त मिलते हैं उत्तारवैदिक काल में तो वास्तुकला और भी विकास कर चुकी थी। गृह सुत्रों में वास्तुकर्म, वास्तु मंगलम, वास्तुयाग, वास्तु परीक्षा भूमि चयन, काष्ठ-आहरण और पद विन्यास आदि विषयों का सुन्दर विवेचन मिलता है।

वैदिक युग में वास्तुकला के लौकिक और धार्मिक दोनों भेद अस्तित्व में आ चुके थे। गृह निर्माण पुरप्रकल्पना तथा दुर्ग-निर्माण लौकिक स्थापत्य के और आवसथ, यूप, वेदी चित्ति एवं श्मशान आदि धार्मिक स्थापत्य के विषय माने जाते थे।

गृह निर्माण– घर बनाने में आर्य पूर्णतया दक्ष थे। अथर्वेद का शाला सुक्त इस संबंध में विशेष महत्व रखता है। घरों में प्रत्येक कार्य के लिये अलग-अलग कक्ष बनाए जाते थे जैसे 'पत्नीनां सदनम अन्नागार, भण्डारगृह, अग्निशाला' इत्यादि। जिस प्रकार कुलवधू अपने पति को संतुष्ट करने के लिए सुन्दर वस्त्राभूषणों से स्वंय को सजाती है उसी प्रकार गृहद्धार की शोभा को बढ़ाने के लिये घरों को सजाया जाता है।[3]

पुर– पुर का शाब्दिक अर्थ दुर्ग होता है। इसमें राज परिवार रहता था।[4] वह इतना सुद्दढ़ होता था कि शत्रु उस पर शीघ्र आक्रमण नहीं कर सकता था। ऋग्वेद में दस्युओं के पुरों को शारदी की संज्ञा दी गयी है। ऋग्वेद में विप्र, चमुरि, धुनि, शम्बर आदि दासों के पुरों का उल्लेख मिलता है। पुर नष्ट करने के कारण इन्द्र का एक नाम पुरंदर भी पड़ गया था।

* सह-आचार्य (इतिहास) शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

आवसथ–वैदिककाल में अतिथियों, ब्राह्मणों, पुरोहितों आदि के सत्कार के लिये एक अलग भवन बनाया जाता था जिसे 'आवसथ' कहा जाता था।

यूप–शतपथ ब्राह्मण के अनुसार यज्ञ के लिए बलि पशु को बांधने के लिये खादिर की लकड़ी का स्तम्भ बनाया जाता था जिसके आठ पहलू होते थे। वेदी के पूर्व दिशा में इसकी स्थापना की जाती थी।

वेदी–यज्ञ करने तथा देवताओं की उपासना का सम्पूर्ण कार्य वेदी पर ही होता था। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार वेदी तीन बालिस्त की बनायी जाती थी।

चित्ति–इसमें आग जलायी जाती थी चित्ति शब्द का वर्णन तैत्तिरीय संहिता में भी प्राप्त होता है।[5] यह ईटों से बनाई जाती थी।

श्मशान–वैदिक काल में श्मशान का निर्माण भी अत्यंत कलापूर्ण कार्य था। यास्क के अनुसार श्मशान का अर्थ है 'शवशयन'। वैदिक आर्य गोलकार श्मशान बनाते थे। अस्थियों को समाधिस्थ करने के लिये खोदे जाने वाले गड्ढे की गहराई उसके ऊपर बनाये जाने वाले टीलें की ऊंचाई के लगभग होती थी। अस्थियों के चारों और तीन–तीन तथा ऊपर एक ईट बीच में रख कर मिट्टी का टीला बनाया जाता था।

वैदिक युग में रथकार तथा कुलाल, कर्मर, मणिकार हिरण्यकार आदि बनाने के लिये भी अलग–अलग कलाकार अस्तित्व में आ चुके थे।

(ख) चित्रकला–जब कलाकार अपने अन्तर्मन और बाह्य जगत से विविध भावों का चयन कर उन्हें रेखाओं द्वारा मूर्त रूप प्रदान करता है उसे चित्र कहते है, चित्रसूत्र के अनुसार सुलक्ष–संयुक्त चित्र सदा प्रशंसनीय जबकि विकृतिचित्र धन–धान्य का विनाशक होता है। अपराजितपृच्छाकार के अनुसार जिस प्रकार कुए में जल और जल में कुंआ विद्यमान है उसी प्रकार यह विश्व चित्रमय है। चित्रकला का उद्भव वैदिककाल में ही हो चुका था आर्य अपने घरों की बाहरी तथा भीतरी दीवारों पर विविध प्रकार के आकर्षक चित्र बना कर लगाते थे।[6] वैदिक साहित्य में चित्रांकन के लिए अनेक प्रकार की सामग्री जैसे मिट्टी, पाषाणखण्ड काष्ठ के फलक वृक्षों के पत्तो तथा समतल छाल, ताडपत्र व भोजपत्र इत्यादि, हाथीदांत, धातुपटल, कपड़ा, चर्म का उपयोग चित्र बनाने के लिये लिया जाता था। रंग भरने की कूची गिलहरी की पूंछ के बालों से बनायी जाती थी। रंग बनाने के लिये रंगीन मिट्टी तथा पत्थरों का चूर्ण काम में लिया जाता था। कालांतर में, रामरज, कोयला, चूना, खड़िया का भी प्रयोग किया जाने लगा।

वैदिक काल में नौ प्रकार के चित्र प्रचलित थे। जिसमें भित्तिा चित्र, फलक चित्र, भूमि चित्र, पट चित्र पत्र चित्र, ग्रन्थ चित्र, अंग चित्र प्रमुख हैं[7]।

(ग) संगीत कला– संगीत रत्नाकर के अनुसार, गायन वादन और नृत्य तीनों के समुच्च को संगीत कहा जाता है। संगीत का आधार नाद है जिसे ब्रह्म का स्वरूप कहा गया है।[8] सृष्टि के समस्त पदार्थो तथा सभी प्राणियों में नाद नैसर्गिक रूप से विद्यमान रहता है। मेघों की गर्जन, बिजली की कड़कड़ाहट नदी–झरनों का कलकल निनाद, वायु की सनसनताल पत्तों की खड़खड़ाहट, सिंहों और हाथियों की दहाड़, पक्षियों की चहंचंहाहट, मानुष्य की हंसी एवं रूदन सभी में नाद का स्वरूप विद्यमान है किंतु इन सभी से बढ़कर आनंद संगीत से प्राप्त होता है। मानव के जन्म से लेकर यज्ञोपवीत विवाह मंगलिक अवसर यहां तक कि अन्तयेष्टि के समय भी संगीत का उपयोग किया जाता है।

सामवेद के मंत्र यज्ञ के समय ऋषियों द्वारा गाये जाते थे। सामवेद का उपवेद गन्धर्ववेद है। कुछ विद्वानों के अनुसार संगीतकला का विकास गन्धर्वो द्वारा हुआ था।

ऋग्वेद में संगीत के विभिन्न वाद्ययंत्रों का उल्लेख मिलता है। दुंदुभि का उपयोग युद्ध एवं शाति के समय होता था यह नगाड़े के समान होता था इसी प्रकार 'क्षोणी' वीणा के समान एक वाद्ययंत्र, अघाति मृदंग के समान वाद्ययंत्र का उल्लेख मिलता है।

(घ) नाट्यकला–भरतमुनि ने अपने नाटयशास्त्र में नाट्य को 'भाव का अनुकीर्तन' कहा है। वैदिक युग में नृत्य कला का विकास हो चुका था। पुरूष व स्त्री दोनों नृत्य करते थे। नाचनें वालों को नृत नृतकी को यनृतु कहा जाता था। वैदिक साहित्य में नाट्य को 'नाटयवेद' के नाम की संज्ञा दी गई है। इस नाट्यवेद में धर्म, कार्य, हास्य, युद्ध, शांति आदि विविध विषयों का समावेश हुआ है। वेदों में उल्लेख आता है कि विविध अवस्थाओं और प्रवृतियों के व्यक्ति नाट्य द्वारा अपनी–अपनी भावनाओं को चरितार्थ कर सकते हैं। भरतमुनि के अनुसार 'नाट्य से धर्म, अर्थ, यश, आयु, हित एवं वृद्धि का संवर्द्धन होता है। ऐसा कोई ज्ञान, शिल्प, विद्या, कथा योग एवं कर्म नहीं जो नाट्य द्वारा प्रस्तुत न किया जा सके।'

(ड) युद्धकला–शत्रु के विरूद्ध संघर्ष करने की दक्षता को युद्ध कला कहते हैं। वैदिक युग दो विपरीत संस्कृतियों के संघर्ष का युग था। शत्रुओं का दमन करने के लिये इस कला की विधि पूर्वक शिक्षा भी दी जाती थी। इस कला में प्रवीण होने के लिये विविध प्रकार अस्त्र–शस्त्रों का ज्ञान उनके प्रहार की विधि सीखनी पड़ती थी। साथ ही हाथी–घोड़ा इत्यादि की सवारी तथा वाहनों के संचालन का ज्ञान भी आवश्यक था। वैदिककला में धनुष–बाण, चक्र, त्रिशुल, परशु खडग और बरधा प्रमुख हथियार थे। युद्ध कला का वेद धनुर्वद है जिसे यजुर्वेद का उपवेद माना गया है।

उपर्युक्त कलाओं के अतिरिक्त वैदिक काल में आखेट कला, मल्ल युद्ध, जल विहार कला वस्त्राभूषण कला और प्रसाधन कला इत्यादि अन्य कलाएं भी प्रचलित थीं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ऋग्वेद, 10/99/3– सायण भाष्य, शंक संवत 1855, वैदिक संशोधन मंडल पूना.
2. उपरोक्त 7/5/3
3. अथर्ववेद, 1/3/24– विश्वबंधु, वैदिक शोध संस्था, होशियारपुर–1960
4. ऋग्वेद, 1/3/24
5. तैत्तिरीय संहिता 4/4/11– आनंदाश्रम पूना 1949
6. राय, विमला देवी– वेदकालीन समाज और संस्कृति वाराणसी 2001 पृ.140
7. उपरोक्त पृ. 141
8. ऋग्वेद 10/90/1

****

दलित आरक्षण का भारतीय राजनीति में प्रभाव

डॉ. हनुमान प्रसाद मीना *

प्रस्तावना - आरक्षण भारत में एक राजनीतिक आवश्यकता है क्योंकि मतदान की विशाल जनसंख्या का प्रभावशाली वर्ग आरक्षण को स्वंय के लिए लाभप्रद के रूप में देखता है। सभी सरकारें आरक्षण को बनाए रखने या बढ़ाने का समर्थन करती है। आरक्षण कानूनी और बाध्यकारी है। आरक्षण आंदोलनों ने ये दिखाया कि भारत में शांति स्थापना के लिए आरक्षण का बढ़ता जाना आवश्य है।

आरक्षण योजनाएं शिक्षा को गुणवत्ता को कमजोर करती हैं, लेकिन फिर भी हाशियें में पड़े और वंचितों को सामाजिक न्याय प्रदान करने के हमारे कर्तव्य और उनके मानवीय अधिकार के लिए उनकी आवश्यकता है। अरक्षण वास्तव में हाशिये पर पड़े लोगों को सफल जीवन जीने में मदद करेगा, इस तरह भारत में, खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी व्यापक स्तर पर जाति-आधारित भेदभाव को खत्म करेगा। आरक्षण-विरोधियों ने प्रतिभा में कमी और आरक्षण के बीच भारी घाल-मेल हो गया है। प्रतिभा में कमी के लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार बड़ी तेजी से अधिक अमीर बनने की लालसा है। अगर हम मान भी लें कि आरक्षण उस कारण का एक अंश हो सकता है, तो लोगों को यह समझना चाहिए कि पलायन एक ऐसी अवधारणा है जो राष्ट्रवाद के बिना अर्थहीन है और जो अपने आपमें मानव जाति से अलगाववाद है। अगर लोग आरक्षण के बारे में शिकायत करते हुए देश छोड़ देते हैं, तो उनमें पर्याप्त राष्ट्रवाद नहीं है और उन पर प्रतिभ पलायन लागू नहीं होता है।

आरक्षण-विरोधियों के बीच प्रतिभावादिता और योग्यता की चिंता है। लेकिन प्रतिभावादिता समानता के बिना अर्थहीन है। पहले सभी लोगों को समान स्तर पर लाया जाना चाहिए, योग्यता की परवाह किए बिना, चाहे एक हिस्से को ऊपर उठाया जाय या अन्य हिस्से को पदावनत किया जाय, उसके बाद, हम योग्यता के बारे में बात कर सकते है। आरक्षण या प्रतिभावादिता की कमी से अगड़ों को कभी भी पीछे जाते नहीं पाया गया। आरक्षण ने न केवल अमीर को और अधिक अमीर बनने और पिछड़ों को और अधिक गरीब होते जाने की प्रक्रिया को धीमा किया है। चीन में, लोग जन्म से ही बराबर होते हैं[1]। जापान में, हर कोई बहुत अधिक योग्य है, तो एक योग्य व्यक्ति अपने काम को तेजी से निपटाता है और श्रमिक काम के लिए आता है जिसके लिए उन्हें अधिक भुगतान किया जाता है। इसलिए अमीरों को कम से कम इस बात के लिए खुश होना चाहिए कि वे जीवन भर सफेदपोश नागरिक हुआ करते है[2]। भरतीय जनजीवन 'आरक्षण' के विषय को लेकर बहुत ही उद्धेलित है। हाल ही में भारत सरकार ने 104वॉ संविधान संशोधन विधेयक पारित किया है। भारत के राष्ट्रपति की सहमति से यह विधेयक स्वीकृति मिलने से देश का कानून बन जाएगा। उच्च शिक्षा के प्रतिष्ठित संस्थान जैसे आईआईएम, आई.आई.टीज, एम्स, केन्द्रीय विश्वविद्यालयों के उच्च शिक्षा पाठ्यक्रमों जैसे आई.टी., बायोटेक्नोलॉजी, एन्ट्रोलॉजी, मेडीसिन, विधि, कम्प्यूटर साइन्स, सुपर स्पेशियलिटी आदि में मंडल आयोग द्वारा घोषित पिछड़े वर्गो की जातियों के विद्यार्थियों को 27 प्रतिशत स्थान आरक्षित हो जाएँगे। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों को तो पहले से ही 25 प्रतिशत आरक्षण दिया हुआ है। इस प्रकार सामान्य वर्ग के विद्यार्थियों को केवल 50 प्रतिशत स्थान ही शेष रहेंगे।

समाज में द्वेष और लड़ाई-झगड़ा तनाव और घृणा का फैलाव हो रहा है। बार-बार यह प्रश्न शांतिप्रिय देशवासी को झकझोर रहा है कि आखिर आरक्षण क्यों? किसके लिए और कब तक हमें इस तात्कालिक स्थिति के दीर्घकालीन परिणामों या दुष्परिणामों का विश्लेषण करना है। भारत में आरक्षण का सिद्धान्त 1932 में पूना पैक्ट के जरिए आया। डॉ.भीमराव अम्बेडकर और महात्मा गाँधी के बीच एक समझौते का परिणाम यह आरक्षण का सिद्धान्त हैं, जिसे भारतीय संविधान की धारा 15 और 16 में मात्र दस वर्ष की अवधि के लिए स्थान दिया गया था[3]। 'मेक्डॉन्लाड.एवार्ड' जिसे साम्प्रदायिक एवार्ड का नाम दिया गया था, के जरिए अंग्रेजों ने सीमित प्रजातांत्रिक अधिकार भारतीयों को देने के लिए एक योजना भारतीय नेताओं को सौंपी थी जिसके तहत भारतीयों के प्रतिनिधियों के निर्वाचन के लिए जाति और धर्म के आधार पर निर्वाचन क्षेत्र संगठित करने का प्रस्ताव उन्होंने दिया था। दलित वर्ग और तथाकथित अछूत कही जाने वाली जातियों को भी हिन्दू धर्म से अलग पृथक निर्वाचन क्षेत्र बनाने की घोषणा अंग्रेजों ने की। महात्मा गाँधी ने इस मेक्डॉनाल एवार्ड का विरोध किया। अंग्रेजों ने यह व्यवस्था वापिस तब ली जब डॉ.अम्बेडकर ने लिखकर दिया कि उनके लिए अलग से निर्वाचन क्षेत्र नहीं बनाए जाएँ। भारतीय संविधान में प्रावधान किया गया है कि राज्य सामाजिक और शैक्षणिक पिछडे हुए भारतीय लोगों को अन्य लोगों के समकक्ष लाने के लिए विशेष प्रयास करने के लिए नियम और कानून बना सकेगा। इसी प्रकार भारतीय संसद, भारतीय संघ की विधानसभाओं/विधानपरिषदों और 73वें, 74वें संविधान संशोधन के माध्यम से स्थानीय विधानसभाओं और पंचायत राज संस्थाओं के लिए निर्वाचन क्षैत्र अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों के लिए आरक्षित किए जाएँगे। ये आरक्षण दस साल की अवधि के लिए किए जाते हैं। हर दस साल बाद इस व्यवस्था पर पुनर्विचार करके दस साल की अवधि के लिए बढ़ोतरी संवैधानिक संशोधन अधिनियम से कर दी जाती है[4]।

लोकसभा, विधानसभाओं में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के प्रतिनिधियों के लिए स्थान सुरक्षित हैं। इनके प्रतिनिधियों के समर्थन से कोई सरकार बनती है या बिगड़ती है। इसलिए इस निर्वाचन क्षेत्रों

* सह-आचार्य (राजनीति विज्ञान) शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

के आरक्षण की बदौलत इन जातियों के प्रतिनिधि, विधानसभाओं और लोकसभा में रहते हैं। वह वक्त की सरकार का राजनैतिक तौर पर समर्थन अथवा विरोध करने के लिए एक प्रभावशाली समूह की भूमिका का निर्वाह करते हैं।

लेकिन इस प्रकार का निर्वाचन क्षेत्रों का आरक्षण पिछड़ी जातियों के लिए नहीं है। फिर भी उनको इतनी राजनीतिक समझ है, एकता है और संगठन शक्ति तथा साधन है कि विधानसभाओं और लोकसभा में तथाकथित पिछड़ी जातियों के जनप्रतिनिधि पर्याप्त मात्रा में और सक्षम तथा प्रभावशाली लोग आ जाते हैं कि वे अपने वर्ग के लोगों के हितों की रक्षा कर लेते हैं[5]। उनका शोषण नहीं होने देते है। शनै:-शनै: वे सवर्ण कहीं जाने वाली जातियों के प्रतिनिधियों की संख्या को घटाते जा रहे हैं और उनके स्थान पर पिछड़े वर्गो के लोग आते जा रहे हैं। सरकारी नौकरियों में आरक्षण अथवा शैक्षणिक संस्थाओं में अनुसूचित जाति, जनजाति को आरक्षण केवल संसद द्धारा अथवा विधानसभाओं (राज्य सम्बन्धित के मामलों में) द्धारा अनुमोदित नियमों और उपनियमों के माध्यम से ही मिल जाता है। उच्च न्यायपालिका, विशिष्ट तकनीकी संस्थानों और भारतीय फौज में आरक्षण की व्यवस्था नहीं है। वहाँ तथाकथित उच्च वर्णो की जातियों अथवा सदियों से इन संस्थाओं में कार्य करने वाली जातियों का एकाधिकार चला आ रहा है।

उसका आधार प्रतिभा, योग्यता, रक्त की शुद्धता और सम्पन्न सक्षमता माना जाता है। हकीकत ये है कि यह एकाधिकार भी सवर्ण जातियों के सदियों से चले आ रहे अघोषित आरक्षण के कारण ही है। 60 वर्ष से एस.सी.-एस.टी. के पक्ष में चले आ रहे आरक्षण के बावजूद इन तीनों क्षेत्रों में इनकी नाममात्र की उपस्थिति भी दिखाई नहीं देती है किन्तु विधानसभाओं और लोकसभा में एससी-एसटी के प्रतिनिधि 25 प्रतिशत होते ही हैं। पिछड़ी जातियों के प्रतिनिधि विधानसभाओं और लोकसभा में आरक्षण नहीं होने के बावजूद 30 प्रतिशत या इससे अधिक है। परिणामत: लोकसभा, विधानसभाओं में तो एस.सी.-एस.टी. और ओबीसी के जनप्रतिनिधिगण 55 प्रतिशत हो जाते हैं, लेकिन तकनीकी संस्थनों, उच्च न्यायपालिकाओं और भारतीय सेना में आरक्षित वर्ग का प्रतिनिधित्व क्रमश: नगण्य अथवा प्रभावही मात्रा में ही है[6]।

इसलिए 104वें संविधान संशोधन से सरकार ने पिछड़ी जातियों का 27 प्रतिशत आरक्षण उच्च शिक्षा और प्रतिष्ठित संस्थानों में करके प्रतिभा और योग्यता की कमी के मायाजाल को तोड़ने का प्रयास किया है। आने वाले 60 सालों में इन तीन विशिष्ट क्षेत्रों में भी अघोषित आरक्षण समाप्त हो जाएगा। वर्ण व्यवस्था पूरी तरीके से बिखर जाएगी। जाति व्यवस्था का बिखराव हो जाएगा। देश तो योग्यता से ही चलेगा। प्रतिभाओं का एकाधिकार खत्म हो जाएगी। खुली प्रतियोगिता के लिए काफी अवसर उपलब्ध होंगे। भारत महाशक्ति बनेगा और अभी जो महाशक्ति बनने की संभावनाएँ व्यक्त की जा रही हैं वह भी इन साठ वर्षो से चले आ रहे आरक्षण के कारण, देश में प्रजातांत्रिक व्यवस्था के कारण बह रही खुली हवा और सामाजिक अधोपतन की बेड़ियों के खुल जाने के कारण ही संभव हो सका है। कट्टर जातिवादी और वर्णव्यथा ने इस देश को गुलाम बनाया है और शोषणवदी सम्राज्यवादी लेगों को सहयोग दिया है। तभी समाज सुधारकों ने इन दोनों बुराईयों को जड़ से मिटाने का काम किया है।

आरक्षण व्यवस्था के कारण तथाकथित अछूत जातियों में शिक्षा का प्रचार प्रसार हुआ है। उनमें स्वाभिमान की भावना जागी है। उनका आत्मविश्वास बढ़ा है। वे राज्यसत्ता के करीब आए हैं। राज्य का स्वरूप लोककल्याणकारी हुआ है। आरक्षण व्यवस्था उनके लिए भीख नहीं है बल्कि उनका अधिकार है। अब ये तथाकथित एकाधिकार वाले सवर्ण जातियों के क्षेत्रों में प्रवेश भी कर रहे हैं और अधिक प्रतिभा और योग्यतासम्पन्न होकर विश्वस्तरीय मापदंडों के अनुकूल भारत को सम्पन्न राष्ट्र बनाएँगे। वन में सोया हुआ शेर नींद से जाग गया है। नेपाल से राजशाही जब खत्म हो सकती है तो भारत की जाति व्यवस्था और वर्ण व्यवस्था भी खत्म होने के कंगार पर है। हमें इस व्यवस्था को गुडबाय करना होगा। तब आरक्षित घोषित और आरक्षित अघोषित का भेद स्वत: खत्म हो जाएगा। योग्यता और प्रतिभा जन्म की मोहताज क्यों हो बनावटी सामाजिक संगठन जन्म के आधार पर कब तक लोगों का शोषण करने के लिए हथियार के रूप में काम में लिया जा सकेगा? अछूत भी अंग्रेजी, संस्कृत, लेटिन और कम्प्यूटर की भाषा जान चुका है। जानकारी के लिए नवीन तकनी से उसका आज के युग से वास्ता बन गया है। अछूत के घर में पैदा होने वाला बालक अपनी तुलना अपने आपसे करने लगा है। आज की पीढ़ी के हर उस नवयुवक से करने लगा है जो सड़ी-गली भारतीय विभाजित सामाजिक संगठन की व्यवस्थाओं को नकारता है।

आरक्षण व्यवस्था की समीक्षा के नाम पर समय लेने के तर्क में कोई जान नहीं है। आरक्षण का आधार आर्थिक बनाये जाये-संविधान में संशोधन किया जाये-क्यों? देश की सारी सम्पत्ति और पूँजी तथा संसाधन मात्र 10 प्रतिशत लोगों के पास हैं, क्या वे अपनी 90 प्रतिशत पूँजी ओर संसाधन को सरकार को सौंपने को तैयार है। नहीं? रोग का कारण तो जन्म आधारित जाति व्यवस्था ही है[7]। विरासत के कानून के कारण उच्च जाति में पैदा हुये बच्चों को देश के 90प्रतिशत ज्ञान, धन, योग्यता और प्रतिभा का खजाना तो स्वत: ही मिल जाता है। उसको अपने पास बरकरार रखने के लिये तो वे देश और विदेश से प्रतिभायें तक किराये पर ले लेते हैं। किस प्रतिभा और योग्यता की बात करते है जो बिकाऊ है या जिसे अभी खुल कर सामने आने का अवसर ही नहीं मिला है। इसलिये समाज ने करवट ली है। पुरानी व्यवस्था को चरमरा कर टूट जाने दो। नई व्यवस्था को आने दो जो जन्म अधारित न होकर कर्म आधारित हो। बीज नहीं वृक्ष बनेगा जिसमें क्षमता है। उसे पत्थर से दबाओं मत। खेत में खाद, म्ट्टिी और पानी समान रूप से मिलने दो। नई तोड़ी हुई जमीन ज्यादा फसल उगाती है। जमीन पुरानी फसल उगाते-उगाते बूढ़ी हो जाती है। उसे पड़त छोड़ा जाता है ताकि उसकी उपजाऊ शक्ति बढ़ सके। आरक्षण इस पड़त जमीन को, नई जमीन को तोड़ कर फसल बोने का सिलसिला है जिसके अच्छे परिणाम मिलेंगे।

समाज में स्वतन्त्रता, समानता, भतृतत्व और मानव अधिकारों के आधुनिक विचारों से जैसे वर्ण व्यवस्था आधारित विचारों से केई तरतम्य ही नहीं हैं। इसलिये आरक्षाण व्यवस्था का विरोध आज वर्ण व्यवस्था के ब्राह्यण, क्षत्रिय अैर वैश्य वर्गो से जुड़ी जातियों के लोग कर रहे हैं। विरोध का आधार तो पुरातन वर्ण व्यवस्था को पोषित करने वाला विचार ही है। लेकिन उसके समर्थन में जो तर्क दिया जा रहा है वो आधुनिक विज्ञान के सिद्धान्तों की आड़ में दिया जाता है।

प्रथम, आरक्षण की व्यवस्था स्वंय में समानता के सिद्धान्त के प्रतिकूल है। लेकिन विस्तृत विश्लेषण के आधार पर संविधान निर्मात्री सभा ने इस तर्क को नकार दिया थाा और उसके बाद ही भरतीय समाज में छुआछूत और अनेक प्रकार की सामाजिक असमानताओं को दूर करने के लिये तथा समानता स्थापित करने के लिये आरक्षण की व्यवस्था की गई थी। दूसरे, अरक्षण व्यवस्था से योग्यता की अनदेखी होती है। प्रशासन और शासन में

अकुशलता आने का भय व्याप्त हो जायेगा। सक्षमता के बिना उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो सकती है। उत्पादन गिर जायेगा। वैश्विक अर्थव्यवस्था की प्रतियोगिता में शेष विश्व से पिछड़ जायेगें। हम यदि ठण्डे दिमाग से सोचें तो इन तर्कों में भी सच्चाई कम और प्रोपगण्डा ज्यादा दिखाई देगा। आविष्कार करने की क्षमता और विकसित करने की क्षमता एक विशिष्टता है आचरण व मानव स्वभाव की जिसके कारण अविष्कार और नवाचार होते हैं। उनको जन्म देने के लिये योग्यता की कम दृढ़संकल्प की ज्यादा जरूरत पड़ती है। वह व्यक्ति आरक्षण की व्यवस्था से चयनित होने वाला भी हो सकता है और वर्ण व्यवस्था के उच्च सोपान पर भी बैठा हुआ भी हो सकता है। सबसे बड़ा आविष्कारक तो ईश्वर या प्रकृति है, जिसने सृष्टि की रचना की है। उस रचना में व्यक्ति प्रकृति की सर्वश्रेष्ठ कृति है। भेदभाव का व्यवहार प्रकृतिजन्य नही है, बल्कि व्यक्तिजन्य है। वर्ण व्यवस्था जन्म के आधार पर भेदभाव की पोषक है। पुनर्जन्म का सिद्धान्त एक व्यक्ति द्वारा अनसुलझे प्रश्नों को शान्त करने के लिये बनाई गई अवधारणा है जिसके आधार पर कमजोर इंसान के साथ ताकतवर को नाइन्साफी करने का तर्कसंगत आधार मिल जाता है।

आरक्षण की व्यवस्था तो पहिले भी थी जब राजतन्त्र था। वह उच्च वर्णो का आरक्षण है। अब शासन व्यवस्था लोकतन्त्र की है तो कमजोर और शूद्र वर्ण के लोगों का आरक्षण तो होगा ही। लेकिन आरक्षण की विधा का सूत्रधार तो योग्यता ही है इस व्यवस्था से समाज को कम से कम नुकसान पहुँचे, ऐसे समाधान की ये उक्ति है। इसका विरोध करना लघुदर्शी और स्वयंघाती होगा।

आरक्षण के विरोध में तीसरा तर्क दिया जाता है कि इससे उस समाज का कुछ भी भला नहीं हुआ है, जिस समाज के लोगों के लिए ये व्यवस्था की गई थी। बल्कि आरक्षण के लाभ को कुछेक लोगों ने ही समेट लिया है। वे पिछड़ों के समूह में स्वंय अगड़े समूह हो गये है। वे आर्थिक रूप से सम्पन्न हो गये है, सामाजिक और शैक्षणिक रूप से भी ये पिछड़े नहीं रहे है। यहाँ इस तर्क को बढ़ाते हुये आर्थिक रूप से पिछड़े हुये लोगों को भी आरक्षण देने के लिये संविधान में संशोधन की मांग उठाई गई है और पिछडी जातियों के सम्बन्ध में क्रीमीलेयर के सिद्धान्त के सुप्रीम कोर्ट ने लागू किया है। एस.सी. व एस.टी. के लोगों के सम्बन्ध में भी इस सिद्धान्त को लागू करने के लिये आवाज उठाई जा रही है। दूसरी ओर पिछड़ी जातियों द्वारा क्रीमीलेयर के सिद्धान्त को खत्म करने के लिये संविधान में संशोधन कराने की माँग कर दी गई है। लोकतान्त्रिक व्यवस्था में ये संशोधन स्वीकार हो जायेगा। उधर आर्थिक आधार पर या धार्मिक आधार पर आरक्षण दिये जाने वाले कानूनों को सुप्रीम कोर्ट ने गैर संवैधानिक घोषित कर दिया है[6]।

आरक्षण समर्थक और आरक्षण विरोधी लोगों के परस्पर भिड़ जाने की स्थिति में समझौता स्वरूप इन दोनों आधारों पर क्रमश: आर्थिक आधार पर और धार्मिक आधार पर आरक्षण देने के लिये संविधान में संशोधन करने के लिये विचार बन जायेगा। आरक्षित वर्ग के लोग आरक्षण का लाभ लेकर मुख्य धारा में आने के बाद आने आप में एक त्रिशंकु का जीवन जीने को विवश है। क्योंकि जिस वर्ग से वे आगे आये है, वो वर्ग तो उन्हें अपनेपन की भावना से अब देखता नहीं है। क्योंकि वहाँ की सम्मानविहीन जिन्दगी उसे नागवार लगती है। समाज के उच्च वर्ग के लोग इस नवोदित प्रगति किये एस.सी. एस.टी. के व्यक्ति को आत्मसात करने को तैयार नहीं है। इसलिये उसकी स्थिति त्रिशंकु की है। अनेक त्रिशंकुओं का एक अलग समाज बना है, जो वर्ण व्यवस्था को तोड़ने में केटालिक ऐजेन्ट का कार्य कर रहा है। जब तक वर्ण व्यवस्था नहीं टूटती, जाति व्यवस्था टूट नहीं सकती। आरक्षण व्यवस्था को तब तक कायम रखना जरूरी है। कालान्तर में आरक्षण व्यवस्था से ही जाति व्यवस्था और वर्णव्यवस्था टूटेगी। आरक्षण व्यवस्था भारत में तब तक कायम रहेगी जब तक भारतीय समाज की वर्ण व्यवस्था और जाति व्यवस्था समाप्त होकर मानव जाति की व्यवस्था स्थापित नहीं हो जाती है। ये लोकतन्त्रात्मक शासन पद्धति से ही सम्भव होगा। भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। पांच हजार साल से आरक्षण का सुख भोगने वाले लोग पचास साल के आरक्षण के सुख भोगने वालों से घबरा गये और आरक्षण को समाप्त करने के लिये हिंसक व अहिंसक संघर्ष करने सड़क पर उतर आये। व्यवस्था को कमजोर करने। प्रजातन्त्र को कमजोर करने। यदि आरक्षण को खत्म करना है तो खत्म करिये जन्म आधारित वर्ण व्यवस्था को, जन्म आधारित जाति व्यवस्था को। विकसित होने दीजिये जातिविहीन समाज को।

अन्तर्जातीय, अन्तर्राज्य विवाहों को अपनाइयें। व्यवसायों का एकाधिकार तोड़िये। सबको अपनी योग्यता अनुसार व्यवसाय और कार्य करने दीजिये। पूँजी और संसाधनों के वितरण सब में हर तरीके से होने दीजिये ताकि प्रत्येक भारतीय की न्यूनतम आवश्यकतायें तो पूरी हों। होने दें वितरण पूँजी का और कृषि भूमि का सभी लोगों में सेवा करने वाला दु:ख पाये, जबकि उसे तो माँ का स्थान दिया जाना चाहिये। उसके साथ होने वाला सदियों का शोषण समाप्त हो। शोषण करने वाला समाप्त हो। पोषण करने वाले आयें। मजदूर और किसान का सम्मान बढ़े। वो हालत बने तब आरक्षण की व्यवस्था समाप्त करें। उससे पहिले नहीं। ये आरक्षण की व्यवस्था योग्यता पर ही आधारित है। सक्षमता के कारण ही चल रही है इसे समाप्त करने का प्रयास सफल नहीं होगा। वी.पी. सिंह, अर्जुन सिंह, महावीर स्वामी और गौतम बुद्ध अपने-अपने तरीके से भारत के सड़े-गले समाज में नवीनीकरण करके रहेंगे। इसमें किसी को कोई सन्देह नहीं होना चाहिये।

लेकिन विरोध थमने का का नहीं ले रहा है। एक्सपर्टस कमेटी आरक्षण की क्रियान्विति को मोनिटर करने के लिये, केन्द्र सरकार के मंत्रियों का समूह सर्वसम्मत निर्णय के लिये सुझावों को देने के लिये अगड़ों, सवर्णो के हितों पर कुठाराघात नहीं हो, इसलिये शिक्षण संस्थाओं में आरक्षण में जाने वाली सीटों के बराबर अतिरिक्त सीटों के बढ़ाने के लिये केन्द्र सरकार ने लिखित में आश्वासन दिया है। यूथ फोर इक्विलिटी नामक आरक्षण का विरोध करने वाले संगठन को स्वयं प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति ने उनके हितों की अनदेखी नहीं करने का आश्वासन दिया है। लेकिन ओ.बी.सी. को उच्च शिक्षण संस्थाओं में दिये जाने वाले आरक्षण पर आरक्षण खत्म करों। एस.सी., एस.टी. के भी क्रीमीलेयर वाले लोगों को आरक्षण देना बन्द करों। पदोन्नति में आरक्षण नहीं दिया जाये। आरक्षण का आधार जाति न होकर गरीबी माना जाये। उच्च शिक्षा संस्थान और सरकारी नौकरियों में आरक्षण देने के बजाए, पिछडे लोगों को योग्यता और औरों के समकक्ष लाने के लिये सकारात्मक कार्यक्रम वृहद् स्तर पर चलाये जायें।

उच्च शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश और उच्च श्रैणी की सेवाओं, उच्च न्यायालयों के पदों पर, भारतीय फौजों में उच्च पदों पर भर्ती योग्यता और केवल योग्यता के आधार पर ही हो। अन्यथा इन सेवाओं में कुशलता और समक्षता का स्तर गिर जायेगा। इसी प्रकार निजी क्षेत्र में भी आरक्षण नहीं लाया जाये, अन्यथा वहाँ की कुशलता, उत्पादकता और लाभांश का स्तर बहुत नीचे गिर जायेगा। हमारी अर्थव्यवस्था विश्व स्तर पर प्रतियोगी नहीं रह पायेगी। 'देश के सुप्रसिद्ध पूंजीपति और कारपोरेट जगत की नामवर

हस्तियों ने सरकार के निजी क्षेत्र में आरक्षण लागू करने के विचार का इन ऊपर वर्णित तर्कों के आधार पर विरोध किया है।'

ये सारे तर्क अर्द्धसत्य से आच्छदित है। वास्तविकता ये है कि आरक्षण का विरोध करने वाले सवर्ण जातियों के कुछेक मुटटी भर वे लोग है जो सदियों से उच्च वर्ण में जन्म लेने के कारण पूर्व स्थापित विशेषाधिकार पूर्ण अघोषित आरक्षण व्यवस्था से जिसे सामाजिक व सांस्कृतिक मान्यता मिली हुई है, जो आज भारतीय जन मन-मानस में घर की हुई है, और रातदिन पूरे देश में कश्मीर से कन्याकुमारी तक कच्छ से आसाम तक व्यवहार में है- ये सर्वाधिक लाभान्वित हैं। इन सवर्ण वर्ग की जातियों के ये लोग जो भारतीय ही हैं- का उच्चाधिकार प्राप्त राजनैतिक, राजनीतिक व आर्थिक पदों पर आधिपत्य हजारों सालों से है। धन-सम्पदा, स्थावर सम्पत्ति, जिन्स बाजार, शेयर मार्केट, सर्राफा बाजार, विदेशों से होने वाले आयात-निर्यात व्यापार पर इनका ही तो एकाधिकार हैं ये निर्विवाद सत्य है कि संविधान प्रदत्त आरक्षण व्यवस्था लोकशाही की व्यवस्था को भारत में अपनाने के कारण स्थान पा सकी है। ये आरक्षण व्यवस्था राजनैतिक उठा-पठक की देन है। इसलिये सभी राजनैतिक दल इसका समर्थन करते हैं। नीतिगत स्तर पर इसका विरोध कोई नहीं करेगा।

ऊपर से आरक्षण की व्यवस्था समानता के सिद्धान्त के प्रतिकूप दिखाई पड़ती है। इसलिये न्यायपालिका में इस व्यवस्था के विरोधी, याचिकाओं के माध्यम से इसे समाप्त करने के लिय, उसका दरवाजा खटखटाते हैं। लेकिन वस्तुत: भारतीय संविधान में प्रदत्त समानता के अधिकार के अनुपूरक के रूप में आरक्षण की व्यवस्था को प्रतिपादित किया गया है। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय ने अनेकों बार अपने निर्णयों में आरक्षण की व्यवस्था को संविधान-सम्मत माना है। आरक्षण के विरोधियों का एक कट्टरपंथी समूह ऐसा भी है जो वर्तमान भारतीय संविधान को ही बदल देना चाहता है।

वर्तमान गणतन्त्रीय लोकतान्त्रिक संसदीय व्यवस्था को ही समाप्त कर देना चाहता है। क्योंकि ये संविधान और संविधान प्रदत्त व्यवस्थायें मूलत: वर्ण व्यवस्था और भारत की जाति व्यवस्था को समाप्त करने वाली है इसलिये आरक्षण के विरोधी अल्प मत वाले लोग मुगालते में हैं कि वे आरक्षण व्यवस्था का विरोध कर रहे है। वस्तुत: ये वे लोग हैं जो वर्ण व्यवस्था की पुर्नस्थापना करना चाहते है, जाति व्यवस्था को समाप्त नहीं होने देना चाहते है।

आज जिधर देखिये उधर आम जनमानस को धार्मिकता की ओर मोड़ा जा रहा है। मण्डल आयोग के मन्सूबों को ठण्डा करने के लिये कमण्डलधारी लोगों को आगे कर दिया गया। विधायिका को पंगु बना दिया गया। न्यायपालिका का हस्तक्षेप कार्यपालिका और विधायिका के कार्यक्षेत्र में बढ़ा दिया गया। फिर भी यू.पी.ए. की सरकार ने वामपंथियों के समर्थन से ओ.बी.सी. को उच्च शिक्षा प्रतिष्ठानों में आरक्षण दे दिया है। आरक्षण विरोधी मुट्टी भर लोगों द्वारा बहुमत के हित में बनाई गई आरक्षण की व्यवस्था को यथास्थितिवाद के सहारे चले आ रहे अपने राजनय पदों, राजनैतिक पदों, मीडिया संसाधनों पर नियन्त्रण और आर्थिक संसाधनों की मजबूती के बल पर समाप्त करने के लिये जमीन-आसमान एक किया जा रहा हैं।

राजनैतिक दल सकते में है। कई सवर्ण नेताओं ने चुप्पी साध रखी है। लेकिन हम ऐसा करके देश के आम आदमी का, आम मजदूर किसान का और सदियों से आर्थिक तंगी भुगतने को मजबूर और सामाजिक मान-सम्मान से महरूम बहुमत भारतीय नागरिकों का भला नहीं कर रहे है। देश की गुलामी की ओर, आतंकवाद की ओर और आर्थिक दृष्टि से कमजोर करने की दिशा में धकेल रहे हैं। लेकिन ऐसा होगा नहीं।

इसलिये शोषण आधारित व्यवस्था को यदि समाप्त करना है तो सदियों से जिनका सभी प्रकार का शोषण किया है, उन्हें कुछ समय तो विशेषाधिकार आरक्षण की व्यवस्था से मिलने दो। देखिये कितनी जल्दी ये देश विश्व की महान शक्ति बनता है। ताजा हवा को अन्दर आने दो, खिड़की दरवाजों को खुला रहने दो। सड़ांध मार रही व्यवस्था को जितनी जल्दी हो, दफना दो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. एम.एन. श्रीनिवास-कास्ट इन माडर्न इंडिया ऐंड अदर एजेज, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बंबई 1962
2. क्षितिमोहन सेन- 'भारतवर्ष में जातिभेद' अभिनव भारतीय ग्रंथमाला, कलकत्ता, 1940
3. डॉ. मंगलदेव शास्त्री- भारतीय संस्कृति-वैदिक धारा, समाजविज्ञान परिषद।
4. डॉ. नगेन्द्र सिंह, दलितों के रूपान्तर की प्रक्रिया।
5. एम.एन., श्रीनिवास, आधुनिक भरत में जातिवाद तथा अन्य निबन्ध, दिल्ली 1992
6. रजत रानी मीनू, नवें दशक की दलित कविता, दलित सहित्य प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1996
7. शरण कुमार लिंबाले,दलित साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प. 76-77
8. सोहनपाल सुमनाक्षर- विश्व धरातल पर दलित साहित्य, भरतीय दलित सहित्य अकदमी, दिल्ली, 1999

****

प्राचीन भारत में महिलाओं के विरूद्ध हिंसा और उत्पीड़न के विभिन्न स्वरूप - एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

अनिता टाँक* डॉ. एच. एन. व्यास**

शोध सारांश – भारतीय समाज एक परम्परागत व पुरूष प्रधान समाज है। जहाँ सैद्धान्तिक रूप से नारी को भी देवी का दर्जा प्रदान किया गया है किन्तु व्यवहार में समाज के भीतर महिलाओं को सदैव दूसरी श्रेणी का दर्जा दिया जाता रहा है। विभिन्न कालों में नारी की स्थिति भिन्न-भिन्न रही है। जहाँ वैदिक, द्धापर व त्रेता युग में नारी की स्थिति तुलनात्मक रूप से बेहतर थी वहीं मौर्यकाल, गुप्तोत्तर काल व मध्यकाल में महिलाओं की स्थिति दयनीय हो गई। जहाँ उसे वस्तु के रूप में देखा जाने लगा था। इसी प्रकार महिलाओं के शोषण के रूप में भिन्न-भिन्न कालों में भिन्न-भिन्न रहे हैं। दासी प्रथा, देवदासी प्रथा, नियोग प्रथा आदि प्राचीन काल में नारी शोषण व उसके प्रति हिंसा के लिए उत्तारदायी थे। प्रस्तुत शोध पत्र में विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं व नेट पर उपलब्ध सामग्री को द्धितीयक सामग्री के रूप में प्रयोग कर प्राचीन भारत के विभिन्न कालों में महिलाओं की स्थिति व महिलाओं के शोषण के विभिन्न स्वरूपों का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विश्लेषण का एक लघु प्रयास है।

शब्द कुंजी – महिला उत्पीड़न, सती प्रथा, नियोग प्रथा, देव दासी प्रथा, दासी प्रथा, वेश्यावृत्ति।

प्रस्तावना – भारतीय समाज एक परम्परागत व पुरूष प्रधान समाज है, यद्यपि व्यवहार में जहाँ पुरूष को प्रधानता प्रदान की गयी है वहीं सैद्धान्तिक रूप से नारी को देवी का दर्जा प्रदान किया गया है। कहा गया है कि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।' साथ ही गृहणी का शब्दार्थ निकाला जाता है – जिसके ऋण से घर कभी उऋण नहीं हो सकता। किन्तु व्यवहार में देखने को मिलता है कि समाज के भीतर महिलाओं को सदैव दूसरी श्रेणी का दर्जा दिया जाता रहा है, इस पुरूष प्रधान या पितृ सत्तात्मक समाज में महिला का स्थान स्पष्ट रूप से परिलक्षित नहीं होता है। इसका उदाहरण रामायण काल में माता सीता की अग्नि परीक्षा और महाभारत में भरी सभा में द्रोपदी के साथ दुर्योधन का दुर्व्यवहार जिसमें द्रोपदी को नारी के साथ-साथ वस्तु के रूप में देखा जाना इस बात की ओर संकेत है कि नारी के साथ आदि काल से ही दोहरा व्यवहार किया जाता रहा है।

विभिन्न युगों में नारी की स्थिति : प्राचीन भारत में महिलाओं की स्थिति को जानने के लिए हमने विभिन्न युगों के आधार पर विश्लेषण करने का प्रयास किया है जो निम्न प्रकार है :

1. वैदिक काल और महिलाओं की स्थिति : वेदों में नारी को सम्मानजनक उच्च स्थान प्रदान करते हुए उनकी तुलना ब्रह्मा से की है। वैदिक साहित्य में स्त्री और पुरूषों को एक दूसरे का पूरक समझा गया है, वैदिक काल में भी पुत्र के जन्म को महत्व दिया जाता था, किन्तु लड़कियों को भी उच्च शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। उनका लालन-पालन पुत्रों के समान ही किया जाता था। उन्हें वेदों के अध्ययन का अधिकार था। उन्हें विविध ललित कलाओं की भी शिक्षा दी जाती थी। गार्गी, मैत्रेयी आदि अनेक विदूषी महिलाओं के उदाहरण हमें वैदिक युग में देखने को मिलते हैं।

2. त्रेता युग में में महिलाओं की स्थिति : त्रेता युग में महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ थी। रामायण काल में प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान में पत्नी की उपस्थिति अनिवार्य मानी गई थी। पुरूषों के समान ही स्त्रियों को अधिकार प्रदान किये गये थे। इस काल में वास्तविक रूप में नारी को अपने पति की अर्द्धांगिनी मानी जाती थी। स्त्री भी अपने चरित्र व सद्गुणों को समृद्ध करने का प्रयास करती थी। कई महिलाऐं भक्ति और पाण्डित्य में पुरूषों से भी अधिक थी। वे बड़े-बड़े पण्डितों से भी शास्त्रार्थ करती थी।

3. आर्य काल में महिलाओं की स्थिति : आर्यकाल में महिलाओं को समानता का स्तर प्राप्त था। प्रत्येक धार्मिक, सामाजिक व भिन्न अनुष्ठाानों के साथ समानता से भाग लेने का अधिकार रखती थी। मौर्य युग में स्त्रियाँ स्वतन्त्र एवं संतुष्ट थी। महिलाओं पर अत्याचार करने वाले को कठोर दण्ड दिया जाता था। महिलाओं को शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। शिक्षा के साथ-साथ उन्हें नृत्य व गायन की भी शिक्षा दी जाती थी। उन्हें अस्त्र-शस्त्र संचालन की शिक्षा का भी अधिकार प्राप्त था।

4. द्धापर युग और महिलाऐं : द्धापर युग वह युग था जब नारी को बराबरी का दर्जा प्राप्त था उसे योनि-शुचिता के आवरण से मुक्ति दिलाने के लिए श्री कृष्ण से पहला कदम उठाया था। कृष्ण ने उन सोलह हजार नारियों से विवाह किया जो राक्षस की कैद में थी। यह कृष्ण की उदारता एवं योनि आधार के विरूद्ध क्रान्ति थी। यही नहीं उन्होनें औरत के साथ मित्र का सा सम्बन्ध स्थापित किया।

5. बौद्ध काल में महिलाऐं : बौद्ध काल में स्त्रियों की दशा अत्यन्त ही शोचनीय थी। जैसे – नदी, पथ, शराब खाने आदि सबके उपभोग की वस्तुऐं हैं, वैसे ही स्त्रियाँ भी सब के उपभोग की वस्तु मान ली गई थी। इस काल में दासी प्रथा जोरों पर थी। स्त्रियों को सामान्य रूप से रहने का अधिकार समाप्त प्राय: था। इस प्रकार नारी को जो देवी का दर्जा दिया गया था, धीरे-धीरे उसमें गिरावट आने लगी थी। दासी प्रथा आदि कुप्रथाओं ने नारी का जीवन नरक बना दिया था। उसे केवल उपभोग की वस्तु के रूप में ही देखा जाने लगा।

7. मध्य काल में महिलाऐं : मध्यकाल में विदेशी आक्रमणकारियों के

*सहा. आचार्य (समाजशास्त्र) राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राज.) भारत
** सह आचार्य (समाजशास्त्र) मा.ला.व. राजकीय महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राज.) भारत

देश में आने के साथ ही स्त्रियों को पर्दे में रखा जाने लगा। उनकी शिक्षा भी बन्द कर दी गयी। उनको घर की चाहर-दीवारी के भीतर एक प्रकार से कैद कर लिया गया था। समाज में धीरे-धीरे इन कृत्यों को धर्म का नाम देकर स्त्रियों के जीवन को कष्टप्रद बना डाला। उसी समय बहुपत्नी विवाह, यौन शोषण, बाल विवाह, सती प्रथा एवं विधवा विवाह निषेध आदि अनेक कुप्रथाओं ने जन्म ले लिया था। महिलाओं को शैक्षणिक, आर्थिक एवं राजनीतिक कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे।

8. **ब्रिटिश काल और महिलाऐं :** ब्रिटिश काल में शासन का उद्देश्य समाज सुधार, समाज कल्याण नहीं था। अत: स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के लिए ब्रिटिश शासकों की विशेष रूचि नहीं रही। हालांकि राजा राम मोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, ज्योतिबा फूले आदि अनेक समाज सुधारकों ने महिलाओं की दशा सुधारने के लिए अनेक प्रयत्न किये। सन् 1829 में सती प्रथा निषेध अधिनियम, 1856 में विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1929 में शारदा एक्ट जैसे कानून अस्तित्व में आये। किन्तु ब्रिटिश काल में औरतों के मामले में पश्चिमीकरण विशेष रूप से प्रभावी नहीं हो सका।

विदेशी आक्रमणकारी जब हमारे देश को छोड़कर गये और हमारा देश आजाद हुआ तब तक देश में अज्ञान, अशिक्षा, पिछड़ापन, छुआछूत आदि कुरीतियों का साम्राज्य स्थापित हो चुका था। समाज में स्त्रियों की स्थिति चिंताजनक थी। पुरूषों के साथ समान रूप से काम करने के बाद भी परिवार में उसकी स्थिति महत्वहीन हो चुकी थी।

प्राचीन भारत में महिलाओं के विरूद्ध हिंसा के विभिन्न स्वरूप व प्रकार : जब हम महिलाओं के विरूद्ध हिंसा या शोषण की बात करते हैं तो देखते है कि यह तो प्राचीन काल से चला आ रहा है। रामायण, महाभारत काल में सीता की अग्नि परीक्षा व द्रोपदी का चीरहरण महिला के विरूद्ध हिंसा व उत्पीड़न का ज्वलन्त उदाहरण है। राजपूत महिलाओं द्वारा अस्मिता की रक्षा हेतु जौहर करना आदि महिलाओं के प्रति हिंसा को ही बताता है। प्राचीन काल में भारत में महिलाओं के साथ हिंसा और उत्पीड़न व शोषण के विभिन्न स्वरूप निम्न प्रकार हैं –

1. **दासी प्रथा :** प्राचीन काल से ही स्त्रियों की स्थिति दयनीय व शोचनीच थी। ऋग्वेद से भी पता चलता है कि दास आर्यो के शत्रु थे। जो आर्यो से पराजित होने के बाद आर्यो के अधीन हो गये। इन्हीं दासों की स्त्रियों को दासी कहा गया। दासियों को न केवल मूल्य लेकर या उपहार स्वरूप दिया जाता था अपितु उनके साथ मनमाना व्यवहार किया जाता था। प्राचीन काल में दासी रखना एक सामाजिक प्रथा थी और दास स्त्रियों को वस्तुओं की भाँति वैभव प्रदर्शन की आवश्यक वस्तु माना जाता था। दासी के रूप में भी महिलाओं को भिन्न प्रकार से रखा जाता था। जैसे सखी के रूप में राज प्रासाद में कन्याओं की देखभाल व सुरक्षा के लिए रखी जाती थी। मनोरंजन करने वाली दासी जो नृत्य में कुशल होती थी। जो राज-परिवार को गीत सुनाना, उनका मनोरंजन करने का कार्य करती थी। प्राचीन काल में उच्च वर्णो का व्यवहार दासियों के प्रति अमानवीय कठोर व कटु था। महिलाओं को दासी के रूप में अतिथियों के चरण धोने के लिए प्रयोग में लिया जाता था। दासियों को कई प्रकार के कष्टों का सामना करना पड़ता था। उन्हें अपने स्वामियों को प्रसन्न करने के लिए उनके मन में असंतोष व क्रोध का भय बना रहता था। दासियों के अपमान या शील भंग का विरोध नहीं होता था। दासियों से भी सभी प्रकार की सेवाऐं ली जाती थी। दासियों के जीवन में शील रक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं था। वेस्टर मार्क के अनुसार वैदिक काल में मध्य एशिया एवं पूर्वी यूरोप की अनाथ स्त्रियाँ वेश्याओं के रूप में देखी जा सकती थी। इन्हें पणि व दस्यु वहाँ से पकड़कर दासी बनाकर यहाँ ले जाते और स्वर्ण मसाले आदि उनके बदले ले जाते थे। वे दासी के रूप में बेच दी जाती थी या वेश्याऐं उन्हें खरीद लेती।

2. **वेश्यावृत्ति :** प्राचीन भारत में स्त्रियों की दशा को और बदतर बनाने वाली कुछ अन्य विशेष कुरीतियाँ व कुप्रथाऐं थी, जिन्होनें स्त्री के जीवन को नरक बना कर उन्हें केवल उपभोग की वस्तु तक सीमित कर दिया था। ऋग्वेद में वेश्यावृत्ति के विषय में कोई असंदिग्ध प्रमाण नहीं मिलता, किन्तु उत्तर वैदिक ग्रन्थों में इसके उल्लेख व संकेत हैं। मौर्य युग में वेश्याओं एवं गणिकाओं के व्यवसाय को नियन्त्रित करने का प्रयास किया गया है। प्रशासक वर्ग तथा धार्मिक व्यापारियों के अतिरिक्त सम्पन्न व प्रतिष्ठित ब्राह्मण भी गणिका के लिए अपना सर्वस्व लुटा देते थे। गुप्तोत्तार तथा पूर्व मध्यकाल में वेश्या व्यसन का व्यापक रूप से प्रचलन रहा। वेश्याऐं एवं गणिकाऐं राजदरबार का अभिन्न अंग होती थी। रूपवती व गुणवती गणिकाऐं अवश्य बहुत धन उपहार तथा मान-सम्मान आदि प्राप्त करती थी। किन्तु समाज में उन्हें भी हेय दृष्टि से देखा जाता था और कोई भी वेश्या अपने व्यवसाय को अच्छा नहीं मानती थी।

सामाजिक एवं धार्मिक व्यक्ति वेश्याओं को घृणा की दृष्टि से देखते थे। उनका समाज में आना जाना प्राय: निषिद्ध था। वे स्नानादि कार्य के लिए नदी या तालाब में एक साथ ही जाती थी। वेश्या की संतान को प्राय: वेश्यावृत्ति से ही जीवनयापन करने के लिए विवश होना पड़ता था। वेश्याऐं धार्मिक कृत्यों से भी दूर रखी जाती थी। सामान्य वेश्याओं को न केवल भिक्षु संघ में प्रविष्ट किया जाता था, अपितु उनसे भिक्षुओं को बचने के लिए भी कहा जाता था। मनु ने वेश्याओं की हत्या करने पर साधारण दण्ड का विधान किया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पुरूष की अर्द्धांगिनी व देवी तुल्य स्त्रियों को समाज किस प्रकार अपनी काम पिपासा तृप्ति के लिए वेश्या व गणिका बना देता था और उसी को समाज द्वारा घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। उसे सामान्य स्त्री की तरह घर-गृहस्थी व परिवार बसाने का अधिकार नहीं दिया जाता था।

3. **विधवा पुनर्विवाह निषेध प्रथा :** ईसा पूर्व 200 तक विधवा के पुनर्विवाह की प्रथा काफी प्रचलित रही, इसलिए उनकी स्थिति अधिक खराब नहीं थी। किन्तु इसके बाद से विधवाओं के विवाह की निन्दा की जाने लगी और यह प्रथा धीरे-धीरे कम होती गई। परिणामस्वरूप विधवाओं की स्थिति दयनीय हो गई। शुभ अवसरों पर उनकी उपस्थिति अवांछनीय थी। क्योंकि उन्हें शुभ नहीं माना जाता था। विधवाओं को अत्यधिक संयम नियम एवं सादगीपूर्ण कठोर जीवन व्यतीत करना पड़ता था। वे सांसारिक सुखों तथा भौतिक जीवन की सुविधाओं से वंचित कर दी गयी थी। परिवार के सदस्यों का उनके प्रति व्यवहार आमतौर पर स्नेह व सहानुभूतिपूर्ण नहीं होता था। विधवाओं को कताई, बुनाई एवं मासिक कर्म द्वारा जीवन यापन करने की अनुमति थी। दूसरा विवाह न करने वाली कम उम्र की तथा रूपवती विधवाओं का शारीरिक शोषण होता था और अधिक आयु वाली विधवाओं से अधिकतम काम लिया जाता था।

यद्यपि प्राचीन समय में पुनर्विवाह निषिद्ध नहीं था, किन्तु कालान्तर में पुरूषों के पुनर्विवाह को तो समाज ने स्वीकार लिया किन्तु महिलाओं को पुनर्विवाह के अधिकार से वंचित कर दिया और विवाह के धार्मिक व सांस्कारिक पक्षों की निष्ठा व नैतिकता की रक्षा का सम्पूर्ण भार केवल

महिलाओं पर ही डाल दिया गया।

4. नियोग प्रथा : प्राचीन भारत में दासी, वेश्या व विधवा विवाह निषेध के साथ ही एक विशेष प्रथा नियोग थी। पति की मृत्यु के पश्चात पत्नी के सामने तीन रास्ते थे – एक संयम, दूसरा सती प्रथा व तीसरा शास्त्रों के अनुसार नियोग प्रथा द्वारा पुत्र को जन्म देना। आर्यों के पुरूष प्रधान समाज में पुत्र का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होना स्वाभाविक था। अत: प्राचीन भारतीय शास्त्रकारों ने पुत्रहीन व्यक्ति की मृत्यु के उपरान्त विधवा के देवर और देवर के अभाव में निकटतम सपिंड, सगोत्र, समान प्रवर वाले या अपनी ही जाति के पुरूष के साथ बड़ों की आज्ञा लेकर विवाह करने का प्रावधान किया। इसी प्रथा को नियोग कहा गया। पुत्रहीन व्यक्ति अपने जीवन काल में भी नियुक्त पुरूष के द्वारा पुत्र उत्पन्न करा सकता था। परन्तु यहाँ यह उल्लेख करना अप्रासंगिक नहीं होगा कि नियोग प्रथा के प्रचलन का मात्र उद्देश्य पुत्र प्राप्त करना था। विधवाओं की स्थिति को सुखद बनाना नहीं। यह प्रथा कम से कम प्राचीन धर्म सूत्रों के काल तक तो काफी प्रचलित रही, किन्तु उसका दुरूपयोग होने पर सूत्रकारों ने इसे नैतिक एवं धार्मिक दृष्टि से कुत्सित मानते हुए इसकी निन्दा की और निषेध किया। इसके ह्रास के लिए आर्थिक कारण भी उत्तरदायी थे। नियोग प्रथा के कम या समाप्त होने का विधवाओं की स्थिति पर निश्चय ही बुरा प्रभाव हुआ।

इस तरह हम देखते हैं कि नियोग प्रथा विधवा स्त्री के जीवन में सुधार के लिए नहीं अपितु पुरूष प्रधान समाज में पुत्र प्राप्ति के एक साधन के रूप में प्रयुक्त करने का माध्यम थी।

5. देवदासी प्रथा : प्राचीन भारत में धर्म और आस्था के नाम पर एक और प्रथा थी – देवदासी। जिसके अनुसार परिवार अपने मन्नत के पूर्ण होने पर अपनी एक कन्या मन्दिर को दान कर देते थे। सामान्यत: जो कन्याऐं रजस्वला को प्राप्त नहीं होती थी। उन्हें मन्दिर में दान किया जाता था। अर्थात् बहुत कम उम्र की कन्याओं को मन्दिर को सौंप दिया जाता था। उनका विवाह देवता से काल्पनिक रूप से कर दिया जाता था। इन देवदासियों को विवाह करने एवं सामान्य पारिवारिक जीवन व्यतीत करने का अधिकार नहीं था। इनका कार्य मन्दिर की देख–रेख करने, अनुष्ठाान करने व पूजा व धार्मिक अनुष्ठानों में नृत्य करना होता था।

प्रारम्भ में देवताओं से विवाह के कारण इनकी सामाजिक प्रतिष्ठा उच्च मानी जाती थी। कालांतर में पुजारियों, मन्दिर के ट्रस्ट के अधिकारियों व उच्च आर्थिक व सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्तियों द्वारा इनका यौन–शोषण आरम्भ कर दिया गया और देखते ही देखते धर्म की आड़ में देवदासी प्रथा वेश्यावृत्ति का नया रूप बन गई।

सामाजिक रूप से उनका महिमामण्डन कर वास्तविक रूप में उनका शारीरिक शोषण किया जाता था। इस प्रकार प्राचीन भारत में भी नारी का शोषण विद्यमान था। जिसे धार्मिक व सामाजिक स्वीकृति प्राप्त थी। अत: उसे नारी का शोषण भी नहीं माना जाता था। जबकि वास्तविक रूप से देवदासी प्रथा में नारी की स्थिति लगभग मौर्य व गुप्तकाल में विद्यमान नगर–वधु की ही परिवर्तित स्थिति थी। इस तरह प्राचीन भारत में महिलाओं के प्रति हिंसा व उत्पीड़न व्याप्त था।

6. सती प्रथा : प्राचीन भारत में नारियों की दुर्दशा के लिए उत्तरदायी कुप्रथाओं में एक वीभत्स प्रथा सती–प्रथा भी रही है। इस प्रथा के अनुसार पति की मृत्यु हो जाने पर पत्नी को उसकी चिता के साथ जल कर प्राण त्याग देने होते थे। यह प्रथा भारत में महिलाओं के प्रति क्रूर, निन्दनीय एवं जघन्य अपराध था। इसमें पत्नी को सुन्दर वस्त्रों व आभूषणों से सुसज्जित कर सुहागन स्त्री के सभी श्रृंगार कर पति की चिता के साथ ही जला दिया जाता था। पत्नी को अपनी स्थिति से बेखबर करने के लिए उसे पहले से अफीम या धतूरे जैसी मादक वस्तुओं का सेवन करवा दिया जाता थे। ढोल–नंगाड़ों, बाजों की आवाज के साथ पत्नी को पति की चिता पर बिठा दिया जाता था। गाजे बाजों की आवाज में उसकी चीख–पुकार को दबा दिया जाता था।

इस प्रकार देवी का स्थान देकर भारतीय समाज में धर्म के नाम पर उसे जिन्दा जला दिया जाता था। महिलाओं के प्रति इस जघन्य अपराध को राजा राम मोहन राय के प्रयासों द्वारा लॉर्ड विलियम बैंटिक ने सती प्रथा निषेध अधिनियम–1829 द्वारा कानून रूप से समाप्त कर दिया।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि महिलाओं के विरूद्ध हिंसा और उत्पीड़न ऐतिहासिक काल से चली आ रही है। दासी प्रथा, देवदासी प्रथा, सती प्रथा, विधवा पुनर्विवाह निषेध प्रथा, वेश्यावृत्ति के साथ–साथ बाल विवाह, दहेज प्रथा, घूंघट प्रथा, महिला–अशिक्षा, सामाजिक, आर्थिक व पारिवारिक निर्णयों में यस्त्री को महत्व न देना आदि प्राचीन काल से ही महिला–उत्पीड़न व हिंसा के लिए उत्तरदायी रहे हैं। इस प्रकार प्राचीन काल में स्त्रियों की दशा विभिन्न कालों में देखने से हमें विदित होता है कि महिला उत्पीड़न व घरेलू हिंसा की बात जो वर्तमान समय में चर्चित है उसका इतिहास काफी प्राचीन है। सिर्फ पहले और आज के उत्पीड़न व शोषण के स्वरूप में भिन्नता और परिवर्तन आ गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शरण. देवेन्द्र कुमार 2012 नारी सशक्तिकरण का इतिहास क्लासिकल पब्लिशिंग हाउस कम्पनी, नई दिल्ली।
2. शोभा राजोरिया – 2011 महिला और कानून
3. https://www.pennaukri.com – 31 March, 2017.
4. https://www.bbc.com – 10 Dec., 2012
5. https://www.drishtiias.com – 15 Jan, 2019
6. https://www.naidunia.com – 11 June, 2016
7. https://www.amarujala.com – 12 Dec, 2012
8. गढ़वी नैनेश व राम सौन्दर्वा (2013) 21 वीं सदी में महिलाओं का बदलता स्वरूप, पैराडाईज पब्लिशर्स
9. जैमन, सुषमा (2009) भारतीय समाज और महिलाऐं, साहित्यागार, जयपुर।
10. गुप्ता, कमलेश कुमार (2005) महिला सशक्तिकरण, बुक एनक्लेव, जयपुर।
11. राउत, एन. यू. (2013) महिला सुरक्षा एवं समाज, सत्यम पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर।
12. गौड़ संजय (2006), आधुनिक महिलाऐं और समाज, उत्पीड़न, अत्याचार व अधिकार, बुक एनक्लेव, जयपुर।
13. पटेल, कल्पना (2013) भारतीय संस्कृति एवं महिला सशक्तिकरण, पेराडाइज प्रकाशन, जयपुर।
14. शर्मा नीरजा (2013) महिला सशक्तिकरण, आस्था प्रकाशन, जयपुर।

****

Anti-Competitive Agreements

Dr. Kiran Yadav*

Introduction - Competition law is a rapidly burgeoning subject and has grown enormously in recent years, especially since the early 1990s. An increasing number of countries have undertaken economic reforms and embraced the market economy as a result of which competition law has been introduced in order to promote and maintain competition. Although there is some controversy as regards the objective of competition law, there is broad agreement that the principal objective is to make the market economy work better by stopping private power from obstructing markets. Competition law regulates market power in order to promote competition, thereby enhancing economic efficiency and increasing social welfare. The starting point for an understanding of the rationale behind competition law is to understand the microeconomic concept of 'market', the perceived benefits of market efficiency, the role of competition and their causal inter-relationship. 'Economic efficiency' refers to the optimal use and allocation of resources by markets, thereby maximizing 'social welfare'.

The Competition Commission of India (C.C.I.) has till date not come out with any guidelines or regulations for either cooperative or concentrative joint ventures. In fact, it has until now not had an opportunity to analyse or taken an opportunity *suo moto* to analyse the anti-competitive effects, if any, of such ventures. Therefore, any discussion on cooperative joint ventures under Indian competition law shall have to be limited to the Act itself. Though relatively short in terms of life span, the Competition Law is hugely significant as a building block for economic development and rising levels of economic welfare.UK Office of Fair Trading's introduction to the 'substantial lessening of competition' test under the Enterprise Act 2002 is:

Anti-Competitive Agreements: Cooperative Joint ventures (or Contractual Joint Ventures, as they are also known) are a vexatious issue under competition law. They may and often do combine defining aspects of both a regular combination (which can be analysed by a competition regulatory authority to determine whether the combination would inhibit competition in the relevant market), as well as an agreement (which would require the competition regulatory authority to determine whether the agreement is anti-competitive or an abuse of dominant position under the respective competition law of that particular jurisdiction). The European Commission has defined the term under Article 3(2) of the Regulation on the Control of Concentration between Undertakings of 19893 (herein after referred to as the Merger Regulation) which states that an operation, including of a joint venture, which has as its object or effect the coordination of the competitive behaviour of undertakings which remain independent shall not constitute a concentration within the meaning of paragraph 1(b).4 Similarly in the U.S., the Federal Trade Commission (FTC) has defined such agreements under the term competitor collaboration and defines such an agreement which comprises a set of one or more agreements, other than mergers agreements, between or among competitors to engage in economic activity, and the economic activity resulting there from Competitors encompasses both actual and potential competitors. Competitor collaborations involve one or more business activities, such as research and development (R&D), production, marketing marketing, distribution, sales or purchasing. Information sharing and various trade association activities also may take place through competitor collaborations. Under European Competition law today, cooperative joint ventures are primarily evaluated under Article 101 of the Treaty of the Functioning of the European Union (TFEU). Other than the above, they are also partially regulated under the Regulation on the Control of Concentration between Undertakings of 1989.

Article 81(1) EC prohibits agreements with an anticompetitive object or effect, but does not define 'agreement'.

Failure to comply with UK or EU competition law can have very serious consequences.

Firms involved in anti-competitive behaviour may find their agreements to be unenforceable and risk being fined up to 10% of group global turnover for particularly damaging behaviour as well as exposing themselves to possible damages actions from customers. Furthermore, individuals could also find themselves facing director disqualification orders or even criminal sanctions for serious breaches of competition law.

In the UK two sets of competition rules apply in parallel. Anti-competitive behaviour which may affect trade within

*Associate Professor (Zoology) Maharaja Bijli Pasi Govt P.G. College, Lucknow (U.P.) INDIA

the UK is specifically prohibited by Chapters I and II of the Competition Act 1998 and the Enterprise Act 2002. Where the effect of anti-competitive behaviour extends beyond the UK to other EU-Member states, it is prohibited by Articles 101 and 102 of the Treaty on the Functioning of the European Union (TFEU).

UK and EU competition law prohibit two main types of anti-competitive activity:

1. Anti-competitive agreements (under the Chapter I and Article 101 prohibitions); and
2. Abuse of dominant market position (under the Chapter II / Article 102 prohibitions).
3. Chapter I / Article 101.
4. Both UK and EU competition law prohibit agreements, arrangements and concerted business practices which appreciably prevent, restrict or distort competition (or have the intention of so doing) and which affect trade in the UK or the EU respectively.

Examples of agreements which can be anti-competitive include:

1. Price-fixing (agreeing with any other business on a minimum price to sell goods or services at).
2. Limiting production to drive up prices.
3. If 2 contracts are put out to tender, agreeing with your competitor to only bid on 1 each.
4. Agreeing not to sell to a competitor's customers or compete against them in a certain area.

If 2 or more competitors make agreements like these, it might constitute a 'cartel'.

1.Cartels and Collusion: Companies in cartels that control prices or divide up markets are protected from competitive pressure to launch new products, improve quality and keep prices down. Consumers end up paying more for lower quality.

Cartels are illegal under EU competition law, and the Commission imposes heavy fines on the companies involved. Since cartels are illegal, they are generally highly secretive and evidence is hard to find.

The Commission's 'leniency policy' encourages companies to provide inside evidence of cartels. The first company in a cartel to do so will not have to pay a fine. The policy has been very successful in breaking up cartels.

Although firms have incentives to engage in explicit coordination, this does not mean that firms will necessarily do so. Even absent competition laws preventing such behavior, the characteristics of many industries imply that firms will not be able to engage in sustained explicit coordination.

A. Incentive to Collude: The potential benefit of setting up a cartel is also related to the level of competition in the absence of the cartel. The fiercer is competition, and lower are prices, in the absence of a cartel, the greater is the likely benefit from setting up a cartel. Four factors that are important in determining the level of competition in the absence of collusion are the number of firms in the market, the level of spare capacity in the industry, the cost structure of the firms and how homogeneous the products are. Competition tends to be fiercer when there are more firms in a market, although this relationship is by no means perfect. The level of spare capacity affects the incentives that firms have to lower prices to win additional sales. If a firm has no spare capacity, then it has no incentive to lower its price as its lack of spare capacity means that it cannot sell more units. The relationship between marginal costs and average costs is also relevant to the likely level of competition in the absence of the cartel. Where marginal costs are low relative to average costs (or, equivalently, fixed costs are high), prices tend to be bid down to below average costs. In such circumstances, the difference in profitability between a collusive outcome and a competitive outcome is likely to be large. Finally, when products are relatively homogeneous, this tends to increase the intensity of competition because it means the products are close substitutes to each other. Conversely, competition is often less intense when products are differentiated from each other. The worldwide vitamins cartel was a good example of an industry with high fixed costs, low marginal costs and homogeneous products.

B. Characteristics of an Industry that Aid the Creation of a Cartel: Even where the benefits of establishing a cartel are clear, these may still be outweighed by the costs and difficulties of setting up a cartel. In particular, a cartel agreement needs to set the cartel price and to divide the benefits from colluding between the various firms. There are a number of factors that affect how easy it is to set up a cartel.

One of these is how heterogeneous the firms' products and cost structures are. It is easier for firms to agree on prices when there are few differences between firms, both in terms of the products they sell and in their cost structure or operating efficiency. Firms are more likely to have difficulty in agreeing on relative prices when each firm's product has different qualities or properties, especially where some of the differences cannot be resolved objectively.

Conversely, where products are homogeneous, it is easier for firms to agree on the appropriate cartel price. This explains, in part at least, why many of the major cartel decisions taken by the European Commission have concerned industries producing such products as steel beams, cement, PVC, vitamins, zinc phosphate and so on. Products in all of these industries are to a large extent homogeneous.

C. Sustaining Collusion: As noted above, firms in a cartel have an incentive to undercut the cartel price. This has an important implication for the stability of cartels: they are frequently unstable. The firms in a cartel have an incentive to cheat i.e., to undercut the cartel price. By slightly undercutting the cartel price, firms can potentially dramatically increase their sales and hence profits. However, before a firm does this it needs to weigh up the potential benefits of cheating against the possibility that the

other firms in the cartel will discover that it is cheating and "punish" it.

2. Vertical Restraints: Vertical agreements are agreements between firms at different levels in the production and supply chain and include agreements between manufacturers and retailers, manufacturers and distributors, distributors and retailers and so on. Vertical agreements in general contain restrictions imposed by one party on another. On occasion, these restrictions can fall foul of competition law.

Although vertical restraints are usually pro-competitive, they can be anti-competitive. Whether a given vertical restraint turns is anti-competitive or not turns largely on the question of whether the vertical restraint reduces competition at the horizontal level. Vertical restraints can be used to reduce both inter-brand competition (competition between different brands) and intra-brand competition (competition between the same brand sold in different outlets). When vertical restraints reduce the level of inter-brand or intra-brand competition significantly, they may be anti-competitive. A loss of inter-brand competition is usually more concerning than a loss of intra-brand competition.

Conclusion: Competition Law in India has been enacted for a good and it is hoped that it will be successful in long run. Anti Competitive Agreements are one of the most harmful activities for competition in market. This collusion leads to large scale adverse effect on competition thus leading a scene of monopoly which will destroy the democratic character of market. Thus, is can be said the efforts made by legislature in framing competition law and giving requisite importance to prevention of Anti Competitive Agreements has been and will be beneficial to the economy of the country.

References:-

1. S.M. Dugar Commentary on the MRTP Law, Competition Law and Consumer Protection Act (Law, Practices and Procedures) (4rth edn Wadhwa and Company New Delhi 2006).
2. D.P.Mittal Competition Law and Practice (3rd edn Taxmann Publications (P.) Ltd. New Delhi 2011).

Footnotes:

1. https://www.gov.uk/competition-law-unfair-pricing-agreements.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

भारतीय प्रशासन में सुशासन का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

महेश कुमार रचियता*

प्रस्तावना – प्राचीन काल कौटिल्य, चाणक्य के समय में ही सुशासन के तत्वों को देखा गया है जो कि वर्तमान समय में समस्त विश्व के प्रशासनों सरकारों में लक्षित होता है।

सुशासन का सामान्य अर्थ है 'अच्छे तरीके से शासन करना अर्थात् किसी सामाजिक राजनैतिक इकाई को इस प्रकार संचालित किया जाये कि अपेक्षित परिणाम प्राप्त हो सके।' सुशासन शब्द का प्रचलन 1990 के दशक में तेजी से देखा गया इस दशक में विश्व की अनेक संस्थानों एवं संयुक्त राष्ट्र द्वारा इस शब्द का व्यापक प्रयोग किया गया है, भारतीय परम्परा में रामराज्य की कल्पना सुशासन को ही इँगित करती है।

वर्ष 1992 में विश्व बैंक ने सुशासन की अवधारणा का प्रतिपादन करते हुये यह स्पष्ट किया कि सुशासन का मूल्य सापेक्ष अवधारणा है क्योंकि प्रत्येक शासन सुशासन नहीं होता बल्कि कुछ निर्धारित विशेषताओं से सम्पन्न शासन को ही सुशासन कहा जा सकता है।

वर्तमान समय में सुशासन का महत्व इस बात से समझा जा रहा है कि अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थायें विकासशील देशों को आर्थिक सहायत देते समय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सुशासन की शर्त रखती है और यह जानने का प्रयास करती है कि कितने प्रभावी रूप में किया गया है।

सुशासन शब्द का प्रयोग एक ऐसी प्रक्रिया रूप में लिया गया है जिसमें शासन के माध्यम से आर्थिक और सामाजिक सँसाधनों का उपयोग राष्ट्र की उन्नति एवँ विकास हेतु किया जाता है। अत: सुशासन विकास हेतु एक आवश्यक शर्त है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में भ्रष्टाचार की समस्या में निरन्तर वृद्धि हुई है। इस कारण से सरकार की विकास योजनाओं का पूर्ण लाभ आम जनता तक नहीं पहुँच पाया पाया। इसलिये भारत की प्रशासनिक व्यवस्था में सुशासन को बढ़ावा देकर समावेशी विकास के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

सुशासन से विकेन्द्रीकृत शासन का लक्ष्य भी पूर्ण होता है और स्थानीय संसाधनों का कुशलतम उपयोग किया जा सकता है। इससे सीमित समय में गुणवतापूर्ण सेवा में प्रदान की जा सकेगी और आम जनता में सुधार आयेगा।

सुशासन के लिये आवश्यक तत्व– संयुक्त राष्ट्र सुशासन की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रहा है। संयुक्त राष्ट्रसंघ के पूर्व महासचिव अन्नान कोफी के अनुसार सुशासन मानवाअधिकारों तथा विधि के शासन के लिये सम्मान सुनिश्चित कर रहा है, लोकतन्त्र को सशक्त बना रहा है तथा लोक प्रशासन में पारदर्शिता तथा क्षमता को प्रोत्साहन दे रहा है।

उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये सँयुक्त राष्ट्र में सुशासन के 8 सिद्धान्त निर्धारित किये है:

1. सहभागिता
2. विधि का शासन
3. सर्वसम्मति उन्मुख
4. समानता एवँ समावेशन समाज
5. प्रभावकारिता एवं कार्यकुशलता
6. उत्तरादायित्व
7. पारदर्शिता
8. अनुक्रियाशीलता

भारतीय संविधान में सुशासन की झलक – सुशासन के लिये जो मापदण स्थापित किये गये है यदि उन मापदण्डों के आधार पर भारत में सुशासन की स्थिति का विश्लेषण किया जाये, तो भारत में सुशासन की स्थिति ना तो बहुत उच्च दिखाई पड़ती है ना ही बहुत निम्न। विधि के शासन आदि क्षेत्रों में भारत में बहुत प्रगति हुई है लेकिन सामाजिक न्याय, राजनैतिक एवं प्रशासनिक उत्तरदायित्व तथा प्रशासन की प्रभावशीलता के क्षेत्रों ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है।

भारत में सुशासन को प्रोत्साहन एवँ सुनिश्चित करने हेतु समय–समय पर निम्न कदम उठाये गये।

73 व 74वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 के द्वारा लोकताँत्रिक विकेन्द्रीकरण तथा शासन प्रक्रिया में लोगों की सहभागिता।

समतामूलक एवं समावेशी विकास के विभिन्न वैधानिक निकायों का गठन किया गया जैसे–

1. राष्ट्रीय महिला आयोग 1952.
2. राष्ट्रीय अल्पसँख्यक आयोग 1992.
3. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग 1993.

प्रशासनिक कार्यो में सुधार हेतु 1968 व 2005 में क्रमश: प्रथम व द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग का गठन किया गया।

सुशासन की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है इस रिपोर्ट में सूचना का अधिकार, शासन में नैतिकता, स्थानीय स्वशासन तथा ई–गर्वेनेंस के विषय ठोस कदम उठाये गये है।

वर्ष 2001 में एक कम्प्यूटरीकृत लोक प्रशासन शिकायत उपचार एवं निगरानी प्रणाली स्थापित की गई।

संविधान के प्रारम्भ में केवल अनुसूचित जाति के लिये एक आयोग

* सह आचार्य (राजनीति विज्ञान) महारानी सुदर्शन राजकीय कन्या महाविद्यालय, बीकानेर (राज.) भारत

का प्रावधान किया गया था, जो अनुसूचित जनजाति से सम्बन्धित मामलों की भी देख-रेख करता था। परन्तु 89 में संविधान संशोधन अधिनियम 2003 के द्वारा सँविधान में अनुच्छेद - 338 (क) जोड़ा गया है, जो अनुसूचित जनजाति आयोग से सम्बन्धित है।

26 जुलाई 2014 को सुशासन के लिये जन-भागीदारी बढ़ाने हेतु 'मेरी सरकार' नामक एक पहल की शुरूआत की गई।

भारत में सुशासन के समक्ष चुनौतियाँ - भारत में सुशासन के समक्ष अनेक चुनौती विद्यमान है, जो प्रशासन में जनभागीदारी की व उसकी प्रभावकारिता को सीमित करती है। कुछ प्रमुख चुनौतियां निम्नलिखित है-

1. लोक शिकायत का प्रभावी समाधान।
2. नौकरशाही में लाल फीता शाही की प्रवृत्ति।
3. प्रशासन में राजनैतिक नकारात्मक हस्तक्षेप।
4. महिलाओं की शिकायत का निवारण।
5. प्रशासन में भ्रष्टाचार तथा सदस्यों की भूमिका।
6. स्वच्छ भारत के लिये व्यवहार परिवर्तन।
7. भारत में नागरिक घोषणा पत्र का विकास।
8. त्रुटिपूर्ण प्रशासनिक प्रक्रियाओं के कारण अनावश्यक विलम्ब।
9. निर्भरता, अशिक्षा, जातिवाद एवं सम्प्रदाय जैसी सामाजिक-आर्थिक बाधायें[1]।

प्रशासन द्वारा भ्रष्टाचार के निवारण हेतु किये गये महत्वपूर्ण प्रयास

भ्रष्टाचार, समाज एवं राष्ट्र के नैतिक पतन का परिणाम एवं कारण दोनों है। भ्रष्टाचार का शाब्दिक अर्थ है भ्रष्ट आचरण। सामान्य रूप से वे कार्य या व्यापार जो फरेब धोखा एवं बेईमानी पर आधारित होते हैं, इस श्रेणी में आते हैं।

परिभाषित दृष्टि से भ्रष्टाचार की भारतीय दण्ड सँहिता की धारा 161 में व्यक्त की गई है।[2]

भारत में भ्रष्टाचार रोधी कार्य तन्त्र:

1. लोक सेवक जाँच अधिनियम 1850.
2. भारतीय दण्ड सँहिता - 1860.
3. विशेष पुलिस अवस्थापन - 1941.
4. भ्रष्टाचार निरोध अधिनियम - 1947.
5. अखिल भारतीय सेवा (आचरण) नियम-1954.
6. केन्द्रीय लोक सेवा (आचरण) नियम-1955.
7. रेलवे सेवा (आचरण) नियम-1956.
8. केन्द्रीय जाँच ब्यूरों - 1963.
9. केन्द्रीय सतर्कता आयोग-1964.
10. राज्य सतर्कता आयोग-1964.
11. राज्यों में लोकायुक्त।
12. जिला सतर्कता अधिकारी।
13. प्रशासनिक ट्रिब्यूनल
14. संसद और उसकी समितियाँ।[3]

पारदर्शिता जबाव देही एवं सूचना का अधिकार - जबावदेही एवं पारदर्शिता किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की आधार-शिला होती है। प्रशासन में जबाव देही एवं पारदर्शिता व्यवस्था में जनता के विश्वास को सबलता प्रदान करती है तथा साथ ही व्यवस्था में भी सकारात्मक गतिशीलता बनी रहती है। साथ ही एक सभ्य समाज के दृष्टिकोण से ही भी यह आवश्यक है कि प्रशासनिक जवाबदेही एवं पारदर्शिता को सुनिश्चित किया जाये। इसी परिवेश में वर्ष 1992 में विश्व बैंक से अपना दस्तावेज अभिशासन और विकास में जबाव देहिता को अच्छे अभिशासन के लिये अति आवश्यक माना है भारतीय प्रशासन इस सन्दर्भ में वचनबद्ध है।[4]

भारतीय सुशासन की दिशा में सूचना का अधिकार:

1. 12 अक्टूबर 2005 से जम्मू कश्मीर को छोड़कर सम्पूर्ण भारत में प्रभावी है।[5]
2. भारत सरकार ने सदैव अपने नागरिकों के जीवन को सुचारू व सुद्दढ़ बनाने पर बल दिया है।
3. आर.टी.आई का अर्थ है सूचना का अधिकार इसे संविधान की धारा 19 (1)के अन्तर्गत एक भूल-भूत अधिकार बना दिया गया है।
4. धारा 19(1) के अन्तर्गत प्रत्येक नागरिक को बोलने, विचार अभिव्यक्ति , शासकीय कार्यो के सार्वजनिक सूचना प्राप्ति का अधिकार प्राप्त है।
5. प्रत्येक नागरिक को भुगतान के रूप में दी गई राशि के बारे में जानने का अधिकार है कि उनके द्वारा दी गई राशि का उपयोग कैसे किया जा रहा है।
6. ये सरकार से प्रश्न पूछने का अधिकार देता है और इसमें टिप्पणियां, सारांश अथवा दस्तावेजों या अभिलेखों की प्रमाणित प्रतियां या सामग्री के प्रमाणित नमूनों की माँग की जाती है।
7. प्रशासन नागरिकों द्वारा माँगे जाने वाली सूचना देने के लिये विलम्ब या मना करती है तो नागरिकों इसका जबाव माँगने का अधिकार है।[6]

अधिनियम के प्रमुख उद्देश्य:

1. लोक प्राधिकारियों के कार्यकरण में पारदर्शिता लाना तथा उनके उत्तरदायित्व में संवर्धन करना।
2. लोक प्राधिकारियों के नियंत्रणाधीन सूचना तक पहुँच सुनिश्चित करना।
3. नागरिकों के सूचना के अधिकार की व्यावहारिक शासन पद्धति स्थापित करना।
4. केन्द्रीय सूचना आयोग तथा राज्य सूचना आयोगों का गठन करना।
5. भ्रष्टाचार उन्नमूलन का प्रयास।
6. शासन तथा उसके उपक्रमों को उत्तरदायी करना।
7. संस्कारों का दक्ष प्रचालन सुनिश्चत करना।
8. सीमित राज्य वित्तीय संसाधनों का अधिकतम उपयोग करना।
9. संवेदनशील सूचनाओं की गोपनीयता बनाये रखना।
10. विरोधी हितों के बीच सामंजस्य स्थापित करना।[7]

नागरिकों के अधिकार पत्र के माध्यम से सुशासन की स्थापना:

1. आर्थिक एवं सामाजिक सतत् विकास के लिये सुशासन आवश्यक है सुशासन के लिये तीन आवश्यक घटक है प्रशासन में पारदर्शिता, जबाव देही और उत्तरदायित्व। सर्वप्रथम ब्रिटेन में नागरिक अधिकार पत्र का प्रारम्भ 1991 में जारी एक श्वेत पत्र के माध्यम हुआ जो कि भूतपूर्व प्रधानमंत्री जॉन मेजर के विचारों की उपज थी।
2. 1991 में जारी श्वेत पत्र के अनुसार इस में सार्वजनिक सेवा के 06

सिद्धांत सम्मिलित थे। मापदण्ड का खुलापन, पारदर्शिता, सूचना, विकल्प या स्वैच्छिक चुनाव, निष्पक्षता एवं सुलभता। ये सभी तत्व भारतीय प्रशासन में लक्षित होते हैं।

3. नागरिक अधिकार पत्र नागरिकों के प्रति संगठन के प्रतिबद्धता पर केन्द्रित एवं व्यवस्थित प्रयास का प्रतिनिधित्व करता है, जो सेवाओं की गुणवत्ता, सूचनाओं विकल्प और परामर्श गैर भेदभाव और पहुँच शिकायत, निवारण, शिष्टाचार से सम्बन्धित है।
4. भारतीय प्रशासन में नागरिक अधिकार पत्र के माध्यम से जन जागरूकता और प्रशासनिक पारदर्शिता को सुनिश्चित किया गया है।
5. 1996 में नई दिल्ली में राज्यों के मुख्य सचिवों के सम्मेलन में पहली बार प्रशासन को पारदर्शिता एवं जबावदेही बनाने का निर्णय लिया गया इसके कुछ समय अन्तराल में 24 मई 1997 को मुख्यमंत्रियों का एक सम्मेलन 'प्रभावी तथा उत्तरदायी प्रशासन' विषय पर आयोजित किया था।[8]

सरकार द्वारा सुशासन लाने के लिये नागरिकों के नौ सूत्रीय कार्यक्रम:

1. नागरिकों के लिये अधिकार पत्र एवं जबावदेही प्रशासन बनाया गया।
2. ग्रामीण एवं शहरी निकायों को अधिक से अधिक सत्ता विकेन्द्रित की गई।
3. प्रवर्तित कानूनों और प्रक्रियाओं की समीक्षा और सरलीकरण किया गया।
4. प्रशासन में पारदर्शिता को अपनाने का पूर्ण प्रयास किया गया।
5. लोक सेवकों के लिये आचार संहिता का प्रावधान किया गया है।
6. कार्मिकों के कार्यकाल का स्थायित्वकरण किया गया है।
7. सेवाओं का विकेन्द्रीकरण किया गया।
8. प्रभावी एवं त्वरित लोक शिकायत निवारण का प्रभावी प्रावधान।
9. लोक सेवा पाने का अधिकार।

सुझाव:

1. मंत्रियों, अधिकारियों एवं राजनीतिज्ञों के द्वारा आचार संहिता पालन में नैतिक मूल्यों का संचार किया जाये।
2. गरीबी, बेरोजगारी, विषमता को दूर करने की परम आवश्यकता है।
3. भ्रष्टाचार का उन्मूलन कर, संस्कारों के विकास एवं आदर्शो की स्थापना कर दैनिक जीवन में अपना कर सुशासन का विकास की पहल की जा सकती है।
4. प्रशासनिक पद्धतियों का सरलीकरण किया जाये ताकि भ्रष्टाचार, अधिकारों का रूखा व्यवहार का निवारण सम्भव हो सके।
5. भ्रष्टाचार विरोधी कानून में विनिर्धारित कठोरात्मक दण्ड की व्यवस्था का ईमानदारी से पालन किया जाये।
6. न्याय प्रक्रिया को विलम्बकरण से बचाया जाये।
7. भ्रष्टाचारी नेताओं व अधिकारियों के साथ कठोर दण्ड की व्यवस्था के साथ-साथ उनमें सामाजिक व्यवस्था के प्रति सद्भावना नैतिक मूल्यों का विकास किया जाना चाहिये
8. नैतिकता को ध्यान में रखते हुए निष्पक्ष योग्यता के आधार पर नियुक्तियां की जायें।
9. प्रत्येक नागरिकों को अपने अधिकारों व कर्तव्यों का सद्ज्ञान होना चाहिये।

उपसंहार- स्पष्ट है कि स्वतंत्रता के बाद भारत के प्रथम व द्वितीय प्रशासनिक सुधार क्रमश: 1964, 2005, राज्यों में लोकायुक्त जिला सतर्कता अधिकारी, सेवाओं के प्रदान की गांरटी अधिनियम आदि अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाये गये है जिनकी प्रभाव की विफलता को भी देखा गया है किन्तु सुझावास्थास्वरूप अन्य जिन सुझावों में ध्यान दिलाया गया है आम नागरिक, अधिकारी वर्ग, नेता वर्ग उन सुझावों को अपनाकर सुशासनात्मक व्यवस्था को राज्यों और देश को अधिक सुदृढ़ बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकते है, साथ ही साथ प्रशासन को कठोर कानून बनाने चाहिए और इनके उत्लखंन करने वाले को दण्ड व्यवस्था का सख्ती से पालन किया जाये, पुन: जिससे देश में सुशासन फलीभूत हो सकता है जबकि प्रत्येक नागरिक का देश में सुशासन स्थापन, भ्रष्टाचार निवारण, सामाजिक जीवन में आपराधिक प्रवृत्तियों की जगह नैतिक मूल्यों का संचार, शिक्षा का प्रचार-प्रसार, सरकार का विकाकात्मक योजनाओं का अधिक प्रयोग करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महेश कुमार वर्णमाला, 'भारतीय संविधान एवं राजव्यवस्था ' NCERT" OSMOS प्रकाशन TM No. 01181859 दिल्ली - 110009
2. डॉ. बी.एल., फाडिया, 'राजनीति विज्ञान' प्रश्नपत्र-02, प्रतियोगिता साहित्य सीरिज, प्रकाशन साहित्य भवन, आगरा-28007 उत्तरप्रदेश।
3. राजेश मिश्रा 'राजनीति शास्त्र' एक समग्र अध्ययन प्रकाशन सरस्वती खअड दिल्ली - 110009.
4. अरूण दत्त शर्मा, कुमार आशुतोष व नवीन विनीत, 'राजनीति विज्ञान' प्रश्न पत्र II व III प्रकाशन अरिहंत पब्लिकेशन (इण्डिया) लिमिटेड, नई दिल्ली, 110002
5. श्वेता मिश्रा, नागरिक नीति और प्रशासन, मनोज सिंह (सम्पादक), 'प्रशासन एवं लोक नीति', पृष्ठ 274.
6. 'सामान्य ज्ञान', किरण प्रकाशन दिल्ली-110034.
7. डॉ. जे.सी.जौहरी, 'राजनीति विज्ञान' नवीन संस्करण, प्रकाशक - एस बी पी डी पब्लिकेशन, आगरा - 282002.
9. Net RAS MAINS, Chenal नागरिक अधिकार पत्र Smart Student.
10. डॉ. बी.एल. फड़िया, 'लोक प्रशासन' प्रकाशन साहित्य भवन, 2015, 22वाँ संस्करण आगरा-282007.

****

मानवतावाद और नीतिपरक राजनीति

डॉ. सोमवती शर्मा *

शोध सारांश – नीति और राजनीति आत्मा एवं शरीर की भाँति परस्पर सम्बद्ध हैं। 'नीति' राजनीति को दिशा, ऊर्जा एवं प्राण-तत्त्व प्रदान करती है। नीतिविहीन राजनीति प्रज्ञाहीन होकर दुष्चरित्र लोगों के हाथ पड़ जाती है। नैतिक मूल्यों से विहीन राजनीति समाज का केवल अहित ही कर सकती है, कल्याण नहीं। मानवीय मूल्यों-प्रेम, सत्य, सेवा, सद्कार्य, विवेक एवं संवेदनशीलता से प्रेरित एवं ओत-प्रोत होकर ही राजनीति समाज के लिए समृद्धकारी हो सकती है। मूल्यहीन राजनीति समाज को विनाश की ओर ले जाती है। जिस राजनीति में मानवीय समता, भ्रातृत्व, स्वतन्त्रता एवं सद्भावना का उद्घोष नहीं होता, वह समाज में केवल शोषण, अपराध, भेदभाव, साम्प्रदायिक वैमनस्य को ही जन्म दे सकती है क्योंकि उसकी नींव सत्य और सेवा पर नहीं रखी जाती है।

शब्द कुंजी – संवेदनशीलता, वैमनस्य, सांप्रदायिकता, विचारशून्यता, मूल्यहीनता, अन्तर्विरोध, भौतिकवादी, उपभोक्तावाद, नैतिकता, द्वैतवाद, पराकाष्ठा, सार्वभौमिक नीतिशास्त्रीय, अभिव्यक्ति, यर्थाथवाद, मानदण्ड, जनतान्त्रिक, समाजवाद, उरदायित्व, भ्रष्टीकरण, उपभोगवादी, अपरिपक्व, सिद्धान्तहीनता।

प्रस्तावना – राजनीति समाज का दर्पण है। यह जीवन के प्रत्येक पहलू से जुड़ी है। राजनीति सम्पूर्ण समाज में व्याप्त है। राजनीति से बाहर कुछ भी नहीं है। जल, जंगल, जमीन, सम्पदा, शिक्षा, संस्कृति, उद्योग, वाणिज्य, चरित्र, सोच, सत्ता, प्रशासन आदि सभी कुछ राजनीति से निर्णीत एवं प्रभावित है। समाज के सम्पूर्ण परिवेश को राजनीति घेरे हुए है।

सत्ता के साथ सब चीजें नकल होनी शुरू हो जाती हैं। सत्ताधिकारी जो करता है, वह सारा मुल्क करने लगता है। तो राजनीति पर तो अत्यन्त शुद्धि की जरूरत है। वहाँ सबसे ज्यादा जरूरत है, कि अच्छा आदमी वहाँ हो। जब अनुयायी को यह पता चल जाये, कि सब नेता बेईमान हैं, तो अनुयायी को कितनी देर तक ईमानदार रखा जा सकता है ? अच्छे आदमी के राजनीति में आने से आमूल परिवर्तन होने लगेंगे। फिर अच्छे आदमी की यह खूबी है कि वह कुर्सी को पकड़ नहीं लेगाय क्योंकि अच्छा आदमी कुर्सी की वहज से ऊंचा नहीं हो गया है। ऊंचा होने की वजह से उसे कुर्सी पर बिठाया गया है। भारत के राजनीति परिदृश्य पर दृष्टि डालने से स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय की 'राजनीति विचारशून्यता एवं मूल्यहीनता' की शिकार है और इसलिए गहरे अन्तर्विरोध, गतिरोध तथा चारित्रिक संकट में फँसती चली जा रही है। भारत के राजनीतिक दल अपनी-अपनी विचारधारा की बात करते हैं। वैचारिक सामंजस्य समाप्त हो गया है। सभी दल व नेता जनता को अपने पक्ष में रिझाने की कोशिश कर रहे हैं। सत्ता प्राप्ति के लक्ष्य ने जन कल्याण के महत्त्वपूर्ण लक्ष्य को ग्रस लिया है। भारत का राजनीतिक संकट और अधिक गहरा होता जा रहा है। सम्पूर्ण राजनीतिक व्यवस्था धार्मिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक पतन के कुहासे में डूबती जा रही है।

देश का राजनीतिक संकट सिर्फ राजनीतिक भ्रष्टाचार, अपराधीकरण, सांस्कृतिक विच्छिन्नता अथवा जातिवाद के जहर के कारण उत्पन्न नहीं हुआ है, वरन् इसका प्रमुख आधार नैतिक मूल्यों के ह्रास में निहित है। अध्यात्म के जीवन-सत्यों एवं नैतिकता को बिसराकर भौतिकवाद की तरफ बढ़ते कदमों ने राजनीति के स्वरूप को अमानवीय बना दिया है। प्रेम सिंह लिखते हैं कि 'भारत के राजनीतिक संकट का सबसे महत्त्वपूर्ण आयाम एक निर्णायक विचारधारा के रूप में पूँजीवादी उपभोक्तावाद की प्रतिष्ठा है।'

राजनीतिशास्त्र और नीतिशास्त्र – कोई भी राजनीति 'नीति' के दायरे से परे नहीं हो सकती। 'नैतिकता' राजनीति का मूलाधार है। जो लोग दोहरी नैतिकता के सिद्धान्त को अपनाते हैं, वे राजनीति को व्यवसाय में बदल देते हैं। आज साध्य और साधनों में अन्तर करके किसी भी प्रकार उद्देश्यों को पूरा कर लेने की सामान्य प्रवृत्ति बनती जा रही है। राजनीतिज्ञ केवल अपने कार्यक्रमों की सफलता में ही उत्सुक नजर आते हैं, जन सेवा या कल्याण में नहीं। वे अनैतिक साधनों के द्वारा भी अपना ध्येय पा लेना चाहते हैं। किन्तु राजनेताओं की कोई भी सफलता केवल राजनीतिक नहीं हो सकती, यह नैतिक भी होना चाहिए।

रीनहोल्ड नेबर का मत है कि चूँकि मानव लक्ष्यों व प्रेरकों के बारे में बाहर से मूल्यांकन करना बहुत कठिन होता है, अत: किसी कार्य या नीति के 'सामाजिक परिणामों' को ही इनकी नैतिकता की वास्तविक कसौटी मानी जानी चाहिए, इसके अप्रकट लक्ष्यों को नहीं।

यदि राजनीति का क्षेत्र खुला, स्वतन्त्र व नियन्त्रण के बाहर होगा तो ऐसी राजनीति में अनिवार्यत: कई बुराइयाँ प्रवेश करेंगी और धीरे-धीरे यह 'अनैतिक राजनीति' का रूप धारण कर लेगी। ऐसी राजनीति व्यक्तियों को खुली चेतना से अपराध करने के लिए प्रेरित करेगी। फलस्वरूप, राजनीति और नीतिशास्त्र में अन्तर बढ़ता जायेगा।

नीतिशास्त्रीय प्रजातंत्रीय समाजवाद – 'राजनीतिकव्यवस्था' सामाजिक व्यवस्था का एक आवश्यक आयाम है। राजनीति का सम्बन्ध शक्ति के प्रशासन से है। राजनीतिक जीवन के स्वरूप शक्ति की प्रकृति और वितरण के अनुसार तथा उन सीमाओं, जिनके भीतर व्यक्ति-समूह शक्ति प्राप्त करते है एवं शक्ति का उपयोग करते है, के अनुसार भिन्न-भिन्न होते हैं। लेकिन

* सह आचार्य (राजनीति विज्ञान) राजकीय कला कन्या महाविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

'शक्ति' मूल्यों से पृथक् नहीं की जा सकती क्योंकि शक्ति की प्रकृति, जो कि राजनीतिक परिदृश्य पर अपना प्रभुत्व रखती है, विकास की प्रक्रिया का एक आयाम है और जो व्यक्ति को सदैव सम्बन्धों के नये स्वरूप प्राप्त करने में सहायक होती है। व्यक्तियों के आपस में जुड़े होने के कारण शक्ति और मूल्य भी अन्तर्सम्बन्धित होते हैं। मूल्यों की प्राप्ति के लिए शक्ति की जरूरत होती है तथा शक्ति के उपयोग का तात्पर्य मूल्यों से है। अत: शक्ति सम्बन्धों का आशय उन मूल्यों के प्रकार्य से है जो व्यक्तियों के आपसी सम्बन्धों में निहित होते हैं। राजनीतिक व्यवस्था जीवन का पृथक् क्षेत्र नहीं है वरन् सामाजिक व्यवस्था की पराकाष्ठा एवं चरम बिन्दु है क्योंकि यह जीवन की सबसे अधिक व्यापक एवं सुस्पष्ट अभिव्यक्ति है। इस कारण से राजनीति के क्षेत्र में प्राकृतिक नियमों एवं सार्वभौमिक सिद्धान्तों एवं मानदण्डों की उपेक्षा नहीं की जा सकती है।

नीतिशास्त्रीय जनतान्त्रिक समाजवाद की अवधारणा यह मानती है कि समाज में व्याप्त बुराइयों को तभी समाप्त किया जा सकता है जबकि इसके सदस्यों में 'धर्म' अर्थात् अपने कर्तव्य के निर्वाह की भावना विकसित हो। ऐसे समाज के सभी सदस्यों विशेषकर राजनीतिज्ञों का यह कर्तव्य होना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति के कल्याण एवं खुशहाली के लिए कार्य करें। हमारा कर्तव्य वही है कि 'हमें क्या उचित करना चाहिए और 'चाहिए' की भावना में सम्पूर्ण नीतिशास्त्र निहित है। अत: राजनीतिक संगठनों को केवल नौतिशास्त्रीय भावना से एवं नैतिक सिद्धान्तों के आधार पर ही आचरण करना चाहिए। नीतिशास्त्रीय-जनतान्त्रिक समाजवाद में 'राज्य' आन्तरिक एवं बाह्य सुरक्षा तथा सामूहिक संसाधनों के उचित प्रबन्ध और उपयोग के लिए कार्य करता है ताकि समाज के सदस्यों के सामान्य कल्याण में वृद्धि की जा सके। नैतिक एवं प्रजातंत्रीय राज्य 'शक्ति' पर आधारित नहीं होगा, यद्यपि कभी-कभी आवश्यक होने पर उस दशा में जबकि सामाजिक अव्यवस्था को रोकने व नैतिक मूल्यों के विकास के लिए उपयुक्त वातावरण का निर्माण करना आवश्यक हो, राज्य शक्ति का प्रयोग कर सकता है। यह राज्य न तो अधिनायकवादी होगा और न ही पूँजीवाद समाज में सम्पत्ति की विषमताओं के कारण अपराधों को बढ़ाने वाला होगा। यह राज्य सुधारवादी होगा जो मानवीय कमजोरियों को दूर करेगा। नैतिक- जनतन्त्रीय राज्य अपनी शक्ति का प्रयोग न केवल नैतिक उद्देश्यों के लिए करेगा वरन् शक्ति को नैतिक ढंग से भी प्रयोग में लायेगा।

प्रजातन्त्र की समाज में शक्तियाँ - इस प्रकार नैतिक एवं जनतन्त्रीय समाज में शक्ति का प्रयोग पूर्ण रूप से जासूसों एवं पुलिस के हाथों में नहीं दिया क्योंकि इसके प्रयोग का उद्देश्य 'सहयोग' प्राप्त करना है जो कि स्वतन्त्र नागरिकों द्वारा स्वतन्त्र वातावरण में ही देना सम्भव है। इसके लिए हमें सामाजिक चेतना जाग्रत करनी होगी, आत्मिक सहयोग देने के लिए सांस्कृतिक प्रेरणा देनी होगी तथा एक 'आध्यात्मिक लालसा' उत्पन्न करनी होगी जो प्रतिबन्धित, कठोर एवं श्रम-साध्य कर्तव्य के निर्वाह को भी एक 'आनन्द' में बदल देगी।

नीतिशास्त्रीय जनतंत्रीय समाजवाद व्यक्ति की आन्तरिक एवं आध्यात्मिक समानता में विश्वास करता है क्योंकि यह 'मानवता' को सदैव 'साध्य' के रूप में देखता है, साधन के रूप में नहीं। ऐसे समाज में सरकार सभी व्यक्तियों की खुशहाली के लिए कार्य करती है। सरकार यह लक्ष्य 'उत्तरदायित्वपूर्ण आजादी' की अवधारणा के माध्यम से प्राप्त करती है जिसमें राज्य सभ्यता का एक सच्चा उपकरण बनकर अपने नागरिकों के लिए सामाजिक उत्तरदायित्व का आदर्श प्रस्तुत करता है।

ऐसे समाज में व्यक्ति को स्वतन्त्र एवं प्रसन्न रहने का समान अवसर उपलब्ध रहता है। यह राजनीतिक प्रस्थिति, नैतिक अवधारणा तथा सामाजिक दशा कृ इन तीनों का मिश्रण है। यह भावात्मक समानता को प्राकृतिक असमानता के तथ्य के साथ समायोजित करने का प्रयास करता है। इसी समाज में व्यक्ति को स्वराज के लक्ष्य की प्राप्ति होती है और वह अपने लिए सर्वोकृष्ट कल्याण को प्राप्त कर सकता है। ऐसे समाज में उसके न्यायोचित अधिकारों का उल्लंघन नहीं हो सकता, उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है तथा यह वैयक्तिक उत्तरदायित्व व स्व-सहायता की दिशा में उपलब्ध श्रेष्ठ सहायता है।

वर्तमान प्रजातन्त्र की अनेक कमियाँ है। यह नागरिक स्वतन्त्रता के विरुद्ध है, दल-पद्धति से बहुमत का अत्याचार बढ़ता है। यह अत्यधिक धीमे विकास एवं अयोग्यता को बनाये रखने की पद्धति है। यह संख्या-बल, अनुत्तारदायित्व तथा शौकिया एवं अपरिपक्व राजनीतिज्ञों को बढ़ावा देती है। इसमें सिद्धान्तहीनता, अपव्यय, भ्रष्टाचार, रिश्वतबाजी, भाई-भतीजावाद, भ्रष्ट आचरण, भौतिकवाद, उपभोगवादी दृष्टि, सम्पत्ति निर्माण, चापलूसी, लोभ-लालच, चरित्रहीनता, आध्यात्मिक अवमूल्यन आदि बुराइयाँ तेजी से पनपती हैं। इन सब विकृतियों को रोकने का एकमात्र प्रभावी उपाय 'नीतिशास्त्रीय प्रजातंत्र' की स्थापना करना है।

राजनीतिक प्रजातंत्र की पद्धति - भारत में पाश्चात्य राजनीतिक प्रजातंत्र की पद्धति की नकल की गई जो जहाँ स्वीकार्य नहीं है क्योंकि यह नागरिकों पर भ्रष्टीकरण एवं नैतिक पतन का प्रभाव डालती है। यह पद्धति भौतिकवादी दर्शन एवं सुखवादी प्रमापों पर आधारित है। इसमें राजनेताओं की निष्ठा अदृश्य ईश्वर के प्रति नहीं, वरन् 'चमकीले स्वर्ण' के प्रति होती है। शक्ति और मुद्रा भारतीय राजनीति में नैतिक संकट ही उनका भगवान होता है। वे सत्ता के लालच में झूठे आदर्शों को स्वीकार करते हैं तथा 'मूल्यों का मूल्यान्तरण' करते हैं। तथाकथित प्रजातंत्र सम्पूर्ण समाज को विभिन्न दलों में बाँट देता है।

दलीय प्रणाली से समाज में घृणा, संघर्ष, प्रतिस्पर्धा, कर्तव्यों की उपेक्षा, दायित्वहीनता, चरित्र-हनन, अप०' एवं बर्बादी बढ़ती है। दलीय पद्धति से प्रत्याशी का सही चयन संभव नहीं होता। यह वैयक्तिकता को कुचल देती है। यह सम्पूर्ण राजनीति को अधम घृणित बना देती है। प्रजातांत्रिक प्रणाली का सबसे बुरा पहलू राजनीतिज्ञों के चरित्र हनन एवं विवेकपूर्ण एवं आध्यात्मिक तत्तवों की अनुपस्थिति से जुड़ा है।

यदि हमें शासकों को गुणी, विद्वान् एवं सुसंस्कृत बनाना है तो शासन के उच्च स्तरों पर विवेकशील विचारकों को स्थान देना होगा जो जीवन में नैतिक नियमों का संचार करते हैं। उत्कृष्टता विशिष्ट होती है। नीतिशास्त्रीय प्रजातन्त्र उन व्यक्तियों को नीति निर्माण का कार्य नहीं सौंपता है जो नैतिक नियमा से अपरिचित होते हैं। इसमें उन व्यक्तियों को ही प्रशिक्षित करके आगे लाया जाता है जो नेतृत्व प्रदान करने के लिए अधिक योग्य होते हैं। नीतिशास्त्रीय प्रजातांत्रिक समाज में राजनीतिज्ञ भौतिक चिन्ताओं व प्रतिस्पर्धा से मुक्त होंगे तथा उनमें कर्तव्य की भावना सदैव माजूद रहेगी। राजनीतिज्ञों का यह समूह विशेषज्ञों जैसे दक्ष किसान, वैज्ञानिक शिक्षाशास्त्री, नीतिविद्, आध्यात्मिक सन्त आदि से गठित होगा जो ज्ञान, अनुभव चरित्र के धनी होंगे। इनका चयन समाज में गुप्त सूचनाओं व जाँच के आधार पर होगा। ये समाज एवं राज्य को व्यापक मार्गदर्शन देने वाले लोग होंगे। ये अति विवेकशील एवं नैतिक नियमों के ज्ञाता होंगे।

नीतिशास्त्रीय प्रजातांत्रिक राजनीतिक तंत्र में प्रधान मंत्री के भेष में

कोई तानाशाह नहीं होगा जिसके चारों ओर सरकारी तंत्र चक्कर लगाता है। वहाँ कोई दलीय राजनीति नहीं होगी। वहाँ कोई दलीय प्रचार, चुनावी रणनीति, दलीय अध्यक्ष की आवाज, राजनीतिक अनुयाचन, पक्षप्रचार, अवांछनीय हथकंडे जैसे तरीके नहीं अपनायें जायेंगे। चुने हुए सदस्यों में से नीति निर्धारकों का समूह गठित होगा जो कि केवल योग्यता के आधार पर चयनित होगा। ऐसी राजरी ते व्यवस्था में 'दलीय अनुशासन', 'दलीय कार्यवाही', 'दलीय प्रमुख निर्देश या इच्छा' अथव। चापलूस कार्यकर्ता जैसी परम्परायें नहीं होंगी।

भावी दृष्टि-मानवातावादी एवं नीतिपरक राजनीति – भविष्य अनेक चुनौतियों व नैतिक खतरों से भरा होगा, इसमें कोई संशय नहीं है। राजनीतिक तंत्र में अवमूल्यन की गति, स्तर व सीमा क्या होगी, इसका पूर्वानुमान भी कठिन है। किन्तु भारतीय राजनीति की दिशा नैतिक मूल्यों के विघटन की ओर है और यह सतर्क एवं जागरूक हो जाने का संकेत भी है। आज भारतीय राजनीति आशंकाओं, अनिश्चितताओं, विफलताओं, वर्जनाओं, विकृतियों, विषाद, सम्भावनाओं एवं अवसरों के बीच लड़खड़ाती हुई। खड़ी है। भारत की मौजूदा राजनीतिक दु:स्थिति का निराकरण संभव है। यह अपने स्वर्णिम दौर से भी गुजरी है। भारत के राजनीतिक चिन्तन ने विश्व को भी दिशा दी है।

जब कभी राजनीति 'शक्ति' पर केन्द्रित होने लगती है अथवा 'सत्ता' के चारों ओर घूमने लगती है, नैतिक मूल्यों के अवमूल्यन की समस्या खड़ी हो जाती है। अत: राजनीति में इस पर विचार करना कि 'शक्ति' को कैसे संचालित, विभाजित अथवा वितरित किया जाये, एक नीतिशास्त्रीय समस्या है। शक्ति के सही उपयोग अथवा दुरुपयोग के व्यापक एवं निश्चित नैतिक निहितार्थ हैं।

'नैतिकता' निजी जीवन के साथ-साथ राजनीतिक व्यवहार का भी आदर्श एवं कसोटी मानी जानी चाहिए। व्यक्तियों और नागरिकों के रूप में हमारी अपेक्षायें एवं आदर्श समान होते हैं। घर और राष्ट्र की सुरक्षा एवं शान्ति समान रूप से महत्त्वपूर्ण होती है। निजी एवं राजनीतिक सम्बन्धों को विकसित करने की स्वतन्त्रता भी हमारी संस्कृति का ही अंग है तथा व्यक्ति के आदर्शों व स्वतन्त्रताओं की रक्षा राज्य के नैतिक व्यवहार, नीतिगत सोच एवं नीतिशास्त्रीय आचरण पर ही निर्भर है।

राजनीति और नीतिशास्त्र का समन्वय एवं सुमेल – मेक्स वेबर ने नीतिशास्त्र-प्रवृत्त आचरण के दो सिद्धान्तों का वर्णन किया हैकृएक है 'उत्तरदायित्व की नैतिकता' तथा दूसरा है 'परम लक्ष्य की नैतिकता'। जो लोग परम लक्ष्य की नैतिकता में विश्वास करते हैं, वे अपनी क्रियाओं के परिणामों पर ध्यान नहीं देते तथा वे कार्यों के परिणामों के प्रति उत्तरदायित्व को अस्वीकार करते हैं। वे केवल तभी अपने को 'उत्तरदायी' समझते हैं जब उनके पवित्र उद्देश्यों की प्यास नहीं बुझती। वे सामाजिक व्यवस्था में अन्याय का विरोध करते हैं। 'उत्तरदायित्व की नैतिकता' में विश्वास करने वाले व्यक्ति अपने कार्यों के परिणामों का पूर्वानुमान करके व्यवहार करते हैं तथा उनके प्रति अपने उत्तरदायित्व को स्वीकार करते हैं।

वेबर का विचार है कि जीवन के नैतिक विरोधाभासों से बचा नहीं जा सकता तथा अपने निर्णयों व कार्यों का उत्तरदायित्व भी व्यक्ति को स्वीकार करना चाहिए। वेबर ने राजनीति के क्षेत्र में 'व्यक्तित्व चमत्कार' की अवधारणा का प्रयोग करते हुए 'परम लक्ष्यों की नैतिकता' तथा 'उत्तरदायित्व की नैतिकता' के भेद को पाटने पर बल दिया है। वे राजनीति में इन दोनों सिद्धान्तों के संयोजन को उचित मानते हैं। उनका मत है कि 'राजनीति का संचालन मस्तिष्क से होता है, किन्तु यह निश्चित रूप से अकेले मस्तिष्क से ही संचालित नहीं होती। इसमें जन इच्छाओं, दूर दृष्टि, अपेक्षाओं, अदम्य साहस एवं नैतिक निर्णयों की भी आवश्यकता होती है।'

'राजनीति' वैयक्तिक सम्बन्धों में भाईचारा विकसित करने से कुछ अधिक है। यह सख्त लट्ठों का सुदृढ़ भेदन करने जैसी प्रकिया है। यह सभाव्य को प्राप्त करना है क्योंकि कई बार व्यक्ति असंभव को प्राप्त हो जाता है। वास्तव में, राजनीतिक समस्याओं के भेदन एवं निराकरण के लिए तथा राजनीति में नवप्रवर्तन एवं सृजनात्मकता के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए नैतिकता, उत्तरदायित्व, जन कल्याण, प्रभावशीलता तथा नैतिक एवं परिपूर्ण आचरण की आवश्यकता होती है।

हम मूल्यों के रूपान्तरणकारी युग से गुजर रहे हैं। आज राजनीति में सन्देह, अनास्था, अविश्वास, उपद्रव, अपराध, नैतिक विघटन और निराशा का वातावरण बना हुआ है। राजनीतिक मूल्यों का विघटन जारी है। अध्यात्म, नीति और धर्म के सिद्धान्तों का अनुसरण करके ही राजनीति के चारित्रिक व नैतिक हास को रोका जा सकता है। निश्चित ही मौजूदा राजनीतिक विकृतियों ने सम्पूर्ण राष्ट्र-तंत्र को कम्पित कर दिया है। फिर भी देश के थके-हारे आहत नागरिक की राजनीतिक चेतना एवं अन्तर्विवेक अभी अवरुद्ध नहीं हुए हैं। उम्मीद करनी चाहिए कि भारतीय राजनीति भौतिकवाद, स्वार्थवाद, अवसरवाद, अपराध, साम्प्रदायिक विष, भावात्मक शोषण व सत्ता भोग की छद्मवेशी नीति को त्यागकर आज नहीं तो कल यह देश राजनीतिक बिखराव, लोकतांत्रिक अध:पतन, राजनीतिक विच्छिन्नता, तथा आम नागरिक में बढ़ती राजनीतिक अनास्था, अन्तर्कलह एवं अपसंस्कृति के उपचार हेतु गहन निद्रा से जाग उठेगा।

निष्कर्ष – राजनीति के शिखर पुरुष अटलबिहारी वाजपेयी के विचारों पर केन्द्रित करते हुए यह कहा जा सकता है कि जब कोई नैतिक पुरुष एवं नीतिशास्त्री राजनीति करेगा तो वह अधिक मानवीय एवं परिष्कृत होगी। यदि राजनेता की पृष्ठभूमि नैतिक मूल्यों एवं आचरण से परिपूर्ण है तो वह मानवीय संवेदनाओं को नकार नहीं सकता। जब कभी सन्त, आध्यात्मिक पुरुष, आत्म-तृप्त अथवा नैतिक संस्कारों से परिमार्जित व्यक्ति राजनीति में पहुँचता है तो वह निर्दोष मानवीयता के खून से अपने हाथ नहीं रंगेगा। उसका हृदय दया, करुणा, क्षमा और प्रेम से आपूरित होगा, अत: उसका राजनीतिक कर्म अपने परम उद्देश्य से विमुख नहीं होगा, उसकी राजनीति व्यवसाय नहीं, वरन् मानव, समाज और राष्ट्र के लिए सेवा, त्याग और आत्म-तृप्ति का माध्यम होगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. एस. राधाकृष्णन् 'ईस्टर्न रीलिजन एण्ड वेस्टर्न थॉट', पृ. 362
2. राजगोपालाचारी, 'वेदान्त इन इन्डियन इनहेरिटेंस', पृ. 176
3. राधाकृष्णन् एस, 'रिलिजन एण्ड सोसायटी', पृ. 97
4. ओशो रजनीश, 'भारत के जलते प्रश्न', पृ. 443
5. उपर्युक्त, पृ.सं. 490-491

****

Impact of Media on Public Opinion in India

Dr. Sandhya Jaipal*

Abstract - Media is a means of communication such as television, radio, newspapers, magazines and the Internet that reaches a large audience. It plays an important role in influencing public opinion and shaping public debate by providing information, analysis, and opinion on current events and political issues. Media plays an important role in influencing public opinion and shaping public debate by providing information, analysis, and opinion on current events and political issues. It helps to inform and educate people, allowing them to make informed decisions and form opinions on important topics. It can also be used to influence public opinion, either through direct promotion of certain views, or through framing an issue in a particular way. Media can also be used to shape public opinion on topics such as foreign policy and government policies. For example, media outlets may focus on certain aspects of a policy or event in order to influence public opinion. Media can also be used to influence the direction of political debate, by highlighting certain issues or points of view. The purpose of this paper is to examine the role of media in India in shaping public opinion and influencing policy decisions. It looks at the positive and negative effects of media on public opinion, as well as the challenges faced by media in India. The paper also discusses the importance of ensuring that the media is responsible and ethical in its reporting and practices, so as to maintain its credibility and protect the public from misinformation and fake news. Finally, the paper provides recommendations on how the government, media outlets, and public can work together to ensure that the media is used responsibly and ethically to shape public opinion and influence policy decisions.

Keywords: Media, Public opinion, India, Influence, News, Social media, Television, Radio, Print media, Political discourse, Election campaigns, Public perception, Social awareness, Democracy, Freedom of expression, Mass communication, News dissemination, Digital media, Information dissemination, News consumption.

Introduction - India is one of the most diverse and complex media environments in the world. It has over 500 television channels, more than 7,000 newspapers, and over 300 radio stations. The Internet is also growing rapidly, with over 800 million users in 2020. This influx of media has had a profound effect on public opinion in India.

The media landscape in India is dominated by mainstream television channels such as Doordarshan, Star India, Zee TV, and Sony Entertainment. These channels have enabled the spread of news, current affairs, and entertainment to millions of viewers. In addition, the increase in digitization and the rise of social media have further enabled the spread of news and opinion. This has helped shape public opinion in India, especially on topics such as politics and social issues.

The media in India has long been viewed as a powerful tool for shaping public opinion. It has been used by both the government and private entities to spread their messages and influence the public. As media becomes more accessible and technology advances, it is likely that the role of media in shaping public opinion in India will become even more important.

Media has a powerful influence on public opinion. It shapes the way people think and form opinions about different issues. Media can have both positive and negative effects on public opinion.

Positive Effects of Media on Public Opinion: Media plays an important role in creating awareness about different social and political issues. It helps to spread information about important issues and sparks debates and discussions on them. It can also help to create a better understanding of the different points of view on a particular issue.

1. Media can also be used to highlight the problems faced by marginalized sections of the society. It can be used to bring attention to the grievances of certain communities and to spark discussions on how to address these issues.
2. Media can also be used to promote civic engagement. It can be used to inform people about their rights and duties as citizens and to encourage them to be actively involved in the political process.
3. Media can also be used to promote positive values and ideas. It can be used to showcase the positive aspects of society and to inspire people to bring about positive change in their communities.
4. Media can also be used to promote understanding and tolerance. It can be used to highlight different cultures and lifestyles and to promote mutual respect and

*Associate Professor (Sociology) S.D. Govt. College, Beawar (Raj.) INDIA

understanding between different communities.

5. Media can also be used to promote a sense of solidarity and unity. It can be used to encourage people to come together in support of a cause or to stand up for their rights.
6. Media can also be used to educate people on different issues. It can be used to provide accurate and up-to-date information on different topics and to dispel myths and misconceptions.
7. Media can also be used to encourage critical thinking. It can be used to challenge people to think beyond the headlines and to form their own opinion on different issues.

Negative Effects of Media on Public Opinion: Media can have a profound effect on public opinion, and not always in a positive way. It can be used to distort facts and create false narratives. It can also be used to spread misinformation and manipulate public opinion. This is especially true in countries where media is heavily controlled by the government or political parties.

1. Media can also be used to spread hate or incite violence. This can be done through the use of inflammatory language or sensationalized stories. This can create a climate of fear and distrust, which can have a negative effect on public opinion.
2. Furthermore, media can be used to spread false information or conspiracy theories. This can lead to a misinformed public, which can lead to uninformed decision making. This can have a detrimental effect on public opinion and can lead to dangerous outcomes.
3. Media can also have a negative effect on public opinion by creating a "echo chamber" effect. This occurs when people are only exposed to one point of view, and this can lead to the formation of an ideological "bubble". This can lead to a lack of critical thinking, and can lead to the formation of extreme or rigid beliefs.
4. Media can also be used to create a sense of "groupthink", where people are afraid to express their own opinion if it differs from the majority. This can lead to a lack of diversity of thought, and can lead to the formation of dangerous public opinion.
5. Media can be used to spread false or misleading statistics. This can lead to inaccurate or skewed public opinion, which can lead to dangerous outcomes.
6. Media can also have a negative effect on public opinion by encouraging fear-mongering and "us vs. them" narratives. This can lead to a polarizing of public opinion and can lead to hatred and animosity between different groups of people.
7. Media can also be used to exaggerate or misrepresent facts and statistics. This can lead to a misinformed public, which can lead to poor decision making. This can have a detrimental effect on public opinion and can lead to dangerous outcomes.
8. Media can be used to create a "false consensus" effect. This occurs when people think that their opinion is the same as the majority, when in reality it is not. This can lead to a lack of critical thinking and can lead to the formation of extreme or rigid beliefs.

Role of Media in India

A. Role of media in shaping public opinion - The media plays an important role in shaping public opinion in India by providing people with information, which they use to form their own opinions. It is essential that media outlets provide accurate and unbiased information in order to ensure that public opinion is not swayed by any particular political or ideological agenda. They can also provide an opportunity for individuals to engage in constructive dialogue on important topics, which can help to shape public opinion. Additionally, the media can help to highlight certain issues, which can encourage people to take action.

Media outlets can also be used to create awareness on social, economic, and political issues. They can provide information on current affairs, government policies, and other important matters, which can help people make informed decisions. Additionally, media can be used as a tool to influence policy decisions made by the government. It can be used to highlight issues and create pressure on the government to address them, as well as build support for particular campaigns and policies. Moreover, the media can help to create a platform for dialogue and debate on important topics, which can help to shape public opinion.

B. Role of media in creating awareness - Media can be used to create awareness on various social, economic, and political issues. It can provide information on current affairs, government policies, and other important matters, which can help people make informed decisions. Media can be used to create awareness on various social, economic, and political issues. It can provide information on current affairs, government policies, international relations, public health, climate change, and other important matters. It can also be used to highlight the impact of certain policies, such as the demonetization in India, and the implications of various laws and regulations. In addition, it can be used to create awareness about the rights of citizens, and to promote social causes, such as gender equality and human rights. Media can also be used to create awareness about the role of citizens in a democracy. It can be used to inform people about the importance of voting, their rights and responsibilities as citizens, and how to become active participants in the democratic process. It can also be used to promote civic engagement and encourage people to get involved in issues that are important to them. In addition, media can be used to highlight the work of civil society organizations and encourage people to support their causes.

C. Role of media in influencing policy decisions - Media can be used as a tool to influence policy decisions made by the government. Media can be used to highlight issues and create pressure on the government to address them. It can also be used to build support for particular policies and campaigns, which can have an impact on the

decisions taken by the government. Additionally, media can be used to spread information about government policies, which can help people understand the impact of those policies on their lives. Finally, media can be used to hold the government accountable for its actions, ensuring that policy decisions are taken in the best interests of the people. Media can also be used to hold the government accountable for its actions. This can be done by providing detailed coverage of government policies, initiatives, and activities. This can help people understand how the government is using their tax money and whether or not it is being used for the benefit of the people. Additionally, media can be used to highlight cases of corruption and mismanagement within the government, which can help to ensure that policy decisions are taken in the best interests of the people.

Challenges for Media in India

- **Lack of credibility:** Credibility is one of the most important aspects of media. In India, the credibility of the media has often been called into question due to the proliferation of fake news and biased reporting. This can be attributed to the lack of regulation within the media industry, as well as the financial constraints that many media outlets face. This has resulted in a lack of trust among the public, leading to a decrease in viewership and readership. Additionally, the increasing influence of political parties on media outlets has further diminished the credibility of the media in India, as political interests often override journalistic integrity. This lack of credibility has been detrimental to the media's ability to shape public opinion, as the public is increasingly skeptical of the media's reporting.
- **Misinformation and Fake News:** Another major challenge for the media in India is the proliferation of misinformation and fake news. In the digital age, it has become easier than ever for false information to be spread quickly and widely. This is especially true in India, where social media platforms are increasingly being used to spread false information and manipulate public opinion. This has been especially detrimental during the Covid-19 pandemic, as misinformation and fake news have been used to spread fear and confusion among the public. Additionally, the amplification of certain perspectives by the media has further distorted public opinion, creating divisions and polarization. Thus, the media in India must be more vigilant in combating the spread of misinformation and fake news. There is a need for media outlets to take steps to ensure that their content is accurate and fact-checked. This is especially important in the current climate of social media and the proliferation of false information.
- **Increasing influence of political parties:** Political parties in India are increasingly using the media to influence public opinion. Political parties often use the media to promote their own agendas, and this can lead to biased coverage and a decrease in the media's credibility. Additionally, political parties often control the advertising budgets of media outlets, which can lead to further bias in the reporting. This has had a negative impact on the media's ability to shape public opinion, as the public is increasingly skeptical of the media's reporting. Furthermore, the increasing influence of political parties on the media has led to a decrease in the freedom of the press, as political interests have taken precedence over journalistic integrity.

Conclusion: The role of the media in India is of utmost importance, as it plays a major role in shaping public opinion and influencing policy decisions in the country. However, it is important to ensure that the media is responsible and ethical in its reporting and practices, as the credibility of the media is at risk due to the spread of misinformation and fake news. This can have a damaging effect on public opinion and policy decisions, and thus it is important to ensure that the media is held to a high standard of accuracy and accountability. In order to ensure the credibility of the media, it is important that the media be transparent and accountable in its reporting, and that it follows a code of ethics. The government should also take steps to create an environment in which the media can report responsibly and ethically. This can include introducing laws to protect journalists and media outlets from censorship, creating an independent media regulator, and providing incentives for ethical reporting. Furthermore, the public should be educated on the importance of responsible media consumption, as it is essential to ensure that public opinion is not shaped by unreliable and inaccurate sources of information.

References:-

1. Dutta, Somuya (2011), Social Responsibility of Media and Indian Democracy, Global Media Journal – Indian Edition/ Summer Issue / June 2011.
2. Singh. Gaurav & Nity. (2017). Role and Impact of Media on Society: A Sociological Approach with Respect to Demonstration, 10.13140/RG.2.2.36312.39685.
3. Chaudhari, Maitryee, (2010), Contribution to Indian Sociology, 44, 1&2 (2010), 57-78, Sage Publications.
4. Muntasir Murshed essay "Mass Media: Shaping identity of the Society" 2014.
5. Virginia Paul, Dr. Priyanka Singh, Dr. Sunita B. John "Role of Mass Media In social Awareness" International Journal of Humanities & Social Sciences Vol. 1 (01) August 2013, [ISBN 978-93-83006 -16-8] page 34-38.
6. Mr. Milind Awatade "Media And Social Change: Current Trends In India" 2014. www.srjis.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

The Role of NGOs and Civil Society in Addressing Social Issues in India

Dr. Anjali Jaipal*

Abstract - This research paper seeks to explore the role of NGOs and civil society in addressing social issues in India. Over the past few decades, NGOs and civil society organizations have come to play an increasingly important role in India, providing services to fill gaps left by inadequate government policies, providing support to marginalized and vulnerable communities, and advocating for social, economic and political change. The purpose of this paper was to discuss the background of non-governmental organizations (NGOs) and civil society organizations in India, the role they play in addressing social, economic and political issues, the challenges faced by these organizations, and the potential of NGOs and civil society in making a positive impact in the country. The paper highlighted the long history of philanthropy and community mobilization in India, and the increasing role of NGOs and civil society in shaping public policies and advocating for human rights and environmental protection. It discussed the various ways in which NGOs and civil society organizations empower marginalized communities, advocate for policies, provide essential services, monitor government policies, and foster community building. The paper also identified the main challenges faced by NGOs and civil society organizations in India, including a lack of funding, inadequate infrastructure, political interference, and resistance to change. Finally, it highlighted the potential of NGOs and civil society organizations to contribute to India's development, by providing basic services, promoting human rights, protecting the environment, creating jobs, and building the capacity of local communities.
Keywords- NGOs, civil society, social issues, poverty, inequality, human rights, healthcare, education, environmental protection, community development, empowerment, advocacy, social justice, sustainability, public policy, collaboration, partnership, empowerment, citizen engagement.

Introduction - India is a diverse country, with a population of 1.3 billion people representing a variety of religions, cultures, and languages. Despite the country's impressive economic growth in recent years, it is still home to some of the world's poorest and most vulnerable people, who are largely excluded from access to basic services and resources. This has led to a range of social issues, including poverty, inequality, gender-based violence, and discrimination against marginalized populations.

In response to these social issues, the government has implemented various policies and programs aimed at addressing them. However, these policies and programs often fail to reach those most in need or are inadequate in addressing the underlying causes of the issues. As such, NGOs and civil society organizations have become increasingly important in providing support to vulnerable and marginalized communities, advocating for social, economic and political change, and filling gaps left by inadequate government policies.

Background of NGOs and Civil Society in India: The background of Non-Governmental Organizations (NGOs) and Civil Society in India can be traced back to the colonial period when various religious, social and cultural organizations were established. The country's civil society has a rich history of philanthropy, community mobilization and advocacy.

The independence of India in 1947 saw the growth of several NGOs, which were formed to address various social and economic issues. The formation of the Planning Commission in 1951, and the introduction of the Community Development Program in 1952, further boosted the growth of NGOs in the country. These organizations aimed to provide support and services to communities, particularly in rural areas, and were instrumental in facilitating the government's efforts in rural development.

In the 1970s and 1980s, the government's policy of promoting non-profit organizations as development partners led to a significant increase in the number of NGOs. The Indian government's policy of liberalization and globalization in the 1990s also led to an increased role for civil society organizations in shaping public policies and advocating for human rights and environmental protection.

Today, the civil society sector in India is one of the largest in the world, with over 3 million NGOs. These organizations play a crucial role in advocating for human rights, promoting environmental protection, providing

*Associate Professor (Sociology) S.D. Govt. College, Beawar (Raj.) INDIA

healthcare and education services, and supporting marginalized communities. They also work closely with the government to implement development programs and provide feedback on policies and programs.

The background of NGOs and Civil Society in India is marked by a long history of community mobilization and advocacy, and today the sector plays a critical role in shaping public policies and improving the quality of life for millions of people in the country.

Role of NGOs and Civil Society: NGOs (Non-Governmental Organizations) and civil society play a significant role in India by complementing the efforts of the government in addressing social, economic and political issues.

1. **Empowerment:** NGOs work towards empowering marginalized communities, promoting education, health, and human rights.
2. **Advocacy:** They advocate for policies and programs that support the rights of vulnerable communities, such as women, children, and the elderly.
3. **Service delivery:** NGOs provide essential services such as health care, education, and disaster relief, especially in remote and underserved areas where government services may be limited.
4. **Monitoring:** They monitor government policies and programs to ensure that they are implemented effectively and transparently.
5. **Partnership:** NGOs and civil society organizations often partner with government agencies and international organizations to maximize their impact.
6. **Community building:** They foster community building by bringing people together to address common issues and promoting participatory governance.
7. **Grassroots level work:** NGOs often work at the grassroots level, giving them a unique understanding of the challenges faced by local communities. This helps them tailor their programs and services to meet the specific needs of these communities.
8. **Innovation:** NGOs are often at the forefront of innovative solutions to development challenges, such as the use of new technologies, alternative financing models, and participatory approaches to development.
9. **Emergency response:** In times of natural disasters and other emergencies, NGOs can respond quickly and effectively to provide relief and support to affected communities.
10. **Capacity building:** They provide training, capacity building, and support to local communities, helping them to become self-sufficient and better equipped to address their own challenges.
11. **Raise awareness:** NGOs play an important role in raising awareness about social, economic, and political issues, and in mobilizing public opinion to bring about change.
12. **Transparency:** Many NGOs are committed to transparency and accountability, ensuring that their programs and activities are open to public scrutiny.
13. **Collaboration:** NGOs often collaborate with each other to share resources, expertise, and best practices, strengthening the overall impact of the civil society sector.
14. **Environment protection:** NGOs work towards environmental protection and conservation, promoting sustainable development and raising awareness about the impacts of climate change.
15. **Health promotion:** They play a critical role in promoting public health, including raising awareness about diseases and providing health education and services to communities in need.
16. **Poverty reduction:** NGOs work towards reducing poverty and promoting income-generating activities, such as microfinance, to help people improve their economic circumstances.
17. **Humanitarian aid:** They provide humanitarian aid to refugees, internally displaced persons, and other vulnerable populations, helping to alleviate suffering and promote human dignity.
18. **Rural development:** NGOs often focus their efforts on rural development, addressing the unique challenges faced by rural communities and promoting their social and economic empowerment.
19. **Political activism:** They are often involved in political activism, promoting good governance, democracy, and human rights.
20. **Long-term impact:** The long-term impact of NGO and civil society activities is significant, helping to build a more just and equitable society and promoting sustainable development for future generations.

Challenges Faced: As a rapidly developing country, India faces numerous challenges, and NGOs and civil society play an important role in addressing these challenges. However, NGOs and civil society organizations themselves face several challenges in their efforts to make a positive impact in the country.

1. **Funding and financial constraints:** One of the biggest challenges faced by NGOs and civil society organizations in India is a lack of funding. The majority of NGOs are dependent on funding from various sources, including government grants, international aid, and private donations. However, funding can be limited and uncertain, making it difficult for organizations to carry out their programs and activities effectively.
2. **Lack of transparency and accountability:** The lack of transparency and accountability in the functioning of NGOs and civil society organizations can be a major challenge. In many cases, organizations are accused of misusing funds and not being accountable to their stakeholders. This can lead to a lack of trust in these organizations and a decrease in funding.
3. **Bureaucracy and red tape:** NGOs and civil society organizations often face challenges in navigating India's complex bureaucracy and regulations. The process of registering an NGO and obtaining various licenses and

permits can be time-consuming and frustrating. This can lead to delays in programs and activities and reduce the effectiveness of organizations.

4. Political interference: Political interference can be a major challenge for NGOs and civil society organizations in India. Some organizations are accused of being politically motivated, while others are subject to government pressure to align with certain political agendas. This can undermine the independence and effectiveness of these organizations.

5. Inadequate infrastructure: India's infrastructure is often inadequate, making it difficult for NGOs and civil society organizations to carry out their programs and activities. In many rural areas, there are limited transportation options, and poor roads and bridges can make it difficult for organizations to reach remote communities.

6. Competition for resources: With the increasing number of NGOs and civil society organizations in India, competition for resources such as funding, volunteers, and manpower has become intense. This competition often leads to duplication of efforts, reducing the impact of individual organizations.

7. Resistance to change: Another challenge faced by NGOs and civil society organizations is resistance to change. India is a deeply rooted society with traditional attitudes and beliefs. NGOs and civil society organizations often work on sensitive issues such as women's rights, health, and environmental issues, which can lead to resistance from traditional communities.

8. Corruption: Corruption is a major challenge faced by NGOs and civil society organizations in India. In some cases, organizations are subject to demands for bribes and corruption in the procurement process, making it difficult for them to carry out their programs effectively.

9. Lack of awareness: Many people in India are unaware of the work of NGOs and civil society organizations, and the impact they have on the community. This lack of awareness can reduce the support and funding for these organizations, making it difficult for them to carry out their programs effectively.

10. Skill and capacity building: NGOs and civil society organizations often lack the skills and capacity to effectively address the challenges faced by the country. Building the skills and capacity of these organizations is critical to their success and sustainability.

11. Lack of government support: Despite the important role that NGOs and civil society organizations play in addressing the challenges faced by India, they often face a lack of support from the government. This can include restrictions on their operations, difficulties in obtaining licenses and permits, and a lack of recognition and support for their programs and activities.

12. Limited public participation: Many NGOs and civil society organizations struggle to engage the public and promote public participation in their programs and activities. This can limit the impact of their efforts, as community involvement and buy-in are critical to the success of their programs.

13. Inadequate legal framework: The legal framework for NGOs and civil society organizations in India is often inadequate, making it difficult for these organizations to operate effectively. This includes issues related to registration, tax exemptions, and liability, which can cause confusion and hinder their efforts.

14. Stigma and discrimination: NGOs and civil society organizations often work with marginalized communities and groups, which can lead to stigma and discrimination. This can make it difficult for these organizations to carry out their programs and activities effectively, as communities may be reluctant to participate.

15. Volunteer retention: Attracting and retaining volunteers is a major challenge for NGOs and civil society organizations in India. With the increasing demands on people's time and resources, it can be difficult for organizations to find and keep volunteers who are committed to their cause.

Potential of NGOs and Civil Society: NGOs and Civil Society organizations have the potential to play a critical role in India's growth and development. With over 1.3 billion people, India is the world's largest democracy and is known for its rich cultural heritage and diverse communities. However, the country faces numerous challenges, including poverty, inequality, environmental degradation, and a lack of access to basic services such as education, health care, and clean water.

NGOs and Civil Society organizations are well positioned to address these challenges and help build a better future for all. They have the ability to mobilize resources, engage with communities, and work with government and other stakeholders to drive positive change. They are also flexible and adaptable, which allows them to respond quickly to changing needs and circumstances.

For example, NGOs and Civil Society organizations have been instrumental in providing basic services and support to vulnerable populations such as women, children, and the elderly. They have established programs to improve access to education, health care, and clean water, as well as provide support for those affected by natural disasters and other emergencies.

NGOs and Civil Society organizations are also playing a critical role in promoting human rights, advocating for good governance, and protecting the environment. They are working to create a more sustainable future by promoting renewable energy, reducing waste, and conserving wildlife and forests.

Moreover, NGOs and Civil Society organizations have the potential to create jobs and stimulate economic growth by supporting entrepreneurship and small businesses. They can also help build the capacity of local communities, promoting entrepreneurship, and empowering people to take control of their own development.

Conclusion: In conclusion, NGOs and civil society organizations have played an essential role in addressing social issues in India. They provide essential services and resources to vulnerable and marginalized populations, advocate for social change, and push for policy reform. However, they also face a number of challenges, including inadequate funding, limited access to resources, and bureaucratic constraints etc. Addressing these challenges is crucial to the success and sustainability of these organizations, and to the overall development of India. Collaboration between NGOs, government agencies, and the private sector can help overcome these challenges and ensure that the positive impact of NGOs and civil society organizations is felt by all. Despite these challenges, NGOs and civil society organizations have the potential to create meaningful and lasting change in India, and should be encouraged to collaborate with other stakeholders in order to maximize their impact. They have the potential to make a positive impact on the lives of millions of people and help build a better future for all. However, they need the support of government, the private sector, and other stakeholders to fully realize their potential.

References:-

1. "NGOs and Civil Society in India" By: B. S. Baviskar, Vol. 50, No. 1 (March 2001), pp. 3-15 Published By: Sage Publications, Inc.
2. "NGOs, Civil Society and Social Reconstruction in Contemporary India" By: Biswajit Ghosh, Journal of Developing Societies 25(2):229-252, April 2009
3. "Role of NGOs and Civil Society", September 28, 2017 https://www.civilsdaily.com/role-of-ngos-and-civil-society/
4. "Women on the margins and the role of NGOs in India" By: Jimmy C. Dabhi, Int. J. Indian Culture and Business Management, Vol. 2, No. 4, 2009
5. "Non-governmental Organisations and Civil Society in India" By: Baviskar, B S (2005). In Jayaram, N (ed), On Civil Society: Issues and Perspectives. New Delhi: Sage, pp 137-149

****

देश की समृद्धि में पशुधन का योगदान

डॉ. नितिन सहारिया*

प्रस्तावना – भारतवर्ष के वर्तमान समाज का चिंतन पश्चिमी आबो –हवा से प्रेरित है। कहने को तो हम भारतवासी हैंय सूरत शक्ल से भी भारतीय ही दिखाई देते हैं किंतु कार्य –व्यवहार, आचरण, चिंतन– चरित्र से आज बहुत कुछ हम काले अंग्रेज हो गए हैं। अगस्त 1947 में हमने राजनीतिक स्वतंत्रता तो प्राप्त कर ली किंतु आज भी हम अंग्रेजीयत को ओढ़े हुए हैं। आज भी भारत का समाज बौद्धिक परावलम्वन से जूझ रहा है। सुबह जागरण से लेकर रात्रि शयन तक के कार्य –व्यापार का लेखा–जोखा किया जाए तो हममें अंग्रेजीयत का प्रतिशत बहुत ज्यादा है। अभी भी अंग्रेजीयत की बू वांकी है।

समय की ये माँग है की हम अपनी विरासत की ओर लौटें। हमारा पुरातन– सनातन वैभव अखंड , अक्षुण्य रहा है। हमारी प्राचीन ऋषि परंपरा में वह सब मौजूद है। जिससे हम पुन: परम वैभव को प्राप्त कर सकते हैं। हिंदू अपने स्वत्व की ही खोज न करके, अपने अंदर ना झांक करके हम पश्चिम की ओर बढ़ चले हैं। यही वर्तमान की विडंबना अथवा दुर्भाग्य है। भारत वासियों को पुन: प्राचीन गौरवशाली परंपराओं को जीवंत करना होगा। तभी भारत महान भारत बन सकेगा। इतिहास गवाह है की उधार की वस्तु से कोई महान नहीं बना है ।

1980 के दशक में देश में पशुधन योगदान संबंधी आंकड़ों पर जब द्रष्टी डालते हैं, तब चौकाने बाले तथ्य सामने आते हैं की–देश में विद्युत शक्ति का कुल उत्पादन 30 हजार मेगावाट था जबकि सात करोड़ बैलों 80 हजार भैंसों और 10 लाख घोड़ों से ऊतनी ही शक्ति प्राप्त हो जाती है। इस प्रकार बिजली उद्योग की समूची क्षमता पशु शक्ति के बराबर ही बैठती है। बिजली उत्पादन में 300 अरब की पूंजी लगी थी। जबकि उतना ही उत्पादन करने वाले पशुधन का मूल्य 100 अरब मात्र है। फिर पशुधन अपनी वंश वृद्धि भी स्वयमेव करता रहता है। जबकि संयंत्रों के लिए भार– वाहनों के लिए वैसा कर सकना संभव नहीं है।

पशु के साथ– साथ चलने वाले अन्य उत्पादनो की ओर अभी उतना ध्यान नहीं दिया गया जितना कि दिया जाना चाहिए था। जिस दिन इस और थोड़ा सा भी उत्साह ढीख भर गया उसी दिन से यह अतिरिक्त लाभ मिलने आरम्भ हो जाएंगे । 80 करोड़ गाय– बैल, 6 करोड़ भैस– भैंसे हर दिन प्रत्येक 10 किलो गोबर उत्पादन का अनुपात बनाते हैं। इतने भर से 1.3 घनफुट गोबर गैस उत्पन्न की जा सकती है। साथ ही 2% के करीब नाइट्रोजन खाद मिल सकती है।

जितने पशु हैं उन से उत्पन्न होने वाली गोबर गैस से 48 करोड़ ग्रामीणों को खाना पकाने के लिए पूरा ईधन मिल सकता है । प्रति व्यक्ति 6 घनफुट गैस की आवश्यकता को इसी आधार पर पूरा किया जा सकता है और ईंधन के लिए मचती रहने वाली हाय–हाय से छुटकारा भी मिल सकता है।

गोबर गैस बनने के उपरांत भी उसकी उपयोगिता नष्ट नहीं होती वरन अच्छे खाद के रूप में बदल जाती है । अभी देश में 50 लाख टन रासायनिक खाद का उत्पादन और प्रयोग होता है। जबकि वर्तमान पशुधन के गोबर का सही उपयोग करने पर 1 करोड़ टन बढ़िया खाद मिल सकती है। रासायनिक खादों से अमेरिका की तरह जमीन की उर्वरता नष्ट होने का खतरा भी है पर गोबर की खाद में वैसा कोई खतरा नहीं है।

चार करोड़ हल चलाने के लिए 8 करोड़ बैल चाहिए, 1 करोड 30 लाख बैल गाड़ियों के लिए भी अतिरिक्त बैल चाहिए। इतने पर भी काम के योग्य बैल 7 करोड़ मात्र हैं। इन्हें आवश्यकता की तुलना में कहीं कम माना जाएगा। बैल गाड़ियों का महत्व परिवहन की दृष्टि से अभी भी कम नहीं हुआ है । रेलों में 40 अरब की पूंजी लगी है ,ट्रक– बस आदि में 25 अरब की लागत है। बैल गाड़ियों में लगी पूजी 40 अरब है। जिसे रेल उद्योग के समतुल्य माना जा सकता है। देश का दो तिहाई यातायात अभी भी बैल गाड़ियों के सहारे चलता है। बिजली की प्रतिद्धंद्धिता में पशुशक्ति ही टिकी हुई है।

भारत कृषि प्रधान देश है। कृषि के साथ गोपालन का अविच्छिन्न संबंध है। कृषि उत्पादन में से अनाज मनुष्य के और चारा पशुओं के काम आता है। पशु मनुष्यों के लिए दूध और श्रम जुटाते हैं। कृषि के लिए जमीन को उर्वर बनाए रखने के लिए गोबर व मूत्र के रूप में बहुमूल्य खाद प्रदान करते हैं। यह एक अर्थ चक्र है। जिसके साथ देश की 70% जनता का जीवन निर्वाह जुड़ा हुआ है। यही कारण है कि भारत के संविधान में पशुधन की रक्षा का विशेष प्रावधान है। गाय के बछड़े और दुधारू कृषि योग्य पशुओं के कत्ल न होने देने का अनुबंध है।

अपने देश में जितना पशु वध होता है, वह चिंताजनक है। अशक्त अनुपयोगी ही नहीं, उपयोगी और समर्थ भी कटते रहते हैं।

देवनार के एक ही बूचड़खाने में 1 साल में 1 लाख 20 हजार बैल 20 हजार भैसे और 25 लाख भेड़ बकरियां कटती हैं। मात्र बैलो पर ही दृष्टि डाली जाए तो उनका वध भी चिंताजनक है। सन 1973–74 में 67000 बैल कटे थे । पर सन 1980–81 में वह अनुपात बढ़ गया तथा 1लाख 22 हजार बैल कटे। मुंबई, कोलकाता और मद्रास के तीन शहरों में लगे हुए बूचड़खानो की रिपोर्ट भी ऐसी ही चौंकाने वाली है।

यह देश की मांस या चमड़े की आवश्यकता पूरी करने के लिए ही नहीं होता वरन निर्यात से धन कमाने का लालच भी इसका एक बड़ा कारण है । 1973–74 में मांस निर्यात 2000 टन था। वह 79 में 40 गुना हो गया । 80000 टन मांस निर्यात हुआ। चमड़े का निर्यात भी अब बढ़ते– बढ़ते 425 करोड़ टन जा पहुंचा है।

वार्षिक दूध उत्पादन में 100 लख टन गाय का और 170 लाख टन

* शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, अनूपपुर (म.प्र.) भारत

भैंस का होता है। यह बहुत कम है। औसत उत्पादन 2 लीटर है। थोड़ा प्रयत्न करने पर इसे 5 गुना तक बढ़ाया जा सकता है। वर्तमान आबादी के बच्चों और रोगियों की की प्रधानता दी जाए तो प्रायः 4 करोड़ 80 लाख टन दूध चाहिए, जबकि उत्पादन भेड़ बकरियों तक को मिलाकर कुल 4 करोड़ 80 लाख टन ही होता है। मांस के लोभ में दूध की आवश्यकता की ओर आंख बंद किए रहना, किसी प्रकार बुद्धिमत्ता पूर्ण नहीं है।

देश में अनेक उद्योग लगाने की- बढ़ाने की योजना है। समृद्धि का अभिवर्धन आवश्यक है। रोजी- रोजगार के लिए काम चाहिए। उसके लिए अन्य अन्यान्य स्रोत ढूंढने के साथ-साथ हमारा ध्यान पशु वर्ग के अभिवर्धन और संरक्षण पर भी जाना चाहिए। उनके सहारे परिवहन, डेयरी फार्म, कृषि, सिंचाई आदि अनेकों काम मिल सकते हैं। जो समृद्धि बढ़ाने में असाधारण सहायता कर सकें। जलाऊ लकड़ी की कमी बेतरह बढती जा रही है। रासायनिक खाद के कारखाने खुल रहे हैंय जिनके कारण कालांतर में जमीन की उर्वरता नष्ट होने का खतरा है। इन दोनों संकटो से बचने का सरलतम उपाय गोवर का गैस के रूप में प्रयोग करना है। उससे खाद तो अक्षुण्य रहती ही है, साथ ही जलावन (कंडे) मुफ्त में मिल जाते हैं।

मरने के बाद भी पशु के अवशेष उतना पैसा दे जाते हैं, जिससे उसके न रहने पर भी बहुत बड़ी क्षति नहीं उठानी पड़ती है। जबकि ट्रैक्टर आदि से घिस या टूट जाने पर वह किसी काम नहीं आता। पशु संरक्षण विशेषतया गौ संवर्धन अपने देश की एक महती आवश्यकता है। इस ओर अपना जितना ध्यान रहे उतना ही उत्ताम होगा। तभी सुखी -संपन्न ,समृद्ध, सशक्त महान भारत की संकल्पना साकार होगी। तभी रामराज्य- सतयुग का भारत में पुनर्र आगमन होगा। यही विश्व मंगल 'वसुधैव कुटुंबकम' का आधार भी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सास्वत हिंदू गर्जना- पत्रिका, विश्व संवाद केंद्र महाकौशल न्यास , जबलपुर ,अप्रैल 2004।
2. राष्ट्र के अर्थतंत्र का मेरुदंड गौशाला- श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट शांतिकुंज, हरिद्वार, उत्तरांचल ,2002।
3. श्रीमद्भागवत पुराण, गीता प्रेस गोरखपुर, उत्तर प्रदेश।
4. महाभारत -आश्वमेधिक पर्व, अनुशासन पर्व-83६ 50-52, गीताप्रेस, गोरखपुर उत्तर प्रदेश।
5. गावरू सर्वसुख प्रदा: -युग निर्माण योजना-पत्रिका, मथुरा,उत्तरप्रदेश ,2004।
6. सर्वरोग हारी गोमूत्र चिकित्सा -डॉ. एस. एल. पाटीदार, गायत्री शक्तिपीठ ,एमपी नगर भोपाल, 2003।
7. पदम पुराण -सृस्टिखण्ड-57/156-165, गीताप्रेस ,गोरखपुर ,उत्तर प्रदेश।
8. सेवा प्रेरणा- पत्रिका ,जनवरी 2014, संपादक- राजेंद्र शर्मा एम-214 गौतम नगर गोविंदपुरा, भोपाल।
9. ब्रह्म वैवर्त पुराण- 21/91-93, गीताप्रेस गोरखपुर ,उत्तर प्रदेश।
10. देश की समृद्धि में गोधन का योगदान -लेख , पृ. 08 ,युग निर्माण योजना, मथुरा ,वर्ष-1984।
11. श्रीरामचरितमानस- 1/93, 1/201, 1/144, गीताप्रेस ,गोरखपुर, उत्तर प्रदेश।
12. कल्याण- पृ- 167,गीता प्रेस ,गोरखपुर उत्तर प्रदेश ।
13. स्कंद पुराण- ब्रम्हा धर्मारन्य,10/18-20, गीताप्रेस ,गोरखपुर उत्तरप्रदेश।
14. पद्म पाताल -19/33-36, गीताप्रेस, गोरखपुर ,उत्तर प्रदेश।

****

ग्रामीण विकास व सहकारी आंदोलन: एक समीक्षा

डॉ. अर्चना सिंह *

शोध सारांश – प्रस्तुत लेख में स्वतंत्रता के पश्चात् ग्रामीण विकास में सहकारी आंदोलन के योगदान की समीक्षा करने का प्रयास किया गया है। स्वंतत्रता के पश्चात् राजनीतिक संस्थाओ व प्रशासनिक स्तर पर नीतिगत व संस्थागत सुधारो के माध्यम से ग्रामीण विकास का प्रयास किया गया। समाजवादी व गांधीवादी विचारधारा के समर्थन से सहकारी आंदोलन की रूपरेखा तैयार की गई। यद्यपि यह 'श्वेत क्रांति' जैसे क्षेत्रों में विशेष उपलब्ध प्राप्त करने के बावजूद कुछ सार्थक योगदान नहीं दे पाया। इस लेख में इन्हीं तथ्यो का विश्लेषणात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तावना – विकसित देशो की विकास प्रक्रिया ने विश्व में शहरीकरण को विकास के सहगामी मॉडल के रूप में स्थापित किया। वर्ष 1760 और 1820 के दशक में औद्योगिक क्रांति ने विकास प्रक्रिया का जो मॉडल इग्लैंड में प्रसतुत किया उसने शहरीकरण को प्रोत्साहित किया उस समय इग्लैंड में 75 प्रतिशत लोग शहरो में रहते थे। विकास का यह मॉडल औद्योगिकरण व शहरीकरण पर आधारित था परन्तु नवस्वतंत्र तृतीय विश्व के विकासशील देशो में जहाँ जनसँख्या का बहुत बडा भाग ग्रामीण क्षेत्रो व कृषि आधारित अर्थव्यव्स्था पर निर्भर था विकास का यह मॉडल सम्रग विकास के लिए पर्याप्त नहीं था। अत: अधिकांश विकासशील देशो में ग्रामीण विकास उन्मुख सामाजिक व आर्थिक विकास को प्रमख्रुता दी। हालांकि विकासशील देशो में ग्रामीण विकास चुनौतिपूर्ण था। ग्रामीण क्षेत्र में परम्परागत कृषि व्यव्स्था व कम विकसित तकनीकी स्वास्थ्य व आधारभूत सुविधाओं की कमी, बैंकिग व क्रय व विक्रय से कम उन्नत साधनो ने समग्र ग्रामीण विकास के कार्य को अत्यधिक चुनौतिपूर्ण बना दिया।

विश्व बैंक ने ग्रामीण विकास को ग्रामीण निर्धन लोगो के विशेष समूह को सामाजिक व आर्थिक स्थित बेहतर करने की योजना बताया है। एक अवधारणा के रूप में ग्रामीण विकास का अर्थ ग्रामीण लोगो के जीवन स्तर को बेहतर बताने के द्दष्टिकोण के साथ ग्रामीण क्षेत्रो का समग्र विकास करना है। इस संदर्भ में ग्रामीण विकास समान्यता विकास है परन्तु बहुआयामी है। भारत जैसे विकासशील देशो में ग्रामीण विकास की बहु आयामी अवधारणा को अपनाया गया।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत की अधिकांष जनता ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती थी। देश की 85 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषि पर निर्भर थी। उपनिवेशवाद ने भारतीय कृषि पर विध्वंसकारी प्रभाव छोडा। एक बडी जनसंख्या का व्यवसाय होने के बाद भी कृषि क्षेत्र की स्थिति अत्यंत खराब थी। उपनिवेशवाद के अनतर्गत भारत में कृषि नीतियों ने ग्रामीण अर्थव्यव्स्था पर भारी व असहनीय बोझ डाला साथ ही जमीदारी व्यवस्था में ग्रामीण समाज के विकास पर नकारात्मक प्रभाव डाला।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में सम्रग ग्रामीण विकास की अवधारणा को अपनाया गया। ग्रामीण विकास के लिए मुख्य तीन बिन्दुओ पर प्रयास किया गया (1) जमीदारी उन्मूल कार्यक्रम (2) भूमि पर हदबंदी (3) सहकारी और सामुदायिक विकास कार्यक्रम। उस समय नीति निर्माताओ ने जनसहाभागिता व संस्थागत सहयोग के माध्यम से ग्रामीण विकास को आगे बढाने का प्रयास किया। ग्रामीण क्षेत्र की स्थिति को देखते हुए, पंचायत व्यवस्था और सहकारी समितियों को महत्वपूर्ण माना गया। इन संस्थाओ को विषिष्ट भूमिकाएँ सौंप दी गई थी। इन संस्थाओ को दिया गया मुख्य काम था सामुदायिक विकास के लिये कार्य करना, गाँवो में गरीबी को दूर करना, असमानाताओे को कम करना और विशेषधिकारो को समाप्त करना। 1960 के दशक से पंचायती राज और भूमि सुधार अथवा तकनीकी और सहकारी अभियानो के माध्यम से हरित तथा श्वेत क्रांति जैसे ग्राम विकास के अनके कार्यक्रमो को शुरू और लागू किया जा चुका है गाँवो में सहकारी समिति को एक महत्वपूर्ण सामाजिक आर्थिक संस्था की केन्द्रीय स्थिति प्राप्त है।

भारत जैसे विकासशील देश में जहाँ मानव शक्ति सर्वाधिक महत्वपूर्ण श्रोत है और जिसका एक भारी अंश समाज का कमजोर वर्ग है, ग्रामीण विकास किसी भी आर्थिक विकास की सार्थक प्रक्रिया के लिए व्यापक महत्व का होता है। अंतराष्ट्रीय सहकारी गठबंधन की परिभाषा के अनुसार एक सहकारी समिति उन व्यक्तियों का संगठन है जो एक संयुक्त स्वामित्व और लोकतांत्रिक नियंत्रण वाले उद्यम के माध्यम से अपनी साझा आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आवष्यकताओ तथा आंकाक्षाओ की पूर्ति हेतु स्वेच्छा से जुडे रहते है।

भारत में सहकारिता की विचारधारा को स्वतन्त्रपूर्ण 1904 में सर्वप्रथम अधिनियम पारित कर ब्रिटिश सरकार द्धारा अपनाया गया। स्वतंत्रता के पश्चात् गाँधीवादी विचारधारा व जवाहरलाल नेहरू की समाजवादी विचारधारा ने सहकारी आंदोलन का प्रबल समर्थन किया। इसके अनुसार सहकारिता भूमि सुधार के जरिए संस्थागत परिर्वतन लाने का एक महत्वपूर्ण तत्व है।

सन् 1949 में कुमारप्पा की अध्यक्षता में कृषि सुधार समिति की स्थापना की गई। जिसे 'सहकारिता' को लागू करने का दायित्व दिया गया। समिति ने सुझाव दिया कि राज्य को कृषि के विभिन्न स्तरो के अनुरूप विभिन्न सहकारो को लागू करवाने के अधिकार सौपे जाने चाहिए। प्रथम पंचवर्षीय योजना में छोटे व मध्यम जोतो को कृषि सहकारी संस्थाओ के रूप में साथ

* ऐसोसिऐट प्रोफेसर (राजनीति शास्त्र) एम.एम.एच महाविद्यालय, गाजियाबाद (उ.प्र.) भारत

लाने के लिए प्रोत्साहित किया गया। योजना लागू करवाने के अधिकारो का कोई स्पष्ट नहीं किया गया।

कार्यक्रम के क्रियान्वयन में कुछ समस्याँ परिलक्षित हुई:

1. वास्तविक मापदंड के आधार पर सम्भावित लाभ–भोगियो की उचित पहचान,
2. समर्पित व वचनबद्ध तंत्र के अभाव के कारण कार्यान्वयन प्रक्रिया में व्यवधान,
3. ग्रामीण क्षेत्रो में आबादी के अपेक्षाकृत धनी तथा प्रभावशाली वर्गो की ओर से निहित स्वार्थ के प्रति दबाव,
4. कार्यक्रम के प्रति लोगो में जानकारी का अभाव,
5. सहकारी विभागो, अभिकरणो आदि में आपसी तालमेल का अभाव,
6. कार्यक्रम के विश्लेषण करने व मार्गदर्शन देने हेतु उचित मशीनरी का अभाव,
7. आधारभूत वित संस्थाओ एवं स्त्रोतो का अभाव तथा प्रशासनिक एवं बैंकिग की कुव्यव्स्था,
8. ग्रामीण विकास कार्य हेतु उपलब्ध कराए गए ऋृण के उपयोग की देख रेख न करना आदि।

द्धितीय पंचवर्षीय योजना ने पूर्व के अनुभवो के आधार पर सहकारी आंदोलन की ओर अधिक प्रभावकारी तरीके से लागू करने का प्रयास किया गया। 1956 के मध्य में दो भारतीय प्रतिनिधिमण्डल चीनी भेजे गए। इनमें से एक योजना आयोग व दूसरा खाद्य व कृषि मंत्रालय का था। प्रतिनिधिमण्डलो का उद्देश्य चीन में सहकारो के संगठनो के कृषि उत्पाद में वृद्धि के तरीको से अवगत होना था। दोनो ही प्रतिनिधिमण्डलो ने रिपोर्ट दी की सहकारीकरण के जरिए फसलो के उत्पादन में वृद्धि तथा कृषि की आधारभूत संरचना का प्रसार हासिल किया। जवाहर लाल नेहरू सहकारी खेती के प्रति पूरी तरह समर्पित थे। उन्होने राज्यो पर चीनी उदाहरण अपनाने पर जोर डालना शुरू किया। राष्ट्रीय विकास परिषद परिषद और ए.आई.सी.सी. ने अब द्धितीय योजना के कोटे और भी बढा दिए परन्तु तीसरी पंचवर्षीय योजना में कुछ राजनीतिक घटनाक्रम इस तरह बदला की सहकारिता के प्रति नर्म रूख अपनाया गया।

यद्यपि कृषि क्षेत्र में सहकारी आंदोलन अधिक सफल नहीं हो पाया परन्तु 'दुग्ध सहकारी' एक सफल प्रयोग सिद्ध रहा।

दुग्ध सहकारी आंदोलन इसकी शुरूआत एक साधारण स्तर पर गुजरात के कैरा (खेडा) जिला में हुई। यही आगे चलकर 'सफेद क्रांति' का आरंभकर्ता साबित हुआ। 1946 में जिला सहकारी दूध उत्पादक संघ लिमिटेड का जन्म आनन्द (गुजरात) में हुआ। गांधीवादी स्वतंत्रता सेनानी त्रिभुवनदास 1947 में इसके प्रथम अध्यक्ष बने। डॉ0 वर्गीज कुरिएन यूनियन के मुख्य कार्यकारी पद पर रहे। यूनियन की शुरूआत मात्र दो ग्राम सहकारी संस्थाओ में हुई थी। 1955 में उसने दूध पाउडर तथा मक्खन बनाने की फैक्ट्री लगाई। उसी वर्ष यूनियन ने अपने उत्पादो के लिये 'अमूल' शब्द का प्रयोग करना शुरू किया।

सहकारी आंदोलन की सीमाएँ– नेहरू द्धारा प्रबल समर्थन के बावजूद सहकारी आंदोलन अधिक सफल नहीं हो सका। कांग्रेस पार्टी के कई वरिष्ठ नेताओ जैसे सी.राजगोपालचारी, एन.जी. रंगा तथा चरण सिंह ने इस नीतियो का पार्टी के अन्दर और बाहर खुलकर विरोध किया। 1959 में तिब्बत में चीनी दमन और उसके कुछ ही महीनो बाद भारतीय सीमा के अंदर चीन द्धारा अतिक्रमण हुआ। इससे सहकारी आंदोलन पर नकारत्मक प्रभाव पडा इसे अतिरिक्त कुछ नीतिगत व संस्थागत कमियो की वजह से सहकारी आंदोलन कृषि क्षेत्र से अधिक सफल नहीं हो पाया।

भष्ट्राचार– प्रशासनिक स्तर पर भ्रष्ट्राचार के कारण आंदोलन को सही तरह से क्रियान्वित नहीं किया जा सका। सहकारी संस्थाओ की स्थापना प्रभावशाली परिवारो का अधिपत्य रहा। ये अपनी सुविधा से बोगस में खेतिहर मजदूरो या भूतपूर्व काश्तकारो को शामिल किया। दूसरी आम तौर पर पहले ने इस्तेमाल की गई खराब जमीनो को भूमिहीनो, हरिजनो विस्थापितो और इसी प्रकार के असुरक्षित लोगो में बांटा गया।

ग्रामीण सहकारी बैंको की शोचनीय स्थिति– अक्सर प्रभावशाली परिवारो को बैंको द्धारा कम ब्याज में ऋृण उपलब्ध कराया गया। सहकारी ऋृण समितियो को बडा धक्का लगने का कारण यह भी था कि अधिकांश कर्जो का हिस्सा लौटाया नहीं गया।

जन–सहभागिता का अभाव– सहकारी आंदोलन की एक आम कमी यह रही कि जन सहभागिता विकसित करने के बजाए एक विशाल सहकारी विभाग बन गया गया जिसमें अफसर, क्लर्क, इंस्पेक्टर इत्यादि जैसे पद ब्लॉक, जिला, डिविजन और राज्य स्तरो पर निर्मित हो गए।

निष्कर्ष– साम्यवादी देशो व गांधीवादी सिंद्धातो से प्रेरित होकर ग्रामीण विकास के लिए भारत में सहकारी आंदोलन की शुरूआत की गई। कई चुनौतियो व असफलताओ के बावजूद ग्रामीण विकास में सहकारिता का विशिष्ट योगदान रहा। भारत में कई सहकारी यूनियन में ग्रामीण विकास व देश की अर्थव्यव्था में महत्वूर्ण योगदान दिया जैसे राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम, भारतीय किसान उर्वरक सहकारी लिमिटेड, अमूल, भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ, भारत सहकारी बैंक आदि। सहकारी समितियो की सामूहिकता को बढावा देने और देश के सामाजिक पूंजी आधार को संरक्षित करने में एक अगृणी भूमिका है परंतु ग्रामीण गरीबी, असमानता और भूमिहीनता दूर करने का सहकारी खेती का रास्ता विफल रहा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. चंद्र विपिन, मुखर्जी मृदुला मुखर्जी आदित्य 2002, आजादी के बाद का भारत (1947–2007) हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
2. Dubhasi, P.R. 1996 'Essays on Rural Development' Kaveri Books, New Delhi
3. Hooja Rakesh & Arora K. Ramesh (Ed.) 1995, 'Administration of Rural Development India' Comparative perspective' Arihant Publishing House, Delhi
4. जगुआर, रविशंकर, 2011, भारत में ग्रामीण विकास, अवधारणा, रणनीति और योजनाएँ, रीगल पब्लिकेशन, दिल्ली
5. Mishra S.N. and Kushal Sharma, 1983 'Problems and Propsects of Rural development in India', Uppal Publication House, New Delhi

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

Implementation of Fractional Programming in Existent Life Quandaries

Dr. Pankaj Mathur* Dr. P. R. Parihar**

Introduction - The applications of linear programming to various branches of human activity, and especially of economics, are well known. The applications of linear fractional programming are less known, and, until now, less numerous. Of course, the linearity of a problem makes it easier to deal with, and hence leads to its greater popularity. However, not all real-life problems may be adequately described in the frames of linear models. Linear-fractional programming is a branch of nonlinear programming that was introduced only in the early 60's, and after first publications devoted to LFP problems, this branch has attracted the attention of more and more researchers and specialists because there is a broad field of real-world problems, where the use of LFP is more suitable.

There are several problems that may be formulated in the form of LFP problems. Some are as follows:

1.1(a) Economic Applications: The efficiency of a system is sometimes characterized by a ratio of technical and/ or economical terms. Maximizing the efficiency then leads to a fractional program. Some applications are given below.

(1) Maximization of Productivity: Gilmore and Gomory[1] discuss a stock cutting problem in the paper industry for which under the given circumstances it is more appropriate to minimize the ratio of wasted and used amount of raw material rather than just minimizing the amount of wasted material. This stock cutting problem is formulated as a linear fractional program. In a case study, Hoskins and Blom [2] use fractional programming to optimize the allocation of warehouse personnel. The objective is to minimize the ratio of labour cost to the volume entering and leaving the warehouse.

(2) Maximization of Return on Investment: In some resource allocation problems the ratio profit/ capital or profit/revenue is to be maximized. A related objective is return per cost maximization. Resource allocation problems with this objective are discussed in more detail by Mjelde [3]. In these models the term 'cost' may either be related to actual expenditure or may stand, for example, for the amount of pollution or the probability of disaster in nuclear energy production. Depending on the nature of the functions describing return, profit, cost or capital, different types of f ractional programs are encountered. For example, if the price per unit depends linearly on the output and cost and capital are affine functions, then maximization of the return on investment gives rise to a concave quadratic fractional program (assuming linear constraints). In location analysis maximizing the profitability index (rate of return) is in certain situations preferred to maximizing the net present value, according to Barros[4] and Barros, Frenk and Gromicho[5].

(3) Maximization of Return/Risk: Some portfolio selection problems give rise to a concave nonquadratic fractional program which expresses the maximization of the ratio of expected return and risk. For related concave and nonconcave fractional programs arising in financial planning are discussed in more detail by Schaible [6]. Markov decision processes may also lead to the maximization of the ratio of mean and standard deviation. A very recent application of fractional programming in portfolio theory is given by Lo and Mackinlay [7].

(4) Minimization of Cost/Time: In several routing problems a cycle in a network is to be determined which minimizes the cost-to-time ratio or maximizes the profit-to- time ratio. Some of these models are combinatorial fractional programs given by Radzik [8]. Also the average cost objective used within the theory of stochastic regenerative processes leads to the minimization of cost per unit time,according to Asmussen [9]. A particular example occurring within this framework is the determination of the optimal ordering policy of the classical periodic and continuous review single item inventory control models given by Bázsa[10] and Frenk[11]. Other examples of this framework are maintenance and replacement models. Here the ratio of the expected cost for inspection, maintenance and replacement and the expected time between two inspections is to be minimized studied by Frenk[12].

(5) Maximization of Output/Input: Charnes and Cooper use a linear fractional program as a model to evaluate the efficiency of decision making units (Data Envelopment Analysis (DEA)). Given a collection of decision making units, the efficiency of each unit is obtained from the maximization of a ratio of weighted outputs and inputs subject to the condition that similar ratios for every decision making unit are less than or equal to unity. The variable weights are

*Associate Professor, Govt. College, Tonk (Raj.) INDIA
** Associate Professor, S.P.C. Govt. College, Ajmer (Raj.) INDIA

then the efficiency of each member relative to that of the others. In the management literature there has been an increasing interest in optimizing relative terms such as relative profit. No longer are these terms merely used to monitor past economic behaviour. Instead the optimization of rates is receiving more attention in decision making processes for further research.

1.1(b) Non-Economic Applications

(1) In Defence: When troops are in battle field, and the decision making requires distribution of arms & ammunitions among several possible targets, this demands programming of the situation, which is done in the form of Fractional Programming.

(2) In Agriculture: Due to the explosion of population and consequent shortage of food, many countries are facing the problem of allocation of land for various crops in accordance with the climatic conditions and proper distribution of water from resources l ike canals for i rrigation purpose. Thus there is a need of determining better policies under the given situations. Hence, work can be done in this direction by using these techniques.

(3) In Information Theory : The capacity of a communication channel can be defined as the maximal transmission rate over all probabilities. This is a concave nonquadratic fractional program. Also the eigenvalue problem in numerical Mathematics can be reduced to the maximization of the Rayleigh quotient, and hence gives rise to a quadratic fractional program which is generally not concave. An example of a fractional program in Physics is given by Falk[13]. He maximizes the signal-to-noise ratio of an optical filter which is a concave quadratic fractional program.

There are a number of managment science problems that indirectly give rise to a concave fractional program. A recent study of Meszaros [14] shows that the sensitivity analysis of general decision system leads to linear fractional programs. The developed software was used in the appraisal of Hungarian hotels. A concave quadratic fractional program arises in location theory as the dual of a Euclidean multifacility min-max problem. In large scale mathematical programming, decomposition methods reduce the given linear program to a sequence of smaller problems. In some cases, the subproblems are linear fractional programs. The ratio originates in the minimum-ratio rule of the simplex method.

References:-

1. Gilmore, P.C. and Gomory, R.E. “A linear programming approach to the cutting stock problem-part ii. Operations Research, 11: 1963, 863-888.
2. Hoskins, J.A. and Blom, R. “Optimal allocation of warehouse personnel: a case study using fractional programming” FOCUS (U.K), 3(2): 1984, 13-21.
3. Mjelde, K.M. “Methods of the Allocation of Limited Resources” Wiley, New York.
4. Barros, Ana I. “Discrete and Fractional Programming Techniques for Location Models.” Kluwer Academic Publisher.
5. Barros, A. I., Frenk, J.B.G., and Gromicho, J. “Fractional Location Problems” Location Science, 5(1):1997, 47-58.
6. Schaible, S. “Fractional programming. In R.Horst and P.M. Pardalos, editors, Handbook of Global Optimization, pages 495-608. Kluwer Academic Publishers. Dordrecht.
7. Lo, A. and MacKinlay, C. “Maximizing predictability in the stock and bond markets” Macroeconomic Dynamics, 1(1): 1997, 102-134.
8. Radzik, T. “Fractional Combinatorial Optimization. In D. Z. Du and P. M. Pardalos, editors, Handbook of Combinatorial Optimization 1, pages 429-478.” Kluwer Academic Publisher
9. Asmussen, S. “Applied Probability and Queues” Wiley, New York.
10. Bázsa, E., Den Iseger, P.W. and J.B.G. Frenk. “Modeling of inventory control with regenerative processes” International Journal of Production Economics, 71:2001, 263-276.
11. Frenk, J.B.G. and Kleijn, M.J., “On Regenerative Processes and Inventory Control” Pure and Applied Mathematics, 9: 1998, 61-94.
12. Frenk, J.B.G., Dekker, R. and Kleijn, M.J., “On the Marginal Cost Approach in Maintenance” Journal of Optimization Theory and Applications, 94(3): 1998, 771-781.
13. Falk, J. E. “Maximization of Signal-to-Noise Ratio in an Optical Filter” SIAM Journal of Applied Mathematics 7, 1969, 582-592.
14. Meszaros, Cs. and Rapcsák, T. “On Sensitivity Analysis for a Class of Decision Systems” Decision Support Systems, 16(3): 1996, 231-240.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

सामाजिक अनुसंधान का समाज और राज्य-व्यवस्था में भूमिका (एक समाजशास्त्रीय विमर्श)

डॉ. नीरजा शर्मा *

शोध सारांश – अनुसंधान एक प्रक्रिया है जिसे नये ज्ञान एवं अनुभव के द्वारा सिद्धान्त निरूपण करने हेतु प्रयोग किया जाता है। यह सत्य और असत्य की जानकारी प्राप्त करने के लिए किया गया एक स्वयं का गंभीर तटस्थ एवं अनुभव जन्य विधि-विधान से भरा प्रयास है। इसमें तथ्यों का प्रमाण इकट्ठा करते हुए कोई बात नियम या सूत्र सिद्धान्त के रूप में स्थापित की जाती है। अनुसंधानकर्ता केवल सुनी-सुनाई बातों या सामान्य ज्ञान से ही परिपूर्ण नहीं होता है। इसमें तो गहन, चिन्तन, मंथन, विचार एवं अध्ययन किया जाता है। इसमें प्रत्येक पहलू को गंभीरता से लेते हुए उसमें तटस्थता बढ़ती जाती है तथा दूध का दूध एवं पानी का पानी स्पष्ट बताया जाता है।

प्रस्तावना – अनुसंधान की दो पद्धतियां (Methodalogy)

1. **ज्ञान मीमांसा या तत्व मीमांसा –** इसमें उपलब्ध साहित्य का गहन अध्ययन कर एक सूत्र में बांधकर उसकी मान्यता को प्रमाणित करने का प्रयास किया जाता है।

2. अवलोकन या निरीक्षण करके किन्हीं घटनाओं का प्रत्यक्ष ज्ञान किया जाये तथा उसी प्रत्यक्ष अनुभव को सही क्रम में अर्थपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करके किसी नियम या सिद्धान्त को प्रतिपादित किया जाये, लेकिन हमें तो सामाजिक अनुसंधान की विवेचना करना है जिसकी कुछ वैद्यता एवं तर्कसंगत कार्यकारण सम्बन्धों पर आधारित हो।

3. अमूर्त घटनाओं के अध्ययन के लिए जिस पद्धति का प्रयोग किया जाता है उसे गुणात्मक पद्धति (Qualitative Method) तथा मूर्त घटनाओं के अध्ययन के लिए जिस पद्धति का प्रयोग करते हैं उसे परिणात्मक पद्धति (Quantitative Method) कहते हैं।

4. सामाजिक शोधों में समाजशास्त्र में गुणात्मक पद्धति के रूप में जिन पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है। उन्हें 5 भागों में विभाजित किया जाता है।

1. आगमन (विशिष्ट से सामान्य-अरस्तु) एवं निगमन पद्धति (सामान्य से विशिष्ट-प्लेटो)
2. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति (Case Study)
3. समाजमिति पद्धति (Sociometry)
4. सामाजिक दूरी का पैमाना (Scale of Social Distance)
5. सामुदायिक अध्ययन पद्धति (Community Study Method)
6. परिणात्मक पद्धति (Quantitative Method)

पद्धति :

1. ऐतिहासिक पद्धति (Historical Methods)
2. तुलनात्मक पद्धति (Comparative Methods)
3. सांख्यिकीय पद्धति (Stgatistical Methods)
4. सामाजिक सर्वेक्षण पद्धति (Social survey Methods)

समाजिक अनुसंधान के उद्देश्य:

1. नवीन ज्ञान की प्राप्ति।
2. नवीन आधारणाओं का प्रति-पादन।
3. उपलब्ध अनुसंधान विधियों का जांच।
4. कार्य-कारण, पूर्व का सम्बन्ध बताना।
5. पुन: परीक्षण।

अनुसंधान के चरण:

1. अध्ययन विषय का चुनाव
2. अनुसंधान के उद्देश्यों का निर्धारण
3. तथ्य संकलन की प्रविधियों का निर्धारण
4. निष्कर्षन का चुनाव
5. तथ्यों का संकलन
6. तथ्यों का विश्लेषण
7. प्रतिवेदन प्रस्तुत करना

विज्ञानों को प्राय: दो श्रेणी में बांटा गया है –

1. प्राकृतिक विज्ञान (Natural Science)
2. सामाजिक विज्ञान (Social Science)

प्राकृतिक विज्ञान के अन्तर्गत भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र, जीवशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र आदि आते हैं जबकि सामाजिक विज्ञानों में अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, भूगोल, इतिहास आदि। प्राकृतिक विज्ञान के अन्तर्गत प्राकृतिक या भौतिक जगत या उससे संबंधित घटनाओं का अध्ययन किया जाता है। जबकि सामाजिक विज्ञानों में मानवीय क्रियाओं, समाज और सामाजिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है।

सामाजिक जीवन से संबंधित बहुत सी ऐसी बाते हैं जैसे-समाज की संरचना, संस्थाएं सामाजिक नियंत्रण, सामाजिक परिवर्तन हित, प्रतिस्पर्धा, सामाजिक अन्तक्रिया, प्रगति, समूह, सम्पर्क, भीड़, और अपराध आदि का अध्ययन केवल समाजशास्त्र ही करता है। प्रत्येक सामाजिक विज्ञान समाज के एक विशिष्ट पहलू का अध्ययन करता है, सम्पूर्ण समाज का नहीं, लेकिन समाज को पूर्णत: पृथक-पृथक भागों में नहीं बांटा जा सकता है। उसे तो सम्पूर्णता या समग्रता में समझा जा सकता है। और यह कार्य समाजशास्त्र करता है।

* एसोसिएट प्रोफेसर, महारानी श्री जया कॉलेज, भरतपुर (राज.) भारत

सामाजिक जीवन के विशेष पहलू का अध्ययन करने वाले प्रत्येक सामाजिक विज्ञान को विशेष सामाजिक विज्ञान (Special Social Science) सामाजिक जीवन के सभी पहलुओं का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन करने वाले समाज-विज्ञान (समाजशास्त्र) को सामान्य सामाजिक विज्ञान (General Social Science) कहा गया है।

ऑगस्ट कॉम्ट ने कहा कि 'समाज एक समग्रता है और इस कारण सामाजिक घटनाओं को अलग-अलग मांगों में विभाजित नहीं किया जा सकता है।'

स्पेन्सर ने कहा कि 'समाजशास्त्र अन्य सामाजिक विज्ञानों के समन्वय का परिणाम है।'

वार्ड ने, 'समाजशास्त्र को अन्य सामाजिक विज्ञानों के समान एक स्वतंत्र विज्ञान मानते हैं।'

वार्न्स एवं वेकर - 'समाजशास्त्र अन्य सामाजिक विज्ञानों की न तो गृहस्वामिनी है और न ही दासी, बल्कि यह तो अन्य विज्ञानों की वहिन है।'

सामाजिक अनुसंधानकर्ता एवं सर्वेक्षण की आचार संहिता - सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण एक दायित्वमुक्त समाज वैज्ञानिक का कार्य है। इसमें सामाजिक तथ्यों के संकलन एवं निष्कर्ष में वस्तुपरक व्याख्या की जाती है। इसके लिए निम्न आचार संहिता का पालन आवश्यक:

1. सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण में सत्यनिष्ठा एवं ईमानदारी का निर्वाह किया जाये। जो तथ्य प्रस्तुत किये जाते हैं वे क्षेत्र में जाकर वास्तविक रूप से एकत्र किये गये हों तथा जैसे भी तथ्य आये तो उन्हीं का विश्लेषण किया जावे एवं निष्कर्ष भी उन्हीं के अनुरूप प्रस्तुत किये जाएं।
2. अनुसंधानकर्ता को अपने विश्लेषण एवं व्याख्या में वस्तुनिष्ठ एवं तटस्थ रहकर अपनी भावनाओं, विश्वासों एवं मूल्यों के निजी प्रभाव को सर्वेक्षण के निष्कर्षो पर पडने से रोकना चाहिए।
3. परियोजना में जिन संस्थाओं से आर्थिक सहायता प्राप्त होती है, उनकी अपेक्षानुसार यदि तथ्य/निष्कर्ष नहीं प्राप्त होते हैं तब भी वे ही निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाये ं तो सर्वेक्षण से प्राप्त होते हैं न कि उन्हें आर्थिक सहायता देने वाली संस्था के अनुरूप बनाकर उनमें कोई हेर-फेर किया जाये।
4. जिन उत्तरदाताओं से सर्वेक्षण के विषय के बारे में तथ्य प्राप्त हुए हैं उन्हें धन्यवाद देते हुए उनका आभार मानना चाहिए तथा उनके आत्मसम्मान एवं गरिमा को किसी भी प्रकार से नुकसान नहीं पहुंचाना चाहिए।
5. आंकड़ों के स्त्रोत एवं व्यक्तिगत पहचान को जहां तक हो सके गोपनीय रखना चाहिए। कई बार यह वादा करने पर ही उत्तरदाता सही-सही जानकारी देने के लिए तैयार होते हैं। इसी वादे को निभाना अनुसंधानकर्ता के लिए आवश्यक भी है।
6. सर्वेक्षण को अपने विश्लेषण एवं निष्कर्षो में निर्भीक एवं निडर भाव से तथ्यों को जैसे है वैसे ही प्रस्तुत करना चाहिए।
7. एक सामाजिक सर्वेक्षक प्रशासन या पुलिस विभाग के लिए जासूसी की भूमिका नहीं निभा सकता है। अपने सर्वेक्षण में यदि किसी उत्तरदाता के द्वारा सही-सही जानकारी देने में अपराधजन्य व्यवहार भी प्रकट हो रहा है तो भी उसे उत्तरदाता को दिये गये वादे के मुताबिक गोपनीयता बनाये रखने को बाध्य रहना पड़ता है।
8. किसी भी समाज एवं राष्ट्र की अस्मिता, अखण्डता एवं सामाजिक एकीकरण को हानि पहुंचाने वाले विषय या आंकड़ों की प्राप्ति के लिए भी सर्वेक्षण की परियोजना हाथ में नहीं लेनी चाहिए। सर्वेक्षण का यह नैतिक दायित्व भी है। समाज और राष्ट्र का नुकसान पहुंचे ऐसे बौद्धिक कार्य से वह अपने आप को दूर रखे।
9. अनैतिक एवं अवैध सामाजिक क्रियाओं एवं व्यवहार के प्रतिमानों को सर्वेक्षण या अनुसंधान का विषय नहीं बनाया जाना चाहिए इससे कार्य की अप्रतिष्ठा होती है।
10. जहां तक हो सके समाज एवं राष्ट्र की ज्वलंत समस्याओं एवं उसे विकास प्रगति के मार्ग पर अग्रसर रहने वाले विषयों पर नवीन शोध करने के उद्देश्य से सर्वेक्षण परियोजना बनाई जानी चाहिए।
11. सर्वेक्षक को केवल आंकड़ों में दिखाई देने वाले सांख्यिकी सम्बन्धों तक ही अपने आपको सीमित नहीं रखना चाहिए तथा खोटे सांख्यिकी सम्बन्ध में को स्वीकार नहीं करते हुए वास्तविक स्थिति तथा उसके ऐतिहासिक एवं सामाजिक संदर्श को ध्यान में रखते हुए वास्तविकता को पहचान कर ही निष्कर्ष देने चाहिए। इस प्रकार से केवल यअमूर्त आनुभविकता पर आधारित आंकड़ों के दुष्परिणाम एवं दुरूपयोग से बचना चाहिए।
12. सामाजिक सर्वेक्षण एवं शोध की प्रक्रिया में इतनी शिथिलता भी नहीं होनी चाहिए कि प्रासंगिकता ही समाप्त हो जाये। समाज की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं तकनीकी परिस्थितियों में तीव्र परिवर्तन आता रहता है। अत: सर्वेक्षण के तथ्यों को इन परिवर्तनों से तालमेल स्थापित करते हुए अपने निष्कर्षो में अनावश्यक विलम्ब नहीं करना चाहिए।

सभी सामाजिक विज्ञान एक दूसरे के पूरक हैं। (All Social Sciences Are Complementary To One Another) - समाजशास्त्र और अन्य सामाजिक विज्ञान के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है ये सभी विज्ञान एक दूसरे के पूरक हैं, आपस में एक दूसरे का सहयोग करते हैं। समाज एक समग्रता है और इसी कारण जीवन के विभिन्न पक्षों को एक-दूसरे से पूर्णत: पृथक नहीं किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में समाज में विभिन्न पक्षों या पहलुओं का अध्ययन करने वाले सामाजिक विज्ञानों का एक-दूसरे से पूरी तरह पृथक करना संभव नहीं है। इन विभिन्न सामाजिक विज्ञानों में न केवल आदान-प्रदान का सम्बन्ध ही है बल्कि ये एक-दूसरे के पूरक भी हैं। एक का ज्ञान दूसरे विषय को समझने में मदद भी करता है। ये सभी सामाजिक विज्ञान एक-दूसरे से मदद लेते और देते हैं क्योंकि इन सबका उद्देश्य प्रमुखत: समाज में विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करते समय उसे समग्र रूप में या सम्पूर्णत: में समझना है। अब इन विज्ञानों के बढ़ते हुए पारस्परिक सम्बन्धों के कारण ही विभिन्न विषयों के अध्ययन ने अन्तरशास्त्रीय उपागम पद्धति (Inter disciplinary Approach) का प्रयोग किया जाने लगा है।

विभिन्न सामाजिक विज्ञानों की विषय वस्तु में बहुत कुछ समानता होते हुए भी इसके अध्ययन के दृष्टिकोणों में भिन्नता पाई जाती है। उदाहरण के रूप में - अर्थशास्त्रीय, समाजशास्त्री और राजनीतिशास्त्री निर्धनता, बेकारी, ग्रामीण पुनर्निर्माण, नियोजित सामाजिक परिवर्तन, पंचवर्षीय योजना, विकास कार्यक्रम जैसे समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP) स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (SGSY) आदि का समान रूप से अध्ययन करते हैं। परन्तु प्रत्येक विषय से संबंधित समाज वैज्ञानिक का दृष्टिकोण अन्य विषयों के समाज-वैज्ञानिकों से भिन्न होता है। अर्थशास्त्री उपर्युक्त बातों अथवा समस्याओं का अध्ययन आर्थिक दृष्टिकोण से करेगा जबकि समाजशास्त्री, राजनीतिकशास्त्री, समाजशास्त्रीय और राजनीतिशास्त्रीय दृष्टिकोण से। अर्थशास्त्री बेकारी या निर्धनता पर विशुद्ध आर्थिक दृष्टिकोण

से विचार करेगा। समाजशास्त्री बेकारी या निर्धनता के आर्थिक कारकों को एवं परिणामों के अलावा सामाजिक कारकों पर विचार करेगा। समाजशास्त्री बेकारी या निर्धनता के आर्थिक कारकों को एवं परिणामों के अलावा सामाजिक कारकों पर विचार करेगा और साथ ही यह बताने की कोशिश भी करेगा कि इन समस्याओं के बने रहने से सामाजिक विघटन को किसप्रकार से प्रोत्साहन मिलेगा। राजनीतिशास्त्र इनका अध्ययन इस दृष्टिकोण से करेगा ये समस्यायें जन-साधारण को कहां तक प्रभावित करती हैं। इनका मतदाताओं पर क्या प्रभाव पड़ता है, क्या ये सरकार के पतन के कारण बन सकती हैं? इनको हल करना राज्य या कल्याणकारी सरकार का प्रमुख दायित्व भी है। अर्थशास्त्री और राजनीतिकशास्त्री अब यह महसूस करने लगे हैं कि लोगों के विकास की अच्छी से अच्छी योजना उस समय तक हल नहीं हो सकती जब तक उसको बनाने और लागू करने में लोगों का सक्रिय सहयोग प्राप्त नहीं कर लिया जाता है और साथ ही साथ जब तक मानवीय कारकों (Human Factors) अर्थात लोगों की प्रथाओं, परम्पराओं, संस्थाओं, विश्वासों और संस्कृतिक का पूरा-पूरा ध्यान नहीं रखा जाता।

निष्कर्ष – अत: यह कहा जा सकता है कि विभिन्न सामाजिक वैज्ञानिक एक-सी विषय-वस्तु का अध्ययन करते हुए भी अपना-अपना विशिष्ट दृष्टिकोण रखते हैं। दृष्टिकोण की इसी भिन्नता के कारण विभिन्न सामाजिक विज्ञानों में घनिष्ठ सम्बन्धों के बावजूद यहां इतना बता देना आवश्यक है कि सभी सामाजिक विज्ञानी में समाजशास्त्र की केन्द्रीय स्थिति है क्योंकि यह समाज का समग्र रूप में अध्ययन करता है जबकि अन्य सामाजिक विज्ञान इसके किसी एक पक्ष का। अन्त में यह कह सकते हैं कि सभी सामाजिक विज्ञानों की अपनी-अपनी पृथक स्वतंत्र सत्ता है, यद्यपि से एक-दूसरे के पूरक हैं और इनमें काफी आदान-प्रदान होता है जो कि सामाजिक विज्ञानों की सामाजिक शोध में समाज एवं राज्य व्यवस्था में महत्वपूर्ण प्रसंगिकता को दर्शाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय समाजशास्त्र समीक्षा (भारतीय समाजशास्त्र परिषद की शोध पत्रिका)
2. सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण पद्धतियां, शर्मा, डॉ. सी.एल. 2008 राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
3. सामाजिक अनुसंधान पद्धति यादव राम गणेश, प्रकाशक, ओरियंट ब्लैक स्वान, 2014
4. समाजशास्त्र, गुप्ता, एम.एल. एवं शर्मा डी.डी. 2004, साहित्य पब्लिकेशन : आगरा।
5. समाजशास्त्र के सिद्धान्त, विद्याभूषण एवं सचदेव डी.आर. 2005, किताब महल।
6. समाजशास्त्र अवधारणाएँ एवं सिद्धान्त सिंह, जे.पी. 2004, प्रेंटिग हाल ऑफ इंडिया, नई दिल्ली।
7. समाजशास्त्रीय विवेचन, सिंधी, डॉ. नरेन्द्र कुमार एवं गोस्वामी, वसुधाकर, 2013, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
8. Anthroprology, Ethnography And Sociology 2017-18
9. योजना
10. कुरुक्षेत्र
11. इण्डिया टुडे

****

Advances In Nanoparticle Synthesis And Applications In Chemistry

Dr. Anjul Singh*

Abstract - Nanoparticles have revolutionized various fields of science and technology, including chemistry. This report explores the recent advancements in nanoparticle synthesis techniques and their diverse applications in the field of chemistry. The report provides an overview of the principles behind nanoparticle synthesis, highlighting the various methods employed to fabricate nanoparticles with precise control over size, shape, and composition. Furthermore, it delves into the applications of nanoparticles in catalysis, drug delivery, sensing, energy storage, and environmental remediation. The report also discusses the challenges and future prospects associated with nanoparticle synthesis and utilization in chemistry, emphasizing the potential impact of these advancements on scientific research and technological innovations.

Note: This report provides a comprehensive overview of the topic and can serve as a starting point for further research and exploration in the field of nanoparticle synthesis and applications in chemistry.

Introduction - Nanotechnology has emerged as a revolutionary field, offering endless possibilities for scientific advancements across various disciplines. Among the most significant contributions of nanotechnology to the field of chemistry is the synthesis and utilization of nanoparticles. Nanoparticles, defined as particles with sizes ranging from 1 to 100 nanometers, exhibit unique properties and behaviors due to their small size and high surface-to-volume ratio.

The synthesis of nanoparticles with precise control over their size, shape, composition, and surface properties has become an area of intense research. Scientists have developed a plethora of innovative techniques to fabricate nanoparticles using different materials, such as metals, metal oxides, semiconductors, and organic compounds. These techniques encompass both bottom-up and top-down approaches, involving chemical, physical, and biological methods.

The synthesis of nanoparticles is driven by the desire to explore their extraordinary properties and exploit them for various applications in chemistry. Nanoparticles have proven to be highly versatile, finding applications in diverse areas such as catalysis, drug delivery, sensing, energy storage, and environmental remediation. Their unique size-dependent properties, including enhanced reactivity, quantum confinement effects, and tunable optical and electronic properties, make them invaluable in addressing critical challenges and developing innovative solutions.

In this report, we will delve into the recent advances in nanoparticle synthesis techniques and the fascinating applications of nanoparticles in chemistry. We will explore the principles behind nanoparticle synthesis, discussing various methods employed to fabricate nanoparticles with precise control. Additionally, we will highlight the significant advancements in the field, focusing on emerging synthesis techniques that offer enhanced control over nanoparticle properties.

Furthermore, we will examine the wide-ranging applications of nanoparticles in chemistry, showcasing their transformative role in catalytic processes, targeted drug delivery systems, sensitive sensing platforms, efficient energy storage devices, and environmentally friendly approaches for pollution control. By understanding the current state-of-the-art and future prospects, we can appreciate the immense potential of nanoparticles in shaping the future of chemistry research and technological advancements.

Overall, this report aims to provide a comprehensive overview of the advances in nanoparticle synthesis techniques and their applications in chemistry. By exploring the cutting-edge research and highlighting the transformative impact of nanoparticles, we hope to inspire further exploration and innovation in this exciting field.

The Objective: This report is to explore the latest advancements in nanoparticle synthesis techniques and investigate their diverse applications in the field of chemistry.

Principles of Nanoparticle Synthesis:

Nanoparticle synthesis involves various principles and methods to fabricate particles with nanoscale dimensions and tailored properties. Here, we discuss the key principles underlying nanoparticle synthesis, encompassing both bottom-up and top-down approaches, as well as self-assembly, templating techniques, and surface modification.

Bottom-Up Approaches: Chemical Precipitation and

*Associate Professor (Chemistry) Govt. PG College, Dholpur (Raj.) INDIA

Reduction: Bottom-up approaches involve building nanoparticles from molecular or atomic building blocks. Chemical precipitation and reduction methods are commonly employed in bottom-up synthesis.

Chemical precipitation involves the formation of nanoparticles through the controlled precipitation of soluble precursors. This can be achieved by mixing appropriate reagents under specific conditions, such as temperature, pH, and concentration. The reaction leads to the nucleation and subsequent growth of nanoparticles, resulting in the desired particle size and composition.

Reduction methods rely on the reduction of metal ions or metal precursors to form nanoparticles. This can be accomplished by using reducing agents, such as sodium borohydride or hydrazine, which react with metal ions to produce nanoparticles. The reduction process is typically carried out in a solvent or in the presence of stabilizing agents to control particle size and prevent aggregation.

Top-Down Approaches: Mechanical and Laser Ablation: Top-down approaches involve the controlled breakdown of bulk materials into nanoparticles. Mechanical and laser ablation methods are commonly used for top-down synthesis.

Mechanical methods utilize mechanical forces to break down bulk materials into smaller particles. Techniques such as ball milling, grinding, and attrition milling are employed to mechanically deform and fracture materials, leading to the production of nanoparticles. The resulting particles can be further size-selected to obtain nanoparticles with desired dimensions.

Laser ablation involves the use of laser energy to ablate a target material, generating a plasma plume. The plasma plume cools rapidly, resulting in the formation of nanoparticles through nucleation and condensation processes. Laser ablation allows precise control over particle size and composition, making it a versatile technique for nanoparticle synthesis.

Self-Assembly and Templating Techniques: Self-assembly techniques involve the spontaneous organization of nanoparticles into ordered structures driven by intermolecular forces. Self-assembly can be achieved through various mechanisms, including electrostatic interactions, van der Waals forces, and hydrogen bonding. By controlling the assembly conditions, such as concentration, temperature, and solvent properties, nanoparticles can form complex structures, such as nanoparticle superlattices or mesoporous materials.

Templating techniques involve using a template or scaffold to guide the formation of nanoparticles with specific shapes and sizes. Templates can be organic or inorganic materials, such as micelles, surfactant templates, or nanoporous membranes. The nanoparticles are deposited or grown within the template, acquiring their shape and structure. Afterward, the template can be removed, leaving behind the desired nanoparticle structure.

Surface Modification and Functionalization: Surface modification and functionalization play a crucial role in nanoparticle synthesis. The surface properties of nanoparticles can be tailored through various methods, including chemical reactions, ligand exchange, and coating techniques. Functional groups or ligands can be attached to the nanoparticle surface to provide stability, solubility, or specific interactions with target molecules or substrates.

Surface modification allows for fine-tuning of nanoparticle properties, such as surface charge, hydrophobicity, or catalytic activity. It also enables the attachment of biomolecules, polymers, or other functional groups, expanding the range of applications for nanoparticles.

By understanding these principles of nanoparticle synthesis, researchers can design and develop tailored nanoparticles with precise control over their size, shape, composition, and surface properties. These diverse synthesis methods provide a foundation for the advancement of nanoparticle-based applications in chemistry and related fields

Advances in Nanoparticle Synthesis Techniques: Continual advancements in nanoparticle synthesis techniques have enabled greater control over nanoparticle properties and expanded the range of materials that can be synthesized. Here, we explore some of the recent developments in nanoparticle synthesis methods, including solvothermal and hydrothermal synthesis, microemulsion and emulsion techniques, electrochemical synthesis, green synthesis approaches, and other emerging methods.

Solvothermal and Hydrothermal Synthesis: Solvothermal and hydrothermal synthesis methods involve the use of high-temperature and high-pressure conditions to facilitate the controlled formation of nanoparticles. These techniques are particularly suitable for the synthesis of metal oxide nanoparticles, such as zinc oxide, titanium dioxide, and iron oxide.

In solvothermal synthesis, a precursor solution is placed in a closed reaction vessel and heated to temperatures above its boiling point under high-pressure conditions. The supercritical solvent allows for rapid nucleation and controlled growth of nanoparticles. Solvothermal synthesis provides precise control over particle size and crystallinity.

Hydrothermal synthesis is a variation of solvothermal synthesis where water is used as the solvent. The reaction vessel is heated to temperatures below the boiling point of water, typically in the range of 100 to 300 degrees Celsius. Hydrothermal synthesis enables the formation of nanoparticles with controlled size, shape, and crystalline phases, making it a versatile technique for a wide range of materials.

Microemulsion and Emulsion Techniques: Microemulsion and emulsion techniques involve the use of surfactants and co-surfactants to create nanoscale reaction environments for nanoparticle synthesis. These methods provide excellent control over particle size, morphology, and

stability.

Microemulsion synthesis utilizes a system consisting of water, oil, and surfactants, where the oil phase contains the precursor for nanoparticle synthesis. By manipulating the composition and ratio of the components, such as the type and concentration of surfactants, nanoparticles with well-defined sizes and shapes can be obtained. Microemulsion synthesis is widely used for the synthesis of metal nanoparticles, such as gold and silver.

Emulsion techniques involve the dispersion of immiscible liquid phases, typically water and oil, stabilized by surfactants. The emulsion droplets serve as reaction vessels for nanoparticle formation. By controlling the emulsion conditions, such as droplet size and surfactant concentration, nanoparticles with controlled properties can be synthesized. Emulsion techniques are commonly used for the synthesis of polymer nanoparticles.

Electrochemical Synthesis: Electrochemical synthesis offers a unique approach to nanoparticle synthesis, utilizing electrochemical reactions to deposit or nucleate nanoparticles on electrode surfaces. This technique provides precise control over particle size, shape, and composition.

Electrochemical synthesis involves the use of an electrolyte solution containing metal ions or precursor compounds. An electric current is applied, causing electrochemical reactions that lead to the formation of nanoparticles on the electrode surface. The electrode potential and electrolyte composition can be adjusted to control the growth kinetics and properties of the nanoparticles. Electrochemical synthesis is widely used for the synthesis of metal nanoparticles, such as platinum, gold, and silver.

Green Synthesis Approaches: Green synthesis approaches focus on the development of environmentally friendly and sustainable methods for nanoparticle synthesis. These methods aim to minimize the use of toxic chemicals, reduce energy consumption, and utilize renewable resources.

Green synthesis methods often involve the use of natural materials, such as plant extracts, microorganisms, or biomolecules, as reducing and stabilizing agents for nanoparticle synthesis. These natural sources contain bioactive compounds that can effectively reduce metal ions and promote the formation of nanoparticles. Green synthesis approaches offer a greener alternative to traditional synthesis methods and have gained significant attention in recent years.

Other Emerging Methods: In addition to the aforementioned techniques, there are several other emerging methods for nanoparticle synthesis that are being actively explored. These include microwave-assisted synthesis, sonochemical synthesis, flame synthesis, and laser-induced synthesis. These methods leverage unique energy sources or physical conditions to facilitate rapid and controlled nanoparticle synthesis.

Microwave-assisted synthesis utilizes microwave irradiation to accelerate chemical reactions and promote the formation of nanoparticles. Sonochemical synthesis involves the application of high-frequency ultrasound waves to induce cavitation, leading to the generation of intense localized heating and pressure conditions for nanoparticle synthesis. Flame synthesis utilizes combustion processes to generate nanoparticles in the gas phase, which are subsequently collected and stabilized. Laser-induced synthesis involves the use of laser irradiation to initiate rapid and precise nanoparticle formation through photothermal or photophysical processes.

These emerging methods offer exciting prospects for achieving precise control over nanoparticle synthesis and enabling the synthesis of unique materials with tailored properties.

By advancing nanoparticle synthesis techniques, researchers are unlocking new possibilities for the design and fabrication of nanoparticles with desired properties. These techniques contribute to the development of advanced materials and facilitate the integration of nanoparticles into various applications across chemistry, physics, medicine, and engineering.

Applications of Nanoparticles in Chemistry: Nanoparticles have found numerous applications in the field of chemistry, enabling significant advancements in various areas. Here, we explore some of the key applications of nanoparticles, including catalysis and selective reactions, drug delivery systems, sensing and biosensing, and energy storage and conversion.

Catalysis and Selective Reactions: Nanoparticles exhibit unique catalytic properties due to their high surface area, enhanced reactivity, and size-dependent effects. They have revolutionized catalysis by providing efficient and selective catalysts for a wide range of chemical reactions.

Metal nanoparticles, such as gold, platinum, and palladium, are widely employed as catalysts for various reactions, including hydrogenation, oxidation, and carbon-carbon bond formation. These nanoparticles offer high catalytic activity, selectivity, and stability, enabling the development of more sustainable and efficient chemical processes.

Nanoparticle catalysts can also be finely tuned by controlling their size, shape, and surface properties. Surface modification and functionalization of nanoparticles further enhance their catalytic performance and selectivity. Nanoparticle catalysts play a crucial role in industrial processes, including petroleum refining, pharmaceutical synthesis, and environmental remediation.

Drug Delivery Systems: Nanoparticles have revolutionized drug delivery systems, offering enhanced therapeutic efficacy, targeted delivery, and controlled release of drugs. Their unique properties, such as high surface area, tunable surface chemistry, and ability to encapsulate and protect drugs, make them ideal carriers for therapeutic agents.

Nanoparticles can be functionalized with targeting

ligands, such as antibodies or peptides, to selectively deliver drugs to specific cells or tissues. They can also be engineered to respond to external stimuli, such as pH, temperature, or light, triggering controlled release of drugs at the desired site.

Various types of nanoparticles, including liposomes, polymeric nanoparticles, and mesoporous silica nanoparticles, have been extensively studied for drug delivery applications. Nanoparticle-based drug delivery systems have shown promising results in improving drug solubility, enhancing bioavailability, and reducing systemic toxicity.

Sensing and Biosensing: Nanoparticles have revolutionized sensing and biosensing platforms, enabling rapid and sensitive detection of analytes, biomarkers, and environmental pollutants. Their unique optical, electronic, and magnetic properties make them excellent transducers for signal amplification and detection.

Metal nanoparticles, such as gold and silver nanoparticles, exhibit localized surface plasmon resonance (LSPR), which imparts distinct color changes in response to changes in their local environment. This property has been harnessed for the development of colorimetric sensing platforms, enabling naked-eye detection of various analytes.

Semiconductor nanoparticles, such as quantum dots, exhibit size-dependent fluorescence properties, making them ideal for fluorescence-based sensing. These nanoparticles offer high photostability, tunable emission wavelengths, and exceptional brightness, enabling sensitive detection of targets in biological and environmental samples. Biosensing applications utilize nanoparticles as labels or probes for the detection of biomolecules and pathogens. Nanoparticle-based biosensors offer high sensitivity, specificity, and multiplexing capabilities, advancing the fields of diagnostics, genomics, and proteomics.

Energy Storage and Conversion: Nanoparticles play a vital role in energy storage and conversion systems, offering significant improvements in efficiency, performance, and sustainability. They have been widely investigated for applications in batteries, supercapacitors, fuel cells, and solar cells.

In battery systems, nanoparticles are used as electrode materials to enhance charge storage capacity and improve cycling stability. Materials such as lithium-ion battery cathodes, based on transition metal oxide nanoparticles, exhibit high energy density and improved charge/discharge rates.

Supercapacitors benefit from the high surface area of nanoparticles, enabling efficient charge storage and rapid energy release. Nanoparticle-based electrode materials, such as graphene and carbon nanotubes, provide excellent conductivity and enhanced capacitance, leading to high-performance supercapacitors.

Nanoparticles also play a crucial role in fuel cell technology, serving as catalysts for electrochemical reactions. Materials like platinum nanoparticles exhibit exceptional catalytic activity for the oxygen reduction reaction, a key process in fuel cells. Research is ongoing to develop alternative nanoparticle catalysts based on abundant and cost-effective materials.

Furthermore, nanoparticles are utilized in the field of solar cells, where they enhance light absorption and facilitate charge separation. Nanoparticle-based solar cells offer advantages such as tunable bandgaps, reduced material consumption, and compatibility with flexible and transparent substrates.

The applications of nanoparticles in chemistry continue to expand, with ongoing research exploring new areas such as environmental remediation, imaging, and nanotechnology-enabled materials. These advancements contribute to the development of innovative technologies with significant implications for various industries and society as a whole.

Challenges and Future Directions: While nanoparticles offer exciting opportunities in chemistry, several challenges need to be addressed for their widespread implementation. Here, we discuss key challenges and future directions in the field of nanoparticles, including stability, scalability, reproducibility, toxicity and environmental impact, integration into existing chemical processes, and emerging trends and potential applications.

Stability, Scalability, and Reproducibility: Ensuring the stability, scalability, and reproducibility of nanoparticle synthesis is a critical challenge. The stability of nanoparticles is influenced by factors such as aggregation, oxidation, and surface chemistry, which can affect their performance and properties. Developing robust synthesis methods and understanding the underlying mechanisms are crucial for producing stable nanoparticles with consistent properties.

Scalability is another challenge, as many nanoparticle synthesis methods are conducted on a laboratory scale. Translating these methods to large-scale production while maintaining control over particle size, shape, and quality is a complex task. Achieving scalable and cost-effective nanoparticle synthesis methods is vital for industrial applications.

Reproducibility is essential for the reliable production of nanoparticles with consistent properties. Variability in synthesis conditions, materials, and characterization techniques can lead to inconsistencies in nanoparticle performance. Standardization of synthesis protocols, characterization methods, and reporting practices is necessary to ensure reproducibility and facilitate comparison between studies.

Toxicity and Environmental Impact: The potential toxicity and environmental impact of nanoparticles are significant concerns that need to be addressed. Some nanoparticles may exhibit cytotoxicity or pose risks to human health and the environment. Understanding the factors that influence nanoparticle toxicity, such as size, shape, surface chemistry, and exposure routes, is crucial for safe and responsible use.

Developing strategies to mitigate nanoparticle toxicity and enhance biocompatibility is an ongoing research focus. Surface modification techniques can be employed to create biocompatible coatings or encapsulations that minimize potential adverse effects. Additionally, comprehensive risk assessment studies and regulations are needed to ensure the safe handling, disposal, and regulation of nanoparticle-based materials.

Integration of Nanoparticles into Existing Chemical Processes: Integrating nanoparticles into existing chemical processes and industries is a challenge that requires careful consideration of compatibility, scalability, and economic viability. Incorporating nanoparticles into established manufacturing processes may require modifications to equipment, reaction conditions, and quality control procedures. Optimization and adaptation of existing processes are necessary to harness the full potential of nanoparticles in industrial applications.

Collaboration between researchers, engineers, and industry stakeholders is essential to identify opportunities for nanoparticle integration and address technical and economic challenges. Knowledge transfer and technology transfer initiatives can facilitate the adoption of nanoparticle-based technologies in different sectors.

Emerging Trends and Potential Applications: Looking ahead, several emerging trends and potential applications are shaping the future of nanoparticles in chemistry. Advances in nanotechnology and materials science are enabling the development of novel nanoparticle-based materials with tailored properties for specific applications. Areas such as nanocatalysis, nanomedicine, nanosensors, and nanoelectronics hold immense promise.

Nanoparticles are being explored as catalysts for challenging chemical transformations, such as selective carbon-carbon bond formation or renewable energy conversion. In nanomedicine, nanoparticles are being investigated for targeted drug delivery, imaging, and therapeutics. Nanosensors are being developed for ultrasensitive detection of analytes and environmental monitoring. Nanoelectronics are exploring the use of nanoparticles for enhanced device performance, energy efficiency, and miniaturization.

Furthermore, the integration of nanoparticles with other emerging technologies, such as artificial intelligence, machine learning, and 3D printing, opens up new avenues for innovation and multifunctional materials.

Conclusion: In conclusion, addressing the challenges related to stability, scalability, reproducibility, toxicity, and integration is crucial for the successful implementation of nanoparticles in various applications.

With continued research and collaboration, nanoparticles hold the potential to revolutionize diverse fields, paving the way for sustainable technologies, advanced materials, and improved chemical processes.

In conclusion, the field of nanoparticles in chemistry has witnessed remarkable advancements in recent years. The synthesis techniques have evolved, providing greater control over nanoparticle properties, such as size, shape, composition, and surface chemistry. This level of control has opened up new possibilities for tailoring nanoparticles to meet specific application requirements.

Nanoparticles have found diverse applications in chemistry, ranging from catalysis and selective reactions to drug delivery systems, sensing and biosensing, and energy storage and conversion. They offer unique properties and advantages, such as high surface area, enhanced reactivity, targeted delivery, and tunable optical, electronic, and magnetic properties. These attributes enable the development of more efficient, sustainable, and precise chemical processes and technologies.

However, challenges remain in the field of nanoparticles. Stability, scalability, and reproducibility of nanoparticle synthesis methods need to be addressed to ensure consistent and reliable production on a larger scale. Additionally, careful consideration must be given to the potential toxicity and environmental impact of nanoparticles, and strategies to mitigate these risks should be implemented.Integrating nanoparticles into existing chemical processes and industries requires further research and collaboration to overcome technical and economic challenges. By optimizing and adapting existing processes, nanoparticles can be effectively integrated, enhancing performance, efficiency, and functionalityLooking forward, emerging trends and potential applications indicate a promising future for nanoparticles in chemistry. Ongoing research and development will lead to the discovery of novel materials, advanced catalysts, targeted therapeutics, sensitive sensors, and high-performance energy storage and conversion systems. The integration of nanoparticles with other cutting-edge technologies will unlock new possibilities and accelerate innovation.

In summary, nanoparticles have revolutionized the field of chemistry, offering unprecedented opportunities for advancements in various sectors. By addressing the challenges and leveraging emerging trends, the full potential of nanoparticles can be harnessed, leading to a brighter and more sustainable future.

References:-

1. Akutsu J.-I., Yuriko Tojo Y., Segawa O., Obata K., Okochi M., Tajima H. Development of an integrated automation system with a magnetic bead-mediated nucleic acid purification device for genetic analysis and gene manipulation. *Biotechnol. Bioeng.* 2004;86:667–671. [PubMed] [Google Scholar]
2. Alaqad K., Saleh T.A. Gold and silver nanoparticles: synthesis, methods, characterization routes and applications towards drugs. *J. Environ. Anal. Toxicol.* 2016;6:384. [Google Scholar]
3. Arruebo M., Valladares M., González-Fernández A. Antibody-conjugated nanoparticles for biomedical applications. *J. Nanomater.* 2009; 2009 439389. [Google Scholar]

4. Ashtari P., He X., Wang K., Gong P. An efficient method for recovery of target ssDNA based on amino-modified silica-coated magnetic nanoparticles. *Talanta.* 2005; 67:548–554. [PMC free article] [PubMed] [Google Scholar]
5. Astruc D., editor. *Nanoparticles and Catalysis.* Wiley-VCH Verlag GmbH & Co. KGaA; Weinheim: 2008. [Google Scholar]
6. Babes L., Denizot B., Tanguy G., Le Jeune J.J., Jallet P. Synthesis of iron oxide nanoparticles used as MRI contrast agents: a parametric study. *J. Colloid Interface Sci.* 1999;212:474–482. [PubMed] [Google Scholar]
7. Balakrishnan S., Bonder M.J., Hadjipanayis G.C. Particle size effect on phase and magnetic properties of polymer-coated magnetic nanoparticles. *J. Magn. Magn. Mater.* 2009;321:117–122. [Google Scholar]
8. Bao G., Mitragotri S., Tong S. Multifunctional nanoparticles for drug delivery and molecular imaging. *Annu. Rev. Biomed. Eng.* 2013;15:253–282. [PMC free article] [PubMed] [Google Scholar]
9. Baxter J.M., Patel A.N., Varma S. Facial basal cell carcinoma. *BMJ.* 2012;345:e5342. [PubMed] [Google Scholar]
10. Berensmeier S. Magnetic particles for the separation and purification of nucleic acids. *Appl. Microbiol. Biotechnol.* 2006;73:495–504.

****

Biodiversity and Environmental Conservation

Dr. Shagufta Saify*

Introduction - Biodiversity is the number and variety of organisms ranging from celluler macromolecules to bioms (plants, animals and other organisms) that are living in an ecosystem. It is a measure of the variety of organisms that exist in different ecosystem. Bio means 'life 'and diversity means 'variety' .The species is the fundamental unit by which we can measure biodiversity.

The term biodiversity came into use in scientific literature only in the 1980s. Credit was given to Robert Jenkins and Thomas Lovejoy to introduce the term.

Levels Of Biodiversity: Usually biodiversity is considered at three different level.

***1. Genetic diversity*:** Genetic diversity refers to the variation of genes among the population and the individual of the same species. Genetic radiations are due to mutation and in an organism with sexual reproduction and spread by crossing over and recombination.

***2. Species diversity*:** Species diversity refers to the variety of species within a region the number of species per unit area and the site.

***3. Ecosystem diversity*:** The diversity and the ecological or habitual level is known as ecosystem diversity. Ecological *use three different* terms for various practical measures of biodiversity

***I. Alpha diversity*:** Which refers to the diversity within a particular area community or ecosystem and is measured by counting the number of species within the ecosystem.

***II. Beta diversity*:** Refers to the species diversity between ecosystem and is measured by comparing the number of species that are unique to each of the ecosystem

***III. Gamma diversity*:** Is a measure of overall diversity for different ecosystem within a region.

Global Specific Diversity: According to IUCN(2004) more than 1.5 million species are described so far. Animals are more diverse than plants including plenty and fungi.

Among animals insects are the most species rich group. Number of fungi species is more than the combined total of species of fishes amphibians reptiles and mammals.

National Biodiversity (In India): India is one of the 12 mega diversity countries nearly 45,000 species of plants and twice as many of animals. India has 8.1% of the species diversity. India ranks 10th among the plant rich countries of the world and 11th in term of endemic species of high vertebrates and six among the center of diversity and origin of agricultural crop.

Local Biodiversity: Regional level biodiversity can be understood by categorizing is species richness into four type.

Fitness refers to the number of species that can be found at a single point in a given space

Alpha richness refers to the number of species found in a small homogeneous area. It is a strongly correlated with physical environment variables.

Beta richness refers to the change of rate of species in composition across different habitats.

Gamma richness refers to the change across large land scar gradient.

Hot Spot Of Biodiversity: There are 25 hotspot of biodiversity on global level out of which two are present in India namely eastern Himalaya and Western ghat.

Two hotspot of our country are not only rich in floral wealth and endemic species of plant but also reptiles amphibians swallow tailed butterfly and some mammal.

Significance Of Biodiversity: All forms of life have the right to exist on earth.The world now acknowledges that the loss of biodiversity con- tributes to global climatic changes. Environmental services from species and eco-systems are essential at global, regional and local levels.

1. The loss of forest cover, coupled with the increasing re- lease of carbon dioxide and other gases through industrialization contributes to the 'greenhouse effect'.
2. Global warming is melting ice caps, resulting in a rise in the sea level which will sub- merge the lowlying areas in the world. It is causing major atmospheric changes, leading to increased temperatures, serious droughts in some areas and unexpected floods in other areas.
3. Biological diversity is also essential for preserving ecological processes, such as fixing and recycling of nutrients, soil formation, circulation and cleansing of air and water, global life.
4. It is also maintaining the water balance within ecosystems, watershed protection, maintaining stream and river flows throughout the year,erosion control and local flood reduction.
5. Food, clothing, housing, energy, medicines, are all resources that are directly or indirectly linked to the

*Assistant Professor (Geography) Government College, Jhadol, Udaipur (Raj.) INDIA

biological variety present in the biosphere.

6. Urban communities generally use the greatest amount of goods and services, which are all indirectly drawn from natural ecosystems.

Conservation Of Biodiversity: Bio diversity of living organisms which is present in the wilderness, as well as in our crops and live- stock, plays a major[role in human 'development'. The preservation of 'biodiversity' is therefore integral to any strategy that aims at improving the quality of human life.

Apart from the economic importance of con- serving biodiversity, there are several cultural, moral and ethical values which are associated with the sanctity of all forms of life. Indian civilization has over several generations preserved nature through local traditions. This has been an important part of the ancient philosophy of many of our cultures. We have in our country a large number of sacred groves or 'deorais' preserved by tribal people in several States. These sacred groves around ancient sacred sites and temples act as gene banks of wild plants. Symbols from wild species such as the lion of Hinduism, the elephant of Buddhism and deities such as Lord Ganesh, and the vehicles of several deities that are animals, have been venerated for thousands of years.

Man has begun to overuse or misuse most of these natural ecosystems. Due to this 'unsustainable' resource-use, once productive forests and grasslands have been turned into deserts and wasteland have increased all over the world. Mangroves have been cleared for fuel wood and prawn farming, which has led to a decrease in the habitat essential for breeding of marine fish. Wetlands have been drained to increase agricultural land. These changes have grave economic implications in the longer term.

In India, forests and grasslands are continuously being changed to agricultural land.

Encroachments have been legalized repeatedly. Similarly, natural wetland systems have been drained to establish croplands resulting in loss of aquatic species. Grasslands that were once sustainably used by a relatively smaller number of human beings and their cattle are either changed to other forms of use or degraded by overgrazing.

Our natural forests are being deforested for timber and replanted using teak. When excessive firewood is collected from the forest by lopping the branches of trees, the forest canopy is opened up and this alters local biodiversity. Increasing human population on the fringes of our Protected Areas degrade forest ecosystems. Introduction of exotic weeds which are not a part of the natural vegetation also disrupts forest biodiversity.

Conclusion: Species cannot be protected individually as they are all inter dependent on each other. Thus, the whole ecosystem must be protected .Biodiversity at all its levels, genetic species and as intact ecosystems, can be best preserved in- situ by setting aside an adequate representation of wilderness as 'Protected Areas'. These should consist of a network of National Parks and Wildlife Sanctuaries with each distinctive ecosystem included in the network. Such a net- work would preserve the total diversity of life of a region.

References:-

1. Pullaiah, T. (Ed.). (2002). *Biodiversity in India* (Vol. 2). Daya Books.
2. Venkataraman, K., & Sivaperuman, C. (2018). Biodiversity hotspots in India. *Indian Hotspots: Vertebrate Faunal Diversity, Conservation and Management Volume 1*, 1-27.
3. Roy, A., Das, S. K., Tripathi, A. K., Singh, N. U., & Barman, H. K. (2015). Biodiversity in North East India and their conservation. *Progressive Agriculture*, *15*(2), 182-189.
4. Chandel, K.P.S. 1996. Biodiversity and strategies for plant germplasm conservation in India. Tropical Ecology 37: 21–29
5. FSI 2001. State of forest report 2001 Forest Survey of India, Ministry of Environment and Forests, Government of India, Dehradun, India.
6. Mondal R.P., Pati S., Sarkar S., Gayen A., Guin P. and Mishra T(2015), ., General awareness and Perceptions about Sacred Groves and Biodiversity Conservation in Urban people of Bankura District, West Bengal, India, Int. Res. J. Environment Sci., 4(2),16-21
7. Singh, S., Youssouf, M., Malik, Z. A., & Bussmann, R. W. (2017). Sacred groves: myths, beliefs, and biodiversity conservation—a case study from Western Himalaya, India. *International journal of ecology*, *2017*.
8. Sikarwar, R. L. S. Biodiversity of India: Tribal People and their Livelihoods.
9. Kumar, J. A., & Chhaya, B. (2015). The diversity and spatial distribution of birds in a moderately developed urban habitat of Gulabpura, Rajasthan, India. *International Research Journal of Environment Sciences*, *4*(12), 1-11.

****

मेवाड़ के आदिवासी अंचल में जन जागृति

डॉ. सुदर्शन सिंह राठौड़ *

प्रस्तावना – राजस्थान के दक्षिण में स्थित मेवाड़ अंचल का आदिवासी क्षेत्र मुख्य रूप से डूंगरपुर, बांसवाडा एवं उदयपुर जिला जहां अधिकांश भील जनजाति का बाहुल्य है, मध्यकाल में अंधकार एवं अंधिविश्वास का मुख्य क्षेत्र रहा है। कुरीतियों एवं अंधविश्वास से घिरी हुई भील जनजाति अनायास ही अपराध कर बैठती थी। भूत, डाकन, मायावी जैसी अंधिविश्वासी सत्ता में विश्वास करने वाली यह जनजाति संदेह का जीवन व्यतीत कर रहीं थी और व्यभिचार में लिप्त हो गई थी। इस जनजाति में अंधविश्वास का आलम यह था कि ये लोग अपने घर भी एक-दूसरे से बहुत दूरी पर बनाते थे। ऐसे में तंत्र-मंत्र के चक्कर में यह जघन्य अपराध कर देते थे। हाल के वर्षो में डाकन प्रथा (डायन) का एक किस्सा डूंगरपुर जिले के एक गांव में हुआ, जहाँ डायन के संदेह में एक पुत्र ने कुल्हाड़ी का वार कर अपनी माँ की हत्या कर दी। यह घटना वर्तमान में शिक्षित समाज का हिस्सा है तो यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि 18वीं 19वीं सदी में इस समाज की स्थिति क्या रही होगी।

परन्तु 20वीं सदी के प्रारंभिक समय में गोविंद गिरी के नेतृत्व में बांसवाड़ा एवं डूंगरपुर जिलों में एक शक्तिशाली भील आन्दोलन प्रारंभ हुआ। अपनी विषम पारिविरिक परिस्थितियों के कारण बनजारा जाति में पैदा हुए गोविन्द गिरि अध्यात्म की ओर अग्रसर हुए तथा उन्होनें भीलों के अंधविश्वास को महसूस करते हुए उन्हें सभ्य आचरण सिखाने का प्रण लिया। उन्होनें सच्ची लगन के साथ बागड़ क्षेत्र के भीलों के धार्मिक विश्वासों एवं सामाजिक मान्यताओं को सुधारने का कार्य प्रारंभ किया। उन्होनें भीलों को जादू-टोना, मंत्र-तंत्र, भोपाओ से दूर रहना, वीर, वन्तरा आदि न करने की सलाह देते हुए व्यभिचार, मांस-शराब भक्षण, चोरी न करना, माता-पिता की आज्ञा मानने की सलाह देने के साथ-साथ सवर्णो की भांति जीवन-यापन करने हेतु प्रेरित किया। साथ ही विधवा विवाह को भी समर्थन प्रदान किया। यहां तक कि स्वयं गोविन्द गिरि ने भी अपने भाई की विधवा से विवाह किया। जीवन यापन के लिए उन्होनें भीलों को कृषि कार्य के साथ-साथ हाली के रूप में पेशा अपनाने के लिए भी प्रोत्साहित किया। प्राचीन समय में भील आखेट एवं प्राकृतिक उत्पादों पर निर्भर थे परन्तु धीरे-धीरे उन्होनें कृषि कार्य प्रारंभ किया जिसके कारण वे अंग्रेजी एवं जागीरदारों के अत्याचार के शिकार हुए तथा उन पर भू राजस्व का बड़ा भार थोप दिया गया जिससे उनकी स्वतंत्र जीने की छवि प्रभावित हुई तथा उनके मन में अंग्रजों एवं जागीरदारों के प्रति अविश्वास एवं विद्रोह की भावना पैदा हुई। दूसरा जंगली उत्पादो पर भील अपना अधिकार मानते थे वे जलाने हेतु जंगली लकड़ी, पशुचारण आदि हेतु जंगलों पर निर्भर थे परन्तु जंगल प्रशासन की नई नीतियों के कारण इनके अधिकार सीमित कर दिए गए तथा उन्हें इस हेतु कर देने के लिए बाध्य किया गया। लम्बे समय से भील बेगार प्रथा के शिकार थे जिसमें उन्हें बिना कुछ दिए कार्य करना पड़ता था इस कुरीति का जिक्र एजेन्ट टू गवर्नर जनरल द्धारा राजपूताना सचिव को लिखे गए एक पत्र में भी किया गया है। जिसमें बेगार के कारण भीलों द्धारा गांव छोड़ने पर चिंता व्यक्त की गई है।[1]

भील जनजाति प्राचीन समय से ही महुए नामक वृक्ष के फूलों से महुए की शराब निर्मित करते आ रहे थे परन्तु अंग्रेजी शासन ने शराब विक्रय का अधिकार ठेकेदारों को दे दिया जिसके कारण अब उन्हें राशि अदा करके देशी शराब लेनी पड़ रही थी परन्तु गोविन्द गिरि के प्रभाव के कारण अधिकांश भीलों ने शराब का सेवन बंद कर दिया जिसके कारण ठेकेदारों को हानि होने लगी। उदाहरण स्वरूप 1913 से पूर्व जहां इस क्षेत्र में 18,470 गैलन देशी शराब की बिक्री थी जो इस समय घटकर 5,154 गैलन ही रह गई थी।[2] अत: इन ठेकेदारों ने भीलों को अपनी पुरानी आदतों पर लाने का प्रयास किया जिसके कारण भी उनमें विद्रोह की भावना उत्पन्न हुई इसका जिक्र मेवाड़ रेजिडेन्ट ने भी तत्कालीन अपने पत्र में किया है।[3]

भीलों को सम्मानजनक जीवन एवं उन्हें उनके पुराने अधिकार प्राप्त करने के लिए गोविन्द गिरि ने 1913 में 'सम्प सभा' का गठन किया। सम्प देशी भाषा का शब्द है जिसका आशय समान या समानता से है। अत: सम्मान प्राप्त करने के लिए संगठित होना इसका उद्देश्य था। गोविन्द गिरि ने अपने पैतृक गांव बेड़सा (डूंगरपुर) में अपनी धूणी स्थापित करके भीलों को आध्यात्मिक शिक्षा देना प्रारंभ किया। उन्होनें भगत पंथ की स्थापना करके 1910 ई. तक अपने धर्म सुधार आंदोलन को भीलों के मध्य लोकप्रिय बना दिया जिसके कारण भीलों में औपनिवेशिक शोषण से मुक्त होने की आवाज अब उग्र रूप लेने लगी थी। इस कार्य हेतु गोविन्द गिरि ने प्रत्येक भील गांव में अपनी धूणी स्थापित करके इसके संचालन हेतु एक मुखिया जिसे कोतवाल कहते थे नियुक्त किया।[4] कोतवाल धार्मिक मुखिया होने के साथ-साथ अपने क्षेत्र के सभी न्यायिक कार्य भी संपन्न करता था। इस व्यवस्था से गोविन्द गिरि ने जागीरदारों के विरूद्ध एक समानान्तर सरकार चलाना प्रारंभ कर दिया था जिसमें भीलों का पूर्ण विश्वास था। इस समय बेडसा गांव भीलों का मुख्य केन्द्र बन गया था जहाँ पर बांसवाड़ा-डूंगरपुर के साथ ही पंचमहल, ईडर, सूथ, खेड़ा सहित संपूर्ण दक्षिणी राजस्थान के भील आने लगे थे। अत: गोविन्द गिरि को 1913 में डूंगरपुर पुलिस ने गिरफ्तार करके तीन दिन तक जेल में रखा तथा उसे क्षेत्र से बाहर जाने की सलाह दी। 1913 में वह ईडर के रोजड़ा गांव चला गया जहां के राजा ने उसे गिरफ्तार कर लिया।[5]

औपनिवेशिक एवं जागीरदारी उत्पीड़न से त्रस्त होकर गोविन्द गिरि अपने शिष्यों के साथ बांसवाड़ा के वनाच्छादित क्षेत्र 'मानगढ़' की पहाड़ी

* सहायक आचार्य (इतिहास) राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

पर चले गए। 1913 में मानगढ़ की सुरक्षित पहाड़ी पर पहुंच कर गोविन्द गिरि ने भीलों को वहां पर एकत्रित होने के लिए संदेश भेजे। इस संदेश के परिणामस्वरूप भील भारी संख्या में राशन एवं हथियार लेकर मानगढ़ पहाड़ी की ओर कूच करने लगे, चुंकि यह स्थान राजस्थान एवं गुजरात की सीमा पर स्थित है जिसके कारण गोविंद गिरि के संपूर्ण कार्य क्षेत्र जिसमें डूंगरपुर, बांसवाड़ा, उदयपुर, सूंथ, ईडर आदि का भील जनजाति समुदाय यहां पर एकत्रित होने लगा। मानगढ़ पहाड़ी पर इस समय लगभग 4000 भील एकत्रित हो चुके थे तथा 25 अक्टूबर 1913 को गुजरात के सूंथ राज्य पर आक्रमण करने की योजना बना रहे थे। लेकिन इसकी भनक लग जाने के कारण 30 अकटूबर, 1913 को सूंथ के पुलिस निरीक्षक ने अपने जमादार युसूफ खान एवं सिपाही गुलुमोहम्मद को मानगढ़ की पहाड़ी पर वास्तविक स्थिति का पता लगाने के लिए भेजा। इनके वहां पर पहुंचने पर आक्रोशित भीलों ने इन्हें बन्दी बना लिया। भीलों के एक दल ने प्रतापगढ़ किले पर आक्रमण कर दिया जिससे भयभीत होकर सूंथ, बांसवाड़ा, ईडर, डूंगरपुर राज्यों ने अंग्रेजों से सहायता हेतु याचना की और 6-10 नवम्बर 1913 को मेवाड़ भील कोर की दो कंपनियां तथा 104 वेलेजली रायफल्स के साथ सातवीं राजपूताना रेजीमेंट को मानगढ़ भेजा गया।[6] इस समय विभिन्न दिशाओं से भीलो के झूण्ड मानगढ़ की तरफ आ रहे थे जिन्हें इन्होनें वापस लौटने के लिए बाध्य करना प्रारंभ किया तथा इनका संपर्क पहाड़ी पर स्थित भीलों एवं उनके नेतृत्वकर्ता गोविन्द गिरि से न होने दिया। इसी समय बम्बई सरकार उत्तार का आयुक्त भी एक सेना लेकर मानगढ़ की तरफ पहुंचा तथा गोविंद गिरि से मिलने का आग्रह किया। 12 नवम्बर 1913 को गोविंद गिरि ने अपनी शर्तों के पत्र के साथ एक प्रतिनिधि मण्डल पहाड़ी के नीचे भेजा जिसमें क्रांतिकारी शर्ते लिखी गई थी।

1. गोविन्द गिरि द्वारा स्थापित विभिन्न धूणियां जो फौजदारों द्वारा नष्ट कर दी गई थी उन्हें पुन: स्थापित करने की मांग की गई।
2. हिन्दुओं के पवित्र दिनों एवं पर्वो के अवसर पर मेले के आयोजन की अनुमति प्रदान करना।
3. उनके द्वारा स्थापित पवित्र स्थानों पर शिष्यों को बिना रोकटोक के प्रवेश दिया जाए तथा इसमें कोई सरकारी हस्तक्षेप न किया जाए।
4. उनके शिष्यों से किसी भी प्रकार की बेगार न ली जाए।
5. उनके शिष्यों पर सूंथ दरबार के द्वारा संदेह के आधार पर राजद्रोह का जो मुकदमा चलाया गया है वह वापस लिया जाएं।
6. उनको अपने पंथ के प्रचार-प्रसार हेतु विभिन्न गांवों में उपदेश देने के लिए जाने की अनुमति प्रदान की जाए।
7. आत्म-रक्षा हेतु गोविन्द गिरि ने 100 राईफलें रखने तथा उनकी सुरक्षा हेतु 100 राईफलधारी सुरक्षाकर्मी नियुक्त करने की मांग की।

इस प्रकार की मांगों के साथ-साथ ही भीलों के हित से संबंधित जंगल से लकड़ी व चारा ले जाने तथा अंग्रेजी सरकार को आश्वस्त करने का प्रयास किया गया कि वे मानगढ़ की पहाड़ी पर सुरक्षा की दृष्टि से आए है तथा उनके अनुयायी केवल उनसे मिलने एवं पूजा-अर्चना करने के लिए यहां एकत्र हो रहे हैं उनका इरादा किसी भी प्रकार के विद्रोह का नहीं है। वे केवल भीलों में समाज सुधार का कार्य कर रहे है और यदि भील राजा या अंगेजी सरकार के किसी भी आदेश का उल्लंघन करते है तो उनके विरूद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही की जा सकती है।

अंग्रेजी शिष्ट मण्डल ने इन भीलों के समाज सुधार के कार्यो की सराहना की परन्तु उन्होनें आग्रह किया कि भील अधिक संख्या में हथियारबंद होकर मानगढ़ पहाड़ी पर इकट्ठे न हो एवं जो यहां है वे भी नीचे आ जाए उसके पश्चात् ही गोविन्द गिरि द्वारा रखी गई शर्तो पर विचार किया जाएगा। इस बात पर दोनों पक्ष असहमत थे क्योंकि भील प्रतिनिधि मंडल शर्तों को स्वीकार करने का दबाव बना रहे थे। ऐसे में अंग्रेजी सरकार ने उन्हें मानगढ़ पहाड़ी खाली करने का आदेश दिया तथा ऐसा न करने पर अगले दिन उनके विरूद्ध सैन्य कार्यवाही करने की चेतावनी दी, परन्तु भील इस बात को मानने के लिए तैयार नहीं थे।

17 नवम्बर 1913 को अंग्रेजी सेना ने मानगढ़ की पहाड़ी पर आक्रमण कर दिया जिसमें लगभग 100 भील मारे गए था 900 घायल हो गस।[7] (अंग्रेजी रिकार्ड के अनुसार, परन्तु वास्तव में हताहतों की संख्या अधिक थी।) गोंविनद गिरि व उनके साथियों को गिरफ्तार कर दिया गया तथा उच्च न्यायालय ने गोविन्द गिरि को मृत्यु दण्ड की सजा दी। भीलों के अत्यधिक आक्रोश एवं विरोध के परिणामस्वरूप उनकी सजा को आजीवन कारावास में परिवर्तित किया गया तथा बाद में 7 वर्ष के पश्चात् उन्हें रिहा कर दिया गया।

इस प्रकार भीलों के इस आंदोलन को सैन्य शक्ति के द्वारा कुचल दिया गया एवं आश्चर्य की बात यह है कि जलियांवाला के समान इस जघन्य हतयाकांड की किसी ने भी चर्चा या आलोचना नहीं की। परन्तु गोविन्द गिरि ने भीलों को अपने अधिकारों के प्रति जागृत कर दिया तथा अब यह समाज धर्म के अनुसार आचरण करने एवं शराब, मांस सेवन सहित अनेक अनैतिक व्याधियों से दूर होने लगा। वास्तव में मेवाड़ अंचल में भील जागृति का यह आंदोलन मील का पत्थर सिद्ध हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पत्र सं. 3342, 17 दिस. 1914 (आबू)
2. राष्ट्रीय अभिलेखागार, प्रोसिडिंग अप्रैल; पृ- 33-34
3. राष्ट्रीय अभिलेखागार, प्रोसिडिंग पत्र सं. 35- सी.बी. दिनांक 29 नव. 1913
4. शोध पत्रिका, पृ- 63
5. राष्ट्रीय अभिलेखागार, प्रोसिडिंग अगस्त 1914, पृ.- 18-22
6. राष्ट्रीय अभिलेखागार, प्रोसिडिंग मार्च 1914 पृ.- 8-67
7. राष्ट्रीय अभिलेखागार, प्रोसिडिंग पृ.- 41

****

भारत की लोकसंस्कृति

डॉ. सुमित मेहता*

प्रस्तावना – लोक शब्द का अभिप्राय है प्रकाश। इस शब्द का व्यवहारिक प्रयोग संभवतया 6 हजार वर्षों से किया जा रहा है। प्राचीन ग्रन्थों जैसे उपनिषद्, ऋग्वेद आदि में भी इस शब्द की विवेचना की गई है। श्रीमद्भगवद्गीता में लोक शब्द स्थान, मानव शरीर, जनसमुदाय आदि अनेक अर्थों में प्रयुक्त हुआ है।[1] इसके अतिरिक्त मनुस्मृति, वैदिक साहित्य, टीकाओं, ग्रन्थों, मध्यकालीन भक्ति साहित्य आदि में भी लोक को जीवन का महासमुद्र बताते हुए विराट परिकल्पना की गई है।[2] महाभारत के उद्योग पर्व के एक सूत्र में लोक जीवन के दृष्टिकोण को बताते हुए कहा गया है कि 'प्रत्यक्षदर्शी लोकानां सर्वदर्शी भवेन्नर' अर्थात् पुस्तकीय शिक्षा के माध्यम से लोकत्व का तलस्पर्शी बोध नहीं होता वरन् लोक के दर्शन प्रत्यक्ष करने से इसके महत्व से अवगत् हुआ जा सकता है।[3]

लोक वाड्मय की समस्त विधाओं में लोक संगीत, ख्यालों तथा नृत्यों, कथाओं एवं नाट्यों का महत्वपूर्ण स्थान है। इन विधाओं में लोक जीवन, मनोरंजन और संस्कृति का अनुपम रूप निहारने को मिलता है। इन विधाओं के रचयिता अज्ञात हैं। परम्परागत अभ्यास के फलस्वरूप आज भी ये कलाऐं जीवित हैं। वह कला जो परम्परागत धारणाओं, आस्थाओं, अतीत की प्रेरणा आदि पर आधारित होती है लोक कला कहलाती है। वर्षो से ज्ञात यह विधाऐं राजस्थान की संस्कृति में प्राणों के समान है। गाँवों के साथ-साथ नगरों में भी लोक गीत, लोक नृत्य, ख्यालों व नाट्यों का प्रमुख स्थान है। धार्मिक एवं सामाजिक उत्सवों तथा त्यौहारों में अनेक लोक गीत और नृत्य मनोरंजन के साधन है। संस्कृति के इन प्रतीकों की अभिव्यक्ति मनोवैज्ञानिक, बौद्धिक तथा धार्मिक प्रवृत्तियों में सर्वत्र मिलती है जिससे सम्पूर्ण जनता आनन्दित होती है। मानव, लोक का व्यक्त रूप है अत: लोक संस्कृति व्यवहारिक जीवन का एक परिष्कृत रूप है।[4] लोकनाट्य, लोकगीत, लोक चित्र, लोक साहित्य, लोक नृत्य आदि लोक संस्कृति का मुख्य हिस्सा हैं।

लोक नाट्य – लोक नाट्य के अन्तर्गत ख्याल, स्वांग और लीला प्रचलित हैं। लोक नाट्य किसी ने नही रचे, ना ही किसी ने इनके संवाद और गीत बनाए हैं। वास्तव में लोक नाट्य में भाग लेने वाले प्रतिभागियों को इनकी परम्परागत कथाऐं, संवाद व गीत कण्ठस्थ होते हैं। कोई जाति विशेष इसमें भाग नहीं लेती। विशेष प्रकार के आयोजन तथा धुनों से सम्बद्ध ख्याल, लीलाएं और स्वांग सार्वजनिक रूप से आयोजित किये जाते हैं जिनसे पात्र और दर्शक दोनों ही भली-भाँति परिचित होते हैं। किसी एक गाँव या गाँवों के समूह में प्रस्तुत होने वाले लोक नाट्यों की वेशभूषा, नृत्य, संवाद आदि में बहुत समानता होती है। इनके पात्र इनको व्यवसाय की दृष्टि से नहीं अपनाते बल्कि इनकों बहुत ही सम्मान से खेलते हैं तथा इनके प्रसंगों को उत्साहपूर्वक याद रखते हैं। सभी प्रदर्शन सामान्य जीवन का हिस्सा होते हैं। प्रदर्शकों में नाई, कुम्हार, भील, भाट, ब्राह्मण आदि सम्मिलित होते हैं। कई व्यवसायियों द्वारा भी लोक नाट्य खेले जाते हैं। ये लोग एक स्थान से दूसरे स्थानों पर जाकर लोक नाट्यों यथा स्वांग, ख्याल आदि का प्रदर्शन कर लोगों का मनोरंजन करते हैं। कभी-कभी नाटक, ख्याल आदि की कथाऐं पौराणिक होती हैं। जिनके कुछ अंशों को संवाद, हास्यापद नृत्यों से भी प्रदर्शित कर दर्शकों को मोहित किया जाता है। किन्तु जब ये नाटक व्यवसाय प्रधान हो जाते हैं तो इनके प्रदर्शन में आधुनिकता प्रवेश कर जाती है और इनके लौकिक स्वरूप में गिरावट आ जाती हैं।

लीलाएँ – कुछ स्थानीय लोक नाटक ऐसे हैं जो सामुदायिक एवं व्यवसायिक हैं एवं जिनके द्वारा लोक संस्कृति के धार्मिक एवं सामाजिक जीवन के पक्ष उजागर होते हैं। उत्तरी व पश्चिमी भारत के अनेक क्षेत्रों में रामलीला व रासलीला के खेल बहुत लोकप्रिय हैं। इनमें रामायण और महाभारत पर आधारित कथाओं को लोक जीवन के साथ प्रदर्शित किया जाता है। राम-सीता अथवा कृष्ण-राधा को एक साधारण व्यक्ति के रूप में तथा उनकी वेशभूषा को लोक परिपाटी के अनुकूल दर्शाया जाता है। इन प्रदर्शनों में धर्म, नैतिकता, मनोरंजन एवं व्यवहारिकता इस तरह से संजोयी जाती है कि लोक जीवन का एक सच्चा स्वरूप प्रकट होता है। भरतपुर, करौली, अलवर आदि भागों में रासलीला को अधिक प्रचलन है। इन खेलों का संवाद स्थानीय होता है। कई बार इन्हें गीतों के द्वारा भी प्रस्तुत किया जाता है। बीच-बीच में हास्य संवाद भी मनोरंजक होते हैं। आज इन लीलाओं को प्रचलन कम होता जा रहा है फिर भी दशहरे के अवसर पर अधिकतर इनका आयोजन होता है।

रम्मत – बीकानेर और जैसलमेर में लोक नाट्य 'रम्मत' के रूप में प्रचलित हैं। इसमें सभी जाति के लोग भाग लेते हैं तथा सभी समुदायों में इसका प्रदर्शन होता है। भाषा और क्षेत्रीय रंगत के कारण रम्मत अन्य क्षेत्रों में लोकप्रिय नहीं है। इसमें प्रारम्भ से ही सभी पात्र रंगमंच पर बैठे होते हैं और अपनी-अपनी कला दिखाकर पुन: अपना स्थान ले लेते हैं। इसमें टेरियां और गायक प्रमुख होते हैं।

ख्याल – अपनी क्षेत्रीय रंगत के कारण राजस्थान में ख्याल बहुत लोकप्रिय हैं। इनमें वीरों की कहानियाँ समाहित होती हैं। वीर रस प्रधान होने के साथ-साथ ये अन्य रसों को भी व्यक्त करते हैं। इनके विषय एवं रंगत की विशेषता के कारण ये राजस्थान से बाहर भी लोकप्रिय हैं। ख्याल कभी-कभी धार्मिक कहानियों युक्त होते हैं जिन्हें गायन, वादन और संवाद से संजोकर उनकी उपयोगिता को बढ़ा दिया जाता है। धर्म और वीर रस प्रधान ख्याल ध्येय की दृष्टि से अपने-अपने क्षेत्र में विविधता लिए होते हैं। क्षेत्रीय भाषाओं और स्थानीय परिवेश के कारण इन ख्यालों को सांस्कृतिक इकाई से अलग नही

* सहायक आचार्य, राजकीय कला महाविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

समझना चाहिए। ये हमारी परम्परा के अंग हैं। अमरसिंह रो ख्याल, रूठी राणी रो ख्याल, पद्मिनी रो ख्याल, पार्वती रो ख्याल आदि अलग–अलग रंगत में प्रस्तुत किए जाने पर भी सांस्कृतिक आधार में समान है।[5]

भवाई नाट्य– भवाई नाट्य अनूठे नाट्य माने जाते हैं। इसमें पात्र व्यंग्यवक्ता होते हैं। सामयिक समस्याओं पर चोट करना एवं तात्कालिक सवाल–जवाब करना इनका प्रमुख कार्य होता है। इन खेलों के पात्र स्थानीय एवं सामयिक समस्याओं पर व्यंग्य करते हैं। ये खेल परम्परा पर आधारित होते हैं। इनका कोई रंगमंच नहीं होता परन्तु इनके संवाद बहुत ही कुशाग्र होते हैं। इन नाट्यों में मूल लेख बदलते रहते हैं। इनमें गायन, भवाइयों के हंसी–मजाक और संवाद बहुत ही मनोहर होते हैं।

गवरी– मेवाड़ में लोक संस्कृति के प्रतीक के रूप में गवरी प्रचलित है। इस नाट्य में शिव, पार्वती और भस्मासुर की कथा कही जाती है। यह सबसे लम्बा चलने वाला नाट्य होता है।

कठपुतली कला– कठपुतली अरडू की लकडी की होती है जो उदयपुर, चित्तौड़गढ़ और जयपुर की प्रसिद्ध है। भारत में छाया पुतली, धागा पुतली, दस्ताना पुतली प्रसिद्ध है। आज यह कला विलुप्तिप्राय: है और तिरस्कार का सामना कर रही है किन्तु प्राचीन समय में इस कला द्वारा शासकों ने भी अपना मनोरंजन किया है। भगवान ब्रह्मा को कठपुतली कला का जन्मदाता बताया गया है।[6]

लोकचित्र – प्राचीन काल से ही भारत में लोकपर्वों को अत्यधिक महत्वपूर्ण माना गया है। इन लोकपर्वों पर लोकचित्रों को बनाने की परम्परा रही है। लोगों में आज भी इन चित्रों के प्रति निष्ठा दिखाई देती है। इन चित्रों में विभिन्न प्रतीकों को माध्यम बनाया गया है। जैसे दीवाली पर रंगोली, माण्डना आदि, मांगलिक कार्यक्रमों में स्वास्तिक, लक्ष्मी गणेश आदि का चित्रण किया जाता है। हमारी संस्कृति में संख्या सात को भी महत्ता दी गई है। सात को शुभ माना गया है। जैसे सात फेरे, सात सोपान, सात गांठ आदि। प्राचीन काल से ही आड़ी तिरछी रेखाओं से चित्र बनाने की परम्परा रही है। लोकचित्रों में रेखाओं के प्रयोग से मानवीय आकृतियाँ बनायी गई है जो कि अनोखे सौंदर्य को दर्शाती हैं। लोकचित्रों के अन्तर्गत कुछ प्रमुख विधाऐं:–

रंगोली– भारत में प्राचीन काल से ही भूमि की उर्वरता के रहस्य के कारण भू अलंकरण की परम्परा रही है। मिट्टी, चावल का चूर्ण, गोबर, फूल, रंगों आदि से रंगोली बना भू–अलंकरण किया जाता है। रंगोली का प्रचलन महाराष्ट्र में अधिक है। गुजरात में भी रंगोली प्रसिद्ध है जिसे कलोटी कहा जाता है। रंगोली मंगल कामना से निहित होती है और इसमें शंख, स्वास्तिक, देवी–देवताओं, चक्र आदि की आकृतियाँ बनायी जाती है।

माण्डना– माण्डना का सर्वाधिक प्रयोग राजस्थान में होता है। इसमें भूमि पर, दीवारों पर, चौक में, महराबों पर गीले रंगों के प्रयोग से चित्र बनाए जाते हैं। प्रमुख रंगों में सफेद व गेरू रंग का प्रयोग किया जाता है। चित्रों में दीपक, हाथी, केले का वृक्ष, गणेश जी आदि की आकृतियां प्रमुख रूप से बनाई जाती है।

अहोई– अहोई अष्टमी के पर्व पर लघु आकृतियों के संयोजन से अहोई देवी का रूप बनाकर पूजा की जाती है। पुत्रवती स्त्रियाँ अपने पुत्रों के लिए व्रत रख उनकी मंगल कामना करती हैं।

सांझी– नवरात्रि के समय सांझी बनाकर देवी का रूप मानकर पूजा की जाती है। दीवार पर गोबर की सहायता से मनोहारी अंकन कर उसमें रंगों का प्रयोग किया जाता है। यह वृंदावन में अत्यधिक प्रचलित है।

गोदना– यह लोककला आदिवासी जनजातियों और ग्रामीण क्षेत्रों में अत्यधिक प्रचलित है। इसमें सूई अथवा किसी नुकिले यंत्र से शरीर पर चित्रण किया जाता है। चित्रों में किसी का नाम, पशु–पक्षी, अराध्य देवी–देवता, आभूषण आदि प्रमुख होते हैं।

बंगाल की पट चित्रकला– यह बंगाल की लोककला का प्राचीनतम् उदाहरण है। यह लगभग तीन हजार वर्षों पुरानी है और व्यापारिक कला है। इसे कपडे अथवा पटुआ नामक कागज पर बनाया जाता है। पटुओं में मानवाकृतियाँ और प्राकृतिक चित्रण प्रमुखता से किया जाता है। अब यह कला विलुप्ति के कगार पर है।

करवा चौथ– अवध में इसे कला गौरी बाग के नाम से जाना जाता है। इसमें दीवार को लीपकर तुरई के पत्तों से भूरे रंग से सीढी, इमली, बुढिया, देवरानी–जेठानी आदि के चित्र बनाये जाते हैं। भूमि पर चन्द्रमा की आकृति बनाकर स्त्रियाँ पति की मंगल कामना हेतु पूजा करती हैं।

लोकनृत्य– भारतीय लोकसंस्कृति में लोकनृत्यों का प्राचीन काल से ही महत्वपूर्ण स्थान रहा है। लोकनृत्य विभिन्न त्यौहारों एवं मांगलिक अवसरों पर किए जाते हैं। इन नृत्यों में कोई नियम नहीं होते। ये नृत्य मनोरंजन के लिए किए जाते हैं। कुछ नृत्य व्यवसायिक भी होते हैं और कुछ जनजाति विशेष के द्वारा किए जाते हैं। भारत में प्रचलित प्रमुख लोक नृत्यों में गुजरात का गरबा और डांडिया नृत्य जो कि नवरात्रि के समय किया जाता है, राजस्थान का घूमर नृत्य, तेरहताली नृत्य, कालबेलिया नृत्य, पणिहारी नृत्य, गीदड़ नृत्य, चरी नृत्य आदि, पंजाब का भांगडा नृत्य, केरल का छाउ, उत्तारांचल का छोलिया, चोचंरी, हिमाचल का छम्म नृत्य, उत्तारप्रदेश का लाठी नृत्य,आदि प्रमुख है।

लोकगीत– लोगों को प्रसन्न करने एवं अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए जो राग गाया जाता है उसे लोकगीत कहा जाता है। लोकगीत प्राचीन भारतीय सभ्यता को अपने में जीवन्त बनाए हुए है। लोकगीतों में ग्रामीण क्षेत्रों की परम्पराऐं सुनाई देती हैं। लोकगीत अल्हड़ व उन्मुक्त होते हैं। प्रमुख लोकगीतों में भोजपुरी, राजस्थानी, अवधी, ब्रज, गढ़वाली, बुन्देली आदि आते हैं। लोकगीतों के प्रकारों में संस्कार गीत, शिशुक्रीडा गीत, ऋतु गीत आदि आते हैं। अवध के लोकगीतों में ढोला, निरगुन, कजरी, होरी आदि के गीत, ब्रज में सांझी के गीत, युगल गीत, ख्याल, कर्नाटक में यक्षगान, बुन्देलखण्ड में संस्कार, फाग, गोट आदि, राजस्थान में गोरबन्द, काजलियो, बन्ना–बन्नी, लावणी, घोडी, हिचकी आदि प्रमुख हैं। बुन्देलखण्ड में विवाह के अवसरों पर गाए जाने वाले विदाई गीत अत्यन्त मार्मिक होते हैं।[7]

लोकगाथाएँ– लोकगाथाओं को महाराष्ट्र में पवाडा, राजस्थान में गीतकथा और गुजरात में कथागीत कहते हैं। डॉ. शंकरलाल यादव ने इन्हें लोकमहाकाव्य के समान बताया है। प्रो. गूमर ने इनका वर्गीकरण प्राचीन, कौटुम्बिक, शोकपूर्ण, अलौकिक, निजंधरी, सीमान्त व आरण्यक के रूप में किया है।[8]

लोक कथाऐं– पीढ़ियों से लोगों में प्रचलित कहानियाँ लोक कथाएँ कहलाती हैं। यह काल्पनिक और मनोरंजक होती हैं। ये आदर्शों व सिद्धान्तों के अनुसरण की शिक्षा देने वाली एवं मर्मस्पर्शी होती हैं। पौराणिक, जादूगर, व्रत, परी, नाग, अप्सराऐं आदि विषय इनमें सम्मिलित होते हैं।[9]

लोककलाऐं लोकसंस्कृति की धारा को प्रवाहित कर प्राचीन परम्पराओं को जीवित रखने वाली होती हैं। लोककलाऐं समाज की धरोहर हैं तथा मान्यताओं में भिन्नता होने के पश्चात् भी एकत्व का भाव प्रदर्शित करती है। यह सशक्त व प्रभावी रूप से निरन्तरता को दर्शाती है। यह रूढ़िवादिता को दर्शाती है अर्थात् जो अभिप्राय लोक में एक बार प्रचलित हो जाते हैं उनका

अनुसरण पीढी दर पीढी किया जाता है।

लोकसंस्कृति में जीवन का प्रवाह दिखाई देता है। लोक संस्कृति स्वयं में अनेकों गुण, रूप और रंगों को समाहित किए हुए है। लोक संस्कृति ने मानव जीवन को आत्मीयता और ऊर्जा प्रदान कर परम्पराओं से घेरे रखा है। मांगलिक अनुष्ठानों में श्रद्धा व भक्ति के साथ लोकसंस्कृति दिखाई देती है। इसी के अनुसार सोलह संस्कार जैसे जन्म संस्कार, अन्नप्राशन, मुण्डन, कर्णभेदन, शिक्षा, विवाह आदि की विधि-विधान पूर्वक पुष्टि की जाती है।[10] लोक कलाऐं समय के अनुसार परिवर्तित हुई हैं किन्तु भाव सदैव एक सा रहा है। कला किसी भी बन्धन में ना बंधकर स्वतन्त्र है किन्तु स्वयं राष्ट्रीय परम्परा को एक सूत्र में बांधे रखती है। अपने में सजीवता लिए हुए लोककलाऐं मनुष्य को संस्कार सम्पन्न बनाती है। ये माधुर्यता व उल्लास का अक्षय स्त्रोत हैं।[11] विलुप्त होती सांस्कृतिक परम्पराओं को बचाने हेतु इनके अत्यधिक प्रचार-प्रसार की आवश्यकता है ताकि आने वाली पीढ़ी इन लोककलाओं से अनजान ना रहे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गीता : (3/22), (3/24), (3/25), (8/92), (9/33)
2. लोक : अर्थ स्वरूप, शैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तव, पृ. 19
3. 43/36, महाभारत उद्योग पर्व, पूना
4. ए हैण्डबुक ऑफ फॉकलोर, लोक संस्कृति विशेषांक, सं. 2010, पृ. 65
5. लोक-नाट्य परम्परा और प्रवृत्तियाँ, प्रस्तावना, देवीलाल सांभर, पृ. 12
6. रामलीला, दयाप्रकाश सिन्हा, पृ. 70
7. लोकगीत : कालातीत धरोहर, सुरेश गौतम, पृ. 34
8. लोकागाथा : परिचय व स्वरूप, पवन अग्रवाल, पृ. 50
9. राजस्थान का लोक साहित्य, रविन्द्र भारती, पृ. 54
10. लोकसंस्कृति की अवधारणा, त्रिभुवननाथ शुक्ल, पृ. 26
11. रंगोली एक राष्ट्रीय परिदृश्य, वीणा श्रीवास्तव, पृ. 64

****

अभिव्यक्ति का अधिकार

डॉ. अमित मेहता *

प्रस्तावना – उदारवादी लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में विभिन्न की स्वतंत्रायें प्रदान की जाती है, उन सभी के अंतर्गत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार का महत्वपूर्ण स्थान है व साथ ही मानव अधिकारों के क्षेत्र में अहम स्थानहै। वर्तमान समय में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रा जन–संचार माध्यमों में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है और इलेक्ट्रोनिक मीडिया, प्रिंट मीडिया औ रइंटरनेट इत्यादि इस स्वतंत्रता का व्यापक स्तर पर प्रयोग भी करते है।

राजनीतिक सिद्धांत के अंतर्गत अभिव्यक्ति और भाषण की स्वंतत्रता का महत्वपूर्ण स्थान है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रताना केवल स्वतंत्रताओं की पूर्व शर्त है बल्कि यह लोकतंत्र के मूल्यों में महत्वपूर्ण में मूल्यों में महत्वपूर्ण स्थान पर स्थित है, इसे अन्य सभी स्वतंत्रताओं की जननी है। आधुनिक युग में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को स्वतंत्र समाज में ना केवल स्वीकृति प्रदान की गयी है व इसके संरक्षण को महत्व दिया गया है। अपने विचारों को बिना किसी बाधा के व्यक्त करना प्रत्येक समाज व राज्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ ही भाषण की स्वतंत्रता का लोकतंत्र में अहम स्थानहै। भाषण या वाक् स्वतंत्रता में बोलने वाले से अधिक सुनने वाले व्यक्ति की भूमिका महत्वपूर्ण है व साथ ही यह सत्य की खोज में अहम स्थान पर स्थित है। इसे मौलिक अधिकारों की श्रेणी में भी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता व्यक्तिगत विकास के साथ–साथ समुदाय और राज्य के विकास में भी सहायक है। (हेनरी: 17–19)। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकारों को सार्वभौमिक रूप से उदारवादी लोकतांत्रिक देशों के द्वारा स्वीकार कर लिया गया है अर्थात् इसे अन्र्तराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृति प्राप्त है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता लोकतंत्र की पूर्व शर्त है क्योंकि यह विविधता और बहुलता को बनाये रखता है जो लोकतांत्रिक समाज के लिए आवश्यक है। यह एक लोकतांत्रिक समाज को समझने व अध्ययन करने का माध्यम भी है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार के साथ ही उस पर व्यक्तिगत नैतिक दायित्व भी होता है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ व्यापक चुनौतियाँ भी अस्तित्व में विद्यमान रहती है जैसे–निजता, गरिमा और सम्मान की सुरक्षा बनाये रखना, आतंकवाद के युग में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, इंटरनेट के युग में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता व अधिकार के रूप में इसका स्वरूप इत्यादि (अर्सलान 1–7)। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता निरंतर वृहत होर ही है (रिडडी हौ 2008: 1781) यद्यपि किसी भी व्यक्ति के सर्वांगीण विकास हेतु अधिकारों का अहम स्थान है। किन्तु व्यक्ति के इस अधिकार क्षेत्र में राज्य का हस्तक्षेप होना चाहिए अथवा नहीं अथवा किस सीमा तक यह अधिकार प्रासंगिक है।

भारत का संविधान अपने नागरिकों विभिन्न प्रकार के मौलिक अधिकार प्रदान करता है, जो उन प्रमुख अधिकारों में एक प्रमुख है अनुच्छेद 19 में वर्णित स्वतंत्रता का अधिकार जिसके अंतर्गत भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार, निशस्त्र शांतिपूर्ण रूप से एकत्र होने का अधिकार, संगठन व संघ बनाने की स्वतंत्रता भारतीय भू–भाग में कहीं भी स्वतंत्र रूप से घूमने की आजादी, भारतीय भू–भाग में कहीं भी बसने की स्वतंत्रता कोई भी व्यवसाय, व्यापार व उद्योग स्थापित व उसे संचालित करने की स्वतंत्रता, प्रेस की स्वतंत्रता इत्यादि भारत के लोगों ने स्वयं को भारत का संविधान प्रदान किया है।

भारतीय लोकतांत्रिक समाज में भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को स्थान प्रदान किया है जो अन्य सभी स्वतंत्राओं का अंग है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में विचारों और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार अंतर्निहित किया गया है व इस स्वतंत्रता को सुरक्षित किया गया है। (अध्याय 2 : 43)।

भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भारत में संविधानिक रूप से सुरक्षित की गई है किंतु यह सीमित है तथा इस पर कुछ सीमाएं भी निश्चित की गयी है। अभिव्यक्ति स्वतंत्रता और अधिकार का विषय है और विचारों की स्वतंत्रता और जानने का अधिकार ही अभिव्यक्ति स्रोत है। भाषण की स्वतंत्रता का संबंध लोकतंत्र से है।

जार्ज बर्नाड शॉ ने कहा है कि भाषण की स्वतंत्रता और सभी नागरिकों के विचारों का सिद्धांत इस पर निर्भर नहीं करता कि सभी सही है बल्कि यह स्पष्ट करता है कि सभी व्यक्ति किसी ना किसी स्तर पर गलत है और दूसरा व्यक्ति सही है, इसलिए यदि किसी भी व्यक्ति की बात को अनसुना किया जाना लोक अहितकारी है (अध्याय : 41–43)

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को उदारवादी लोकतांत्रिक देशों द्वारा व्यापक रूप से स्वीकार कर लिया गया है, किंतु इसकी सीमाओं के विषय में निरंतर बहसें चलती रहती है। क्योंकि कई बार स्वतंत्र अभिव्यक्ति से समस्त उत्पन्न होती है। द्वेष भाषण मुख्यत: अपने विरोधी के प्रति आक्रामक रूप में होती हैं। उनसे विभिन्न समूहों और समुदायों की भावनाओं को आघात पहुंचता है व उससे रोष की भावनाएं उत्पन्न होती है। यह कई बार राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर समस्याएं भी उत्पन्न करते है जो द्वेष भाषण व द्वेष अभिव्यक्ति के रूप में विवाद बढ़ाते हैं (स्मिट्स 2009 : 152–153)

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार कुछ स्थितियों में नकारात्मक रूप में हो जाता है। ऐसी घटनाएं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार उनकी सीमाओं, कमियों व अपवादों को दर्शो है। यदि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से किसी दूसरे व्यक्ति को प्रत्यक्ष रूप से हानि पहुंचती है तो ऐसी स्थिति हिंसा को जन्म देती है तो ऐसी स्थिति में इसे उदारवादी परिप्रेक्ष्य से

* इतिहास विभाग, राजकीय कला महाविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

सही नहीं कहा जा सकता इसका एक कारण यह है कि उदारवादी लोकतंत्र का मूल उद्देश्य नागरिकों को सुरक्षा और बचाव प्रदान करना है जबकि द्वेष व रोष से उत्पन्न स्थिति उस मार्ग में बाधक है (स्मिट्स 2009 : 160)।

द्वेष भाषण वह भाषण है जो दूसरे व्यक्ति, समुदायों के लिए घृणा, क्रोध, हानि पहुँचाने की भावनाओं से लिप्त होती है। नस्लीय और नृजातीय टिप्पणी करना तथा किसी दूसरे व्यक्ति, समूह या समुदाय के लिए घृणा पूर्ण विचारों का प्रतिनिधि करना, लैंगिक दृष्टि से किये गए टिप्पणी भी इसी श्रेणी का ही भाग है, जिसके अंतर्गत महिलाओं को निम्न स्तर का मानना शामिल है (वैलेंटाइन 2013 : 1-2)।

इस अधिकार का एक लम्बा दार्शनिक-नैतिक और विधिक-राजनीतिक इतिहास रहा है। बीसवीं शताब्दी में अधिकार अति महत्वपूर्ण हो गए अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार माव अधिकारों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। यह व्यक्तिगत विचारों की स्वतंत्रता का संचार और व्यवहारिक रूप भी है। आधुनिक लोकतांत्रिक जगत में मीडिया की भूमिका अति महत्तवपूर्ण हो गई है और यह विभिन्न लोकतांत्रिक देशों में लोकतंत्र के चतुर्थ स्तंभ के रूप में स्थित है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में सूचना और विचारों को जानने उन्हें प्राप्त करने व सूचनाओं को प्रदान करने का अधिकार भी सम्मिलित व इसका व्यापक दायरा है।

भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक मौलिक अधिकार का रूप में है जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी उदारवादी लोकतांत्रिक देशों द्वारा अपनाया गया है। इसकी महत्ता इसी बात से स्पष्ट होती है कि इस स्वतंत्रता के बिना अन्य स्वतंत्रताओं का अस्तित्व में बने रहना कठिन है। यह सामान्य कानून के रूप में व्याप्त है। सरकारी और राजनीतिक विषयों को संचार के माध्यम से समाविष्ट करता है (एडिटोरियल 2015 : 21)।

आधुनिक युग में यह विभिन्न संचार के माध्यमों के द्वारा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार का उपयोग किया जाता है। इन सभी माध्यमों से व्यक्ति अपनी बात स्पष्ट करता है व जानकारियों, सूचनाओं का आदान प्रदान करता है। कई बार ऐसी अप्रिय घटनाएं व दुर्घटनायें उत्पन्न हो जात है जो शांति और व्यवस्था को हानि पहुंचाती है। ऐसी घटनाएं इस अधिकार हेतु कुछ सीमित प्रतिबंधों की अनिवार्यता को उजागर करती है।

वर्तमान उदारवादी लोकतांत्रिक देशों में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक महत्वपूर्ण आयाम के रूप में विद्यमान है तथा यह सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास का एक अभिन्न अंग भी बन गया है।

भारत के संविधान के द्वारा मौलिक अधिकारों के अंतर्गत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार का विस्तृत रूप से उल्लेख किया गया है। आधुनिक लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से भी अति-महत्वपूर्ण है। इस अधिकार की प्रासंगिकता वर्तमान लोकतांत्रिक व्यवस्था का अभिन्न अंग है व भावी राजनीतिक लोकतांत्रिक पृष्ठभूमि को सशक्त रूप प्रदान करने का महत्वपूर्ण साधन व माध्यम है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हेनरी, पी., चौप्टर 2, कांसेप्ट, मीनिंग एंड स्कोप ऑफ फ्रीडम स्पीच एंड एक्सप्रेशन, पृष्ठ 16-24
2. अर्स्लान, जेड., (2015). फ्रीडम ऑफ एक्सप्रेशन,ड डेमोक्रेसी एंड चलेंजेस, पृष्ठ. पृष्ठ 1-8. http://anayasa.gov.tr/en/inlinepages/press/NewsAndEvents/detail/pdf/fullte0t.pdf.
3. रिडडी हौ, जी. बेवर्ली ए, एंड जॉनट्रेविस, (2008). 'फ्रीडम ऑफ एक्सप्रेशन', अमेरिकन एसोसिएशन फॉर द एडवांसमेंट ऑफ साइंस, साइंस न्यूसीरीज, वोल. 319, न. 5871 (28).
4. अध्याय.2 (ब), फ्रीडम ऑफ स्पीच एंड एक्सप्रेशन अंडर इंडियन कांस्टीटयूशन विद स्पेशल रेफेरेंस टू इलेक्ट्रॉनिक मीडिया. http://shodhganga.infibnet.ac.in/bitstream/10603/36776/11/11_chepter%202.pdf
5. स्मिट्स, के., (2009). शुड ओफ्फेंसिवे स्पीच बीरेगुलेटेड, अपलाइंग पोलिटिकल थ्योरी : इश्यूज डिबेटस, पेल्ग्रेव मैकमिलन: न्यूयॉर्क. पृष्ठ. 152-170.
6. वैलेंटाइन, पी.(2013),'फ्रीडम ऑफ एक्सप्रेशन, हेटस्पीच एंड सेंसरशिप', वीसीयू, अप्रैल 6. पृष्ठ. 1-4- http://klinechair.missouri.edu/docs/freedom_of_e0pression.pdf.
7. एडिटोरियल, (2015). 'फ्रीडम ऑफ स्पीच एंड एक्सप्रेशनइज ए राईट: द सुप्रीम कोर्टस रूलिंग स्ट्राईकिंग डाउन सेक्सन' 66। वेंचर्स टू प्रोवाइड ए लार्जर प्रोटेक्शन टू फ्री स्पीच-, इकनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली, वोल. 50, न. 13, मार्च 28, 2015.
8. कानवन, (2014). एफ0, जे.एस. मिल ऑन फ्रीडम ऑफ एक्सप्रेशन, मॉडर्न ऐज, पृष्ठ. 362-369-http://isi.org/wp&content/uploads/2014/10/canavan.pdf/066229-
9. मेंडेल, टी., (2010). रेस्ट्रिक्टींग फ्रीडम ऑफ एक्सप्रेशन: स्टैंडर्ड्स एंड प्रिंसिपल्स, सेंटर फॉरलॉ एंड डेमोक्रेसी-http://www.lawdemocracy.org/wp&content/uploads/2010/07/10.03.Paper&on&Restrictions&on&FOE.pdf

****

कुटीर एवं लघु उद्योगों में रोजगार की संभावनायें

डॉ. प्रवीण पंड्या *

शोध सारांश – भारतीय अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी एक प्रमुख राष्ट्रीय समस्या है। प्रतिवर्ष बेरोजगारी में होने वाली वृद्धि ने अर्थव्यवस्था के सामने चुनौती खड़ी कर दी है, साथ ही आर्थिक विकास की नियोजित प्रक्रिया पर भी प्रश्न चिन्ह लगा दिया है। भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही केन्द्र एवं राज्य सरकारें इस समस्या के समाधान हेतु प्रत्यनशील है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा भी रोजगार वृद्धि की कोशिश की गई हैं, लेकिन अपेक्षित सफलता प्राप्त नहीं हो पा रही।

प्रस्तावना – 1991 में भारत सरकार द्वारा आर्थिक उदारी करण नीति को अपनाया गया पर इससे बेरोजगारी की समस्या और अधिक जटिल हो गयी है। क्योंकि एक ओर शासकीय उपक्रमों में निजीकरण को बढ़ावा तथा सरकारी व्यय में कटौती करके सरकारी नौकरियों में कमी की जा रही है। वहीं दूसरी तरफ आधुनिकी करण व कम्प्यूटरीकरण के कारण निजी क्षेत्र में भी नौकरियों की कमी होती जा रही है। ऐसी स्थिति में स्वरोजगार ही स्वरोजगार का एकमात्र विकल्प हो सकता है। देश में जो विभिन्न तरह की बेरोजगारी पाई जाती हैं जैसे चक्रीय बेरोजगारी मौसमी बेरोजगारी, प्रच्छन्न बेरोजगारी इनका समाधान भी स्वरोजगार या ग्रामीण उद्योगों द्वारा ही संभव हो सकता है। इस संदर्भ में योजना आयोग के अनुसार –'ग्रामीण उद्योगों को विकसित करने का प्राथमिक उद्देश्य रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना, आय एवं रहन–सहन के स्तर को ऊँचा उठाना तथा एक संतुलित एंव समन्वित अर्थ–व्यवस्था का निर्माण करना है।'

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने भी कहा था कि–'भारत का मोक्ष उसके कुटीर उद्योगों में ही निहित है।'

उपर्युक्त विचारों से स्पष्ट है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी की समस्या के समाधान के लिये या अधिकाधिक रोजगार के अवसरों के सृजन हेतु ग्रामोद्योगों को पर्याप्त व समुचित संरक्षण प्रदान किया जाना चाहिये। तभी इस क्षेत्र की रोजगार संभावनाओं का पूर्ण उपयोग किया जा सकेगा।

ग्रामीण क्षेत्र के उद्योगों की अवधारणा को स्पष्ट करना होगा। लघु उद्योगों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है –पारंपरिक लघु उद्योग एवं आधुनिक लघु उद्योग।

पारंपरिक लघु उद्योगों में खादी व हथकरघे, हस्तशिल्प, रेशम उद्योग व नारियल उद्योग शामिल किये जाते है जबकि आधुनिक लघु उद्योगों में परिमार्जित वस्तुएं, टी.वी सेट, इलेक्ट्रानिक उपकरण विभिन्न इंजीनियरिंग वस्तुएं आदि शामिल हैं।

पांरपरिक लघु उद्योग या ग्रामोद्योग अधिक श्रम–प्रधान हैं जबकि आधुनिक लघु उद्योग बहुत ही परिमार्जित मशीनरी व उपकरणों का प्रयोग करते हैं। एक अनुमान के अनुसार 1990–91 में पारंपरिक लघु उद्योगों द्वारा कुल उत्पादन का 13 प्रतिशत उपलब्ध कराया गया तथा कुल रोजगार में इनका योगदान 56 प्रतिशत था जबकि आधुनिक लघु उद्योगों का कुल उत्पादन में 74 प्रतिशत तथा कुल रोजगार में केवल 33 प्रतिशत का योगदान रहा।इससे स्पष्ट है कि इन उद्योगों की उत्पादकता अपेक्षाकृत अधिक है।

पांरपरिक ग्रामीण उद्योगों की कुछ विशेषताएं है–

1. सबसे बड़ी विशेषता यह कि ग्रामीणों को सहायक रोजगार उपलब्ध करा सकते है।
2. ग्रामीण उद्योगों का संचालन उन व्यक्तियों द्वारा किया जाता है जो गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करते है।
3 ग्रामीण क्षेत्र में पाई जाने वाली प्रच्छन्न व मौसमी बेरोजगारी के समाधान का प्रभावपूर्ण विकल्प है।
4. ग्रामीण उद्योगों द्वारा ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पूर्ण रोजगार के लक्ष्य की प्राप्ति की ओर गतिमान किया जा सकता है।

भारत में जिस आर्थिक सुधार प्रक्रिया को लागू किया गया उसके कारण ग्रामीण उद्योगों की उपेक्षा हुई परिणाम स्वरूप बेरोजगारी व मँहगाई में लगातार वृद्धि हुई।खाडसारी व गुड़ निर्माण उद्योगों के कम होने से चीनी पर निर्भरता बढ़ी।

दीर्घकाल में ग्रामीण बेकारी को कम करने तथा ग्राम उद्योगों की गति को तेज करने हेतु आधुनिक लघु उद्योगों के विस्तार में तेजी लाना होगी। निष्कर्ष यह निकलता है कि परंपरागत ग्राम या लघु उद्योगों एवं आधुनिक लघु उद्योगों के बीच समन्वय स्थापित करने की आवश्यकता है।

ग्रामोद्योग क्षेत्र में कौन–कौन सी तथा किस तरह की वस्तुओं का उत्पादन हो सकता है इस पर विचार करना आवश्यक है। इन उद्योगों को स्थापित करने के लिए सरकार द्वारा विभिन्न योजनाओं के माध्यम से वित्तीय सहायता दी जाती है और प्रशिक्षण विपणन व अन्य सुविधायें भी उपलब्ध कराई जाती है।

इन उद्योगों को निम्नलिखित वर्गो में रखा जा सकता है–

1. खाद्य सामग्री से संबंधित उद्योग –अनाज व दाल प्रशोधन उद्योग, ताड़ एवं ताड़ वस्तु उद्योग, गुड व खांडसारी उद्योग, ग्रामीण तेलधानी उद्योग, मधुमक्खी पालन व फल प्रशोधन उद्योग।
2. खनिज व रसायन आधारित उद्योग –आखाद्य तेल व साबुन उद्योग, ग्रामीण कुम्हारी उद्योग, हाथ कागज, कुटीर चूना उद्योग, दिया सलाई उद्योग, अगरबत्ती उद्योग।
3. वनोपज आधारित उद्योग–लाख उत्पादन गोंद उत्पादन, कत्था, चिरोंजी उत्पादन, बांस व बेत का उद्योग तथा औषधीय प्रयोजनों के लिए जंगली जड़ी–बूटियों एवं फलों का संचय।
4. अन्य वस्त्र उद्योग – सूती, ऊनी, रेशमी एवं पोली नाज।

* सह आचार्य (अर्थशास्त्र) राजकीय कन्या महाविद्यालय, खेरवाड़ा (उदयपुर) (राज.) भारत

5. अन्य उद्योग – चर्मोद्योग, जैव गैस, लुहारगिरी व बढ़ईगिरि, बर्तन उद्योग आदि।

ग्रामोद्योगों में उत्पादित की जाने वाली वस्तुओं के उपरोक्त वर्गीकरण से यह स्पष्ट होता है कि ये सभी वस्तुएं श्रम प्रधान हैं व सामान्य उपभोग की हैं। श्रम प्रधान होने के कारण इन उद्योगों में रोजगार की संभावनायें अधिक हैं।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास की अनंत संभावनाओं व पूंजी की कमी को ध्यान में रखते हुये ग्रामीण औद्योगिकरण की नीति ऐसी होनी चाहिए जिसमें इनके विस्तार पर अधिक बल/जोर हो क्योंकि ये उद्योग श्रम प्रधान होते हैं तथा कम पूंजी एवं सामान्य प्रशिक्षण के बाद किसी भी उद्यमी /व्यक्ति द्वारा शुरू किये जा सकते है। ये औद्योगिक इकाईयाँ अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने के साथ अधिक से अधिक लोगों को रोजगार प्रदान करने में सक्षम होती है। आज सारे विश्व में इन ग्रामीण/कुटीर / लघु उद्योगों का महत्व निर्विवाद रूप से स्थापित हो चुका है एवं माना जा चुका है कि भारी निवेश पर आधारित उद्योगों की बजाये अल्पनिवेश पर आधारित छोटे-छोटे उद्योगों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए ताकि 'हर हाथ को रोजगार एवं हर मुख को आहार' की परिकल्पना चरितार्थ की जा सके। ग्रामोद्यागों के विकास से एक ओर जहाँ रोजगार के अधिकाधिक अवसरों का सृजन होता है नहीं दूसरी ओर इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था में आत्मनिर्भरता भी बढ़ती है। अतएव रक्षा संबंधी वस्तुओं के उत्पादन को छोड़कर अन्य वस्तुओं के उत्पादन के लिए लघु व कुटीर उद्योग क्षेत्र को ही प्रोत्साहन देना सही होगा।

ग्याहरवी पंचवर्षीय योजना कुटीर/सूक्ष्म एवं लघु उद्योग क्षेत्र को उद्योग का एक महत्वूपर्ण अंग मानती है। क्योंकि इसके द्वारा कुल औद्योगिक का 40 प्रतिशत एवं कुल निर्यात का 34 प्रतिशत योगदान है। 2003-2004 में इस क्षेत्र का सकल घरेलू उत्पाद में 6.7 प्रतिशत भाग था। पिछले 5 वर्षो में कुटीर एवं लघु उद्योग क्षेत्र में वृद्धि दर 12 प्रतिशत रही है। निम्नलिखित तालिका से सूक्ष्म/कुटीर उद्योगों का अर्थव्यवस्था में उत्पादन एवं रोजगार में योगदान की स्थिति स्पष्ट हो जायेगी-

विभिन्न वर्षो में सूक्ष्म/कुटीर एवं लघु उद्योगों में उत्पादन एवं रोजगार

वर्ष	उत्पादन(चालू कीमतों पर करोड़ रूपयों में)	रोजगार (लाख व्यक्ति)
2006-2007	5,85,112	312.5
2007-2008	6,82,613	322.3
2008-2009	8,16,705	338.4
2009-2010	9,77,144	355.3
2010-2011	11,69,112	373.1
2011-2012	13,98,803	391.7

स्त्रोत-योजना आयोग, ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना 2007-2012

रोजगार में वृद्धि के साथ -साथ ग्रामोद्योगों के विकास से सामाजिक /आर्थिक असमानता हटेगी और देश को समग्र आर्थिक समृद्धि की दिशा में आगे बढने में सफलता हासिल होगी। इन उद्योगों के विकास के महत्व को नि.लि. तर्को से स्पष्ट किया जा सकता है-

1. रोजगार-इन उद्योगों में श्रम प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाता है अत: देश में उपलब्ध प्रचुर जनसंख्या का सार्थक उपयोग हो सकता है । इनकी स्थापना में बहुत कम पूंजी की आवश्यकता होती है। स्थापना के तुरंत बाद ही लोगों को रोजगार उपलब्ध हो जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों की प्रच्छन्न बेरोजगारी की समस्या का समाधान होता है।
2. भारत में 1991 में लघु व कुटीर उद्योगों में 61.4 लाख लोग कार्यरत थे, मार्च 2007 में यह आंकडा 3.12 करोड तक पहुंच चुका था।
3. कम पूंजी में अधिक उत्पादन -इन क्षेत्रों की उत्पादकता इसमें विनियोजित पूंजी के अनुपात में बहुत अधिक होती है। भारत में लघु उद्योग क्षेत्र का उत्पादन वर्ष 1994-95 में 122,210 करोड़ रू.था जो कि वर्ष 2006-07 तक बढ़कर 471,663 करोड रू हो गया। वर्तमान में कुल उत्पादन का लगभग 40 प्रतिशत इसी क्षेत्र से आता है।
4. आर्थिक समानता -ग्रामोद्योग समाज की आर्थिक असमानता को दूर करने में बहुत सहायक सिद्ध होते हैं। ये उद्योग छोटे पैमाने पर चलाये जाते है। इसलिए लाभ की मात्रा अपेक्षाकृत कम होती है लेकिन इससे आर्थिक केन्द्रीकरण नहीं होता।
5. अर्थव्यवस्था का विकेन्द्रीकरण-लघु व कुटीर उद्योग देश में विकेन्द्रीकरण का महत्वपूर्ण कार्य करते हैं क्योंकि ये स्थानीय कच्चे माल एवं आवश्यकतानुसार देश के कोने -कोने में फैले होते हैं।
6. कलात्मक वस्तुओं का उत्पादन -इन वस्तुओं का उत्पादन ग्रामोद्योग में ही संभव है।वर्तमान मे राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी ऐसी वस्तुओं के विशाल बाजार उपलब्ध है।
7. छिपे हुये संसाधनों का उपयोग लघु व कुटीर उद्योगों में अपसंचित धन व छुपे हुए कौशल का उपयोग भी होता है। इन उद्योगों द्वारा संसाधनों एवं संपदा का प्रकटीकरण व समुचित उपयोग होता है।
8. शहरी करण एवं औद्योगीकरण के दुष्प्रभावों से मुक्ति-लघु व कुटीर उद्योग छोटे-छोटे क्षेत्रों में स्थापित होते हैं इसलिए शहरीकरण व औद्योगिक प्रदूषण की समस्याएं उत्पन्न नही होती।

उपर्युक्त तथ्यों /तर्को से लघु व कुटीर उद्योगों का महत्व पूर्णत: स्पष्ट है। इस संबंध में प्रसिद्ध राजनीतिक व सामाजिक चिंतक डॉ.श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने कहा था -'भारत गाँवों का देश है अत: सरकार को संतुलित अर्थव्यवस्था की दृष्टि से कुटीर व लघु उद्योगों के विकास को सर्वाधिक महत्व प्रदान करना चाहिये।'

लघु व कुटीर उद्योगों का महत्व होने के बाबजूद इन उद्योगों को बहुत-सी समस्यायों का सामना करना होता है उनमें मुख्य है कच्चे माल की अपर्याप्त उपलब्धता, कम उत्पादकता, उत्पादन लागत का अधिक होना, पूंजी की कमी, निर्मित वस्तुओं के विपणन में कठिनाई, बडे उद्योगों से प्रतिस्पर्धा तथा इस क्षेत्र मे कार्यरत श्रमिकों के लिए पर्याप्त कानूनी व्यवस्था का अभाव आदि।

इन समस्याओं को प्रभावशाली ढंग से हल करके ग्रामोद्योगों विकास की गति को तेज किया जा सकता है। वर्तमान वैश्विकरण के परिदृश्य में इन ग्रामोद्योगों के विकास की रणनीति में निम्नलिखित तत्वों को शामिल करना आश्यक हो जाता है-

1. ग्रामोद्योगों को ऐसी प्रौद्योगिकी/तकनीक उपलब्ध कराई जाए जिससे परंपरागत उद्योगों को पुनर्जीवित किया जा सके तथा नवीन औद्योगिक इकाईयों की स्थापना एक व्यवस्थित नियोजन नीति के अतंर्गत संभव हो सके।
2. कुटीर व लघु उद्योगों की मुख्य समस्या पूंजी की है अत: इस क्षेत्र को पर्याप्त मात्रा मे एवं प्रतिस्पर्धा में बने रहने के लिए कम ब्याज दर पर पूंजी उपलब्ध कराई जानी चाहिए ।
3. कच्चे माल की खरीदी व उत्पादन का विपणन इनकी स्वयं की सहकारी समितियों के माध्यम से किया जाना चाहिए। इस प्रकार इनकी लागत में पर्याप्त रूप से कमी आ सकती है।

4. लघु व कुटीर उद्योगों के लिए आवश्यक होगा कि उनके द्धारा निर्मित वस्तुओं की गुणवत्ता में सुधार आवे तथा इस पर नियंत्रण हेतु प्रत्यन किये जाये जिससे ये उद्योग भी राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में अपना हिस्सा प्राप्त कर सकेंगे।
5. लघु व कुटीर उद्योगों को अनुसंधान व अन्वेषण पर व्यय करना चाहिए जिससे उत्पादन का उन्नयन हो व लागत में कमी आये।
6. लघु व कुटीर उद्योगों के प्रबंधकों व कारीगरों के लिए शासकीय व अर्द्धषासकीय संस्थाओं द्धारा प्रशिक्षण कार्यक्रम समय-समय पर चलाये जाये ताकि एक ओर उत्पादक की गुणवत्ता में सुधार हो और इन्हें बाजार की तकनीक का भी ज्ञान हो सके।
7. बहुत आवश्यक है कि लघु उद्योगों व वृहद उद्योगों का कार्यक्षेत्र अलग-अलग हो जिससे ढोनों अलग-अलग वस्तुओं का निर्माण करें तथा राष्ट्रीय संसाधनों का उपयोग समन्वित विकास में हो सके।
8. बहुत आवश्यक है कि लघु उद्योगों को बडे उद्योगों की सहयोगी इकाई के रूप में कार्य करना चाहिए ताकि व्यर्थ की प्रतिस्पर्धा में राष्ट्रीय संसाधनों का दुरूपयोग न हो।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास हेतु बनाई गई रणनीति में यदि उपर्युक्त तत्वों का समावेश किया जाये तो ग्रामोद्योग देश के संतुलित एवं रोजगारोन्मुख विकास में अपनी सक्रिय व महत्वपूर्ण भूमिका का सफलतापूर्वक निर्वहन कर सकते है। इसके अतिरिक्त ग्रामोद्योग क्षेत्र को अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ रोजगार के अधिक से अधिक अवसरों के सृजन प्रक्रिया में रोजगार विषयक रणनीति को उन क्षेत्रों मे निर्धनता एवं बेरोजगारी के समाधान/निवारण हेतु चल रहे अन्य कार्यक्रमों के साथ भी जोड़ना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ.व्ही.सी.सिन्हा -औद्योगिक अर्थशास्त्र
2. रूद्रदत्त एवं सुदंरम-भारतीय अर्थव्यवस्था
3. मिश्र व पुरी भारतीय अर्थव्यवस्था
4. गंगाधर कराले-ग्रामीण विकास के लिए समन्वित प्रयास कॉन्सेप्ट पब्लिकेशिग कंपनी, नई दिल्ली
5. डॉ.वीणा पाणि सिंह - ग्रामीण स्वास्थ संरक्षण, क्लासिकल पब्लिकेशिंग कंपनी, नई दिल्ली।

****

मध्यप्रदेश में वन और सुरक्षा

डॉ. पन्नालाल कटारा*

शोध सारांश – मानव जीवन के तीन बुनियादी आधार शुद्ध हवा, ताजा पानी और उपजाऊ मिट्टी मुख्य रूप से वनों पर ही आधारित है। इसके साथ ही वनों से कई प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लाभ भी है। खाद्य पदार्थ, औषधियाँ फलफूल, ईधन, पशु आधार, इमारती, लकडी, वर्षा सन्तुलन भू-जल संरक्षण, और मिट्टी की उर्वरता, ऑक्सीजन की उपलब्धता आदि प्रमुख हैं। जिसके बिना मानव जीवन का अस्तित्व ही नही हैं मनुष्य के जीवन में वनों की महत्वता चारो दिशाओं में फैली है। हम यह कह सकते हैं, कि जिस प्रकार मानव शरीर में रक्त का प्रवाह होता है। जिसके बिना मानव जीवन सम्भव ही नही हैं। वही कार्य वनों का है।

शब्द कुंजी –(1) सचेत करना = जागरूकता करना (2) संरक्षण = सुरक्षा (3) संर्वधन = विकास (4) सदासेवक = सदैव सेवा करने वाला (5) अनछुए = जिसे छुआ न गया हो

प्रस्तावना – भारत के केन्द्र में स्थित मध्य प्रदेश देश का हृदय स्थल है। मध्य प्रदेश में वन क्षेत्र देश में सर्वाधिक है। जैव विविधता में समृद्ध होने तथा अनेक महत्वपूर्ण नदियों का जलग्रहण क्षेत्र होने के कारण प्रदेश के वन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मध्य प्रदेश में भौगोलिक क्षेत्रफल 3,08,245 वर्ग किमी, एवं वन क्षेत्र 94,689 वर्ग किमी, तथा वन प्रतिशत 30.71 प्रतिशत हैं जो प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र 0.51 हेक्टेयर है। अत: प्रदेश के पर्यावरणीय एवं पारिस्थिकीय सन्तुलन तथा जल संरक्षण में प्रदेश के वनों का विशिष्ट योगदान है। यह लाभ हमें निरन्तर तभी प्राप्त होगा, जब 'वनों को सुरक्षित रखते हुए उनसे प्राप्त होने वाले विभिन्न प्रकार के लाभ के बारे में जन साधारण को शिक्षित एवं संचेत करने से ही हम उन्हें सुरक्षित रखने के उद्देश्य की पूर्ति करने में सफल होगे। स्थानीय जन – साधारण को वनों के संरक्षण एवं उनके विकास के महत्व को हृदयगम करने की आवश्यकता है।' वनों का संरक्षण एवं संर्वधन करने के लिए जंगल के विनाश के खिलाफ मुहिम चलाने की आवश्यकता है 'हालाकि हमें इस बात को लेकर स्पष्ट रूख रखना चाहिए, कि म0प्र0 या कोई भी प्रदेश अपनी 22 फीसदी भूमि विकास के लिए इस्तेमाल किए बिना ऐसे ही नहीं छोड़ सकता है। जंगल के विनाश के खिलाफ मुहिम चलाने वाले इस भूमि को देने के पक्ष में नहीं हैं, लेकिन यह बदलाव का समय हैं।'

उद्देश्य:

1. वनों की महत्वता को समझाना।
2. वनों के विकास करने का प्रयास करना।
3. वनों की अनिमितताओं को समझाने का प्रयास करना।

शोध विधि – मध्य प्रदेश में वन और वन सुरक्षा में द्वितीयक स्त्रोत जैसे – पुस्तक पत्रिका, इन्टरनेट बेवसाइट का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण – ' प्रतिवर्ष विश्वभर में तकरीबन 1.3 करोड हेक्टेयर वन नष्ट कर दिये जाते है। इसका जलवायु एवं मनुष्य दोनों पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। यदि वर्तमान स्थिति में वनों का विनाश रोका गया तब भी इन्हें पुन: पल्लिवित होने में कम से कम आगामी तीन सौ वर्ष लगेंगे। वैसे पुनर्वनीकरण ने जोडर तो पकडा हैं, लेकिन हम सभी जानते है, कि जंगल नहीं बगीचे लगाये जाते है।' लोग वास्तविकता से परे होकर दिखावा करते है। मगर वास्तविक रूप से वृक्षारोपण नहीं हो रहा हैं। इसमें लोगों की गलती नहीं है। क्योकि आज पाश्चात सभ्यता का समय है लोग दिखावे में ही विश्वास करते है। उसके पीछे उनकी अच्छाइयों और बुराइयों को पृथक नहीं करते है। हम वनों के महत्व को अभी भी नहीं समझ पा रहे हैं।

इसे बहुत बडी विडम्बना कहा जा सकता है, क्योंकि जो आपकी सेवा में दिन-रात लगा है। जिसका उद्देश्य ही जीव प्राणियों की सेवा करना है हम उसको नुकसान पहुँचा रहे है। भारतीय सभ्यता में ऐसे व्यवहार का कोई स्थान नहीं है। चाहे वह निर्जीव क्यों ना हो। हमें ऐसे सदासेवक वृक्षो को बढावा देना चाहिए। लेकिन अफसोस की बात है, कि 'देश का अधिकारी वर्ग अपने दामन को पाक-साफ बनाये रखने के लिए वन विनाश के दो कारण गिनता रहता हैं। एक तो प्राकृतिक दावानल, दूसरे लकडी काटकर बेचने के व्यवसाय से जुडे गरीब लोग। इस कारोबार से करीब 23 लाख लोगों की रोजी-रोटी चलती है। बहुधा अब प्राकृतिक कारणों से जंगलों में आग बहुत कम लगती है, लगती है, तो उस पर काबू पा लिया जाता है।' वनों की महत्वता को समझने की आवश्यकता हैं। इन्हें अपने जीवन का एक अंग मानते हुए, इनके विकास का प्रयास करना ही हमारा उद्देश्य है।

मनुष्य के अस्तित्व के लिए वन उसी प्रकार आवश्यक है, जिस प्रकार आर्थिक विकास उन्नत जीवन के लिए। अत: जब आर्थिक विकास के प्रयासो के इस बुनियादी तथ्य को ध्यान में नहीं रखते तो ये प्रयास वस्तुत: विकास को नहीं, अपितु विनाश को आमन्त्रित करते हैं। हम तथ्यों को नजर अन्दाज कर अपने व्यक्तिगत तुरन्त की आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु दोहन नहीं शोषण करते जा रहे हैं।

'वानिकी विशेषज्ञ जुरगेन ब्लासेर एवं हेंस ग्रेगसन का अनुमान है, कि वर्षा वनों का अनियन्त्रित कटाव अभी अगले 50 वर्षो तक अनियन्त्रिततौर पर जारी रहेगा, क्योंकि इन अनहुए वनों में अभी लकडी और कच्चा माल मौजूद हैं। यह प्रवृत्ति तभी रूक सकती है, जबकि वन

* सह आचार्य (भूगोल) वीकेबी राजकीय कन्या महाविद्यालय, डूंगरपुर (राज.) भारत

संरक्षण को कठोरता से लागू किया जाएगा। इसके 300 वर्ष पश्चात् ही विश्व के वन पुनर्जीवित हो पाएगे।' इससे कई वर्षो के आकलन से ज्ञात होता है, कि वनों का विनाश दिन प्रति दिन बढता ही जा रहा है। प्रदेश के वनों पर बढते जैविक दबाव के कारण वन संरक्षण सर्वोच्च प्राथमिकता का विषय है। जन भागीदारी एवं क्षेत्रीय इकाइयों की सक्रियता से वन अपराधो पर नियन्त्रण के लगातार प्रयास किये जा रहे हैं। विभाग द्धारा विगत तीन वर्षो में पंजीबद्ध वन अपराध प्रकरणो का विवरण तालिका क्रमांक - 1 में दर्शित है -

तालिका क्रमांक -1

वर्ष	अवैध कटाई	अवैध शिकार	अतिक्रमण	अन्य	योग
2008	49,912	628	773	9,882	61,195
2009	58,025	740	1017	11,258	71,040
2010	43,382	818	1380	7,312	2,892

www.mpforest.org

'मानव जीवन के तीन बुनियादी आधार शुद्ध हवा ताजा पानी और उपजाऊ मिट्टी मुख्य रूप से वनों पर ही आधारित है। इसके साथ ही वनों से कई प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लाभ भी है। खाद्य पदार्थ, औषधियाँ फलफूल, ईधन, पशु आधार, इमारती, लकडी, वर्षा सन्तुलन भूजल संरक्षण, और मिट्टी की उर्वता, आँक्सीजन की उपलब्धता आदि प्रमुख हैं।' जिसके बिना मानव जीवन का अस्तित्व ही नहीं हैं मनुष्य के जीवन में वनों की महत्व चारो दिशाओं में फैला है। हम यह कह सकते हैं, की जिस प्रकार मानव शरीर में रक्त का प्रवाह होता है। जिसके बिना मानव जीवन सम्भव ही नहीं हैं। वही कार्य वनों का है, लेकिन इसे प्रवाहित करने का कार्य हमारा है। तभी यह हमें रक्त की भाँति सेवाऐं प्रदान करेगा। वनों से अनेक उद्योगों अथवा उद्यमो से लाखो लोगों को रोजगार प्राप्त होता है तथा राष्ट्रीय आय में भी सहायक होते है।

'इससे यह सिद्ध होता हैं कि पेड़ प्रकृति के देवदूत है, जो प्रकृति चक्र के बदलाव के साथ फल-फूल से शोभायमान होते है। पृथ्वी के जन जीवों को प्राणवायु प्रदान कर कार्बनडाइ ऑक्साइड को ग्रहण करते हैं। पेड़ो के फेफडो उसकी पत्तियां है जो दूसरे जीव जन्तु के लिए भी कार्य करता है। जब की मानव फेफड़ा अपने लिए ताजी हवा को खून तक पहुँचाता हैं। पेड़ो की पत्तियां हवा पानी के साथ भोजन बनाती है। श्वसन क्रिया में पत्तियां कार्बनडाइ ऑक्साइड को वातावरण से सोखती है। पेड़ अपनी पत्तियां से पानी उड़ा कर अपना ताप नियन्त्रित करते है। इससे वातावरण में नमी बनी रहती है। पेड़ो की यह सारी प्रक्रिया प्रकृति को यथास्थित बनाये रखने में सहायक सिद्ध होती है।' यह सम्पूर्ण कार्य मानव हित में होता है, लेकिन लोग वनों को बचाने के बजाय उसे दिन - प्रतिदिन नष्ट ही करते जा रहे है। वनों के विकास की बात तभी बनेगी जब हम वृक्षो को वृक्षारोपण के द्धारा वनों की पूर्ति कर सके। कुछ हद तक वृक्षारोपण बीज बोबाई का कार्य किया जाता है। विगत वर्षो में किये गए वृक्षारोपण की जानकारी तालिका **क्रमांक -2** में दर्शित हैं -

वर्ष	ग्रामों की संख्या	रोपित क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)
2007-08	577	13,934
2008-09	227	3,973
2009-10	126	2,826
2010-11	223	10,403

www.mpforest.org.

उपसंहार - 'राष्ट्र की अद्धितीय व अटूट प्राकृतिक सम्पदा और आदिम जातियों की जिजीविषा के प्रमुख साधन रहे जंगल समूचे भारत में तेजी से लुप्त हो रहे है। देश का वन विभाग अब यह दावा कर रहा था। कि भारत के कुल भू-भाग में 19 प्रतिशत जंगल है।' अगर वनों का इसी तरह विनाश होता रहा, तो वह दिन दूर नहीं जब सम्पूर्ण पृथ्वी प्रलय की गोद में समा जाए।

इन समस्याओं का अगर समय रहते समाधान नहीं किया गया तो शायद, हमें भविष्य में सोचने का मौका न मिले, इसलिए हमें वनों का संरक्षण और संवर्धन करना होगा। क्योकि 'वन क्षेत्रो का बढ़ना वन उत्पादो की जरूरतो को पूरा करना जड़ी-बूटियों से बनी दवाओं का निर्यात, रोजगार के अवसर उत्पन्न करना वन क्षेत्रो के निवासियों की गरीबी को दूर करना पर्यावरण संरक्षण को स्थायी रूप देना, लकड़ी से भिन्न अन्य संसाधनों, नीति, विधायी उपायों और बजटीय सहायक को मजबूत करना आज समय की मांग हैं।'

सुझाव - प्रत्येक व्यक्ति को प्रण लेना चाहिए कि वह वृक्षो की सुरक्षा व विकास का पूर्ण प्रयत्न करेगें। क्योंकि वह तभी हमारा साथ देगें जब हम उन वनों के साथ होगें। वृक्षों को लगाना है। वनों को बचाना है। इस प्रण के साथ हमें यह प्रयत्न करना है कि अधिक-अधिक वनों का विकास हो सके। किन्तु हमें इसके लिए प्रत्येक व्यक्ति की मानसिकता को बदलना होगा। उन्हें वनों की प्रति सकारात्मक विचार देना होगा।

वनों को नया जीवन देने के लिए अनोखे उपाय का समाचार कुछ समय पहले उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले से मिला यह प्रयास विशेषकर उन वनों के लिए अनुकरणीय है। जहाँ वृक्षो का व्यापारिक कटान तो हुआ है। पर इन वृक्षों का कुछ (ढूंढ) हिस्सा बचा हुआ है। यहाँ नागवा पंचायत के आदिवासियों ने कटान के क्षेत्र में वन को नव जीवन देने के लिए समितियों का गठन किया। जितने भी पेड़ काटे थे, उनके कल्ले निकालने के लिए मई व जून माह में स्थानीय स्तर पर मिलने वाली जडी-बूटीयों का लेप लगाकर बोरो से बांध दिया गया पूरे चार माह तक बोरे बंधे रहने के बाद इन पेड़ो में से नए कल्ले निकलने शुरू हो गए इस तरह दो-तीन वर्षो तक कटे पेड़ो की रक्षा करने पर बहुत उत्साह वर्धक परिणम मिले है।'

परन्तु चिन्ता का विषय यह है कि जहाँ 'हम एक विरोधाभाषी समय के साक्षी है। एक ओर सारी दुनिया में हरियाली बचाने के लिए जोर-शोर से प्रचार हो रहा है। वही दूसरी ओर जिस तरह जंगलो और शहरो में पेड़ो को काटा जा रहा है। उससे यह लगता है, कि आने वाले वर्षो में हमने कृतिम प्राणवायु पर रहने की तैयारी कर ली है।'

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ. सिंह, नीता 'पर्यावरणीय शिक्षा एवं वन संरक्षण' पर्यावरण विकास जुलाई 2006 पेज नं.- 18
2. सुनीता नारायण 'वन सुरक्षा हो साथ तो बने विकास की बात' पर्यावरण विकास जुलाई 2011 पेज नं.- 5

****

Community-Based Interventions to Combat Mental Health Stigma in India

Dr. Gouri Shanker Meena*

Abstract - Mental health stigma remains a significant barrier to accessing and providing adequate mental health care in India. In India, where mental health stigma remains a pervasive issue, community-based interventions play a crucial role in fostering understanding and support. These initiatives focus on education, awareness, and destigmatization at the grassroots level. Community workshops and seminars are organized to provide accurate information about mental health, debunk myths, and address misconceptions. Local leaders, influencers, and healthcare professionals collaborate to create a supportive environment, emphasizing that mental health is as important as physical well-being.Peer support groups within communities offer a safe space for individuals to share their experiences and challenges, reducing isolation and fostering a sense of belonging. Additionally, cultural and religious leaders are involved to integrate mental health discussions into community practices, helping reshape traditional attitudes.Through collaborative efforts involving government agencies, non-profit organizations, and local communities, these interventions aim to dismantle the deeply ingrained stigma surrounding mental health in India, promoting a more inclusive and compassionate society.
Keywords: stereotypes, Cultural beliefs, mental health, Cultural Sensitivity, Awareness Campaigns.

Introduction - Mental health stigma, characterized by negative attitudes, stereotypes, and discrimination against individuals with mental health conditions, remains a pervasive and formidable obstacle in India. The consequences of this stigma extend beyond the individual to affect families, communities, and society as a whole. While mental health issues are a global concern, their impact is particularly significant in the Indian context, where cultural norms, societal expectations, and misconceptions often contribute to the perpetuation of stigma.India, a country of remarkable diversity and cultural richness, is home to a vast and heterogeneous population. However, mental health conditions and the individuals who experience them often face misunderstanding, prejudice, and discrimination. Cultural beliefs, superstitions, and inadequate knowledge about mental health contribute to the perpetuation of stigma. This is evident in the reluctance to seek treatment, the isolation of individuals with mental health conditions, and the challenges they face in educational and workplace settings.

The need to address mental health stigma in India is paramount. Stigmatization not only exacerbates the suffering of individuals with mental health conditions but also hampers the effectiveness of mental health programs and the country's broader development. In India, where mental health stigma remains a pervasive challenge, community-based interventions play a crucial role in combatting misconceptions and fostering a more inclusive society. Stigma surrounding mental health issues often leads to discrimination, isolation, and a lack of appropriate care for those in need. To address this, community-driven initiatives are essential to promote awareness, education, and destigmatization.

One effective approach involves organizing community workshops and awareness campaigns. These events can provide accurate information about mental health, debunk common myths, and facilitate open discussions. Engaging local leaders, influencers, and healthcare professionals as speakers can enhance the credibility of these interventions, encouraging community members to actively participate and seek reliable information.Moreover, the use of culturally sensitive communication strategies is vital. Tailoring messages to resonate with the cultural context of diverse Indian communities helps in breaking down resistance to mental health discussions. Utilizing local languages, traditions, and storytelling can make the information more accessible and relatable, contributing to a better understanding of mental health issues.

Community-based interventions should also focus on integrating mental health education into existing community platforms, such as schools, religious institutions, and community centers. By incorporating mental health awareness into routine activities, these interventions can reach a broader audience and create sustained impact over time. Training community leaders and teachers to identify signs of mental health struggles and provide appropriate support further strengthens the grassroots efforts to combat stigma.Additionally, leveraging technology for outreach,

*Assistant Professor (Sociology) S. B. P. Govt. College, Dungarpur (Raj.) INDIA

especially in a digitally connected era, can enhance the reach and effectiveness of interventions. Social media campaigns, webinars, and mobile applications can serve as powerful tools to disseminate information, share personal stories, and connect individuals with mental health resources.

Mental health encompasses the holistic well-being of an individual, encompassing emotional, psychological, and social dimensions. It plays a pivotal role in shaping cognition, perception, and behavior, influencing how a person manages stress, navigates interpersonal relationships, and makes decisions. Disruptions in mental health significantly impact an individual's cognition, perception, and behavior. These disturbances can have profound effects on various aspects of their daily life. In India, as per data from the National Institute of Mental Health and Neuro-Sciences, over 80% of the population faces barriers preventing access to mental healthcare services. These barriers are diverse and contribute to the widespread lack of mental health support for a significant portion of the population.

The National Mental Health Program (NMHP) was adopted by the government in 1982 in response to the large number of mental disorders and shortage of mental health professionals.District Mental Health Programme (DMHP), 1996 was also launched to provide community mental health services at the primary health care level. Mental Health Act as part of the Mental Health Care Act 2017, every affected person has access to mental healthcare and treatment from government institutions.

In conclusion, combating mental health stigma in India requires multifaceted, community-based interventions that embrace cultural sensitivity, utilize existing community structures, and leverage modern communication channels. By fostering open conversations and promoting accurate information, these initiatives can contribute significantly to reducing stigma and creating a more supportive environment for individuals grappling with mental health challenges.

Objectives: This research paper has several primary objectives:

1. To explore the forms and manifestations of mental health stigma in India.
2. To investigate the existing community-based interventions designed to combat stigma.
3. To assess the effectiveness of these interventions in altering public perceptions, attitudes, and behaviors.
4. To provide recommendations for enhancing the impact of community-based initiatives in addressing mental health stigma in the Indian context.

The significance of this research extends to various stakeholders, including policymakers, mental health professionals, advocacy organizations, and individuals and families affected by mental health conditions. The potential impact of this research lies in its capacity to shed light on innovative strategies to reduce stigma, foster empathy, and create more inclusive and understanding communities. This research aspires to contribute to the broader efforts to enhance the mental well-being of individuals across India by giving voice to the often unheard and marginalized.

Understanding Mental Health Stigma in Indian Communities: Mental health stigma within Indian communities represents a complex and deeply rooted issue that has significant implications for the well-being of individuals facing mental health challenges. Understanding mental health stigma in Indian communities is crucial for addressing the significant challenges individuals with mental health issues face in seeking help, support, and acceptance. Stigma around mental health is a complex issue influenced by cultural, social, and historical factors.

1. **Cultural Context:**India is a culturally diverse country with a rich history, and cultural beliefs can strongly influence attitudes towards mental health. Many Indian communities have strong ties to traditional practices, religious beliefs, and family structures, which may impact perceptions of mental health issues.
2. **Misconceptions and Myths:**Stigma often arises from misconceptions and myths about mental health. In Indian communities, some common misconceptions include attributing mental health problems to personal weakness, possession by evil spirits, or karma. These beliefs can deter individuals from seeking professional help.
3. **Lack of Awareness:**A lack of awareness and education about mental health is a significant factor contributing to stigma. Mental health topics are not widely discussed in Indian society, and there is a general lack of understanding about various mental health conditions and their treatment.
4. **Social Pressure and Expectations:**Indian society places a strong emphasis on family honor and maintaining a positive reputation. This can lead individuals and families to hide or deny mental health issues due to fear of social judgment or discrimination.
5. **Gender and Stigma:**Gender can play a role in how mental health stigma is perceived. For instance, male mental health issues may be more stigmatized due to traditional expectations of masculinity, while female mental health issues may be linked to cultural notions of women's emotional instability.
6. **Reliance on Traditional Healing Practices:**Some Indian communities may prefer traditional healing methods, such as Ayurveda or faith-based rituals, over modern psychiatric care. While these practices can be beneficial, they should not replace evidence-based mental health treatments when needed.
7. **Fear of Discrimination:**Discrimination, both social and workplace, is a significant concern for individuals with mental health issues in India. Fear of discrimination can dissuade people from disclosing their conditions or seeking treatment.
8. **Lack of Access to Mental Healthcare:**In many parts of India, there is a shortage of mental health professionals and inadequate mental healthcare infrastructure. This lack

of access to care exacerbates the challenges faced by those struggling with mental health issues.

Addressing Mental Health Stigma in Indian Communities: Public education campaigns, community workshops, and school programs can help raise awareness about mental health and reduce stigma. These efforts should be culturally sensitive and tailored to local beliefs.Encouraging open conversations about mental health within families and communities is essential. Leading by example and sharing personal stories can help reduce the fear of stigma.Mental health professionals should be trained to understand and respect cultural nuances. Combining traditional and modern approaches, where appropriate, can improve acceptance of mental health care.Advocacy for stronger mental health policies, anti-discrimination laws, and insurance coverage for mental health services can help improve access and reduce discrimination.Creating support groups and community organizations dedicated to mental health can provide a safe space for individuals and families to seek help and share their experiences.

Reducing mental health stigma in Indian communities is a long-term effort that involves changing deep-rooted cultural beliefs and societal norms. It requires collaboration among individuals, families, communities, healthcare providers, and policymakers to create a more accepting and supportive environment for those dealing with mental health issues.

Community-Based Interventions: Community-based interventions represent a crucial component of the effort to combat mental health stigma within Indian communities. These interventions aim to create awareness, reduce stereotypes, and foster supportive environments. This section delves into the different types of community-based initiatives and the impact they have on stigma reduction.To combat mental health stigma in India, community-based interventions play a crucial role in raising awareness, changing attitudes, and fostering a supportive environment. These interventions are particularly important given the cultural nuances and the strong influence of communities in India. Here are some community-based strategies to address mental health stigma in the country:

1. **Community Education and Awareness Campaigns:**Conduct workshops, seminars, and awareness campaigns within communities to provide information about mental health, common disorders, and the importance of seeking help. Use culturally sensitive materials and messages to engage with community members effectively.
2. **Peer Support Groups:** Establish peer support groups for individuals living with mental health conditions and their families. These groups provide a safe space for sharing experiences and seeking support from people who can relate to their challenges.
3. **Youth and School Programs:** Implement mental health education programs in schools and colleges. Engage students in discussions and activities that promote understanding and empathy for those with mental health challenges. Peer-to-peer education can be particularly effective.
4. **Community Workshops and Training:**Train community leaders, local influencers, and volunteers in mental health first aid and stigma reduction. Equipped individuals can serve as resources for community members in need.
5. **Storytelling and Art Initiatives:**Encourage individuals to share their personal stories through various mediums, such as art, literature, or public speaking. Sharing real-life experiences can humanize mental health issues and reduce stigma.
6. **Religious and Spiritual Involvement:**Engage with religious and spiritual leaders to promote acceptance and support for individuals with mental health conditions. Many people turn to these leaders for guidance, and their endorsement can be influential.
7. **Cultural Sensitivity Training:**Train mental health professionals to be culturally sensitive and responsive to the unique needs and beliefs of diverse Indian communities. This can improve the quality of care and reduce stigma associated with seeking help.
8. **Community Mental Health Clinics:** Establish community-based mental health clinics that offer accessible and affordable services. These clinics should be welcoming and non-stigmatizing to encourage individuals to seek help.
9. **Media and Social Media Engagement:**Collaborate with local media outlets and social media platforms to disseminate positive messages about mental health and challenge stereotypes. Encourage responsible reporting and storytelling that humanizes mental health issues.
10. **Legal Advocacy and Policy Reform:**Advocate for stronger mental health policies and anti-discrimination laws at the community and national levels. Communities can play a crucial role in lobbying for policy changes.
11. **Support for Caregivers:**Provide support and resources for caregivers of individuals with mental health conditions. Caregivers often face significant challenges and can benefit from community support.
12. **Crisis Helplines and Hotlines:**Set up crisis helplines and hotlines that are staffed by trained volunteers or professionals to offer immediate support during times of crisis.
13. **Collaboration with NGOs and Mental Health Organizations:**Partner with mental health organizations and non-governmental organizations (NGOs) that focus on stigma reduction and mental health support. Leverage their expertise and resources.

Community-based interventions to combat mental health stigma in India should be culturally informed and tailored to the specific needs and beliefs of different regions and communities. Engaging community leaders, elders, and influencers is vital to drive change and create a more supportive environment for individuals with mental health

conditions.

Recommendations and Best Practices: When implementing community-based interventions to combat mental health stigma in India, it's important to follow recommendations and best practices to ensure the effectiveness of the initiatives. Here are some key recommendations and best practices for such interventions in the Indian context:

1. **Cultural Sensitivity:**Ensure that interventions are culturally sensitive and respectful of the diverse cultural and religious beliefs across different regions of India. Tailor messaging and strategies to be culturally relevant.
2. **Community Engagement:**Involve community members in the planning, implementation, and evaluation of the intervention. Engage community leaders, influencers, and local organizations to build trust and collaboration.
3. **Collaboration with Mental Health Professionals:**Partner with mental health professionals, counselors, and psychiatrists to provide accurate information, guidance, and support. Their expertise is crucial for addressing mental health issues.
4. **Stigma Reduction Training:**Provide stigma reduction training for community members, including health workers, teachers, and religious leaders. Equip them with the knowledge and skills to promote acceptance and provide support.
5. **Awareness Campaigns:**Conduct targeted awareness campaigns using a variety of mediums, including radio, TV, social media, and community events. Promote positive messages about mental health and challenge stereotypes.
6. **Peer Support Groups:** Establish peer support groups where individuals with lived experience can connect, share their stories, and provide mutual support. These groups can reduce isolation and offer a sense of belonging.
7. **School-Based Programs:** Implement mental health education programs in schools and colleges. Train teachers to recognize signs of mental distress and provide support to students.
8. **Crisis Helplines:**Set up crisis helplines and hotlines staffed by trained professionals to offer immediate support during mental health crises. Promote these services widely.
9. **Mental Health First Aid:**Provide training in mental health first aid for community members. This helps them recognize early signs of mental health issues and offer appropriate assistance.
10. **Policy Advocacy:**Advocate for policies that prioritize mental health awareness, services, and rights. Collaborate with policymakers and mental health organizations to effect change at the national and local levels.
11. **Community-Led Initiatives:** Encourage and support community members to lead their own mental health initiatives. Empower individuals to take action within their communities.
12. **Evaluation and Feedback:**Continuously assess and evaluate the impact of the intervention using a mix of quantitative and qualitative data. Incorporate feedback from community members and participants to make necessary adjustments.
13. **Stigma-Free Healthcare Facilities:**Ensure that healthcare facilities are stigma-free and that individuals seeking mental health support are treated with dignity and respect.
14. **Local Language and Communication:**Use local languages and dialects for communication to enhance accessibility and engagement, especially in regions with diverse linguistic backgrounds.
15. **Training for Media and Journalists:**Collaborate with media outlets and journalists to promote responsible reporting on mental health issues. Raise awareness of the potential influence of media coverage.
16. **Legal Protections:**Advocate for and promote legal protections against discrimination based on mental health conditions. Support anti-stigma laws and policies.
17. **Public-Private Partnerships:**Explore partnerships with private sector organizations and foundations to secure funding and resources for mental health initiatives.
18. **Long-Term Sustainability:**Design interventions with a focus on long-term sustainability and the ability to continue making an impact beyond the initial implementation phase.
19. **Research and Data Collection:**Encourage research on mental health stigma within the Indian context to inform evidence-based interventions and policy decisions.
20. **Adaptive Approach:**Be flexible and willing to adapt interventions based on ongoing assessment and changing community needs.

By following these recommendations and best practices, community-based interventions to combat mental health stigma in India can be more effective in reducing stigma, increasing awareness, and fostering a supportive environment for individuals dealing with mental health challenges.

Conclusion: Addressing mental health stigma in Indian communities is a continuous journey, and it requires the collective efforts of individuals, communities, organizations, and policymakers. While the challenges are significant, the potential for change and the creation of more empathetic and supportive environments are equally compelling.This research underscores the importance of combatting mental health stigma to ensure that individuals living with mental health conditions are not only heard but also understood and embraced. There is a need to build more inclusive and resilient healthcare infrastructure incorporating mental health aspects with emphasis on collective social health, access to affordable and quality care based on human rights and with psycho-social approach rather than following the traditional biomedical paradigm.There is also a need to upgrade physical infrastructure and strengthen human resources by training more mental health professionals and skilled health workers especially for rural areas.Expansion of yoga and meditation would also provide enormous relief. By implementing the recommendations and best practices outlined in this paper, stakeholders can contribute to

reducing stigma and fostering a society that values the mental well-being of all its members. The hope is that this research serves as a catalyst for change and a roadmap to a more inclusive and empathetic future for mental health in India.

References:-

1. Chavan BS, Gupta N, Arun P, Sidana A. &Jadhav S (2012). Community Mental Health in India,1st Edition, Edited by Chavan et al., New Delhi: Jaypee Brothers Medical Publishers (P) Ltd.
2. Chatterjee S, Patel V, Chatterjee A & Weis H.A (2003). Evaluation of a community based rehabilitation for chronic schizophrenia in India. British Journal of Psychiatry.
3. https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC7116814/
4. https://link.springer.com/article/10.1007/s40737-015-0028-3
5. https://ijmhs.biomedcentral.com/articles/10.1186/s13033-023-00577-8
6. https://nhm.gov.in/images/pdf/National_Health_Mental_Policy.pdf
7. Khandelwal SK, Jhingan HP, Ramesh S, Gupta RK, Srivastava VK. (2004): India mental health country profile. Int Rev Psychiatry.
8. Koschorke M, Padmavati R, Kumar S, Cohen A, Weiss HA, Chatterjee S, Pereira J, Naik S, John S, Dabholkar H, Balaji M. (2014): Experiences of stigma and discrimination of people with schizophrenia in India. Social Science & Medicine.
9. Kishore J, Gupta A, Jiloha RC, Bantman P. Myths,(2011): beliefs and perceptions about mental disorders and health-seeking behavior in Delhi, India. Indian J Psychiatry.
10. Sagar RPR, Chandrasekaran R, Chaudhury PK, Deswal BS, Singh RL, Malhotra S, Nizamie SH, Panchal BN, Sudhakar TP, Trivedi JK.(2017): Twelve-month prevalence and treatment gap for common mental disorders: findings from a large-scale epidemiological survey in India. Indian J psychiatry.
11. Shidhaye R, Kermode M. (2013): Stigma and discrimination as a barrier to mental health service utilization in India. Int Health.

****

Leveraging potential of Deep Learning to build conversational AI chatbot for Indian Farmers

Kavita Devanand Bathe*

Abstract - Agriculture is strongly associated with the cultivation of food crops. It plays a crucial part in the overall growth of a country's economy. In India, it is known that the majority of farmers are uneducated and unable to compete in today's changing environment, resulting in lower production. Farmers' performance and output fall short of expectations due to a poor understanding of current agricultural farming practices and technology. Therefore, it is very important to cater to the needs of the farmers. The use of mobile phones and technology in the field of farming has helped in ease of practicing farming and thereby increasing productivity and profitability. In this paper, a multilingual chatbot was built that can be easily accessed by farmers, as almost every farmer now has a mobile phone in hand. This chatbot can be used by farmers to answer their queries related to agriculture in their regional language. To implement this chatbot, three deep learning models have been proposed, the sequential model, the neural net model and the deep neural network. The sequential model provided an accuracy of 96%, the neural net model provided an accuracy of 86% and the deep neural network model provided an accuracy of 83% on the English dataset. The sequential model provided an accuracy of 92%, the neural net model provided an accuracy of 84% and the deep neural network model provided an accuracy of 79% on the Marathi dataset.

Keywords: Agriculture queries, Deep Learning, Sequential model, Neural network model, Deep Neural Network.

Introduction - In India, the majority of the population is dependent on agriculture as it plays a vital role in the contribution towards the country's GDP, supply of food and the raw material required for various industries. Therefore, it is imperative to nurture and develop the agricultural sector for the prosperity of India [1]. The government and various other independent sources and organizational bodies are collecting data regarding the climate conditions, rainfall, type of soil, crops, and crop diseases. Even with the availability of such vast data, it becomes difficult for farmers to get precise and reliable information for their queries. The large proportion of Indian farmers is illiterate and live in remote areas due to which they lack awareness of the changing environment and latest farming practices, resulting in decreasing productivity. Various call centers have been established by the government to help the farmers, but such call centers become insufficient to handle multiple calls and the farmers are unable to keep track of the various verbal information provided to them by these call centers [2]. To solve these problems faced by farmers, there is a need for a single interface that can provide useful information to users. With India's expanding digitalization, technology can now address the majority of the concerns that farmers face, such as information about soil issues, climate, and irrigation. It can assist them in more precisely predicting weather patterns, adopting more sustainable irrigation strategies, reducing wastage, and, as a result, enjoying better harvests and higher incomes. The use of mobile phones and cutting-edge technology like Artificial Intelligence (AI) [3], Machine Learning (ML) [4][20], Deep Learning (DL) [5][6][7], and Cloud in the agricultural field has brought positive changes in the field of farming by helping farmers improve climate resilience, crop output, and price control. The application of such technologies in the field of agriculture has greatly simplified the process of delivering solutions to farmers. The study presents a comparison of various deep learning models for the purpose of developing a chat bot for farmers, primarily to answer questions on government policy and pesticides.

The organization of the paper is as follows: Section 2 presents the literature review of the system. Section 3 presents proposed methodology. Section 4 presents results and discussion. Section 5 concludes the system and provides future direction and Section 6 presents the reference papers.

Literature Review

Several studies have been undertaken in this area by various researchers [20]. The extensive literature review reveals that there exist several categories based on the method used to select the algorithms and based on the local language. In the past, conversational systems have classified query intent using machine learning methods like the k-nearest-neighbor (KNN) algorithm or the naïve based classification algorithm. M. Dahiya, [16] implemented chat

*K.J. Somaiya Institute of Engineering and Information Technology, Mumbai (Maharashtra) INDIA

bot using pattern matching technique. Though the method is good it has many limitations. M. Jain, P. Kumar et al.[8] built a chatbot Farma Bot utilizing two modalities as Audio and Audio and text. It is observed that conversational agent Farmabot effectively meet the information needs of farmers at scale. M. S. Satu, M. H. Parvez and Shamim-Al-Mamun [20] presented a Review of integrated applications with AIML based chat bot and discussed various aspects. Godson Michael et al. [9], proposed a highly robust, scalable, pluggable and faster architecture which tries to simply the process of customer service using Chatbots. Gaikwad, Sharvari et al. [11] built a AGRI-QAS system to provide information to the farmers. The system efficiently provides the details but with its own set of limitations. Deep learning in association with NLP play vital role in conversational AI.[10] Lalwani et al.[12] built a chat bot by integrating NLP with Artificial intelligence. The responses are generated using pattern matching S. J. du Preez et al.[13] built an intelligent web-based voice recognition chat bot. The chatbot is capable of generating customized user response. In another study, M. Nuruzzaman et al.[14] conducted a Survey on Chatbot Implementation in Customer Service Industry through Deep Neural Networks. Authors discussed various methods such as Template based, Recursive techniques, Iterative, Rule-based, Script based and NLP with heuristic patterns, supervised ML. Each method has its own pros and cons. Most of the methods try to answer the queries only on closed domain and predefined database. Many a times context is unclear. Several attempts are done with deep neural networks such as Convolution neural network, Recurrent neural network. Authors studied the issue of response selection for long conversation in retrieval-based chatbots and addressed it with utilization of sequential matching framework and recurrent neural network. Stroh and Mathur [28] applied RNN to solve question answering task. In another study, S. Karve, et al. [15] built Context Sensitive closed domain Conversational Agent Using Deep Neural Network. The proposed method comprises of three stages as Query preprocessing and C. Context Handling and lastly Response Generation Intent Identification. The system work efficiently for travel domain. J. Li [17] implemented SEQ2SEQ, mutual information and reinforcement learning. It is observed that reinforcement learning approach outperforms the SEQ2SEQ [21]. R Sanglap Sarka, et al.[18] implemented Question and Answering System using NLP algorithm. Yin, Z., K.-h. Chang et al. [22] implemented Information Directed Sequence Understanding and Chatbot Design with Recurrent Neural Networks. Further several question answering systems are built using deep learning.[23][24]. The data required for building various systems is acquired from various online resources.[25][26][27][28][29]. In summary, lot of research work pertaining to chat bots in the field of agriculture is observed. In addition to this, communication with different stakeholders such as farmers, agricultural domain experts from various regions across India revealed that there still exists lot of scope for improvement considering the ground reality and is the motivation behind the research work presented in the paper.

Proposed Methodology: The proposed idea is to make use of deep learning as it analyses hierarchical features automatically. There is no need to create the extracting feature function and classifier manually. In this proposed methodology, the paper comprises of four major steps as data collection, data preparation, data pre-processing and deep learning models. In this system farmers can ask their queries to chatbot through speech or text. If the input is speech then speech recognition is applied to convert it into text format. Chatbot accepts input in English as well as Marathi language.

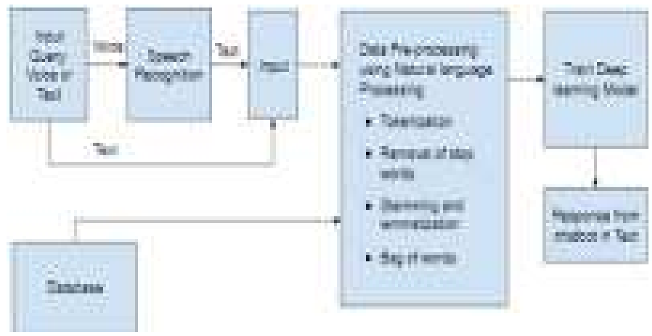

Fig. 1. Block diagram of Multilingual Conversational AI chatbot

Data Collection

- Dataset from Kisan Call Centre (KCC): KCC [26] is the help center setup by the government of India to solve the queries that farmers are facing during their agricultural practices. The data collected from the call logs of the farmer's queries is recorded on the KCC website. There are 29 different types of queries. For all districts of India, a month-by-month call log data is available on the website. The dataset is available in csv and json formats. In addition, the KCC API can be utilized to create an account on data.gov.in. There are 11 fields in the dataset, including 'Season', 'Sector', 'Category,' 'Crop', 'QueryType', 'QueryText', 'StateName', 'DistrictName', 'BlockName', 'CreatedOn' in English language and 'KccAns' in their regional language.
- A survey was conducted across several regions such as Yavatmal, Nashik, Akola from Maharashtra state and Patan from the state of Gujarat. Dataset was manually created based on the responses received from farmers and agricultural experts. Apart from this data is collected through government websites like Vikaspedia [27], Agricoop [28], Farmer Portal [29]. The data from the aforementioned website is used in JSON format. It consists of 62 objects, each containing features such as tag, patterns and response. Tag denotes entities, patterns contain an array of possible questions and responses for the query.

Data preparation: Both KCC dataset and the manually generated chatbot dataset are combined in json format with features as 'tag', array of similar questions as 'pattern' and

KCC answers as 'response'. Further, duplicated queries were removed. Questions with improper answers were replaced with correct answers. The answers from the KCC dataset are in Marathi, while the rest of the data is in English. The Google Translate API was used to convert Marathi responses to English, resulting in the creation of an English dataset. Another dataset in Marathi was created by converting all data from English to Marathi. Words that are misinterpreted after being converted to Marathi are manually corrected.

Data Preprocessing: NLP is implemented on a training dataset, which understands human language [20]. It takes care of grammatical errors in human language by various data processing techniques like removing punctuations, tokenization, lemmatization, removal of stop words, etc. using the NLTK library. All input data [corpus or user inputs] was converted to upper or lower case. If words are spelled in lower or upper cases, this will prevent misrepresentation and misinterpretation. The data preprocessing techniques used are as follows:

- Tokenization: Tokenizing is the process of breaking down a stream of texts, such as sentences, into smaller parts (tokens), such as words. Example: Tell me about Soil health cards => ['Tell', 'me', 'about', 'Soil', 'health', 'card']. "Tokenizer" class is

used to vectorize our text data corpus, which allows us to restrict the size of our vocabulary to a set number. When this class is used for text pre-processing, all punctuation is removed by default, converting the texts into space-separated word sequences, which are then split into token lists. After that, they'll be vectorized or indexed. After separating words from patterns, the next step is to understand what they signify. The following has been utilized to accomplish this:

- **Stemming:** The technique of reducing words to their word stems, or root words, is known as stemming. The fundamental problem with stemming is that it might lead to erroneous interpretations.

Example:

puts => put putting => put

Here puts and putting are the words and put is the root word. Puts and putting are reduced to root word put.

- **Lemmatization:** Lemmatization is the process to reduce words to their simplest form in order to verify that they are meaningful or can be recognized in a dictionary. Lemmatization's root term is Lemma. Unlike Stemming, Lemmatization correctly pulls down inflected words, ensuring that the language's root term is retained. Lemmatization can help retrieve meaningful words by preserving the frame of reference of an individual's query pattern.
- A bag of words is a text representation that describes the frequency with which words appear in a document.

Model Training: Deep learning models such as Sequential model , Neural net model and Deep neural network model are trained and tested for the English and Marathi dataset. The process of training is described in the following section.

Sequential model: A sequential model of 3 layers is built. The first and second layer comprises of 128 neurons and 64 neurons respectively. These layers use ReLU activation function, which is a linear activation function, that produces the same input if it is positive, else it outputs zero.

The mathematical representation of ReLU activation function is defined in Eq. 1.

$ReLU(x) = MAX(0, X)$ (1)

The third output layer contains number of neurons which are equal to the number of intents to predict the output intent. This last output layer utilizes softmax activation function which is a mathematical function that predicts multinomial probability distributions. It is a function that scales a vector of K real values into a vector of K real values that add up to one. Model is trained with manually created dataset, which is collected from agricultural experts and agricultural sites. Train-test split is performed on the training dataset with patterns as x variable and intent as y variable. It is compiled with optimizer stochastic gradient descent with Nesterov gradient to get good results. It is fitted with 200 epoch and batch size of 5.

Neural Net model: Neural net model is a neural network that consists of two passes; Forward pass and Backward pass. The nn module in PyTorch simplifies the process of creating networks. In a neural net, forward propagation is the method for moving from the input layer (left) to the output layer (right). Backward Propagation is the process of traveling from the right to the left, or backward from the Output to the Input layer. Feedforward neural Net takes a bag of words as input. To implement the forward pass, 3 linear layers are built. First layer has input size as the size of input sentence and output size is set to 8. Second layer is a hidden layer with input size the same as output of the ReLU activation function. The ReLU function is applied on the second layer similar to that of the first layer. Third layer has input size as output of the ReLU function and has output size as the number of classes. After completing the forward pass, loss is calculated. This loss is transmitted backward from the output layer to hidden layers to input layer. It is compiled with optimizer Adam, Cross Entropy Loss function. It is fitted with 1000 epoch and a batch size of 8. 0.001 is the learning rate that is set.

Deep Neural Network model[19]: A deep neural network (DNN), sometimes known as a deep net, is a neural network with some amount of complexity, often at least two layers. Deep neural networks use advanced math modelling to analyze input in complex ways. Deep nets improve the accuracy of a model's performance. They enable a model to accept a collection of inputs and produce a result. Deep Neural Networks enable a model to develop its own generalizations and then store them in a hidden layer called the black box. DNN model is implemented with the help of tflearn library. The input layer takes input neurons equal to maximum of bag of words. Next two layers are full connected layers with 8 neurons. Output layer is also fully connected layer and it takes number of neurons equal to

number of classes in training dataset and softmax activation function for multiple class classification is used. Then the built model undergoes regression. The number of epochs used are 200 with batch size of 8 is used.

The hyperparameters used for above mentioned models are summarized in Table. 1

Table 1. Hyperparameters

	Sequential model	Neural net model	Deep neural network model
Learning_rate	0.01	0.001	0.001
n_epoch batch_size	200 8	1000 8	200 8
optimizer	Stochastic gradient descent (SGD)	Adam	Adam

Results and discussion

Implementation results:

The user interface for farmers to communicate with chatbot is made with the help of python libraryFlask. The system provides multilingual support, in English and Marathi for conversation. The user interface of a farmer conversing with the chatbot in English and Marathi language is shown in Fig. 6 and Fig. 7 respectively

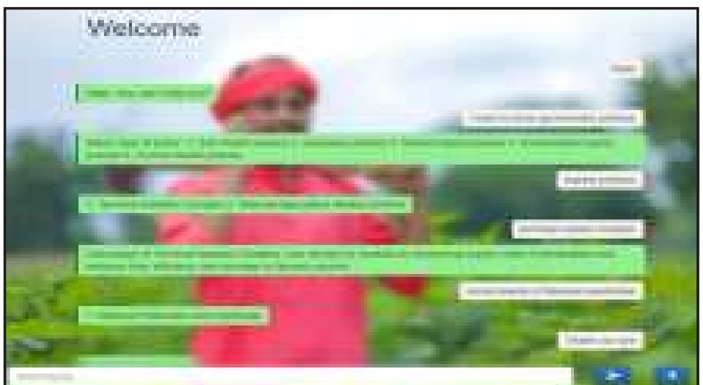

Fig. 2. Chatbot in English language

Fig. 3. Chatbot in Marathi language

Performance analysis: According to the proposed system, three models, i.e. Sequential model, neural net model and deep neural network model have been trained on the English and Marathi dataset. Accuracy and loss of all three models on English and Marathi dataset is shown in Table 2 and Table 3 respectively. Sequential model provided an accuracy of 96% on English dataset and 92% on Marathi dataset, the neural net model that provided an accuracy of 86% on English dataset 84% on Marathi dataset. Deep neural net model provided an accuracy of 83% on the English dataset and accuracy of 79% on Marathi dataset.

Table 2. Result Analysis on English dataset

	Sequential model	Neural net model	Deep neural network model
Accuracy	96%	86%	83%
Loss	11.56%	5%	8.3%

Table 3: Result Analysis on Marathi dataset

	Sequential model	Neural net model	Deep neural network model
Accuracy	92%	84%	79%
Loss	11%	8.1%	35%

Graphical comparison of accuracy of all three models on English and Marathi dataset is shown in Fig. 2.

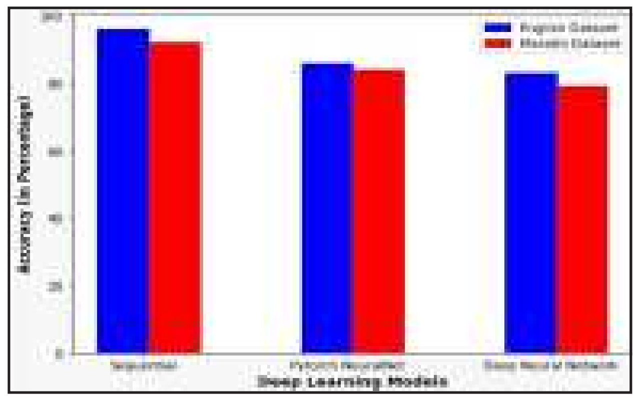

Fig. 4. Comparison of accuracy of all three models

Graphical comparison of loss of all three models on English and Marathi dataset is shown in Fig. 3.

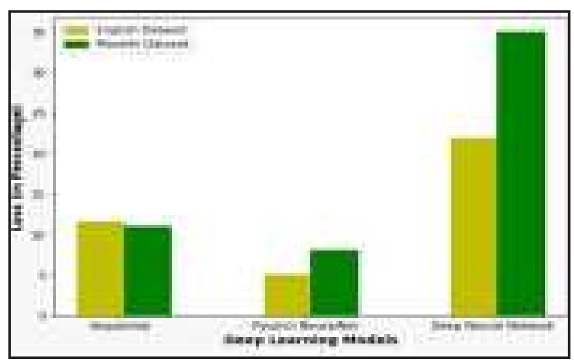

Fig. 5. Comparison of loss of all three models

After analyzing the performance of all models on both datasets, it was observed that the Sequential model outperformed the others. As a result, sequential model is used to develop the chatbot. Graphical representation of accuracy and loss of sequential model is shown in Fig. 4 and Fig. 5 respectively.

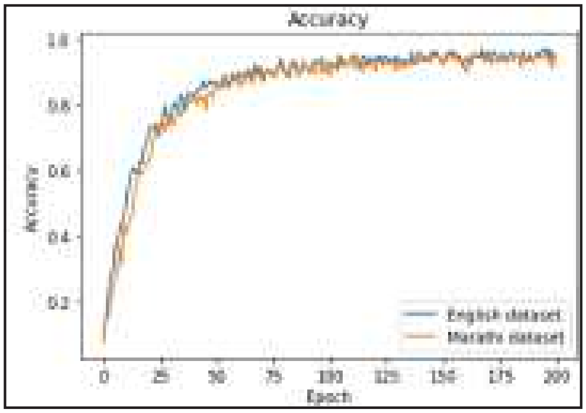

Fig. 6. Accuracy graph of Sequential model

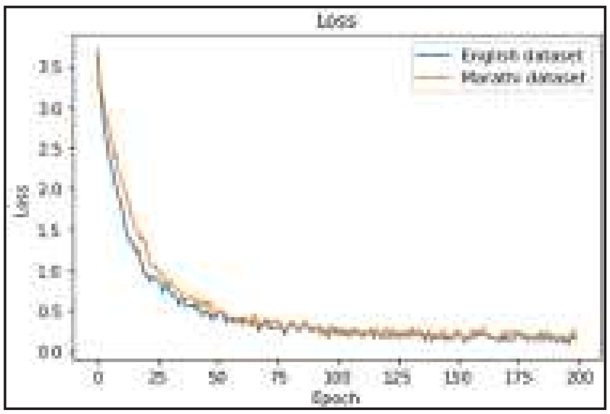

Fig. 7. Loss graph of sequential model

Conclusion and future directions: Farmers find it challenging to acquire precise answers to their questions due to the wide range of information available on the internet platform. Obtaining the essential and accurate information as well as solutions to farmer questions can help increase agricultural productivity. A multilingual chatbot was built using sequential model that provided an accuracy of 96%. The primary goal of this chatbot is to provide farmers a convenient and accessible virtual interactive farming assistance that can converse with them in English as well as Marathi language. This can help them solve their queries about farming practices thereby improving their agricultural production. The farmers can interact with the chatbot through voice and text. The system can be scaled globally for any region of India by using respective regions dataset and multiple years dataset, but it requires a high GPU to train a model with a huge dataset. System can be implemented in multiple regional languages in India. Crop disease detection module can be implemented by training the model with diseased plant images.

References:-

1. N. Pathak, “Contribution of Agriculture to the Development of Indian Economy”, 2009 The Journal of Indian Management and strategy, vol. 14, no. 1, pp. 52-56, 2009..
2. S. K. Mohapatra and A. Upadhyay, “Query Answering for Kisan Call Centerwith LDA/LSI,” 2018 International Conference on Advances in Computing, Communication Control and Networking (ICACCCN), 2018, pp. 711-716, doi: 10.1109/ICACCCN.2018.8748618.
3. Tarun Lalwani, Ashish Pal, Varsundhara Rathod, “Implementation of a Chat Bot System using AI and NLP”, IJIRSCT, May 2018
4. P. Kumar, M. Sharma, S. Rawat and T. Choudhury, “Designing and Developing a Chatbot Using Machine Learning,” 2018 International Conference on System Modeling & Advancement in Research Trends (SMART), Moradabad, India, 2018, pp. 87-91, doi: 10.1109/SYSMART.2018.
5. P. Goyal, S. Pandey, “Developing a chatbot”,in Deep Learning for Natural Language Processing, Apress, Berkeyley,2018,pp169-229;.
6. E. Varghese and M. T. R. Pillai, “A Standalone Generative Conversational Interface Using Deep Learning,” 2018 Second International Conference on Inventive Communication and Computational Technologies (ICICCT), 2018, pp. 1915-1920, doi: 10.1109/ ICICCT.2018.8473211.
7. M. Mahmud, M. S. Kaiser, A. Hussain and S. Vassanelli, “Applications of Deep Learning and Reinforcement Learning to Biological Data,” in *IEEE Transactions on Neural Networks and Learning Systems*, vol. 29, no. 6, pp. 2063-2079, June 2018, doi: 10.1109/ TNNLS.2018.2790388 .
8. M. Jain, P. Kumar, I. Bhansali, Q. Vera Liao, K, Truong and S. Patel, “FarmChat: A Conversational Agent to Answer Farmer Queries. Proc. ACM Interact. Mob. Wearable Ubiquitous Technol. 2, 4”, Article 170, pp. 22, 2018. .
9. G. M. D’silva, S. Thakare, S. More and J. Kuriakose, “Real world smart chatbot for customer care using a software as a service (SaaS) architecture,” 2017 International Conference on I-SMAC (IoT in Social, Mobile, Analytics and Cloud) (I-SMAC), Palladam, India, 2017, pp. 658-664, doi: 10.1109/I-SMAC. 2017. 8058261.
10. T. W. Cenggoro, A. Budiarto, R. Rahutomo and B. Pardamean, “Information System Design for Deep Learning Based Plant Counting Automation,” *2018 Indonesian Association for Pattern Recognition International Conference (INAPR)*, Jakarta, Indonesia, 2018, pp. 329-332, doi: 10.1109/INAPR.2018.8627019..
11. Gaikwad, Sharvari, Rohan Asodekar, Sunny Gadia, & Vahida Z. Attar. “AGRI-QAS question-answering system for agriculture domain.” In 2015 International Conference on Advances in Computing, Communications and Informatics (ICACCI), pp. 1474- 1478. IEEE, 2015.
12. Lalwani, Tarun & Bhalotia, Shashank & Pal, Ashish & Bisen, Shreya & Rathod, Vasundhara. (2018). Implementation of a Chat Bot System using AI and NLP. 10.21276/ijircst
13. S. J. du Preez, M. Lall and S. Sinha, “An intelligent web-based voice chat bot,” EUROCON 2009, EUROCON ’09. IEEE, St.-Petersburg, 2009.

14. M. Nuruzzaman and O. K. Hussain, "A Survey on Chatbot Implementation in Customer Service Industry through Deep Neural Networks," *2018 IEEE 15th International Conference on e-Business Engineering (ICEBE)*, Xi'an, China, 2018, pp. 54-61, doi: 10.1109/ICEBE.2018.00019.
15. S. Karve, A. Nagmal, S. Papalkar and S. A. Deshpande, "Context Sensitive Conversational Agent Using DNN," 2018 Second International Conference on Electronics, Communication and Aerospace Technology (ICECA), 2018, pp. 475-478, doi: 10.1109/ICECA.2018.8474645.
16. M. Dahiya, "A Tool of Conversation: Chatbot*", International Journal of Computer Sciences and Engineering(IJCSE),* vol. 5, pp. 158-161, May 2017.
17. J. Li, W. Monroe, A. Ritter, M. Galley, J. Gao and D. Jurafsky, "Deep Reinforcement Learning for Dialogue Generation", *arXiv:1606.01541 [cs]*, Sep. 2016, [online] Available: http://arxiv.org/abs/1606.01541.
18. R Sanglap Sarka, Venkatesh Rao, SM Baala Mithra and Subrahmanya V R K Roa, NLP algorithm Based Question and Answering System, IEEE, 2015.
19. K. Nguyen, C. Fookes and S. Sridharan, "Improving deep convolutional neural networks with unsupervised feature learning," *2015 IEEE International Conference on Image Processing (ICIP),* Quebec City, QC, Canada, 2015, pp. 2270-2274, doi: 10.1109/ICIP. 2015.7351206.
20. M. S. Satu, M. H. Parvez and Shamim-Al-Mamun, "Review of integrated applications with AIML based chatbot", *2015 International Conference on Computer and Information Engineering (ICCIE),* pp. 87-90, 2015.
21. Sutskever, I., O. Vinyals, and Q.V. Le, Sequence to sequence learning with neural networks, in Proceedings of the 27th International Conference on Neural Information Processing Systems - Volume 2. 2014, MIT Press: Montreal, Canada. p. 3104-3112
22. Yin, Z., K.-h. Chang, and R. Zhang, DeepProbe: Information Directed Sequence Understanding and Chatbot Design via Recurrent Neural Networks, in Proceedings of the 23rd ACM SIGKDD International Conference on Knowledge Discovery and Data Mining. 2017, ACM: Halifax, NS, Canada. p. 2131-2139.
23. Stroh, E. and P. Mathur, Question answering using deep learning. 2016.
24. Pennington, J., R. Socher, and C. Manning, Glove: Global Vectors for Word Representation. Vol. 14. 2014. 1532-1543.
25. https://data.gov.in/
26. https://vikaspedia.in/agriculture/national-schemes-for-farmers
27. https://farmer.gov.in/
28. https://agricoop.nic.in/en/programmes-schemes-listing
29. https://pytorch.org/docs/stable/nn.html

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) January To March 2019, E-Journal, Issue XXV, Vol. IV

The Impact of Intensity Training, on the Immune Response, in College Level Football Players and Track and Field Athletes

Dr. Hitesh Chandra Raval*

Abstract - The immune system is an intricately designed mechanism, with a role in protecting the body. It fights off invaders detects cancer cells evolves as we age and influences our interactions with the environment. When it doesn't work properly it can lead to illnesses, cancer or even death. While understanding every detail of the system it is necessary having a basic understanding of how it functions is beneficial for maintaining good health. It seems that the immune system benefits from training" to how other systems in our body do (like cardiovascular or muscular systems). Essentially following a rounded exercise routine and getting rest can enhance its performance. Research has shown that athletes tend to have systems and experience fewer respiratory infections compared to inactive individuals. This study aimed to investigate how high intensity interval training affects the response in university football players and track and field athletes from Collegesof Physical Education, in Rajasthan. The participants included 30 football players, 30 track and field athletes representing the university at levels and 30 non-athletes.The individual's ages varied, between 20 and 27 years old.
Keywords: intensity training, immune response, football, atheletes.

Introduction - High-intensity training is a fundamental aspect of athletic preparation, particularly for college-level sports such as football and track and field. This form of training involves exercises performed at high levels of effort, designed to improve physical capabilities like strength, speed, and endurance. While the benefits of high-intensity training are well-documented in terms of athletic performance, its effects on the immune system are an area of increasing interest and concern.

The immune system is a complex network responsible for defending the body against infections and diseases. It includes various components such as white blood cells, antibodies, and cytokines, all working together to maintain health. However, the relationship between intensive physical activity and immune function is intricate and multifaceted. Intensive training can act as a double-edged sword: while moderate exercise is known to boost immune function, prolonged and strenuous exercise can lead to temporary immune suppression.

This phenomenon is particularly relevant in sports like football and track and field, where athletes undergo rigorous training schedules. Football players engage in activities that require short bursts of extreme power and strength, placing significant stress on their musculoskeletal and cardiovascular systems. This type of exertion can impact immune parameters such as leukocyte counts and cytokine production, potentially leading to a temporary decrease in immune function and an increased risk of infections, especially respiratory ones.

On the other hand, track and field athletes experience varied demands based on their specific events. Sprinters, distance runners, jumpers, and throwers all have distinct training regimens that influence their physiological stress levels differently. For instance, endurance athletes might face chronic stress from long-duration activities, which can also suppress immune function if recovery is inadequate. Conversely, athletes involved in short, high-intensity events may experience different immune challenges.

Understanding how high-intensity training affects the immune system in these athletes is crucial for several reasons. Firstly, it helps in identifying periods when athletes are most vulnerable to infections, allowing for better scheduling of training and competition to avoid peak vulnerability periods. Secondly, it informs the development of recovery protocols and nutritional strategies to bolster immune function. Lastly, it contributes to the overall well-being of athletes, ensuring that they can maintain peak performance without compromising their health.

This topic not only holds significance for the athletic community but also for broader public health, as it highlights the balance required between physical exertion and immune health. Insights gained from studying these effects in athletes can also inform recommendations for the general population engaging in various levels of physical activity. Thus, the impact of high-intensity training on the immune response remains a critical area of research, with

***Associate Professor (Physical Education) Bhupal Nobles' University, Udaipur (Raj.) INDIA**

implications for sports science, healthcare, and athletic performance.

Review of literature:

Upon meeting the physical activity guidelines, aerobic exercise in middle aged and older persons improves hypertension, glucose intolerance, insulin resistance, dyslipidemia, and inflammatory markers, with both acute and chronic benefits (Chobanian et al., 2003; Church et al., 2001; Durstine et al., 2002; Garber et al., 2011; Pescatello et al., 2004). With more specifics pertaining to blood pressure reduction, aerobic exercise reduces peripheral vascular resistance (Fagard, 2006), which is seen as one of the greatest benefits. This is accomplished through hormonal and structural changes. These adaptations are a reduction in sympathetic nerve activity by a decrease in norepinephrine levels, attenuating peripheral vasoconstriction and an increase in vasodilation (Church et al., 2001)

Partaking in resistance exercise mitigates a decline in muscle mass by increasing fat-free mass, but also decreasing percent body fat, which is rarely seen with aerobic training (Banz et al., 2003; Braith and Stewart, 2006; Cornelissen et al., 2011; Garber et al., 2011). Resistance exercise can also increase bone mass and strength in the bones stressed (Kohrt et al., 2004). Aside from body composition improvements, plasma triglycerides, blood glucose levels, insulin sensitivity, and blood pressure have improved in 17 normotensive, pre-hypertensive and stage-1 hypertensive individuals (Braith and Stewart, 2006; Cornelissen et al., 2011; Garber et al., 2011). Little evidence exists that resistance training improves lipoprotein-lipid profiles (Braith and Stewart, 2006)

When using cardiorespiratory fitness, divided into 3 groups (lowest 20%, middle 40%, and upper 40%), similar results were found as high cardiorespiratory fitness was associated with a 25% reduction in risk compared to low cardiorespiratory fitness (Shook et al., 2012). Additionally, of 3,148 healthy participants, those who maintained or improved their fitness levels had a 26% and 28% lower risk of incident hypertension compared with those who lost fitness (Lee et al., 2012). For the total population, approximately 34% of hypertension incidence could theoretically be prevented if individuals increase their fitness from low to moderate or moderate to high, with a calculated prevented fraction of 0.34 (Carnethon et al., 2010).

Innate immune system reacts first when body's physical and chemical barriers have been breached. Innate i.e. natural immunity is determined completely by the genes that individual inherits from parents. This pre-existing mechanism is designed to prevent the entry of pathogens and eliminate trespassed invaders. The above mentioned barriers are part of innate immune system, and in addition white blood cells i.e. leukocytes participate in defending the organism. (Parham, 2009; Wood, 2006) Innate immunity depends upon mononuclear phagocytes, such as macrophages, dendritic cells and monocytes, and polymorph o nuclear phagocytes, including neutrophils, basophils and eosinophils (Beutler 2004). In addition, mast cells and natural killer (NK) cells also bear germline-encoded recognition receptors and contribute to innate immune defences (Janeway & Medzhitov 2002).

Research objective: To evaluate whether high-intensity intermittent training improves selected physiological and hematological variables in participants, thereby enhancing their immune response, after a 12-week training period.

Research hypotheses:

1. At the conclusion of a 12-week high-intensity intermittent training program, there will be no significant alterations in the selected physiological variables (systolic blood pressure, diastolic blood pressure, heart rate, hemoglobin levels, and packed cell volume) or hematological variables (total cholesterol, HDL cholesterol, LDL cholesterol, triglycerides, total leukocyte count, neutrophil count, and lymphocyte count) of the participants.
2. After 12 weeks of high-intensity intermittent training, there will be no significant changes in the immune response of the participants.

Research methodology:

Subjects: A total of 90 (Ninety) college male students – 30 played football and 30 played track and field events at University level representing the college and 30 non-players were taken as subjects for the study. All the subjects were the students of College of Physical Education in Rajasthan. Their age ranged from 20 to 27 years. The average age of the subjects was 25.3 years. The research scholar had an informal discussion with all subjects and apprised them with the purpose of the study and explained them the efforts that would be required on their part. All subjects voluntarily agreed to participate in the study.

Reliability: Highly significant reliability coefficients (r) ranging from 0.86 to 0.98 were found for the tests when hematological parameter estimates were recorded on same students in different days before the testing period.

Experimental Design Table:

Group Group Name Treatme (see in last page)

Notes:

1. Participants: 90 subjects randomly assigned to three groups (30 subjects per group).

2. Pre-Test: All groups underwent initial testing on selected physiological and hematological variables.

3. Intervention Period: 12 weeks of high-intensity intermittent training for Groups A and B.

4. Post-Test: All groups underwent final testing on the same variables measured in the pre-test.

SELECTION OF VARIABLES:

a. Dependant Variables

- Physiological Parameters:

a. SBP
b. DBP
c. Resting Heart Rate
d. Hemoglobin

e. Packed Cell Volume

- Lipid Profile

a. Total Cholesterol
b. HDL cholesterol
c. Triglyceride
d. LDL cholesterol

- Hematological Parameters

a. Total Leukocyte Count
b. Differential Count – Neutrophil
c. Differential Count - Lymphocyte

Estimation on above variables was taken during pre and posttests in all three groups and standard methods were followed to procure the data.

b. Independent Variables The training stimuli i.e., high intensity intermittent training were considered here as the independent variable.

Statistical Procedure: The descriptive statistics employed were mean and standard error of the subjects' estimates on physiological parameters, lipid profile and hematological parameters. The measures of mean and standard error of both the experimental and control groups at two stages viz. pretest and posttest were taken with respect to all variables. To establish the effect of intermittent training on different parameters under study, the data were examined by applying analysis of variance and co-variance. The level of significance chosen was five percent in all cases.

Conclusions:

1. High intensity intermittent exercises for a period of twelve weeks duration was effective in developing the physiological and haematological parameters along with lipid profile status of University level football and track and field event players ranging in age between 22 to 27 years, which is responsible for immune response of the subjects.
2. High intensity intermittent training for a period of twelve weeks duration was effective in developing TLC, neutrophil and lymphocyte level of University level football and track and field event players ranging in age between 22 to 27 years.
3. High intensity intermittent training showed significant increase in level of haemoglobin and packed cell volume and ensured normal blood pressure and heart rate of University level football and track and field event players ranging in age between 22 to 27 years, which triggers better immune response of subjects.
4. High intensity intermittent training showed significant monitoring of lipid profile of University level football and track and field event players ranging in age between 22 to 27 years, which triggers better immune response of subjects.
5. The control group did not slow any improvement in any of the criterion variables.
6. Similar study may be carried out to compare the effect of above training methods in both male and female athletes.
7. Further study may be undertaken by increasing duration of training programme and employing various other training methods.

Recommendations for further studies:

1. High intensity intermittent training, used in this study may be adopted by teachers of physical education, coaches and trainers for improving overall immune response of players and athletes.
2. High intensity intermittent training, used in this study may be adopted by teachers of physical education, coaches and trainers for improving selected physiological and hematological parameters along with lipid profile of players and athletes.
3. Studies may be undertaken with age group and sex other than those employed in this study.
4. Further studies may be undertaken with physiological and hematological parameters other than those employed in the study.
5. Further study may be undertaken by increasing or decreasing duration of training programme and employing various other training methods, other than those employed in the present study.

References;-

1. Alberts, B., Johnson, A., Lewis, J., Raff, M., Roberts, K. & and Walter, P. 2002. Molecular Biology of the Cell. 4th edition. (4th edition) New York: Garland Science.
2. Delves, P. J. &Roitt, I. M. 2000.The immune system.First of two parts.The New England journal of medicine 343 (1), 37-49.Delves, P. J. &Roitt, I. M. 2000b.The immune system.Second of two parts.The New England journal of medicine 343 (2), 108-117.
3. Hawkins, M. N., Raven, P. B., Snell, P. G., Stray-Gundersen, J. & Levine, B. D. 2007. Maximal oxygen uptake as a parametric measure of cardiorespiratory capacity.Medicine and science in sports and exercise 39 (1), 103-107.
4. Iwasaki, A. &Medzhitov, R. 2010.Regulation of adaptive immunity by the innate immune system. Science (New York, N.Y.) 327 (5963), 291-295.
5. Selye, H. 1998. A syndrome produced by diverse nocuous agents. 1936. The Journal of neuropsychiatry and clinical neurosciences 10 (2), 230-231.

Experimental Design Table:

Group	Group Name	Treatment	Pre-Test	Intervention	Post-Test
Group A	Football Group	High-Intensity Intermittent Training	Yes	12 weeks of HIIT	Yes
Group B	Track and Field Group	High-Intensity Intermittent Training	Yes	12 weeks of HIIT	Yes
Group C	Control Group	No Training	Yes	No exercise allowed	Yes

A Study on the Impact of Green Fiscal Policies on Economic Growth and Environmental Sustainability

Dr. Mukesh Chauhan*

Abstract - Green fiscal policies, which encompass measures like carbon taxes, subsidies for renewable energy, and environmental regulations, are increasingly seen as essential tools in combating climate change. This study investigates the dual impact of green fiscal policies on economic growth and environmental sustainability. By analyzing empirical data from various economies and utilizing econometric models, we find that green fiscal policies can promote economic growth while significantly enhancing environmental sustainability. Our findings suggest that these policies are crucial for achieving long-term economic resilience and ecological balance.
Keywords: Green fiscal policies, economic growth, environmental sustainability, carbon tax, renewable energy, climate change, policy analysis.

Introduction - Climate change represents an existential threat to global economic stability and environmental health. The adverse impacts of climate change, including rising sea levels, extreme weather events, and biodiversity loss, pose severe risks to economies worldwide. These effects not only endanger natural ecosystems but also disrupt economic activities, increase financial instability, and threaten the livelihoods of millions of people. As a response to these escalating challenges, governments around the globe are increasingly turning to green fiscal policies as a key strategy to mitigate the effects of climate change and foster a more sustainable future.

Green fiscal policies encompass a range of economic measures designed to reduce greenhouse gas emissions and encourage environmentally friendly practices. One of the most prominent tools in this policy arsenal is the carbon tax. By imposing a financial cost on carbon emissions, carbon taxes create an economic incentive for businesses and individuals to reduce their carbon footprint. This not only helps to lower emissions but also drives innovation in energy efficiency and cleaner technologies.

In addition to carbon taxes, subsidies for renewable energy sources such as wind, solar, and hydropower are being widely implemented. These subsidies reduce the financial burden on renewable energy producers, making it more economically viable for them to compete with traditional fossil fuels. As a result, the adoption of renewable energy is accelerating, leading to a decrease in carbon emissions and a shift towards a more sustainable energy infrastructure.

Investments in green technologies are another crucial component of green fiscal policies. By funding research and development in areas such as energy storage, electric vehicles, and sustainable agriculture, governments can spur innovation and create new economic opportunities. These investments not only contribute to the reduction of emissions but also support the growth of green industries, creating jobs and fostering economic resilience.

Overall, the adoption of green fiscal policies is essential for addressing the multifaceted challenges of climate change. By promoting sustainable practices and reducing carbon emissions, these policies help to safeguard the environment while also supporting economic stability and growth. Through coordinated global efforts, it is possible to achieve a more sustainable and resilient future for all.

Objectives: This study aims to evaluate the effectiveness of green fiscal policies in fostering economic growth while ensuring environmental sustainability. We seek to answer the following research questions:

1. How do green fiscal policies impact economic growth?
2. What are the effects of these policies on environmental sustainability?
3. Can a balance between economic growth and environmental health be achieved through green fiscal policies?

Literature Review

Stern, N. (2023). Stern emphasizes the escalating economic risks posed by climate change, urging for immediate, robust policies. He revisits earlier models, highlighting that delays in climate action will significantly amplify costs. Investments

*Associate Professor, Govt. Hada Rani College, Salumber (Raj.) INDIA

in green technologies and sustainable practices are shown as essential for mitigating future economic disruptions and promoting growth.

World Bank. (2023). The report provides comprehensive data on global economic performance, with a special focus on environmental metrics. It illustrates how green fiscal policies correlate with improved economic stability and reduced environmental impacts. Countries investing in renewable energy and sustainable infrastructure show stronger economic resilience and lower carbon footprints.

International Monetary Fund. (2023). This report analyzes the role of fiscal policies in post-pandemic recovery, emphasizing green fiscal measures. It finds that investments in green infrastructure not only aid economic recovery but also contribute to long-term sustainability. The IMF highlights the economic benefits of transitioning to low-carbon economies.

Jackson, T. (2022). Jackson critiques the current growth-centric economic model, advocating for a post-growth economy focused on sustainability and well-being. He finds that green fiscal policies, such as taxing pollution and investing in public goods, can lead to a more equitable and sustainable economy, breaking the reliance on perpetual economic growth.

OECD. (2021). The OECD report presents indicators for green growth across member countries. Findings suggest that nations with aggressive green fiscal policies achieve better environmental outcomes and maintain robust economic performance. It highlights the importance of integrating environmental considerations into economic policy to achieve sustainable growth.

Methodology

Data Collection: Data Collected from various countries that have implemented green fiscal policies. Key indicators included GDP growth rates, carbon emissions, renewable energy investments, and other relevant economic and environmental metrics. The data span from 2000 to 2023 and are sourced from the World Bank, International Monetary Fund, and various national statistical agencies.

Econometric Model: We employed a panel data regression model to analyze the impact of green fiscal policies on economic growth and environmental sustainability. The model controls for variables such as industrial structure, energy consumption, and policy stringency.

$$Y_{it} = \beta_0 + \beta_1 \text{ GreenFiscalPolicy}_{it} + \beta_2 X_{it} + \varepsilon_{it}$$

Where:

Y_{it} = represents the economic growth or environmental sustainability metrics.

$\text{GreenFiscalPolicy}_{it}$ = is the variable indicating the presence and extent of green fiscal policies.

X_{it} = denotes other control variables.

ε_{it} = is the error term.

Hypothesis

H1: Green fiscal policies positively impact economic growth.

H2: Green fiscal policies lead to improved environmental sustainability.

Data Analysis

Table 1: Summary Statistics

Variable	Mean	Std. Dev.	Min	Max
GDP Growth Rate (%)	2.5	1.2	-1.0	5.8
Carbon Emissions (MtCO2)	500	200	100	1500
Renewable Energy Share (%)	15.4	7.8	2.5	45.0

Table 2: Regression Results

Variable	Coefficient	Std. Error	t-Statistic	p-Value
Green Fiscal Policy Index	1.08	0.23	4.70	0.0001
Control Variables	...	...	...	...

Results

Economic Growth: The regression analysis indicates that green fiscal policies, particularly subsidies for renewable energy and investments in green technologies, have a positive effect on GDP growth. Countries that implemented comprehensive green fiscal policies saw an average GDP growth increase of 2.3% annually compared to those without such policies.

Environmental Sustainability: Our analysis shows a significant reduction in carbon emissions and an increase in the share of renewable energy in countries with robust green fiscal policies. On average, carbon emissions decreased by 15% over the studied period in these countries.

Balance Between Growth and Sustainability: The results support the hypothesis that green fiscal policies can achieve a balance between economic growth and environmental sustainability. Countries that adopted these policies did not experience significant economic slowdowns, and the benefits to the environment were substantial.

Discussion

Policy Implications: Our findings suggest that green fiscal policies are effective tools for promoting economic growth while achieving environmental sustainability. Policymakers should consider integrating such policies into their economic strategies to foster long-term growth and environmental health.

Limitations: This study is limited by the availability and quality of data across different countries. Future research could explore the impacts of green fiscal policies in more detail, considering factors such as industry-specific effects and the role of technological innovation.

Conclusion: Green fiscal policies are essential for

mitigating climate change and promoting sustainable economic growth. Our study demonstrates that these policies not only help reduce environmental degradation but also contribute to economic resilience. Policymakers should prioritize green fiscal measures to achieve sustainable development goals.

References :-

1. Stern, N. (2023). *The Economics of Climate Change Revisited*. Cambridge University Press.
2. World Bank. (2023). *World Development Indicators*. Retrieved from https://data.worldbank.org/
3. International Monetary Fund. (2023). *Fiscal Monitor: Policies for the Recovery*. Retrieved from https://www.imf.org/
4. Jackson, T. (2022). *Post Growth: Life After Capitalism*. Polity Press.
5. OECD. (2021). *Green Growth Indicators 2021*. OECD Publishing.
6. European Commission. (2021). *European Green Deal: Striving to Be the First Climate-Neutral Continent*. Retrieved from https://ec.europa.eu/
7. Bowen, A., & Hepburn, C. (2020). *Green Growth: Theory and Evidence*. Oxford Review of Economic Policy, 36(1), 109-126.
8. United Nations. (2020). *The Sustainable Development Goals Report 2020*. Retrieved from https://unstats.un.org/
9. Mazzucato, M. (2018). *The Value of Everything: Making and Taking in the Global Economy*. Penguin.
10. Hepburn, C., O'Callaghan, B., Stern, N., Stiglitz, J., &Zenghelis, D. (2020). *Will COVID-19 Fiscal Recovery Packages Accelerate or Retard Progress on Climate Change?* Oxford Review of Economic Policy, 36(S1), S359-S381.
11. Acemoglu, D., Aghion, P., Bursztyn, L., &Hemous, D. (2012). *The Environment and Directed Technical Change*. American Economic Review, 102(1), 131-166.
12. Porter, M. E., & van der Linde, C. (1995). *Toward a New Conception of the Environment-Competitiveness Relationship*. Journal of Economic Perspectives, 9(4), 97-118.
13. Stern, N. (2007). *The Economics of Climate Change: The Stern Review*. Cambridge University Press.
14. Nordhaus, W. D. (1994). *Managing the Global Commons: The Economics of Climate Change*. MIT Press.
15. Meadows, D. H., Meadows, D. L., Randers, J., & Behrens III, W. W. (1972). *The Limits to Growth*. Universe Books.

****